Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

111512

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकर

111512

111512

वर्ष ५ अंक १
जनवरी १९७३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यकी विभिन्न विधाओंके नये प्रकाशनों

प्रकाशित पुस्तकोंपर विशिष्ट समीक्षकोंके मत

और

हिन्दी प्रकाशन-जगत्की नवीनतम सूचनाओंके लिए

'प्रकर' अपने साथ रखिये

प्रकर

[लेखन और प्रकाशनके गतिशील चीन्हे-अनचीन्हे चरणोंको उजागर करने वाला अपने ढंगका अकेला मासिक-पत्र है]

वार्षिक मूल्य ६.०० रु.

सामान्य अंक ०.७५

उपलब्ध गत विशेषांक

अहिन्दीभाषियोंका हिन्दी साहित्य ४.०० रु.
१९६९ के उल्लेखनीय प्रकाशन १.०० रु.
१९७० ,, ,, ,, ४.०० रु.
१९७१ ,, ,, ,, ६.०० रु.

सजिल्द फाइलें

प्रकर (जन.–जुलाई ६९) अप्राप्य
,, (जुलाई–दिसम्बर ६९) ७.००
,, (जन.–दिसम्बर ७०) १२.००
,, (जन.–दिसम्बर ७१) १५.००

व्यवस्थापक : 'प्रकर', ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे प्रकाशन

शोध प्रबन्ध		
संस्कृत कवितामें रोमांटिक प्रवृत्तियाँ—**डॉ० हरिश्चन्द्र वर्मा**		२०.००
संत काव्यका दार्शनिक विश्लेषण—**डॉ० मनमोहन सहगल**		१५.००
आलोचना		
छायावाद : नया मूल्यांकन—**प्रो० नित्यानन्द पटेल**		७.५०
स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य—**डॉ० महेन्द्र भटनागर**		८.००
रूसी भाषा और संस्कृतमें आन्तरिक समानता—**श्रीमती इन्दुलेखा**		१.२५
आर्थिक		
रुपयेका अवमूल्यन और उसका प्रभाव		८.००
इतिहास-राजनीति		
कच्छ—**श्रीमती पद्मा अग्रवाल**	उ० प्र० सरकार द्वारा पुरस्कृत	२.२५
विस्तारवादी चीन—**श्री जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी**	,, ,,	१.२५
अफ्रीकाके राष्ट्रीय नेता—**श्री जगमोहनलाल माथुर**		२.५०
समाजवादी बर्मा—**श्री श्यामाचरण मिश्र**		४.००
बर्माका इतिहास— ,, ,,		६.००
यात्रा साहस		
एवरेस्ट अभियान—**डॉ० हरिदत्त भट्ट 'शैलेश'**	,, ,,	२.२५
हिमगिरि बिहार—**स्वामी तपोवनम् जी**		१०.००
उपन्यास		
अपराधी वैज्ञानिक—**श्री यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक'**		८.००
ये पहाड़ी लोग— ,, ,,		४.५०
सुधा—**श्री टी० एन० गोपीनाथ नायर**		३.५०
शकुन्तला—**श्री विराज**		४.५०
प्रवासी—**श्री श्यामाचरण मिश्र**		५.००
कहानी-संग्रह		
अप्सराका सम्मोहन और अन्य वैज्ञानिक कहानियाँ—**श्री यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक'**		५.५०
नाटक		
श्रेष्ठ एकांकी—**डॉ० वासुदेवनन्दन प्रसाद**		३.५०
श्री चंद्रावली नाटिका (भारतेन्दु)—**डॉ० हरिश्चन्द्र वर्मा**		३.००
जीवन और दर्शन		
शंकराचार्य : जीवन और दर्शन—**श्री नारायणदत्त**		२.५०
महर्षि दयानन्द : जीवन और दर्शन— ,,		५.००
गुरु नानक : जीवन और दर्शन— ,,		५.५०
श्री अरविन्द : जीवन और दर्शन—**श्री रवीन्द्र**		३.००

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

FORTY POEMS
OF
MAHENDRA BHATNAGAR

Price : Rs. 10-

Dr. Mahendra Bhatnagar's is one of the significant post-independence voices in Hindi Poetry, expressing the lyricism and pathos, aspirations and yearnings of the modern Indian intellect. Rooted deep into the Indian soil, these poems reflect not only the moods of a poet but of a complex age.

OPINIONS :

"The poems reflect the personality of the poet and the milieu in which he is creating. The translations are facile and smooth. The printing is eye-catching."

—*Dr. Ramvilas Sharma*

"The translation has the necessary clarity and sharpness. It succeeds in preserving the spirit of the original poems."

—*Dr. Nagendra*

"Dr. Mahendra Bhatnagar is a well established Hindi poet. 'Forty Poems' includes some of his best work. Mahendra writes of freedom, struggle, victory of oppressed humanity and its vision of a new world. He writes of the beauty of nature, of love and hate, of joy and sorrow. He writes with zest and a feeling of exaltation. His poetry has both strength and beauty."

—*Prof. Prakash Chandra Gupta*

[*The Literary Half-Yearly*, Mysore]

"Mahendra Bhatnagar is Browning, Shelley and Maykovsky welded into one. He is a visionary, he is a comrade-in-arms and he is an architect......The poet has a very sensitive ear for candences and knows how to use them."

—*Dr. Vidya Nivas Mishra*

Available at :

NAVA BHARATI SAHAKAR PRAKASHAN

A-8/42, RANA PRATAP BAGH, DELHI-7

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकर

जनवरी, १९७३] [वर्ष ५, अंक १.

सम्पादक-मण्डल : डॉ. भोलानाथ तिवारी (अध्यक्ष); मुकुटबिहारी वर्मा, डॉ. जयचन्द्रराय (उपाध्यक्ष); डॉ. देवेन्द्रकुमार, सुभाषचन्द्र विद्यालंकार (सदस्य)

सम्पादक : विद्यासागर विद्यालंकार

सम्पर्क : ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७.

वार्षिक मूल्य : नौ रुपये मात्र : सामान्य अंक : पचहत्तर पैसे मात्र

समीक्षित पुस्तकें	पृष्ठ संख्या	समीक्षक
१. काव्य-संकलन		
मिट्टीकी बारात : शिवमंगलसिंह 'सुमन'	५	डॉ. भोलानाथ 'भ्रमर' और डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
बावरा अहेरी : अज्ञेय	९	डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित
जय भारत : जय भारती : ओमप्रकाश मिश्र	१०	डॉ. सुधेश
एक अलग दस्तावेज : सं. अजीतसिंह, विजयराय	१०	,,
नवोदित स्मारिका : सं. सत्यमोहन वर्मा	१०	,,
ये टूटते अँधेरे : डॉ. देवेन्द्र आर्य	१२	विश्वप्रकाश दीक्षित
कविताके हाथ : श्याम विमल	१३	ओम्प्रकाश भाटिया
दिखती नहीं अपनी ही छाँह : वसन्त रामकृष्ण देव	१३	ब्रजकिशोर शर्मा
२. उर्दू-काव्य		
कविश्री : नजीर : सं. अमीर मोहम्मद खान	१४	अज़ीज़ इन्दौरी
३. आलोचना और शोध-प्रबन्ध		
तुलसी-साहित्यमें बिम्ब-योजना : डॉ. सुशीला शर्मा	१५	डॉ. सत्यकाम वर्मा
आधुनिक हिन्दी गद्य साहित्य : डॉ. हरदयाल	१७	रवीन्द्रनाथ दरगन
४. निबन्ध-संकलन		
गन्धमादन : कुबेरनाथ राय	१८	डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित
हिन्दी उपन्यास : सं. सुषमा प्रियदर्शिनी	१८	हेमचन्द्र जैन
५. संस्कृत-व्याकरण : इतिहास		
संस्कृत व्याकरणका उद्भव और विकास : डॉ. सत्यकाम वर्मा	२०	डॉ. श्रुतिकान्त
६. उपन्यास		
अजीब आदमी : इस्मत चुग़ताई	२२	डॉ. विपिनबिहारी ठाकुर
भँवर : गुलशन नन्दा	२३	डॉ. रामाभिलाष त्रिपाठी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. कहानी-संग्रह		
ताप और सन्ताप : धनेन्द्रकुमार जैन	२४	सुरेन्द्र तिवारी
८. नाटक : एकांकी		
अग्निपरीक्षा : कुँवर चन्द्रप्रकाशसिंह	२५	डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
९. अनूदित-साहित्य		
दधीचि : सनतकुमार वंद्योपाध्याय	२६	सुरेन्द्र तिवारी
ग्राम-लक्ष्मी : पीताम्बर पटेल	२८	डॉ. विपिनबिहारी ठाकुर
१०. अनुवाद : सिद्धान्त और प्रयोग		
अनुवाद विज्ञान : डॉ. भोलानाथ तिवारी	२९	हेमचन्द्र जैन
११. गान्धी-कथा		
सम्पूर्ण गान्धी वाङ्मय (खण्ड ४५)	३०	मुकुटविहारी वर्मा
१२. व्यक्ति : परिचय		
सचल सरमस्त : कल्याण बू. आडवाणी	३१	डॉ. विपिनबिहारी ठाकुर
उन्हें हम कैसे भूलें : सं. विनोद विभाकर	३२	डॉ. रामाभिलाष त्रिपाठी
१३. प्राकृतिक चिकित्सा		
वैज्ञानिक मालिश : सत्यपाल	३३	मणिकान्त वाजपेयी
१४. पत्र-पत्रिकाए	३४	रमण शाण्डिल्य
१५. किशोर बाल साहित्य	३६	ब्रजगोपालदास अग्रवाल
१६. जेबी पुस्तकें	३७	जीवन और मणिकान्त वाजपेयी
१७. मत-अभिमत	४२	—
१८. प्राप्ति-सूचना	४५	—

मौलिक वैज्ञानिक उपन्यास

अपराधी वैज्ञानिक

(यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक')

आजका वैज्ञानिक विश्वपर शासन करनेका स्वप्न देखता है। यदि वैज्ञानिक सत्ताको हथियाने के लिए लालायित हो उठे तो विश्व-संहारके भयानक दृश्य उपस्थित कर सकता है। प्रतिभाशाली वैज्ञानिक अलीतामन भी इसी मार्गपर चलता है और सम्पूर्ण पृथ्वीपर प्रलयके दृश्य उपस्थित कर देता है।

साथही पृथ्वीकी धुरीके कोणमें परिवर्तन द्वारा पृथ्वीकी ऋतुओं, भूकम्पों, जल-स्थलपर आवश्यकतानुसार नियन्त्रणके सिद्धान्तका परिचय कथा में संजोकर दिया गया है।

हिन्दीका यह एक सफल और श्रेष्ठ वैज्ञानिक उपन्यास है।

मूल्य : आठ रुपये

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान [सो.]

ए-८।४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

111512

काव्य संकलन

मिट्टीकी बारात

कवि : शिवमंगलसिंह 'सुमन'; प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, फैज बाजार, दिल्ली-६। पृष्ठ : १६२; डिमाई, ७२; मूल्य : १२.०० रु.।

प्रस्तुत संग्रहके प्रणेता सरस्वतीके उन कृपापात्रोंमेंसे एक हैं जिनको बहुमुखी एवं सन्तुलित प्रतिभा प्राप्त हुई है। वे अपने देशके अन्दर भी भारतमाताकी सेवा सफलतापूर्वक कर सकते हैं और अपने देशके बाहरभी सफलतापूर्वक। वे सफल कवि भी हैं और कुशल प्रशासक भी। वे शिक्षा-क्षेत्रमें सेवा-रत होकर उसके सर्वोच्च पद (विश्वविद्यालयका उप-कुलपति पद) पर सफलतापूर्वक सुशोभित हो सकते हैं और एक कविके रूपमें हिन्दी-काव्य-साहित्यके इतिहासमें एक अच्छे-भले स्थानके अधिकारी भी। इस संग्रहको मिलाकर उनके सात काव्य-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं : 'प्रलय-सृजन,' 'हिलोल,' 'विश्वास बढ़ता ही गया,' 'नवयुगके गान,' 'पर आँखें नहीं भरीं,' 'विंध्य हिमालय' और यह 'मिट्टी की बारात'। अभी हालमें चण्डीगढ़से प्रकाशित शिक्षा-जगतके विश्वकोषमें उनकी १२ पुस्तकोंका उल्लेख है जिनमेंसे अधिकांश संग्रह-ग्रन्थ हैं और जो कई प्रान्तोंके शिक्षा-बोर्डों द्वारा निर्धारित पाठ्य पुस्तकोंमेंसे हैं। इनकी रचनाओंके अनुवाद अंग्रेजी, रूसी और चेक भाषाओंमें हो चुके हैं। ये नेपाल, मारिशस और रूस देश भी हो आये हैं। ये "विश्वास बढ़ता..." पर देव पुरस्कार और "पर आँखें..." पर नवीन पुरस्कार भी प्राप्त कर चुके हैं। इन उल्लेखोंके द्वारा मैं डॉ. 'सुमन' का प्रशस्ति-वाचन नहीं कर रहा हूँ बल्कि कहना यह चाहता हूँ कि वे सिद्धहस्त एवं मान्यवर कवि, प्रशस्त-सन्तुलित-व्यापक दृष्टिकोणसे सम्पन्न चेता और अनुभव-अलंकृत व्यक्ति हैं। ऐसे समर्थ व्यक्तित्ववाले कविकी रचनाको और उसके दृष्टिकोणको गम्भीरतापूर्वक देखना और समझना चाहिये।

प्रस्तुत पुस्तक ६ खण्डोंमें विभाजित है : "माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः (भूमि माता है और मैं पृथ्वी-पुत्र हूँ)," "मुक्त संगः समाचर (मुक्त संग आचरण करो)," "देवहितं यदायुः (देवहित ही जिसका जीवन रहा)," "आनो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः (हम सब समस्त विश्व के कल्याणकामी हों)," "हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं (मरोगे तो स्वर्ग प्राप्त करोगे)" और परिशिष्ट। पहले खण्ड में १७, दूसरे खण्ड में ३०, तीसरे खण्डमें १०, चौथे खण्डमें ४, पाँचवें खण्ड में ६ और छठे खण्डमें ६ कविताएँ हैं। इसप्रकार पूरी पुस्तकमें कुल ७३ कविताएँ हैं। मेरी समझमें पृष्ठ ६३ की कविता 'जीवनकी मर्जी' का जो विस्तार पृष्ठ ६४ पर है वह नहीं होना चाहिये। पृष्ठ ६४ की दोनों कविताओंका सम्बन्ध 'जीवनकी मर्जी' से बिल्कुल ही नहीं है। वे दोनों स्वतन्त्र कविताएँ हैं। उनका न तो आपसमें कोई सम्बन्ध है और न 'जीवनकी मर्जी' से कोई सम्बन्ध। दोनोंके अपने-अपने शीर्षक हों और वे अलग-अलग पृष्ठोंपर छपें तो कविताओंकी संख्या ७५ हो जायेगी।

इस कविता-पुस्तकको जो अपनी नयी देन है वह 'मिट्टीकी बारात' शीर्षक कवितामें है। सम्भवतः इसी सर्वथा मौलिक देन या भावसे गर्भित होनेके कारण इस महत्वपूर्ण कविताका शीर्षक 'मिट्टीकी बारात' इस संग्रह का शीर्षक हो गया। वैसे तो भारतीय संस्कृति, भारतीय जीवन, हिन्दू दर्शन और अब अणुके भीतरकी शक्ति या चेतनासे परिचित आजके विज्ञानके लिए भी यह बात चौंका देनेवाली नहीं रह गयी है किन्तु साधारण व्यक्ति अबभी जड़ और चेतनमें पर्याप्त अन्तर मानते हैं। वे यह सोच भी नहीं सकते कि जड़तम वस्तु-राखमें भी चेतना होगी, अनुभूतियाँ होंगी और वे मानवीय अनुभूतियोंकी ही तरह होंगी। उसमें स्मृति-जन्य आवेग होगा और उसमें विरहकी आकुलता और प्रेम-मिलनकी तन्मयता होगी। इतना ही नहीं, बल्कि वह हमारी असमर्थतापर तरस खा सकती है। कमला नेहरूकी चिताकी २८ वर्ष पुरानी राख जब जवाहरलाल नेहरूकी चिताकी राखसे त्रिवेणी संगमपर गंगाकी धारामें प्रवाहित होनेपर मिलती है तब दोनोंकी राखोंमें दोनोंके अपने-अपने व्यक्तित्वकी और भाव-जगतकी याद तो है ही, दोनों राखोंमें पारस्परिक प्रेम भावकी भी अनुभूति है। जवाहरकी राख कमलाकी राखसे कहती है :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"डरो नहीं, डरो नहीं
पथिक हूँ थका हारा
जबसे गई छोड़ तू
फिरा किया मारा मारा
लहरोंके फूल-सा
खोकर तुझे खो-सा गया।"

एक जगह कमलाकी राख कहती है :

"बार बार सोचा है
ऐसे सौ जन्म मिलें
तो मैं सौ बार बिछूँ
प्रियके रथ-पथ में
......उपालम्भ देती तो
आमहत्या कर लेता
अनुराग, लज्जाका
धिक्कार सुनना मुझे पड़ता
राधा और यशोधराका
नाम तक लेना
हाय पाप सा हो जाता।"

जवाहरकी राख कहती है :

"मिट्टी मिट्टीका स्पर्श
इतना सुखद होता है !
......चेतन इस अनुभव को
कैसे जान पायेंगे !!"

कमलाकी राखका कहना है :

"जीवनकी विराटतामें
जड़ चेतन दोनोंका
बराबरका हिस्सा है।"

एक नया दर्शन है कि

"भूलो मत
मिट्टी सदा क्वांरी है;'

और अन्तमें दोनोंकी राखें कहती हैं :

धन्य है धन्य है जीवन-प्रवाह यह
जिसने हम दोनोंको फिरसे मिला दिया
मिट्टी कभी मिटती नहीं, मिट्टी कभी मिटती नहीं
मृत्युने अमरता का प्याला पिला दिया।

दूल्हे-दुलहन या पति-पत्नीकी 'मिट्टी' की यह साथ-साथ यात्रा ही मिट्टीकी बारात है। यह चिन्तन 'सुमन' के गम्भीर और प्रौढ़ व्यक्तित्वके अनुरूप ही है। सामान्य व्यक्ति घटनाओं को न तो इतनी सूक्ष्म दृष्टिसे देख पाते हैं और न ऐसे गम्भीर तात्विक निष्कर्ष निकाल पाते हैं। 'मिट्टी' के कई अर्थ निकाले जा सकते हैं; जैसे—तुच्छ, उपेक्षणीय, जड़, भौतिक, सामान्य, गरीब, स्थूल, ऐन्द्रिय आदि। इस दृष्टिकोणसे देखनेपर प्रस्तुत संग्रह में इन्हीं विषयों पर लिखी कविताओंकी एक बारात है। यही 'सुमन' की प्रगतिशीलता है। इस संग्रहकी पहली कविता है :

कीचड़-कालिखसे
सने हाथ
इनको चूमो
सौ कामिनियोंके लोल कपोलोंसे बढ़कर श्रम-सीकरसे
लथ-पथ चेहरे

इनको चूमो
गंगा-जमुनाकी लोल लहरियोंसे बढ़कर कुश-कंटकसे
क्षत-विक्षत पग

इनको चूमो
...चर्चित चरणोंसे बढ़कर

क्योंकि एकने 'आतप वर्षा पालेसे सदा बचाया है,' दूसरेने 'बुन चीर द्रौपदीका हर बार बढ़ाया है' और 'माँ बहनोंकी लज्जा जिनके बलपर रक्षित,' और तीसरा.... 'जिसका अपराजित शौर्य....मानवताका वर्चस्व सौर-मण्डल स्पन्दित कर आया है।' संग्रह की अन्तिम कविता है "मंजिलें और जो कट जायँ तो आराम करूँ।" संग्रहमें ७५ कविताएँ हैं। बिलकुल बीचकी कविता हुई ३८वीं। वह गान्धीजीपर है: "हम बड़े पुजारी घण्टा-घड़ी बजाते हैं, आरती उतारा करते कीर्तन गाते हैं,....सदियोंसे शोषक सत्ताका सत्कार किया, देवता द्वारपर आया तो दुत्कार दिया," आदि। इनका भी आधा करें तो प्रारम्भिक भाग की १८वीं कविताका सन्देश है: 'अंग-अंग हो अनंग/सृजन उड़े संग-संग।' १९वींकी व्यंजना इसप्रकार है: "जीवन को जीनेकी स्पर्द्धा और लाचारी, दानवीय लिप्सा ब्रह्मानन्दकी चुनौती है।" संग्रहकी ९वीं कविता चेतन प्रकृतिका मादक शृंगारिक चित्र है: "सारी राह करती दिखीं ठनगन ठिठोलियाँ महँदी रचाए प्रमदाएँ कालिदास की" अन्तसे चलें तो ९वीं कविता है 'ज्योति पर्व'। पंक्तियाँ हैं: "पिछले प्रमादकी प्रताड़ित विकलतामें जीवनकी जड़तामें ज्वार कसमसाया है ज्योति पर्व आया है।" अन्तसे चलनेपर १९वीं कविताकी कुछ पंक्तियाँ देखें: "होटल तीस मंजिला यह शाही ठाठ फिरभी है सर्वसुलभ—सोवियतकी महिमा।" ये विभाजन करके उदाहरण इसलिए दिये गये हैं कि रुचिकी चुन लेनेका दोषारोपण न किया जा सके। नहीं तो मैं उनकी विचारधारा व्यंजित करनेके लिए ये उदाहरण दूंगा: "हस्तो तो हक है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरफरोशोंके आलम का कलम औ' कुदालीके भूगर्भी फालोंका, बाकी सब शेखी है" (पृष्ठ १६०)। "अपने अर्जनकी सर्जना भी कुछ रचाओगे, याकि नेहरूकी कमाई ही सदा खाओगे....गीध मँडरा रहे हैं इर्दगिर्द घेरेमें, भेड़िए घात लगाये हैं इस अँधेरेमें....मानवी मुक्ति समन्दर खँगालते रहना, जीवन शक्ति दियेको उँजालते रहना, आँधियों-बिजलियोंके दाँव ताकते रहना....जरा मशाल जलाओ बड़ा अँधेरा है" (पृष्ठ १८३)। "जीवन भाग गया है मन्दिरों मसजिदों और गिरजों से....भक्तों से अधिक घण्टोंकी टनटनाहटमें हरारत है, मजदूरों और विद्यार्थियोंसे सतर्क है शासक वर्ग क्योंकि उनमें हलचल है" (पृष्ठ ६३)। यथार्थ वृत्तिका एक उदाहरण और लें : "आज नव वर्षकी मंगल कामना मिली....मनका रुका व कुछ बद्ध किया....वही सूत्र फिरसे गहूँ...फिर वही कक्षा हो....फिर वही पाठ पढ़ूं (किन्तु) यह तो है प्रथा मात्र, बहको मत बुद्धूराम कामकाजी दुनियाकी, यह भी एक अदा है, उथल-पुथल मनकी कोरी कवियोंकी सदा है' (पृष्ठ ६०)। कवि रुकनेको प्रगति नहीं मानता। वह अपने लिए गति और परिवर्तनका पथ चुनता है : "मुझको तो चलना है, अँधेरेमें जलना है, समयके साथ-साथ ढलना है"(पृष्ठ ८७)। उसके अनुसार रुकना जड़ता है—किले बाँधना, मीनारें गढ़ना, बार-बार चढ़ना और बार-बार उतरना। कविने अपनी श्रद्धांजलिके लिए जिनको चुना है वे देशकी प्रगतिशीलताके ही समर्थक हैं : 'निराला,' कमला-जवाहर, गान्धी, लालबहादुर शास्त्री, महामना मालवीय, पुश्किन, लेनिन। गान्धी-सम्बन्धी कवितामें यह कथन 'धरतीपर मानवसे सुन्दर सौगात नहीं, मन्त्रों-प्रार्थनाओं-अज़ानों-अर्चनाओंमें प्यारकी कहानीसे बढ़कर कुछ बात नहीं" (पृष्ठ ११२)। नेहरूके विषयमें कवि-सूक्ति लिख गया है : 'राष्ट्रकी जवानीकी कहानी वह बन गया' (पृष्ठ ११८) या "मरघटकी लपटें हैं सर्जनकी बन्दगी, उत्सर्गोंसे मिलती कौमोंको जिन्दगी (पृष्ठ १२१); शास्त्री सम्बन्धी कविता का समापन इसप्रकार होता है : "बड़े शौर्य साहससे शान्ति सौध गढ़ना है, ईसाको बार-बार सूलीपर चढ़ना है" (पृष्ठ १२०) आदि। वियतनाम सम्बन्धी कविताएँ प्रकृति-प्रेम, संस्कृति-प्रेम और विश्व मानवता प्रेमकी द्योतक हैं। अमरीका मानव, प्रकृति और भविष्य—इन तीनोंको वीरान करता जा रहा है। अभिधा-प्रधान होनेपर भी ये कविताएँ बड़ी ही सशक्त और प्रभावशाली हैं। इन प्रगतिशील कविताओंमें व्यंग्य भी हैं : 'हमारे तेज नश्तर तो बने हैं दूसरोंके हित' (पृष्ठ ६५); "मुखौटे तोड़नेवाले मुखौटे खुद लगाये हैं" (पृष्ठ ६६); "बेहद सन्तप्त हूँ कि नपुंसकोंकी पीढ़ियाँ जन्म ले रही हैं आज शेरोंकी माँदमें। काजी होता हो कभीका दुबला हो गया होता" (पृष्ठ ८३), 'बैंगन बेलिया बहुत सामान्य है पर जब देखो तब विशेष लगता है धोबिनकी तरह" (पृष्ठ ६४), "अब सीधे आकाश नहीं दीखता, बचपनमें जैसे मास्टर साहब मुर्गा बनाते थे वैसे ही दुमके पीछेसे दिखता है दमामा आयामका" (पृष्ठ ६४)। यदि किसी एक ही कवितामें 'सुमन' का वास्तविक प्रगतिशील स्वरूप देखना हो तो वह "आषाढ़ का पहला दिवस" में मिल जायेगा। मानव नयी चेतनाके जलसे आनन्द-विभोर होकर मुक्त प्रेमकी भावना में विभोर हो उठे और "निर्व्याज-साझपटूँ शिकारी बाज बन जर्जर व्यवस्थाके जलपते गिद्धपर, कर विद्ध खूनी चंचु पंजे तोड़ पैने जीर्ण डैने ध्वस्त, दूँ मुक्त कर आकाश हंसों औ' बगुलियोंके लिए, नव गर्भधारणके अमित आयाममें गोरी छलकती रसकलसमेंमें भीजती....हर प्रातमें गोपालसे पहले उठे हलधर हठी जोते धराकी पीरको, उस नीरके आह्वान में जो लहलहाए लू लपटमें झुलसते इन्सान को.......।

कुछ कविताएँ 'नयी कविता' लगती हैं, पहले "तो शौक चर्राया अकवितातककी यात्रामें पाँचवाँ सवार बनने का" (पृष्ठ ७)। विषयकी दृष्टिसे ये पंक्तियाँ देखें, "अद्भुत औ' अपरिमेय आदि बिन्दु सर्जनाका तर्जना औ' वर्जना की पहुँचसे बाहर....अपनेमें पूर्ण और पावन है पल-आप विजयोद्धत पुरुष औ' समर्पणपूर्ण नारीका" (पृष्ठ ७३) या "मैंने भी नारीके अंग-अंग तोड़े हैं कहीं डालियाँ-सी जब छितराईं छाती पै" (पृष्ठ ६६)। व्यंजना पद्धति, विषय, स्वरूप और शैली—सभी दृष्टियोंसे जो नयी कविता या अकविता हैं वे हैं—'योग : कर्मसु कौशलम्' (पृष्ठ ६६), जलनकी शोध (पृष्ठ ७०), निष्फल सृजन (पृष्ठ ७४), नया कैलैण्डर (७५), मूढ़ता (पृष्ठ ८१), औचक (पृष्ठ ८२), दिग्मूढ़ (८४) आदि। दो उदाहरण उपस्थित हैं :

"तुम मेरे कमरेमें
स्वयंको टाँग गयी हो
अनावृत
जब देखता हूँ
हर कोण
दृष्टिकोण बन जाता है।"

(पृष्ठ ७५)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा

देखते ही देखते
अकविता भी आगयी
अपुरुष
अनारी
अनावृता"

(पृष्ठ ८२)

वैसे तो सारे संग्रह में प्रसाद गुण परिव्याप्त है किन्तु या तो अपनी असमर्थता है या और कुछ, बहुत प्रयत्न करनेपर भी कुछ कविकाएँ समझमें नहीं आयीं : योगः कर्मसु कौशलम्, वासना वासुदेवस्य (पृष्ठ ६८), जलनकी शोध (पृष्ठ ७०), निष्फल सृजन (पृष्ठ ७४), बाज और बटेर (पृष्ठ ८५), आदि। पृष्ठ १५१ से १७० तक ओजस्वी रचनाएँ हैं। वे वीर भावनाओं से भरी हुई हैं। उनकी भाषा-शैली भी उसीप्रकार की है। पृष्ठ १७३ से १८५ तककी कविता-पंक्तियोंमें किसी आवेशपूर्ण वक्ताका प्रवाह है। काव्यकी पंक्तियोंमें एक सहज गति सर्वत्र है। कविता तुकान्त हो या अतुकान्त, चरण छोटे हों या बड़े या छोटे-बड़े दोनों, प्रवाह बराबर मिलता है। लयकी गतिमें कोई भी बाधा नहीं पड़ती। इस काव्य-संग्रहकी कविताओंमें गति है, आवेश है, उत्साह है, गर्मी है, सरगर्मी है, साधु शब्द योजना है, संस्कार और परिष्कार है, राष्ट्रीयता और मानवताके प्रति प्रेम है, अवांछित एवं रूढ़के विनाशका आह्वान है तो शिव-नव के निर्माणकी प्रेरणा भी है। कल्पना है, विचार हैं, सहज अलंकार हैं और तुक भी है (शब्दों का, शब्दोंकी ध्वनियों और मात्राओंका भी)। फिरभी, इन कविताओंको पढ़ते समय कभी-कभी मुझे रुककर सोचना पड़ गया है; जैसे–क्या झनझनाहटकी गूंज 'आएँ––आएँ––आएँ' की ध्वनि में गूंजती है? पृष्ठ ५१ की तीसरी पंक्तिपर रुका 'खानी' पढ़कर तो विवेकने कहा, "अजी यह 'रवानी' है!" पृष्ठ ५३ पर तीसरी पंक्तिमें 'गौरवान्वित' शब्द प्रवाहकी झोंकमें 'गौरान्वित' पढ़ गया (एक मात्रा की गड़बड़!), पृष्ठ ५६ पर "कलिकी धमकीको 'विनय पत्रिका' ही उत्तर में 'को' पर सोचना पड़ा; पृष्ठ ७२ की पहली पंक्तिमें "पै" का प्रयोग, पृष्ठ ८९ पर "वही सूत्र फिरसे गहूँ" में 'गहूं' का प्रयोग, पृष्ठ १०९ पर छठी पंक्तिमें 'धरते' का प्रयोग, पृष्ठ १२५ पर गतिकी दृष्टिसे 'हिन्दू विश्वविद्यालय' का प्रयोग, गतिकी दृष्टि से, पृष्ठ १३८ पर 'मरालिनी' प्रयोग, पृष्ठ १४७ पर 'उभरी नसोंमें पड़ गया हाथ' में 'में' का प्रयोग और 'पोषा' का प्रयोग, 'फैक्टरियोंसे फौलाद ढले' या 'फैक्टरियोंमें फौलाद ढले' (पृष्ठ १५१), 'विजयादशमी' (या 'विजय दशमी') कविताके कवित्तोंकी वर्ण-संख्याएँ और पंक्तियोंमें प्रवाहकी अवरुद्धता, आदि। बड़े कवियोंकी रचनाओंमें ऐसी बातें न हों तो मुझ-जैसे नन्हे कवियोंकी साधनाका मार्ग सरल हो जाये क्योंकि हम तो उन्हींका अनुकरण करते हैं। इतनेपर भी, "वाणीकी चौकीदारी" (उप कुलपति पद) से इस्तीफा दिये बिना ही डॉ. शिवमंगलसिंह 'सुमन' का यह काव्य-संग्रह आधुनिक काव्य-साहित्यका अपने काव्य-गुणोंके कारण ही महत्वपूर्ण काव्य-ग्रन्थ माना जायेगा। वह नये विचारकों-साहित्यिकोंको सद्प्रेरणा देगा। मैं इसका हार्दिक स्वागत करता हूँ। और इसके लेखकको बधाई देता हूँ।

—डॉ. भोलानाथ 'भ्रमर'

यह संग्रह एक दशकके अन्तरालमें प्रकाशित कवि का सातवाँ संकलन है। सम्पूर्ण कृति ६ खण्डोंमें विभक्त है, और इसमें कुल ७२ रचनाएँ संग्रथित हैं। भूमिका 'संकेत' के अनुसार 'यह संग्रह भानुमतीका पिटारा है।' वास्तवमें संकलित रचनाओंमें बड़ा वैविध्य है। सुमनजी आद्यन्त एक प्रतिबद्ध कवि रहे हैं। एक स्वीकारोक्तिके अनुसार वे प्रगतिशीलताका ठप्पा लगवाकर साहित्यिक रंगरूटोंमें भर्ती हुए थे, अस्तु, संग्रहकी कई रचनाएँ, जैसे वियतनाम, लेनिनग्रादमें पुस्किनकी प्रतिमा देखकर, लेनिन की समाधिपर, होटल यूक्रेन और शेव्हचेन्को आदि स्पष्टतः मार्क्सवादी दर्शनसे उत्प्रेरित हैं। यहाँ कविने मानवीय हितोंका व्यापक समर्थन किया है। 'बेबसी' कवितामें वह जिसप्रकार "मैं मजदूरका बेटा हूँ मुझे काम दो (९९)" की गुहार लगाता है, वह वास्तवमें बड़ी हृदय-स्पर्शी है। उसके कुछ गीत जैसे—"मशाल जलाओ बड़ा अँधेरा है" (१८३) और कुछ स्फुट उक्तियाँ, जैसे—'गेहूँकी बाली रूठ गयी थी भूखोंसे' (१७५) निस्सन्देह प्रगतिवादी भाव-धाराकी द्योतक हैं, किन्तु इनके विपरीत कुछ ऐसीभी रचनाएँ हैं, जिनमें प्रगल्भ प्रकृति प्रेम है, रूमानी भावुकता है, जिस्मानी मांसलता है और प्रतिक्रियावादी स्वर भी। कवि मार्क्सवादसे जितना प्रभावित है, उतना ही गान्धी-दर्शनसे भी। युगपुरुष, गान्धी-शताब्दी आदि कविताएँ इसी कथनकी साक्षी हैं। आश्चर्य तो यह है कि वह महामना मालवीय तथा शास्त्रीजीके हिन्दू-दर्शन, पं० नेहरूके परिवार मुख्यतः इन्दिरा गान्धीके समाजवाद और गौतम महावीर आदि धर्मावतारोंसे भी उतना ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिभूत है । वस्तुतः प्रगतिवादी होते हुए भी 'सुमन' जी भारतीय संस्कृति, राष्ट्रीय इतिहास, अध्यात्म आदिके प्रति 'एलर्जिक' नहीं हैं । वे 'गौतम गान्धीके देश' (१७५) के प्रति लालायित हैं और भारतीय परम्पराओंके प्रति आस्थावान भी । 'विजयादशमी,' 'नया संवत्सर', 'ज्योतिपर्व,' 'मुहूर्तं ज्वलितं श्रेयः' आदि कविताएँ इन्हीं भावधाराओंकी सूचक हैं ।

वस्तुतः 'वाणीकी चौकीदारी' (१७६) करता हुआ कवि उस सबके प्रति प्रस्तुत है, जो समष्टिके लिए शुभ और श्रेयस् है । एक कवितामें वे विविध वादोंका प्रतिवाद करते हुए अपने 'स्वत्व' की घोषणा करते हैं :

"छायावादकी छाया बड़ी शीतल है,
हर नारी अप्सरा, हर मनुष्य मेमना
प्रगतिवाद नारेबाजीमें खो गया
प्रयोगवाद उछलते बारहसिंघे-सा
अपनी ही अटपटी सींघोंमें उलझ गया
मैं धुने जा रहा हूँ पुरानी रुई
हर अँधेरी गलीमें एक काँड़ी जलाकर फेंक देता हूँ
बारूद होगी तो अपने आप पकड़ लेगी...।" (१०२)

यह स्वत्व कविका वैशिष्ट्य भी है, पर उसकी अस्थिरता का सूचक भी । वस्तुतः मंचीय कवि होनेके कारण 'सुमन' जी अवसरवादसे नहीं बच पाते, उनका कवि वक्तकी माँग और श्रोताओंकी रुचिका अनुगत जो है । यही कारण है कि इस उच्च-उदात्त मानवतावादी भूमिकापर होकर भी वे कैशोर रसिकतामें फँस जाते हैं, दृष्टव्य : चैतीचाव, केशरकुसुम, सुलगते क्षण, जलनकी शोध, उन्माद, सूनी साँझ आदि ।

एक और बहुत बड़ी विडम्बना यह है कि इस संकलन में कविको 'अकविता' तककी यात्रामें 'पाँचवाँ सवार बनने का शौक चर्राया' है, फिरभी यथासम्भव उसने 'अपनी जमीन नहीं छोड़ी' है । हाँ, यह निस्संकोच स्वीकार्य है कि 'अकविता' में कवि विधिवत् नहीं चल पाया है । यद्यपि 'नया कलेण्डर,' 'शहरका अन्देशा,' 'औचक' आदि कविताओंमें उसने भाषा और भावके विरूपनका यत्न करके कविताको खुरदरी, अनगढ़ एवं असम्बद्ध-सा बना दिया है, फिरभी उसके अनभ्यस्त हाथ केवल अकविताके ढाँचेको छू पाये हैं, उस भावबोधको नहीं । कवि स्वयं स्वीकार करता है :

"देखते ही देखते अकविता भी आ गयी ! (८२)

सुमनजीकी ये अकविताएँ (बल्कि नयी कविताएँ) 'मुक्त सभी समाचार-[illegible]में एकत्र हैं । यहाँ अन्तरतुकान्तता, लय और गति, जो 'सुमन' जी की कविताओंकी विशेषता है, लुप्त हो गयी है ।

सुमनजीके गीतोंमें शब्दोंकी वीप्सामूलक आवृत्ति बहूपलब्ध है जैसे—

कुलबुल कुलबुल नीड़ नीड़ में
चहचह चहचह भीड़ भीड़ में...।" (९७)
'घने घने बनें विरल, जमें जमें तरल तरल' (९५)

यह आवृत्ति गेयत्वमें सहायक होती है और मंचोंके लिए उपयोगी भी । मंचीयताके कारण कवि नाटकीयता, वक्तृत्व, सपाटबयानी, सम्प्रेषणीयता आदिको अधिक प्रश्रय देता है और फलतः कवित्व, अर्थात् बिम्ब-योजना, कल्पना विधान, वाग्वैदग्ध्य आदि गौण रह जाते हैं ।

प्रस्तुत संकलनमें कई काव्यरूप भी प्राप्य हैं । यहाँ 'मिट्टीकी बारात' शीर्षक गीतिनाट्य भी है, 'मुक्तसंग,' 'समयका फेर,' 'चलते-चलते' जैसी लघु कविताएँ भी हैं और 'मैं समझा था मर गया अभी तो जिन्दा हूँ ।' 'मशाल जलाओ बड़ा अँधेरा है,' 'सिपाहीका पत्र' आदि कुछ पुराने दीर्घगीत एवं सुप्रचलित दीर्घ कविताएँ भी । छन्दोंमें गीत घनाक्षरीसे लेकर मुक्त छन्दतक सभी रूप प्रयुक्त हैं । तात्पर्य यह कि भाषा, भाव और शिल्प सभीमें यहाँ बहुरूपियापन दिखायी देता है, फलतः इसका अपना मुहावरा खो गया है । मेरे विनम्र मतानुसार पूर्ण सुनिर्धारित एवं सुसंयोजित न होनेके कारण 'सुमन' जी का यह संकलन कोई ऐतिहासिक उपलब्धि तो नहीं बन पाया है, फिरभी यह विवेचनीय और प्रशंसनीय अवश्य है ।

—डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

बावरा अहेरी

कवि : अज्ञेय; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, बी/४५-४७, कनॉट प्लेस, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : ५७; डिमाई, ७२; द्वि. सं.; मूल्य : ६.०० रु. ।

१९५४ में "बावरा अहेरी" जब पहली बार प्रकाशित हुआ तो तत्कालीन कविता-सन्दर्भमें अपनी कई विशेषताओंके कारण पाठकोंका ध्यान आकर्षित कर सका और उस कालकी महत्वपूर्ण कृति मान लिया गया । १७-१८ वर्ष बाद अब जबकि उसका दूसरा संस्करण प्रकाशित हुआ है, तबभी समकालीन कविताका स्वर इतना बदला हुआ है कि उसके बीच वह फिर विशिष्ट ही लगता है । 'अज्ञेय' उस समय नयी काव्य-भाषाके प्रयोक्ता बनकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामने आये। "बावरा अहेरी" में नये उपमानोंका टटकापन भी मिला और तद्भव या तद्भवाभास एवं लोक-शब्दावलीका उजलापन भी। सुघर काव्य-शिल्पीके साथ-साथ 'अज्ञेय' का लोकगीतका शब्द-शिल्पी भी मुखर हुआ। ऐसी कविताओंमें नवीन अर्थच्छवियों के साथ सुमधुर नाद-योजनाका संयोग आकर्षक सिद्ध हुआ। दूसरी ओर "आज तुम शब्द न दो," "यह दीप अकेला" या "जो कहा नहीं गया" जैसी कविताओंमें अभिव्यक्तिकी सरल भाषाभिव्यंजना भी प्रभावकारी सिद्ध हुई। 'अज्ञेय' के इसप्रकार के प्रयोग इतने आकर्षक प्रतीत हुए कि कवियोंकी एक काफी बड़ी जमात उनका अनुकरण कर चली। अतः प्रेरकके रूपमें समकालीन कविताके सन्दर्भमें "बावरा अहेरी" का विशेष महत्व है।

"बावरा अहेरी" की कविताओंमें 'अज्ञेय' ने जिस प्रतीकात्मक-अभिव्यंजना और काव्यशिल्पकी चमत्कारपूर्ण उद्भावनाओंका परिचय दिया वह तो महत्वपूर्ण रहा ही, भावात्मक स्तरपर भी संकल्पकी दृढ़ता और अनासक्तिके उनके नये स्तरने उन्हें अपनी पहली रचनाओंकी आसक्ति और अतृप्तिसे अलग ला खड़ा किया। 'अज्ञेय' के परवर्ती काव्यमें भी इन स्वरोंकी गूंज बनी रही। प्रतीक-पद्धति के प्रति उनका मोह तो उनके तत्सम्बन्धी लेखोंमें भी स्पष्ट दिखायी देता है। "आलबाल" संग्रहमें तथा अन्यत्र उन्होंने उसका विशेष विवेचन किया है।

इन्हीं कविताओंमें एक और स्वर है जो आगे चलकर 'अज्ञेय' में प्रमुख होता गया और उनके लिए विवादका कारण भी बना। यह स्वर आत्मनिवेदन का है जिसके माध्यमसे 'अज्ञेय' अध्यात्म-भूमिपर संचरणके लिए तैयारी करते दिखायी पड़ते हैं। अध्यात्म-भूमिपर पदन्यासका यह प्रयत्न यद्यपि किसी वैयक्तिक उपलब्धिकी लालसासे नहीं किया गया था, विराट् जीवन-स्रोतसे जुड़ जानेके लिए था, किन्तु बादमें उसकी परिणति उन्हें एकान्तमें डालती गयी और समकालीन कवितासे उनका मेल कम होता गया। यहीं उन्हें नकारनेकी स्थिति भी आ पहुँची।

"बावरा अहेरी" में ऐसी अनेक कविताएँ हैं, जिनमें प्रकृतिके सौन्दर्यका अत्यन्त रम्य तथा आनन्द और उल्लासमय दृश्यांकन हुआ है। प्रकृति-चित्रणमें वस्तु-सौन्दर्यके उद्घाटनके साथ 'अज्ञेय' के भावात्मक सहयोग का उनसे परिचय मिलता है। आजकी ठेठ वस्तुपरक गद्यात्मक भाषा और सामयिक जीवन के सन्त्रास, घुटन, उत्पीड़न और तज्जनित आक्रोशकी कविताओंके बीच 'अज्ञेय' की ये कविताएँ पर्याप्त रूमानी और रंग-रहसपूर्ण लग सकती हैं। लेकिन कुल मिलकर इस संग्रहकी कविताओंमें कुछ ऐसी विविधता है जो किसी-न-किसी स्तरपर 'अज्ञेय' को तात्कालिक कविताका प्रेरक सिद्ध करनेके साथही उन्हें समकालीन अभिव्यक्तिके साथ भी जोड़ती है या उन्हें उसका अग्रगन्ता प्रमाणित करती है। स्वयं उनके कवि-व्यक्तित्वके ऐतिहासिक विकास-क्रमको समझनेके लिए तो इन कविताओंके आर-पार देखे बिना रहा ही नहीं जा सकता, समकालिक बोधके लिए भी इनका महत्व है।

—डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित

जय भारत : जय भारती

कवि : ओमप्रकाश मिश्र, बी-१४, विक्रमनगर, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ५४; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.५० रु.।

एक अलग दस्तावेज़

सम्पादक : अजीतसिंह, विजयराय, सी-२७/२७ ए-५ जगतगंज, वाराणसी। पृष्ठ : ४८; मूल्य : १.०० रु.।

नवोदित स्मारिका

सम्पादक : सत्यमोहन वर्मा; प्रकाशक : नवोदित साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्था, दमोह (म. प्र.)। पृष्ठ : ३८; डिमाई, ७२।

विगत बीस वर्षोंकी साधनाके बाद श्री ओमप्रकाश मिश्रने 'जय भारत जय भारती' का प्रकाशन किया है। इसमें कुल ३२ रचनाएँ हैं, जिनमें अधिकांश गीत अथवा गीतपरक कविताएँ हैं। गीत विधामें अनेक कवियोंने पर्याप्त संस्कारकर उसे आधुनिक जीवनकी संवेदनाओंकी अभिव्यक्तिका माध्यम बनाया है और उसे छायावादी कुहासे तथा छायावादोत्तर उन्मादसे बाहर निकालकर यथार्थ की ठोस भूमिसे परिचित करानेका प्रयास किया है। ओमप्रकाश मिश्रके गीत इस दिशाकी ओर पाँव बढ़ा रहे हैं, भलेही वे किसी मंजिलतक नहीं पहुँचे। उनमें नवीन सम्भावनाएँ निहित हैं। 'वनवासिन शाम,' 'जलते दीप कई जीवनमें,' 'अर्चनाके फूल हैं ये' श्रेष्ठ गीत हैं। इनकी भावभूमि जीवनके अवसाद, संघर्षजनित थकान, मानवकी जिजीविषा और किसी प्रेयके प्रति समर्पण भावतक सीमित है। इनमें जीवनके बृहत्तर सन्दर्भ नहीं उभरते। शिल्प की नवीनताके बावजूद इनका कथ्य परम्पराभुक्त लगता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ गीत ऐसे हैं, जिनका शिल्प पुराना-सा है, पर उनमें आधुनिक जनजागरणका स्वर है, जैसे 'खेतों खलिहानोंमें नए सवेरे,' 'नई उमंगें नई तरंगें नया जमाना लाया हूँ,' 'शब्द हूँ दर्पणका संगीत' आदि। जहाँ कथ्य एवं अभिव्यंजना-शिल्पमें सामंजस्य एवं नवीनताका समावेश हो सका है, वहाँ सफल नवगीतकी सृष्टि हो सकी है। 'दीवारोंपर चिपके इश्तहार हम' ऐसीही सुन्दर कृति है, जिसका यह अंश देखिये :

शापित हर यौवन, विस्थापित सम्बन्ध
सपनेमें नींदका अभाव
बनजारे गीतोंने खाई सौगन्ध
इसलिए छन्दहीन भाव,

रचनाकी ड्योढ़ीपर प्रश्नोंके फन
वस्त्रहीन रेखाएँ वस्त्रहीन तन
दीवारोंपर चिपके इश्तहार हम,
जाने क्या ढूँढ़ रहे द्वार-द्वार हम।

कहीं-कहीं मिश्रजीकी भावोच्छ्वासयुक्त दृष्टि, और घिसी-पिटी प्रकृति-विषयक शब्दावली छायावादी काव्य-पद्धतिका स्मरण कराती है, जैसे 'जीवनपथपर धीरे-धीरे' में। यहाँ 'रश्मि अंजुरियों' के साथ 'छायागीतों' का सुमित्रानन्दन पन्तके समान उल्लेख और फिर महादेवी वर्माके ढंगपर 'मेरे चिरपरिचित सम्बन्धी जीवन पथपर धीरे-धीरे' का दर्शन होता है। अन्तर इतना है कि महादेवीका 'पाहुन' यहाँ 'चिरपरिचित सम्बन्धी' हो गया है। इसप्रकार के गीतोंमें भावोन्मेष अधिक और बौद्धिक चिन्तनका अभाव है।

'गाँवकी सुबह' में कविने यथार्थपर दृष्टि जमायी है, पर उसने गाँवकी गन्दगी ही देखी, वहाँ उठते पक्के मकानों, बिजलीके नवीन प्रकाश, बैलोंके सींगोंमें टंगे ट्रांजिस्टरको नहीं देखा। क्या यह यथार्थका एकांगी निरूपण नहीं हुआ? 'भिष्टा' शब्दका एकही रचनामें चार बार प्रयोग करके उसने सूझ-बूझका परिचय नहीं दिया।

इस संग्रहकी अन्तिम दो कविताएँ 'ओ नवयुगके पहरेदारो' तथा 'चट्टानो सावधान' बड़ी सशक्त हैं। इनमें कवि जितना खुला है, उतना पहले नहीं।

× × ×

'एक अलग दस्तावेज' इकतालीस प्रगतिवादी कवियों की नयी-पुरानी कविताओंका संकलन है, जिनमें कुछ विदेशी भी हैं, जैसे—पुश्किन, होचीमिन्ह, वोज्नेसेन्स्की, [illegible] गुन्टेर कुनर्ट, जिनकी कविताओंके अनुवाद शोभावृद्धिके लिए सम्मिलित किये गये हैं। इनमें कुछ कवि ऐसे हैं जो संकलनमें स्थान पानेके मोहसे प्रगतिवादी हो गये, और कुछ ऐसे भी जो कभी प्रगतिवादी थे। तात्पर्य यह कि इसे हिन्दीके प्रगतिवादी कहे जानेवाले कवियोंकी रचनाओंका प्रतिनिधि-संकलन नहीं कहा जा सकता।

मुक्तिबोध, नागार्जुन, रांगेय राघव आदि कुछ प्रगतिवादियोंको इसमें सम्मिलित अवश्य किया गया, पर उनकी उत्कृष्ट रचनाओंका चयन नहीं किया गया। शमशेर बहादुरसिंहकी 'सागरतट' शीर्षक कवितामें प्रगतिवादके किन तत्वोंका समावेश है, इसका अन्वेषण कोई बिरला ही कर सकेगा।

नागार्जुन कृत 'खाली नहीं और खाली' एक कटु व्यंग्य है। राजकमल चौधरीके जीवनकी जटिलताएँ और कुण्ठाएँ उनकी 'जटिलताएँ' शीर्षक रचनामें भी हैं। 'सूखी अँतड़ियों का भूकम्प' में शलभ श्री रामसिंहने बँगला देशकी भूखी जनताकी वेदनाको साकार किया है। धूमिल कृत 'आतिशके अनार-सी वह लड़की' अनेक असंगतियोंकी शिकार है। दयाशंकर मिश्रकी रचना अति सपाट है, जो सुप्त आत्माको कल जगानेका आश्वासन देकर कायरताके स्वरमें खो जाती है। 'हिन्दुस्तानी भोजन' के अन्तर्गत अनेक भोज्य पदार्थोंकी सूची देनेमें क्या काव्यत्व है?

कुल मिलाकर 'एक अलग दस्तावेज़' एक साधारण संकलन है।

× × ×

'नवोदित स्मारिका' का यह दूसरा अंक है। इसमें मध्यप्रदेशके ३१ कवियोंकी कविताएँ संकलित हैं। दो-एक को छोड़कर प्रायः सभी नवोदित कवि हैं अथवा उदयके लिए आकुल हैं। सत्यमोहन वर्मा, विट्ठलभाई पटेल, जगदीश श्रीवास्तव, हरिराम रायकवार, श्रीकान्त चौधरी, नारायण सिंह ठाकुर, बाबूलाल सेनकी कविताएँ अपने रचनाकारों की कवि-प्रतिभाका प्रमाण देती हैं। दिनकर सोनवलकर युवापीढ़ीके सुपरिचित कवि हैं, पर इस संकलनमें उनकी रचना बड़ी साधारण है।

यदि सम्पादक निर्ममतापूर्वक रचनाओंका चयन करते अथवा उन्हें इतनी स्वतन्त्रता दी गयी होती, तो मेरा विश्वास है कि 'स्मारिका' के प्रकाशनका उद्देश्य अधिक सफल होता। कवियोंके सम्मिलित प्रयासके लिए मेरी बधाई।

—डॉ. सुधेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये टूटते अँधेरे

कवि : डॉ. देवेन्द्र आर्य; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : ७२; डिमाई, ७२; मूल्य : ५.०० रु.।

जबसे हिन्दी-कविता-संसारमें कुछ आड़ी-तिरछी, उल्टी-सीधी रेखाओंको लेकर वक्तव्योंको ही कविता कहा जाने लगा और नयी कविता, अकविता आदिको सराहा जाने लगा तबसे कुकविता भी कविताकी श्रेणीमें गिनी जाने लगी। ऐसी स्थितिमें 'कोई कवि बन जाये सहज सम्भाव्य है।' कवि असंख्य और कविताएँ अनन्त हैं; किन्तु इतना होनेपर भी 'चौराहेपर खड़े होकर उच्च स्वरमें सन्त्रास, अभाव और अँधेरोंकी बात करनेवाले जिस दिशाहीन शून्यकी ओर बढ़ रहे हैं, उसका कहीं अन्त नहीं, कोई समाधान नहीं। ऐसा क्यों? 'लगता है जीवनके शाश्वत मूल्योंके प्रति उनकी आस्था कहींसे चरमरा उठी है, यह सब तो है, 'पर मानवकी जिजीविषा घोर संघर्षोंमें भी अपना रास्ता खोजती रही है, उसका ऊर्जस्वित-बोध थक कर न कभी बैठा है और न कभी बैठेगा।' इस सत्यको पहचानने और समझनेवाले डॉक्टर देवेन्द्र आर्य प्रकाशकी खोजके लिए अग्रसर हैं, वे उस दिशाकी खोजमें हैं जो खो गयी है। इसीलिए 'ये टूटते अँधेरे' की जमीनपर खड़े होकर 'प्रकाशकी ओर' संकेत करते हुए कहते हैं : 'मैं निराशा और सन्त्रासके नहीं, आशा और विश्वासके स्वर सजाता हूँ ताकि नया पट खुले और खोया विवेक लौट सके। इस आग्रहको या प्रतिबद्धताको लेकर संग्रहमें लगभग ४१ कविताएँ रखी गयी हैं। कवि जानता है कि जो मार्ग उसने चुना है, उसे कोई स्वीकार नहीं करेगा, अन्तः वह लिखता है :

'अनाचार, अत्याचार, उत्पीड़न
पन्थकी तमिस्राको
गहराती समस्याके विषको
आजभी कलभी
अपने लिए, सबके लिए
विषपायी शिव-सा
अकेला हो पियूंगा मैं।'

कवि जानता है—'मौतके सायेमें पलकर ही, अमर गीत गाये जाते हैं, वही सूरज परवान चढ़ते हैं, जो काली निशामें किरणोंको समेट पलते हैं, रोज, सुबहके लिए, अँधेरा लपेट चलते हैं।' वह नक़ाबमें ढँके चेहरोंको और उनकी नियतिको भी पहचानता है : 'तुम्हारे चेहरेपर जो नक़ाब है, रहने दो, उसे मैं उतारूँगा नहीं, कल—जब युगबोध पैरों चलने लगेगा, तब स्वयं ही, तमका गला दबाकर प्रकाश खींच लाएगा।'

प्रश्न यह है कि देवेन्द्र आर्य ही इस सबको जानते हैं, वे नेता भी तो जानते हैं जो भाषणबाजीमें बहुत आगे हैं। क्या दूसरे लोगोंको नया सूरज दिखायी नहीं देता? हाँ, नहीं दिखायी देता। कारण—'खोटी किरण बाँध, सूरजका हो कैसे अहसास।' स्पष्ट है कि जब हम कथनी और करनीको एक मंचपर बिठायेंगे तो अँधेरे टूट जायेंगे और नयी किरण फूटेगी।

हम गन्तव्यतक पहुँच क्यों नहीं पा रहे? क्या हमारा अतीत वर्तमानको पुष्ट करता भविष्यकी कोखमें कुछ और अच्छा जन्मनेके लिए नहीं छोड़ पाया? असलमें आजका युग ही इतना संक्रान्त है कि सारे 'सन्दर्भ बदल गये हैं।' फलतः—

'घोंसलोंमें उजाला सहमा-सा बैठा है। अँधेरेकी डालियोंपर बाज़ उतर आये हैं। अब कोई वाल्मीकि मैथुनरत क्रौंचवधपर मर्सिया नहीं गायेगा। खूनसे गीले क्षत पंखोंको सात समुन्दर पार अनाम बस्तियोंमें दफ़ना सरयूतटपर निर्विकार बैठ जायेगा। लगता है—रामकी भुजाओंमें समझौता घुस बैठा है। लक्ष्मण-रेखा अधखिची या बीच से टूट गयी है। सीताकी लाजपर लंका नहीं जलेगी अब। दशमुख उगलता है आग। प्रबुद्ध चेतनामें कुम्भकर्ण उभर आया है। अशोक वनमें पलते हैं पिशाच। और हनूमान की पूँछ छोटी पड़ गयी है। विद्रोही हो गये हैं मेरे सभी अर्थ और सन्दर्भ। लगता है—शून्य चौराहोंपर खड़ा, विरासती शब्दोंकी भीड़में कुचल गया हूँ। कहनेको वस्त्र तो पहने हूँ, पर निर्वस्त्र-सा हो गया हूँ।'

यह गद्यांश श्री कुबेरनाथ रायके किसी निबन्धसे नहीं लिया गया है। डॉ. देवेन्द्रकी एक पूरी कविता है—'सन्दर्भ बदल गये हैं।' और यहीं मैं कहूँगा कि देवेन्द्रकी अभिव्यक्ति बहुत सशक्त है, उनके कथनका ढंग अपना और प्रभाविक है। कुछ कविताएँ अपने कलेवरमें बहुत ही लघुकाय हैं; किन्तु उनका वजन बहुत है। 'संघर्ष' को ही लें, वह कविता कविके सजल उद्देश्यका उद्घोष करती हैं; एक वास्तविकता है :

'शायद कुछ आसान है
छुई-मुईको बाँध रखना,
पर—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कितना कठिन है
शमीवृक्षकी
(टूटे जानेपर भी)
अदम्य जिजीविषाको
अनपेक्षित शिकंजोंसे
मौत तक ले जाना।'

आपको इसी स्वरकी एक और कविता बहुत भली लगेगी—'टूटा दर्पण : नई धूप।' इस संग्रहकी इसप्रकार की कविताएँ ही नहीं, गीतभी बहुत भले लगेंगे। कई गीत तो बहुत ही मनोरम हैं। भाव, भाषा, अभिव्यक्तिकी दृष्टि से उत्तम।

संग्रहकी कविताएँ पठनीय, प्रशंसनीय और प्रेरक हैं। अन्तमें इतना अवश्य कहूँगा कि यदि कवि सामयिक सन्दर्भों से अपने आपको बचा पाता और उस विवादास्पद राजनीतिसे अपनेको अलग ही रखता तो अच्छा था कि जिसका भ्रूण पूरी तरह पक भी नहीं पाया है। भविष्यकी कौन कहे?

—विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक'

कविताके हाथ

कवि : श्याम विमल; प्रकाशक : स्वयम् प्रकाशन, १-बी/२२, लाजपतनगर, नयी दिल्ली-२४। पृष्ठ : २०; डिमाई, ७२; अमूल्य।

श्याम विमल, 'दीमककी भाषा' लिखनेसे पूर्व, 'व्यामोह' में जितना स्पष्ट था, अपनेको कविता और अपने शब्दोंके कविताके हाथ सौंपकर आज कहीं अधिक व्यामुग्ध कर बैठा है। निःसन्देह उसका वाक्य वाच्य भी है, व्यंग्य भी है, तीखा भी है, गण्य भी। दुःख है तो यही कि वह सलक्ष्य नहीं है। 'कविताके हाथ' की ही पंक्तियाँ यदि इधर-उधर जोड़ दूँ, तो :

कुछ नहीं हो सकनेपर वह
...माथेपर लकीरें भींचता है
......
उसकी झुर्रियोंमें अँधेरा
भर रहा है।......

...आवाजका झूलता पेंडुलम...होकर कितनी यात्रा कर पायेगा वह? 'रेत होता हुआ एक दरिया' होना मुझे उसकी मजबूरी नहीं प्रतीत होता। दिनकी तरह वह भी...
...। दौड़ रहा है
क्यों दौड़ रहा है? नामालूम

...तो क्या यह भटकाव मात्र फैशन है? श्याम विमलकी प्रतिभासे किसीको इनकार नहीं हो सकता। चौदह पृष्ठकी यह लम्बी कविता स्वयं इसका अच्छा उदाहरण है, किन्तु यह श्रम अमूल्य होता यदि वह पहचान पाता कि 'उसका विरोधी कौन है?' अभीतो वह 'उस अज्ञात विरोधीकी तलाशमें...खामोश आँसूमें नहाया हुआ...संशयोंमें गिर रहा है।'

मेरे विचार और श्याम विमलके विचार लक्ष्य भेदमें पृथक् हो सकते हैं, 'कविताके हाथ' से श्याम विमल निम्न मध्य वर्गकी मूक-वेदनाको कुरेद गया है, इसे सब मानेंगे, मान्य है।

—ओम्प्रकाश भाटिया 'अराज'

दिखती नहीं अपनी ही छाँह

कवि : वसन्त रामकृष्ण देव; प्रकाशक : कृष्णा ब्रदर्स, कचहरी रोड, अजमेर। पृष्ठ : ७७; डिमाई, ७१; मूल्य : ४.०० रु.।

'दिखती नहीं अपनी ही छाँह' वसन्तदेवकी स्थापित हिन्दी-कविता-संसारमें नूतन प्रविष्टि है। इसे पढ़ते हुए लगता है, जैसे कहीं बड़ी भीड़में किसीसे बतिया रहे हों। कई कविताएँ—यूँ कहा जाये—बोझिल हैं, पाठक उन्हें वहन करनेमें—कथ्यसे संवेदित नहीं होता जैसे :

जिसका शीर्ष नवनीतके रक्तचन्दनसे चिह्नित है उसके हृदयमें सूर्योदय शीर्षस्थ होता है।
सिकताका कण-कण सहस्राक्ष बनता है, धरतीमें धँसे वृक्षोंके प्रतिबिम्बोंको चलते हुए देखनेको
उसका तो हिलता है सिर्फ बाँया हाथ पद्मांकित : चुटकीसे
फिसल गिरी अन्धी किरणें उठाकर सीनेसे लगानेको।

कुछ कविताएँ संप्रेषण भी करती हैं, जैसे—कैवल्य, एक इतिहास लिप्त नगर, मन नाहीं बसमें, हम कविता पढ़ते हैं, सुबह, कद, लोग, दादर तट इत्यादि। 'पौरुष' और 'सुबह' शहरके परुष-प्रवाहको चखती-चखाती लगती है, जबकि 'प्रवचन' नीरज-टाइप गीतोंसे थोड़ा-सा 'दाहिने देख' गीत है। पद, चौरासी लाखकी वार्त्ता, ब्लफिंग : ताशका एक खेल, किस्सा चूहा बिल्ली आदि कविताएँ व्यंग्य रचनाओंके रूपमें खींचती हैं पर अनेक रचनाओंमें जो नवीनतम प्रयोगका आग्रह है वह अच्छा प्रभाव नहीं डालता, जैसे—झूरा गुलाब, जोगीड़ा जोंकें, गभुआरी शपथ, गभुआरे बाल, कसबिन कसमें, जारिणी ईर्ष्या वगैरह। ये शब्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविताको स्थानीय स्पर्श देते हैं, जिससे सार्वदेशिकतामें बाधा पड़ती है। कुछ प्रयोगोंमें ग्राम्यत्व दोष प्रभावशीलता को समाप्त करता है—'इंजनकी सीटी छुरी-सी बजती,' बीड़ीका सुड़का मार जाओ, 'सिगरेटके सुड़के मारकर' आदि। मुक्तिबोधसे सम्बन्धित 'अक्षयवटकी व्रण रेखाएँ' और बाइस जनवरी उन्नीस सौ पैंसठ रचनाएँ अच्छी बन पड़ी हैं।

कहीं-कहीं प्रयोगोंमें ताजगी है :

बूढ़ा चूल्हा चिड़चिड़ा रहा होगा नयी नीली लकड़ीपर
और बटलोई बूढ़ी सास-सी बड़बड़ाती होगी।

× × ×

कुलबुलकर पत्तोंमें उगता है: हवामें झूलता है;
फूलता है देहमें : फागुन-सा।

कुल मिलाकर भी संकलन सामान्य प्रभाव ही उत्पन्न कर पाता है। आज कविताके साथ वक्तव्यकी जरूरत न रही हो, पर समीक्ष्य संकलनमें वक्तव्यका अभाव महसूस होता है, आखिर पाठक भीड़में बतियाये किससे?

गेटअप सामान्य है, शुद्धिपत्र संलग्न होनेके बावजूद कहीं-कहीं गलतियाँ हैं।

—ब्रजकिशोर शर्मा

उर्दू-काव्य

कविश्री : नज़ीर

सम्पादक तथा लिप्यन्तरकार : अमीर मोहम्मद खान; प्रकाशक : सेतु प्रकाशन, झांसी। पृष्ठ : ९५; डिमाई, ७१; मूल्य : ३.०० रु.।

नज़ीर अकबराबादीपर उर्दूमें कई पुस्तकें और लेख अबतक प्रकाशित हो चुके हैं जिनमें उनकी शायरी और उसके प्रभावका विस्तारके साथ विवेचन किया गया। है। उनकी साहित्यिक प्रवृत्तिको एक ऐसे युगमें प्रस्तुत किया गया जब उर्दू शायरी केवल दरबारोंकी शानदार रिवायतोंको पेश कर रही थी। इस सम्बन्धमें उर्दू के प्रसिद्ध आलोचक मजनूं गोरखपुरीने गम्भीरताके साथ नज़ीरकी कविताओंमें उन प्रवृत्तियोंपर विस्तारसे विचार किया जिनका मनुष्य की आम समस्याओंसे गहरा सम्बन्ध था।

पुस्तकका महत्व इस कारण भी है कि इसका प्रकाशन ऐसे समय हुआ है जब सारा देश भावात्मक एकताकी आवश्यकता महसूस कर रहा है, और हम एक दूसरेके और निकट आनेकी कोशिशमें जुटे हुए हैं। इसी कारण ऐसे शायरकी शायरीका प्रचार जरूरी हो गया है जिनमें एकताके रंग शामिल हों। नज़ीर इस सम्बन्धमें सबसे अधिक सफल कवि हैं जिनके यहाँ न केवल शबेबरात और इदुलफ़ितरपर ही कविताएँ मिलती हैं वरन् होली, राखी और दीवालीपर भी बड़ी सुन्दर कविताएँ पायी जाती हैं। जहाँ नज़ीरने महरावे हरमके सामने सर झुकाया है, वहीं गुरु नानक, कन्हैया और रामको भी श्रद्धाके फूल अर्पित किये हैं। सम्पादकने बड़ी खूबीके साथ नज़ीरके कालकी पृष्ठभूमिकी वैज्ञानिक दृष्टिकोणसे व्याख्या की है और उसमें वह सफल भी है।

उर्दू शायरीपर फ़ारसी शायरीका प्रभाव रहा है जिसके कारण ईरानी मिजाजने उर्दू के शायरको हुस्नोइश्क के ऐसे पहलुओंकी ओर भी झुकाया जिनमें केवल नाजुक मिज़ाजी और नफ़ासत थी और जिसे दरबारोंकी निगरानी और बाजारोंकी सजावटने और अधिक मज़बूत किया। इस प्रभावसे बचना और ऐसे माहोलसे खुदको अलग रखना कठिन अवश्य था परन्तु नज़ीरने इस कठिनाईको आसान बनाया जिसके कारण उन्हें एक शताब्दीतक गुमनामी में अपना जीवन गुज़ारना पड़ा। यहाँतक कि लेखकके अनुसार इस महान् कविकी ओर लोगों (उर्दूवालों) का ध्यान अभी-अभी पिछले कुछ सालोंसे गया है।

लेखकने पूर्ण दायित्वके साथ उर्दू-साहित्यके प्रथम जनकविपर विस्तारसे लिखकर यह दर्शाया है कि किस प्रकार वह आम जनताकी खुशीमें खुश होता रहा और अपनी कविताओंकी चित्रकला दीर्घामें भारतके जनजीवन की झाँकी चित्रित करता रहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नज़ीरने उर्दू शायरीको सर्वप्रथम आम बोलचालके हिन्दीके असंख्य नये-नये शब्दोंसे न केवल परिचित कराया वरन् उन शब्दोंका सुन्दर प्रयोग भी किया जिस कारण उर्दू शायरी ऐसे वातावरणमें, जबकि उसे चारों ओरसे पुरानेपनने घेर लिया था, एक नये मोड़से परिचित हुई। हालाँकि नज़ीरकी इस कोशिशको उनके ज़माने और बादके साहित्यकारोंने "अनपढ़" की शायरीका ख़िताब देकर उसका कोई महत्व नहीं समझा। लेकिन आज समय बदल चुका है, नज़ीरको अनपढ़ बतानेवाले साहित्यकार नज़र नहीं आते, जबकि नज़ीर धीरे-धीरे प्रसिद्धिकी ओर बढ़कर उस स्थानपर पहुँच चुके हैं जहाँ उन्हें उर्दूका पहला अवामी शायर मान लिया गया है। इस ओर सम्पादकने पाश्चात्य विद्वानोंके हवालोंसे काफी विस्तारसे प्रकाश डाला है।

"वातावरणसे साहित्यकी पृष्ठभूमि तैयार होती है।" इस दृष्टिकोणको नज़रमें रखकर नज़ीरके समयकी राजनीतिक परिस्थितियोंकी भी व्याख्या लेखकने बड़ी खूबीके साथ की है जो उर्दू-साहित्यमें अपने ढंगकी है।

नज़ीरकी नज़्मोंका चयन बहुत ही चतुरतासे किया गया है।

पुस्तककी छपाई और तरतीब तो अच्छी है लेकिन भाषाकी अशुद्धियोंके कारण एक लम्बा शुद्धि-पत्र देना पड़ा है। यह सम्पादककी ईमानदारी है, लेकिन प्रकाशककी लापरवाही—जिसे हिन्दीके लिए ठीक नहीं कहा जा सकता।

यह पुस्तक उन पाठकोंके लिए ज्यादा लाभदायक है जो उर्दू शायरीमें जीवनको, खासकर आम जीवनको खुले रूपमें देखना चाहते हैं।

—अज़ीज़ इन्दौरी

आलोचना और शोध प्रबन्ध

तुलसी-साहित्यमें बिम्ब-योजना

लेखिका : डॉ. सुशीला शर्मा; प्रकाशक : कोणार्क प्रकाशन, दिल्ली-७। पृष्ठ : ३३२; डिमाई, ७२; मूल्य : ३०.०० रु.।

हिन्दी-साहित्यमें अनुसन्धानके विषयोंमें इन वर्षोंमें कवियोंकी 'बिम्ब-योजना' का अध्ययन एक प्रमुख विषय रहा है। बहुत अंशतक यह उचित भी है। कविका काव्य जीवनसे ही उद्भूत होता है। जीवनके आन्तरिक और वाह्य परिपार्श्वमेंसे बहुत कुछ लेखकके व्यक्तित्वसे अभिन्न होकर अभिव्यक्त होता है। सामान्य लेखक, विशेषकर गद्यलेखक, प्रायः इसे यथावत् या स्पष्ट रूपमें प्रकट कर देता है, जबकि कवि अपने माध्यमपर शब्दों की सीमा लगाकर भी उसी अनुभूतिको अधिक गहराई और प्रभावकताके साथ अभिव्यक्ति देना चाहता है। इसीलिए अपनी अनुभूतिको अधिक सशक्त रूपमें व्यक्त करनेके लिए वह अपने चारों ओरसे कुछ ऐसे उपादानोंको चुन लेता है, जिनसे उसके सम्भावित पाठक भी भलीभाँति परिचित होते हैं। जब वह इनके माध्यमसे अपनी अनुभूतिको अभिव्यक्त करना चाहता है, तब वह इन्हें ही अत्यन्त सजीव रूपमें चित्रित करता है। इनकी सजीवता ही कविकी अनुभूतिको सप्राण और गतिमय बना सकती है। ये उपादान ही उसके काव्यके 'बिम्ब' कहलाते हैं। कविकी सफलता-असफलता उसके द्वारा इन्हीं बिम्बोंके चुनावपर निर्भर करती है। जब-जब कवि ने अनुभूतिसे परेके या निरे काल्पनिक बिम्बोंको अभिव्यक्तिका माध्यम बनाया है, वह अपने प्रयोजनमें सर्वथा असफल रहा है। जिस व्यक्तिने कभी मरुस्थल या समुद्र देखा नहीं, वह काव्यमें उनकी विशालता और पिपासाको अपनी अनुभूतिका माध्यम बना ही कैसे सकता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह बात तुलसी जैसे कविके विषयमें भी सत्य है। जीवन से गृहीत और अनुभूत बिम्ब जहाँ उनके काव्यमें अत्यधिक प्रभावपूर्ण और सशक्त रूपमें चित्रित हुए हैं, वहाँ समुद्र आदिका उपादान केवल परम्परागत रूपमें ही हुआ है। तुलसीका उत्कर्ष उनकी जीवनानुभूतिकी व्यापकतामें है। अतः तुलसी जैसे लोकविद् कविके जीवनानुभूतिसे प्रसूत काव्य-बिम्बोंपर जितना ही विचार किया जाये, उतना ही उनके जीवन और मर्मको समझनेमें आसानी होगी।

इस भूमिकापर डॉ. सुशीला शर्माका यह प्रयास अत्यन्त स्तुत्य कहा जा सकता है। स्वयं अध्यापिका होने के नाते उन्होंने उन सभी बातोंपर विचार किया है, जिन्हें जाननेकी इच्छा किसी अनुसन्धित्सु विद्यार्थीके मनमें हो सकती है। पाँच अध्यायों और दो परिशिष्टोंके बीच उन्होंने प्रायः सभी कुछ समेट लेनेका प्रयास किया है। कमी सबसे बड़ी यही है कि ऐसे उपादेय ग्रन्थमें 'संकेत-सूची' या 'अनुक्रमणिका' उन्होंने देनी उचित नहीं समझी। उसे देनेसे अनुसन्धित्सु छात्रको अधिक सुविधा रहती।

इस प्रबन्धके **प्रथम अध्यायमें** तुलसीके बिम्बोंकी संख्या तथा उनके स्वरूपपर विचार किया गया है। इन बिम्बोंके दो स्रोत माने गये हैं : प्रकृति और जीवन। ग्रामीण जीवनको भी पूरा स्थान मिला है। पाँचों इन्द्रियों को संवेदनाओंके आधारपर भी उनके स्वरूपका विवेचन किया गया है। अनेक बिम्बों का सम्बन्ध विविध स्थायी भावोंके साथ बताया गया है। अन्तमें बिम्बोंकी प्रकृति का विवेचन भी किया गया है। **द्वितीय अध्यायमें** बिम्बों के विकासकी चर्चा की गयी है। इनमेंसे अनेकको तुलसी ने अपने पूर्ववर्ती बिम्बोंसे यथावत् अपना लिया है। स्थल-स्थलपर इनके चित्रणमें भी मौलिकता और ताज़गीके दर्शन होते हैं। किन्तु उन्होंने अनेक ऐसे बिम्बोंका भी विधान किया है, जो सर्वथा नवीन और नये ढंगसे अभिव्यक्त किये गये हैं। **तृतीय अध्यायमें** तुलसीके बिम्बोंका साहित्यिक मूल्यांकन किया गया है। इस मूल्यांकनको कार्य, भाव, वस्तु, बिम्ब-गुण, दार्शनिक-माध्यम, संश्लिष्टता एवं खण्डितताके आधारपर विवेचित किया गया है। अत्यन्त श्रमके साथ लेखिकाने अनेक बिम्बानुभूतियों का विवेचन किया है। पद-पद पर विषयसे उनकी अभिज्ञता स्पष्ट होती है। निस्सन्देह हर जगह उनका मूल्यांकन शतप्रतिशत सही भी नहीं कहा जा सकता।

अन्तिम दो अध्यायोंको डॉ. भगीरथ मिश्रने 'विशेष रोचक और उपादेय' बताया है। इनमेंसे प्रथममें तुलसीके व्यक्तित्वको लिया गया है, और दूसरेमें उसके युगको। और इन बातोंको भी उनके बिम्बविधानके माध्यमसे ही सम्पुष्ट करके समझानेका यत्न किया गया है। निस्सन्देह लेखिकाको इसमें पर्याप्त सफलता मिली है। अन्यथा इन दोनों ही अध्यायोंका 'बिम्ब-योजना' के प्रस्तुत प्रसंगमें कोई महत्व न रहता।

लेखिकाकी इस मौलिक सूझपर धन्यवाद देना चाहिये कि 'बिम्ब-सिद्धान्त' जैसे सैद्धान्तिक विषयको उन्होंने मूल वक्तव्यसे बाहर 'परिशिष्ट' के रूपमें ही स्थान दिया है। इससे प्रबन्धकी एकरसता अक्षुण्ण रह सकी है। साथही इसके अन्तर्ग्रहणसे सिद्धान्त-पक्षका ज्ञान भी अनुसन्धित्सु छात्रके लिए उपलब्ध हो गया है। इस प्रबन्धकी एक कमी भी है। अन्तमें जो सन्दर्भ-ग्रन्थोंकी सूची दी गयी है, उसे देखनेसे पता चलता है कि उसमें अनेक ग्रन्थोंका उल्लेख परम्परा-निर्वाहके लिए हुआ है उधर, अनेक ऐसे ग्रन्थ लेखिकाकी दृष्टिसे चूक भी गये हैं, जिनका अध्ययन उसके वक्तव्य और शैलीको और अधिक समृद्ध बना देता। ऐसे ग्रन्थोंमें इतिहास और तुलसी, दोनोंसे ही सम्बद्ध ग्रन्थोंका समावेश होता है। साथही संकेत-सूची या अनुक्रमणिकाका अभाव भी अत्यधिक खलता है।

एक बात सामान्य रूपमें कहनी है। हिन्दी शोध-ग्रन्थों के वर्तमान प्रस्तुतीकरणमें यह एक कमी ही मानी जानी चाहिये कि हम उनकी भाषाको अनेक जगह अनावश्यक रूपसे जटिल बना देते है। प्रस्तुत प्रबन्धमेंसे अनेक ऐसे स्थल दिखाये जा सकते हैं, जिन्हें यदि सरल और बोधगम्य भाषामें लिखा जाता, तो वे स्वयं काव्यकासा रसास्वादन देते। आवश्यक नहीं कि आलोचना-ग्रन्थ शुष्क ही हो तभी वह सार्थक कहलायेगा। शोध-प्रबन्ध भी अन्ततः काव्यकी अनुभूति दे ही सकता है, यदि उसका लेखक स्वयंको विषयसे असम्पृक्त या अछूता रखकर न चले। पर यह कमी केवल प्रस्तुत लेखिकाकी ही नहीं कही जा सकती। कदाचित् इसे केवल हिन्दी और भारततक भी सीमित नहीं किया जा सकता। डॉ. रामचन्द्र शुक्ल एवं डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी जैसे उत्कृष्ट आलोचकोंने आलोचनाको कवित्वमय बनाया ही है। इस दृष्टिसे प्रस्तुत प्रबन्ध त्रुटिमय है।

तुलसी जैसे महान् कविके काव्यकी विवेचनाके प्रसंगमें यह कह देना उचित है कि समीक्षा करते हुए हमें अपनी बुद्धि और अनुभूतिके अनुसार उनके दोषदर्शनमें भी हिचकना नहीं चाहिये। तुलसी द्वारा जो बिम्ब परम्परागत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपमें किन्तु अनुभूतिके अपना लिये गये हैं, उनका औचित्य सिद्ध करनेके लिए वृथा श्रमकी अपेक्षा, उनमें आई कमीको बताना ही सच्चे समीक्षकका कार्य है। अन्य अनेक समीक्षकोंकी भाँति लेखिका भी अपने इस दायित्व में विशेषकर प्राकृतिक बिम्बोंके प्रसंगमें चूक गयी है।

प्रकाशन और प्रस्तुतीकरणकी दृष्टिसे लेखक और प्रकाशक दोनों ही साधुवादके पात्र हैं; यद्यपि मुद्रणादि के दोष आजके एक रिवाजकी भाँति इसमें यत्र-तत्र सिर उठाते ही रहे हैं।

—डॉ. सत्यकाम वर्मा

आधुनिक हिन्दी-गद्य-साहित्य

लेखक : डॉ. हरदयाल; प्रकाशक : आदर्श साहित्य प्रकाशन, १२६/६, वैस्ट सीलमपुर, दिल्ली-३१। पृष्ठ : १८३; डिमाई, ७२; मूल्य : १६.५० रु.।

आधुनिक हिन्दी-साहित्यमें गुण और परिमाण, दोनों दृष्टियोंसे विपुल एवं उत्कृष्ट साहित्यकी रचना हुई है। पूर्ववर्ती कालोंकी अपेक्षा वर्तमान कालकी विशिष्टताका एक प्रमुख कारण गद्य-साहित्यका विकास है। इस दृष्टिसे 'हिन्दी-गद्य-साहित्य' से पूर्व आधुनिक विशेषण निरर्थक जान पड़ता है। बहरहाल, आलोच्य कृतिके सम्बन्धमें लेखकके (अप्रत्यक्ष) दावे, कि इस पुस्तकमें 'हिन्दी-गद्यकी सभी विकसित-अविकसित विधाओंका भारतेन्दु-युगसे लेकर आजतकका संक्षिप्त, स्पष्ट, प्रामाणिक और अद्यतन इतिवृत्त' है की परीक्षासे पहले पुस्तककी एक झलक देख लेना समीचीन होगा।

'नाटक, एकांकी नाटक, उपन्यास, आंचलिक उपन्यास, कहानी, नयी कहानी : परिभाषा और प्रवृत्ति, निबन्ध, आलोचना, अन्य गद्य-विधाएँ (गद्यगीत, रेखा-चित्र, संस्मरण, इण्टरव्यू, यात्रावृत्त, आत्मकथा, जीवनी, पत्र, रिपोर्ताज) और कृत्रिम हिन्दी गद्य [यह अन्तिम, पता नहीं, कौन-सी गद्य-विधा है? और विकसित है अथवा अविकसित]' अनुक्रममें ये शीर्षक दिये गये हैं। सामान्यतः सभी विधाओंकी प्रथम रचना (तथा उसके पूर्व-रूपों) से लेख प्रारम्भ किये गये हैं और कालक्रमानुसार अथवा विचारधारा विशेषके क्रमसे लगभग सभी लेखकों और उनकी रचनाओंकी मुख्य प्रवृत्तियोंका निरूपण प्रायः बीस-पच्चीस पृष्ठोंमें कर दिया गया है। कहीं-कहीं यह संख्या काफ़ी कम या कुछ अधिक भी हो गयी है। महत्वपूर्ण रचनाकारों और उनकी महत्वपूर्ण कृतियोंपर अत्यन्त संक्षिप्त आलोचनात्मक टिप्पणियोंके साथ-साथ अन्तमें एक निष्कर्ष भी दिया गया है।

पुस्तककी सार्थकता उस आलोचनात्मक दृष्टिमें निहित है जो कहीं-कहीं गद्यकारोंपर टिप्पणियाँ देते समय व्यक्त हुई है। ऐसे स्थलोंपर स्पष्टता और संक्षिप्तता सहज ही विद्यमान है। मोटे तौरपर अद्यतनताकी बात भी स्वीकार की जा सकती है यद्यपि व्यंग्यात्मक निबन्ध जैसी विधाको केवल 'विकसित होनेकी सम्भावना' कहकर पीछा छुड़ा लिया गया है। अच्छा होता यदि इस विधापर विस्तृत विचार किया जाता।

जहाँतक निष्कर्षोंका प्रश्न है—एकाध स्थलपर अन्त-र्विरोध विद्यमान है। 'नाटक' और 'एकांकी नाटक' के सन्दर्भमें निम्न निष्कर्षोंकी तुलना पर्याप्त रोचक होगी :

"इस समय हिन्दीमें नाटकीय सजगता और कहीं-कहीं उत्साहका अतिरेक भी है और हमारा विश्वास है कि हिन्दी-नाटकका जितना विकास हो चुका है वह इस सजगता और उत्साहको सही दिशा प्रदान करेगा।"

(नाटक : पृष्ठ ३८)

"एकांकी सामूहिक एवं व्यय-साध्य कला है। यह तभी सफलता प्रदान कर सकती है जब जन-साधारणका सहयोग मिले। नाट्य-साधना एकान्तमें नहीं की जा सकती। × × × नाट्य चेतनाके अभावके ऐतिहासिक कारण आजभी विद्यमान हैं। इसलिए मुझे लगता है कि हिन्दी एकांकीकी गतिमें कोई क्रान्तिकारी परिवर्तन निकट भविष्य में होने नहीं जा रहा है।

(एकांकी नाटक : पृष्ठ ४९)

कहना न होगा ऐसे स्थलोंसे पुस्तककी प्रामाणिकता खण्डित हुई है।

इस प्रकार दावा आंशिक रूपमें ही सत्य है। फिर भी पुस्तक जिज्ञासु पाठकों और विद्यार्थियोंके लिए उपयोगी सिद्ध होगी और वे हिन्दी-गद्यके विकासकी रूपरेखा सहज ही हृदयंगम कर पायेंगे।

—रवीन्द्रनाथ दरगन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निबन्ध संकलन

गन्धमादन

लेखक : कुबेरनाथ राय; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, बी/४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : ३१७; क्राउन, ७२; मूल्य : ११.०० रु. ।

कुबेरनाथ राय हिन्दी ललित-गद्य-लेखनमें एक ऐसा नाम है जिसे अब किसी परिचयकी आवश्यकता नहीं रही। "प्रिया नीलकण्ठी" और "रस आखेटक" के बाद अब 'गन्धमादन' के प्रकाशनने इस बातपर मुहर लगा दी है कि रायकी कलममें ही जादू नहीं है, उनका पाण्डित्य और उसे सामयिक सन्दर्भोंसे जोड़ सकनेकी क्षमता भी उनमें भरपूर है। "गन्धमादन" में १५ ललित निबन्ध, ३ रिपोर्ताज और ४ अनुचिन्तनात्मक लेख संगृहीत हैं। इन सबके बीचसे ज्ञानकी अनेक वीथियाँ आपसे-आप खुलकर सामने आती जाती हैं और जीवन-यात्राका सहज सुख भी प्राप्त होता जाता है। संस्कृत और संस्कृति-ज्ञानके योगने रायकी भाषाको लालित्यके साथ गरिमा भी प्रदान की है। रायने पुरातन सन्दर्भोंकी उपस्थितिके माध्यमसे भारतीय संस्कृति, उसके गौरवपूर्ण इतिहास, लोक-जीवन, प्रकृति और साहित्यको इसतरह उद्घाटित किया है कि उनका पाण्डित्य अनजाने ही मनमें घर कर लेता है और पाठक बोझिल श्रमसे बचा रहकर सहज प्रवाहका निरलस सुख अनुभव करता चलता है। इतिहास और संस्कृतिमें पीछे लौटकर देखनेका सुख नीरस इतिहास-ज्ञानका दुःख बन गया होता, अगर किसी शुद्ध विवेचनधर्मी लेखकने उसे संजोनेकी कोशिश की होती। रायके हाथोंमें यह विषय समकालीन सन्दर्भों और आधुनिक चेतनाके संयोगमें इसप्रकार उपस्थित हुए हैं कि उनमें नया निखार आ गया है। समकालीन जीवनके तीखे-कड़ुवे अनुभवोंने राय की कथन भङ्गिमामें वर्तुलता लाकर उसे पैनी धार दे दी है। बीच-बीचमें वह राजनीतिक स्थितियोंके प्रति तीखे प्रहारसे काम लेने लगते हैं, व्यंग्यकी चुटीली मार मारते हैं। बातको वे जिस छोरसे शुरू करते हैं उसकी लपेटमें कितने विषय और आ जायेंगे इसका पता पाठकको सहज ही नहीं चलता, किन्तु दीर्घ यात्राके साथ समाप्तिकी सम्बद्धतासे मन चमत्कारिक आल्हादका अनुभव किये बिना नहीं रहता। समाज और संस्कृतिके साथ रायकी गहरी सम्पृक्ति उनके निबन्धोंकी जीवनी शक्ति है। रायने "गन्धमादन" में स्वयं श्रेष्ठ साहित्यकी पहचान कराते हुए विस्तार, गहराई, उदात्तता और रोचकता उसके आवश्यक गुण माने हैं और धर्मसे उसे पृथक् करते हुए कहा है : "धर्मपर नग्न शिव सवार रहते हैं तो साहित्यपर त्रिपुर सुन्दरी।" "गन्धमादन" के इन निबन्धोंमें ये सारी विशेषताएँ एक साथ देखी जा सकती हैं। हृदय तारल्यकी सूचना देनेवाले स्थलोंका संयोग इन निबन्धोंमें यत्र-तत्र श्रृंगारकी मादकता भी उत्पन्न करता है, किन्तु संयमकी डोर हाथसे नहीं छूटती। इसीमें इनकी उदात्तता भी है और इसीमें चमत्कार भी। असलमें ये निबन्ध मस्ती और स्वच्छन्दताके साहचर्यमें ज्ञानको उपस्थित करते हैं, इसीसे विशेष प्रभावक भी हैं और इसीलिए स्वयं रायका इनके विषयमें यह कहना भी सर्वांशतः सार्थक है कि : "प्रस्तुत संग्रहके निबन्ध वाक्योंके वे चन्दन (काष्ठ) हैं जिन्हें निर्मल, तरल मन देकर घिसनेपर भावों और विचारोंकी सुगन्ध प्राप्त होती है।" "ये निबन्ध शब्दोंके महाकान्तारकी रचना करते हैं जिसके भीतर कुसुमित अर्थोंकी विविधता सुगन्ध प्राप्त करनेके लिए जाने-अनजाने मार्गपर संचरण करनेका कष्ट करना होगा।" ये निबन्ध संग्रहके अभिधेयार्थमें सुगन्ध द्वारा मादन भी करते हैं और देवभूमि हिमालयके इसी नामवाले शैल-शिखरकी रमणीयतासे भी आकृष्ट करते हैं। कुबेरनाथ रायके निबन्धोंका यह संग्रह भी इसीलिए अभिनन्दनीय है और संग्रहणीय भी।

—डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित

हिन्दी उपन्यास

सम्पादिका : सुषमा प्रियदर्शिनी; प्रकाशक : राधाकृष्ण प्रकाशन, २, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : २८२; डिमाई, ७२; मूल्य : १४.०० रु. ।

इधर पिछले कुछ वर्षोंसे हिन्दीमें, विशेषतः लेखों व निबन्धोंका सम्पादन करनेका कार्य तेजीसे आगे आया है। इसका कारण है। फुटकर लेख एवं पुस्तक-विशेषपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समीक्षात्मक लेख जुटा लेनेमें सम्पादकको बहुत कष्ट नहीं उठाना पड़ता। यह बात दूसरी है कि लेख बहुधा पुराने ही होते हैं और अधिकांश समीक्षाओंमें तो ब्यौरे-विवरण आदिका ही प्राधान्य रहता है। एक खतरा तब इसप्रकार से सम्पादित ग्रन्थोंसे उत्पन्न हो सकता है, क्योंकि इस प्रकारके निबन्ध-संकलनोंमें न तो किन्हीं महत्वपूर्ण समस्याओंको ही उठाया जाता है और न ही बदलते सन्दर्भोंमें आलोचना-पद्धतिके बदलावके विकसित लक्षण ही दीख पड़ते हैं। बहरहाल, कुछ चर्चित पुस्तकोंकी अच्छी लगनेवाली समीक्षाएँ कुछ अन्य फुटकर लेखोंके साथही एक स्थानपर संकलित हो जायें तो हर्ज ही क्या है?

इसप्रकारके संकलन अपने ढंगसे दुहरा महत्व रखते हैं—व्यावसायिक महत्वके मूलमें अर्थोपार्जनकी दृष्टि काम करती है तो वैयक्तिक महत्वके मूलमें बिना विशेष श्रम किये ही सम्पादक द्वारा पुस्तक निकालनेका आकर्षक मोह। फिरभी कभी-कभी तेजीसे आनेवाले अनेक संकलनों में कुछ अच्छे और साहित्यिक महत्वके निबन्ध-संग्रह भी आते रहते हैं। अलग-अलग आलोचना-पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं तथा शोध-ग्रन्थोंमें बिखरी ज्ञान-राशिको ढूँढ़ना, फिर एकत्रितकर एकही जिल्दमें बाँधकर उच्च-स्तरीय साहित्य के विद्यार्थियों और सुधी पाठकोंको उपलब्ध करा देना, कम श्रमसाध्य एवं हितकर कार्य नहीं। इस दृष्टिसे जो भी निबन्ध-संग्रह सम्पादित होते हैं, निश्चय ही साहित्यिक महत्वके संग्रह कहे जायेंगे। इसप्रकारके संग्रहोंमें भी प्रायः किसी अवधि-विशेषमें लिखित साहित्यका या तो सर्वेक्षण मात्र रहता है या किसी विधा-विशेषका सैद्धान्तिक और व्यावहारिक पक्षका सपाट या सूक्ष्म मूल्यांकन।

बहरहाल, **'हिन्दी उपन्यास'** नामक निबन्ध-संग्रह उपन्यासके जागरूक पाठकों एवं अध्येताओंका ध्यान जरूर आकर्षित करता है। दो सौ बयाइसी पृष्ठोंमें फैले इस संकलनमें समेटे गये लेखोंको वर्गोंमें रखा गया है। पहले दस लेख उपन्यास-विधाके सैद्धान्तिक पक्षका कुछ खुलकर विवेचन-विश्लेषण प्रस्तुत करते हैं। दूसरे वर्ग 'इतिहास' के अन्तर्गत केवल पाँच लेख रखे गये हैं जो हिन्दी उपन्यास के प्रारम्भसे लेकर प्रेमचन्दोत्तर कालतकके विकास-चरणों को स्पष्टतः अपनी समग्रतामें रेखांकित करते हैं। 'उपलब्धि' के अन्तर्गत दस उपन्यासों — 'परीक्षागुण,' 'गोदान,' 'त्याग पत्र,' 'चित्रलेखा,' 'शेखर : एक जीवनी,' 'मृगनयनी,' 'बाणभट्ट की आत्म-कथा,' 'झूठा सच,' 'बूंद और समुद्र' एवं 'मैला आंचल' आदिपर अधिकारी आलोचकोंके जमे हुए लेख हैं। इन लेखोंकी एक विशेषता यह है कि तत्वोंके आधारपर खानेदार समीक्षाके बजाय रचनाकी कलात्मक सत्तापर खुलकर विचार किया गया है। यह बात दूसरी है कि समीक्षकोंके अधिकांश निष्कर्षोंसे एकदम शायद सहमत न हुआ जा सके। फिरभी आलोचनाके बदलते स्वरोंकी झनकार, नयी पद्धतियों या मानदण्डोंकी आकुलता आदि का मन्द-मन्द संगीत यहाँ सुना जा सकता है। इस वर्गमें जिन औपन्यासिक कृतियोंकी समीक्षाएँ संकलित की गयी हैं वे सन् ६० के आसपासतकके उपन्यास-लेखनका एक बड़ी सीमातक प्रतिनिधित्व करती हैं। इसे एकप्रकारके सम्पादिकाकी चयन-दृष्टिकी सीमा ही माना जायेगा कि कुछ अन्य अच्छे उपन्यास जो १९६० के बाद आये हैं, उन्हें स्थान नहीं दिया गया। फिरभी इतना अवश्य है कि पुस्तक-विशेषपर एकाधको छोड़कर उसी समीक्षककी समीक्षा चुनी गयी है जो पुस्तककी आन्तरिक सत्ताका उद्घाटन करनेमें समर्थ है। इतना कुछ होनेपर भी समीक्षा-सिद्धान्त या नयी आलोचना-पद्धतिकी दृष्टिसे एकदम नितान्त नये तथ्योंको ही ये समीक्षाएँ न जाने क्यों पूर्णतः रेखांकित नहीं करतीं।

इस निबन्ध-संकलनकी कुछ दुर्बलताएँ भी रही हैं। पहली बात तो यह कि उपन्यासके सिद्धान्त-पक्षसे सम्बद्ध लेखोंके अन्तर्गत कुछ ऐसे लेख-उपन्यास, शब्दका प्रयोग, 'उपन्यास-परिभाषा' एवं 'हिन्दी उपन्यासका वर्गीकरण' आदि भी समेट लिये गये हैं जो मात्र अल्प-परिचयात्मक तो हैं ही, जिज्ञासु पाठकोंके ज्ञान-क्षेत्रका सीमा-विस्तार भी नहीं कर पाते। यदि प्रथम और चतुर्थ लेखोंके लेखक कहीं ज्यादा श्रमकर इन लेखोंको उपयोगी बनानेकी ओर ध्यान देते तो अच्छा होता। तब संकलनकी उपयोगिता औरभी बढ़ सकती थी। बहरहाल, लेख और उसके लेखकोंका चयन सम्पादिकाका अपना है और उनपर प्रतिक्रिया हर किसीकी अपनी-अपनी। दूसरी बात जो इस संकलनमें खटकती है—वह है सम्पादिका अपने कर्तव्य-कर्मसे एकदम छुट्टी पा लेना। प्रस्तुत संकलनके सम्बन्धमें सम्पादिकाने कहीं भी, कुछभी नहीं कहा है। ग्रन्थका सम्पादन हो गया, कर दिया गया, इस सारे दायित्वका बोझ प्रकाशकने ही वहन कर लिया है। 'प्रकाशकीय' की जगह सम्पादिकाकी भूमिका रही होती तो कहीं ज्यादा अच्छा होता।

कुल मिलाकर प्रस्तुत संकलनके माध्यमसे हिन्दी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

उपन्यास-विधाकी विकास-यात्राको भले ही एक सीमित अवधितक और वहभी कुछेक कृतियोंके आलोकमें समझा जा सकता है। किन्हीं अर्थोंमें यह निबन्ध-संग्रह उपन्यास-साहित्यके उच्च-स्तरीय जिज्ञासु पाठकोंके लिए उपयोगी है।

—हेमचन्द्र जैन

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कृत-व्याकरण : इतिहास

संस्कृत व्याकरणका उद्भव और विकास

लेखक : डॉ. सत्यकाम वर्मा; प्रकाशक : मोतीलाल बनारसीदास, बंग्लो रोड, दिल्ली-७। पृष्ठ : ५२०; डिमाई, ७१; मूल्य : ३०.०० रु.।

संस्कृत व्याकरणके ऐतिहासिक और आलोचनात्मक पक्षोंको लेकर पश्चिममें बहुत कुछ लिखा गया है। भारत के कुछ प्रमुख विद्वानोंने भी इस दिशामें बहुत कुछ लिखा है। किन्तु संस्कृत व्याकरणके क्रमबद्ध इतिहासकी दिशा में केवल गिने-चुने प्रयास ही 'इतिहास' की कोटिमें आ सकते हैं। गोल्डस्टुकरके 'पाणिनि' में प्रथम बार आलोचनात्मक ढंगसे पूर्वतर और समकालीन संस्कृत व्याकरणके तिथि-निर्धारणपर ध्यान दिया गया। स्वतन्त्र अध्ययनकी दृष्टिसे कीलहार्नका 'कात्यायन और पतंजलि' महत्वपूर्ण ग्रन्थ कहा जा सकता है। परन्तु उसमें इतिहासकी अपेक्षा तुलनात्मक मूल्यांकन प्रधान है। तब प्रातिशाख्यों और शिक्षा ग्रन्थोंके तुलनात्मक अध्ययनका आरम्भ हुआ, जिससे बहुत से ऐतिहासिक तथ्य भी सामने आये। इसीसमय बेल्वेल्करने 'संस्कृत व्याकरणकी प्रणालियाँ' ग्रन्थ लिखा। इसमें भी तिथि-निश्चयकी अपेक्षा प्रणालीगत संक्षिप्त अध्ययन ही है। लुई रेणु लीबिख तथा अन्य पाश्चात्य विद्वानोंने 'दुर्घटवृत्ति,' 'चान्द्रवृत्ति,' आदिकी भूमिकाओंके रूपमें पर्याप्त विवेच्य सामग्री प्रस्तुत कर दी। कुछ भारतीय विद्वानोंने प्रथम बार क्रमबद्ध इतिहास लिखनेका प्रयास किया। इनमें बँगलाके गुरुपद हालदार और गुजरातीके आचार्य जोशीके नाम उल्लेखनीय हैं। परन्तु 'इतिहास' के रूपमें प्रथम प्रयासका श्रेय श्री युधिष्ठिर मीमांसकको ही जाता है, जिन्होंने बहुत वर्ष पूर्व 'संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास' का प्रथम खण्ड प्रकाशित किया था। तबसे द्वितीय खण्ड भी प्रकाशमें आ चुका है और प्रथम खण्डका द्वितीय संस्करण भी छप चुका है।

इस भूमिकापर किसी भी नये इतिहास ग्रन्थका सामने आना तभी सार्थक कहा जा सकता है यदि उसमें कुछ मौलिकता एवं नवीनता हो। अन्यथा, जहाँ तक अनुकरण और तथ्योंके पुनः उद्धरणका प्रश्न है, अनेक छोटे-बड़े ग्रन्थ सामने आ चुके हैं। डॉ. बलदेव उपाध्यायके शास्त्रीय 'इतिहास' में गृहीत 'व्याकरणेतिहास' को भी इस विषयमें अपवाद नहीं कहा जा सकता। अतः यह प्रसन्नताका ही विषय है कि इस भूमिकापर आनेवाला डॉ. सत्यकाम वर्माका यह 'इतिहास' एक नयी ताज़गी और मौलिकताको लेकर सामने आया है। इसमें सन्देह नहीं कि इतने व्यापक विषयको इतने संक्षेपमें प्रस्तुत करनेपर अनेक कमियाँ भी अनुभव हो सकती हैं, तथा मुद्रणादिकी कहीं-कहींपर त्रुटि भी अखर सकती है, तब भी निस्सन्देह इसप्रकारका प्रयास अपना स्थान किसी भी अन्य प्रयासकी अपेक्षा अधिक गौरवपूर्ण रूपमें लेकर ही रहेगा।

इस ग्रन्थकी दो प्रमुख विशेषताएँ हैं : **तिथिविनिश्चय** और **तुलनात्मक अध्ययन**। जहाँतक तिथिविनिश्चयका प्रश्न है, मीमांसकजीके दृष्टिकोणको ऐतिहासिक दृष्टिसे स्वीकार करना कठिन प्रतीत होता है। इतिहासका आधार प्रमाण होते हैं। भर्तृहरिसे पहलेतकका मीमांसक जीका सम्पूर्ण तिथिविनिश्चय सर्वथा भ्रामक है। इस सम्बन्धमें ऐतिहासिक प्रमाणोंकी जो उपेक्षा उन्होंने की है, डॉ. वर्माने उसकी ओर सही रूपमें संकेत किया है। जहाँतक तुलनात्मक अध्ययनका सम्बन्ध है, यह कहा जा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता है कि इस दिशामें मीमांसकजी ने प्रयत्न ही नहीं किया। विभिन्न वैयाकरणोंके प्रयासों और उनकी उपलब्धियोंको कालक्रम और विषयक्रमकी दृष्टिसे परख कर डॉ. वर्माने व्याकरणके अनुसन्धानकी दिशामें लगे अनुसन्धित्सुओंका सही मार्ग-दर्शन किया है। हाँ, एक दृष्टिसे उनके प्रयासको मीमांसकजीके प्रयासकी दृष्टिसे पीछे कहा जा सकता है। व्यक्तिगत वैयाकरणों सम्बन्धी तथ्यों और प्रवादोंकी परीक्षा उन्होंने उतने विस्तारसे नहीं की है। इसका कारण कदाचित् यही रहा है कि उनकी दृष्टि व्यक्तिकी अपेक्षा व्याकरणपर अधिक रही है। इसीलिए व्यक्तिकी चर्चामें भी अधिकांशतः ऐतिहासिक तथ्योंको ही विचारार्थ लेते हैं।

'मौलिकता' की बात तो इसमें पदे-पदे स्पष्ट हुई है। फिरभी एक-दो उदाहरण देना अनुचित न होगा। मीमांसकजी और अन्य बहुतसे आचार्योंने 'औदुम्बरायण' को 'शब्दकी अनित्यता' का उद्घोषक माना है। यही कारण है कि भरतमिश्र जैसे विद्वान् द्वारा औदुम्बरायणको ही स्फोटायन माने जानेकी बातको उन्होंने अस्वीकार किया है। डॉ. वर्माने इस बातका सर्वप्रथम प्रतिवाद अपने पूर्वतन शोध-प्रबन्ध 'भाषातत्व और वाक्यपदीय' में किया था। उन्होंने औदुम्बरायणको स्फोटवादी और शब्द नित्यतावादी सिद्ध किया था। अतः इस इतिहास-ग्रन्थमें उन्होंने जब औदुम्बरायणको सप्रमाण स्फोटायनसे अभिन्न सिद्ध किया, तब इसे उनकी ही देन स्वीकार करना होगा। प्रातिशाख्योंके सम्बन्धमें सारा अध्याय ही उनकी मौलिक दृष्टि का प्रमाण कहा जा सकता है। कात्यायन और भर्तृहरिके सम्बन्धमें उनके अनेक निष्कर्ष सर्वथा अपने और मौलिक हैं; सप्रमाण तो वे हैं ही, प्रक्रिया-ग्रन्थोंके विकासमें भी उन्होंने तुलनात्मक सरणिको अपनाकर अपनी मौलिकता का परिचय दिया है।

पर एक कमी भी रह गयी है। उन्होंने पाणिनीयेतर व्याकरणों एवं 'संस्कृत व्याकरण : शेष अंग' का अध्ययन पूरे विस्तारमें प्रस्तुत नहीं किया है। इसमें सन्देह नहीं कि इससे ग्रन्थका आकार बहुत बड़ा हो जाता, और कदाचित् छात्र-दृष्टिसे भी यह अनुपयोगी रहता, फिरभी विद्वज्जगत्के लिए इसकी उपयोगिता निस्संशय रहती। यही बात आरम्भमें 'वेदों' में आये व्याकरणात्मक उल्लेखों के बारेमें है। उन्होंने जिस मौलिक दृष्टिका वहाँ परिचय दिया है, उससे स्पष्ट होता है कि वे अभी उस दिशामें बहुत कुछ नया दे सकते हैं। परन्तु सम्भवतः उन्हें स्थानाभाव खलता रहा है। हम आशा करेंगे कि अगले संस्करणों में वे इस कमी को अवश्य पूर्ण करेंगे। और यदि ऐसा सम्भव न हो, तो उन्हें एक विस्तृत इतिहास-ग्रन्थ पृथक् से लिखना चाहिये, ताकि विद्वज्जनोंकी जिज्ञासा भी यथेष्ट मात्रामें सन्तुष्ट हो सके।

अतः यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि यद्यपि 'भाषातत्व और वाक्यपदीय' एवं 'व्याकरणकी दार्शनिक

अनुवादके सिद्धान्त, कविताओं तथा कहानियों आदिके अनुवाद, भाषा-विज्ञान तथा भाषा-शिक्षण आदिकी त्रैमासिक पत्रिका

अनुवाद

सम्पादक :

डॉ. भोलानाथ तिवारी

श्री महेन्द्र चतुर्वेदी

सम्पर्क :

ई-४/२३, मॉडल टाउन, दिल्ली-९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिका' जैसे चिरस्थायी मूल्य और प्रभावके ग्रन्थोंके सृजन के बाद इस 'इतिहास' का सृजन डॉ. वर्माके लिए नया कीर्तिमान् स्थापित नहीं करेगा, तोभी आजके विश्व-विद्यालयीय एवं अनुसन्धानपरक साहित्यमें उनके इस ग्रन्थ का अपना ही स्थान होगा।

—डॉ. श्रुतिकान्त

उपन्यास

अजीब आदमी

लेखिका : इस्मत चुग़ताई; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी दरवाज़ा, दिल्ली-६। पृष्ठ : २१३; क्राउन, ७२; मूल्य : ७.०० रु.।

उर्दू कथालेखिका इस्मत चुग़ताई अपनी यथार्थवादी दृष्टि और शैलीगत विशिष्टताओंके कारण बहुत बड़े पाठकवर्गको प्रभावित करती रही हैं। आलोच्य कृति 'अजीब आदमी' उनका एक सद्यःप्रकाशित उपन्यास है जिसमें बम्बईके फिल्म-जगत्का बड़ा ही रोचक एवं प्रभावशाली चित्रण किया गया है।

कथानायक धर्मदेवका व्यक्तित्व सम्पूर्ण उपन्यासमें छाया रहता है। धर्मदेव अभिनेता, निर्देशक और फिल्म-निर्माता है। उसके व्यक्तित्वकी विशिष्टताएँ भिन्न-भिन्न रूपोंमें अभिनय, निर्देशन एवं फिल्मके निर्माण-कार्यसे सम्बद्ध रहती हैं। उसके व्यक्तित्वमें एक साथही कई प्रकारकी भावनाओं एवं मनोवृत्तियोंके सम्मिलनबिन्दुको सहज ही देखा जा सकता है। वह आशिक-मिजाज युवक है। मंगलासे पहले उसका प्रेम-विवाह होता है। पत्नीके प्यारमें वह बिल्कुल तन्मय हो जाता है। मंगलाका प्रेम मानो उसके व्यक्तित्वका एक अविभाज्य अंश जैसा हो जाता है जिसके कारण वह अपने सहकर्मियोंके बीच प्रतिष्ठा और सम्मानकी दृष्टिसे देखा जाने लगता है। बादमें जरीनाके सम्पर्कमें आनेपर उसे अपनी फिल्मकी हीरोइन बना लेता है। अभिनयके निकट सम्पर्ककी परिणति उनके शारीरिक सम्पर्कमें होती है। लेकिन ज़रीना उसकी फिल्मसे हटनेके बाद सभी सम्बन्धोंको झटककर तोड़ देती है और बादमें उसके प्रति उपेक्षा एवं अवज्ञाका रुख अपना लेती है। इस उपेक्षासे वह उत्तेजना और मानसिक तनावसे आक्रान्त हो जाता है। इसी मनःस्थितिमें वह पद्मा नामक फिल्मी वेश्याके शारीरिक सम्मोहनमें आबद्ध होता चला जाता है। उसके व्यक्तित्व के कई पहलू हैं। उसका दिमाग परिवारमें केन्द्रित रहता है, उसका दिल जरीनाके लिए चंचल रहता है और उसका शरीर पद्माकी बाँहोंमें आबद्ध होकर अपना अभीप्सित प्राप्त किया करता है। इसतरह वह त्रिकोण में चक्कर काटता रहता है किन्तु किसीसे अपनेको अलग नहीं रख पाता। यही वह विशिष्ट तत्व है जिसके कारण उसका व्यक्तित्व अन्ततः उपन्यासके रणधीर और जरीना जैसे चरित्रोंकी दृष्टिमें विस्मयका विषय बना रहता है।

नारी-पात्रोंमें मंगला और जरीनाके चरित्र महत्वपूर्ण कहे जा सकते हैं। मंगला फिल्म-जगत्में एक पार्श्व-गायिकाके रूपमें आयी थी। धर्मदेवसे विवाहोपरान्त एक कलाकारके रूपमें उसकी प्रतिभाका विकास नहीं हो पाता, वह धर्मदेवके व्यक्तित्वकी सजावटका एक उपकरण मात्र बनकर रह जाती है। 'शादीके बाद उसकी हैसियत एक शो-पीसकी-सी रह गयी थी।' जब उसे अपने व्यक्तित्वके इस ह्रासोन्मुख पहलूका एहसास होता है, तो वह गार्हस्थिक जीवनकी एकरसताको लाँघकर पुनः फिल्म जगत्में पार्श्वगायिकाके रूपमें अपनेको प्रतिष्ठित करनेके लिए प्रयत्नशील हो जाती है। पारिवारिक सन्दर्भमें उसका अन्तर्मन अपने पतिकी चरित्रहीनताजनित अशान्ति के कारण आहत और कुण्ठित होता रहता है। जरीना और पद्माके पीछे भटकनेवाले अपने पतिकी विमुखता और उपेक्षा उसके मनमें एक प्रतिक्रियात्मक आवेश उत्पन्न कर देती है और परिणामतः वह फरीद नामक एक नौजवानसे अवैध यौन-सम्पर्क स्थापित कर लेती है। एक मर्यादित पत्नी और तीन बच्चोंकी जननी मंगलाके इस चारित्रिक स्खलनके मूलमें उसके पति धर्मदेवकी दुश्चरित्रता ही केन्द्रीभूत कारणके रूपमें परिलक्षित होती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। मंगलाके चरित्रकी यह परिणति हमारे मनमें जुगुप्सा भी उत्पन्न करती है और करुणा भी।

जरीना फिल्म-जगत्में प्रवेश तो नर्तकीके रूपमें करती है, किन्तु प्रतिष्ठित नायिकाके रूपमें हो जाती है। अभिनयके क्रममें वह धर्मदेवके सम्पर्कमें जितनी निकटता से आती है और जिसप्रकार उसके एकान्त क्षणोंकी भागी बनती है उसको देखते हुए कण्ट्रैक्ट खत्म होनेके बाद धर्मदेवके प्रति उसकी उपेक्षा एवं अवमानना सहज ही विश्वसनीय प्रतीत नहीं होती। आगे चलकर तो यह स्पष्ट होही जाता है कि उसके मनमें धर्मदेवके प्रति नैसर्गिक भावना प्रारम्भसे ही विद्यमान रही है। उपन्यासके अन्य पात्रोंमें रणधीर, रीता, पद्मा आदिके चरित्र उल्लेखनीय कहे जा सकते हैं क्योंकि वे अपनी स्वलक्षणशील विशेषताओंके कारण अपनी पहचान बना पानेमें समर्थ होते हैं।

इस्मत चुगताईका प्रस्तुत उपन्यास इस अर्थमें महत्व-पूर्ण प्रतीत होता है कि इसमें कथालेखिकाने फिल्म-जगत् को प्रामाणिक सन्दर्भोंके साथ रोचक शैलीमें रूपायित करनेका प्रयास किया है। कथानायकके परिपार्श्वमें वर्त-मान फिल्मी जगत्के प्रसिद्ध नायक-नायिकाओं और पार्श्व गायक-गायिकाओंका समावेश इसी लक्ष्य-विशेषको सामने रखकर किया गया प्रतीत होता है। परिणामतः उपन्यास की कथा गुरुदत्त, गीतादत्त और वहीदा रहमान के सुप्रसिद्ध रोमांस का आभास देने लगती है।

जहाँतक शिल्पका प्रश्न है, उपन्यासकी वर्णन-प्रणाली में एक सदाबहार रोचकता मिलती है। फिल्मी जीवनके रंगीन यथार्थको अभिव्यंजित करनेके लिए जिस चटपटी भाषाकी अपेक्षा हो सकती है उसका प्रयोग लेखिकाने बड़ी सहजतासे किया है।

—डॉ. विपिनबिहारी ठाकुर

भँवर

लेखक : गुलशन नन्दा; प्रकाशक : हिन्दी बुक सेन्टर, ४/५ बी-आसफअली रोड, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : २०४; क्राउन, ७२; मूल्य : ६.५० रु.।

समीक्ष्य उपन्यास कॉलेज-छात्रावासकी छात्राओंमें स्वच्छन्द विहरण एवं वासनात्मक प्यारका वातावरण उपस्थित करता है। रूपा अन्य-अन्य छात्राओंकी चहल-कदमीसे अलग रहती है किन्तु सर्वदा सूनेपन एवं अन्य-मनस्कतासे ऊब उठती है। अपनी सहेलियोंके व्यंग्यबाणों की प्रतिक्रियास्वरूप काल्पनिक प्रेमी एवं प्रेमपत्रकी रचना करती है और संयोगवश प्रिंस (अनूप) से वही काल्पनिक प्यार वास्तविकतामें बदल जाता है। बीचमें जाति-धर्म और निर्धनताकी दीवार खड़ी होती है पर सब कुछ जान लेनेके पश्चात् भी अनूपके प्रेममें कोई परिवर्तन नहीं आता। अनूपकी बहन शारदा, जो पति परित्यक्ता, रूढ़िवादितासे युक्त एवं एक समाज सेविकाके रूपमें अपने अंहको छिपाये हुए कार्य करती है, इसके विपरीत स्वभाव की है। वह नहीं चाहती कि एक ईसाई-लड़कीके साथ अनूपकी शादी हो। समाज-सेविका शारदा कहती है: "लेकिन ऐसा प्रयोग मैं अपने घरमें नहीं करना चाहती। अपने खानदानमें उस ईसाई-लड़कीको लाकर मान-मर्यादा डुबोना नहीं चाहती।" समाज सुधारके इस आवरणको झटकेसे खींचता हुआ अनूप चुनौती देता हुआ कहता है: "इसका मतलब यह है कि तुम्हारे भाषण, तुम्हारी समाज-सेवा और जाग्रतिकी भावना एक ढोंग है।"

रूपाकी संरक्षिका एवं माता रोज़ीका देहान्त हो जाता है। उसे जॉन द्वारा जब अपनी वास्तविकता (सुषमाकी अवैध सन्तान) का ज्ञान होता है तो वह भोली, अध्ययनशील, विनम्र स्वभावकी रूपा टूट जाती है और सिस्टर टेरेसाकी मददसे ईसाई भिक्षुणी बनकर दूर दक्षिण जानेको उद्यत हो जाती है। पर अनूप उसे इस पलायनवादी कायरतासे मुक्ति दिलानेमें समर्थ हो जाता है और उसे अपने जीवनमें स्थान दे देता है।

पात्रोंमें रूपा, अंजू, रोजी, सुषमा, शारदा, अनूप, सुभाष, जॉन, अजीत आदि विशेष महत्वपूर्ण हैं। भाषा सरल, प्रभावोत्पादक और भावानुगामिनी है। उसमें चुटीला व्यंग्य भी है: "बर्फ गिरनेसे शहरभरकी घड़ियाँ जम गयी हैं।" "दिलका रोग तो बेटीको था, माँको कैसे हो गया।" संवादात्मक, व्यंजनापूर्ण शैलीमें लिखा गया उपन्यास 'फिल्म शूटिंग' की अवान्तर कथा बनाकर और भी मनोरंजक बन गया है।

आधुनिक समाज-सुधारकोंके ढोंगपूर्ण कार्यकलाप उपन्यासका उपादान कारण हैं। साथही इसमें शिक्षण संस्थाओंमें अध्ययनके लिए आनेवाले छात्र-छात्राओं के वासनापूर्ण वातावरणपर कटु व्यंग्य है।

—डॉ. रामाभिलाष त्रिपाठी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी संग्रह

ताप और सन्ताप

लेखक : धनेन्द्रकुमार जैन; प्रकाशक : हिन्दी प्रचारक संस्थान, सी-२१/३०, पिशाचमोचन, वाराणसी-१। पृष्ठ : १६७; क्राउन, ७२; मूल्य : ५.०० रु.।

आज कहानियोंका तेवर समयके साथ-साथ जिस तरह और जिस तेजीसे बदलता जा रहा है, उसे देखते हुए यह कहना कठिन नहीं है कि आजकी हिन्दी-कहानी सीमाहीन होती जा रही है। पर कोई नया लेखक बलात् जब फिर कहानीको किसी खास कटघरेमें ला खड़ा करता है या करनेकी चेष्टा करता है तो उसकी सारी प्रक्रिया हास्यास्पद बन जाती है। धनेन्द्रकुमार जैनका संग्रह **'ताप और सन्ताप'** भी एक इसीतरहकी प्रक्रियाके बीच चलता है जिसको पढ़ते वक्त कहीं ऐसा नहीं लगता कि कोई आजका 'युवा कथाकार' इन कहानियोंका लेखक है। अधिकांश कहानियाँ प्यार और परिवारके घेरेमें कैद हैं। यहाँतक कि संग्रह-शीर्षक कहानी 'ताप और सन्ताप' भी एक लिजलिजी भावुकताकी रोमाण्टिक कहानी है जो साधारण पाठकके मुँहसे 'हाय' तो जरूर निकलवा सकती है पर किसी प्रबुद्ध पाठकके मुँहसे 'वाह' नहीं।

वास्तवमें धनेन्द्रकुमार जैनकी कहानियोंका रचना-संसार बहुत सीमित दायरेमें बसा हुआ है। कथाकार चूंकि आजभी कहानियोंके पात्रोंके बारेमें यह स्वीकारता है कि सभी पात्र और घटनाएँ काल्पनिक हैं, फिरभी पाठकोंको ऐसा प्रतीत होगा जैसे वह वास्तविक रूपसे किसी व्यक्ति या घटनासे सीधा वास्ता रखती हैं।' यह कथन कथाकारकी सीमाओंको स्पष्ट ही प्रकट कर देता है और तब उसका यह कहना उतना विचित्र नहीं लगता : 'मेरी इन रचनाओं (कृतियों) में प्रेम, समाजका बोझ (?) इंसानके दिलकी तड़प, पिता-पुत्रकी घरेलू समस्या, रीति-रिवाज इत्यादि विषय सभी निहित हैं।' और जैसे अपने इस कथनके प्रमाणमें ही कथाकार प्रेमकी कहानी (टूटे मनवा जूड़ी कड़ी, ताप और सन्ताप) फिर इंसानके दिल की तड़प (निर्मम वात्सल्य, फूल-सी बच्ची, अभावोंपर हँसता हुआ श्रम) आदिको संकलित किया है।

ये कहानियाँ आजकी कहानी नहीं हैं। पर यह दोषारोपण सिर्फ आलोचकीय दृष्टि या प्रबुद्ध दृष्टिसे ही किया जा सकता है। वरना एक साधारण पाठककी नजरसे जो सिर्फ कहानियोंमें मनोरंजन खोजता है, संग्रहकी बारहों कहानियाँ, किसीभी पाठकको अपनेसे बाँधनेमें सक्षम हैं। एक प्रवाह है भाषामें जो अपने साथ पाठकको खींचे लिये जाता है और यह प्रवाह ही किसी लेखकको पाठकीय बनाता है और मेरा खयाल है कि जैनको पाठकीय दृष्टिसे इसी स्तरपर एक अच्छा कथाकार कहा जा सकता है।

वैसे कुछ कहानियाँ जो सहजही दृष्टिको आकर्षित करती हैं, अपनी व्यंग्य और कथानककी नवीनताके कारण, उनकी चर्चा आवश्यक है। ऐसी कहानियोंमें सबसे पहले **'मुर्गी अपनी जानसे गयी और'**—की चर्चा आवश्यक लगती है। यह एक प्रतीकात्मक कहानी है। यह कहानी एक ऐसे व्यक्तिकी मानसिकताको उभारती है जो पहले अपनी हालतसे इसलिए दुःखी है कि उसके घरमें सिर्फ लड़कियाँ ही पैदा होती हैं। इस बार उसकी पत्नी जब फिर गर्भवती होती है तो उसे सिर्फ यही चिन्ता है कि इस बार फिर लड़की न हो जाये। पर इस बार लड़का ही पैदा होता है और लड़कीकी चिन्तासे भी बड़ी चिन्ता उस पर सवार हो जाती है और वह चिन्ता है खुशीमें दावतकी। हर कोई दावत ही माँगता है चाहे वह सम्बन्धी हो या परिचित या अपरिचित ! वह अपने खर्चोंको काटकर कुछ रुपये जरूर बचाकर रखता है, पर दावत खानेवालोंकी संख्या इतनी है कि वह यही नहीं समझ पाता कि उतने रुपयोंमें वह क्या-क्या करेगा? और इसपर मुश्किल यह कि दूर-दूरके रिश्तेदार भी जब आ-आकर उसके यहाँ अड्डा जमा बैठते हैं—मय पूरे परिवारके—तो उस वक्त उसकी ही नहीं उसकी पत्नीकी हालत भी शोचनीय हो उठती है। जो खुद भी चाहती थी कि दावत हो, वही यह सोचने लगती है कि घर-खर्च कैसे चलेगा। जहाँ उसे ज्यादा आरामकी जरूरत थी, वहीं जुटे हुए मेहमानोंके लिए दिन-रात उसे खटना पड़ता है। कहानी व्यंग्य-प्रधान है, इसमें सन्देह नहीं, पर कथाकारने कहानीको जिस बिन्दुपर छोड़ा है वह वास्तविक समस्याका समाधान नहीं है। मेह-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानों और दावत के चाहनेवालोंसे तंग आकर पति-पत्नी बचनेका उपाय सोचने लगते हैं और ऐसेमें पतिको जब यह पता चलता है कि हलवाई उसके यहाँ एक महीनेसे पहले काम नहीं कर पायेगा क्योंकि उसने दूसरा काम पकड़ लिया है तो नायक खुश हो जाता है। वह मेहमानोंको यही बात सुना देता है । यह सुनते ही सारे मेहमान उसी क्षण उठ-उठकर चल देते हैं। पति-पत्नी उन्हें झूठमूठ रोकते हैं, पर उनके जानेपर अपनी जान बची पाते हैं। फिरभी कहानीके माध्यमसे 'मुफ्तखोरी' का जो एक सटीक व्यंग्य उभरा है, वह सराहनीय है।

दूसरी कहानी '**जी हाँ मैं हार गया**' है। इस कहानीमें एक आविवाहित युवकको दिल्लीमें घर नहीं मिलता। एक मित्रकी सहायतासे एक घरमें किसीतरह पहुँचता है तो फिर उसी मित्रकी सहायतासे उस घरके मकान मालिक की लड़कीसे शादी भी कर लेता है। शादीसे पहले श्वसुर का वायदा है, एक घर रहनेके लिए नहीं बल्कि एक कोठी दे देंगे। पर शादीके बाद वे अपना वायदा पूरा नहीं कर पाते और युवकको अब अपनी पत्नीके साथ एक घरसे दूसरे घरमें, दूसरेसे तीसरा.......घर बदलते रहना पड़ता है क्योंकि कहीं भी सुविधासे वे नहीं टिक पाते हैं। श्वसुर महाशय उन्हें अपने यहाँ एक कमरा देकर रखनेको तैयार है पर स्वाभिमानी युवकको यह अच्छा नहीं लगता। पर अन्तमें हार-थककर वह श्वसुरके घरमें आ ही जाता है। और यहीं आकर वह सोचता है कि वह हार गया। पर कथाकारने इस हारको भी एक रोमाण्टिकतासे गूँथ दिया है। तभी वह सबसे अन्तमें यह कहनेको बाध्य हुआ है: 'जी हाँ, मैं वास्तवमें हार गया था। एक मीठी हार...'

तीसरी कहानी एक साधारण व्यक्तिके वहमकी कहानी है और कहानीका शीर्षक 'क्या यह सच नहीं'—शायद कथाकारके भीतरका सन्देह है जो बार-बार उसे वहमके प्रश्नवाचकके रूपमें खड़ा कर देता है और जैसे पूछता है—क्या यह सच नहीं? एक आदमीको यह वहम है कि उसके परिचित पाठकजी जब भी उसे कहीं जाते हुए टोक देते हैं, तभी वह काम नहीं होता। इसलिए उनके 'कहाँ जा रहे हो' पूछनेसे वह खीझ उठता है। वह यात्रापर निकलता है और उसे हर जगह पग-पगपर कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है और वहम विश्वास का रूप धारण कर लेता है कि यह सब टोकका ही फल है। जहाँतक कहानीके कथ्यका सवाल है, जैनने एक मनोवैज्ञानिक धरातलकी चीज उठायी थी। पर चूँकि कथाकार का मन खुद ही इस वहमसे ग्रस्त नजर आता है, इसलिए वह इस वहमका खण्डन नहीं करता, इसे विश्वासका रूप दे डालता है?

इसतरह 'ताप और सन्ताप' की सभी कहानियोंका अलग-अलग उल्लेख सम्भव नहीं है, पर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि कथाकारने कथ्यमें जो विभिन्नता रखी है, उससे उम्मीद बँधती है कि भविष्यमें कुछ ज्यादा अच्छी रचनाएँ कथाकारसे प्राप्त होंगी।

—**सुरेन्द्र तिवारी**

नाटक : एकांकी

अग्निपरीक्षा

लेखक : कुँवर चन्द्रप्रकाशसिंह; प्रकाशक : अनुपम प्रकाशन, पटना। प्र. सं. १९७२; मूल्य : ५.०० रु.।

हिन्दी-नाटक एवं रंगमंचके सैद्धान्तिक प्रतिपादन और व्यावहारिक सम्बर्द्धनके क्षेत्रमें डॉ. कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंहजीकी भूमिका निस्सन्देह अविस्मरणीय है। उन्होंने एक ओर 'हिन्दी नाटक और रंगमंचकी मीमांसा' जैसे कई गुरु-गम्भीर शोधग्रन्थ (प्रबन्ध) तथा निबन्ध प्रस्तुत करके हिन्दी नाट्यशास्त्रके विकासात्मक स्वरूपका सन्धान किया है, दूसरी ओर 'जनकवि जगनिक,' 'कविवर नरोत्तमदास' (जैसे पूर्णाङ्की) और 'कविकुल गुरु' तथा 'अग्निपरीक्षा' (एकांकी) आदि नाटकोंका प्रणयन करके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतके कई 'कविर्मनीषियों' के जीवन एवं साहित्यका नाट्य रूपान्तरण करते हुए एक नयी नाट्यविधाका प्रवर्त्तन किया है। लेखकने 'कविकुल गुरु कालिदास,' 'महर्षि वेदव्यास,' आदिकवि वाल्मीकि, जनकवि जगनिक, महाकवि चन्द, महाकवि सूर, महाकवि रहीम, महाकवि भूषण, कविवर नरोत्तमदास और महाकवि निराला आदि विभूतियोंके प्रति अपनी नाट्यांजलि अर्पित करके उनके कवि-व्यक्तित्वका नाट्यविधान प्रस्तुत किया है, उन्हें सरस-सुग्राह्य बनाया है और इस काव्य नाट्य-समन्वय द्वारा 'काव्येषु नाटकं रम्यम्' उक्तिको पुनः चरितार्थ किया है।

'अग्निपरीक्षा' में नये-पुराने कुल ८ एकांकी संगृहीत हैं। इनमें 'आचार्य चाणक्य' और 'अग्निपरीक्षा' ये दो एकांकी साहित्येतर (किन्तु मानव-जीवनके महान् मान-मूल्योंसे सम्बद्ध) हैं, शेष एकांकी —व्यास, वाल्मीकि, कालिदास, सूर-तुलसी, रहीम जैसे ऋषिकल्प राष्ट्रचेताओं तथा क्रान्तिदृष्टा तथा तत्त्ववेत्ता कवियोंसे सम्बन्धित हैं। इनकी विषयवस्तु विराट सांस्कृतिक भूमिका और भारतीयता के उच्च-उदात्त तत्त्वोंसे प्रेरित-प्रभावित है। संकलनके शीर्षस्थ एकांकी 'अग्निपरीक्षा' में सम्भवतः समसामयिक साम्प्रदायिक विवादका समाधान करने हेतु नाटककारने 'चारित्र्यदेवता आर्याजानकी' के त्रिकाल-त्रैलोक्यविदित शील-शक्तिका जो निरूपण किया है, वह असन्दिग्ध रूपसे महत् है। लेखकने आजके विघटित मूल्योंके समक्ष भरसक इसी आदर्शकी स्थापना की है कि 'समाजके स्थिति-सम्पादनका मूलाधार है—नारीका शील....।' (१०७)। 'आर्यत्व' को 'देवत्व' में परिणत करते हुए लेखकने 'आचरणकी पवित्रता' को भारतकी चरमोपलब्धि सिद्ध किया है। ये एकांकी राष्ट्रीय भावात्मक एकता, धर्मनिरपेक्षता, राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना और साहित्यिक महा-मनीषासे ओतप्रोत हैं। आजकी अनास्थासे ऊबकर, किन्तु फिरभी अकुण्ठ भावसे सनातन सत्योंकी अलख जगाते रहने वाले कृती अब कुछ ही रह गये हैं। कुँवर साहब उन्हीं आदर्शोंके प्रति समर्पित होकर, विघटनकी झंझाको झेलते हुए ऐसी जो कृतियाँ दे रहे हैं, वे सर्वथा समादृत होनी चाहिये। इनकी परिष्कृत-प्रांजल पदावली, प्रौढ़ पात्रानुकूल, अर्थगर्भ भाषा और इनकी नाटकीय क्षमता निश्चय ही सराह्य है। सम्प्रति. अपवाद रूपमें ही ऐसी स्वच्छ भाषा और ऐसे पुण्यश्लोक चरित्रोंके उदाहरण मिल सकते हैं। हाँ, ये कृतियाँ परिमाणमें कम अवश्य हैं। कविवर नरोत्तमदास भले ही एक कृतिसे अमर हो गये हों, पर इस बधिर युगको तो बारबार बताना होता है। संकलनमें यदि तुलसी, भारतेन्दु, प्रसाद आदिपर भी कुछ एकांकी होते तो भारतीय साहित्य एवं संस्कृतिका सर्वश्रेष्ठ अंश अधिकाधिक मात्रामें इस भ्रान्त पीढ़ीतक पहुँच जाता। आशा है यह पूर्ति होगी, और होती रहेगी।

—डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

अनूदित साहित्य

दधीचि

लेखक : सनतकुमार वन्द्योपाध्याय; अनुवादक : व्रजगोपालदास अग्रवाल; प्रकाशक : हिन्दी प्रचार सभा, सदर, मथुरा। पृष्ठ : ९७; क्राउन, ७२; मूल्य : ४.०० रु.।

सनतकुमार वन्द्योपाध्यायका बँगला उपन्यास दधीचि पढ़ते समय एक प्रश्न मनमें अचानक ही पैदा होता है कि क्या सचमुच बँगलाका हर कथाकार 'कुछ' लिखनेसे पहले यह सोच लेता है कि वह फिल्मके लिए भी लिख रहा है? इसतरहका आरोप बँगला उपन्यासोंपर बराबर लगाया जाता रहा है, चाहे वह किसी नये लेखककी रचना हो या पुरानेकी। चूंकि सनतकुमार बँगलाके नये प्रमुख उपन्यासकारोंमें एक माने जाते हैं और उनका उपन्यास 'दधीचि' इस बातको भी स्पष्ट कर देता है कि उनका

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखन हर श्रेणी द्वारा पसन्द किया जाये, यह भी उनकी चेष्टा रहती है। पर क्या एक सही लेखकके मनमें इन सब बातोंका होना आवश्यक है ? उपन्यास-लेखनकी प्रक्रियामें क्या लेखककी ऐसी मानसिकता स्वीकार्य है ?

इन प्रश्नोंपर विस्तृत रूपसे विचार होना ही चाहिये। चूँकि यहाँ सिर्फ दधीचिपर ही लिखना है इसलिए इसे अवान्तर समझना पड़ेगा। पर इन प्रश्नोंके परिप्रेक्ष्यमें 'दधीचि' एक निम्न स्तरीय उपन्यास ही लगता है, कारण, लेखकने जानबूझकर एक पात्रको आदर्श बनानेकेलिए जिस वातावरण और कथ्यके टुकड़ोंको जुटाया है, वह एक कोरे आदर्शवादको भले ही स्थापित करता हो, औपन्यासिक महत्ताको प्राप्त नहीं कर पाता।

उपन्यासका मुख्य पात्र (हीरो) अमल है। अमलके इर्द-गिर्द ही सारा कथानक धूमता है। शायद नायक-प्रधान फिल्म बनानेकी योजना दिमागमें रहनेके कारण ही लेखकने कथा-नायकको हर तरहसे एक उच्च-आदर्श व्यक्तिके रूपमें रखा है जो साधारण मानव नहीं, अति असाधारण मानव है। वह मेधावी है, तेज है, सुन्दर है और सारे गुण उसमें हैं। नायक हर बुराईपर बराबर विजय पा लेता है और गान्धीवादी व्यक्तित्वका प्रदर्शन खून ठाटसे करता है। उसके पूरे 'करेक्टर' को समझनेके लिए कहानी को थोड़ा समझना आवश्यक है।

कोकाराम बाबू अपने तीन लड़कों—अमल, विमल और कमल—तथा एक लड़की सन्ध्या और पत्नीके साथ बस्तीके साधारण मकानमें रहते हैं। घरपर बड़े लड़के अमलका पूरा शासन चलता है, उसके हाँ-नापर ही सारे काम होते हैं क्योंकि वह बड़ा होनेके साथ-साथ सबसे अधिक पढ़ा-लिखा और समझदार है! एम. एस-सी. फर्स्ट क्लास फर्स्ट करनेके बाद रिसर्च कर रहा है और घरको अपने इशारे पर चला रहा है। पर उसके प्रति माँ-बाप चाहे जितना अधिक आस्थावान हों, छोटे भाई-बहनोंके मनमें दुराव है। सन्ध्या उसकी आज्ञाके विरुद्ध एक लड़केको प्यार करती है, उससे लुक-छिपकर मिलती है और उसीसे कोर्ट-मैरिज करती है। परिवारवाले इसे सहन नहीं कर पाते और उनके विरोधको न सहकर वह पतिके साथ अलग जाकर रहने लगती है। वह बी. ए. की छात्रा है, इसलिए घरमें कोई उसे रोक नहीं पाता। छोटा भाई कमल उसे हर जगह इस मामलेमें मदद देता रहता है। क्योंकि कमल इसमें कोई बुराई नहीं देखता कि बहन किसीसे प्यार करके शादी कर ले। वह अपने दोनों भाइयोंसे अलग विचार रखता है। वह उग्रवादी और उत्साही है! बम भी बनाता है और जुलूस भी सजाता है। वह परिवारके लोगोंको सह नहीं पाता पर मजबूरीवश उनके साथ रहता भी है।

वास्तवमें कमलके रूपमें कथाकारने एक नक्सली युवकको पेश करना चाहा है, शायद यह सोचकर कि ऐसे मध्यवर्गीय परिवारोंसे ही 'नक्सली' व्यक्तित्वों का निर्माण होता है। पर कमलके चरित्रोंको इसतरह दबाकर रखा गया है कि यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि वह आगे किस विचारधाराको अपनाकर चलता है। इसीतरह मझला भाई विमल भी घरकी परिस्थितियोंसे खिन्न है और वह सबसे अलग रह सके, इसलिए अपनी बदली दूसरे शहरमें करवा लेता है। इसतरह एक बना-बनाया परिवार टूटता जाता है और बड़ा भाई अमल देखता रहता है। वह दधीचिकी तरह तराजू के एक पलड़ेमें बैठा है और दूसरे पलड़ेमें पूरा परिवार, परिवारकी सुख-शान्ति है। अमलकी अपनी भी एक दुनिया है। उसकी दुनियामें भी प्रेम है, आकांक्षाएँ हैं, वासनाएँ हैं। पर चूँकि वह एक आदर्श व्यक्ति है इसलिए अपना सबकुछ त्यागता चलता है और किसीतरह परिवारकी सुख-शान्तिको बनाये रखना चाहता है। और अपने इस कार्यमें वह तब सफल होता है जब सब-जज होकर वह भी परिवारसे अलग हो जाता है और अलग रहकर हर किसीपर अपना प्यार बाँटना शुरू करता है। यहाँतक कि जो बहन उसे अपमानित कर चुकी होती है, उसीको सबसे ज्यादा वह अपनाता है। अपने अपनत्वमें बाँधनेकी चेष्टा करता है। और उसके इस प्रयासके फलस्वरूप परिवारके सभी लोगोंका मनोमालिन्य नष्ट हो जाता है। और इस तरह नाटकीय ढंगसे परिवारके बिछड़े लोगों (पात्रों) को कथाकारने अन्तमें इकट्ठा करके कहानीको सुखद बना दिया है।

इस पूरे कथा-व्यापारमें अगर कुछ उल्लेखनीय है तो वह है पारिवारिक मूल्योंके विघटनके कारणोंका सही आलेखन। मध्यवर्गीय संयुक्त परिवारके बीच जो दरार धीरे-धीरे पड़ती है वह किसतरह एक दिन इस दीवारको धराशायी कर देती है, इस तथ्यको बहुत ही तर्कसंगत ढंगसे लेखकने सामने रखा है। हर व्यक्तिकी कुण्ठा और निजस्वकी चिन्ता ही पारिवारिक कलहोंका कारण है, यह कोकाबाबूके परिवारके सदस्य स्पष्ट कर देते हैं। उग्रवादी स्वभावका 'कमल' अपनी बहनको प्रिय है, पर शान्त-स्वभावी दधीचिमार्का अमलको वह अपने घरसे बिना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिले लौटा देती है, क्योंकि अमल उसे अपनी स्वतन्त्रता ... ऊ ... भी। ... अग्रवालकी भाषामें जो रोचकता है अपने विचारोंमें बाधक प्रतीत होता है। अमलका प्रभुत्व पूरे घरपर छाया हुआ है, पर सन्ध्या सिर्फ उसके बारेमें एक ही राय रखती है कि व्यक्ति-स्वतन्त्रताका हनक है वह। और इसलिए वह उससे घृणा करती है। उसका पति भी अमलको एक हीन-व्यक्ति मानता है। अमल इन सारी परिस्थितियोंके बीच अपनेको संयोता जरूर है, पर टूटता भी है। और यह टूटन ही उसे परिवारसे अलग होने को बाध्य करती है। और अलग होकर जिस रूपमें वह परिवारकी एकताको फिर लाना चाहता है, टूटी कड़ियों को मिलाना चाहता है, उससे उसकी निःस्वार्थताका पता तो जरूर मिलता है, पर मध्यवर्गीय परिवारोंके बीच 'अमल' जैसे निःस्वार्थ व्यक्तिका होना विश्वसनीय नहीं लगता। अमल अकारण अपनी प्रेमिकाको परिवार और झूठे अहम्‌के कारण छोड़ देता है, जबकि उसकी प्रेमिका रमा उसे जीवनमें आगे बढ़ानेमें सहायक हो सकती थी। वास्तवमें अमल अपने 'आदर्श' के मोहमें एक अति भावुक और स्वप्नजीवी व्यक्ति बन जाता है जबकि उसके परिवार के अन्य सभी सदस्य—पिता, माँ, भाई, बहन—जीवनकी कटुताओंको झेलते भी हैं और यथार्थको पहचानते भी हैं और तदनुरूप काम भी करते हैं, व्यवहार भी। यहाँ तक कि रमा भी यथार्थको स्वीकारती है, वास्तविकतामें जीती है और तभी अमल द्वारा ठुकराये जानेपर वह प्रेममें पागल होनेका ढोंग नहीं करती, दूसरे व्यक्तिसे शादी कर लेती है। (शायद भावुक बंगाली दर्शकोंके लिए ही नायक-नायिका को अलग कर देना जरूरी समझा जाता है) वैसे भी अमलको 'दधीचि' ही बनानेका निर्णय लेखक ले चुका था, इसलिए अमलके सारे कार्यकलाप असहज ही नहीं, अविश्वसनीय भी हो उठते हैं। त्याग और सेवाके जिस-जिस धर्मको निभानेकी बात अमलके मनमें है वह परिवार के हितके लिए जरूर है पर एक काल्पानिक मुद्रा भी उसमें है। अपनेको कुछ ऊपर उठा हुआ मानकर अमल परिवारके सारे लोगोंपर जिस ढंगसे शासन करता है—करना चाहता है—वह उसके अहम्‌को सन्तुष्टि देने का प्रयास होता है। और इसलिए उसके त्यागके प्रति पाठककी कोई आस्था नहीं जगती।

अब दधीचिके अनुवादपर भी दो-चार बातें आवश्यक लगती हैं। अनुवादक ब्रजगोपालदास अग्रवालकी भाषा मूलको पकड़नेमें सक्षम तो जरूर है पर कई जगहोंपर कई बँगला शब्दोंको ज्योंका त्यों रख देना, शायद लेखककी मजबूरी थी। वह मूलके स्वादको बिगड़ने नहीं देती। पर सबसे अधिक खलनेवाली जो बात है वह है अनुवादका अन्तिम कवरपर विस्तृत परिचय। इस परिचयकी क्या तुक है? मूल लेखक का कहीं कोई परिचय नहीं, दो पंक्तियाँ भी उसके बारेमें नहीं और अनुवादकका सचित्र परिचय इतने विस्तार के साथ? आत्म-प्रकाशनका यह तरीका क्या औचित्यपूर्ण माना जा सकता है?

—सुरेन्द्र तिवारी

ग्राम-लक्ष्मी

लेखक : पीताम्बर पटेल; अनुवादक : गोपालदास नागर; प्रकाशक : आत्माराम एण्ड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : १६६; क्राउन, ७२; मूल्य : ७.०० रु.।

गुजराती उपन्यास 'केवड़ियानो काँटो' का यह हिन्दी अनुवाद है। उपन्यासकी आधार-भूमि ग्राम्य-जीवन है। उपन्यासके माध्यमसे कथाकारने स्वातन्त्र्योत्तर भारत के ग्रामीण जीवनकी जड़ता और रूढ़िवादिता जैसी अस्वस्थ प्रवृत्तियोंको उजागर करना चाहा है। प्रस्तुत कथा-रचना की सार्थकता इसी विशिष्ट सन्दर्भमें सिद्ध होती है।

कथाकृतिमें ग्राम-जीवनकी जिन शुभ-अशुभ प्रवृत्तियों का निरूपण है, उसके चरित्र इस लक्ष्य-विशेषकी सिद्धिमें सहायक बनते हैं। आजके देहाती समाजमें जिस ढंगके षड्यन्त्र होते हैं, विवाद और कलह उत्पन्न होते हैं, पारस्परिक राग-द्वेषके कारण किसप्रकार परिवारके परिवार और कुटुम्ब विनाशके कगारपर आ खड़े होते हैं, उनका सफल चित्रण इसमें है। कथाकार की दृष्टि मूलतः स्वस्थ एवं अस्वस्थ जीवन-दृष्टियोंके पारस्परिक वैपरीत्य एवं वैषम्यके प्रदर्शनपर केन्द्रित रहती है। उपन्यासकार इन वैविध्यपूर्ण जीवन-पद्धतियों का चित्रण मात्र नहीं करता वरन् उनके बीच सामंजस्य और समन्वय स्थापित करनेके निमित्त आदर्शप्रवण समाधान भी प्रस्तुत करता है। इस आदर्शवादी समाधानके अनुसार एक ओर तो कुटिल मनोवृत्तिके शिकार कुटुम्बकी रेवाके मनमें पश्चात्तापकी भावना उदित होती है और दूसरी ओर भागवत सप्ताहके अवसरपर धर्माचार्य द्वारा दिये गये प्रवचनोंके प्रभावस्वरूप सद्‌वृत्तिसम्पन्न कुटुम्बकी अम्बाकी सास गंगाके मनमें रेवाके प्रति स्नेह, सद्भावना और करुणाकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिली-जुली भावनाएँ उद्भूत होती हैं। इसतरह यह आदर्श-वादी समाधान दो परिवारोंके पुराने संघर्षको समाप्त करने में सफल होता है। उपन्यासके अन्तमें अम्बा का ग्राम-वासियोंके द्वारा सरपंच के रूपमें निर्वाचन नारीजाग्रतिका एक उल्लेखनीय उदाहरण बनकर उपस्थित होता है।

उपन्यासके कथा-विकासमें उसकी शैलीगत सहजता बहुत दूरतक सहायक सिद्ध हुई है क्योंकि इसकी शैलीमें कथाको विकसित करने और चरित्रोंको उनके सहज स्वाभाविक सन्दर्भोंके बीच चित्रित करनेकी क्षमता निहित है। प्रस्तुत कृति अनूदित होनेके बावजूद मौलिक उपन्यास का ही आनन्द प्रदान करती है।

—डॉ. विपिनबिहारी ठाकुर

अनुवाद : सिद्धान्त और प्रयोग

अनुवाद विज्ञान

लेखक : डॉ. भोलानाथ तिवारी; प्रकाशक : शब्दकार, २२०३, गली डकौतान, तुर्कमान गेट, दिल्ली-६। पृष्ठ : २२८; डिमाई, ७२; मूल्य : १२.५० रु.।

आजादीके बाद देशके विभिन्न विश्वविद्यालयोंमें अनुवाद-कार्यको विविध परीक्षाओंके पाठ्यक्रमोंमें विशेष रूपसे निर्धारित करनेकी योजना चल पड़ी है। इससे छात्र-समुदायको भिन्न भाषाओंकी अभिव्यक्तियों—शब्दों, वाक्यों और ध्वनियोंको समझने और उन्हें एक भाषासे दूसरी भाषा में ढालनेकी दिशामें निपुणता प्राप्त करनेमें बड़ी सहायता मिली है। एक प्रकारसे छात्रोंमें अनुवाद-क्षमताका समुचित विकास करनेकी दिशामें किया जानेवाला यह कार्य निश्चय ही सराहनीय है। दिल्ली विश्वविद्यालयमें तो एक वर्षकी पूरी अवधिका अनुवाद-कार्यसे सम्बद्ध पाठ्य-क्रम भी 'सर्टिफिकेट कोर्स' के रूपमें चल रहा है।

अतः एक ओर जहाँ अनुवाद-कार्यको विशेष बढ़ावा मिल रहा है, तो दूसरी ओर उस कार्यके सिद्धान्त-पक्षसे सम्बद्ध उत्तम कोटिके प्रामाणिक ग्रन्थोंका अभीतक अधिक सख्यामें न होना खटकता भी रहा है। किन्तु 'अनुवाद विज्ञान' नामक पुस्तकको देखनेपर लगा है कि इस दिशामें शायद पहली बार इसप्रकारकी पुस्तक लिखनेकी आवश्यकताको अब समझा गया है। डॉ. भोलानाथ तिवारी जैसे विख्यात एवं समर्थ भाषा-वैज्ञानिक द्वारा लिखी गयी यह पुस्तक इस तथ्यकी ओर स्पष्ट संकेत करती है कि सम्पूर्ण मानव-जीवन ही अनुवादमय होता है और तिसपर अनुवाद की सबसे बड़ी समस्या यह है कि उसे करना होता है। उससे तो निपटना ही पड़ता है—कोई छुटकारा नहीं। दूसरे लेखकका यह विश्वास है कि अपने पूरे परिप्रेक्ष्यमें अनुवाद मूलतः प्रायोगिक भाषाविज्ञानके अन्तर्गत ही आता है। अतः अनुवाद-कार्यका सीधा सम्बन्ध भाषा-विज्ञानसे है। इसप्रकार एक सफल भाषाविद् एवं अनुवाद कार्यके निरीक्षण-परीक्षण-कार्यसे प्रत्यक्षतः सम्बद्ध रहनेके कारण डॉ. तिवारी जैसे विद्वान् द्वारा लिखी इस पुस्तककी उपादेयता एवं प्रामाणिकता असन्दिग्ध ठहरती है।

अनुवादकी प्रक्रिया चूँकि एक निरन्तर चलती रहने वाली प्रक्रिया है, अतः अनुवाद करते समय अनुवादकके समक्ष, भाषाओंके गठन, शब्द-भण्डार और विकाससे सम्बद्ध समस्याओंको आसानीसे हल करनेकी कोई युक्ति नहीं रहती। लेखक यदि अनुवाद सम्बन्धी अन्य समस्याओं का जिक्र करते समय इस बड़ी समस्याको भी सुलझानेकी युक्ति बताता तो ग्रन्थकी उपयोगिता और भी बढ़ गयी होती। किन्तु अनुवाद क्या है, अनुवादकका कर्त्तव्य-कर्म एवं कार्य-क्षेत्रकी दिशाएँ एवं समस्याएँ क्या हैं, इन प्रश्नों पर लेखकने अच्छी प्रकार विचार किया है। यह बात दूसरी है कि अनुवाद करते समय अनुवादकका मूल दृष्टि-कोण क्या हो, अनुवादक कृतिके मूल भावको ग्रहण करने का प्रयत्न करे या उस छायाको जो कृति पढ़ते समय उसके मनपर पड़ी थी—इस ओर लेखककी दृष्टि शायद नहीं गयी और यह प्रश्न अधूरा ही रह गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक प्रकारसे इस पुस्तकने लेखनकी एक सक्षम पूर्ति की है—अनुवाद और भाषा-विज्ञान जैसे दोनों ही एक दूसरेके पूरक हैं—अविभाज्य अंग हैं। इस कोणसे लेखकने अनुवादकी भाषा, मुहावरोंका अनुवाद, शब्दानुवाद, काव्यानुवाद, भावानुवाद, तकनीकी अनुवाद, यन्त्र-विषयक अनुवाद आदिसे सम्बद्ध अनुवादकी सही कठिनाइयोंको पहली बार पेशकर उनके निराकरणके व्यावहारिक रूपकी ओर संकेत तो किया है किन्तु अनुवाद एक नया मौलिक सृजन है या मूल रचनाका मात्र शाब्दिक रूपान्तरण, इस बहसको लेखकने न जाने क्यों छुआ तक नहीं है। लेखकने अनुवाद कला है या विज्ञान है, इस विवादजन्य प्रश्नको दृढ़ता से सुलझानेका प्रयत्न किया है। यह मत कि अनुवाद एक विज्ञान है, सर्वमान्य हो सकता है।

यह ग्रन्थ एक प्रकारसे अनुवाद सम्बन्धी कुछ महत्व-पूर्ण प्रश्नों विवादों एवं समस्याओंपर पहली प्रामाणिक रचना हो सकती है। क्योंकि इस ग्रन्थमें अनुवादक, अनुवादकी शैलियाँ, अनुवादकी विडम्बना, वैज्ञानिक साहित्यका अनुवाद एवं अनुवाद और भाषाकी सूचना-शक्ति जैसे शीर्षकोंके अन्तर्गत उपयोगी सामग्रीको समेटकर रखा गया है।

ऐसा लगता है कि यह ग्रन्थ विशेषतः अनुवाद पाठ्य-क्रम एवं पत्रकारिताके विद्यार्थियोंको ध्यानमें रखकर लिखा गया है। फिरभी यह ग्रन्थ अपने ढंगका अकेला ग्रन्थ है—उन सभी सरकारी विभागोंके लिए भी समान रूपसे उपयोगी है जहाँ विविध विषयोंके अनुवाद आंग्ल भाषासे हिन्दीमें एवं हिन्दीसे आंग्ल भाषामें होते है।

—हेमचन्द्र जैन

गान्धी कथा

सम्पूर्ण गान्धी वाङ्मय (खण्ड ४५)

प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ५२८; डिमाई, ७२; मूल्य : ७.५० रु.।

इस खण्डमें १५ दिसम्बर १९३० से १५ अप्रैल १९३१ तकके चार महीनोंकी सामग्री है। सुप्रसिद्ध गांधी-इर्विन समझौता और कराची-कांग्रेस इसी अवधिमें होनेसे इस कालका बड़ा महत्व है। सर्वश्री शास्त्री, सप्रू, जयकर के प्रयत्नोंसे समझौतेका आधार तैयार हुआ, लार्ड इर्विन और गान्धीजीके बीच मानवीय सम्बन्ध कायम हुए और गान्धीजीने नमक-कर विरोधी सविनय अवज्ञा तथा शराब और विदेशी वस्त्रके बहिष्कारकी गति मन्द की, परन्तु अन्दर-ही-अन्दर सरकार और कांग्रेस, दोनोंही सशंक रहे। उत्तरप्रदेशमें जवाहरलालके और गुजरातमें सरदार पटेलके रुखकी सरकार शिकायत करती रही, इसीप्रकार समझौता-विरोधी सरकारी कामोंकी ओर गान्धीजी सरकार का ध्यान आकर्षित करते रहे। सरदार भगतसिंहकी फाँसी की प्रतिक्रिया, हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धोंके बिगाड़ और गणेशशंकर विद्यार्थीकी शहादत इसी कालकी बातें हैं। काँग्रेस मौलिक अधिकारोंके लिए प्रतिज्ञाबद्ध भी इसी बीच कराचीके अधिवेशनमें हुई। इस सबका विवरण इस खण्डमें अधिकृत रूपसे उपलब्ध होनेसे इसका विशेष महत्व है।

इसबीच गान्धीजी द्वारा भेजे पत्र, लिखे लेख व सार्वजनिक भाषण भी उनकी सूक्ष्म और सावधान दृष्टिके सूचक हैं। जेलसे महालक्ष्मीको उन्होंने लिखा : "हमारे सिद्धान्तके अनुसार वहाँ (बाहर) के कामके बारेमें मैं निर्णय नहीं कर सकता।" और सलाह दी, "तुम्हें जो कुछ करना धर्म लगे, उसके करनेकी छूट है। अपने धर्मको जाननेके लिए हम व्रत-नियमोंका पालन करते हैं।" महावीर गिरिको लिखा : "सभी दोष एकसाथ न सुधर सकें तो जो पहले सुधारा जा सकता हो, उसे सुधारें।" और मणि बहन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पटेलको सुझाया : "जब जागे तभी सवेरा। भूलें, वहींसे फिर गिनें।" एक भाईको लिखा : "तुमने सब कबूल कर लिया है, यह ठीक किया है।" और सलाह दी, "तुम्हें अपनी पत्नीके साथ भोग नहीं करना चाहिये......उससे यह स्पष्ट कर लेना चाहिये, ताकि वह दुखी न हो....इसके साथ यदि वह दूसरा विवाह करना चाहे तो तुम्हें उसे करनेकी छूट भी देनी चाहिये।"

समझौतेके सम्बन्धमें सत्याग्रहीका दृष्टिकोण बताया : "सत्याग्रही जहाँ आतंक और संकोचवश कभी आत्म-समर्पण नहीं करता, वहाँ वह दूसरे पक्षको अपमानित करके या उसके घुटने टेककर आत्म-समर्पण करनेकी बात भी नहीं सोचता। उसे न्यायके पथसे विचलित नहीं होना चाहिये। उसे असम्भव शर्तें नहीं मनवानी चाहियें। उसे अपनी माँगें न बहुत ऊँची रखनी चाहियें न बहुत नीची।" और कहा कि "मौजूदा (गान्धी-इर्विन) समझौता इन सारी शर्तोंको पूरा करता है।" साथही यह भी स्पष्ट किया कि "सरकारको अपनी मशीनरीका प्रयोग करनेकी छूट है तो, जैसेही यह लगे कि जानबूझकर समझौता भंग किया जा रहा है, हमें भी अपना अचूक हथियार अपनाने की छूट है।" और उद्‌बोधन किया : "इसलिए हम अपनी ताकतको हमेशा बरकरार रखे रहें और अपने हथियार सदा साफ रखें। यदि समझौता आजकल हो जाये तो हम ऊँघते हुए न पाये जायें, बल्कि पहले आदेश पर युद्ध करनेके लिए तैयार रहें।"

परिशिष्टोंमें उपलब्ध गृहमन्त्री एमर्सनकी टिप्पणियों से यह भी स्पष्ट है कि गान्धीजी समझौतेपर सचाईसे कायम थे। "गान्धीका व्यवहार मुझे बहुत ही मैत्रीपूर्ण और युक्तियुक्त लगा।" और "मेरे मनपर सामान्यतः जो छाप पड़ी वह यह थी कि गान्धीजी समझौतेको अमलमें लाये और एक वास्तविक समाधानपर पहुँचनेको उत्सुक हैं।" उनकी टिप्पणियोंके ऐसे अंश इसके प्रमाण हैं।

पृष्ठ ३२४ पर जिसे चिरनरका गोलीकाण्ड लिखा गया है, वह गलत है और सम्भवतः चिमूर का होना चाहिये। पृष्ठ ३६६ की दूसरी पाद-टिप्पणीमें हरिशंकर विद्यार्थीको गणेशशंकर विद्यार्थी का भाई बताना भी गलत है, वे भाई नहीं, पुत्र थे। नारणदास गान्धीको अनेक जगह नारायणदास लिखना भी सही नहीं। परम श्रेष्ठ और महामहिम शब्द भी एक ही अंग्रेजी शब्दके अनुवाद दिये गये हैं, इनकी बजाय सीधे सम्राटकी सरकार और श्रीमान लिखना सुबोध रहता। ऐसे ग्रन्थोंमें ऐसी गलतियों से बचा जा सके तो अच्छा हो। ग्रन्थ सुमुद्रित और संग्रहणीय है।

—मुकुटबिहारी वर्मा

व्यक्ति : परिचय

सचल सरमस्त

लेखक : कल्याण बू. आडवाणी; अनुवादक : आनन्द खेमाणी; प्रकाशक : साहित्य अकादमी, रवींद्र भवन, ३५, फिरोजशाह रोड, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ६२; डिमाई, ७२; मूल्य : २.५० रु.।

आलोच्य पुस्तक सिन्धके लोकप्रिय सूफी कवि सचल सरमस्तके काव्यात्मक कृतित्वपर प्रकाश डालती है। प्रस्तुत पुस्तकमें बारह निबन्ध संकलित हैं जिनके माध्यमसे सचल सरमस्तके साहित्यका बहुपक्षीय अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। लेखकने सर्वप्रथम 'जीवन और व्यक्तित्व' शीर्षक निबन्धमें सचल सरमस्तके जन्मस्थान, वंश-परम्परा, गुरु और मृत्यु जैसे प्रसंगोंपर तथ्यपरक ढंगसे प्रकाश डालते हुए उनकी काव्य-रचना-शक्ति, संगीत-प्रेम और उदार धर्मनीति जैसी विशिष्टताओंका उल्लेख किया है। दूसरे शब्दोंमें, प्रस्तुत निबन्ध सचल सरमस्तके व्यक्तित्व एवं कृतित्वका परिचय प्रस्तुत करता है। लेखकने दूसरे निबन्धमें सचल-काव्यके प्रधान लक्षण विस्मय-भाव (हैरत)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की विवेचना की है। वह सचलके उपर्युक्त विस्मय-भावको उनकी निम्नलिखित काव्य-पंक्तियोंके आधारपर प्रस्तुत करता है :

करूँ असरार मैं जाहिर,
थी हैरत में हैरानी। (पृष्ठ १५)

लेखकने पुस्तकके तीसरे निबन्धमें सचलके व्यक्तित्व की स्वातन्त्र्यप्रिय प्रवृत्तिपर प्रकाश डाला है और यह सिद्ध किया है कि कवि धार्मिक कट्टरता अथवा रूढ़िवादिताका विरोधी एवं वर्गभेद, रूढ़ियों एवं पूर्वनिर्धारित परम्पराओंसे सर्वथा मुक्त समाजके निर्माणका आग्रही है। इस निबन्धमें उनका क्रान्तदर्शी कवि-रूप उद्घाटित होता है। चौथे निबन्धमें सचलकी पारलौकिक मस्ती मदिरा और मदिरालयके प्रतीकोंके माध्यमसे अभिव्यंजित की गयी है। यहाँपर यह स्पष्ट होता है कि फारसीके महान् कवि सिराजीकी भाँति सचलने भी मदिरा और मदिरालय के दर्शनको स्वीकारा है। परिणामतः उमरखैय्यामकी तरह इनके काव्यमें भी शराब और मयखानेके प्रतीकोंकी बहुलता मिलती है, किन्तु इन प्रतीकोंके माध्यमसे आध्यात्मिक तल्लीनताका अभिव्यक्तिकरण ही कविका अभिप्रेत रहा है। लेखक पाँचवें निबन्धमें सचल-काव्यकी रहस्य-भावनाका आकलन करता है और यह स्पष्ट करता है कि वे अपने अलौकिक उद्गम और गौरवकी उद्घोषणा करते हुए अपनेको खुदा मानते हैं जो पृथ्वीपर एक यायावर बनकर आ गया है। इस निबन्धमें सूफी कविके उक्त विचार-दर्शनकी व्याख्या की गयी है जिसके अनुसार मनुष्यको स्वयं अपनेको ही प्रणम्य मानना चाहिये क्योंकि वही पूजा और आराधना का लक्ष्यबिन्दु है :

उपासक तुम हो, उपासनागृह भी तुम हो,
यहाँ, वहाँ देखना व्यर्थ है।
अपना ध्येय तुम स्वयं हो,
तेरे अन्तस् में तेरा प्रियतम है। (पृष्ठ ३०)

छठे और सातवें निबन्धमें क्रमशः सचलके काव्यमें अवस्थित 'अनेकतामें एकता' के दार्शनिक सिद्धान्तकी विवेचना और यौगिक प्रभावोंकी मीमांसा मिलती है। आठवाँ निबन्ध उनके काव्यमें उपलब्ध प्रेम और सौन्दर्य की प्रकृतिपर प्रकाशनिक्षेप करता है और यह स्पष्ट करता है कि उनकी सौन्दर्योपासना और प्रेम-निष्ठाकी आध्यात्मिक चेतना हुस्न और इश्कके दर्शनके प्रतिपादक जामी और रूमी जैसे विख्यात रहस्यवादियोंकी चिन्तन-धाराओंसे सहज ही जोड़ी जा सकती है। यहाँपर यह स्पष्ट होता है कि सचल भी उपर्युक्त कवियोंके समान ही प्रेमको ही परमात्मा-प्राप्तिका सर्वोत्तम साधन मानते हैं तथा उत्सर्ग और बलिदानके इसी विशिष्ट सन्दर्भमें वे मंसूरको अपना आदर्श मानते हैं। नवम् निबन्धसे यह ज्ञात होता है कि सचलने मुल्लाओं और काजियोंके द्वारा की गयी धार्मिक नियमोंकी कठोर, संकीर्ण और अनुदार व्याख्याओंके प्रति व्यंग्योक्तियोंके द्वारा तीव्र आक्रोश व्यक्त किया है और इसप्रकार अपने व्यंग्य-प्रयोगोंके द्वारा धर्मके उदार और मानवतावादी स्वरूपके प्रति जन-निष्ठा उत्पन्न करनेका सत्प्रयास किया है। दसवाँ निबन्ध इस तथ्य पर प्रकाश डालता है कि फारसी कवि रूमी और सिन्धी कवि सामीकी भाँति सचलने भी अपने गुरुके प्रति अनन्य भक्तिका परिचय दिया है। ग्यारहवें निबन्धमें सचलके रहस्यवादी गीतों (काफ़ियों) की आध्यात्मिक प्रवृत्तिकी व्याख्या की गयी है। अन्तिम निबन्धमें सचलके काव्य-सृजनपर पड़े हुए मंसूर, बायजीद, जामी, रूमी, अत्तार और शाह प्रभृति फारसी एवं सिन्धी कवियोंके प्रभावोंका बड़ा ही प्रामाणिक एवं खोजपूर्ण विश्लेषण किया गया है।

निष्कर्षतः प्रोफेसर कल्याण बू. आडवानीकी प्रस्तुत आलोचनात्मक कृति सिन्धके मूर्धन्य सूफी कवि सचल सरमस्तके जीवन-वृत्त, साहित्यिक व्यक्तित्व, काव्य के प्रवृत्तिगत वैशिष्ट्य एवं उनके काव्यको प्रभावित करने वाले विविध स्रोतोंका विश्लेषण करती है और लेखककी शैलीगत प्रांजलतासे इस विश्लेषणको सुबोधता प्राप्त होती है। अनुवाद होनेके बाद भी प्रस्तुत कृतिकी मौलिकता कहीं भी खण्डित नहीं होती। निष्कर्षतः आलोच्य पुस्तक सिन्धके सूफी कवि सचल सरमस्तके साहित्यिक व्यक्तित्वको हिन्दी-जगत्के समक्ष उजागर करनेमें सफल हुई है।

—डॉ. विपिनबिहारी ठाकुर

उन्हें हम कैसे भूलें

सम्पादक : विनोद विभाकर; प्रकाशक : कला प्रकाशन मन्दिर, २५३८, धर्मपुरा, दिल्ली-६। पृष्ठ : १४८; क्राउन, १९७२; मूल्य : ४.०० रु.।

"उन्हें हम कैसे भूलें" 'संघर्ष ही जीवन है' को प्रमाणित करने वाली एक संस्मरणात्मक पुस्तिका है जो

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन खण्डों 'संस्मरण खण्ड,' 'स्तुतिखण्ड' एवं 'विविधा' में विभक्त है। इसमें सम्पादक विनोद 'विभाकर' की माता स्व० कलावती जैनका संक्षिप्त जीवनवृत्त एवं सन्निकटस्थ व्यक्तियों द्वारा प्रथम पुण्य-तिथिपर कुछ संस्मरण प्रस्तुत किये गये हैं। साथ ही उनके त्याग, सेवा एवं कर्तव्य-परायणताकी भूरि-भूरि प्रशंसा की गयी है। वस्तुतः यह पुस्तक केवल प्रेरणाप्रद संस्मरणयुक्त ही नहीं है अपितु पलायनवादियोंके लिए पथ-प्रदर्शनमें भी सक्षम है। उत्तरार्द्ध में अनेक वीर माताओंके संस्मरण जोड़ दिये गये हैं उससे इसकी उपादेयता और भी बढ़ गयी है।

—डॉ. रामाभिलाष त्रिपाठी

प्राकृतिक चिकित्सा

वैज्ञानिक मालिश

लेखक : सत्यपाल; प्रकाशक : सस्ता साहित्य मण्डल, कनाट सरकस, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : १५६; क्राउन, ७०; मूल्य . ४.५० रु.।

प्राकृतिक चिकित्साका इतिहास शायद उतना ही पुराना है, जितना मानव सभ्यताका इतिहास। मालिश प्राकृतिक चिकित्साका ही एक महत्वपूर्ण अंग है, जो जन्म-कालसे ही शिशु-परिचर्याके रूपमें शुरू हो जाती है। छोटे-छोटे गाँवोंतकमें अच्छे-अच्छे मालिश करनेवाले मिल जाते हैं और उनकी मालिशका कारगर असर भी होता है। इसीप्रकार, आयुर्वेद ग्रन्थोंमें भी मालिशका उल्लेख किया गया है कि किन रोगोंके उपचारके लिए मालिश जरूरी है।

यह सब होते हुए भी मालिश किस ढंगसे हो, किस प्रकारसे हाथ चलानेका शरीरपर क्या प्रभाव पड़ता है, नाड़ी-मण्डलपर असर डालनेके लिए कैसी मालिश करनी चाहिये आदि बातोंका वैज्ञानिक पक्ष साहित्यके रूपमें उपलब्ध न होनेसे बहुधा मालिशकी उपयोगिताको ही चुनौती दी जाती है। इसलिए मालिशको वैज्ञानिक रूप देनेके लिए देश-विदेशमें जो साहित्य-सृजन हुआ है। उसमें यह एक महत्वपूर्ण पुस्तक है।

इस पुस्तकमें मालिशके इतिहास और उपयोगिताके अलावा शरीर-रचनापर भी प्रकाश डाला है और तब मालिशकी विधियाँ उदाहरणों और चित्रोंके साथ बतायी गयी हैं। अनिद्रा, नाड़ी दुर्बलता, पागलपन, रक्तचाप वृद्धि, अधरंग और चर्मरोग जैसे असाध्य रोगोंमें कैसी मालिश कारगर होती है, इसका इस पुस्तकमें बड़ा उपयोगी वर्णन है। इस एक पुस्तकसे भी मालिशका सैद्धान्तिक और व्यावहारिक, दोनों ज्ञान प्राप्त किये जा सकते हैं।

पुस्तककी छपाई साफ-सुथरी और भाषा प्रवाहमयी है।

—मणिकान्त वाजपेयी

कुछ महत्वपूर्ण उपन्यास

अपराधी वैज्ञानिक (वैज्ञानिक उपन्यास) —यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक'	८.००
सुधा (मलयालमसे अनूदित) —टी. एन. गोपीनाथ नायर	३.५०
शकुन्तला (अभिज्ञान-शाकुन्तलका रूपान्तर) —विराज	४.५०
प्रवासी (बर्माके प्रवासी भारतीयोंकी समस्यापर आधारित) —श्यामाचरण मिश्र	५.००
ये पहाड़ी लोग —यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक'	४.५०

नवभारती सहकार प्रकाशन
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्र-पत्रिकाएँ

इस समय मैथिलीमें जो पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं उनमें प्रमुख हैं : 'मिथिला मिहिर' (साप्ता. : पटना), 'मैथिली' (विराटनगर; नेपाल), 'वैदेही' (लहेरियासराय), 'मिथिला भारती' (पटना) और 'सन्नि-पात' (पटना)। यहाँ 'मिथिला मिहिर' के कुछ अंकोंकी समीक्षा ही अभिधेय है। 'मिथिला मिहिर' (साप्ता.); सम्पा. सुधांशु शेखर चौधरी, प्रकाशक : इण्डियन नेशन प्रेस, पटना, पृष्ठ : २६, वार्षिक चन्दा : १३ रु.।

मिथिला मिहिर (**२ अप्रैल १९७२, क्रमांक ६१०**) में एक कथा (उद्गार : डॉ. बी. झा; पृष्ठ १३), एक अनूदित कथा (वायलिनक संग रोमांस : चेखव, अनुवादक : श्री प्रमोद; पृ. ८), तीन लेख (मैथिलीक दुःस्थितिक कारण : श्री नारायण झा; पृ. ७, गांधीजी तरवन ओ सरवन : श्री भोलानाथ झा; पृ० ११, एवं 'गरीबी हटाओ'—किछु विचार : श्री मणिकान्त झा; पृ. १३) एवं दो कविताएँ (संज्ञाहीन : श्री धूमकेतु; पृ. ९, फर्जी : श्री रामनारायण सुधाकर; पृ. ९) आर्कषित करती हैं। अन्य कुछ रोचक स्तम्भ हैं : सम्पादकीय, समाचार-समीक्षा, मिथिलांचल (यहाँ स्मरण रखना चाहिये कि मिथिलांचलसे बाहरके अंचल भी घुसा दिये जाते हैं), स्त्रीगण समाज, पुस्तक-परिचय, नेना भुटक्कक चौपाड़ि (बच्चोंके लिए), साप्ताहिक समाचार-दर्पण।

पृष्ठ ७ पर श्री नारायण झा लिखते हैं "मैथिलीक विरोधी आर हिन्दीक पृष्ठपोषक मैथिली-प्रगतिक बाटपर रोड़ा अटकवैत अपलाह अछि।" इससे पूर्व ही वे स्वीकार गये हैं : "वर्तमान अंधी सरकार बगैर घेराव, उपद्रव और खूनी क्रान्तिके कुछ सुन ही नहीं सकती है।"

मैथिली ही भारतमें एकमात्र वह जनपदीय भाषा है जिसे आर्थिक लाभके सभी अवसर पटनासे दिल्लीतक प्राप्त हैं पर 'मिथिला मिहिर' के अंकोंमें हिन्दी-विरोधका समा बाँध जाता है।

संविधानकी आठवीं अनुसूचीमें स्थान प्राप्त करनेके लिए मैथिलीके चतुर तंत्री सिर-पैर एक किये रहते हैं, जबकि साहित्य अकादमीसे मैथिली लाभान्वित हो ही रही है। अबतक मैथिलीकी ५ कृतियोंपर ५०००-५००० हजार रुपयेके पुरस्कार ५ विभिन्न लेखकों [मिथिला वैभव : पण्डित यशोधर झा, पत्रहीन नग्न गाछ : श्री यात्री (हिन्दीके नागार्जुन), दू पत्र : श्री उपेन्द्रनाथ झा 'व्यास,' राधा विरह : चूड़ामणि श्री काशीकान्त मिश्र 'मधुप' को एवं १९७१ का पुरस्कार 'पयस्विनी' श्री सुरेन्द्र झा 'सुमन' के काव्य-ग्रंथपर] को अब तक मिल चुके हैं।

'मिथिलांचल' शीर्षक स्तम्भके मैथिलीके व्यंग्य-लेखक श्री रूपकान्त ठाकुरकी मृत्यु—(२५ मार्च, १९७२ की डेढ़ बजे रात में) पृष्ठ २६ पर—की सूचना छपी है। श्री रूपकान्त बाबू दरभंगा जिलाके कमतौल हाई स्कूलमें हिन्दी शिक्षक थे तथा वे एक सालसे कैंसर रोगसे पीड़ित थे। व्यंग्य-लेखन उनका व्यसन था। 'मोमक नाक,' 'धूकल केरा,' 'वचन-वैष्णव' उनकी श्रेष्ठ कृतियाँ हैं मैथिलीमें। 'मोतीकण' नामसे हिन्दी-कविताओंका उनका एक संग्रह भी १९६० में प्रकाशित हुआ था। ईश्वर उनकी आत्मा को सद्गति दे।

मिथिला मिहिर (**१६ अप्रैल ७२, क्रमांक–६१२**) में दो लेख (नेपालक आधुनिक मैथिली नाटक : प्रो. प्रफुल्ल कुमार 'मौन,' नव कविता आ रूप-विधान : श्री रमानन्द झा रमण), दो कहानियाँ 'टुनटुनमा' : शशीकान्त और 'तकर-वाद' : श्यामानन्द ठाकुर तथा दो कविताएँ (तिनकोनमा : जगदीश मिश्र और क्षण : हर्ष) अच्छी हैं। अन्य स्तम्भ पूर्ववत हैं। जहाँ मौनजीने नेपालमें रचे जा रहे आधुनिक मैथिली नाटकोंका परिचय दिया है वहीं श्री रमानन्द झा रमणने आधुनिक मैथिली कविताओंकी अग्नि-परीक्षा ली है। श्री सोमदेव, श्री धूमकेतु, श्री मार्कण्डेय प्रवासी, श्री किसुन, श्री कमल आनन्द, श्री उपेन्द्र दोषी, श्री जीव-कान्त, श्री गंगेश गुंजन, श्री सुकान्त सोम, श्री धीरेन्द्र, श्री पाथेय आदि मैथिलीके दिग्गज कवियोंकी कविताओंकी वानगी सुन्दर हैं।

मिथिला मिहिर (**७ मई ७२, क्रमांक--६१५**) की सबसे उतेजक और ध्यानाकर्षक रचना है श्री वीरेन्द्र

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मल्लिककी 'कैंसर'। देशकी वर्तमान स्थितिपर आक्रोश व्यक्त करते हुए कवि लिखता है :

"कुत्ताके देहपर वैंसेही पेशाबकर अट्टहास कर रहा
है समाज

बुद्धिजीवी वर्ग बन गया है दर्शकमात्र
नहीं है 'सरोकार' अब अपने देश, भाषा और माटी-पानीसे....

कुर्सी रहनी चाहिये सुरक्षित देश हो जाये बीमार....
अकाल पीड़ित जनता कर रही हो आर्तनाद
पर नेता नहीं निकलेंगे 'भोट' के बोद....
कौन करेगा निर्णय समय-सत्यके अतिरिक्त ?

क्यों, क्यों यह निर्वाचन, लाठीसे निपटनेकी प्रक्रिया,
आश्वासनपर आश्वासन

क्यों अस्पताल, गर्भ-निरोध, खादी ग्रामोद्योग, मुखिया-
का चुनाव ग्राम पंचायत

क्यों 'अधिक अन्न उपजाओ' का बोर्ड
क्यों राशन कार्ड, क्यों टैक्स, क्यों १०,००० करोड़
रुपयोंका विदेशी कर्ज

क्यों सेक्स, ब्लू फिल्म, सेंसर बोर्ड,
क्यों बँगला देश, बिहारी मुसलमान, वियतनाम, ब्लड-
बैंक, अनुदान

क्यों 'दो या तीन बस' गर्भ पात-कानून निरोध,
पिल्स और लाल तिकोन

क्यों यह ध्रुवीकरण, निक्सन और माओ
क्यों इन्दिरा, आत्म निर्भरता, गरीबी हटाओ
क्यों हम, क्यों आप क्यों वह—सभी फँसा फ्रॉड कैंसर
बच्चोंका खेल, रोते बच्चेके हाथमें
लड्डू दे 'फुसलाने' का उपचार
गरीब जनताके साथ बार-बार बलात्कार !

(मैथिलीसे अनूदित)

इसके अतिरिक्त 'प्राचीन भारतमें सर्जरी' शीर्षक तथ्यपरक लेख (डॉ. जयनारायण गिरी 'इन्दु') भी सुन्दर बन पड़ा है।

'मिथिला मिहिर' के २५ जून ७२ का अंक ६२२ इसलिए भी विचारणीय है कि इसके सम्पादकीयमें मैथिलीको विहार लोक सेवा आयोगमें स्थान दिये जानेके बाद प्रथम बार विचार व्यक्त किया गया है : "अब छात्र केवल इसीलिए नहीं मैथिली पढ़ेंगे कि उन्हें मातृभाषाकी लाज रखनी है, अब छात्र केवल इसीलिए मैथिली नहीं पढ़ेंगे कि उन्हें शिक्षक और प्राध्यापकका काम मिल सकेगा, बल्कि वे लोग अब इसलिए मैथिली पढ़ेंगे कि वे बी. डी. ओ. हो सकेंगे, मैजिस्ट्रेट हो सकेंगे। तात्पर्य यह कि लोक सेवा आयोगकी परीक्षामें मैथिलीमें ही प्रश्नों के उत्तर लिख 'हाकिम' (अफसर) भी बन सकेंगे। अर्थात् अब मैथिलीके प्रति भक्तिका ही प्रयोजन नहीं रहा, अब मैथिली जीवनमें अच्छे अवसर प्राप्त करानेका साधन बन गयी है। स्वभावतः अब लोग पूर्वापेक्षा मैथिलीकी उपयोगिताको विशेष महत्व देंगे और दूसरे विषयोंमें कमजोर रहनेवाले छात्र ही मैथिलीकी पूंछ पकड़ अच्छे परिणामकी आशामें नहीं बल्कि प्रतिभाशाली छात्र भी मैथिलीकी ओर आकृष्ट होंगे। कहनेका प्रयोजन यही कि मैथिली अच्छे जीवन जीनेकी साधन बन रही है और इससे अच्छेसे अच्छे प्रतिभाशाली युवक मैथिलीको अंगीकार करनेमें लगेंगे।" पृष्ठ ३।

इस अंक में श्री कामरूप चौधरीकी 'विश्वास अछि' और 'बहुत दूर अछि' कविताएं स्तरीय हैं। नेपालमें संरक्षित मैथिली साहित्य (श्री उमारमण झा) पृष्ठ ११ लेख एवं 'बदलैत नकशाक विन्दु' (श्री रमानन्द रेणु) शीर्षक कथा उपयोगी हैं।

कुल मिलाकर इतना तो है ही कि मैथिलीका यह साप्ताहिक पत्र 'मिथिला मिहिर' मैथिलीके प्रतिमान गलत या सही ढंगसे स्थापित करने में रत है। हालाँकि इसके पृष्ठोंमें समय-समयपर अनर्गल और भ्रामक तथ्य भी अभिव्यंजित होते रहते हैं जो मैथिली विस्तारवादके प्रतीक हैं।

—रमण शाण्डिल्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किशोर बाल साहित्य

सुनहरा कछुआ

प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : ६४; क्राउन दुगना, ७१; द्वितीय संस्करण; मूल्य : २.२५ रु. ।

ईसपकी गीत-कथाएँ

रूपान्तरकार : निरंकारदेव सेवक; प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : १२७; क्राउन दुगना, ७१; मूल्य: ३.५० रु ।

गोपालकृष्ण गोखले

लेखक : नेमिशरण मित्तल; प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : ४५; क्राउन दुगना, ७२; मूल्य : १.५० रु. ।

'सुनहरा कछुआ' विभिन्न लेखक-लेखिकाओंकी सत्रह कहानियोंका संग्रह है। पुस्तककी भूमिकाके अनुसार इस कृतिमें 'देशके विभिन्न राज्यों और विदेशों' की कथाएँ हैं। विभिन्न 'राज्यों' और 'विदेशों' का क्या अर्थ है, यह स्पष्ट नहीं। क्या संग्रहकी कुछ कहानियाँ अन्य भाषाओं से अनूदित हैं? यदि ऐसा है, तो अनुवादकोंके नाम छिपाये क्यों गये? फिर, विभिन्न राज्यों और विदेशोंके नामपर इस पुस्तकमें लाव देश, गढ़वाल प्रान्त, अफ्रीका, पूर्वी भारत—सिर्फ इन चार नामोंका उल्लेख मात्र है, जो अन्तर्राष्ट्रीय भावना घटाने-बढ़ानेमें कुछ नहीं कर सकते। अतएव, सम्पादक महोदयकी यह धारणा कि इन कहानियों से इस भावनाकी वृद्धि होगी, 'भूमिका' को गरिमामय बनानेके अतिरिक्त और कोई कार्य सिद्ध नहीं करती। मोटी बात यह है कि संग्रहकी सभी कहानियाँ बड़ी रोचक और सुन्दर हैं। पाठकोंका पर्याप्त मनोरंजन होगा और कुछ अच्छी बातें वे सीख पायेंगे, जैसे—'इन्सानसे तो जानवर ज्यादा अहसान माननेवाले होते हैं'; (गौरैया और कछुए की) चतुराई तथा (रामू की) सूझबूझसे संकट टल सकता है, काम बन सकता है; (गिलहरियोंकी) एकता और संगठनमें बल होता है; (रीछकी) शेखी, (महावतकी) मक्कारी और (सियारदासकी) बदमाशीका अन्त बुरा होता है। कहानियोंकी सचित्रता, पुस्तकका एक अन्य आकर्षण है।

× × ×

'ईसप' यूनानवासी दास था। तत्कालीन दास-प्रथाका विरोध करनेपर उसे अँधेरी कालकोठरीमें डाल दिया गया। वृद्धावस्थामें जब वह कैदसे मुक्त होकर निकला, तो किसीने उसकी मदद नहीं की। विवश होकर उसे भीख माँगनी पड़ी। ईसप बाबासे कहानियाँ सुननेके लिए बच्चे पीछे पड़ जाते, तो वह उन्हें कहानियाँ सुनाता। उन्हींमेंसे कुछ कहानियाँ 'ईसपकी गीत-कथाएँ' (भाग २) में गीत-कथाओंके रूपमें प्रस्तुत की गयी हैं। ये बच्चोंका पर्याप्त मनोरंजन तो करेंगी ही, उन्हें कोरी कल्पनाकी उड़ानोंसे बचाकर यथार्थवादी भी बनायेंगी। 'पंचतंत्र' और 'हितोपदेश' की तरह इस कृतिमें भी पशु-पक्षियोंकी कहानियोंके माध्यमसे पाठकोंको व्यवहार-कुशलताका अच्छा पाठ पढ़ाया गया है। कई कहानियाँ पाठकोंमें देश-प्रेम, राष्ट्रीय एकता आदिका भी अच्छा समावेश करेंगी। सीधी-सरल भाषामें लिखी गयीं ये गीत-कथाएँ बच्चे खूब पसन्द करेंगे, इसमें सन्देह नहीं।

× × ×

'गोपालकृष्ण गोखले' 'भारतके अमर चरित्र' शीर्षक ग्रन्थमालाके अन्तर्गत प्रकाशित की गयी है। इसमें श्री गोखलेके जीवनकी 'मुख्य-मुख्य घटनाओंका और उनके पुण्य चरित्रका संक्षिप्त वर्णन' किया गया है। पुस्तक पढ़ते समय कई बार ऐसा प्रतीत होता है मानो हम भारतीय स्वतंत्रता-संग्रामका कोई इतिहास पढ़ रहे हों.... और यह स्वाभाविक ही है, कारण—श्री गोखलेकी राजनीतिक देनका उल्लेख करते समय स्वतंत्रता-संग्राम-की तस्वीर पेश करनी ही पड़ेगी।

त्याग, सचाई, सादगी और कर्तव्य-निष्ठासे भरा श्री गोखलेका जीवन भारतके हर नागरिक, विशेषकर हमारे राजनीतिक नेताओं, के लिए एक अच्छा आदर्श प्रस्तुत

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता है। इस सन्दर्भमें पुस्तकका यह अंश बड़ा मार्मिक है : "वह (श्री गोखले) कहा करते थे कि जबतक हमारे देशका साधारण आदमी गरीब है, तबतक यह शोभा नहीं देता कि जनताकी सेवा करनेवाले लोग देश सेवाके नाम पर ऐशो-आराम करें और जनताकी कमाईका पैसा अपनी सुख-सुविधापर गलत ढंगसे खर्च करें।" (पृष्ठ १५)

श्री मित्तलकी भाषा बड़ी सरल-सुबोध और प्रवाह-पूर्ण है। पुस्तककी छपाई साफ है। यत्र-तत्र प्रूफकी भूलें खलती हैं–(पृष्ठ १०, प्रथम पंक्ति) 'आगरकर' की जगह 'आरगर'; (पृष्ठ १३) 'इस बारे एक दिलचस्प घटना प्रसिद्ध है'; (पृष्ठ १८) 'स्त्रियोंके साथ हुए अत्याचारका खासतौर उल्लेख किया।' प्रकाशन-विभागकी कृतिमें ऐसी भूलें भी अक्षम्य हैं।

—ब्रजगोपालदास अग्रवाल

विजयकी झाँकी

लेखक : हरिमोहनलाल श्रीवास्तव; प्रकाशक : रवीन्द्र प्रकाशन, ग्वालियर। पृष्ठ : १११; क्राउन, १९७२, मूल्य : ३.५० रु.।

ऐसा कौन भारतीय होगा जो दिसम्बर १९७१ में भारत-पाक युद्धकी भीषणताका जिक्र सुनकर गद्‌गद हो न पाया हो। भारतीय योद्धाओंने इस अमानुषिक महा-समरमें जिस आस्था तथा श्रद्धासे अपना कर्तव्य निभाया है, वह वास्तवमें पराक्रम एवं शौर्यकी कथा बनकर अमर हो गयी है। लेखकने युद्धका हर चित्र सजीव बनाकर भारतीय जनताको रोमांचित कर दिया है और हवाई लड़ाईके करिश्मे, समुद्री लड़ाईके कारनामे, स्थलकी लड़ाईका कमाल, कौशलकी कतिपय कलाबाजियाँ आदि पर प्रकाश डाला है। पुस्तकके अन्तमें "युद्धकी डायरी" प्रस्तुतकर युद्धका सजीव ब्यौरा दिया है।

यह पुस्तक भारतीय प्रत्येक नागरिक को कर्तव्य का सन्देश देती है।

इसमें कतई सन्देह नहीं है कि यह पुस्तक आदरणीय होगी।

—डॉ. सोमशेखर 'सोम'

जेबी पुस्तकें

उपन्यास

श्मशान चम्पा

लेखिका : शिवानी; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, शाहदरा, दिल्ली-३२। पृष्ठ : १९६; १९७२; मूल्य : ३.०० रु.।

"यद्यपि यह उज्जवल स्निग्ध और सुगन्धित है तब भी श्मशानवीथीमें विकसित चम्पक वृक्षकी भाँति लोगों द्वारा अभिगमनीय नहीं है।" 'मृच्छकटिक' का यह उद्धरण चम्पापर लागू करते हुए रामदत्तजीने कहा, "चम्पा नहीं श्मशान चम्पा है तू।" चम्पाके पिता धरणीधर उच्च अधिकारी थे। चम्पा मेडिकल कॉलेजकी छात्रा थी और उसकी बहिन जुही एम. ए. की। सहसा दुर्भाग्यके झंझावात ने परिवारको नष्ट कर दिया, धरणीधर बिजिलेन्सके शिकार होकर सस्पेण्ड हुए कि जुही अपने सहपाठी तनवीर के साथ भाग गयी। चम्पाकी बुआका दूरका रिश्तेदार मधुकर आकर चम्पाको पसन्द कर चुका था और पहाड़के उच्च ब्राह्मण वंशमें चम्पाकी सगाई तय हुई। धरणीधर बेटीके कलंकको सहन न कर यमलोक सिधार गये। उधर जुहीके समाचारके कारण मधुकरके पिता रामदत्तने सगाई तोड़ दी। कर्ज उतारनेके लिए कोठी मोटर बिक गयीं और चम्पा कोर्स पूराकर अपनी विधवा माँ भगवतीको लेकर सन्थालोंके बीच बर्दवानमें सेनगुप्तकी फैक्टरीके अस्पतालमें नौकरी करने पहुँची। सेनगुप्तकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्नी कमलेश्वरी बनारसके कत्थक नर्तकियोंके परिवारकी पुत्री और अवधके एक ताल्लुकेदारकी सन्तान थी। कमलेश्वरी और उसकी बेटी मयूरी जो आधुनिक सभ्यता की हवामें पली हैं, चम्पाके लिए समस्या बनती हैं। माँको टी. बी. हो जानेपर चम्पा उसे भवाली सेनेटोरिअम भरती कर आती है। लौटनेपर मयूरी उसे अपनी मित्र रीना खानका गर्भपात करनेका आदेश देती है। रीना मिली वह तो वह जुही थी जो कैबरे नर्तकी बन गयी थी। बहिनको देखकर चम्पा भाग खड़ी हुई। बैलगाड़ीसे कलकत्ता पहुँची और वहाँसे बम्बईकी ट्रेनमें बैठी। कम्पार्टमेण्टमें उसे टिटेनसने ज्वराक्रान्त कर दिया। उसी कूपेमें प्रवेश किया मधुकरने जो उसे उतारकर अपने अस्पताल ले गया। स्वस्थ होनेपर मधुकरने उससे सिविल मैरिजका प्रस्ताव रखा था, कामसे दिल्ली चल दिया। तभी चम्पाने देखे मधुकरके नाम अपनी बुआकी बेटी जया के पत्र जिससे मधुकरका विवाह निश्चित हो गया था। चम्पा फिर लौट आयी बर्दवान, जहाँसे जुही चली गयी और सेनगुप्त अपनी बेटी मयूरीके साथ दुर्घटनामें मर गये थे। कमलेश्वरीने सारी सम्पत्ति चम्पाके नाम कर दी और तीर्थाटनको चम्पाके साथ जाकर लौटी तो खबर मिली जुहीने अपने प्रेमीकी हत्या कर दी है। माँ मृत्युशय्या पर थी, तभी मधुकरके पिता रामदत्तने उसकी अट्टालिकामें पहुँचकर उसे 'श्मशान चम्पा' की उपाधि दी और सूचित किया कि आजसे आठवें दिन मेरे पुत्रका विवाह है उसका अनिष्ट न करना। चम्पाने अपनी नियति स्वीकार कर ली।

चम्पाकी कहानी पर्वतीय क्षेत्रके उच्चकुलीन समाज के विघटनकी कहानी है, आत्म त्याग करनेवाली आधुनिका की कहानी है जो अपनी सगी बहिनके विपरीत संस्कारोंको छोड़ भी नहीं सकती। आधुनिक शिक्षाके सुलभ होनेके कारण लड़कियाँ उच्च शिक्षा प्राप्त कर रही हैं किन्तु दकियानूस पर्वतीय समाज "अपने ही समाजमें कन्यादान निभानेकी मूर्खताके पीछे" कैसा चौपट हुआ जा रहा है? पहाड़ोंसे दूर जिन्दगी बिताये हुए उच्चकुलीन पर्वतीयोंके लिए समस्या कितनी विकट हो रही है, यह शिवानीने दर्शाया है। आजके समाजकी बदलती हुई मान्यताओंमें दो पीढ़ियोंका संघर्ष इसमें उजागर होता है। किन्तु नयी पीढ़ीकी महिलाको कौन-सा मार्ग अपनाना चाहिये, चम्पा का जो मधुकरसे मिलकर भी दूर हट गयी या जुहीका जो विधर्मीके साथ भागी, फिर क्लबोंमें, होटलोंमें नग्न नृत्य करने लगी? जुहीका अन्त त्रासदी है, बीभत्स है पर क्या चम्पा जो गृहोद्यान छोड़कर श्मशान चम्पा बन गयी, सही थी। ऐसा लगता है कि पुरातन संस्कारोंमें पली चम्पाने जयाके लिए अपने प्रेमीका दान कर दिया। पर यह उदात्तीकरण क्या स्वाभाविक है? क्या यह आरोपित नहीं? वास्तविकता कल्पनासे अधिक विस्मयकारी होती है पर 'श्मशान चम्पा' में उत्तरार्धका घटनाक्रम नाटकीय-सा लगता है। जुहीका रिनी खानके रूपमें चम्पासे मिलना, चम्पाका ट्रेनके कूपेमें मधुकरसे मिलना, सेनगुप्त और मयूरीका सहसा मंचसे हट जाना (दुर्घटनाग्रस्त होना), चम्पाका सम्पत्तिकी स्वामिनी होना और सर्वस्व दान करनेका निर्णय करना और केवल चम्पाको 'मृच्छकटिक' का उद्धरण सुनाकर 'श्मशान चम्पा' का विशेषण देने रामदत्तका प्रगट होना यह सब क्या है?

उपन्यासमें यदि कोई चरित्र उभरा है तो चम्पाका ही। जुही, भगवती, रुक्की बुआ, जया, कमलेश्वरी, मीनी, मयूरी कई महिला-पात्र हैं, पर केवल चम्पाको उभारने-भरके लिए। और पुरुष पात्र? शिवानीने उन्हें निगेटिव ही रहने दिया पौजिटिव बनकर स्पष्ट होना, आयाम प्राप्त करना तो उनके लिए निषिद्ध था। चाहे उसका प्रेमी मधुकर हो या खलनायककी सम्भावना लिए सेनगुप्त।

शिवानीकी भाषा-शैली जिसे "वसन्तकी मादक हवा जैसी हृदयको चुरा लेनेवाली" कहा गया है, अवश्य ही हिन्दीमें उनकी केवल अपनी है, जो कुमाउँनी, बँगला और संस्कृतके प्रभावोंको आत्मसात् किये है जिसके साथ-साथ अंग्रेजीका मार्डन प्रभाव भी है। उसमें माधुर्य, लालित्य और काव्यात्मकता है।

पुस्तकमें 'श्मशान चम्पा' के अतिरिक्त अन्तिम पचास पृष्ठोंमें पाँच कहानियाँ भी हैं—लाल हवेली, शिबी, नथ, गहरी नींद और खुदा हाफिज। 'लाल हवेली' सुधा की कहानी है जो पाकिस्तानमें ताहिरा बन गयी, 'शिबी' शिवप्रिया थी जो सौन्दर्य लुटाकर कोढ़ी हो गयी, 'नथ' की पुट्टी तिब्बती लड़की थी जो अपने कुमाउँनी सैनिक पतिके वीरगति पानेपर सोनेकी नथ सुरक्षाकोषमें अज्ञात दे देती है, 'गहरी नींद' की गाँजेका व्यापार करनेवाली अखतरी और पतिकी कामुकतासे नींदकी गोलियाँ खाकर मर जानेवाली उमाकी गहरी नींद और 'खुदा हाफिज' की रहस्यमयी मेहताब। शिवानीकी रचनाओंका यह गुलदस्ता पाठकोंको प्रिय होगा।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुष्पगन्धा

लेखक : भगवतीप्रसाद बाजपेयी; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली । पृष्ठ : १६४; १९७२; मूल्य : ३.०० रु. ।

सामाजिक उपन्यास लेखकोंमें भगवतीप्रसाद बाजपेयी का नाम पिछली पीढ़ीके इनेगिने नामोंमें था । पुष्पगन्धा का प्रथम प्रकाशन १९७१ में सजिल्द हुआ था, जिसका यह जेबी संस्करण छपा है । युवा-पीढ़ीके मनमें लोकप्रिय होनेकी अभिलाषासे लिखी हुई पिछली पीढ़ीके लेखककी यह रचना शायद लिखी ही जेबी संस्करणकी दृष्टिसे गयी थी ।

पुष्पगन्धा है शोभना, जिसकी देह शमाकी तरह परवानोंको आकर्षित करती, मिटाती रहती है । वह क्या है, यह परिभाषामें बाँधा नहीं जा सकता । उसकी दैहिक अतृप्ति दाहक है । उमाकान्त, श्रीमोहन, उदयन, डॉ. कामेश्वर उसकी गन्धसे खिंचते हैं, मिटते हैं । पाठक भी चाहे उसे कैसा ही लगे पुष्पगन्धाको पसन्द करेगा, चाहे कोई प्रभाव उसपर शेष न रहे । संवादोंमें नाटकीयता है, घटनाओंमें भी । शोभनाके अतिरिक्त अन्य पात्र, पुरुष पात्र, केवल मोहरे हैं पिटनेके लिए बने हुए । सब मिलाकर यह उपन्यास पाठकोंको समय काटनेमें सहायक तो होगा ही ।

अद्भुत मानव

लेखक : आचार्य चतुरसेन; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स । पृष्ठ : २००; १९७२; मूल्य : ३.०० रु. ।

स्वर्गीय आचार्य चतुरसेन शास्त्रीने अन्तरिक्षमें स्पूतनिक जानेके बाद 'खग्रास' नामसे एक वैज्ञानिक कल्पना (साइंस फिक्शन) उपन्यास लिखा था । 'अद्भुत मानव' उसीका जेबी संस्करण है । १९५७-५८ में अन्तर्राष्ट्रीय भू-भौतिकी वर्ष मनाया गया था । उसी को लेकर अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सहयोगका उपयोग शास्त्रीजीने इस उपन्यासमें किया । एक ओर इसमें रूसी वैज्ञानिक जोरोवस्कीका अन्तरिक्ष और ध्रुव प्रदेशमें भ्रमण है, दूसरी ओर भारतीय 'गूढ़ पुरुष' जो विलय-विद्या जानते हैं । अनेक तत्कालीन (१९५८) वैज्ञानिकों, राजनीतिज्ञोंके साथ काल्पनिक पात्र हैं । तत्कालीन राजनीति और वैज्ञानिक जानकारीका भी समावेश विस्तारसे है ।

आज जब अन्तरिक्ष युग कई कदम बढ़ा चुका है, विश्व राजनीति कई रूप बदल चुकी है, जब रूसी नहीं अमरीकी चाँदपर भ्रमण कर चुके हैं, इस पुस्तकको पढ़ते हुए यह अनुभव होता है कि मानव वस्तुतः अद्भुत है जो कल्पनाको भी पीछे छोड़ आया है । शास्त्रीजीमें जूल्स वर्न, येफ़्रेमोवकी प्रतिभा नहीं थी । उन्होंने पुस्तकको वैज्ञानिक बनानेके प्रयासमें कथात्मकता भुला दी । फिरभी सिद्ध लेखककी यह कीमियागिरी उनकी याद दिलानेके लिए मनोरंजक कही जा सकती है ।

× × ×

कहानी संग्रह

एक लड़की : एक शाप

लेखिका : अमृता प्रीतम; अनुवादक : सतीशकुमार; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली । पृष्ठ : १३०; १९७२; मूल्य : २.०० रु ।

पंजाबीकी प्रसिद्ध कवयित्री और असफल प्रेमकी सफल कथाकार अमृता प्रीतमकी १३ कहानियोंका संग्रह प्रस्तुत है । यदि कहा जाये कि अतृप्ति प्रीतमकी कथाओं में अलग नामोंमें जन्म लेती है तो गलत न होगा । संग्रहका शीर्षक देनेवाली कहानीकी नायिका लेखा पांचाली है जिसके पाँच जिले हैं, पाँच प्रेमी । वह पाँचोंके साथ है और अन्ततः जब एककी हो जाती है एक रातको तो मर जाती है । 'तीन अध्याय एक कहानी' की मालती पहले पालसे शादी करती है फिर तलाक देकर उसके अंग्रेज दोस्त बरटनके साथ, उसके जिस्मकी गन्धसे खिंच कर चली जाती है । 'सात पूनियाँ' की शकुन विवाहिता है पर भाषण देनेवाले रामजीको समर्पण कर देती है । 'कैनी का सफर' की कैनी पतिसे अलग रहती है, जवेदसे प्रेम करती है और जवेदके न रहनेपर आत्महत्या कर लेती है । 'बुत या चेन' की निर्मलाका विवाह कपूरसे होता है, पर वह बीमार हो जाती है इसलिए कि अनवर "महजब की एक छोटी-सी दीवार भी फाँद न सका" । और 'एक विश्वास' की निहाल कौर अपनी सौत वीरोको सन्तानके लिए खुद लाती है । सन्तान होती है पर है सरदारकी नहीं मुनीमकी ।

अमृता प्रीतमकी नायिकाएँ नारी हैं जिनके लिए धर्म और उम्रका बन्धन नहीं, केवल प्यास है जिस्मकी या हृदयकी या दोनोंकी । यह प्यास बुझ नहीं सकती क्योंकि परम्परा या सीमा इसके लिए बनी नहीं । गाँव या शहर, मध्यम वर्ग, उच्च वर्ग, ग्रामीण समाजमें सर्वत्र नारी केवल एक तृष्णा है । इसीकारण अमृताकी कहानियों की प्यास बुझती नहीं है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमृता प्रीतम कवियित्री हैं अतः उनका गद्य काव्यका आभास देता ही है। "मैं दिलके कालरको उधेड़कर मुहब्बतका फटा हुआ भाग अन्दरकी ओर लूंगी।" "तरस का जहरभी बुरा होता है। तन तो जिन्दा रहता है, पर मन इसके जहरसे नहीं बचता।" "चरखा दुनियाका पहला साज था जिसमेंसे दुनियाके सबसे पहले संगीतने जनम लिया था।"

अनुवादमें पंजाबीपन बहुत है। "मैं **नाबर** हूँ किसी से ?" "**पानियों**परसे काई उतर गई।" "जिन्दगी एक **लम्बा** फिकर है।" "कैनी ने जाना था।" "बेतरस शर्त।" "बाहरली सड़क" जैसे प्रयोग सर्वत्र हैं। प्रूफकी भी कुछ गलतियाँ रह गयी हैं।

× × ×

जासूसी उपन्यास

गुलमर्गका गुमनाम

लेखक : कृश्नचन्दर; प्रकाशक : सुबोध पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १२४; १९७२; मूल्य : २.०० रु.।

उर्दूके अत्यन्त लोकप्रिय और सशक्त लेखक कृश्न चन्दर हिन्दीमें भी समान रूपसे लोकप्रिय रहे हैं। प्रगतिशील साहित्यके वे स्तम्भ माने जाते हैं। उन्होंने लोकप्रियता की खातिर अब जासूसी उपन्यासके क्षेत्रमें कदम रखा है। यह आशा थी कि उनकी कलम इस विधामें भी कोई नवीनता लायेगी। पर गुलमार्गका गुमनाम देखकर ऐसा लगता है कि यदि इसपर कृश्नचन्दरके हस्ताक्षर न होते तो जासूसी उपन्यासोंकी भीड़में इसे कृश्नचन्दरकी रचना के रूपमें पहचानना सम्भव न होता। कश्मीर कृश्नचन्दर की 'तूफानकी कलियाँ' जैसी प्रमुख रचनाओंकी पृष्ठभूमि रहा है। जासूसी उपन्यासकी पृष्ठभूमि भी यही है।

इन्सपेक्टर इन्द्रजीत कश्मीरमें जग-प्रसिद्ध जासूस और स्मगलर हेनरी ब्राउनके गिरोहके पीछे जाता है। यह विदेशी गिरोह जगह-जगह आग लगाकर जनतामें बेचैनी फैलाता है उसका लाभ उठाकर डाका डालता है, आग और भाग-दौड़की फोटो खींचकर विदेशमें छापता है और हीरे, सोना, चाँदी तथा गांजा, चरस, अफीम आदि स्मगल करता है। इन्सपेक्टर इन्द्रजीतको अपने कामके बराबर ही दिलचस्पी खूबसूरत लड़कीमें भी है और कहानीमें सेक्स पूरी तरह छाया रहता है। अन्तमें, कई बार मारधाड़के बाद इन्सपेक्टरको ब्राउनकी साथिन आशा ही बचाती है जो ब्राउनको गोली मार देती है और जैसा होना चाहिये आखिरी दृश्यमें इन्सपेक्टर उस लड़कीके साथ सोया होता है। कथानक रहस्यात्मक कम स्टण्ट टाइप अधिक है। सिद्धहस्त लेखककी रचना होनेके नाते केवल भाषा रोचक और सूक्तिपूर्ण है। जैसे—"यों ही हालात इतिहासके धारेपर बदलते हैं। महाराजाओंके महल होटल बन जाते हैं और अंग्रेजोंके मुजरिम आजके वजीर...," "अन्तर्राष्ट्रीय खुफिया एजेण्ट या स्मगलरका कोई धर्म नहीं होता। रुपयेका कोई रंग नहीं होता, कोई धर्म नहीं होता, कोई देश नहीं होता," "खूबसूरत औरत तो स्वयं एक काश्मीर होती है," जासूसी उपन्यासको कृश्नचन्दर जरा गम्भीरतासे लिखें तो उसे साहित्यिक विधा बना सकते हैं। क्या भविष्य में उनसे आशा की जाये ?

मौतकी नींद

लेखक : जोरावरसिंह वर्मा; प्रकाशक : सुबोध पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १२८; १९७२; मूल्य : २.०० रु.।

मन मन्दिर

लेखक : समीर; प्रकाशक : स्टार पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १३०; १९७२; मूल्य : २.०० रु.।

जासूस कुलदीपकी सीरीजका नया उपन्यास "मौतकी नींद" 'महाराज' की टोलीका पर्दाफाश करता है। 'महाराज' जो एक नये धर्मका संस्थापक बनकर साम्प्रदायिकता और हिंसाके प्रचारमें लगता है और भारतके आर्थिक ढाँचेको विनष्ट करनेकी चेष्टा करता है। इसके साथही धार्मिक मेले रचाकर वह चीनी जासूसोंको धातुकी डिबिया में चित्र और नक्शे छिपाकर सौंपते हैं और धन प्राप्त करते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय जासूसोंकी सहायतासे कुलदीप जासूस इस रहस्यका उद्घाटन करता है। जिस दुष्चक्रकी इसमें कल्पना की गयी है वह खतरा अवश्य ही देशको वास्तविक रूपमें है केवल चीनियों द्वारा ही नहीं पाश्चात्य देशों द्वारा भी। उपन्यास मनोरंजक है।

'समीर' का 'मन मन्दिर' भी एक स्मगलिंगके षड्यन्त्र के ताने-बानेमें बुना हुआ उपन्यास है जिसमें तस्करी सेठ सभ्य जीवन बिताता है और जजसे रिश्ता करने जाता है। सेठके चंगुलमें फँसा नायक सेठ द्वारा जेल भेजे जाने के बाद लौटकर बदला लेनेके लिए उसके गिरोहमें शामिल होता है और जजकी वकील बेटीसे प्रेम करने लगता है। दोनों मन्दिरमें स्वयंवर कर लेते हैं। परिस्थितिवश नायक के द्वारा सेठकी हत्या होती है। अदालतमें वकील पत्नी यह सिद्ध करके कि खून इरादतन नहीं किया गया, पतिको

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छुड़ा लेती है। फार्मूले के अनुसार फिट किया गया लोकप्रिय उपन्यास अपने उद्‌देश्यमें सफल है। भाषा और संवाद भी फिट हैं।

जहरके घूँट

लेखक : कर्नल रंजीत; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ १२७; १९७२; मूल्य : २.०० रु.।

परछाइयाँ मौतकी

लेखक : कैप्टेन देवेश; प्रकाशक : पुष्पी कार्यालय, इलाहाबाद। पृष्ठ : १२५; १९७२; मूल्य : २.०० रु.।

जासूसी उपन्यास लोकप्रिय उपन्यासोंमें मुख्य स्थान रखते हैं। जासूसी उपन्यासोंमें एक जासूस चरित्रको उसका लेखक कभी-कभी एकही नामसे लिखनेवाले अनेक लेखक भी, इनका नायक बनाते हैं। कर्नल रंजीतके नायक मेजर बलवन्तके इधर काफी उपन्यास छप चुके हैं। अवश्य ही अन्य जासूसी उपन्यासोंकी अपेक्षा मेजर बलवन्तकी जासूसी अधिक आधुनिक और वैज्ञानिक आधारपर होती है। प्रस्तुत उपन्यासमें मेजर बलवन्त एक ऐसे अपराधी की खोज करता है जो एसिडके इन्जेक्शन लगाकर हत्या करता है तथा अपने शिकारको भीतरसे बन्द किये कमरेमें मारकर बाहर निकल जाता है जिससे हत्याका मामला आत्महत्याका दिखायी पड़ता है। हत्या का एक प्वाइण्ट हमारे समाजका घिनौनापन है कि निम्न जातिके व्यक्तिसे ऊँची जातका व्यक्ति घृणा करता है। पुस्तकका घटनाक्रम काफी रोचक है तथा पाठकको उलझाये रहता है। सारे षड्यन्त्रका पर्दाफाश अन्तमें जासूसके द्वारा होता है।

कैप्टेन देवेश (जो एक ट्रेडमार्क ही है) का उपन्यास इसके अपेक्षा पुराने जासूसी उपन्यासोंकी परम्परामें ही सेक्स और मारधाड़की घटनात्मकतापर अधिक जोर देता है। यद्यपि इसकी कहानी चीनी जासूसके भारत आनेके आधारपर सामयिकतासे जोड़ी गयी है पर इसके पात्र फूहड़ मजाक और नंगे शरीरमें अधिक दिलचस्पी लेते हैं। हाँग-काँगसे काहिरातकके अन्तर्राष्ट्रीय चीनी जासूसों षड्यन्त्र-कारियोंके संगठनकी कहानी बनायी गयी है। जासूसी उपन्यासोंके प्रबुद्ध पाठक इसप्रकारकी रचनाएँ अब पसन्द नहीं करते, पर स्टण्ट फिल्मोंके शौकीन तो होते ही हैं।

× × ×

फिल्मी पत्रिका

फिल्मांजलि

सम्पादक : विनयकुमार; प्रकाशक : फिल्मांजलि प्रकाशन, २, दरियागंज दिल्ली-६। सचित्र पृष्ठ : १२६; मूल्य : एक प्रति : १.२५ रु., वार्षिक : १२.०० रु.।

फिल्म लोकप्रिय मनोरंजनका साधन होनेके कारण पत्र-पत्रिकाएँ फिल्मको स्थान देती हैं और अनेक लोकप्रिय पत्रिकाएँ फिल्मपर ही प्रकाशित होती हैं। दिल्लीसे निकलनेवाली अनेक फिल्मी पत्रिकाओंमें 'फिल्मांजलि' एक और नया नाम है। पत्रिकाको फिल्म डाइजेस्ट कहा गया है, इसकारण इसका आकार डाइजेस्टका लघु आकार है। पत्रिकाके नियमित स्तम्भोंमें आवरण परिचय, सितारोंके सितारे (सितारोंका ज्योतिषी अध्ययन), भेंट वार्ता, पर्देके पीछे (लेखक-निर्देशक परिचय), विशेष रिपोर्ट, स्वास्थ्य और सौन्दर्य, फोटो फीचर, फिल्मी ड्रामा, जन्मदिन, स्टूडियो, समीक्षा, मासिक भविष्य, कार्टून कथा, इस मासके गीत, नई ताजी आदि हैं। आठ-दस रंगीन चित्र आफसेटमें छपे हैं। व्यंग्य हास्यको प्रधानता दी गयी है। काका हाथरसीने प्रश्नोंके कवितात्मक उत्तर दिये हैं। हिन्दी फिल्मोंपर एक लेखमें (अक्टूबर ७२ अंकमें) यह सही लिखा गया है कि 'हिन्दी फिल्मोंके नाम भलेही भारतीय हैं, भलेही हिन्दी बोलते हों अन्य सब बातोंमें वे एकदम विदेशी लगते हैं।' पत्रिका फिल्म पक्षसे अधिक व्यंग्य हास परिहासके स्तम्भों के कारण लोकप्रिय होनेका उद्‌देश्य प्राप्त करेगी, यह आशा है। इस नयी पत्रिकाका स्वागत है।

× × ×

आत्म-विकास

आपका व्यक्तित्व

लेखक : लिली ऐलन; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १२६; १९७२; मूल्य : २.०० रु.।

शिक्षाका उद्‌देश्य व्यक्तित्वका विकास करना ही है। संसारमें जीवनमें सफलता प्राप्त करनेके लिए व्यक्तित्व का निर्माण ऐसा किया जाना अपेक्षित है जो इसके अनुकूल हो। इसी कारण लोकप्रिय पुस्तकोंमें कथा साहित्य के अतिरिक्त ऐसे साहित्यका प्रमुख स्थान होता है। डेल कार्नेगीकी पुस्तकें इसका उदाहरण हैं।

पुस्तक दो खण्डोंमें विभाजित है। प्रथम खण्डमें १२ अध्यायोंमें व्यक्तित्व, विश्वास, आत्मज्ञान, आत्मविश्वास,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्परता, व्यवहार, शारीरिक-मानसिक संस्कारसे नैतिक आध्यात्मिक संस्कारोंका विवेचना किया गया है। दूसरे खण्डमें आत्मावलोकन, मुक्ति, आत्मसंयम, स्वतन्त्रता, सन्तुलन और मनन तथा ध्यानका ।

लेखिकाने कहा है, "आप सर्वांग उन्नति करने और सभी प्राकृतिक शक्तियोंको पुष्ट करनेका प्रयत्न करो। किसीभी दशामें अति न करते हुए यथाशक्ति समस्त उपायों को काममें लाते हुए एक सुन्दर, दृढ़ और पूर्ण पुरुषत्व या स्त्रीत्व प्राप्त करनेका प्रतिदिन प्रयत्न करो।"

युवा पीढ़ीके लिए ऐसी पुस्तकोंकी उपादेयता होती है। सस्ते संस्करणके कारण सुलभ होनेसे वह पढ़कर कुछ लाभ उठा सकें तो श्रेयस्कर हो। पुस्तकमें अनुवादकका नाम नहीं है। किन्तु एक श्लोकके उद्धरणके सिवा इसमें सारा परिवेश, उद्धरण उदाहरण पाश्चात्य हैं। भारतीय पाठकों के लिए लाला हरदयालके 'हिन्ट्स टु सेल्फ कलचर' जैसी पुस्तकोंकी आज भी जरूरत है ।

—जीवन

सफलताके सोपान

लेखक : जेम्स एलन; अनुवादक : कृष्ण विकल; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, जी. टी. रोड, शाहदरा, दिल्ली-३२ । पृष्ठ : १३५; ७१; मूल्य : २.०० रु. ।

जीवनके किसी भी क्षेत्रमें कोई भी काम क्यों न हो, उसमें उन्नति करनेकी भला किसमें इच्छा नहीं होगी। लेकिन मनचाही सफलता शायद ही हाथ लगती है। आखिर इसका कारण क्या है, असफल व्यक्तिका दुर्भाग्य या सही मार्गदर्शनका अभाव ? प्रेरणा-साहित्यके विश्वप्रसिद्ध लेखक जेम्स एलेन सही मार्गदर्शनके अभावको ही व्यक्तिका दुर्भाग्य बताते हैं। उन्होंने अपनी पुस्तक 'सेल्फ हेल्प' में मनचाही ऊँचाइयों तक चढ़नेका मार्गदर्शन किया है। मार्गदर्शनके नामपर उन्होंने कुछ साधारण नियम और विधान बताये हैं – कामकी अच्छी शुरुआत उसे पूरा करनेमें सहायक होती है, छोटी-छोटी बातों और छोटे-छोटे काम किसतरह व्यक्तिको सफलताके करीब लाते हैं, मानसिक विकारोंका त्याग क्यों जरूरी है और कितना सहज, जैसी बातोंसे लेकर सहानुभूति, क्षमा, दोष न देखने जैसे गुणोंको अपनानेको प्रेरित करते हुए वे मौन, एकान्त और स्थायी आनन्दका महत्व बताते हैं।

जेम्स एलेनकी इसी पुस्तका यह सुन्दर अनुवाद है। हिन्दीमें इस तरहके प्रेरणा-साहित्यकी बड़ी कमी है। सच कहा जाये तो प्रेरणा-साहित्यके नामपर कुछ धार्मिक साहित्य ही है। इसलिए यह प्रयास सराहनीय है ।

—मणिकान्त वाजपेयी

मत अभिमत

[इस स्तम्भमें 'प्रकर' में प्रकाशित समीक्षाओंपर आपकी प्रतिक्रिया आमन्त्रित है। प्रतिक्रिया द्वारा आप अपनी असहमति अथवा मतभेद प्रकट कर सकते हैं। कृपया यह यथासम्भव न्यूनतम शब्दोंमें संयत भाषा में भेजें।]

'प्रकर' सितम्बर '७२ अंकमें "पानीपतकी तीसरी लड़ाई" हरियाणवी गीति-काव्यकी आलोचना प्रकाशित हुई, इसके लिए मैं आपका एवं विद्वान् आलोचक श्री मदनलाल श्रीवास्तवका व्यक्तिगत रूपसे आभारी हूँ।

सुधी आलोचकने गीति-काव्यका अध्ययन मनोयोगसे किया जान पड़ता है जैसा कि आलोचनाकी भाषासे ज्ञात होता है। फिरभी मतभेद होना स्वाभाविक है, जिसकी ओर मैं नीचे संकेत दे रहा हूँ। आशा है सुधी आलोचक इसे अन्यथा न समझेंगे। वे लिखते हैं कि :

"एक ही अलंकार 'अप्रस्तुत प्रशंसा' द्वारा, एक सौ सोलह पदोंमें भाषागत वैशिष्ट्य बनाये रखकर जिसप्रकार कवि 'निगाही' ने "पानीपतकी तीसरी लड़ाई" का वर्णन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया है–वह अद्वितीय है। इसकी दूसरी विशेषता नायक 'अब्दाली' का नामोल्लेख तक नहीं करना है। लेखकने तो इसकी कोटिका गीति-काव्य हिन्दी, उर्दू और संस्कृततकमें उपलब्ध न होनेकी घोषणा की है। परन्तु क्या हम सूरके पदोंको ब्रजभाषा होनेके कारण हिन्दीमें नहीं रखते––या अवधिमें रचित 'रामचरित मानस' हिन्दीकी रचना नहीं है?––इस दृष्टिसे यदि प्रान्तीय व क्षेत्रीय भेद भुला दिये जायें तो हरियाणवीमें रचित यह काव्य हिन्दी भाषाका ही तो कहा जायेगा। जबकि लेखकने स्वयं हिन्दीकी उत्पत्ति तक हरियाणवीसे मानी है।"

अति नम्रताके साथ मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि मेरी प्रस्तुत काव्यके विषयमें घोषणा केवल हिन्दी, उर्दू अथवा संस्कृतके प्रति नहीं अपितु इस काव्यको दृष्टिमें रखते हुए विनीत भावसे विश्व साहित्यके लिए है। तीन भाषाओंके विषयमें की गयी चर्चा तो भाषा-ज्ञान विषयक मेरी अपनी अल्पज्ञताकी सूचक है। सूर एवं तुलसी भले ही ब्रज अथवा अवधीके हों अथवा हिन्दीके, इस विषयमें यहाँ विवादका कोई प्रश्न नहीं।

"पानीपतकी तीसरी लड़ाई" को विश्व साहित्यका अनूठा पुष्प सिद्ध करनेके लिए मैंने अपनी भूमिकामें चार कारण दर्शाये हैं:

क—समस्त काव्य द्वारा एक अलंकार 'अप्रस्तुत प्रशंसा' का उदाहरण प्रस्तुत करना।

ख—समस्त काव्यमें एक चरण मात्रका छन्द।

ग—नायकका गीति-काव्यमें कहीं नामोल्लेख तक न करना।

घ—ध्वनि (व्यंजना) द्वारा अभीष्टकी सिद्धि।

प्रातःस्मरणीय सूर एवं तुलसीके काव्यमें पूर्ण आस्था के साथ निवेदन करना चाहता हूँ कि सूरमें गीति-तत्व पूर्ण होते हुए भी प्रायः फुटकर पद्य रचना है। जिसकारण प्रस्तुत काव्यकी तुलनामें उन्हें उतारना किसीप्रकार भी न्याय्य न होगा। देखना यह है कि क्या उपरि वर्णित विशेषताओंको वे किसी अंशमें भी पूर्ण करते हैं?

"रामचरित मानस" निश्चय ही एक महान् कृति है। किन्तु क्या उसमें भी उपरि वर्णित विशेषताओंको पूर्ण करने की सामर्थ्य है? क्या "रामचरित मानस" पूरा मिलकर किसी एक विशिष्ट अलंकारको पुष्ट करता है? अथवा उसमें कहीं एक चरण मात्रका छन्द प्रयोग किया गया है? क्या नायककी चर्चाके बिना रामचरित मानसकी कथा पूर्ण हुई है? यदि नहीं तो "रामचरित मानस" महान् काव्य होते हुए भी "पानीपतकी तीसरी लड़ाई" के महत्वको किसप्रकार कम करनेमें समर्थ नहीं कहा जा सकता।

मैंने हिन्दीको हरियाणवीकी पुत्री कहा है। निश्चयही माँ और बेटीमें एकात्म तत्व होते हुए भी दोनों एक नहीं कही जा सकतीं। माँ, माँ है और बेटी, बेटी। यह अन्तर भी सुधी आलोचकको ध्यानमें रखनेकी आवश्यकता है। भावुकतामें हम चाहे जो कहें? वास्तविक धरातलपर उतरकर हमें यह अन्तर स्पष्ट स्वीकार करना ही होगा।

आशा है मेरे पत्रको दृष्टिमें रखते हुए मान्य आलोचक को अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करनेका अवसर देकर मुझे कृतार्थ करनेका कष्ट करेंगे।

—राजाराम शास्त्री
जवाहर नगर, दिल्ली–७

आलोचकको हक है अपनी बात कहनेका। फिरभी, अपने कहानी-संग्रहकी आलोचना पढ़कर एक बात लिख रही हूँ ('प्रकर' नवम्बर ७२; 'खामोशीको पीते हुए' कहानी-संग्रहकी आलोचना)। 'ठहरी हुई खरोंच' की बात करते-करते वे अचानक 'टुचा' की बात कहते हैं और 'टुचा' की नायिकाने कहानीमें जो बात स्वयं कहीं नहीं कही, उसे आलोचकने अपनी आलोचनामें लिख दिया है। ... ..सम्भवतः दृष्टिका अभाव है, वे यह नहीं समझ पाते कि 'मामूलीसे शादी नहीं करना चाहते' की बात नायिकाने नहीं कही...खेद है कि स्थितिका व्यंग्य वे नहीं समझ पाये। और भी ऐसे कई प्रसंग हैं—जो बातें कहानीके चरित्रोंमें नहीं हैं वे उन्होंने लिख दी हैं।....'कुछ होनेकी स्थिति' जैसी बहुचर्चित कहानी जिन महाबुद्धिके पल्ले नहीं पड़ी, उनसे और आशा रखना व्यर्थ है। एक बात यह भी कहना चाहूँगी कि महानगर भी भारतके निरूपक हैं। बम्बई, दिल्ली, कलकत्ता, मद्रास भारतमें ही हैं, इंग्लैण्डमें नहीं।

—निरूपमा सेवती, १० ब्ल्यू नाइल,
२४वीं सड़क, बांद्रा, बम्बई-५०

'प्रकर' नवम्बर ७२ की आलोचनाओंमें डॉ. आनन्द प्रकाश दीक्षित, प्रभाकर श्रोत्रिय डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित, डॉ. सुधेश आदिकी आलोचनाएँ अच्छी और सन्तुलित हैं। डॉ. भोलानाथ भ्रमर डी. लिट्. की समीक्षाएँ बहुतही सतही हैं—'एक काली लड़की' तथा 'मन्वन्तर' को समझनेके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए वस्तुतः जो दृष्टि चाहिये, वह 'भ्रमर' जीमें नहीं है। इसीतरह आजकी एक महत्वपूर्ण कथा-लेखिका निरूपमा सेवतीका कहानी-संग्रह 'खामोशीको पीते हुए' भी 'भ्रमर' जीके हाथों पड़कर अच्छा खासा मज़ाक बन गया है। ....समीक्षकोंके पास पुस्तकें भेजते हुए उनकी रुचियों तथा उनके संस्कारोंका तो थोड़ा ध्यान रखें ही, अन्यथा यही होगा कि समीक्षक अपनी ही रुचिको आरोपित कर देगा और रचना धरीकी धरी रह जायेगी।

—डॉ. रमेश तिवारी,
२३/३८, अल्लाहपुर, इलाहाबाद

आपके मौलिक तथा साहसपूर्ण प्रयासकी प्रशंसा करता हूँ। बहुत-सी पुस्तकोंपर छोटी-छोटी सम्पादकीयवत् टिप्पणियाँ न छापकर चार-पाँच पुस्तकोंकी ही व्यवस्थित समीक्षा छापा करें तो अच्छा रहे। बाकी पुस्तकोंका उल्लेख एक स्तम्भके अन्तर्गत कर दिया करें। इस बातका भी ध्यान रखें कि आपकी पत्रिका लोग उसी उद्देश्यसे उलट-पुलटकर न देख लिया करें, जिस उद्देश्यसे अन्य प्रकाशकीय पत्रिकाएँ देखा करते हैं। ...मुझे पत्रिका विश्लेषणात्मक कम सूचनात्मक अधिक प्रतीत हुई। ....मौलिक पुस्तकोंकी अपेक्षा अनूदित पुस्तकोंकी समीक्षामें अधिक विस्तारका तात्पर्य भी समझमें नहीं आया।

—डॉ. हरिनारायण मिश्र, हिन्दी विभागाध्यक्ष,
जे. के. कॉलेज, पुरुलिया (पं. बंगाल)

महत्वपूर्ण आलोचना-ग्रन्थ

छायावाद : नया मूल्यांकन

लेखक : प्रो. नित्यानन्द पटेल

छायावादसम्बन्धी इस नये अध्ययनमें लेखकने अबतककी सभी विचारधाराओंको सम्मुख रखकर समीक्षात्मक ढंगसे उनकी विवेचना की है। लेखककी मान्यता है कि छायावादी काव्यका मूलाधार प्रगाढ़ प्रकृति-प्रेम है और उसने पूर्ण विद्वत्ताके साथ तर्कपूर्ण शैलीमें सप्रमाण यह पक्ष प्रस्तुत किया है।

शोधार्थियों और विद्यार्थियोंके लिए सन्दर्भ-ग्रन्थ

कुछ उल्लेखनीय सम्मतियाँ

यह अभिनव कृति छायावादके स्वरूपको यथावत् समझने-परखनेका प्रमाण प्रस्तुत करती है। विद्वान् लेखकने प्रचलित मन्तव्योंका विश्लेषण कर स्वच्छ शैलीमें अपने मतकी स्थापना की है। उनकी विचार-पद्धति सुलझी हुई और निष्कर्ष तर्कपुष्ट हैं। —**डॉ. नगेन्द्र, दिल्ली विश्वविद्यालय**

इस ग्रन्थमें छायावाद-आन्दोलनको सही परिप्रेक्ष्यमें सहज-सुबोध रीतिसे प्रस्तुत किया गया है। लेखकने छायावादके विविध पक्षोंपर जागरूक भावसे तथा गहरायीके साथ मनन किया है और उनके विवेचनमें पैनापन तथा विचारोत्तेजकता है। —**डॉ. सावित्री सिन्हा, दिल्ली विश्वविद्यालय**

लेखककी स्थापनाओंके पीछे चिन्तन-मननके साथ जो तर्क-प्रमाणका बल है, वह पाठकोंको इस काव्यका पुनः एक बार गम्भीरताके साथ अनुशीलन करनेको विवश करता है।

—**डॉ. विजयेन्द्र स्नातक, दिल्ली विश्वविद्यालय**

सजिल्द मूल्य : ७.५० रु. छात्र-संस्करण : ६.०० रु.

नवभारती सहकार प्रकाशन

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली—७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्ति सूचना

[इस मास निम्न पुस्तकें समीक्षार्थ प्राप्त हुई हैं। आगामी अंकोंमें इनकी समीक्षा अथवा परिचय प्रस्तुत किया जायेगा। समीक्षार्थ पुस्तककी दो प्रतियाँ आनी चाहियें, एक प्रति की समीक्षा या परिचयका दायित्व स्वीकार नहीं किया जाता]

शोध-आलोचना

आधुनिक भावबोधकी संज्ञा; लेखक : अमृतराय; प्रकाशक : हंस प्रकाशन, १८ हेंस्टिंग्स रोड, इलाहाबाद-१। पृष्ठ : २०५; डिमाई, ७२; मूल्य : ८.०० रु.।

आधुनिक हिन्दी गद्य साहित्य; लेखक : डॉ. हरदयाल; प्रकाशक : आदर्श साहित्य प्रकाशन, १२६/६, वैस्ट सीलमपुर, दिल्ली-३१। पृष्ठ : १८३; डिमाई, ७२; मूल्य : १६.५० रु.।

प्रिय-प्रवास दर्शन; सम्पादक : डॉ. वेदप्रकाश शास्त्री; प्रकाशक : संगम साहित्य प्रकाशन, ८५०, वीरभान बाग, शाहनाथगंज, हैदराबाद-१२। पृष्ठ : ३३०; क्राउन, ७१; मूल्य : ५.०० रु.।

मध्ययुगीन सगुण एवं निर्गुण हिन्दी साहित्यका तुलनात्मक अध्ययन; लेखिका : डॉ. आशा गुप्ता; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग। पृष्ठ : २५३; रायल, ७०; मूल्य : २५.०० रु.।

मीरा और आण्डालका तुलनात्मक अध्ययन; लेखक : डॉ. ना. सुन्दरम; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग। पृष्ठ : ३९९; डिमाई, ७१; मूल्य : ३०.०० रु.।

लोक साहित्य विमर्श; लेखक : श्याम परमार; प्रकाशक : कृष्णा ब्रदर्स, कचहरी रोड, अजमेर। पृष्ठ : २३८; डिमाई, ७२; मूल्य : २१.०० रु.।

स्व० गिरिजादत्त शुक्ल गिरीश : व्यक्तित्व एवं साहित्य; लेखक : डॉ विजयकुमार शुक्ल; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग। पृष्ठ : ३२६; रायल, ७१; मूल्य : ३०.०० रु.।

हिन्दी विधि-शब्दावली; लेखक : डॉ. मोतीबाबू; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग। पृष्ठ : ४३९; रायल, ६९; मूल्य : ३६.०० रु.।

साहित्यके तत्व और आयाम; लेखक : डॉ. विसेश्वर प्रसाद केशरी; प्रकाशक : कमल प्रकाशन, हिन्द पिढ़ी, रांची-१। पृष्ठ : २१६; डिमाई, ७२; मूल्य : १०.०० रु.।

निबन्ध-संकलन

आधुनिक निबन्धावली; सम्पादक : डॉ. विद्यानिवास मिश्र; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग। पृष्ठ : १९८; क्राउन, ७२; मूल्य : २.७५ रु.।

नारी : भीतर और बाहर; लेखिका : श्रीमती कमला सिन्धवी; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : १५५; क्राउन, ७२; मूल्य : ६.०० रु.।

भाषा-विज्ञान

पद-रचना; लेखक : किशोरीलाल शर्मा; प्रकाशक : श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, अस्पताल मार्ग, आगरा-३। पृष्ठ : ४३; डिमाई, ७२; मूल्य : २.०० रु.।

उपन्यास

अरे, ओमप्रकाश; लेखक : मनहर चौहान; प्रकाशक : उमेश प्रकाशन, ५ नार्थ मार्केट, नयी सड़क, दिल्ली-६। पृष्ठ : १७२; क्राउन, ७२; मूल्य : ६.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आतंक; लेखक : नरेन्द्र कोहली; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : १९५; क्राउन, ७२; मूल्य : ६.०० रु.।

कहानी-संग्रह

एक वुतशिकनका जन्म; लेखिका : श्रीमती विजय चौहान; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-६। पृष्ठ : १४३; क्राउन, ७२; मूल्य : ५.०० रु.।

दो कथाएँ दो दिशाएँ; लेखक : हरिकृष्ण श्रीवास्तव 'रसिक'; प्रकाशक : वीणा प्रकाशन, ३६०, साठिया कुआ, जबलपुर (म. प्र.)। पृष्ठ : ६४; क्राउन, ७२; मूल्य : २.०० रु.।

बन्द कलीकी मंजिल; लेखक : कृशनचन्दर; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-६। पृष्ठ : ३१०; क्राउन, ७२; मूल्य : १०.०० रु.।

वारिस; लेखक : मोहन राकेश; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-६। पृष्ठ : २४६; क्राउन, ७२; मूल्य : ८.०० रु.।

नाटक

विजयश्री; लेखक : मुनिलाल उपाध्याय 'सरस'; प्रकाशक : सरस साहित्य कुटीर, बस्ती (उ. प्र.)। पृष्ठ : ३७; क्राउन, ७२; मूल्य : ०.७५ रु.।

काव्य-संकलन

अन्तर्जगत् (खण्डकाव्य); कवि : अम्बिकाप्रसाद 'दिव्य'; प्रकाशक : साहित्य सदन, अजयगढ़ (जि. पन्ना) म. प्र.। पृष्ठ : १४१; डिमाई, ७२; मूल्य : ४.०० रु.।

अरावली-गुञ्जन; सम्पादक : बलवीरसिंह 'करुण,' रूपनारायण 'चन्द्रुल'; प्रकाशक : भारतीय साहित्य परिषद्, अलवर। पृष्ठ : ५८; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.५० रु.।

कलंकी; कवि : कैलाशचन्द्र 'ज्ञानार्जनी'; प्रकाशक : भारतीय ज्ञान साधना केन्द्र, अलवर। पृष्ठ : ७५; क्राउन; मूल्य : १.५० रु.।

गान्धी पारायण; कवि : अम्बिकाप्रसाद 'दिव्य'; प्रकाशक : साहित्य सदन, अजयगढ़ (जि. पन्ना) म. प्र.। पृष्ठ : ६४८; डिमाई, ६९; मूल्य : २१.०० रु.।

गूंज; कवि : मुनिलाल उपाध्याय; सरस साहित्य कुटीर, बस्ती (उ. प्र.)। पृष्ठ : ८२; क्राउन, ७२; मूल्य : १.५० रु.।

झण्डा ऊँचा रहे हमारा; कवि : श्यामलाल गुप्त; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-६। पृष्ठ : ६४; डिमाई, ७२; मूल्य : ४.०० रु.।

निरगन्धा; कवि : हरिकृष्ण श्रीवास्तव 'रसिक'; प्रकाशक : वीणा प्रकाशन, जबलपुर। क्राउन, ७२; मूल्य : १.०० रु.।

नैसर्गिकी; कवि : मुनिलाल उपाध्याय; प्रकाशक : सरस साहित्य कुटीर, बस्ती। पृष्ठ : ७६; क्राउन, ७२; मूल्य : १.५० रु.।

प्यासी धरती; कवि : जीवितराम सेतपाल; प्रकाशक : सैलाब प्रकाशन, २०५ शीव, बम्बई-२२। पृष्ठ : ८०; डिमाई, ७२; मूल्य : ३.०० रु.।

प्रयास-२; सम्पादक : बजरंग बहादुरसिंह, वेदप्रकाश अग्रवाल, अशोककुमार गुप्त; प्रकाशक : कीर्त्तिकाम प्रकाशन, अम्बिकापुर (म. प्र.)। पृष्ठ : ३२; डिमाई, ७२; मूल्य : १.०० रु.।

शिखरके स्वर; कवि : गदाधर नारायण; प्रकाशक : बिहार ग्रन्थ कुटीर, पटना-४। पृष्ठ : ८४; डिमाई, ७२; मूल्य : ४.०० रु.।

हास्य-व्यंग्य

रहा किनारे बैठ; लेखक : शरद जोशी; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-६। पृष्ठ : १३३; क्राउन ७२; मूल्य : ५.०० रु.।

अनुवाद-साहित्य

किंग लियर (अंग्रेजी); लेखक : शेक्सपियर; अनुवादक : बच्चन; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-६। पृष्ठ : १७७; क्राउन, ७२; मूल्य : ६.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कृति-इतिहास

हमारी संस्कृति; लेखक : डॉ. सर्वपल्लि राधाकृष्णन्; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १०८; डिमाई, ७२; मूल्य : ८.०० रु. ।

अर्थशास्त्र

गरीबी हटाओ; लेखक : राजेन्द्रमोहन भटनागर; प्रकाशक : उमेश प्रकाशन, नयी सड़क, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १०३; डिमाई, ७२; मूल्य : ४.५० रु. ।

व्यक्ति-परिचय

बारडोलीके सरदार; लेखक : रंजन परमार; प्रकाशक : राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा । पृष्ठ : ३०४; क्राउन, ७२; मूल्य : ६.५० रु. ।

भूदान यज्ञके प्रणेता : विनोबा; लेखक : मोहनलाल भट्ट; प्रकाशक : राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा । पृष्ठ : २३२; क्राउन, ७२; मूल्य : ५.०० रु. ।

देश और निवासी

हरियाणा; लोकगीतोंकी धरती; लेखक : देवीशंकर प्रभाकर; प्रकाशक : उमेश प्रकाशन, नयी सड़क, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ९३; डिमाई, ७२; मूल्य : ४.५० रु. ।

हरियाणा : लोक गाथाएँ; लेखक और प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : ९३, डिमाई, ७२; मूल्य : ४ ५० रु. ।

धार्मिक

श्रीमद्भगवद्गीता (हिन्दी काव्यानुरचना); रचनाकार : गदाधर नारायण; प्रकाशक : गरुड़ पेपर बैक्स, बैकुण्ठ, ई/४२२, ए ब्लाक, सोनारी, जमशेदपुर-११ (बिहार) । पृष्ठ : ९९; जेबी, ७२; मूल्य : २.५० रु. ।

किशोर बाल साहित्य

आचार्य द्रोण (किशोर उपन्यास); लेखक : कुणाल श्रीवास्तव; प्रकाशक : उमेश प्रकाशन, नयी सड़क, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १११; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.०० रु. ।

चन्द्रशेखर आज़ाद (कि. उप.); लेखक : सुरेन्द्र जोशी; प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : १०४; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.०० रु. ।

महाराजा राजसिंह (कि. उप.); लेखक : कुणाल श्रीवास्तव; प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : ९५; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.०० रु. ।

पिंकूके कारनामे (कि. उप.); लेखक : कार्लो कलोदी; रूपान्तरकार : विश्वनाथ गुप्त; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : ११५; क्राउन दुगना, ७२; मूल्य : ३.२५ रु. ।

नैतिकताकी कहानियाँ (भाग-१); लेखक : सुशील कुमार; प्रकाशक : राष्ट्रभाषा प्रकाशन, १५/२३, राजेन्द्रनगर, नयी दिल्ली-६० । पृष्ठ : १२६; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.५० रु. ।

बुद्धिमानीकी लोक कथाएँ (किशोर कहानी-संग्रह); लेखक : कुणाल श्रीवास्तव; प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : १२५; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.५० रु. ।

शंकर पार्वतीकी लोक कथाएँ (कि. क. सं.); लेखक और प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : १२०; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.५० रु. ।

भारतके गौरव–७ (कि. जीवनी); प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : १५९; क्राउन दुगना, ७१; मूल्य : २.०० रु. ।

सम्राट अशोक (कि. जीवनी); लेखक : शिशु सावंगी मेघंकर; प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : ७०; क्राउन दुगना ७२; मूल्य : २.०० रु. ।

पृथ्वी (विज्ञान); लेखक : कुणाल श्रीवास्तव; प्रकाशक : उमेश प्रकाशन, नयी सड़क, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ९५; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.०० रु. ।

पृथ्वीपर जीवन (विज्ञान); लेखक और प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : ९५; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.०० रु. ।

समुद्रके भीतर एक अनोखी दुनियाँ (विज्ञान); लेखक-प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : ९५; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.०० रु. ।

जैसा देश वैसा वेश (बाल कहानी-संग्रह); लेखिका : अनुदीदी; प्रकाशक : राष्ट्र भाषा प्रकाशन, १५/२३, राजेंद्र नगर, नयी दिल्ली–६० । पृष्ठ : ३८; क्राउन दुगना, ७२; मूल्यः २.०० रु. ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ढाकके तीन पात (बा. क. सं.); लेखक-प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : ४०; क्राउन दुगना, ७२; मूल्य : २.०० रु.।

सेवाका फल मेवा (बा. क. सं.); लेखक-प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : ४०; क्राउन दुगना, ७२; मूल्य : २.०० रु.।

आकाशकी खोज (बाल-विज्ञान); लेखक : शिवशंकर; प्रकाशक : विज्ञान पब्लिकेशंस, बी-२१५, अशोक विहार, दिल्ली—७। पृष्ठ : ३५, क्राउन, ७२; मूल्य : १.०० रु.।

चन्द्रमाकी खोज (बा. वि.); लेखक-प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : ३१; क्राउन, ७२; मूल्य : १.०० रु.।

पृथ्वीकी खोज (बा. वि.); लेखक-प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : ३५; क्राउन, ७२; मूल्य : १.०० रु.।

पृथ्वीपर जीवनकी खोज (बा. वि.); लेखक-प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : ३६; क्राउन, ७२; मूल्य : १.०० रु.।

मंगल ग्रहकी खोज (बा. वि.); लेखक-प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : ३१; क्राउन, ७२, मूल्य : १.०० रु.।

सूर्यकी खोज (बा. वि.); लेखक-प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : ३६; क्राउन, ७२; मूल्य : १.०० रु.।

जेबी-पुस्तकें

चन्द्रशेखर आज़ाद (जीवनी); लेखक : मन्मथनाथ गुप्त; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स; जी. टी. रोड, शहादरा, दिल्ली—३२। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

बापू (संस्मरण); लेखक : घनश्यामदास बिड़ला; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

एक घटा प्यासी (उपन्यास); लेखक : शेखर; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

चौदह फेरे (उप.); लेखक : शिवानी; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : २१५; ७२; मूल्य : ३.०० रु.।

नीलम (उप.) लेखक : शेखर; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १३१; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

परिमल (उप.); लेखक : गुरुदत्त; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : २००; ७२; मूल्य : ३.०० रु.।

मनका मीत (उप.); लेखक : ताराशंकर वंद्योपाध्याय; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली—३२। पृष्ठ : २००; ७२; मूल्य: ३.०० रु.।

मेहमान (उप.); लेखक : राजवंश; प्रकाशक : स्टार पाकेट बुक्स, ४/५ बी., आसफअली मार्ग, नयी दिल्ली—१। पृष्ठ : १२७; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

संघर्ष (उप.); लेखक : नानकसिंह; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली—३२। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

गूंगे देवता (कहानी-संग्रह); लेखक : कृश्नचन्दर; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

दुखवा मैं कासे कहूँ (क. सं.); लेखक : आचार्य चतुर सेन; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १९६; ७२; मूल्य : ३.०० रु.।

सुन्दरी और सिंहासन (इतिहास-कथाएँ); लेखक : सुदर्शन चोपड़ा; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

डार्लिंग (हास्य-व्यंग्य); लेखक : फिक्र तौंसवी; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

अन्धा हत्यारा (जासूसी); लेखक : कर्नल रंजीत; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

कियायेका हत्यारा (जासूसी); लेखक : गुप्त दूत; प्रकाशक : स्टार पाकेट बुक्स, आसफअली मार्ग, नयी दिल्ली—१। पृष्ठ : १४०; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

वीरान बस्ती (जासूसी); लेखक : कर्नल रंजीत; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली—३२। पृष्ठ : १२३; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

फिरभी (फिल्मी साहित्य); लेखक : कमलेश्वर; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ: १२८; ७२; मूल्य: २.०० रु.

मेरे अपने (फि. सा.); लेखक : गुलजार; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १२७; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

राजेश खन्ना (फि० सा०); लेखक : गिरिजा पण्डित; प्रकाशक : स्टार पाकेट बुक्स, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ११८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश-विदेशकी राजनीतिक परिस्थितियोंमें
निरन्तर परिवर्तनोंकी पृष्ठभूमि प्रदान करनेवाली पुस्तकें

विस्तारवादी चीन

यह पुस्तक चीनकी साम्राज्य-विस्तारकी महत्वाकांक्षाकी कहानी है। इसमें चीनको साम्राज्यवादी भूखके शिकार तिब्बत, सिक्यांग, भीतरी मंगोलिया और मंचूरियाके पतनका इतिहास है और दक्षिण-पूर्व एशियामें चीनद्वारा भारतीय सभ्यता, धर्म और कलाको नष्ट करनेके प्रयत्नोंकी कहानी है। लेखक हैं : जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी।

उत्तर-प्रदेश सरकारद्वारा पुरस्कृत। (जेबी आकार) मूल्य : १.२५ रु.

कच्छ

इस पुस्तकमें कच्छपर पाकिस्तानी आक्रमण, कच्छसम्बन्धी समझौते और वहाँका पूर्ण परिचय है। लेखिका हैं : पद्मा अग्रवाल।

उ. प्र. सरकारद्वारा पुरस्कृत। (जेबी आकार) मूल्य : २.२५ रु.

अफ्रीकाके राष्ट्रीय नेता

अफ्रीकामें निरन्तर संघर्ष होते रहते हैं। सैनिक विद्रोह वहाँकी नियति है। अफ्रीकाकी घटनाओंके संचालकों और राजनीतिज्ञोंके साथ अफ्रीकाके प्रत्येक देशका इसमें परिचय है। लेखक हैं : जगमोहनलाल माथुर।

(जेबी आकार) मूल्य : २.५० रु.

समाजवादी बर्मा

बर्मामें सैनिक समाजवादका उदय वहाँके वर्तमान राष्ट्रपति नेविनके नेतृत्वमें हुआ। इसका कारण वहाँकी पूर्व सरकारके कालमें व्याप्त व्यापक भ्रष्टाचार था। इस परिवर्तनका वहाँ बसे भारतीयोंपर प्रबल कुप्रभाव हुआ। इसके लेखक हैं बर्मावासी श्यामाचरण मिश्र।

(क्राउन आकार) मूल्य : ४.०० रु.

चारों पुस्तकें एकसाथ मँगानेपर डाक-व्ययकी छूट

नवभारती सहकार प्रकाशन

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्रकर' का नया विशेषांक

भारतीय साहित्य : २५ वर्ष

बहुत शीघ्र प्रकाशित हो रहा है

- इस अंकमें संविधानमें उल्लिखित प्रत्येक भारतीय भाषाकी स्वातन्त्र्योत्तर प्रगतिका सिंहावलोकन होगा।
- हिन्दीकी आलोचना, उपन्यास, कहानी, नाटक, रेडियो नाटक, काव्य, हास्य-व्यंग्य आदि अनेक विधाओंकी स्वातन्त्र्योत्तर प्रगतिपर अलग-अलग लेख होंगे।

लेखक हैं :

अज़ीज़ इन्दौरी (उर्दू), डॉ. अरविन्द देसाई (गुजराती), डॉ. एन. एस. दक्षिणामूर्ति (कन्नड़), डॉ. एस. एन. गणेशन (तमिल); चिरंजीत (हिन्दी—रेडियो नाटक), डॉ. जयचन्द राय (हिन्दी—आलोचना), जी. एन. पिल्लई (मलयालम), डॉ. नन्दकुमार राय (हिन्दी—उपन्यास), नेमिचन्द्र जैन (हिन्दी—नाटक), फूलचन्द मानव (पंजाबी), डॉ. भीमराव कुलकर्णी (मराठी), डॉ. भीमसेन निर्मल (तेलुगु), मोतीलाल जोतवाणी (सिन्धी), रामबहाल तिवारी (बँगला), डॉ. लक्ष्मणदत्त गौतम (हिन्दी—कहानी), श्रीमती विश्ववारा (हिन्दी—हास्य-व्यंग्य), डॉ. वेदव्रत (संस्कृत), शी. प्र. मिश्र (हिन्दी—काव्य), शम्भुनाथ भट्ट 'हलीम' (कश्मीरी)।

विशेषांक मूल्य : ६.०० रु.

अपनी प्रति सुरक्षित करानेके लिए अग्रिम राशि भेजें। रजिस्ट्रीसे मँगानेके लिए १.३५ रु. मूल्यके साथ भेजें।

व्यवस्थापक : 'प्रकर', ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

'नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)' के लिए विद्यासागर विद्यालंकार द्वारा संपादित, प्रताप मुद्रणालय, दिल्ली-७ के लिए दी एज्युकेशनल प्रेस, सिटी स्टेशन मार्ग, आगरा-३ में मुद्रित, ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७ से प्रकाशित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

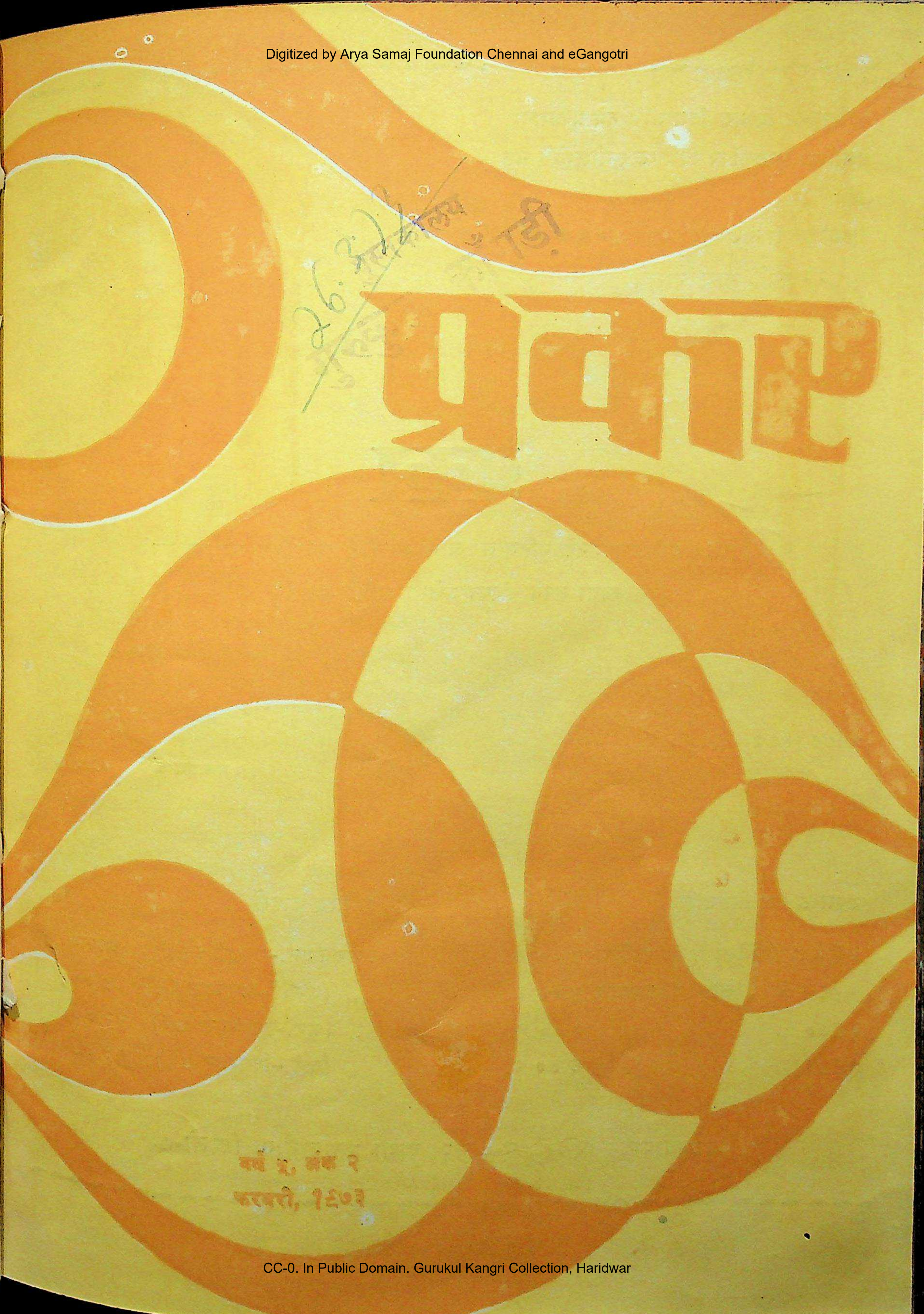

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यकी विभिन्न विधाओंके नये प्रकाशनों
प्रकाशित पुस्तकोंपर विशिष्ट समीक्षकोंके मत
और
हिन्दी प्रकाशन-जगत्‌की नवीनतम सूचनाओंके लिए
'प्रकर' अपने साथ रखिये

प्रकर

[लेखन और प्रकाशनके गतिशील चीन्हे-अनचीन्हे चरणोंको उजागर करने वाला अपने ढंगका अकेला मासिक-पत्र है]

वार्षिक मूल्य ९.०० रु.

सामान्य अंक ०.७५ रु.

उपलब्ध गत विशेषांक

अहिन्दीभाषियोंका हिन्दी साहित्य	४.०० रु.
१९६९ के उल्लेखनीय प्रकाशन	१.०० रु.
१९७० ,, ,, ,,	४.०० रु.
१९७१ ,, ,, ,,	६.०० रु.

सजिल्द फाइलें

प्रकर (जन.—जुलाई ६९)	अप्राप्य
,, (जुलाई—दिसम्बर ६९)	७.०० रु.
,, (जन.—दिसम्बर ७०)	१२.०० रु.
,, (जन.—दिसम्बर ७१)	१५.०० रु.

व्यवस्थापक : 'प्रकर', ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकर

फरवरी, १९७३] [वर्ष ५, अंक २.

सम्पादक-मण्डल : डॉ. भोलानाथ तिवारी (अध्यक्ष); मुकुटबिहारी वर्मा, डॉ. जयचन्द्रराय (उपाध्यक्ष); डॉ. देवेन्द्रकुमार, सुभाषचन्द्र विद्यालंकार (सदस्य)

सम्पादक : विद्यासागर विद्यालंकार

सम्पर्क : ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७.

वार्षिक मूल्य : नौ रुपये मात्र सामान्य अंक : पचहत्तर पैसे मात्र

समीक्षित पुस्तकें	पृष्ठ संख्या	समीक्षक
१. संस्मरण : व्यक्ति-परिचय		
यादोंकी बरात : 'जोश' मलीहाबादी	३	डॉ. भोलानाथ 'भ्रमर'
यादोंकी परछाइयाँ : आचार्य चतुरसेन	५	सुरेन्द्र तिवारी
स्वामी रामतीर्थ और उनकी कविता : डॉ. उर्वशी सूरती	७	पं. आत्मानन्द
प्रमथ चौधुरी : अरुणकुमार मुखोपाध्याय	९	डॉ. विपिनबिहारी ठाकुर
श्री अरविन्दका जीवन-दर्शन : इन्द्रसेन	१०	डॉ. रामाभिलाष त्रिपाठी
दक्षिणकी सरस्वती : चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य	१०	,,
२. आलोचना-साहित्य		
तुलसीका काव्यादर्श : डॉ. सुरेशचन्द्र गुप्त	११	डॉ. मदनगोपाल गुप्त
मधुमालतीका काव्य-सौन्दर्य : डॉ. दर्शनलाल सेठी	११	,,
३. लोक-साहित्य		
करौली क्षेत्रका ख्याल साहित्य : कल्याणप्रसाद वर्मा	१३	डॉ. सियाराम तिवारी
४. भाषा-विज्ञान		
पद-रचना : किशोरीलाल शर्मा	१५	डॉ. भोलानाथ तिवारी
५. उपन्यास		
सुबहकी तलाश : नरेन्द्रदेव वर्मा	१६	हेमचन्द्र जैन
प्रेम अपवित्र नदी : डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल	१७	डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय
कुल्हाड़ी : निर्मय मल्लिक	२२	शम्भुनाथ मिश्र
खिलाड़ी : राजवंश	२४	डॉ. रामाभिलाष त्रिपाठी
६. कहानी-संग्रह		
एक बुतशिकनका जन्म : श्रीमती विजय चौहान	२४	सुरेन्द्र तिवारी
मोमबत्ती जलती रही : डॉ. रवीन्द्र	२६	डॉ. रामाभिलाष त्रिपाठी
बहता पानी निर्मला : भागीरथ कानोडिया	२६	,,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. नाटक-साहित्य

आर. यू. आर. : कैरेल चैपेक	२७	डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
समाधान : रामेश्वरसिंह काश्यप	२८	डॉ. सियाराम तिवारी
मुद्राराक्षस : विशाखदत्त	२८	डॉ. सोमशेखर 'सोम'

८. काव्य-संकलन

बोलता हुआ सच : रामगोपाल परदेसी	२६	डॉ. ओमप्रकाश अवस्थी
समर्पित एकान्तके फूल : मदनलाल शुक्ल	३०	डॉ. जीवनप्रकाश जोशी
इकतारा मनका किनारा : ,,	३०	,,
हृदय-हृदयके गीत : ठाकुर भूपतिसिंह	३०	,,
हृदयकी निधि : जगलाल रामा	३०	,,
सूरज बनती किरण : डॉ. देवेन्द्र 'दीपक'	३२	सन्तोष खरे

६. प्रशिक्षण-अध्यापन

दक्षिण भारतके विश्वविद्यालयोंमें हिन्दी अध्यापन : डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर	३२	डॉ. निज़ामउद्दीन

१०. देश और निवासी

आस्ट्रेलिया : बलजीत बग्गा	३४	मनमोहन वर्मा
चेकोस्लोवाकिया : ओमप्रकाश पालीपाल	३४	,,
११. बाल-साहित्य	३५	व्रजगोपालदास अग्रवाल
१२. जेबी-साहित्य	३७	जीवन, अख्तरुल इस्लाम
१३. मत-अभिमत	४३	--
१४. प्राप्ति-सूचना	४५	—

मौलिक वैज्ञानिक उपन्यास

अपराधी वैज्ञानिक

(यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक')

आजका वैज्ञानिक विश्वपर शासन करनेका स्वप्न देखता है। यदि वैज्ञानिक सत्ताको हथियाने के लिए लालायित हो उठें तो विश्व-संहारके भयानक दृश्य उपस्थित कर सकता है। प्रतिभाशाली वैज्ञानिक अलीतामन भी इसी मार्गपर चलता है और सम्पूर्ण पृथ्वीपर प्रलयके दृश्य उपस्थित कर देता है।

साथही पृथ्वीकी धुरीके कोणमें परिवर्तन द्वारा पृथ्वीकी ऋतुओं, भूकम्पों, जल-स्थलपर आवश्यकतानुसार नियन्त्रणके सिद्धान्तका परिचय कथा में संजोकर दिया गया है।

हिन्दीका यह एक सफल और श्रेष्ठ वैज्ञानिक उपन्यास है।

मूल्य : आठ रुपये

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान [सो.]

ए-८।४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्मरण : व्यक्ति-परिचय

यादोंकी बरात

लेखक : 'जोश' मलीहाबादी; अनुवादक; हंसराज रहबर; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली। पृष्ठ संख्या : १३२; डिमाई; १९७२; मूल्य : १०.०० रु.।

प्रस्तुत पुस्तक 'जोश' मलीहाबादीकी आत्मकथा है। 'जोश' साहब उर्दूके अखिल भारतीय स्तरके कवि थे। उनकी रचनाएँ उर्दू काव्य-साहित्यकी क्लैसिक हैं। वे पाकिस्तानमें रहें या इंगलिस्तानमें अथवा और किसी स्तानमें किन्तु यदि वे उर्दूमें कहते हैं तो वे उर्दूके ही कहलायेंगे। पाकिस्तान बननेपर इस एक भ्रमने भारतीय मुसलमानोंकी चेतनाको अन्धा बना दिया था कि उर्दू और इस्लामका संरक्षण, सम्पोषण और संवर्द्धन पाकिस्तानमें ही होगा तथा भारतमें एकमात्र कट्टर सनातनी हिन्दू राज्यशाही चलेगी। मुसलमानोंका भाषा-प्रेम, धर्म-प्रेम और संस्कृति-प्रेम सर्वथा सराहनीय है मगर यह उनकी कमजोरी भी है और यह लाखों-करोड़ोंकी बर्बादीका कारण बनी। किसी भयानक ऐतिहासिक प्रवृत्तिने मुसलमानों को हिन्दुओंके प्रति प्रायः शंकालु और विद्वेषी बना दिया। हिन्दुओंके कर्मकाण्डको वे संस्कृति समझ बैठे और शुद्धतर भारतीय प्रवृत्तिको भुला बैठे। लोग खुद पाकिस्तान भागे, बहुतोंको भगा ले गये, बरगलाकर भगा ले गये और जो यहाँ रह गये उनके मनमें शंका, सन्देह और घृणाका बीज बो गये। 'जोश' को हम 'शायरे-इन्क़िलाब' कहते थे। उनकी 'हिटलर से खिताब और 'ईस्ट इण्डिया कम्पनीके सौदागरोंसे ख़िताब' शीर्षक रचनाएँ १९४२ में हम नौजवानोंका प्यारा नग़मा था। जवाहरलाल नेहरूका कथन था, "'जोश साहब हमारे कन्धेसे कन्धा मिलाकर ब्रिटिश सरकारसे लड़ चुके हैं" (पृ. ९१)। मगर भारतीय संस्कृतिके मर्मसे अनभिज्ञता, दूरदर्शिताके अभाव, पाकिस्तानी दोस्तोंके इसरार और प्रलोभन, अन्धा और भ्रमित उर्दू, "तहजीबी, खायती और सकाफ़ती (सांस्कृतिक) प्रेम, बच्चोंके भविष्यकी चिन्ता और काँग्रेस प्रेसीडेण्ट स्वनामधन्य मौलाना अबुल कलाम आज़ादके हिन्दुत्वके प्रति साम्प्रदायिक द्वेष भाव आदिने वतनपरस्ती, कवि की सूक्ष्म एवं मर्मभेदी दृष्टि, दोस्तोंकी मुहब्बत, जवाहर लालके प्यार और भारतमाताकी डबडबाई आँखोंके प्रति 'जोश' को बदरुख, तोताचश्म कर दिया—ऐहसान फ़रामोश बना दिया। मुझे नकबी (पृ. ९४), नासिर (पृ. ९४), सिकन्दर मिर्जा (पृ. ९३) जिन्ना आदिपर कोई आक्रोश नहीं। वह उनका फ़र्ज़ था। मुझे खीझ आती है उस काँग्रेस-सभापति, भारतके केन्द्रीय शिक्षामन्त्री और 'इण्डिया विन्स फ्रीडम' के जहरीले पन्नों और उसके जहर को सत्यकी रोशनीके भयसे छिपाये रहनेवाले महान् पुरुष से जिसने 'जोश' की डगमगाती नावको यह कहकर पाकिस्तान ढकेल दिया, "......मेरी राय है कि आप हिजरत कर जायें......नेहरूके बाद यहाँ आपका कोई पूछने वाला नही रहेगा। आप-तो-आप, खुद मुझे कोई नहीं पूछेगा" (पृ. ९५)। कमनज़रीकी इन्तहा और अक्लकी गद्दारीका कितना बेमिसाल नमूना है! उर्दू एकेडेमी, 'फिराक' को प्राप्त ज्ञानपीठ पुरस्कार, उर्दू पुस्तकोंको दिये जानेवाले इनामात, विश्वविद्यालयों और कॉलेजोंके उर्दू-विभाग मौलानाके झूठका पर्दा-फाश करते हैं। अपनी गलतीका एहसास होनेपर और पाकिस्तानी असलियतके नुमायाँ होनेपर स्वयं 'जोश' साहबने अपनेसे कहा—"और आओ पाकिस्तान" (पृ. १०१)। ख़ान्दानी ख़सलत (गैरतमन्द होना) और शायराना मिज़ाजके कारणही 'जोश' फिर हिन्दुस्तान नहीं आये वर्ना "मैंने सोचा हिन्दुस्तान लौट जाऊँ" (पृष्ठ ९८)। वहाँकी मनोवृत्तिका चित्रण करते हुए 'जोश' साहब फ़रमाते हैं, "यह फैसला करना पड़ा कि इस क़ौममें किसी साहबे-क़लमकी कोई गुंजाइश नहीं है और हर अदीब और शायरको चाहिये कि वह खुदकुशी फरमाले" (९८)। मुसल्सल नाकामियों और परेशानियोंकी वजहसे 'जोश' साहबकी जो मानसिक स्थिति हुई उसके कुछ आलंकारिक चित्र देखिये, "......मेरा उस बच्चेका-सा आलम हो गया जिसका दूध छुड़ा दिया जाता है" (१००), "......किताबकी सतरें नागिनोंकी मानन्द रेंगने लगती थीं और हर्फ़ोंके दायरेमें बिच्छू डंक उठाये नज़र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आते थे" (१००), "........और छिपकलीकी कटी हुई दुमके मानन्द रात-रातभर तड़पता रहता था" (पृ. १००)... ..आदि । बाँगला देशके मुसलमानोंपर ढाये गये वहशियाना, दरिन्दाना और शर्मनाक मजालिम तथा मेरे 'जोश' पर बरपा किये गये ये क़त्ल इस दृष्टिकोणसे एकसे महत्वके हैं कि वे उस सरकारके इस्लाम-प्रेम, भाषा-प्रेम और अदबी उन्सियतके भ्रमका पर्दाफाश करते हैं और हिन्दुस्तान ही के मुसलमानोंके नहीं, बल्कि अन्य अनेक देशों के मुसलमानों और गैर मुसलमानोंकी भी पाकिस्तान सम्बन्धी भूलका सुधार कर सकते हैं ।

सच्चा और सफल कवि जब गद्य लिखने लगता है तो उसका गद्य भी असाधारण रूपसे आकर्षक हो उठता है । महादेवी वर्मा, बच्चन तथा माखनलाल चतुर्वेदी आदिके गद्य को देखकर इस उक्तिकी सच्चाईपर सहजही विश्वास हो उठता है कि गद्य कवियोंकी कसौटी है । इसपर वह गद्य यदि उर्दूका हो और लिखनेवाला यदि 'जोश'मलीहाबादी-जैसा साहबे-कलम हो, तब तो कहने ही क्या ? उर्दू गद्य हिन्दी गद्यकी अपेक्षा कुछ अधिक कलात्मक है, 'जोश' के हाथों वह और भी अधिक निखर उठा है । 'यादोंकी बरात' के गद्यकी कलात्मकता और रसात्मकता महादेवीके संस्मरणोंवाली गद्य-शैली-जैसा प्रभावपूर्ण है । महादेवीमें अलंकरण कुछ अधिक स्पष्ट है, 'जोश' में उतना अधिक नहीं । 'यादोंकी बरात' में 'जोश' के गद्यका सर्वोत्कृष्ट रूप वहाँ दिखायी पड़ता है, जहाँ वे चित्रण करने लगते हैं—विशेष रूपसे प्रकृति या अवस्था अथवा मनोवृत्तिका चित्रण । इस दृष्टिसे 'यादोंकी बरात' के प्रथम साठ पृष्ठ साहित्यकी अमूल्य निधि सिद्ध होंगे । इनमें आत्मकथा लिखनेकी कठिनाई, मलीहाबादमें इनके घरके भीतरके वातावरण और फिर गाँवोंमें फैली रंगीन प्रकृतिका चित्रण, बचपनकी शरारतोंका चित्रण, मोहका चित्रण, समृद्धि और वैभवका चित्रण, रूप-चित्रण, शहर लखनऊका चित्रण, नृत्य चित्रण तथा सामन्तीय वातावरणका चित्रण आदि अत्यन्त सुन्दर गद्यमें हैं । छोटे-छोटे शब्द, ध्वन्यात्मक शब्द, चित्र खींचनेमें समर्थ शब्द, आवश्यकतानुसार छोटे या बड़े वाक्य, मोहक बिम्ब, वातावरणके अनुरूप और वातावरण निर्मित करनेमें समर्थ शब्द, अत्यन्त सुन्दर, अत्यन्त उपयुक्त और मार्मिक उपमाओं तथा वस्तुओं आदि के वांछित विवरणके कारणही उनके गद्यमें यह सामर्थ्य आ पाया है । सजीवता और चित्रात्मकता सराहनीय है । एक 'प्रकृति-चित्र देखिये : "अल्लाह-अल्लाह, जहाँतक नज़र जाती थी, झूमते, लहलहाते और गुनगुनाते खेत और खेतोंमें धरती माताकी उगी हुई तमन्नाएँ । बीच-बीचमें खमखाती पगडण्डियाँ, चलती बेड़ियों और 'परा-हियों' की बदौलत गहरी-गहरी नालियोंमें.......बहते पानी की कुड़-बुड़-कुड़-बुड़, सुनहरी और मुलायम किरणोंसे झील की लहरोंकी झलमल-झलमल, किनारेपर खूबसूरत मुरगा-बियोंकी कतारोंपर तोलती हुई और लहरोंमें उनकी रह-रहकर डुबकियाँ, और मुलायम कन्धोंपर खेतोंकी तरा-वट और बालियोंकी खुशबू उठाये हुए ठण्डे झोंकोंकी पाकी-ज़गी और लताफ़त—और खेतोंसे दूर कच्चे-कच्चे, लिपे-पुते मकानों, छप्पर, ऊँचे-ऊँचे खलिहान—निकाई करनेवाली जवान-जवान औरतें और लद्दर गूजर छोकरियाँ, उधर तूफान—इधर उठान । इनके लाल-पीले लहँगे, ऊदी-ऊदी चुनरियाँ, मेहनतके पाले हुए छलकते शादाब चेहरे और गठे-गठे चटकते बदन—ऐसे बदन कि पूरीतरह कसमसा-कर अँगड़ाई आये तो जिल्द मसककर रह जाये और देखने वालेके दिलमें यह आरज़ू धूमें मचाये कि इन्हें छूकर भी देख लिया जाये......" (पृष्ठ २३) । मुहावरे उर्दू गद्य की सजीवता है और वे 'यादोंकी बरात' के गद्यमें इस खूबसूरतीसे पिरोये गये हैं कि तबियत मचल उठती है—"बीवी, कल मैंने अपनी आँखोंसे खुद देखा कि वह अपना खीरका थलवा चट करके नसीबनका थलवा भी हुबक-हुबक कर जहर मार कर रही है" (पृष्ठ १६). "इन्हीं बुजुर्गोंकी जूतियाँ सीधी करके मैंने शाईस्तगी सीखी........ (पृष्ठ २९) आदि । पृष्ठ ३० और ३१ के महफ़िलके और नृत्यके चित्र असाधारण कुशलता और कलात्मकताके साथ खींचे गये हैं । असाधारण रूपसे कलात्मक-वर्णना-त्मक गद्य-शैली इस पुस्तककी दूसरी उल्लेखनीय विशेषता है । जगह-जगह शेर उद्धृत करके 'जोश' साहब ने अपने प्रतिपाद्यको और भी अधिक मार्मिक एवं हृदयग्राही बना दिया है । आत्मकथा लिखनेकी मानसिक कठिनाइयोंका जिक्र करते हुए उन्होंने व्यञ्जनाप्रधान शैलीका प्रयोग किया और उसका अन्त एक कहानीसे किया जिसमें एक बूढ़े मिर्ज़ा साहब नौजवानोंके बेहद इसरारसे मजबूर होकर हालात कहते-कहते हिचकियाँ ले-लेकर रोने लगे थे और तत्पश्चात् 'जोश' साहब खुद फरमाते हैं, "सो बन्दापरवर, अपना हाल सुनाकर मैंभी इसीतरह हिच-कियाँ ले-लेकर रो रहा हूँ । हाय माजी के डंक !! अपने कभीके रंगमहलमें जो हम गये, आँसू टपक पड़े दरो-दीवार देखकर" (पृ. ६) ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रस्तुत पुस्तक पाठकको उन्नीसवीं शताब्दीके अन्तिम और बीसवीं शताब्दीके प्रथम चरणमें खान्दानी मुसलमान जमींदारोंके घरके भीतरके माहौल, सभ्यता-संस्कृति, रहन-सहन, बोलचालके लहजे, प्रथाओं-परम्पराओंसे परिचित कराती है और यहभी बताती है कि किस लाड़-दुलार तथा प्यार और मुहब्बत एवं शानो-शौकतसे बच्चे पाले जाते थे। मुशायरों या नशिस्तोंकी तर्जो तहज़ीब-कायदे और तरीकेसे भी परिचय होता है—बल्कि दसवाँ अध्याय तो 'जोश' साहबकी जवानीके हिन्दुस्तानसे ही परिचय कराता है। बीसवीं सदीके हैदराबादके निज़ामका परिचय और उनके स्वभाव और उनके आसपासके वातावरणका चित्र एक पतनोन्मुखी सभ्यता, व्यवस्था और व्यक्तिका चित्र है। उससे मन क्षुब्ध ही होता है। उसके बाद 'जोश' साहबकी ज़िन्दगीके मीठे-कड़वे अनुभव मिलते हैं। कभी-कभी जीवनकी अत्यन्त छोटी घटना दिल और दिमाग़को हमेशा-हमेशाके लिए इस कदर बदल देती है कि आश्चर्य होता है। मध्ययुगीन वातावरणमेंसे ही आधुनिकता किस आश्चर्यजनक रूपसे जनम लेती है, यह आपको पृष्ठ ३१ पर मिलेगी। 'जोश' साहबकी खिलायी बड़ी बीने रोते-रोते कहा, "मुआ गाड़ीवाला घोड़ेको चाबुकसे मार रहा है—तड़ाक्-तड़ाक्। हाय हमारे जाने-आलम पियाके जमानेमें इन घोड़ोंको रईसोंकी आबरू समझा जाता था। इन्हें दूध, जलेबी और बालाई खिलायी जाती थी। जबसे इन बन्दर फिरंगियोंका राज हुआ है........बड़े-बड़े शरीफ-जादे गलियोंमें जूतियाँ चटखाते फिरने लगे हैं......हाय हमारे जाने-आलम पिया अब कभी नहीं पलटेंगे।" बड़ी बीकी यह बात सुनकर 'जोश' तिलमिला गये और उन्हें फिरंगियोंसे नफ़रत हो गयी और वही लड़कपनकी नफरत आगे चलकर उनकी सियासी नज्मोंके रूपमें व्यक्त होने लगी। कहाँकी बात थी लेकिन मआजल्लह कहाँ पहुँची। अस्तु, यह सब तो बहुत अच्छा है मगर औरभी अच्छा होता अगर 'जोश' साहबकी अपनी शायराना जिन्दगी, अनुभूतियोंके स्रोत, मुशायरोंके कुछ अनुभव, शायर दोस्तों के कुछ दिलचस्प वाकयात, उनके कवि-जीवनके विकास आदिके विषय में कुछ और अधिक जाननेको मिलता। वैसे, यह संक्षिप्त संस्करण है। हो सकता है कि मूल पुस्तकमें ये सब हों। खुदा जाने। इतना जरूर है कि 'जोश' साहबके बाल जीवन, उनकी मूल प्रकृति, उनके पठानी स्वभाव तथा उनकी शायरीकी शुरुआतके सम्बन्ध में रोचक विवरण मिलते हैं।

पुस्तकके अन्तिम भागमें चन्द काबिले-जिक्र अहबाब और चन्द अजीव हस्तियोंके रेखाचित्र मिलते हैं। पण्डित जवाहरलाल नेहरूके बारेमें 'जोश' ने जो लिखा है वह बहुतही शानदार है—"वह अपनी मोहिनी सूरतके आकर्षण, अपने रंगकी चमक-दमक, अपनी आँखोंकी मुरव्वत ....अपनी मुसकराहट मृदुता......अपने स्वभावकी अद्वितीय शालीनता ....के एतबारसे एक ऐसे इन्सान थे जो इस धरतीपर सदियोंके बाद पैदा होते हैं......उनका अस्तित्व हिन्दुस्तानका गौरव, एशियाकी प्रतिष्ठा और समूची मानव जातिका विश्वास है। वह.......ऐसे सजीव ताजमहल थे जिसे शामे-अवधकी लालिमा और सुबहे-बनारसकी उषाने इलाहाबादके अर्थपूर्ण संगमपर छेनियों से तराशकर तामीर किया था" (१०७)। सरोजिनी नायडूके विषयमें वे लिखते हैं, "लहजेमें अरगनूं, बातोंमें अफतूं, मैदाने-जंगमें झाँसीकी रानी, गोकुल-वनकी गोया मधुर बीन, बुलबुले हिन्दुस्तान" (११३)। 'फिराक' गोरखपुरीकी तमाम कमजोरियोंके बावजूद वे उन्हें "अपने 'फिराक'" कहते हैं और फरमाया है, "जो शख्स यह तस्लीम नहीं करता कि 'फिराक़' का महान् व्यक्तित्व हिन्दुस्तानके माथेका टीका, उर्दू जबानकी आबरू और शायरीकी माँग का सिन्दूर है वह खुदाकी कसम निरा घामड़ है। "जिन्दाबाद 'फिराक' ! पाईन्दाबाद फिराक !" (११८)। इसी प्रकार मन लगाकर बड़ेही अच्छे ढंगसे उन्होंने पाँच और भी विभिन्न विशिष्टताओंवाले व्यक्तियोंके बारेमें लिखा है जो कलात्मक है— रोचक है।

मेरी कामना है कि हिन्दी में इसका स्वागत हो और हिन्दीके उदारहृदय लेखक इसकी गद्य-शैलीका अध्ययन करके हिन्दीमें भी इसीप्रकारके रोचक और मोहक गद्य-साहित्यका निर्माण करें। मैं इस पुस्तकके प्रकाशनका स्वागत करता हूँ और अनुवादक एवं प्रकाशकको बधाई देता हूँ।

—डॉ. भोलानाथ 'भ्रमर'

यादोंकी परछाइयाँ

लेखक : आचार्य चतुरसेन; प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन, चावड़ी बाजार, दिल्ली-६। पृष्ठ : २८४; डिमाई, ७२; मूल्य : २०.०० रु.।

संस्मरण-ग्रन्थोंकी कमी हिन्दी-साहित्यमें जिस कदर है उसे देखते हुए इसतरहका जबभी कोई ग्रन्थ आना है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब उसके प्रति पाठकों-आलोचकोंकी उत्सुकता आवश्यक रूपसे बढ़ जाती है। पिछले दिनों बच्चनकी ऐसीही कृतियों पर जितना शोर मचा शायद ही किसी अन्य कृतिपर। इसका कारण मात्र इतना ही है कि किसीभी लेखकके जीवनके प्रति लोगोंमें एक विशेष प्रकारकी उत्सुकता होती है। साधारण व्यक्ति एक लेखकको अतिमानव समझता है और वह यही सोचता है कि लेखकके जीवनमें जो कुछ भी होता-घटता है, या घटा, वह विचित्र ही होना चाहिये। इसतरहकी मान्यताएँ उन लेखकोंके बारेमें और ज्यादा बढ़ जाती हैं जो अपनेको साहित्यके किसी क्षेत्रमें खम्भेकी तरह गाड़ लेते हैं।

आचार्य चतुरसेन एक ऐसेही व्यक्ति थे जिनके बारे में तरह-तरहकी बातें—विचार—लोगोंके मनमें उठती थीं। अबभी उठती हैं। इसका कारण यही रहा है कि साहित्य का शायदही ऐसा कोई कोना अछूता बचा होगा जिसपर उनकी कलम न चली हो। हर चीज लिखना और खूब जमकर लिखना, यही उनकी खूबी थी। और इस लिखने के दौरान वैद्यक जैसा काम करना शायद उनके लेखन को और बढ़ावा ही देता रहा होगा। पर अपने लेखन-कालमें उन्होंने बहुत कुछ देखा-सुना-सहा और वही बहुत कुछ 'यादोंकी परछाइयाँ' में सिमट आया है।

वे जीवनमें बराबर संघर्षरत रहे। पर हर तरहके कष्टों, तकलीफोंके बावजूद कभी हार न मानी और तभी वे इस संस्मरणकी शुरुआत इन पंक्तियोंसे कर सके—'मैं एक आहत किन्तु अपराजित योद्धा हूँ।' और इस अपराजेयता ने ही उनके अन्दर वह साहस पैदा किया जिसके बलपर वे कह सके—'मैं दुख और सुख, दोनोंकी सम्पदासे सम्पन्न हूँ। दुख मेरे हृदयमें है और सुख मेरे जीवनके बाहर चारों तरफ। मेरा दुख बहुत मूल्यवान् है।'

'यादोंकी परछाइयाँ' शीर्षक जितना रोमाण्टिक है, इसकी सामग्री भी पढ़नेवालोंके मनमें उसीतरहकी एक रोमाण्टिकता—लेखनके प्रति—भर देती है। अपने दीर्घ जीवनमें चतुरसेनजीने बहुत लिखा, यह एक गौण बात है, इस लिखनेके पीछे किन तत्वोंका हाथ रहा, यह जानना मुख्य बात है और इसी बातको समझनेके लिए इस किताब का पठन आवश्यक है। आत्मप्रशंसा और आत्मश्लाघाके बावजूद शास्त्रीजीने अपने बारेमें जो लिखा है, वह प्रशंसनीय है। उनकी जिन्दगीमें छोटा-बड़ा जो भी आया, उन्होंने छोटे-बड़े जो भी कर्म किये, सबका सही और यथार्थ उल्लेख यहाँ प्राप्त है। उनकी लेखनी एक व्यक्तिसे—एक चरित्रसे—दूसरे व्यक्तितक—दूसरे चरित्रतक—इसतरह दौड़ मारती है जैसे पंक्तिबद्ध आदमियोंको कोई बच्चा छू रहा है। एकके बाद एक, न जाने कितने लोगोंकी परछाइयाँ सामने उभरती आयी हैं और चित्रकारकी कूँची रंगमें लिपटती उन सब परछाइयोंको एक 'स्केच' में बाँधती गयी है, चित्रित करती गयी है। पिता-माता-भाईसे शुरूकर यह फिल्मी रील राजाओं-महाराजाओंतक पहुँच गयी है। पर इन चित्रोंको छूकर सन्तोष पानेका अहसास नहीं होता। इन्हें देखकर कुछ महसूस नहीं होता, बल्कि सामने पर्देपर एक-एक कर फिसलते चेहरोंकी तरह ये चेहरे भी फिसलते जाते हैं और लेखक कठपुतली नचाने वालेकी तरह एक जगह खड़ा रहता है—हाथमें सूता सँभाले हुए। मुकन्दा पकौड़िया, श्यामा पकौड़िया, चन्दा बनिया, भूटिया ब्राह्मण, बद्री प्रसाद कम्पाउण्डर, हेडमास्टर श्री बालकराम, छोटेलाल वकील, हरिश्चन्द्र और शान्तिस्वरूप भटनागर (जगप्रसिद्ध वैज्ञानिक), हैदराबादकी बेगम, नैपाल-नरेश तथा औरभी न जाने कितने अनगिनत चेहरे हैं जिनकोएकके बाद एक लेखक अपने उपयोगमें लाता जाता है। लेखकने इन सारे लोगोंको और परिस्थितियोंको अपने उपयोगमें ही लिया है, यह निस्संकोच कहा जा सकता है। बचपनसे कविता लिखनेका शौक अगल-बगलमें चर्चित तो उन्हें करता ही है, भविष्यके लिए भी एक मार्ग खोल देता है और चतुर सेन साधारण विद्यार्थीसे आचार्यत्वतक पहुँच जाते हैं।

'यादोंकी परछाइयाँ' कुछ ऐसी बातोंको भी स्पष्ट करता है जो अन्यत्र कहीं नहीं मिलतीं। ये ऐतिहासिक महत्वकी बातें हैं। उदाहरणस्वरूप नैपाल। अंग्रेजोंके प्रति नैपालकी जो भक्ति थी, उसका उचित कारण क्या था, शायद यह इतिहास-वेत्ताओंकी जानकारीमें भी न हो, पर चतुरसेनने इसे स्पष्ट किया है। नैपाल राज्य प्रतिवर्ष पहली जनवरीको बीस लाख रुपये नकद अंग्रेज सरकारसे लेता है। नैपाल राज्य अंग्रेजोंका मित्र बने रहने मात्रकी प्रतिज्ञा पूरी करने और सीमा निश्चित रखनेके बदले यह रकम पाता है। यह कथन नैपालके राजदूत धनविक्रम बहादुर राणा सी० आई० ई० कमाण्डर राणासाहेबका है इसलिए इसकी सत्यताको नहीं नकारा जा सकता। इसीतरह और भी कई तथ्योंका उल्लेख 'यादोंकी परछाइयाँ' में है।

आचार्य चतुरसेन लेखक-चिकित्सक होनेके साथ-साथ एक अच्छे चिन्तक भी थे और उनकी चिन्ता-धाराका प्रमाण यह ग्रन्थ है। इसमें जगह-जगह वे कई प्रश्नोंको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उठाते हैं और उनका समुचित उत्तर खोजते हैं। कुछ स्थल तो ऐसेभी हैं जो उनके कथनको सत्य सिद्ध करनेके लिए और प्रमाणोंकी माँग करते हैं, जैसे--'प्रायः धनवानोंके हृदयमें अपने स्त्री-पुत्रोंके लिए भी वह प्यार नहीं होता जो गरीबोंके हृदयमें होता है। इसका कारण शायद यही है कि गरीब परिवार परस्पर त्याग और बलिदानसे जीवन व्यतीत करते हैं और अमीर सुख और आरामसे। मैं विश्वास नहीं कर सकता कि धनिक समाज रूढ़ियोंका तिरस्कार करनेवाले पुरुषोंको पैदा कर सकता है।' ऐसी मान्यताओंका कोई आधार आचार्यके पास है, नहीं कहा जा सकता। ऐसे व्यक्तियोंका प्रमाण बहुतेरे हम पाते हैं जो धनिक होते हुए भी रूढ़िग्रस्त नहीं हैं।

वैसे चतुरसेनकी भाषाकी खूबी है कि 'यादों' को भी उन्होंने रोचक और मनोरम बना दिया है। उपन्यासकी-सी रोचकता और पठनीयता है इस पुस्तकमें और यही कारण है कि कहींभी आदमी ऊब महसूस नहीं करता, जैसाकि अक्सर 'जीवन-चरित' पढ़ते हुए होता है। औपन्यासिकता इस कृतिकी महत्ता है और यही कारण है कि आज भी यह कृति इतनी महत्वपूर्ण लगती है जबकि इसका लेखन-काल '५५-'५६ है। इसका प्रथम संस्करण '५६ में प्रकाशित हुआ था और तब इसकी भूमिकामें आचार्यने लिखा था, जो ७२ के इस संस्करणमें भी प्राप्त है —'पचास वर्ष पूरे हो रहे हैं कि मैं एकही कलमसे लिख रहा हूँ। अभी भी मेरी कलममें काफी स्याही है और मेरी उँगलियाँ मजबूतीसे उसे पकड़े हुए हैं।' हालाँकि उनकी पकड़ ढीली पड़ गयी, कलम हाथसे छूटकर गिर गयी, पर उनका लेखन अपना एक इतिहास बना गया, भलेही दलबन्दी और पक्षपातके कारण आलोचकोंकी नजर उनतक न पहुँची हो या पहुँचकर भी उनतक न अड़ी हो, जिसका अफसोस उन्हें भी था, फिरभी वे लिखनेसे कभी पीछे न रहे और उन लोगोंसे ज्यादा बेहत रलिख गये वे, जिनकी चर्चा तो है, पर कलम हर महीने बदल जाती है; फिरभी रचना तैयार नहीं हो पाती।

पुस्तकके अन्तमें आचार्यकी मौतके बारेमें उनके अनुज श्री चन्द्रसेनद्वारा वर्णन है जो हृदयग्राही है, साथही मार्मिक भी। अपनी सफलताओं और बड़प्पनकी अत्यधिक चर्चाके बावजूद आचार्यने 'जीवनी' ग्रन्थोंके बीच एक अमूल्य कृति प्रदान की है, जो बार-बार पठनीय हैं।

—सुरेन्द्र तिवारी

स्वामी रामतीर्थ और उनकी कविता

लेखिका : डॉ. उर्वशी सूरती; प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन, २०५ चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-६। पृष्ठ : १६५; डिमाई, ७२; मूल्य : १२.०० रु.।

भारतके नवजागरण-कालमें स्वामी रामतीर्थ भी एक तेजस्वी व्यक्ति थे। राममोहनरायसे लेकर सुभाष बोस तक तथा स्वामी दयानन्द सरस्वतीसे लेकर रमण महर्षितक— नवजागरण-नवचेतना कालके अनेक उदात्त व्यक्तियोंमें स्वामी रामतीर्थ, पंजाब-प्रसूत ऐसे महापुरुषोंमें अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। पंजाबियोंने अपने इस नररत्न का यथायोग्य मान सामूहिक रीतिसे नहीं किया —यह खेद की बात है। गुजरातवासिनी एक विदुर्षी महिला अपने एक मार्गदर्शक पति-संन्यासीसे प्रेरणा और आशीर्वाद पाकर ऐसा उत्तम ग्रन्थ लिखे--यह अभिनन्दनीय और स्पृहणीय बात है।

स्वामी रामतीर्थ, स्वामी विवेकानन्दसे प्रभावित थे। विवेकानन्दजीके गुरु परमहंस रामकृष्णजी स्वामी दयानन्द से भी कुछ प्रभावित थे। स्वामी रामतीर्थ किसी समय दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालिजमें भी सेवा करनेको इच्छुक हो गये थे—पर उन दिनों आर्यसमाजके कलहको देखकर उदासीन हो गये। धार्मिक-आध्यात्मिक क्षेत्रमें राममोहन राय, देवेन्द्रनाथ ठाकुर, केशवचन्द्र सेन, स्वामी विरजानन्द, स्वामी दयानन्द, परमहंस रामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द, ब्राह्मसमाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण मठ-मिशन, थियोसोफिकल सोसाइटी, सनातन धर्म सभा, तथा सिंहसभा आदि एक-दूसरेको प्रभावित कर रहे थे और इसी प्रकार स्वामी रामतीर्थ भी अपने देश-काल, परिस्थिति-वातावरण एव आन्दोलन आदिसे स्पष्ट रूपसे प्रभावित थे।

लेखिकाने स्वामी रामतीर्थके जीवन-चरित खण्डमें विक्रमी १९३० में पंजाबके गुजराँवाला जिलेके मुरारीवाला गाँवमें ब्राह्मण कुलमें उनका जन्म, आरम्भिक शिक्षा, सन्त एवं नैष्टिक ब्रह्मचारी भक्त धन्नारामजीके संसर्ग, सत्संग, छाया, मार्गदर्शन, निरन्तर पत्रव्यवहार आदिका सुस्पष्ट यथास्थान वर्णन करके संस्कारी-तेजस्वी, कुशाग्र बुद्धि, ब्रह्मपरायण, अद्वैतसिद्धान्ती, वेदान्ती इस उदीयमान 'तीर्थराम' तरुणका सुन्दर वर्णन किया है। १४ वर्ष ५ मास की आयुमें एण्ट्रेस पास करना, धनकी कमी होनेपर भी एम. ए. तक गणितकी शिक्षा पाना, साथही धार्मिक-आध्यात्मिक ग्रन्थोंका स्वाध्याय, ध्यान आदिका अपने अन्दर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकास, गंगा-यमुनाके तुल्य सांसारिक-आध्यात्मिक, दोनों धाराओंका साथ-साथ मिलकर बहना, यह तीर्थरामजीके जीवनका मोहक चित्र है। तीर्थरामजीका विवाह १०वर्षकी आयुमें हो गया था। सन्तानें भी हुई। माताका देहान्त तो जन्मके बाद ही हो गया था। फूफी और बड़ी बहनने लालन-पालन किया। क्या जन्म देकर जननी अपने होनहार शिशु-पुत्रको ममताकी डोरी तोड़कर संसारसे वैराग्य का उपदेश देनेको यह संसार छोड़ चल बसीं? तीर्थरामजी अपनी सहधर्मिणीको भी आध्यात्मिक मार्गपर चलाते थे। तीर्थरामजीको हिमालयमें रहना, सन्तों-योगियोंसे मिलना और ध्यान-समाधि-स्वाध्याय बहुत प्रिय था। कुछ वर्ष मिशन कालिज, लाहौरमें प्रोफेसर रहे। अध्यापन कालमें प्रो. तीर्थरामने अपने छात्रोंपर जो प्रभाव छोड़ा, उसकी पुस्तकमें चर्चा बहुत कम है। इस लेखककी एक बार एक मुसलमान सज्जनसे भेंट हुई, जोकि उनके शिष्य रहे थे, उन्होंने अपने इस पूर्व-अध्यापकका जिन शब्दोंमें स्मरण किया, उन्हें ध्यानमें रखते हुए कहा जा सकता है कि वे एक लोकप्रिय अध्यापक थे।

यद्यपि लेखिकाने सरदार पूर्णसिंहका ग्रन्थमें स्वामी रामतीर्थके शिष्य और भक्त रूपमें उल्लेख किया है और टिहरीके राजाकी सहायतासे जब स्वामी रामतीर्थ जापान सर्वधर्म सम्मेलनमें गये तो सरदार पूर्णसिंहने भक्ति-भावसे उनकी सेवा की—यह भी बताया है। पर सरदार पूर्णसिंह ने स्वामी रामतीर्थका जीवनचरित लिखा था, और उसमेंसे लेखिकाने कितनी सहायता ली—इसका विवरण उद्धरणों सहित ग्रन्थमें उल्लेख करना चाहिये था। वह एक प्रामाणिक, सन्तुलित और गम्भीर चरित है।

विदुषी लेखिकाने पुस्तकके द्वितीय खण्डमें स्वामी रामतीर्थकी रचनाओंकी मीमांसा की है। स्वामीजी पंजाबी, हिन्दी, उर्दू, फारसी, अंग्रेजी में कविता करते थे, संस्कृतभी जानते थे। वे कवि-हृदय थे, और विशाल-हृदय तथा प्रतिभाशाली थे। तरुणाईमें ही कविता करने लगे थे। लेखिकाने गुजराती होते हुए भी स्वामीजीकी इन सब भाषाओंकी कविताओंके उद्धरण अर्थ-सहित दिये हैं। यह प्रयास, भक्तिसाध्य, श्रमसाध्य, ज्ञानसाध्य और स्वाध्यायसाध्य है तथा अभिनन्दनीय है। स्वयं लेखिका ने कवयित्रीका हृदय पाया है। स्वामीजीकी कविताओं की मीमांसामें उनकी भाषा ललित, सरस और प्रवाहमयी है। लेखिकाका कहना है—"स्वामी रामके ज्ञानपूर्ण प्रवचन, ब्रह्मानन्दसे उल्लसित काव्यकी निधि हैं। उनकी उत्कट तपस्या, परिश्रम और लगनके परिणामस्वरूप आजभी उनके प्रेमी रसिकहृदय पाठक परमानन्दमें डूबते-उतराते हैं। उनका प्रत्येक शब्द जीवन्त, ज्वलन्त शक्तिका, आनन्द का, ज्ञानका प्रतीक है जो किसीभी सहृदयके मर्मको स्पर्श किये बिना नहीं रहता।" फिर लिखती हैं "वास्तवमें वे (स्वामी रामतीर्थ) सूर्य-चन्द्र और समस्त सृष्टिको अपने आत्मा की ज्योतिसे प्रकाशित देखते थे। उनकी प्रतिभाके स्पर्शसे सब कुछ दिव्य, नूतन और आलोकमय हो जाता था।"

लेखिकाके अनुसार स्वामी रामतीर्थ वेदान्तमय थे। औपनिषद वेदान्त, शंकराचार्यजीकी दार्शनिक दृष्टि, मस्ती, कविहृदय, नाना भाषाओंपर प्रभुत्व, श्रवण, मनन और निदिध्यासन—मिलकर ऐसा प्रबल प्रवाह उत्पन्न करते हैं, मानो चिरकालसे भूमिके अन्दर अवरुद्ध निर्मल, मधुर, शीतल जलका झरना आकुल-व्याकुल होकर बाहर फूट पड़ा हो। पुस्तकमें दिये गये छुट-पुट 'उद्धरण' हृदयस्पर्शी हैं, अपने-अपने स्थानपर निबद्ध कविताओंकी शक्ति तो समस्त ग्रन्थोंके पढ़नेसे ही विदित और अनुभूत हो सकती है। यद्यपि ग्रन्थ छोटा है पर लेखिकाने स्वामी रामतीर्थके ग्रन्थों से गद्यमें भी इतने उद्धरण दिये हैं कि ग्रन्थ स्वयं ज्ञानमय और काव्यमय तथा वेदान्तमय हो गया है। पुरातन वेदान्त, ब्रह्मानन्द और आधुनिक प्रवृत्तियोंका मिश्रण भी स्वामी रामतीर्थ करते रहते थे।

लेखिकाने स्वामीजीके गहरे, व्यापक विचारोंको आत्मसात् करके ग्रन्थमें अच्छे उद्धरण दिये हैं। स्वामीजीको वेदान्त, व्यावहारिक वेदान्त, मनोविज्ञान, कला, गणित; सूक्ष्म विचारका मिश्रण, आनन्दमयता, तृप्ति, मस्ती, अभिधा, बहुत प्रिय थे। वे प्रकृति-प्रेमी थे और इससे उनके कविहृदयको प्रेरणा मिलती थी। लेखिका स्वामीजीके ऐसे गुणों का विशद वर्णन स्थान-स्थान पर करती हैं। स्वामी रामतीर्थ के वचनोंमें उपनिषद् शैलीकी गन्ध आने लगती है। कभी-कभी विदुषी ग्रन्थकर्त्री स्वयं भी स्वामी रामतीर्थकी वचनशैलीमें स्नान करने लगती हैं—वह भी एक गुजराती कन्या होकर ठेठ हिन्दीका ठाठ प्रदर्शित करती नजर आती हैं।

केवल ३३ वर्षकी आयु लेकर स्वामी रामतीर्थ इतना उदात्त, इतना अधिक काम कर गये। आश्चर्य होता है! वे स्वयं ही ब्रह्मके भक्त हैं, उन्हें ऐसी दिव्यशक्ति उपहारमें मिल गयी हो तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? ऐसे शक्तिशाली उदात्त महापुरुषोंके चरित और वचनोंकी खोज, स्वाध्याय और मनन विद्यार्थी और जिज्ञासुका धरातल ऊँचा उठा देते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविहृदया, भक्त और विदुषी लेखिका ने स्वामी रामतीर्थके चरित और कविताका परिचय देकर अपना कर्तव्य निभाया है। गहरा न पैठ पानेवाला पाठक इस ग्रन्थकी भाषा, भाव और विचारोंमें प्रथम वाचनमें पूरा आनन्द ले सकेगा। धैर्य और दूसरी-तीसरी बार पढ़ने की जरूरत है।

घटनाओंकी मात्रा, उनका कालके साथ आगे-आगे उभरना, साथ-साथ तारीखोंका देना, आरम्भमें विषयों-परिच्छेदोंकी सूची, कविताका कालक्रमसे विकास, पुस्तक-सूचीमें सरदार पूर्णसिंह लिखित चरितका उल्लेख भी चाहिये। स्वामी रामतीर्थके जीवनकालमें पंजाबकी स्थिति, वहाँकी परम्पराएँ, तत्कालीन विविध भारतीय आन्दोलन और समाज--इनके वर्णनसे ग्रन्थकी पृष्ठभूमि अधिक सांगोपांग हो सकती है। फिरभी ग्रन्थ स्तुत्य, अभिनन्दनीय है, वर्तमान युगकी नयी पीढीके लिए मार्गदर्शक है, पुरानी पीढ़ियोंके लिए आनन्ददायक है।

—पं. आत्मानन्द

प्रमथ चौधुरी

लेखक : अरुणकुमार मुखोपाध्याय; अनुवादक : कमलेश; प्रकाशक : साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन, ३५, फिरोजशाह रोड, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : ७१; डिमाई, ७२; मूल्य : २.५० रु. ।

प्रस्तुत ग्रन्थमें बँगला-साहित्यके यशस्वी साहित्यकार प्रमथ चौधुरीके व्यक्तित्व एवं साहित्यिक कृतित्वका मूल्यांकन प्रस्तुत करनेका प्रयास है। प्रमथ चौधुरीके संक्षिप्त जीवन-वृत्तके साथ लेखकने उनकी 'जयदेव,' 'खेयाल खाता' जैसी गद्य-रचनाओं और 'सानेट पंचशत' और 'पदचारण' जैसी काव्य-कृतियोंका परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत किया है। इसी सन्दर्भमें साहित्यकारकी रचना-प्रक्रियाके स्पष्टीकरणके निमित्त पृष्ठभूमिके रूपमें उसकी परिवर्तनशील मानसिकताका भी आकलन किया गया है और उसकी 'कैफियत,' 'आत्मकथा' एवं 'पूरवी' शीर्षक तीन कविताओंको उद्धृत करते हुए उसकी काव्यात्मक विशिष्टताओंका उद्घाटन किया गया है। एक स्वतन्त्र निबन्धके माध्यमसे प्रमथ चौधुरीद्वारा सम्पादित पत्रिका 'सबुज पत्र' के मूल्यांकन-क्रममें उसमें निहित वैचारिकता, व्यंग्यात्मकता, लोकपरक दृष्टि और सांस्कृतिक चेतनाको ऊर्ध्वमुखी बनानेकी अर्थवान् शक्ति आदि महत्वपूर्ण विशिष्टताओंका भी विवेचन है। लेखकने प्रमथ चौधुरीकी सर्वोत्कृष्ट कथाकृति 'चारयारी कथा' की विषय-वस्तुके साथही उसकी रोमानी भावना, मार्मिकता, संवेदनशीलता एवं कलात्मक उत्कृष्टता आदि साहित्यिक विशिष्टताओंकी विश्लेषणात्मक मीमांसा की है। प्रमथ चौधुरीकी गहन चिन्तनशीलताको उनकी सामाजिक और राजनीतिक रचनाओंके सन्दर्भमें स्पष्ट करनेका प्रयास है, उनकी पाश्चात्य सभ्यताकी आत्माको पहचाननेवाली सजगता एवं सामर्थ्य, सार्वदेशिक राजनीतिक चिन्तन तथा उदात्त राष्ट्रीय चेतनाकी खोजपूर्ण विवेचना है।

लेखकने श्री चौधुरीकी 'चारयारी कथा' के अतिरिक्त अन्य कहानियोंपर स्वतन्त्र रूपसे विचार किया है, उनकी कथा-रचनाकी मूल प्रेरणाओंकी तलाश की है और इस प्रकार उनकी कहानियोंमें व्याप्त सौन्दर्य-भावनाकी अवस्थितिका रहस्योद्घाटन किया है। लेखकका यह विश्लेषण श्री चौधुरीकी कहानियोंकी दुखान्त प्रकृतिके अतिरिक्त उनमें निहित कथा-वक्ताओंके अतिरिक्त श्रोताओंकी भूमिका पर भी प्रकाश डालता है। चौधुरीकी कहानियोंमें इन कथा-श्रोताओंका महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि ये श्रोता यथार्थ जगत् और कल्पना-लोकके बीच एक सेतुका निर्माण करते हैं। इस निबन्धमें प्रमथ चौधुरीकी कहानियोंमें व्याप्त सौन्दर्य, कल्पना और मानवीयताकी समन्वित उपस्थितिके साथही उनकी कतिपय प्रमुख अभिव्यञ्जनामूलक विशिष्टताओंपर भी प्रकाश डाला गया है। लेखकने उनके कला और संस्कृतिविषयक निबन्धोंका बड़ाही सूक्ष्म अध्ययन प्रस्तुत किया है, उनकी सौन्दर्यशास्त्रीय मान्यताओंकी विश्लेषणात्मक ढंगसे विवेचना की है और यह भी स्पष्ट किया है कि वे किसप्रकार सामाजिक मूल्योंके आकलन-क्रममें शिष्टता और संस्कृतिको अत्यधिक मूल्य प्रदान किया करते थे।

अन्तमें बंगालके पुनर्जागरणके सन्दर्भमें प्रमथ चौधुरी के व्यक्तित्वकी महनीय उपलब्धियोंके मूल्यांकन करनेका प्रयास है और यह स्पष्ट किया है कि उन्होंने न केवल साहित्यमें व्यक्तिको प्रतिष्ठित किया, चलित बँगला-भाषा को साहित्यिक मूल्य प्रदान किया, कथ्य और शैलीकी नयी संरचनाकी तथा जीवन और साहित्यकी स्वतन्त्रताकी उद्घोषणा की वरन् अपने प्राणवादी दर्शनके माध्यमसे यह गम्भीर सन्देश दिया कि हमारा लक्ष्य मानसिक जड़ता से निकलकर सामाजिक, शारीरिक और राजनीतिक मुक्ति के लोकमें उदित होना है। इसतरह लेखकने पुस्तकके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तमें अपनी यह धारणा व्यक्त की है कि बँगला साहित्य अपने साहित्य-स्रष्टा प्रमथ चौधुरीद्वारा उद्घाटित लोकों पर चलते हुए बौद्धिक स्वतन्त्रता और मानसिक मुक्तिकी प्राप्तिके लिए सतत्, सचेष्ट और क्रियाशील बना रहेगा।

जहाँतक आलोच्य पुस्तककी शैलीका प्रश्न है, यह स्वीकार्य होगा कि इसमें विषयवस्तुकी प्रतिपादन-सामर्थ्य निहित है और इसके लिए प्रयुक्त भाषा अत्यधिक सशक्त एवं प्रभावपूर्ण है। पुस्तककी उत्कृष्टताका एक कारण उसकी अर्थव्यञ्जक भाषा भी है। अनुवादककी समर्थ भाषा पुस्तकको सहजही मौलिक रचनाका प्रभाव प्रदान करती है।

—डॉ. विपिनबिहारी ठाकुर

श्री अरविन्दका जीवन-दर्शन

लेखक : इन्द्रसेन; प्रकाशक : सस्ता साहित्य मण्डल, कनाट सरकस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ११४; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.५० रु.।

दक्षिणकी सरस्वती

लेखक : चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य; अनुवादिका : लक्ष्मी देवदास; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : ४९; क्राउन, ७२; मूल्य : २.०० रु.।

पुस्तकके सीमित पृष्ठोंमें लेखकने बड़ेही मनोयोगसे एक महान् क्रान्तिकारी सन्त एवं योगिराज अरविन्दके दर्शनका सार बड़ेही सुन्दर रूपमें प्रस्तुत किया है। श्री अरविन्द भारतके उन सरल एवं मेधावी महापुरुषोंमेंसे हैं जिन्होंने मानव-जीवनके चरम लक्ष्यकी खोज की है। प्रस्तुत पुस्तकको ३ भागोंमें विभक्त किया गया है : (१) श्री अरविन्दका जीवन-दर्शन, जिसमें ५ उप-शीर्षक हैं। (२) दर्शनकी यथार्थ भावना, जिसमें ४ उप-शीर्षक हैं। (३) श्री अरविन्द : विश्वदर्शन।

लेखकने भारतीय दर्शन और संस्कृतिके साथ ही पश्चिमके दर्शन और संस्कृतिपर भी विचार व्यक्त किया है। वेदों एवं यूनानी विचारकोंमें समानताको भी स्पष्ट किया है। "पश्य देवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति" (देख, यह देवका रचा हुआ प्रकृतिका काव्य जो नित्य नया और ताजा रहता है), प्लेटोके अनुसार : दर्शनका जन्म आश्चर्य होता है और हर्बटके अनुसार : शंकासे। अरविन्दके अनुसार : मानव पूर्णयोगका अनुशीलन करके समग्रताको प्राप्त कर सकता है।

पाश्चात्य-दर्शन प्रधानतः बौद्धिक गवेषणा है। इसके विपरीत भारतीय-दर्शन सत्ताविषयक किसी आध्यात्मिक अनुभूतिसे मन-बुद्धि को, मन-बुद्धिकी ही युक्ति और भाषामें परिचित करानेका प्रयास है। जगतके विकास-क्रमके सम्बन्धमें मत व्यक्त करते हुए लिखा है कि जड़, उद्भिज, पशु और मनुष्यमें एक अनवरता क्रम है, एक विकास है।

इसमें शंकराचार्य, रामानुज, वल्लभ, माधव, डॉ. राधाकृष्णन, डॉ. दत्त, चटर्जी एवं कोकिलेश्वर शास्त्री आदिके मतोंका समीक्षात्मक विवेचन करते हुए अरविन्दके दर्शनको विशेष महत्व दिया गया है। दर्शनकी परिभाषामें कहा है : दर्शन जीवन और सत्ताके समग्रकी खोज तथा उपलब्धि है। लेखकने अन्तमें यूनान, भारत, चीन एवं आधुनिक पश्चिमी जगतके दर्शनोंकी विभेदात्मकतापर भी प्रकाश डाला है। साथही समन्वयात्मक प्रवृत्तिके अनुसार विश्व-दर्शनका समारम्भ बताया गया है जिसके प्रतिष्ठापक हैं श्री अरविन्द।

दार्शनिक मत-मतान्तरोंके कारण भाषामें कहीं-कहीं क्लिष्टता आ गयी है। पर प्रश्नोत्तरात्मक शैलीके कारण वह सरल-सुबोध हो गयी है। इसप्रकार लेखक अपने गहन अध्ययन एवं सतत साधनासे अत्यन्त गूढ़ एवं रहस्यात्मक तथ्योंको सीमित पृष्ठोंमें व्यक्तकर सामान्य जनताको उपलब्ध करानेमें सफल हुआ है।

× × ×

'दक्षिणकी सरस्वती' औवै तमिलकी महान् कवयित्री थीं। वे अछूत माता और सवर्ण जातिके मानवकी प्रथम सन्तान थीं। उस बालिकाको सरस्वतीका अवतार माना गया। यद्यपि तमिल प्रदेशमें उसके नामपर न कोई मन्दिर है और न कोई मूर्ति। फिरभी उसके लिखित ग्रन्थोंका प्रत्येक तमिल व्यक्ति पाठ करता है। लेखकने उनके जीवन-परिचय, काव्य, विभिन्न रसधाराओं, ज्ञानबोध, सुन्दर उपमाओं, उपदेश एवं जीवन-दर्शनपर अत्यन्त सूक्ष्म रूपसे प्रकाश डाला है। इस छोटी-सी पुस्तकमें औवैकी लगभग ५० कविताओंका सार दिया गया है। निर्भीक एवं उदारमना 'औवै' का समन्वयवादितामें अटूट विश्वास था। परिश्रमशील व्यक्ति (किसान) की प्रशंसामें अनेक छन्दोंका निर्माण कर शिक्षा प्रदान की गयी है। व्रत-उपवासकी महिमाका इसप्रकार गायन किया है :

"कर-करके उपवास संतजन सुखा डालते हैं निजकाया,
पर उससे उनके चेहरेपर कई गुना है, तेज चमकता।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीति एवं उपदेशपरक उक्तियाँ वेदवाक्यके समान मानी गयी हैं। निष्काम प्रवृत्तिसे ही किसीभी कार्यमें लग जाना 'औवँ' का जीवन-दर्शन है। इसप्रकार एक आदर्श, निर्भीक कवयित्रीका परिचय इस पुस्तकमें विद्यमान है। अनुवादकी भाषा रोचक एवं सरल है। अनुवादभी सुन्दर एवं मौलिकका-सा रसास्वादन करानेमें समर्थ है। साज-सज्जा एवं आवरणपृष्ठकी कला अत्यन्त आकर्षक है।

—डॉ. रामाभिलाष त्रिपाठी

आलोचना साहित्य

तुलसीका काव्यादर्श

लेखक : डॉ. सुरेशचन्द्र गुप्त; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य संसार, १५४३, नई सड़क, दिल्ली-६। पृष्ठ : ११२; डिमाई, ७२; मूल्य : १०.०० रु.।

मधुमालतीका काव्य-सौन्दर्य

लेखक : डॉ. दर्शनलाल सेठी; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १८०; डिमाई, ७२; मूल्य : १५.०० रु.।

प्रत्येक प्रतिभाशाली कवि समीक्षक नहीं हुआ करता, किन्तु काव्य-रचना करते समय काव्यके प्रति उसका निजी दृष्टिकोण अवश्य रहा करता है, जिसे सूक्ष्म विश्लेषणद्वारा उसकी कृतियोंमें देखा-परखा जा सकता है। हिन्दीके भक्तिकालके कवियोंकी काव्य-विषयक दृष्टि संस्कृतके काव्यशास्त्रका अनुसरण-मात्र न करके नये प्रतिमानोंकी प्रतिष्ठामें कृतसंकल्प अवश्य थी। प्रस्तुत पुस्तक डॉ० सुरेशचन्द्र गुप्तके इस दिशामें किये गये सन्धानका प्रतिफल है।

लगभग १०० पृष्ठोंकी सामग्रीको लेखकने छह अध्यायोंमें विभाजित करके प्रस्तुत किया है। प्रथम अध्यायमें काव्य-प्रयोजन, द्वितीयमें काव्य-हेतु, तृतीयमें काव्य-वर्ण्य, चतुर्थमें काव्यरूप, पंचममें काव्य-शिल्प तथा षष्ठमें अन्य काव्यांगोंपर गोस्वामी तुलसीदासके काव्य-विषयक दृष्टिकोणको देखा-परखा गया है। इन शीर्षकोंको देखनेसे पता चलता है कि लेखकने अपने परीक्षणकी रूप-रेखा परम्परागत संस्कृत काव्यशास्त्रको अपने सामने रख कर बनायी है, जिसमें विवरणकी प्रधानता है, विश्लेषण और निश्चित निष्कर्षोंतक पहुँचनेका प्रयास अपेक्षाकृत कम ही हुआ है। कथनकी पुष्टिमें उसने जो उदाहरण दिये हैं, वे युक्तिसंगत तथा असंगत, दोनों प्रकारके हैं। उदाहरणार्थ, आनन्दकी प्राप्तिके प्रयोजनकी स्पष्टताके लिए 'भाषाबद्ध करबि मैं सोई। मोरे मन प्रबोध जेहि होई।' वाला उदाहरण तो सटीक है, किन्तु निम्नलिखित उदाहरण विचारणीय है।

प्रेम पुलकि आनन्द मुदित मन, तुलसीदास कीरति गैहैं।

इसका अर्थ होगा प्रेमसे पुलकित और आनन्दसे मुदित होकर तुलसीदास रामकी कल कीर्तिका गान करेगा। 'पुलकित' तथा 'मुदित' शब्द मनकी स्थिति-विशेषके द्योतन के लिए हैं और विशेषणके रूपमें आये हैं, जिनमें कवि रामकी कीर्ति गानेका आश्वासन देता है किन्तु आनन्दकी प्राप्तिके प्रयोजनका भाव इस उक्तिसे प्रकट नहीं होता। पूरा पद देखनेसे भी पता चलता है कि इसमें त्रिजटा सीताको सम्बोधन एवं आश्वासन देते हुए उन्हें समझाती है। इसीप्रकार पृष्ठ २० पर अंकित तुलसीकी उक्तियाँ परिणाम या फलकी सूचक हैं या उनमें से एक-आध रामकथाकी विशेषताकी द्योतिका हैं (यथा—पृष्ठ २० इ, ई)। यही स्थिति भक्ति प्रवृत्तिके प्रयोजनके सम्बन्धमें भी निष्पन्न होती है। वैसे उपशीर्षकोंके अन्तर्गत अनेक उद्धरणोंको सँजोनेमें लेखकने सराहनीय श्रम किया है।

काव्य-हेतुसे सम्बन्धित विवेचनमें लेखककी मौलिकता तथा विवेचनगत सजगता दृष्टिगोचर होती है। उसने तुलसीकी काव्य-दृष्टिके अनुसार चार हेतु माने हैं : प्रतिभा-जनित विवेक और प्रभु-प्रसाद, गुरु कृपा और सत्संगति,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रन्थानुशीलन तथा काव्य-शिक्षा। अध्यायके अन्तमें लेखक ने जो निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं, वे तुलसीकी काव्यचेतनाके अनुशीलनमें अत्यन्त सहायक कहे जायेंगे। इसीप्रकार काव्य के वर्ण्यको सात उपशीर्षकोंद्वारा भली भाँति प्रस्तुत किया गया है।

काव्यके रूपको लेकर तुलसीके काव्यादर्शका जो सन्धान किया गया है, उसे पढ़कर अधिकांशतः निरर्थक प्रयासका आभास मिलता है। तुलसीने अपने प्रबन्ध संगठनके अन्तर्गत जिस विशेषताका संकेत दिया है, वह है मानसके चार मनोहर घाटोंका रूपक, जिसमें वस्तु-संगठन का कुशलतापूर्वक निर्वाह, उसका सम्यक् विभाजन, अनुरूप छन्द और नवरसोंकी योजना, महत् उद्देश्यकी सिद्धि आदिका निर्देश किया गया है। अधिकसे अधिक इसके आधारपर तुलसीके दृष्टिकोणका अध्ययन किया जा सकता है जिसकी ओर कम ध्यान दिया गया है। प्रसंग-वैविध्य को कथा-शिल्पकी स्वच्छताके लिए आवश्यक न तो तुलसीदासने माना है और न यह प्रबन्ध संगठनके लिए तबतक सहायक ही कहा जा सकता है जबतक कि वह अधिकारिक कथाको गति देनेमें समर्थ न हो। लेखकके एतद्विषयक मतसे सहमत होना कठिन है। एक और नम्र निवेदन यह है कि तुलसीके प्रत्येक आश्वासनको उनका आदर्श मानना वस्तुगत सत्य नहीं कहा जा सकता। विशेषकर मेरा संकेत इन पंक्तियोंकी ओर है :

कीन्हि प्रस्न जेहि भाँति भवानी।
जेहि बिधि संकर कहा बखानी॥
सो सब हेतु कहब मैं गाई।
कथा प्रबन्ध विचित्र बनाई॥

गीति काव्यके विषयमें तुलसीके दृष्टिकोणको जिन उदाहरणोंके प्रकाशमें खोजा गया है, वह भी उनकी गीति-काव्योंकी विषय-वस्तुको या उनके लोकानुवर्ती रूपके संकेतमात्र देते हैं। काव्य-रूप-विशेषपर यदि उनके पर्याप्त निर्देश नहीं मिलते तो यह आवश्यक नहीं है कि उसके विवेचनके लिए हम बाध्य ही हों।

काव्य-शिल्पके प्रकरणमें भाषा, अलंकार तथा छन्द पर तुलसीके दृष्टिकोणका जो अनुशीलन किया गया है, वह वस्तुतः सन्तोषजनक है। इसीप्रकार अन्य काव्यांग शीर्षकके अन्तर्गत प्रस्तुत विवेचनभी सर्वथा उपयुक्त और उपादेय सामग्रीसे परिपूर्ण है।

समग्रतया देखा जाये तो तुलसीपर जितना कुछ अबतक लिखा गया है, उसमें एक पुस्तकके रूपमें यह अध्ययन भी जुड़ जाता है। तुलसी-साहित्यके अध्ययन और अनुशीलनके क्षेत्रमें ऐसे अनेक ग्रन्थोंकी कमी नहीं है। नये निष्कर्षोंपर पहुँचनेका यत्किञ्चित् प्रयास डॉ. गुप्तने अवश्य किया है। अतः वे हमारे साधुवादके अधिकारी हैं। साथही हमें तुलसीविषयक अनुशीलनमें अबतक अछूते पक्षोंके सम्यक् विश्लेषणसे पूर्ण अध्ययनोंकी अपेक्षा है। यह पुस्तक इस अपेक्षाकी पूर्ति नहीं करती, इतना हम अवश्य कह सकते हैं।

× × ×

मध्यकालीन प्रेमाख्यानोंमें मंझनकृत 'मधु मालती' का एक महत्वपूर्ण स्थान है। जायसीके 'पद्मावत' को छोड़कर शेष काव्य-कृतियोंका स्वतन्त्र अनुशीलन अत्यल्प मात्रा में हुआ है। इतनाही नहीं, वस्तुस्थिति तो यह है कि अभीतक इसप्रकारकी अनेक महत्वपूर्ण कृतियोंके सम्पादन और प्रकाशनतकका कार्य नहीं पूर्ण हो पाया है। हाँ, मंझनकृत 'मधुमालती' के दो सम्पादन तथा दो-तीन समीक्षात्मक अनुशीलन प्रकाशमें आ चुके हैं। डॉ० सेठीका 'कविकी विचार और भावानुभूति तथा अभिव्यञ्जना शिल्प के सर्वांगीण और विशद सौन्दर्य-विश्लेषण' का यह प्रयास निश्चयही सत्संकल्पका परिणाम कहा जायेगा।

पुस्तकके प्रथम प्रकरणमें मंझनके व्यक्तित्वका विश्लेषण किया गया है। इसमें जीवनी-विषयक तथ्योंकी खोज में लेखकने पर्याप्त श्रम उठाकर वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। द्वितीय प्रकरण 'मधुमालती' के सामान्य परिचयसे सम्बद्ध है। प्रारम्भमें मधुमालतीके रचनाकालपर विचार किया गया है जो शोध-उपाधिके लिए किये गये सामान्य कोटिके शोध-प्रबन्धोंके ढंगका है क्योंकि इसमें अनेक विद्वानोंके मतोंके विवरणके उपरान्त किसी एकके निष्कर्षोंकी स्वीकृति मात्र है। इसे संक्षेपमें भी प्रस्तुत किया जा सकता है। तदन्तर उपलब्ध प्रतियोंके संक्षिप्त विवरणके बाद कथावस्तुका संक्षिप्त परिचय और उसकी समीक्षा है। कथावस्तुके अध्ययनका आधार, मुख्य कथानक, कथा-विकासकी अवस्थाओं, मार्मिक एवं भावपूर्ण परिस्थितियोंकी अवतारणा तथा सम्बन्ध-निर्वाह आदिकी दृष्टिसे किया गया है जोकि उपादेय सामग्रीको प्रकाशमें लाता है। मंझनके प्रेमदर्शनका विवेचन सूफी प्रेम-पद्धति को अपने दृष्टि-पथमें रखकर किया गया है। निश्चयही यह महत्वपूर्ण सामग्री तथा उसके सम्यक् परीक्षणको प्रस्तुत करता है किन्तु मानव-जीवनके दृष्टिकोणसे प्रेमके विविध रूपोंका जो निरूपण इस आख्यानक काव्यमें हुआ है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी भी चर्चा यहाँ अपेक्षित है । आलोच्य कविके काव्य-दर्शनको लेकर किया गया विवेचन उद्धरणोंसे संवलित और सन्तोषजनक है ।

चतुर्थ प्रकरणमें मंझनके भाव-सौन्दर्यके निरूपणको रस-वर्णन, रहस्य-वर्णन, रूप-वर्णन, वियोग-वर्णन तथा प्रकृति-वर्णन प्रभृति शीर्षकोंमें बाँटकर प्रस्तुत किया गया है । किन्तु रसविषयक कविकी उक्तिको उसकी काव्य-विषयक विचारधारा मान लेना (पृष्ठ ६३) यहाँ न्याय-संगत नहीं प्रतीत होता । शृंगारके अतिरिक्त अन्य रसोंकी योजनापर लेखकने सम्यक् रूपसे विचार किया है । मंझनके रूप-वर्णनसे सम्बन्धित विवेचन भी प्रमाणपुष्ट सामग्रीसे पूर्ण है । काव्य-सौन्दर्यके शेष उपकरणोंका अनुशीलन भी शास्त्रीय पद्धतिपर हुआ है । अतः इस प्रकरणका समस्त विवेचन एक-आध अपवादोंको छोड़कर सारगर्भित ही कहा जा सकता है ।

पंचम प्रकरण मंझनके शिल्प-सौन्दर्यसे सम्बन्धित है, जिसमें 'मधुमालती' के काव्य-रूप, अलंकार-शिल्प, भाषा-शिल्प तथा छन्द-शिल्पपर विचार किया गया है । काव्य-रूपपर विचार करते हुए लेखकने इसे रसात्मक कथा-काव्य माना है और इसकी पुष्टिके लिए कथा-काव्यके लक्षणोंके आधारपर कृतिका परीक्षण किया है । अलंकार-शिल्पके स्पष्टीकरणमें उदाहरणों और तत्सम्बन्धी विवरणोंकी भरमार है; किन्तु उनके आधारपर काव्य-शिल्पके सम्यक् स्पष्टीकरणका प्रयास कुछ कम दिखायी पड़ता है । अलंकार भाव-सौन्दर्यमें कहाँतक बाधक या सहायक हुए हैं, इस दृष्टिकोणसे यहाँ विस्तृत विवेचन अपेक्षित है । किसी अलंकारकी परिभाषा या विशेषता लिखकर कविकी कृतिसे उसके उदाहरण अंकित कर देना मात्र उसकी काव्य-चेतनाका परिचायक नहीं है । वह शिल्पकी संज्ञा तभी प्राप्त करेगा, जबकि वह भावोत्कर्षमें सहायक सिद्ध हो । इसीप्रकार अलंकार-प्रयोग औचित्य तथा अनौचित्य, दोनोंपर विचार करना चाहिये । संक्षेपमें, यह परम्परागत घिसी-पिटी विवेचन-पद्धतिका सामान्य अनुशीलन मात्र बन गया है किन्तु इसी प्रकरणमें भाषा-शिल्पका विवेचन अपेक्षाकृत सन्तोषजनक है । शब्द-शक्तियोंमें भी वही लक्षण-उदाहरणकी पद्धतिका गमन है । तदन्तर बिम्ब-विधान, मुहावरों, लोकोक्तियों तथा सूक्तियों और अन्तमें छन्द-योजना-विषयक अध्ययन उपर्युक्त अभावसे रहित तथा सन्तोषजनक हैं ।

समग्रतः देखनेपर हम इस निष्कर्षपर पहुँचते हैं कि मंझनकी सुप्रसिद्ध काव्य-कृतिके विशद विवेचनकी दिशामें कतिपय अभावोंके बावजूद भी यह पुस्तक लेखकके श्रम-पूर्ण तथा अभिनन्दनीय प्रयासको प्रमाणित कर देती है । हमें विश्वास है कि इसका प्रकाशन लेखकके भावी अध्ययनोंके लिए एक सुदृढ़ पदन्यास सिद्ध होगा । अन्तमें सूचनार्थ यह निवेदन है कि जिसप्रकार प्रकरणोंकी विषय-सूची और उसके विभागोंको आरम्भमें दिखाया गया है, पुस्तकके आगामी पृष्ठोंके मुद्रणमें उसका सम्यक् निर्वाह नहीं हुआ है । पृष्ठ २९ के बादसे अन्ततक यही स्थिति देखनेमें आती है । आशा है कि आगामी संस्करण यथेष्ट परिष्कारके साथ प्रकाशमें आयेगा ।

—डॉ. मदनगोपाल गुप्त

लोक साहित्य

करौली क्षेत्रका ख्याल-साहित्य

लेखक : कल्याणप्रसाद वर्मा; प्रकाशक : भारतीय लोक कला मण्डल, उदयपुर । पृष्ठ : ८४+२२; डिमाई, ७२; मूल्य : ५.०० रु. ।

ख्याल राजस्थानी लोकसाहित्यका एक महत्वपूर्ण अंग है । वहाँ इसकी अपनी एक विशिष्ट परम्परा है । इसके विषय, छन्द एवं प्रस्तुतीकरणकी पद्धति—सबकी निजी विशिष्टता है । इसके विषय-वैविध्यका परिचय परिशिष्ट में संकलित एक दर्जन ख्यालोंके देखनेसे मिल जाता है । इसकी विषय-व्याप्तिमें यदि राम-नामकी महिमा आती है तो संयोग और वियोग शृंगार भी चला आता है, यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपका अनमोल बच्चा

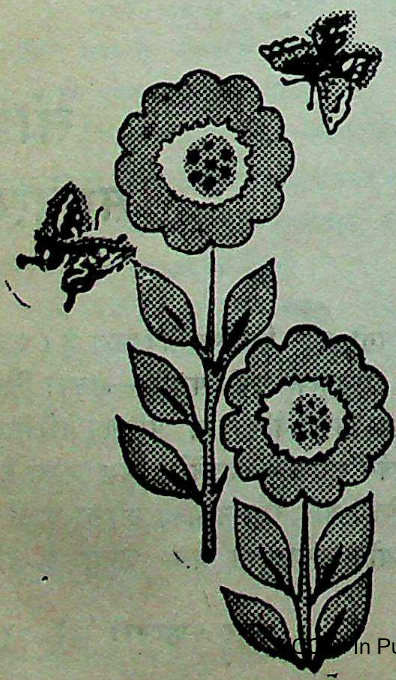

आपका प्यारा बच्चा। आप उसकी इच्छा पूरी करने के लिये आसमान के तारे भी तोड़कर लाने को तैयार हैं। लेकिन अगर आपके बच्चे बहुत ज़्यादा हों तो आप उनकी इच्छाओं और ज़रूरतों को पूरा नहीं कर सकते।

दूसरा बच्चा तीन साल बाद। अपने पास के परिवार कल्याण नियोजन केंद्र से सलाह लीजिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामायण और महाभारतकी कथा इसकी विषयवस्तु बनती है तो काश्मीर-समस्याभी अछूती नहीं रहती। इससे स्पष्ट है कि ख्याल राजस्थानी लोकजीवनमें समग्र रूपमें व्यापता है। इसतरह ख्याल-साहित्य राजस्थानी लोक-जीवनका सच्चा दर्पण है।

ख्याल-साहित्यकी आठ विशेषताएँ लेखकने निष्कर्षित की हैं: (१) ख्याल लोकनाट्यका एक रूप होता है। (२) यह गीतिनाट्य भी कहा जा सकता है, क्योंकि इसमें पद्यबद्ध संवाद होते हैं और गद्यका सीमित प्रयोग होता है। (३) यह एक गायन प्रणाली और ध्रुपद का विकसित अथवा विकृत रूप है। (४) इसमें व्यंग्य, शृंगार, भक्ति अथवा भक्तियुक्त विषय रहता है। (५) इसमें रागों और तालोंकी प्रधानता होती है। (६) इसे लोकगीतभी कहा जा सकता है। (७) यह लोककाव्यका भी रूप ले चुका प्रतीत होता है। (८) लावनी और ख्याल का ढाँचा लग-भग एक होता है।

राजस्थान राज्यके निर्माणके पूर्व करौली बाईस रिया-सतोंमें एक था और सम्प्रति यह सवाई माधोपुर जिलेका एक भाग है जिसके उत्तरमें भरतपुर जिला, दक्षिणमें ग्वालियर, पूर्वमें धौलपुर तथा पश्चिममें जयपुर है। समीक्ष्य पुस्तकमें इसी क्षेत्रके ख्यालोंका अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। सम्पूर्ण अध्ययन छह अध्यायोंमें विभक्त है: (१) आंचलिक परिवेश और क्षेत्रीय विशेषताएँ, (२) ख्याल: इतिहास और परम्परा, (३) वर्गीकरण, (४) ख्याल: विविध रूप, (५) ख्याल: विषय-निरूपण, और (६) ख्याल: भाव एवं कला-सौन्दर्य। इसप्रकार पुस्तककी योजना सुवि-चारित है। यह पुस्तक एक क्षेत्र-विशेषके ख्यालोंके साथ-साथ सामान्य ख्याल-साहित्यका भी परिचय देती है। परि-शिष्टमें बारह ख्याल भी दे दिये गये हैं जिससे पुस्तक पूर्ण हो गयी है।

प्रस्तुति भी सन्तोषजनक है। केवल मुद्रणकी कुछ भूलें रह गयी हैं।

—डॉ. सियाराम तिवारी

भाषा विज्ञान

पद-रचना

लेखक: किशोरीलाल शर्मा; प्रकाशक: श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, अस्पताल रोड, आगरा-३। पृष्ठ: ४३; डिमाई; १९७२; मूल्य: २.०० रु।

पुस्तिकामें पद-रचनाका सैद्धान्तिक विवेचन है, किन्तु मुख्य रूपसे हिन्दीसे सम्बद्ध होनेके कारण हिन्दी रूप-रचना भी मोटे ढंगसे इसमें समाहित हो गयी है। सात अध्यायों की पुस्तिकाके पहले अध्यायमें पद-ग्रामका विवेचन है। इसमें पदग्राम और सहपद पदग्रामोंके प्रकारोंको भी सोदाहरण समझाया गया है। अगले अध्याय क्रमशः 'संज्ञा-पद रचना,' 'सर्वनाम-पदोंकी रचना,' 'विशेषण-पदों का प्रयोग,' 'क्रिया-पदोंकी रचना,' 'व्युत्पादक और विभक्ति-पद' तथा 'पदोंके कुछ विशिष्ट प्रकार' हैं।

लेखकने प्राचीन भारतीय आचार्यों तथा पश्चिमी विद्वानोंका मत देते हुए, विवादों तथा गहराइयोंको छोड़ते हुए विषयका संक्षिप्त किन्तु उपयोगी परिचय दिया है। पुस्तक अहिन्दीभाषी प्रदेशोंके हिन्दी-शिक्षकोंके प्रशिक्षणकी दृष्टिसे लिखी गयी है, अतः बहुत गहराईमें जाना या इस विषयकी अधुनातन विचारणाओंको समाहित करना आव-श्यक भी नहीं था। निश्चयही पुस्तक जिस उद्देश्यसे लिखी गयी है, उसे पूरा करनेमें समर्थ है और लेखकका कार्य प्रशंसनीय है।

कुछ कमियोंकी ओर संकेत करना अन्यथा न होगा। 'मूल क्रिया पढ़से ति आख्यात लगकर बना' (पृष्ठ १) में 'ति' को आख्यात कहा गया है; 'मूल संज्ञा शब्दों, मूल क्रिया रूपों' (पृ० २) में मूल संज्ञाको 'शब्द' कहा गया है किन्तु मूल क्रियाको 'रूप'; 'प्रत्यय—[इक्], [ता], [त्व],

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और वस्तुओंमें [ओं] आदि (पृ० २)—वस्तुतः ओं केवल वस्तुओंमें ही नहीं लगता, कमजोरियों, भावनाओं, असफलताओं आदिमें भी लगता है; 'श्री ब्लूमफील्ड' (पृ०३) में श्री अनावश्यक है; इसी पृष्ठपर 'अनपढ़' के 'अन' को संस्कृतका विकृत रूप कहा गया है, वस्तुतः यह संस्कृतका 'अन्' ही है जोकि संस्कृतके नियमोंके विपरीत प्रयुक्त हुआ है; अरबी माद्दा 'क़-त-ल' है 'क-त-ल' नहीं और शब्द 'क़ातिल' है 'कातील' नहीं (पृष्ठ ४); 'पद ध्वनि विज्ञान' (पृ० १०), 'पद रचना विज्ञान' (पृ०१०), 'संबंध द्योतक' (पृ० ११), जैसे योजकविहीन प्रयोग भाषाविज्ञानकी पुस्तकमें खटकते हैं; पृष्ठ १२ पर 'अगुआ' को अरबी-फ़ारसी शब्द कहा गया है, यह सं. अग्र + उआ (प्रत्यय) है; पृष्ठ १४ पर ऑनरफिकके लिए 'सत्कारार्थ' उचित प्रतिशब्द नहीं है। 'आदर' तथा 'सत्कार' एकार्थी नहीं हैं, इसे 'आदरार्थ' कहना चाहिये था; पृष्ठ १८ पर 'इस विशेषण का प्रयोग कभी-कभी कृदन्त रूपमें भी होता है,' में कृदन्त से लेखकका क्या अभिप्राय है, कृदन्त प्रयोगका प्रकार न होकर रचनाका प्रकार है; पृष्ठ २४ पर 'लिपिकी एकता आवश्यक है' वाक्यमें एकतासे क्या आशय है? पृष्ठ ३२ पर 'इनमें व्याकरणिक कोटियों—वचन, लिंग, विशेषण और कारकको सम्मिलित किया जाता है' में विशेषण आयेगा तो क्रिया-विशेषण क्यों नहीं? साथही जब व्युत्पादक प्रत्ययोंसे विशेषणकी भी रचना मानी गयी है तो विशेषण को व्याकरणिक कोटिमें क्यों रखा गया है? पृष्ठ ३३ पर ASPECT के लिए 'पहल' शब्द है जोकि उपयुक्त नहीं, 'पक्ष' शब्द चलता है; पृष्ठ ४१ के 'बढ़ई' का सम्बन्ध सं. 'वरुजीवी' से नहीं है, 'वरुजीवी' से तो 'वरई' बनता है, 'बढई' तो सं. 'वर्धकि' से विकसित है। इसतरहकी और भी बातें जोड़ी जा सकती हैं।

इनके बावजूद पुस्तक उपयोगी है।

—डॉ. भोलानाथ तिवारी

उपन्यास

सुबहकी तलाश

लेखक : नरेन्द्रदेव वर्मा; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : १३७; क्राउन, ७२; मूल्य : ५.०० रु.।

हिन्दीमें इधर कुछ वर्षोंसे उपन्यास लिखना एक फैशन हो चला है। इसका एक खास कारण है—उपन्यास के पाठकोंकी सस्ती और रोमानियत पूर्ण रुचि। उपन्यास पाठकोंकी तृप्तिके लिहाजसे ज्यादा बिकता भी है। इसलिए व्यावसायिक दृष्टिसे ही और पाठकोंको पकड़े रहने की दृष्टिसे ही आज उपन्यास-लेखन खासा व्यवसाय बन गया है। यह बात हर उपन्यासपर ही लागू होती हो, ऐसा नहीं है। फिरभी तरह-तरहके उपन्यासोंकी भीड़मेंसे कभी-कभी कुछ ऐसे छोटे उपन्यास (केवल कलेवरकी दृष्टिसे) भी दीख पड़ते हैं जो भलेही आजकी संघर्षपूर्ण जिन्दगीके सही-सच्चे चित्र न भी प्रस्तुत करते हों, किन्तु उनकी अपनी एक खास दुनिया होती है और उस दुनिया का रचाव व बनाव अपनी एक खास अहमियत रखता है। यदि आजादीके पहलेकी ग्रामीण संस्कृति और गाँवके काले-उजले रूपको सही मायनोंमें आजके यानी स्वतन्त्रता-प्राप्तिके बादके भारतीय पाठकको सिनेमाकी स्लाइड्जकी भाँति कोई उपन्यास दिखा सकनेमें समर्थ है तो उस उपन्यासका अपना ही संसार होता है - रोचक, आदर्श-पूर्ण और संस्कारोंको पुष्ट करनेवाला।

'सुबहकी तलाश' ऐसाही एक उपन्यास है जो भारतीय ग्राम्य-जीवनके एक विशिष्ट क्षेत्रीय वैभवके रंगमें हमें सराबोर कर देता है। यह उपन्यास भलेही हमें कहींसे ज्यादा कचोटकर एकदम पूरीतरहसे झकझोरकर नहीं रख देता किन्तु इसका वैशिष्ट्य तो इसकी कथामें है जो नायककी ऐसी जिन्दगीसे जुड़ी है जो किन्हीं आदर्शोंके लिए जीता है और संघर्ष करता है। उसका अपना एक मिशन है—गान्धीवादी सिद्धान्तोंके अनुकूल बुनियादी शिक्षाका प्रचार और प्रसार, यही उपन्यासका मूल स्वर है जिसे उसका नायक अनुगुंजित करता चलता है।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नायकके लिहाजसे यह उपन्यास निश्चयही हमें छू लेता है। सोमेश्वर जैसे आदर्श, त्याग और संयमके प्रतीक शिक्षक कितने हमें आज ग्राम्य-विद्यालयोंमें दीख पड़ते हैं। उसका आदर्श शिक्षक रूप आज हमारे लिए एक बड़ी चुनौती है। आजादीके पहलेके भारतीय ग्रामकी स्थिति और आजके ग्रामकी स्थिति, दोनोंमें कितना अन्तर आ गया है, इसे समझनेके लिए निश्चयही हमें सोमेश्वरकी कहानीको समझना चाहिये जो उपन्यासके पन्नोंमें कहीं कर्तव्यपालनके रूपमें तो, कहीं गान्धीवादी बुनियादी शिक्षाके कार्यक्रमको सुचारु रूपसे क्रियान्वित करते हुए और कहीं विरोधी शक्तियोंसे आत्म-बल और चरित्र-बल के आधारपर विजय पाते हुए एक संघर्षरत व्यक्तिके रूप में चलती दीख पड़ती है।

सोमेश्वरके इर्द-गिर्दही उपन्यासके अन्य पात्र चक्कर लगाते रहते हैं और हर घटनाका केन्द्रबिन्दु वही बना रहता है। चाहे ठाकुर नाहरसिंह और उसके बेटे रणधीर (जो बादमें उसका बेटा सिद्ध नहीं होता है) की उपकथा को, चाहे सुहागा और गोंदाके जीवनसे सम्बद्ध अंश हों, चाहे पुरखिनकी मार्मिक स्थितिसे जुड़े अंश हों या फगुआ के प्रसंग हों, सभी सोमेश्वरके चरित्र-विकासमें सहायक रहते हैं और उसके शील प्रकाशनमें भी। स्वाधीनता-आन्दोलन या सुराज कार्यमें गान्धीवादी फक्कड़ और मस्त फगुवा एकबारगी हमें अपने दूरदर्शी कार्यकलापोंसे आकर्षित जरूर करता रहता है किन्तु वह भी नायककी मिशन-पूर्तिमें ही सहायक है। यह उपन्यासका सोमेश्वरके बाद सबसे ज्यादा जीवन्त पात्र है।

छत्तीसगढ़के क्षेत्रीय-अंचलकी समस्ततामें उपन्यास हमें ला पटकता है। जहाँ हम लोकविश्वासों, अन्धविश्वासों, जादू-टोनों और जमींदारी-शोषणके स्वर आसानीसे सुन सकते हैं। सबसे ज्यादा ढोंग कनछेदीके चिचियानेमें है जो सोमेश्वरके विरुद्ध केवल पैसेके लिहाजसे अनैतिक कार्य करनेपर भी उतारू है।

यद्यपि उपन्यासमें कथा-रस कहीं-कहीं क्षीण होने लगता है किन्तु लेखकका कौशल यह रहा है कि उसने इसे रिपोर्ताज होनेसे बचा लिया है। भलेही ढोला-मारूका मूकाभिनय (ग्राम्योत्सव पर) क्षेत्रीय रंगको उजागर करने परभी कुछ मूल कथासे अलग पड़ जाता है फिरभी अन्ततः लेखकने उपन्यासकी हर घटनाको नायककी मूल कहानी—आदर्श-संघर्षमय कहानीसे जोड़ दिया है। यद्यपि इस छोटे-से उपन्यासमें कुछ अनावश्यक विस्तारभी है किन्तु इसे एक लम्बी कहानीका रूप देना, न तो लेखकको ही अभीष्ट रहा होगा न यह इसके कथ्यकी माँग ही है।

कुल मिलाकर उपन्यास अच्छा है। स्वाधीनता-संग्रामकी पृष्ठभूमिमें ग्रामीण-अंचलीय जिन्दगीके कुछ विशिष्ट पहलुओंको उजागर कर हमें कहींसे कुछ कचोट देनेकी दिशामें इस उपन्यासका वैशिष्ट्य खोजा जा सकता है। अतः यह एक कटा-छँटा और साफ-सुथरा उपन्यास है। भलेही कहीं-कहीं इसमें किस्सागोई-पद्धति दीख पड़ती हो। उपन्यास एक त्रासदी बनते-बनते रह गया है जबकि अन्तमें नायक और गोंदाका मिलन हो जाता है।

—हेमचन्द्र जैन

प्रेम अपवित्र नदी

लेखक : डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-६। पृष्ठ : ३६६; क्राउन, ७२; मूल्य : १२.०० रु.।

विचारणीय प्रश्न यह है कि आधुनिक लेखक कैसे यह भूल जाता है कि उसका पाठक 'चन्द्रकान्ता सन्तति' और 'भूतनाथ' युगकी किशोर मृगतृष्णाको काफी पीछे छोड़ चुका है। पाठक कारण-कार्य सम्बन्धोंका तर्कसंगत जवाब ढूँढ़ता है और यथार्थकी सच्चाईसे बौद्धिक ढंगसे जूझना चाहता है। इसलिए आजकी औपन्यासिक दुनिया उसे काल्पनिक तर्कोंसे आश्वस्त नहीं कर सकती।

इस उपन्यासकी घटनाएँ इसी जीवनमें घटित हो सकती हैं—होती हैं, लेकिन इतने अतर्क्य ढंगसे नहीं। क्या वस्तुगत सतही सचाई ही विश्वसनीयता है? क्या सही घटनाएँ उठाकर कागजपर बिछा देना ही औपन्यासिकता है? क्या वस्तुस्थितिका अन्तरंग विश्लेषण, बौद्धिक समाधान, सही कताई और उपयुक्त डिजाइन इतने अर्थहीन हैं कि उनके बारेमें सोचे बिना भी उपन्यास रचा जा सकता है? यह नहीं कहा जा सकता कि लेखकके जीवनानुभव और समझमें कोई कमी है याकि रचनाकारके रूपमें वह असमर्थ है, क्योंकि पिछली रचनाओंमें वह समझ और अनुभव का प्रमाण दे चुका है।

'प्रेम अपवित्र नदी' में एक बहुत व्यापक, गतिशील वृत्त समेटा गया है। सहेजा नहीं गया। एक पूंजीपति परिवारकी तीन पीढ़ियोंका इतिहास राष्ट्रीय, वर्गीय, वैयक्तिक, सामाजिक, धार्मिक आदि विविध घटनाक्रमोंमें उलझा-पुलझा चित्रित किया गया है। वाकई यह एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गम्भीर रचनात्मक चुनौती थी, जिसमें विफल होकर लेखक व्यक्तित्वहीन हो गया है।

...कुछभी तो नहीं। अंग्रेजोंके वहशी—आतंक—युगसे लगाकर आज़ादीकी यातनाका लम्बा दर्द लेखकसे सधा नहीं। व्यक्तिसे लगाकर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धोंकी विसंगत घटनाएँ कुछभी स्थापित नहीं कर सकीं—लेखकके उद्देश्य-परक होनेके बावजूद। पिहानीवाली और ब्रजरानीकी जान लेकर भी पूँजीवादी समाजमें नारीकी घुटन और त्रास अव्यक्त रह गये। चोरको अन्तर्राष्ट्रीय स्तरका 'साधु' बनाकर भी सिवाय छिछले घटनात्मक व्यंग्यके क्या उपलब्ध हुआ? यहभी तो नहीं कि धर्म और अराजक प्रजातन्त्रके ज़रिए करोड़ों-करोड़ मनुष्योंकी तकलीफको छाती चीर-कर बिछा दिया जाता। पण्डे महावीरकी डाकूगीरी और डाकूका आत्मसमर्पण नाटकीय और फ़र्जी बनकर रह गये। हाँ, इस वजहसे सरकारी गोदामोंमें इस किताबको खरीदनेकी सम्भावनाएँ बढ़ी हैं। रुककर, यहाँ डॉ. लालकी एक प्रशंसा करना असंगत न होगा कि हमारे जमानेकी कोई अखबारी सुर्खी उन्होंने नज़रअन्दाज़ नहीं की। बहरहाल इस उपन्यासमें उठायी गयी समस्याएँ हिन्दीमें ज्यादह तीखे और सार्थक ढंगसे पहलेही चित्रित की जा चुकी हैं। यहाँ विभाजनकी वजहसे आये शरणार्थी प्रेम और चारि-त्रिक मानसिकताके मामूली हथियार बनकर रह गये। उपन्यास एक जाने हुए लेखककी कृति होनेके बावजूद कुछ नहीं जोड़ता। किसीकी मौत, किसीका आत्म-समर्पण, किसीका पागलपन, किसीका हिप्पियाना अंदाज़ और किसीकी साधु-मुद्राके बावजूद कुछ साधा नहीं गया, बल्कि चीजोंसे किनारा करनेके ही काम आयी हैं—ये तमाम मुद्राएँ! दरस्ल ये फिल्मी मुद्राएँ हैं और एक लम्बे अर्सेसे हिन्दी उपन्यास इन्हें केंचुलकी तरह छोड़ चुका है। लेखक को अनेक स्थानोंपर हुई विसंगतिका ख्याल नहीं रहा। क्योंकि उसका पूरा ध्यान कथाको एक बेतरतीब जिज्ञासा के क्रूर और वहशी तरीकेसे आगे बढ़ानेपर रहा है।

बहरहाल। कथा यों है: दिल्लीके चाँदनी चौकमें एक प्रतिष्ठित कपूर घरानेकी बड़ी भारी कोठी है। कपूरों के बाप-दादे १८५७ के संग्राममें पंचमांगी रहे हैं। देश-घातके मूलधनसे अबतक व्यापार करते हुए इन्होंने अपनी पूँजी खड़ी की है। इसी खानदानका सूरज कपूर परम्परा-नुसार विवाहके कुछ साल बाद हरिद्वारके अपने कुल-पण्डा महावीरको खुदकी पत्नी (जो एक बच्चेकी माँ है) का औपचारिक दान करने पहुँचता है, परन्तु पण्डा महाशय ब्रजरानीके सौन्दर्यपर ऐसे लुब्ध हो जाते हैं कि किसी मूल्य पर उसे लौटाना मंजूर नहीं करते। (वास्तवमें वे एक 'ग्रन्थि' से पीड़ित थे, जिसका कोई संकेत यहाँ नहीं है) ब्रजरानीके विरोधके बावजूद धर्मप्राण सूरज उसे पण्डेकी बिना अनु-मतिके लौटाकर खानदानपर धब्बा कैसे लगवा सकता है? जाहिर है वह खाली डोली लेकर दिल्ली आ जाता है—पत्नी सौंपकर। यहाँ वह दंगेको दबानेके लिए अंग्रेजों द्वारा किये दमनके दौरान भागे हुए लोगोंका बिखरा सामान बटोरकर गोदाम भर लेता है और फिर उसे बेच कर ऊँची रकम कमानेमें व्यस्त हो जाता है।

कपूर-कोठीमें कोई खास हलचल नहीं होती। सिर्फ ब्रजरानीकी जिठानी पिहानीवाली प्यालेमें तूफानकी तरह उफनती है और सूरज कपूरका लड़का विष्णुपद माँके बारेमें सवाल पूछता रहता है। पार्टियाँ और शराबके दौर कपूर-कोठीमें जारी हैं। विष्णुपदका ग़म गलत करनेके लिए उसे पहले शिमला और बादमें लन्दन पढ़ने भेज दिया जाता है। एक दिन कपूर-कोठीमें सेंध लगाकर चोर 'पंचानन' पिहानीवालीके कमरेमें घुस जाता है—देवदूतकी तरह। पिहानीवाली उससे अपनी खोयी बहूको लानेका वचन ले लेती है। चोरको रातभर घरमें ही रखा जाता है। अन्ततक पुरुषोंको इस घटनाका कोई पता नहीं चल पाता—जबकि कोठीके सभी कर्म-चारियों, बहुओं वगैरहको सब कुछ ज्ञात है। पंचानन हरिद्वार पहुँचकर पुराने जासूसी ढंगसे सब पता लगाता है। उसे वहाँ एक राजाकी रखैल और जाने कौन-कौन मिलते हैं। वह जादुई ढंगसे चाहे जहाँ घुस जाता है, चाहे जो करता रहता है, स्त्री-पुरुषोंकी प्रेमलीला प्रेमपूर्वक घरमें घुसकर देखता है—वगैरह। ब्रजरानी और कपूरकोठीके बीच वही मुख्य जरिया है। यही चोर बादमें राष्ट्रीय स्वाधीनतामें सहयोगी होता है। उसका चौर्य-क्रम और राष्ट्रीय संग्राम साथ-साथ चलते रहते हैं या लेखक इन्हें चलाता रहता है—बिना किसी वैचारिक आधारके। अन्तमें यही चोर अनोखे और आकस्मिक ढंगसे 'अन्तर्राष्ट्रीय साधु' बना दिया जाता है।

कपूर-परिवार ब्रजरानीको भुलानेके लिए उसका आटे का पुतला बनाकर क्रिया-कर्म करवाता है। ऐन मौकेपर पण्डे सहित ब्रजरानी दरवाजेपर हाज़िर है और पुत्रको दर्शन देकर लुप्त हो जाती है। क्रूर पण्डा किस चारित्रिक

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेषताके कारण स्वयं ब्रजरानीको कपूर-कोठीमें लाया है और किस भलमनसाहतसे उसे एकान्तमें पुत्रसे बात करने देता है, यह अन्ततक अज्ञात है। ब्रजरानी वापस स्वेच्छिक विवशतासे पिहानीवाली और विष्णुपदका अनुरोध ठुकराकर हरिद्वार चली जाती है। वहाँ राजाकी रखैलके जरिए उसकी मुलाकात, पुरानी साहसिक कहानियोंकी तर्जपर, एक फरारीसे होती है। फरारी रातमें डाका डालता है—और ब्रजरानीको लेकर चम्पत हो जाता है। वह डाकू है। डाकू ब्रजरानीको ले जाकर जंगलमें अपने घर रखता है और एक दिन बिना भूमिकाके खुदकी पत्नीके द्वारा बनायी योजनाके तहत, उससे मैथुन करता है जिसे उसकी पत्नी छप्परके छेदमेंसे देखती है और फिर इसी बातपर वह ब्रजरानीको झापड़ रसीद कर देती है। फिर सहसा डाकू पुलिसके आगे आत्म-समर्पण कर देता है और ब्रजरानी पुनः मरणासन्न महावीर पण्डेके पास पहुँच जाती है। उसके पहुँचते ही दो-एक जरूरी बातें कर पण्डा, लेखककी इच्छानुसार, मर जाता है। उसने अपनी सारी सम्पत्ति ब्रजरानीके नाम लिख दी है। बादमें ब्रजरानीकी अपने बेटेसे पुनः भेंट होती है, लेकिन बेटेके साथ वह नहीं जाती और अपनी सारी दौलत चोर पंचानन और डाकूके परिवारवालोंको सौंपकर घर छोड़ देती है। बादमें लेखक बताता है कि वह मर गयी।

सूरज कपूर शराब और रण्डीके जरिए पत्नीका वियोग-दुःख काटता हुआ एक दिन मर जाता है। विष्णुपद क्रान्तिकारी अखबारनवीस बनकर 'नवभारत' निकालता है। कुँवर (सूरज कपूरके बड़े भाई हीराचन्दका लड़का) पक्का बिजनैसमैन हो गया है। उसे कनाट प्लेस बनानेका ठेका मिलता है। उसकी पत्नी शिवानी एकान्त और ऐशसे ऊबकर विष्णुपदसे प्रेम करती है और अपने ड्राइंगरूममें ही (जहाँ उसपर पहरे बैठे हैं!) विष्णुपदसे चुम्बित होती है, प्रेमालाप करती है। बादमें ये लोग जंगलमें, सड़कके किनारे—केवल लेखकके साक्ष्यमें कामक्रीड़ा करते रहते हैं। अखबार चलता रहता है। क्रान्ति होती रहती है। फिर शिवानी घर छोड़कर होटलमें रहने लगती है। मामूली-सी नौकरी ढूँढती है। लेकिन कपूर घरानेकी नाकेबन्दीकी वजहसे उसे नौकरी नहीं मिलती। बादमें वह तलाक देकर विष्णुपदकी व्याहता हो जाती है। (विजयको इस तलाक और विवाहसे कोई कष्ट नहीं है।) विदेश-यात्राके दौरान विजय को लिलियन नामक हिप्पीनुमा लड़की मिलती है जिससे उसका रागात्मक सम्बन्ध हो जाता है। उसे पानेके लिए वह अपनी कोठी और दौलत त्याग देता है और घर छोड़कर गन्दी बस्तियोंमें सेवा करता है। बादमें लिलियन उसे प्यार करने लगती है और एक दिन सहसा उसे बागीचेमें लगातार चूमने लगती है। कुँवर मानसिक बीमारीका शिकार हो जाता है। और लगता है कि वह जल्दी ही मर जायेगा।

देश आज़ाद हो जाता है और विभाजनके समयका हादसा घटता है, विष्णुपद और शिवानी अलग-अलग और मिलकर इस वक़्त काम करते हैं। बादमें लोगोंके आग्रहपर गन्दी बस्तियोंके समर्थनसे विष्णुपद संसदका चुनाव जीतता है। (जैसे सिर्फ गन्दी बस्तियाँ उसे संसदका चुनाव जितवा देंगी)। कपूर परिवारको विष्णुपदकी विजय बहुत खलती है। वह एक ढोंगी साधुकी खोज करता है। संयोगसे पुलिससे बचनेको फिलहाल साधु बना हुआ चोर पंचानन इन्हें मिलता है। उसे विश्व-भ्रमण करवाकर प्रतिष्ठित साधु बना दिया जाता है और उसी गन्दी बस्तीमें लाया जाता है। विष्णुपद उसकी कलई खोलता है, तो पंचानन के भक्त नवभारतपर मुकदमा चलाते हैं और दफ्तरमें आग लगा देते हैं। गन्दी बस्तीमें भी आग लगवा दी जाती और साम्प्रदायिक दंगा हो जाता है। विष्णुपद इस प्रपंच में बुरी तरह उलझ जाता है।

इधर हीराचन्द कपूर अपने प्राणोंकी रक्षाके लिए पत्नी पिहानीवालीसे उसके प्राण संकल्पित करा लेता है और पिहानीवाली सचमुच चार दिनमें मर भी जाती है। लेकिन फिर हीराचन्दका जिन्दा रहना भी तो डॉ. लालको गवारा नहीं है। उसे पक्षाघात हो जाता है और तान्त्रिकों के आदेशपर सैंकड़ों कबूतरोंके तेलकी मालिश करनेपर भी वह लगातार क्षीण होता रहता है। बादमें पता चलता है कि वह मर गया।

उपन्यासका अन्त विजय-लिलियनके कुँवरके साथ तीखे संवादोंमें होता है, जो अस्वाभाविक ही नहीं, अविवेकपूर्ण भी है। इधर शिवानी और विष्णुपदको पंचाननके जालमें अकेला छोड़कर लेखक रुखसत लेता है। इति।

वैसे किस्सा-दर-किस्सा इतने छोटे-मोटे प्रसंग यहाँ-वहाँ बेतरतीब चस्पा हैं कि ब्यौरेवार उनका बखान एक बेकार-सा काम होगा। इसलिए मुख्य कथा-प्रसंगोंपर ही यहाँ उँगली रखी गयी है, लेकिन इतनेसे ही उपन्यासकी विसंगतियाँ जाहिर हो जाती हैं।

रचनात्मक दृष्टि, जो जीवनकी विभिन्न स्थितियोंका तर्कसंगत चयन, समायोजन और नियोजन करती है, यहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुपस्थित है। चारित्रिक विकासके बिना चरित्रोंके साथ जो अप्रत्याशित घट जाता है, वह एक बलात्कार ही है। कई जगह तो कलमकी अराजकता हदको छू गयी है। पंचानन और पण्डाके कामोंमें जो अनोखापन और चमत्कारिकता है—उनके लिए लेखकके पास शायदही सहमत होने योग्य कोई बौद्धिक तर्क हो।

लेखकने जो कथ्य और चरित्र बखाने हैं उनमें फैशनपरस्ती साफ झलकती है। वह ऊपरसे जिन चीजोंकी आलोचना करनेको प्रतिबद्ध जान पड़ता है, भीतरसे वस्तुतः उनके प्रति कोमल और रागात्मक है। इसलिए जब सूरज कपूरकी कायरता और अमानवीयताके प्रति पाठकके मनमें घृणा और आक्रोश पैदा होता है, तभी उसकी आत्म-ग्लानि और पत्नी-वियोगका सन्ताप उसे दयनीय बना देते हैं। जब लेखक इस तकलीफके कारण उसकी मौततक करा डालता है तब पाठक क्षमा न करनेकी असहिष्णुता कैसे बरते? महावीर पण्डाके रूप-लोभ और क्रूरताके प्रति पाठक जब तनावपूर्ण हालतमें होता है तभी इस नाजुक घड़ीमें लेखक पुरानी प्रेमिकाके विश्वासघातकी ग्रन्थिका परिचय देकर उसकी धार्मिक क्रूरता और नीच अत्याचारको महज़ एक मानसिक विवशता या बीमारीमें परिणत कर एकतरहसे उसका बचाव कर लेता है। मनोवैज्ञानिक ग्रन्थियोंकी अवस्थामें व्यक्तिके काम स्वाधीन नहीं रहते। अन्तमें सारी सम्पत्ति ब्रजरानीके नाम लिखाकर तो वह पण्डाको ऊँचा भी उठा देता है। क्या उसके सारे अत्याचार और बलात्कार तथा अहंकार को इस रूपमें परिणत कर देना लेखककी मानसिकताका ही नतीजा नहीं है? उसपर यह तुर्रा कि—"पता नहीं, कौन क्या है, वह क्यासे क्या निकल आता है, किसीको किसी हदमें बाँध देना बिलकुल गलत है।" (पृष्ठ १३८) यह तर्क इतना खतरनाक है कि इसके बाद चारित्रिक तर्क-संगतताके बारेमें कोई बौद्धिक बात कहना भी मुश्किल है।

शायद ऐसेही कुतर्कोंके कारण पहले तो चोर होते हुए भी पंचाननको लेखकने व्यक्तिशः श्रेष्ठ और सत्कार्यका सहायक बनाया है और बादमें उसके चरित्रको एकदम उलट दिया है। क्या पंचाननके बजाय किसी धूर्त, उचक्के और भाषणबाज़को अन्तर्राष्ट्रीय साधु नहीं बनाया जा सकता था? डाकू और चोर जो दिखते हैं, वस्तुतः वे डाकू और चोर नहीं हैं, बल्कि जो ऊपरसे ऊँचे और बड़े नज़र आते हैं—वे ही सही मानेमें चोर हैं, डाकू हैं। इस दर्शनके तहत खड़े किये गये चरित्रको अगर लेखकने इस परिणतिपर पहुँचाया तो किसी रचनात्मक समझकी वजह से नहीं, वरन् जासूसी उपन्यासोंकी तरह पैंतराबाजीकी वजहसेही। लेखकने कैसे समझ लिया कि बीसवीं शतीकी दुनिया वाकई 'बड़-बड़-बड़-बड़' करनेवाले साधुको महान् मान लेगी और सिवा विष्णुपदके बाकी सारे बुद्धिजीवी इतने बेवकूफ हैं कि उसके खिलाफ आवाजतक भी नहीं उठायेंगे।

पूँजीवादी संसारमें फैले घोर स्वार्थका एक ठीक प्रतीक पत्नीकी जान लेकर खुद जिन्दा रहनेकी इच्छामें लेखकने उठाया था, लेकिन बीचमें तान्त्रिक प्रक्रिया वगैरहकी सफलता दिखाकर एक भ्रमको ही सहारा दिया है—जो अबौद्धिक तो है ही, लेकिन प्रकृतिगत नीचताको विश्लेषित करनेमें भी असमर्थ है।

डाकू आत्म-समर्पणका प्रसंग तो बौद्धिक दारिद्र्यका खासा प्रमाण है। लेखकको पता नहीं कि वह चाहता क्या है? उसकी स्थापनाएँ क्या हैं? डाकूके जरिए ही 'फरारी' जब राजनीतिक और सामाजिक क्रान्तिमें लगा था, तब क्या जरूरी था कि वह एक ऐसी व्यवस्थाके आगे आत्मसमर्पण करे जो डाकूसे भी गयी-बीती है और जनताका दमन करती है, तथा सारा देश जिस (अंग्रेजी) सत्ताके खिलाफ़ युद्ध छेड़ चुका है। आश्चर्य है कि लेखक जिस व्यवस्थापर प्रहार करता है और उसीके आगे समर्पित हो जाना बेहतर समझता है। अगर डाकू सज्जन है और व्यवस्था डाकू है तबतो यह सज्जनका डाकूके आगे हथियार डालना हुआ। अपने मनोलोकमें दकियानूसी प्रतिमाएँ स्थापितकर ऊपरसे क्रान्तिकारी बननेका यही नतीजा होता है। और डाकूसमर्पणकी वजह भी क्या? ब्रजरानीसे एक मशीनी ढंगसे मैथुन कर लेनेपर (उसके सम्पर्कसे) डाकूमें महात्मा जन्म जाता है, यह कैसा मूर्ख तर्क है? डॉ. लालको क्या यह पता नहीं है कि डाकू आत्म-समर्पणके पीछे समाज सेवाकी अदम्य शक्तियोंकी एक अटूट अन्तर्वाही साधना-परम्परा सक्रिय रही है?

लेखककी प्रेमकी प्रवृत्तिमें कितनी पैठ है—यह स्पष्ट नहीं होता। सेक्सके शाट्स जगह-जगह चस्पा करके उपन्यासको बाजारू स्तरपर ले आया गया है। अगर लेखक यह कहना चाहता है कि प्रेम केवल मशीनी ढंगपर सेक्स रह गया है तो उसके अनुकूल चरित्र-सृष्टि करना चाहिये थी। पण्डा और डाकूका ब्रजरानीसे या राजाका रखैलसे प्रेमका यह ढंग होता तो किसी हदतक उसे उचित

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठहराया जा सकता था, लेकिन विष्णुपद और शिवानीके बीच; सड़क, जंगल और ड्राइंगरूममें विवाहके पहले मैथुन-क्रिया दिखाना उनकी चरित्र-प्रक्रियासे नहीं मिलता। अव्वल तो यह सहज सम्भव नहीं और अगर हो भी तो आत्म-स्वीकृति और चारित्रिक अवरोधका सवाल पैदा होता है। अगर शिवानीको भी वही काम करना था, जो कुँवर करता है तो प्रतिशोधको आगे बढ़ानेका मुद्दा क्या रह जाता है? तुम आज़ाद! हम आज़ाद! क्या लेखकके मनोलोकके प्रतिनिधि, शिवानी और विष्णुपदमें प्रेमका सहज सहयोगात्मक विकास, उनको चारित्रिक दृढ़तासहित दिखानेपर उनके चरित्रको अधिक अर्थवत्ता और प्रासंगिकता नहीं दी जा सकती थी? हद है कि जब शिवानी सितार बजानेकी तन्मय मुद्रामें होती है (अपने ड्राइंगरूम में) तब विष्णुपद—जो उस समयतक उसका देवर है—उसे लगातार चूमने लगता है? कलाकी सराहना सेक्सका हथियार बन जाती है!

पश्चिमके प्रभावसे 'मुक्त-काम-जीवन' का वर्णन करना कदाचित् लेखकका प्रयोजन रहा हो, लेकिन काम-क्रियाको आमतौरपर इस्तेमाल करनेकी नकल करते वक्त उसे यह ध्यान ही नहीं रहा कि उसके पाठक और स्वयं उसकी मनःरचनासे इसमें विसंगतियाँ पैदा हो जायेंगी। मुक्त-काम तो पूरे जीवन दर्शन, आचार और व्यवहारका मात्र एक पहलू है। अगर और मामलोंमें उतनी तटस्थता, निर्वैयक्तिकता और सहज मुक्तता नहीं हो तो सिर्फ यह क्रिया असंगत हो जाती है।

कुँवरके परिवेशमें पला विजय, लिलीके एक वाक्य पर अपनी सारी सम्पत्ति कुर्बान करके गन्दी बस्तियोंमें काम करने और शरणार्थियोंकी मदद करने दौड़ जायेगा, यह एक अस्वाभाविक दुराशा है। ये सब काम मनके गहरे संयम और उदात्तीकरणसे सम्भव होते हैं। मनसे योगी हुए बिना इन गन्दी बस्तियोंमें काम करना तो दूर, घुस सकना भी मुश्किल है (वोट-कामी राजनीतिज्ञ इसके अपवाद हैं)।

विष्णुपद और शिवानी जो प्रत्यक्षतः अखबारनवीसके रूपमें आज़ादीके युद्धमें भाग ले रहे हैं, भारतके आज़ाद होनेपर जो बातचीत करते हैं उसका नमूना देखिये:

"सुना है भारतवर्ष आजाद हो गया।"

'हाँ, सुना है।"

अपनी कथा और पात्रोंसे पूरीतरह तन्मय हो जानेपर लेखक शायद ऐसी भद्दी भूलें नहीं करता। लेखकके सूक्ष्म निरीक्षण और सामान्य ज्ञानका अन्दाजा इसीसे लगाया जा सकता है कि शरणार्थी शिविरमें इकट्ठे—हजारों बच्चे (हैं), फिरभी खामोश (हैं)। हज़ारों अभावग्रस्त बच्चे न रोयें न चीखें न चिल्लाएँ—गोया ये बच्चे न होकर नुमाइशी गुड्डे-गुड्डी हों! मानव-स्वभावके सिलसिलेमें अज्ञानका एक आखिरी उदाहरण देकर इस किस्सेको खत्म करना ठीक होगा—विजय, गन्दी बस्तियोंमें सहायता-कार्य करनेवाले संवेदनशील युवकके रूपमें पेश किया गया है। उसके साथ कोमल स्वभावकी विदेशी लड़की है। शादी करनेके बाद वह सपत्नीक अपने अस्वस्थ पिताको देखने जाता है. इस वक्त कितने खूबसूरत संवाद आयोजित किये गये हैं? खूब!!—

"डैडी आप कैसे हैं?"

"तुम कैसे हो?"

"खुश हूँ, क्योंकि कुछ नहीं हूँ।"

"और यह, तुम दोनोंने शादी कर ली!"

"नहीं, शादियाँ आपही लोग कर सकते हैं।"

बीमार पितासे समझदार लड़का ऐसी बातें कर सकता है?

याने कथा, चरित्र, संवाद—सबके साथ एक अनघड़, अस्वाभाविक और क्रूर आचरण किया गया है। नकलीपन के स्तरपर स्तर चढ़े हुए हैं और सत्यकी खोजसे उपन्यास का दूरतक रिश्ता नहीं है।

और शीर्षक? प्रेम किसीभी तरह उपन्यासकी केन्द्रीय समस्या नहीं है। यहाँ-वहाँ 'प्रेमको जी भरकर जीना' और 'अपनेको दे दिया जाना' वगैरह जुमले बिखरे होनेसे रचना प्रेमसे सम्बद्ध नहीं हो जाती। कहीं-कहीं अज्ञेय जैसा लहज़ा और शब्द हैं, लेकिन अज्ञेयकी तरह वे जिये नहीं गये। 'अपवित्र नदी' ही इसका सार्थक शीर्षक बन सकता था, क्योंकि साम्राज्यवादी और पूंजीवादी गन्दगी को उभाड़कर रख देना लेखकका उद्देश्य रहा है। प्रेम तो केवल प्रासंगिक है, जो कथाको दिलचस्प बनानेके लिए काम आया है, और वह भी जितना है, उसमें काफी 'गन्दगी' है; रचनात्मक दृष्टि से भी।

वैचारिकताकी असह्य अनुपस्थिति रचनाकी उपलब्धि है। लेखकने जिस जीवनका चित्रण किया है, वह उसका जाना हुआ हो सकता है—पहचाना हुआ नहीं। उसकी वैचारिक सहानुभूति और घृणा, दोनों उसकी संवेदनाके अंग नहीं हैं। वह अपनी गोपन सहानुभूतिके कारण पूंजीवादी और साम्राज्यवादी संस्थापर भरपूर चोटें करनेमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असमर्थ रहा है और एक व्यापक भ्रान्तिका जंगल बिना समेटे ही पाठकोंके आगेसे विदा हो गया है। भारतीय विधेयकोंकी तरह इस समूची रचनामें इतनी खामियाँ हैं कि उनके छिद्रसे पूँजीवाद और साम्राज्यवादको निकल भागनेके काफी मौके मिल गये हैं। इसके लिए लेखक बिलकुल पीड़ित नहीं लगता, बल्कि वह चमत्कारी प्रसंगों, काम-क्रीड़ाओं और अप यथी भाषाका उत्सव मनाता हुआ पूरे उपन्यासको रंगीन बनानेमें लगा हुआ है। नतीजा यह होता है कि सारे क्रन्दन, पीड़ा, समस्याओंकी दुखद स्थितियाँ युधिष्ठिरका 'नरो वा कुंजरो वा' बन जाती हैं। गलत परिप्रेक्ष्यमें कमजोर, ढीली और सन्दिग्ध रचनात्मकताके सहारे लेखक किसीको नहीं बल्कि अपनेही किसी अन्तरंग, गुप्त उद्देश्यको बल पहुँचा रहा है। लेखककी निरीक्षण-शक्ति घटनापरक है। घटनाके भीतर छिपा सत्य या तथ्य उससे देखा नहीं गया। उपन्यास, लगता है, जल्दबाजीमें लिखा गया है। कई जगह कथा टूटी हुई है, जैसे, पृष्ठ ३४० पर। लम्बे कालवृत्तको चित्रित करनेमें पात्रोंकी वय और वैचारिकतामें सन्तुलन भी स्थापित नहीं हो सका है।

'प्रेम अपवित्र नदी' का स्तर बाजारू उपन्यासों जैसा है—यह कहते हुए वाकई अफसोस होता है।

—डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय

कुल्हाड़ो

लेखक : निर्भय मल्लिक; प्रकाशक : गल्प भारती, १६/१७, कॉलेज स्ट्रीट, कलकत्ता-१२। पृष्ठ : ८२; क्राउन बुगना, ७२; मूल्य : १.०० रु. ('गल्प भारती' मासिकका सम्पूर्ण उपन्यास-अंक)।

समाजमें स्वच्छन्द और उच्छृङ्खल यौन-सम्बन्धोंमें विश्वास रखनेवाला वर्ग सदा विद्यमान रहा है। प्राचीन युगोंमें भी यह वर्ग सक्रिय रहा है, वर्तमान युगमें भी है। आजका यह वर्ग पश्चिमकी विद्रूप संस्कृतिका नकलची है और इसे राजनीतिक शब्दावलीमें प्रगतिवादका अथवा आधुनिकताका नाम देता है। हिन्दी-साहित्यमें भी यह वर्ग अवतरित हो रहा है और पूरी धूमधामके साथ। अपने अस्तित्वको प्रमाणित और लोकप्रिय बनानेके लिए उसने कश्मीरी कोकशास्त्रको भी मात देनेवाले उपन्यासोंकी रचना शुरू की है। 'कुल्हाड़ी' इसीप्रकारका एक उपन्यास है। रति और सम्भोगके बीभत्स शब्द-चित्रोंद्वारा जिस वासनाप्रधान एवं कामुकतापूर्ण परिवेशकी सृष्टि की गयी है, उस सफलताके लिए लेखक अपने-आपको बधाई दे सकता है। स्वभावतः इस वातावरण और परिवेशके अनुकूल भाषा भी बाजारू है।

उपन्यासका केन्द्र 'इण्टेलेक्चुअल ब्राथेल' है जहाँ 'भारतीय सभ्यता और संस्कृतिकी रक्षा करते हुए सभी मर्द और औरतोंको देहसुख पहुँचाया जाता है....स्वाधीनता मिलनेके बाद इसकी जड़ औरभी मजबूत हुई है...सेक्सुअल सैटिस्फैक्शन जितना वहाँ होता है, उतना किसी दूसरी जगह सम्भव नहीं।' यहाँ पढ़े-लिखे युवक-युवतियाँ और स्त्री-पुरुष उन्मुक्त भावसे मिलते हैं तथा एक-दूसरेकी शारीरिक भूख मिटानेमें भरपूर सहयोग करते हैं। यहाँ न कोई औरत अपनेको वारांगना महसूस करती है और न कोई पुरुष अपनेको व्यभिचारी। बार-बार कई पात्रोंके मुँहसे कहलाया गया है कि 'कुण्ठा दूर करनेके लिए इण्टेलेक्चुअल ब्राथेल आजके युवक-युवतियोंके लिए बहुत आवश्यक है।'

उपन्यासका मुख्य पात्र है धनेश। पूजापाठ उसका खानदानी काम है। वह ध्यानके लिए बैठता तो है लेकिन यह सब उसे 'बेमतलबका...काम' लगता है। वह प्रायः छिपकर शराब पीता है और खुश होता है कि उसे एक 'सड़े हुए कुसंस्कार' से छुटकारा तो मिला। उसके पिता साँढ़का व्यवसाय करते थे और मानते थे कि आधुनिक शिक्षा-दीक्षामें पली हुई लड़कियोंको ब्याहकर अपनी परम्परा निभानी चाहिये तथा 'ब्राथेल' जैसी जगहोंमें जाकर स्वतन्त्र जीवन भी जीना चाहिये। मरते समय गंगाजलके बजाय देशी शराब उन्होंने अपने गलेमें उतारी थी।

उपन्यासमें धनेशके गिर्द घूमनेवाली सुनन्दा, रूबी, इमा, संघमित्रा, रिक्ता, छाया तथा नीलिमा आदि हैं। रिक्ता मानती है कि अगर किसी लड़कीको कोई मर्द मिल जाये तो उसका लड़की होना सार्थक हो जाता है। और यहभी कि किसी पढ़ी-लिखी लड़कीको प्रेमके चक्करमें नहीं पड़ना चाहिये क्योंकि अगर कोई पुरुष किसी औरतकी देहके भीतर पैठ जाता है तो औरतके चेहरेकी रौनक गायब हो जाती है और उसकी अवस्था बूढ़ी बिल्ली जैसी हो जाती है। उसकी बड़ी बहन, छाया, कई बार बच्चे गिरा चुकी है और मानती ही नहीं, विश्वास भी करती है कि सेक्सकी भूख मिटानेमें पढ़े-लिखे लोगोंकी अपेक्षा दरबान, नौकर और रिक्शेवाले ज्यादा सक्षम और सबल होते हैं। वह अपनी छोटी बहन, रिक्ताको सीख देती है कि किसी मर्दके पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी औरतको सीरियस होकर नहीं जाना चाहिये—आजकी लड़कियोंको प्रेम नहीं, प्रेमका आवरण चाहिये।

संघमित्रा एक आश्रममें काम करती है, जहाँ कीर्तनके बाद उसे कई संन्यासियोंकी देह-भूख मिटानी होती है। वैसेभी वह त्रिवेणी बनना चाहती है, असीम त्रिवेणी, जहाँ हजारों पुरुष माथेसे डूबकर नहा सकें; क्योंकि औरतकी सार्थकता असीममें है, सीमाबद्धतामें नहीं। दूसरी ओर पैंतालीस वर्षीया नीलिमा है, जिसका कहना है कि औरत का मिलन चाहे एक पुरुषसे हो अथवा एक हजार पुरुषों से--हर हालतमें उसे रतिसुख मिलता है। उसका सम्बन्ध धनेशके पितासे रहा है और वह अक्सर कहा करती थी, 'चन्द्रभूषणजी आदमी नहीं, साँड़ हैं साँड़। वे जिस औरत को एक बार मिल जाते हैं उसे एक सप्ताहतक किसी मर्दके पास जानेकी जरूरत नहीं पड़ती।' वह विश्वास करती है कि 'हम सब आज एक ब्राथेलके प्रॉसेससे गुजर रहे हैं। सारा देशही एकदिन ब्राथेलके रूपमें परिवर्तित हो जायेगा।'

रूबीने नौकरीकी बजाय वकालतका पेशा अपनाया और केवल रेपकेसोंकी वकालत करती है। उपन्यासकारने रूबीका परिचय बड़े बीभत्स रूपमें दिया है। अपनी दैहिक भूख मिटानेके लिए वह युवकोंको भाड़ेपर लानी है। ऐसे ही कुछ युवक, आजके युवकोंके स्वरमें स्वर मिलाकर कहते हैं, 'न तो हम प्रधानमन्त्री बनना चाहते हैं, न राष्ट्रपति, सिवा इसके कि जहाँ-जहाँ हम पैदा हों, वहाँ रूबी भी पैदा हो जाये। वहाँ एक शराबकी भट्टी हो — महुएकी शराब की भट्टी। हम सभी पीकर मस्त हो जायें और रूबीकी देह के राष्ट्रपति बन जायें।''

पैंतीस वर्षीय इमा विश्वविद्यालयमें रिसर्च करती है और रिसर्चका मतलब है नयी चीजकी खोज, जो तबतक नहीं हो सकती जबतक गहरे पानीमें पैठा न जाये। वह अपने गाइडके साथ नमककी तरह घुलमिल जाती है; क्योंकि खुद इमाकी माँ जवानीके दिनोंमें अपने पतिनुमा मर्दको छोड़ दूसरे मर्दोंके साथ गहरे पानीमें पैठती थी। इमाने अपने शोध-प्रबन्धमें प्रमाणित किया था कि एक पुरुष एक औरतके लिए पर्याप्त नहीं है। उसके विचारमें प्रेमका उद्देश्य ही सेक्सुअल सैटिस्फेक्शन है। वह ब्याह और प्रेमके बीच साँप-नेवलेका सम्बन्ध देखती है।

'कुल्हाड़ी' में विस्तारसे इन व्यभिचारवादी पात्रोंका परिचय देनेके साथ-साथ सूत्र-रूपमें कुछ बातें कही गयी हैं जो इस प्रकार हैं :

(१) झूठे इलेक्शनके आधारपर ही यह सरकार बनी है। उसकी सारी व्यवस्था झूठी है।

(२) दो व्यक्तियोंके भीतर ही सीमित रखनेसे प्रेम कुण्ठित होकर सड़ जाता है, अतः प्रेमके मूल रूपको यथावत् रखते हुए हर मर्दको अधिकसे अधिक औरतोंसे और हर औरतको अधिकसे अधिक पुरुषोंसे बिना किसी कुण्ठाके मिलना-जुलना चाहिये।

(३) गर्भ-निरोधके उपायोंसे औरतकी उर्वरा-शक्ति और बढ़ जाती है।

(४) मानसिक शान्तिके लिए पूजापाठकी बजाय हस्त-मैथुन करना चाहिये।

(५) सम्भोग दैहिक प्रक्रिया है। आजका जीवन मूल रूपसे नीरस और खोखला है। सेक्सकी तीव्रताके द्वारा हम इसे कभी-कभी सरस और महत्वपूर्ण जरूर बना लेते हैं।

(६) गीत लिखना और जोर-जोरसे गाकर सुनाना चालू लौंडे-लौंडियोंको फँसानेके लिए सबसे अच्छा माध्यम है।

(७) औरतका शरीर एक सार्वजनिक रास्ता है। जो इस व्रतको नहीं समझती, वह निश्चित रूपसे मूर्ख होती है।

(८) हिन्दुस्तानमें अगर ध्रुवीकरण कभी सम्भव हुआ भी तो वह सेक्समें ही होगा, राजनीतिमें यह कतई सम्भव नहीं है।

(९) औरत कभी किसीकी नहीं होती। जब वह किसी मर्दके साथ घुलमिल जाती है, उस समय वह उसकी रहती है, बादमें वह स्वतन्त्र हो जाती है। जैसे प्रकृतिकी चीजों में हवा सबकी होती है, वैसेही औरत भी सबकी होती है।

इन सब बातोंके अलावा उपन्यासमें कहीं-कहीं वर्तमान राजनीतिक व्यवस्थापर व्यंग्य-प्रहार किया गया है और इन सारी खुली बातोंकी दलीलमें कह दिया गया है कि 'वर्तमान स्थितियोंके बारेमें कुछ कहनेके लिए सही भाषाकी जरूरत है जो छुरीकी धार जैसी तेज हो और सब लोगोंके मनके भीतर, घुसकर तिलमिलाहट पैदा कर सके ताकि आदमी अपनेको समझे'—क्योंकि ''मधुर भाषाका प्रयोग मूर्खोंको भरमानेके लिए हरामी लोग करते हैं।''

अब, पाठक खुद सोचें, वे क्या हैं, लेखक किस कोटि का है और यह उपन्यास लिखनेकी आवश्यकता क्योंकर हुई।

—शम्भुनाथ मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खिलाड़ी

लेखक : राजवंश; प्रकाशक : हिन्दी बुक सेण्टर, ४/५, बी, आसफअली रोड, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : १२८; क्राउन, ७२; मूल्य : ४.५० रु. ।

इस सामाजिक उपन्यासमें समाजके उन तत्वोंका विवेचन किया गया है जिनकेद्वारा मनुष्य अपराधी-दुनियामें पहुँचकर किसीप्रकारसे बच निकलना चाहकर भी नहीं निकल पाता । परिणामतः वह अपनीही दृष्टिमें अपराधी बन जाता है और फिर किसीभी प्रकारके अपराधको करनेसे हिचकिचाता नहीं । उपन्यासके अनेक हत्याएँ करने वाले सिद्धू और गुरु इसके उदाहरण हैं । किन्तु एक दूसरा पक्ष यह भी है कि मनुष्य अपराधी होकर भी उससे छुटकारा पानेका भरसक प्रयत्न भी करता है । ऐसी मानसिक स्थितिमें अपराधी कानूनके सम्मुख आत्म-समर्पण कर देता है । लम्बा कदवाला, एक टाँगका, फौलादी ताकतवाला, वैसाखीका सहारा लेकर चलनेवाला और चोरों-डकैतोंका सरदार 'गुरु' स्वयं स्वीकार करता है : "खूनीको एक-न-एक दिन फाँसीका फन्दा देखनाही पड़ता है । मैंने जिस सन्तानके लिए यह धन्धा अपनाया था, वह मुझे मिल चुकी है । मेरा काम समाप्त हो चुका है । सिद्धूकी हत्याक पश्चात् मैं अपने-आपको पुलिसके हवाले कर दूँगा ।"

व्यक्ति अपराधी क्यों बनता है, इसका उपन्यासमें यथार्थ चित्रण है । गुरु, राज एवं जैकी आदि इसके जीते-जागते उदाहरण हैं । जहाँ गुरु बदला लेनेकी प्रवृत्तिसे अपराधों एवं खूनोंसे नहीं डरता, वहाँ सिद्धू शैतानी और मक्कारीका प्रतिरूप है । राज पितृसेवक, सहृदय एवं दयालु है । अनिंद्य सुन्दरी वीणा प्रतिशोध लेनेके लिए चण्डीका अवतार बन जाती है और राजकी रक्षामें अपने प्राणोंकी बाजी लगा देती है ।

भाषा एकदम सरल है, शैलीमें संवादकात्मकता है और चरित्र-चित्रण उपयुक्त है ।

—डॉ. रामाभिलाष त्रिपाठी

कहानी संग्रह

एक बुतशिकनका जन्म

लेखिका : श्रीमती विजय चौहान; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १४३; क्राउन, ७२; मूल्य : ५.०० रु. ।

इधर सन् ७० के आसपाससे हिन्दी-कहानी-संग्रहों और संकलनोंमें एक बात जो विशेष तौरपर नजर आने लगी है, वह है लेखक या सम्पादकका नयी पीढ़ीके प्रति मोह । यह मोह कुछ लोग जानबूझकर अपनी रचनाओंमें दर्शानेकी चेष्टा करते हैं, कुछ लोग स्वाभाविक रूपसे नयी पीढ़ीके प्रति लेखकीय दायित्वका निर्वाह करते हैं और कुछ लोग आडम्बर रचते हैं । यह आडम्बरयुक्त मोह नयी पीढ़ीके हर कर्मको इतना घृणास्पद, और जटिल एवं अस्वाभाविक बना देता है जो क्षम्य नहीं होता । श्रीमती विजय चौहानकी कुछ कहानियाँ जब इसी रंगमें लिपटी हुई पढ़नेको मिलीं तो मुझे विशेष आश्चर्य नहीं हुआ, कारण, श्रीमती चौहानकी लेखनी नयी पीढ़ीके सम्पर्कमें कुछ समयके लिए आयी जरूर है, पर उसने नयी पीढ़ीकी वास्तविकताओंको, दर्दको, कुण्ठाको, सही समस्याओंको, उलझनोंको नजदीकसे छुआ नहीं है । नयी पीढ़ीके संवेदनशील मनको निराशा, आक्रोश और कुण्ठाके क्षणोंमें लेखिकाने देखा जरूर है, पर इस देखनेमें कहीं गहरी दृष्टि नहीं है, एक दृष्टि-स्पर्श भर है ।

श्रीमती चौहानका कहानी-संग्रह 'एक बुतशिकनका जन्म' कई प्रभावोंकी मिली-जुली कहानियोंका एक ऐसा संग्रह है जिसे हम दो दृष्टियोंसे परख सकते हैं । पहली दृष्टि—पाठकीय । एक साधारण पाठकको, जो कहानीको आलोचनाकी दृष्टिसे नहीं देखता, बल्कि मनोरंजन और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय काटनेके लिए पढ़ता है, यह संग्रह कुछ ज्यादा प्रभावित करेगा; विपरीत इसके एक आलोचकको ये कहानियाँ, कई बातोंको सोचनेके लिए आवश्यक रूपसे मजबूर करती हैं और यही दूसरी दृष्टि—आलोचकीय दृष्टि—इस संग्रहको कई प्रश्नोंके सामने ला खड़ा करती है। क्या यह जरूरी है कि नयी पीढ़ीको माध्यम बनाकर वे लोग भी कहानियाँ लिखें जो नयी पीढ़ीकी संवेदनाको, उसकी छटपटाहटको, उसकी उलझनों और कुण्ठाओंको ठीक ढंगसे नहीं समझ पाते? क्या यह जरूरी है कि नयी पीढ़ीको, नयी पीढ़ीके संघर्षको गलत दिशामें ही मोड़ा जाये? क्या 'युद्ध' हरतरहसे एक अनावश्यक स्थिति ही है? ये सारे प्रश्न सिर्फ इसलिए ही खड़े हो जाते हैं कि श्रीमती चौहानने इन्हीं बातोंको आधार मानकर अपनी कहानियोंके संसार को रचा है।

श्रीमती चौहान उस समयकी लेखिका हैं जिस वक्त 'नयी कहानी' का आन्दोलन शुरू हुआ था। कुछ अंशोंमें और कई जगहोंपर उल्लेखित वे 'नयी कहानी' आन्दोलनमें हिस्सेदार भी रही हैं और शायद यही कारण है कि इस संग्रहकी अधिकांश कहानियोंमें 'नयी कहानी' वाली चीजें मिलती हैं। फिरभी इनकी कुछ कहानियाँ ऐसी हैं जो जन-साधारणके बीचकी कहानियाँ हैं, साधारण व्यक्तिकी कहानी। दस नम्बरिया, झण्डू मिरासी, एण्टी हीरो, घुन, कहानियोंको हम इस 'कैटेगरी' में रख सकते हैं, जिनमें हमारे बीचका कोई आदमी झलक आता है। पर इन कहानियोंके 'हीरो' भी कहीं-कहीं असाधारण कर्म करते हैं,—जैसे दस नम्बरियाका नाजर, जो मिलेटरीमें न होते हुए भी मिलेटरीका पथ-प्रदर्शक हो जाता है और मिलेटरीके आगे-आगे चलता है।

पर लेखिकाका जो सबसे बड़ा दावा है—आजादीके बाद हमारे समाजमें लोगोंके दिलो-दिमागमें नये और पुराने मूल्योंके बीच जो संघर्ष चल रहा है, ये कहानियाँ उस प्रक्रियाको समझने और अभिव्यक्त करनेका प्रयास है—वह इन कहानियोंमें पूर्ण नहीं होता। दो-तीन कहानियों—'एक बुतशिकनका जन्म,' 'घुन,' 'औव्वा,' 'घेट्टो'—को छोड़कर और किसीभी कहानीमें किसी 'संघर्ष' की बात नहीं उभरती, बल्कि नयी कहानियोंमें साधारण घटनाओंका उल्लेख साधारण शब्दोंमें प्राप्त होता है।

यों संग्रहकी पहली कहानी 'एक बुतशिकनका जन्म' उन स्थितियोंकी कहानी है जिनसे आजकी पीढ़ीको पग-पगपर जूझना पड़ रहा है, हताश होना पड़ रहा है और अपनी हर आकांक्षाओं, सपनोंको कफनमें लपेटकर वहीं कुछ करनेको बाध्य होना पड़ रहा है, जो वह नहीं चाहती। व्यवस्थासे लड़ना, टूटना और व्यवस्थाको तोड़नेकी चेष्टा करना, यही आजके युवा-वर्गकी नियति है, जो इस कहानी का मूल स्वर है। पर अन्य कहानियोंमें ये स्थितियाँ कहीं भी नहीं हैं, कमसे कम इस स्पष्टताके साथ तो नहीं ही और शायद इसीकारण यह कहानी इस संग्रहकी सर्वश्रेष्ठ कहानी बन पड़ी है।

'युद्ध' की कुछ कहानियाँ भी इस संग्रहमें हैं जिनको लेखिकाने 'युद्ध-विरोधी' कहानियाँ कहा है और कहानियोंके बीचभी यही चीज नजर आती है कि तमाम बातोंके बावजूद 'हिन्दोस्तान और पाकिस्तान' के लोगोंके बीच कोई महत्वपूर्ण संघर्ष नहीं है। वतन, इच्छोगिल, दस नम्बरिया जैसी कहानियाँ इस बातको प्रमाणित करती हैं। पर क्या युद्धको एकदम गलत ही माना जाये? या 'युद्धकी स्थिति' को नकारा जाये? 'शान्तिप्रियता' अपनी जगहपर स्वीकार्य है पर 'युद्ध' भी तो एक स्वाभाविक स्थिति है? फिर लेखिकाने युद्धके सन्त्रास, भय और सैन्य-प्रक्रियाको घरकी चहारदीवारीके बीचसे जानने-समझनेकी जो चेष्टा की है, जो युद्धकी कल्पना की है, वह एक 'व्यवस्थित' व्यक्तिके दिमागकी कल्पना ही लगती है जिसे युद्ध या शान्तिसे कुछ खास लगाव नहीं होता, जिसकी स्थितियोंमें इससे कोई खास अन्तर नहीं पड़नेवाला होता।

संग्रहमें कुछ कहानियाँ तीसरे रंगकी भी हैं—व्यंग्य-प्रधान। चैनल, एण्टी हीरो, नया आलोचक, पंचतन्त्र—१९६७, बाक्स-ऑफिस आदि कहानियाँ अलग-अलग स्थितियोंपर अलग-अलग ढंगसे प्रहार करती हैं—व्यंग्यात्मक प्रहार। इन कहानियोंमें व्यंग्यको आधार बनाया गया है—सामाजिक, राजनीतिक, वैयक्तिक चोंचलोंको दर्शानेके लिए, और इसमें लेखिका पूर्णतया सफल रही है।

अन्तमें इतनाही कि तेइस कहानियोंका यह संग्रह अपनी कुछ खास विशिष्टताएँ अगर रखता है तो सिर्फ व्यंग्य-कहानियोंके आधारपर। कारण, ऐसी कहानियोंका परिवेश और इनके पात्र लेखिकाके आसपासके व्यक्ति हैं—साधारण व्यक्ति। पर 'नयी पीढ़ी' या 'युद्ध' वाला क्षेत्र लेखिकाका नहीं है, इसलिए इसतरहकी कहानियोंमें एक बनावट और बुनावट है जो कहानीको पठनीय तो बनाता है, प्रभावपूर्ण नहीं। यों श्रीमती चौहानकी भाषामें वह रोचकता और प्रवाह है जो आजके अधिकतर कथाकारोंमें प्राप्य नहीं है।

—**सुरेन्द्र तिवारी**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोमबत्ती जलती रही

लेखक : डॉ. रवीन्द्र; प्रकाशक : हिन्दी प्रचार सभा, सदर, मथुरा। पृष्ठ : ६९; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.०० रु.।

बहता पानी निर्मला

लेखक : भागीरथ कानोडिया; प्रकाशक : सस्ता साहित्य मण्डल, कनाट सरकस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : २१६; क्राउन, ७२; मूल्य : ८.०० रु.।

प्रस्तुत संग्रहकी कहानियाँ आधुनिक जीवनकी झाँकियाँ प्रस्तुत करती हैं। पहली कहानी **'आषाढ़के बादल'** विधि के विधानकी कथा है। जीवनके सुखमय क्षणोंमें आत्म-विभोर डम्बरको जमींदारके बुलावेपर जाना पड़ता है और उसकी पत्नी गौरी ठगी-सी खड़ी रह जाती है। पर गौरी भी कर्तव्यसे प्रेरित होकर नम्बरसिंहके रूपमें डम्बर की सहायक बन जाती है। आषाढ़के बादल आतेही भावनाओंमें उभार आनेपर दोनों अपने आपेमें न रहकर एकाकार हो जाते हैं। इसीप्रकार **'अँधेरी घाटियाँ'** में एक छात्र परीक्षामें सफलता प्राप्त करनेके लिए नारीके छद्म वेशमें परीक्षकको मूर्ख बना लेता है। **'कायर'** में विनय अभिसारके लिए उपस्थित लड़कीका खुला निमन्त्रण पाकर भी उसे स्वीकार नहीं कर पाता, जिससे वह जिन्दा लाश, तंगदिल आदिकी उपाधिसे कायर घोषित कर दिया जाता है। **'ऊब'** परिवार नियोजनकी कहानी है। **'फटा आँचल'** दहेज प्रथापर करारी चोट। **'मोमबत्ती जलती रही'** विवाह प्रथा को अनावश्यक माननेवाली मिस मुंजुलाके हृदय-परिवर्तनका किस्सा है। **'मिनी मर गई'** रूढ़िवादिताके परिणामस्वरूप अनमेल विवाह पर व्यंग्य है।

प्रस्तुत संग्रह में डॉ. रवीन्द्रने पात्रोंकी मानसिक परिस्थितियों एवं उनकी भावनाओंका चित्रण बहुतही सुन्दर ढंग से किया है। 'ऊब,' 'फटा आँचल,' 'मोमबत्ती जलती रही' कहानियाँ इस दृष्टिसे अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध हुई हैं। 'अँधेरी घाटियाँ' में स्त्री सौन्दर्य लोलुपोंके प्रति करारा व्यंग्य है।

नवीन प्रकाशनोंके
परिचय, विवेचन,
आलोचना और मूल्यांकन
का मासिक
'प्रकर'

× × ×

'बहता पानी निर्मला' ७० कहानियोंका संग्रह है। इसे पढ़ते हुए पंचतन्त्र और हितोपदेशकी स्मृति सहसा हो आती है। वस्तुतः ये कहानियाँ कथावाचकोंके लिए दृष्टान्तोंका कार्य करनेमें सक्षम हैं। फिरभी पंचतन्त्रादि में और इस संग्रहमें कुछ अन्तर अवश्य है कि उसमें पशु-पक्षियोंके माध्यमसे एकका अन्त और दूसरेका आरम्भ क्रम रखा गया है जबकि इसमें अधिकांशतः कहानियाँ कहावतों एवं लोककथाओंपर आधारित हैं। विशेष रूपसे राजस्थानी कहावतोंका प्रयोग है। जन-सामान्य के लिए पूर्णरूपेण शिक्षाप्रद और साथही मनोरंजक भी हैं।

समस्त कहानियोंको तीन भागोंमें विभक्त किया जा सकता है : कहावतें एवं लोककथाएँ, शिक्षाप्रद-चारित्रिक एवं मनोरंजक : (१) कर्जो भलो न बाप को, पाप मूल अभिमान, कहिये बचन विचारि, निन्यानवेका फेर, घाघ, सासरो सुख बासरो, ऊँट बिलाई ले गई, सूरज और राणादे, त्रिया हठ, भक्त और भगवान, मृग शिरा, राजा भोज और चार चोर, तीन पीढ़ीका राज्य एवं सूत न कपास जुलाहेसे लट्ठमलट्ठा कहानियाँ प्रथम वर्ग की हैं। (२) सदा न रहे, तृष्णा और सन्तोष, कंजूसी बुरी, मितव्ययिता अच्छी, परिग्रह, ब्राह्मण और शेरनी, सिंह किसका जजमान, सूत्यां की तो पाड़ाई जणै, बहुत गई थोड़ी रही, पुनर्मूषकोभव, राईका भाव रात गया एवं राजा और किसान आदि दूसरे वर्ग की कहानियाँ हैं। (३) चरणोंका प्रसाद, भोला जवाँई, ब्याह बेटीका—फेरा माँ का, चमारिन और चूड़ियाँ, दो गप्पी, भैंस और कम्बल, खीर का भोजन और चौबेजी एवं कल नहीं आज आदि तीसरे वर्ग की हैं।

प्रायः सभी राजस्थानी वातावरणसे प्रभावित रोचक एवं सजीव कहानियाँ हैं। भाषामें राजस्थानी पुटके रहते हुए भी सभी सरस एवं सुबोध हैं। जहाँ राजस्थानी शब्दावली होनेके कारण भाषा कुछ क्लिष्ट-सी है वहाँ लेखकने टिप्पणी देकर सरल कर दिया है। शैली रोचक और प्रभावोत्पादक है।

—डॉ. रामाभिलाष त्रिपाठी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर. यू. आर.

लेखक : कैरेल चैपेक; अनुवादक : निर्मल वर्मा; प्रकाशक : साहित्य अकादेमी, रवीन्द्र भवन, ३५, फिरोज़शाह रोड, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : १००; डिमाई, ७२; मूल्य : ४.०० रु.।

चेक भाषाके सुविख्यात लेखक कैरेल चैपेककी यह सुप्रसिद्ध नाट्यकृति एक सर्वथा नयी समस्याकी देन है। चैपेककी सर्वोत्तम कृति होने और यन्त्रीकरणकी विभीषिका से सम्बद्ध होनेके नाते इसका हिन्दी रूपान्तर हरप्रकारसे अभिनन्दनीय है।

'आर. यू. आर.' द्वारा लेखकने यन्त्र-मानव 'रोबोट' शब्दका आविष्कार किया है और इसप्रकार 'रोसुम्स यूनिवर्सल रोबोज' के बहाने एक 'यूटोपिया' की सृष्टि करते हुए मानवजीवनके भविष्य, मानवताके भावी नाश एवं विनाश और 'मैन एण्ड मशीन' का द्वन्द्व चित्रित किया है। विषय-वस्तुकी इस नवीनताके कारण आलोच्य नाटक अत्यन्त विचारोत्तेजक बन पड़ा है।

'आर. यू. आर.' कुल ४ अंकोंमें विभक्त है। प्रथम अंकमें 'रोबोट' कारखानेका केन्द्रीय कार्यालय है, जहाँ जनरल मैनेजर दोमेन अपनी अतिथि हेलनाको यन्त्र-मानव की निर्माण-प्रक्रिया, उनकी कार्यप्रणाली और मूल आविष्कर्ता रोसुमके जीवन-संचार-विज्ञानका परिचय देते हैं। हेलना इस विज्ञानके प्रति अपनी असहमति (प्रतिक्रिया) प्रकट करती है। आदमीको नकारकर 'रोबोट' का निर्माण उसके अनुसार एक बौद्धिक अभिशाप है। इस सन्दर्भमें 'रोबोट' का सविस्तार विश्लेषण किया गया है। 'रोबोट' में चूँकि 'जीवनके प्रति आसक्ति' नहीं होती, उनमें संकल्प शक्ति और ऊर्जा नहीं है, वे चूँकि शारीरिक क्रिया—सेक्स, प्रजनन आदिसे वंचित होते हैं, इसलिए 'रोबोट' का यह उत्पादन हेलनाको एक बड़ा क्रूर एवं करुण कर्म प्रतीत होता है। किन्तु धीरे-धीरे ये वैज्ञानिक एक 'सुपर रोबोट' का निर्माण कर लेते हैं, जिसमें 'पीड़ा की नसें' डाल दी गयी हैं, ताकि वे अमानुषिक अथवा निर्मम आचरण न कर सकें। 'दोमेन' हेलनाको 'रोबोट' ढालनेके टब, हड्डियोंके कारखाने, नसों-नाड़ियोंको बुनने वाले यन्त्र और 'कण्डम' किये गये मालका दिग्दर्शन कराता है, साथही यह व्याख्या भी करता है कि एक 'रोबोट' ढाई मजदूरोंके बराबर कार्य करके कितना उपयोगी सिद्ध हुआ है। 'रोबोट' चूँकि समयका बहुत पाबन्द होता है, भयानक रूपसे कुशाग्रबुद्धि होता है, उसमें सोचनेकी असाधारण शक्ति होती है और चूँकि वह खतरेमें (जैसे खानोंमें, युद्ध क्षेत्र आदिमें) कार्य करनेके लिए सर्वोपयुक्त है, इसलिए विज्ञान उसे इस युगकी सबसे बड़ी उपलब्धि मानता है। ये वैज्ञानिक यूनिवर्सल 'रोबोट' के स्थानपर पृथक्-पृथक् वर्णों, भाषाओं एवं संस्कारोंमें ढले राष्ट्रीय 'रोबोट' की योजना बनाते हैं, पर मादा 'रोबोटों' के निर्माण, 'रोबोटों' में आत्माके अभिनिवेश आदि सुझावोंको अनुत्पादक, खर्चीला और अनुपयोगी मानते हैं। 'दोमेन' इनकी तुल्योपयोगिताकी व्याख्या करता हुआ समझाता है कि 'रोबोटों' की भरमारसे किसप्रकार तमाम वस्तुएँ बेदाम हो जायेंगी और मनुष्यकी बेरोजगारी, गरीबी आदि समस्याएँ स्वतः समाप्त हो जायेंगी। वह पुर्जे बेकार हो जाने के बाद 'रोबोट' में होनेवाले विकार 'मिरगी' ('रोबोट मरोड़') की भी चर्चा करता है और इसप्रकार सापेक्षतावादी भौतिक मूल्योंका आत्यन्तिक बखान करता है।

इस परिचयात्मक विवेचनके बाद अगले अंकोंमें 'रोबोटों' के अन्तर्राष्ट्रीय संगठन और उनके विद्रोहकी कथा वर्णित है। विश्वव्यापी माँगके अनुसार व्यावसायिक हितमें जब 'रोबोटों' की संख्या ३६ करोड़तक बढ़ा दी जाती है तो ये यन्त्र दैत्य अकस्मात् विद्रोह कर बैठते हैं। ये मनुष्य मात्रसे घृणा करने लगते हैं (६८)। आवश्यकता न होनेसे इस बीच मनुष्य का जन्म लेना बन्द हो जाता है और कुपरिणामस्वरूप ये यन्त्र-दानव कई प्रदेशोंपर कब्जा कर लेते हैं, मानवमात्रके संहारमें जुट जाते हैं। धीरे-धीरे मानवलोक प्रायः निर्जन हो जाता है, किन्तु विडम्बना यह कि मानवके अभावमें 'रोबोट' का निर्माण भी रुक जाता है। 'रोबोट' की आयु केवल बीस वर्षकी होती है, इसलिए 'दुनियाका अन्त निकट' आ जाता है। वृद्धि मनुष्यका लक्षण है, यन्त्रका नहीं। मानव-युगको समाप्तप्राय समझ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर हेलना शंकाकुल हो उठती है। अलकुइस्ट और हेलना निर्माण-प्रकियाके सन्धानमें संलग्न हो जाते हैं। हेलनाने अज्ञान या आवेशवश रोसुमके उस गुप्त दस्तावेजको भी जला डाला था, जिसमें निर्माणका 'फार्मूला' सुरक्षित था। अन्तमें हेलना और 'प्राइमस' आदम-ईवकी भूमिका अदा करते हैं और इसप्रकार मानव-जीवनकी ढहती आस्थाएँ फिर प्रकट होने लगती हैं। पीड़ा तथा आत्मासे युक्त नये 'रोबोट' अब मात्र मशीन न रहकर एक नयी मंगलाशा का सन्देश देते हैं। यहीं नाटक का 'उपसंहार' हो जाता है।

प्रकट है कि 'आर. यू. आर.' आधुनिक बौद्धिकताके अभिशाप, अद्यतन तकनीकी ज्ञानके दारुण परिणाम और यन्त्रकी यन्त्रणाका जो लोमहर्षक विवरण दिया है, वह स्वयंमें बड़ा भयावह है। 'मेहनत और थकान' को मानव की पूँजी न मानकर 'रोबोट' को जीवन-सर्वस्व स्वीकार करनेवाला यह भौतिक विज्ञान यन्त्रीकरणके इस आधिक्य से जिसप्रकार कराह रहा है, उसका भावी-भूत, वर्तमान इस कृतिमें अंकित हुआ है, जो निस्सन्देह बड़ा प्रभावोत्पादक है। अनुवाद मौलिक कृतिका-सा आनन्द देता है, इसलिए कि चेक भाषामें निर्मलजीकी पर्याप्त गति और स्थिति है। नाटक अभिनेय भी है। ऐसी पुस्तकोंका हिन्दी-रूपान्तरण सर्वथा उपयोगी और अभिनन्दनीय माना जायेगा।

—डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

समाधान

लेखक : रामेश्वरसिंह काश्यप; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य संसार, पटना-४। पृष्ठ : १०६; क्राउन, ७१; मूल्य : ४.५० रु.।

समाधान 'राष्ट्रीय एकताकी भावनापर आधारित' रामेश्वरसिंह काश्यपका 'काव्य-नाटक' है जो इसके पहले आकाशवाणीसे प्रसारित हो चुका था। आकाशवाणीके पटना केन्द्रसे साहित्यिक कार्यक्रमोंमें कैसा फरमाइशी साहित्य दिया जाता है, इसका यह एक नमूना है। बाजार में फरमाइशी माल अच्छे समझे जाते हैं, पर फरमाइशी साहित्य बनावटी होता है। वही बनावटीपन इस 'समाधान' नामके काव्य-नाटकमें है। लेखकने स्वयं इसे काव्य-नाटक कहा है। नाटक तो यह जरूर है, क्योंकि पाँच अंकोंमें इसकी कथा विभक्त है। अंकोंके अन्तर्गत यथास्थान रंग-संकेत हैं और नौ पात्र हैं जिनमें परस्पर वार्तालाप होता है, किन्तु काव्यका रस इसमें कहाँ है, यह पता नहीं चलता। इसकी पंक्तियोंको खूब निचोड़नेपर एक-आध बूँद हाथ लगे तो लगे! काव्य यदि यह है तो केवल इसीलिए कि गद्यके समान पंक्तियोंको लगाकर न लिखकर ऊपर-नीचे करके लिखा गया है।

इसका 'समाधान' नाम भी ठीक उल्टा है। इसमें तो समस्या मुँहबाये खड़ी है, समाधान उसका हुआ कहाँ? लेखकने स्वीकार भी किया है कि 'इस नाटकमें समाधान प्रस्तुत किया भी नहीं गया है।' तो फिर 'समाधान' नाम का औचित्य? इसके बदले राष्ट्रीय एकताकी समस्याको व्यञ्जित करनेवाला कोई नाम दिया जाता तो एक बात होती।

एक बात और है। इसके पात्र उन समस्याओंके नाम अवश्य यदा-कदा लेते हैं जिनसे राष्ट्रीय एकताको धक्का लगता है, पर इसका मूल कथानक राष्ट्रीय एकताकी समस्यासे सम्बन्धित है अथवा राष्ट्रकी किसी अन्य समस्या से, यह साफ नहीं होता। धनलोलुप तान्त्रिक स्वामीचरण, पुराना जमींदार महीप और उद्योगपति ढुँढिराज—ये सब मिलकर एक दंगा करा देते हैं जिसमें महीपकी पत्नी राधा, अन्यायका विरोध करनेवाली आधुनिक विचारोंकी युवती गोदावरी, प्रगतिशील विचारोंका युवक शफीक—ये सब मारे जाते हैं। शफीकने कहा है कि दोनों पक्षोंमें समझौता असम्भव है, कोई माननेके लिए तैयार नहीं, किन्तु झगड़ा किस बातका था, इसीका पता नहीं चलता। इसतरह इसके कथानकसे कोई साफ कहानी भी नहीं निकलती। 'लोहासिंह' के यशस्वी नाटककारसे ऐसे नाटककी आशा नहीं थी।

पुस्तकमें मुद्रणकी भूलें भी हैं।

—डॉ. सियाराम तिवारी

मुद्राराक्षस

सम्पादक : डॉ. सुरेशचन्द्र गुप्त; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य संसार, १५४३, नयी सड़क, दिल्ली-६। पृष्ठ : ३९+१६९; क्राउन, ७२ (तृ. सं.); मूल्य : ३.५० रु.।

विशाखदत्तकृत "मुद्राराक्षस" संस्कृत-नाट्य-साहित्यकी एक अमूल्य निधि है। इसे हिन्दीमें सर्वप्रथम अनूदित करनेका कार्य भारतेन्दु हरिश्चन्द्रने किया था। यह संस्करण खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुरके १९२५ ई. में प्रकाशित आठवीं आवृत्तिके आधारपर सम्पादित किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मुद्राराक्षस" की कथावस्तु सर्वविदित है। 'इस नाटकके नामकरणका आधार यह घटना है--अपनी मुद्रा को अपनेही विरुद्ध प्रयुक्त होते देखकर राक्षसका स्तब्ध अथवा विवश हो जाना। इसमें चन्द्रगुप्तके राज्यारोहणके उपरान्त चाणक्यद्वारा राक्षसकी राजनीतिक चालोंको विफल कर देनेकी कथाको सात अंकोंमें सुचारु रूपमें प्रस्तुत किया गया है।"

मूल नाटकके अनूदित अंशके पूर्व डॉ. गुप्तने उक्त नाटककी समीक्षा भी प्रस्तुत की है, जिसमें नाटकके कथानक, अर्थ-प्रकृतियाँ, नाट्य सन्धियाँ, नाट्य वृत्तियाँ, रस आदिपर अपने व्यक्तिगत विचार प्रकटकर नाटककी मान्यता औरभी बढ़ा दी है। प्रस्तुत समीक्षाके पीछे आलोचकका गहन अध्ययन झलकता है।

जहाँतक नाटकके अनुवादका प्रश्न है, वह एक सफल भावानुवाद है जिसमें कहीं शिथिलता नहीं आ पायी है। नाटककी प्रत्येक पंक्तिमें स्वाभाविकता दृष्टिगत होती है।

—डॉ. सोमशेखर 'सोम'

काव्य संकलन

बोलता हुआ सच

कवि : रामगोपाल परदेसी; प्रकाशक : प्रगति प्रकाशन, बैतुल बिल्डिग, आगरा-३। पृष्ठ : ९२; डिमाई, ७२; मूल्य : १०.०० रु.।

'बोलता हुआ सच' स्वतन्त्र गीत गजलोंके माध्यमसे गीतकारकी पद्यात्मक आत्मनिवेदनके रूपमें विश्रृंखलित जीवन-गाथा है। यही गीत यदि क्रमबद्ध रूपसे संकलित कर दिये जायें तो संकलन भावात्मक आत्मनिवेदनका रूप प्रस्तुत करनेमें सक्षम हो सकता है। गीतोंमें भावनाकी अन्विति प्रधान होनेके कारण उन्हें कल्पना-विहारी होनेका लांछन सदैव ही स्वीकार करना पड़ा है, परन्तु गीतकार ने जीवनकी भावनात्मक कटुताको जिस सत्य जीवन-यथार्थ के विभिन्न संघटकोंमें अपनी लेखनीके माध्यमसे स्वर-साध्य बनाया है, वह उसकी आन्तरिक गीतात्मकताको सहजही उन्मेषित कर देता है। निबन्ध और कविता किसीभी विषयपर लिखी जा सकती है इसका स्वयमेव विचार जान्सन और सप्तकी स्वीकार करते हैं किन्तु 'बोलता हुआ सच' इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि जीवनके किसीभी पहलू, किसीभी घटना, किसीभी क्षण, किसीभी परिवेश और किसीभी विषयपर गीत लिखा जा सकता है। परदेसी गीतके माध्यमसे ही दूरभाष (फोन) वार्ता करते हैं, गीत में ही वे यात्रा-विवरण दे देते हैं तथा अतीतके भोगे यथार्थ और वहन की गयी कटुताको भी चित्रित कर देते हैं। जीवनकी सही, वास्तविक सत्यपनका यथार्थ विवरण और दैनन्दिन मान्यताओंका स्वाभाविक लेखा गीतकी स्वर-साधनाओंमें कैसे भावात्मक तुक-बद्ध कर लिया जाता है, इसके लिए परदेशीका 'बोलता हुआ सच,' अभिव्यक्तिकी गवाही देता हुआ दस्तावेज है।

५१ गीतोंके संकलनका प्रतिपाद्य एक व्यक्तिके जीवन के मात्र भावनात्मक अर्न्तद्वन्द्व ही नहीं बल्कि भोगे यथार्थके चित्र-फलक हैं। परिवारकी आत्मीयता, परिवारमें प्राकृतिक प्रकोप, शिशुओंका असामयिक निधन, प्रेयसीकी अवहेलना तथा जीवनके प्रत्येक रोमसे जीवनका जो सच बोलता है, उसीकी श्रृंखला लयात्मक स्वरमें प्रस्तुत संकलनमें सन्निविष्ट है। भावके अनेक व्यापारोंके बीच अनवरत दुख और वियोगकी पीड़ा सहते-सहते उनका आत्मभाव बदल गया है और इस दुखद गाथाके स्वर अब कहते हैं 'मैं इसी जलती उमरके साथ रहना चाहता हूँ' तथा अन्ततक यही अनुगूँज सुनायी देती है 'दौड़कर मैं शूल पथ पर पाँव यह घायल करूँगा' दुखको सहन करना, सहन करते-करते एक अभ्यास बन जाना तथा वही जीवन-आदर्श बन जाना, यही कविका प्रेय भी है और इसी जिन्दादिलीका कविको श्रेय मिलना चाहिये। दुखोंकी मारसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविका भावुक मन घबड़ाया नहीं बल्कि जीवनकी कारुणिक धारामें जो संसारिकोंके राग-द्वेष रसके छोटे-छोटे बिन्दु बनकर उभरे हैं, उनका भी अपना महत्व है। गीतकारके गीतोंका प्रवाह शृंगार और करुणाके दो कूलोंसे होकर अपना मार्ग प्रशस्त करता है। परन्तु इस हृदयमें बहती हुई रसधारामेंसे दोनों किनारे अलग भी हैं और एकमें ही मिले हुए भी।

गीत-संकलनकी वस्तु-सँयोजना जहाँ परदेशीके जीवन सम्बन्धी मार्मिक घटनाचककी परिणति नहीं है, वहीं प्रगीत और नव-गीतकी धारामें एक व्यक्तिके जीवनकी मर्मान्तक संघातिक स्थितियोंका फलक भी है। सभी गीतोंके पीछे करुणा और शृंगारका अद्भुत मिश्रण है। गीतोंकी अपनी एक द्वन्द्वात्मक स्थिति है जिसमें अनेक प्रकारके विरोध हैं। सामाजिक विरोध 'मन्दिरका ले नाम मुझे तुम मदिरालयमें ले आये हो', मन-रहितको अपना गीत समर्पित करना, आत्म-निवेदनका विरोध 'एक केवल मन नहीं है', मानवतामें विपर्यय 'हम गाते कुछ मजबूरी है', तथा सुख-दुखका विरोध, 'भरी है आग जीवनमें', कितनीही विरोधी मानसिक शीतल और दाहक ज्वालाओंका एकत्र गीत-संकलनमें है। समष्टिमें परदशीका गीतकार दैनिक जीवन में और जीवनसे सम्बन्धित प्रत्येक क्षणमें और उसकी क्षणवादी घटनाओंमें अपनी आन्तरिक स्वर-लहरियोंके माध्यम से संगीतका समन्वय करके गीतकी रचना कर लेता है। जीवनमें जितनी ही कडुवाहट है उतनी ही उसके प्रति गीतकारकी आस्था है। जीवनमें जितनी वेदना है उसे भोगनेका कविके पास उद्दाम साहस है। जीवनमें जितना विपर्यय और विरोध-ग्रस्तता है, उसे वहन करनेमें कविकी मान्यता कहीं शिथिल नहीं होती। जीवनका जोभी प्रतीयमान उन्मुक्त और अनवेष्ठित पहलू है उसीको गीतकार संगीत, लय, ध्वनिके माध्यमसे प्रस्तुत कर सकनेमें सक्षम हो सका है।

संकलनके गीतोंका एक और सहज पक्ष आकर्षणका विषय है कि जीवनकी भावात्मक अमूर्ततासे हटकर गीतोंको संगीत और मंचकी मंजूषासे बहकाकर जीवनकी गली, घाट, दफ्तर, फाइल, सड़कसे लाकर युक्त कर देना। दूसरे शब्दोंमें मात्र भावात्मक क्षणोंके परिदृश्यसे हटाकर जीवनकी सामान्य परिवेशसे युक्त कर देना।

समष्टिमें परदेसीके जीवनका घटनाक्रम अक्रमबद्ध रूपमें 'बोलता हुआ सच' में संगुम्फित है। जिसमें सच, बोलता हुआ है, साथही 'बोलता' (बोलनेवाला) इस संकलन में 'सच' (वास्तविक) रूपमें प्रकट हुआ है। वह मात्र बोलता हुआ ही सच नहीं है, बल्कि बोलता (परदेसी) भी सच हुआ है।

– डॉ. ओमप्रकाश अवस्थी

समर्पित एकान्तके फूल

कवि : मदनलाल शुक्ल; प्रकाशक : प्रकाशन प्रतिष्ठान, १०४ ए/१६५, रामबाग, कानपुर-१२। पृष्ठ : ६२; डिमाई,६७; मूल्य : ६.०० रु.।

इकतारा मनका किनारा

कवि और प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १४४; रायल, ७०; मूल्य : ७.०० रु.।

हृदय-हृदयके गीत

सम्पादक : ठाकुर भूपतिसिंह; प्रकाशक : नव साहित्य प्रकाशन समिति, पाटन, जबलपुर। पृष्ठ : १२४; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.०० रु.।

हृदयकी निधि

कवि : जगलाल रामा, फोंजी साक (मारिशस)। पृष्ठ : ३२; क्राउन, ७२।

'समर्पित एकान्तके फूल' की सड़सठ कविताओंमें आत्म-कथ्यका स्वर प्रधान है। आत्मसमर्पण, आस्था, प्रेम, विश्वासकी स्फुट दार्शनिक ध्वनियाँ यहाँ हैं, पर वे साधारण हैं। कविने जहाँ जीवनमें कर्म-संघर्षके स्वर जगानेका प्रयास किया है, वहाँ कुछ स्फूर्ति है। अहम्के विसर्जनकी मनःस्थितिको जिस अकृत्रिम ढंगसे कुछ कविताओंमें व्यक्त किया गया है, उससे तो लगता है कि इस कविमें काव्य-यश अर्जित करनेकी लिप्सासे अधिक कुछ औरभी है; पर अन्तमें 'मारसल' का अपने लिए लिया गया उद्धरण आत्म-श्लाघा प्रकट करता है और एक जागरूक पाठकको शंकित करता है कि कुल मिलाकर कहीं कविका अहम् ही विनम्रताके व्याजसे, आत्म-विज्ञापनका जाल डाले तो नहीं बैठा है?

पर, इधर कविकी नयी कृति 'इकतारा मनका किनारा' पढ़कर पहली प्रतिक्रिया यह होती है कि कविता अगर कुछ बड़े कवियोंकी बपौती नहीं है तो आलोच्य कृति का कवि कविताके सद्धर्म-पथपर अग्रसर है। उसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवितामें आत्मनिवेदनासक्तिकी जटिल अभिव्यक्तिको सरलतासे सम्प्रेषित करनेकी शक्ति-साधनाका उन्मेष अनुभव होता है। किन्तु जटिल आत्मकथ्यके सरल-सम्प्रेषणके रास्ते पर जिस हदतक कवित्वकी कमज़ोरियों और अकवित्वके ख़तरोंका असर होता है, वहभी यहाँ है। अतः कविका क़द बड़ा लगनेके बजाय ज्योंका त्यों लगता है। अच्छा होता अगर संग्रहमें एक-सौ-तेंतीस कविताओंको एक साथ छपानेके मोहपर हावी होकर शुक्लजी संख्यामें एक-चौथाई कविताओंका चुस्त-दुरुस्त संग्रह छपवानेका संयम बरतते। पर साधु-संगत और स्वभावके कायल अगर वे अपनी संग्रह-वृत्तिपर (भलेही वह कविताओंकी है, धनकी नहीं) हावी न हो सके तो यह उनकी व्यापारी-वृत्तिकी क्रूरता ही कही जायेगी। वर्ना, उनकी कई कविताओंमें जीवनी शक्ति है और कुछमें तो इस मात्रामें है कि जिसके अभावमें शुद्ध-काव्यके क्षितिज प्रायः धूमिल ही बने रहते हैं। सार-संक्षेप में कहूँ कि चरैवेतिकी प्रचार-प्रेरणा प्रदान करनेवाली होते हुए भी आलोच्य अनेक कविताएँ आजकी पीढ़ी की क़तई नहीं हैं—क्योंकि, जिस घुटनभरे वातावरणमें नयी पीढ़ी पल-बढ़ रही है, ग़लत या सही, इससे वह जीवन व समाज के प्रति अविश्वास, आवेश, अनिश्चय, कटुता, क्रूरता, कूट-नीति, कड़वाहट, कुण्ठा और मानसिक तनावकी अभिव्यक्ति को स्वीकार करती है। निश्चयही यह स्थिति 'ए-क्लास' के काव्य-सृजनकी भूमिका नहीं कही जा सकती। पर, उसका फ़ैशन और प्रचार-प्रभाव तो है ही। यों श्री शुक्ल का सृजन 'आउट-आफ़-डेट' कहा जाकर भी निर्णयात्मक दृष्टिसे अगर बहुत अच्छा नहीं है तो बुरा तो बिल्कुल नहीं है। कुछ कविताओंसे आशा बँधती है कि कभी कवि की अन्धी आस्था महज़ 'मालिककी मर्ज़ी' का मरा-मुहावरा छोड़कर, जो इन कविताओंका तकियाक़लाम है, जीवन्त मुहावरोंके हथियारोंसे लैस होकर वर्तमान परिवेशके प्रेतोंसे जूझनेकी ललकार लगायेगी। 'कायरताका पराभव,' 'शक्ति-स्रोत,' 'प्रकृतिका नियम,' 'उद्‌बोधन,' 'मेरा विश्वास,' 'वितृष्णा' आदि कविताओंमें जीवनी-शक्तिके सहज स्वर हैं। कविकी कविताका यह पक्ष उसके सृजनके सम्भावित उजले क्षितिजका आभास देता है।

× × ×

लगभग सवा सौ पृष्ठोंके 'हृदय-हृदयके गीत' में सम्पादकजीने कुछ बड़े कवि-नामोंके ठप्पे मारकर एक-सौ-तीनमेंसे अनेक नौसिखिये कवियोंके गीतोंके गूलर पेश करके अपनी विलक्षण ज़िन्दादिलीका परिचय दिया है। पुस्तककी ख़ूबी यह कही जा सकती है कि वह एक सामयिक सवालका जवाब पानेको प्रेरित करती है कि वर्तमान गीत-गतिरोधको दूर करनेके लिए किसीभी गीत-संग्रहके प्रकाशनद्वारा गीत-गुण-गरिमा और महत्वको बढ़ावा मिले या व्यवसायी वृत्ति-प्रवृत्तिको? पहली बात आदर्श है, जिसकी ओर अब सम्पादकों-प्रकाशकोंका रत्ती-भर भी ध्यान नहीं है। दूसरी बात बिल्कुल बाज़ारू और व्यापारिक है, जिसकी तूती बोल रही है। बड़े प्रकाशकोंके यहाँ से बड़े कवियोंके सम्पादित कविता-संकलन धड़ाधड़ छापे और बेचे जा रहे हैं। बच्चन, दिनकर, अंचल, नरेन्द्र शर्मा, पन्त, महादेवी, अज्ञेय, नीरज आदि कवियोंके इसतरहके सम्पादित-प्रकाशित कविता-संकलनोंकी शृंखलाकी निचली कड़ियोंके रूपमें अगर 'हृदय-हृदयके गीत' जैसे कविता-संकलन छपकर आते हैं तो कसूर किसका कहा जायेगा? बहरहाल, यह गीत-काव्यको गिराते जानेका एक अशुभ अभियान है। आलोच्य पुस्तकके सम्पादकमें उत्साह है, सँयोजन-संगठनकी सूजबूझ है, सृजनात्मक रुचिभी है। प्रस्तुत पुस्तक ही इसका प्रमाण है। पर उनकी दृष्टिमें परिवर्तन आना ज़रूरी है। यों कि वे व्यवसायसे अधिक रचनाके महत्वका मूल्य आँकें। कैसे कहा जाये कि 'हृदय-हृदयके गीत' को पढ़नेपर ऊब होती है।

× × ×

कवि श्री जगलाल रामाकृत 'हृदयकी निधि' नामक कविता-संग्रहकी उन्नीस कविताओंमें कोई वैशिष्ट्य न होकर भी उसका महत्व इस बातमें निश्चित है कि कविने उत्साह से क़लम उठायी है, हिन्दीमें मोहवश कुछ लिखा है, और वहभी कि भारतसे दूर, मोरिशसमें ममतासे भरकर लिखा है:

"भारत तू है देश विशाल तो मैं टापू हूँ छोटा-सा।... अगर भाषा हिन्दी तेरी जान है तो मेरे जीवनकी शान है हिन्दी सिखानेका दावा है तेरा तो सीखनेमें मुझे मान है।"—

उसकी कविताओंमें, प्रारम्भिक स्तरपर ही सही, अभिव्यक्तिकी स्फूर्तिका अहसास होता है। देखिये:

"कवि! आज क्या हुआ?
मोड़ा क्यों मुँह सत्यसे?
रविसे भी आगे देखनेवाले
मचा दो क्रान्ति
ज्वालामुखी फट जाये
ऐसा सूर्य-ओज उदय कर दो
नस नसमें नव जागरणकी लहरें उमड़ जायें।"...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर अभी उसे शब्दशक्ति चाहिये, उसकी अनुभूति और चिन्ताको कल्पनाका क्षितिज चाहिये। इसके लिए मैं कहूँगा कि इस कविको साधनासे पहले सिद्धि पानेकी महत्वाकांक्षाको दूर रखना होगा। इसीमें उसका विकास छिपा है। पर प्रस्तुत कविताएँ अपेक्षा रखती हैं कि हिन्दी-काव्य-प्रेमी पाठक उन्हें पढ़ें, कविको प्यार-प्रोत्साहन दें, जिसका वह हक़दार है।

—डॉ. जीवनप्रकाश जोशी

सूरज बनतो किरण

कवि : डॉ. देवेन्द्र 'दीपक'; प्रकाशक : कीर्तिकाम प्रकाशन, अम्बिकापुर (म. प्र.)। पृष्ठ : २०; मूल्य : १०० रु.।

उदीयमान कवि डॉ. देवेन्द्र 'दीपक' की यह प्रथम प्रकाशित पुस्तक है, जो कुछ नये वायदे प्रस्तुत करती है और उनकी चेतना एक नया मोड़ लेती दिखायी देती है। उनकी प्रथम पंक्तिसे ही कविके अपनी कुण्ठाओं और तनावोंसे ऊब कर नया मोड़ लेनेका संकेत मिलता है। कहीं-कहीं उसकी चेतनाका प्रवाह हमें राष्ट्रीय जागरण युगकी कविताओंकी याद दिलाता है।

प्रथम कविता 'पद्माकी छातीपर खून' के मूल स्वर में कवि बँगला देशमें हुए अत्याचार, अनाचार और नृशंसता पर दुःख प्रकट करता है। किन्तु उसकी इस वेदनाकी उपमा केवल इससे दी जा सकती है कि पद्मा नदी भी गंगाकी एक धारा है, जिसका नाम पूर्वी वंगाल जाकर पद्मा हो गया है।

संग्रहकी मुख्य कविता 'सूरज बनती किरण' है। जिसमें कवि अपनी आँखोंसे एक किरणको सूरज बनते देखता है। तीसरी कवितामें कविने अपने भोगे हुए यथार्थ को बड़ी ईमानदारी से प्रकट करनेकी चेष्टा की है। किन्तु इस पूरी कविताको पढ़नेसे यह प्रतीत नहीं होता कि यह कविता बँगला देशकी प्रतिक्रियाका परिणाम है।

अच्छा होता कि कविकी रचनाओंका एक प्रतिनिधि संग्रह प्रकाशित होता और उसमें ये तीनों कविताएँ भी होतीं। फिरभी लेखक और प्रकाशकका यह सम्मिलित प्रयास आजके प्रयोगवादी हिन्दी-संसारमें स्वागत योग्य है।

—सन्तोष खरे

प्रशिक्षरण अध्यापन

दक्षिण भारतके विश्वविद्यालयोंमें हिन्दी-अध्यापन

सम्पादक : डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, हिन्दी-विभाग, कोचिन विश्वविद्यालय, कोचिन-२२। पृष्ठ : ८८; डिमाई, ७२।

केरल विश्वविद्यालयके तत्वावधानमें विश्वविद्यालय अनुदान आयोगकी आर्थिक सहायतासे १९७१ में एक संगोष्ठी आयोजितकी गयी थी जिसमें सुधी प्राध्यापकोंने अपने निबन्धोंमें हिन्दी अध्यापन सम्बन्धी व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत किये थे, उसी संगोष्ठीका विवरण यहाँ दिया गया है। अन्तके २० पृष्ठोंमें संगोष्ठीके सुझाव तथा विश्वविद्यालयोंमें हिन्दीका पाठ्यक्रम दिया गया है। संगोष्ठीके निदेशक डॉ. विश्वनाथ अय्यरने हिन्दी-भाषाके विषयमें सर्वथा उचित कहा है कि "उसे एक दर्पण होना है जिसमें सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति प्रतिबिम्बित हो।"

श्री टी. एम. राजगोपालने उच्च माध्यमिक विद्यालयों तथा उपाधि-पूर्वके हिन्दी शिक्षणपर विचार किया है। उन्होंने बताया कि छात्र 'खिचड़ी भाषा' (हिन्दी-मलयालम) का प्रयोग करते हैं, वे हिन्दी शुद्ध रूपसे न बोल सकते हैं, न लिख सकते हैं। 'अनुवाद-प्रणाली' के आधार पर ही यहाँ हिन्दी सिखायी जाती है जो प्रणाली उनके विचारमें अनुपयुक्त है, 'स्वाभाविक प्रणाली' यहाँ अधिक उपादेय सिद्ध होगी। "कक्षामें हिन्दीका वातावरण बनाये

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखना अध्यापककी सफलताकी कसौटी है।" उन्होंने एक अच्छी बात और कही कि १०० छात्रोंकी कक्षामें अध्यापक 'सरकसका खिलाड़ी' लगता है, जहाँ कभी-कभी छात्र-सिंहोंके गर्जनसे बेचारे अध्यापकके होश-हवास उड़ जाते हैं। अधिक संख्याके कारण न अनुशासन रह पाता है और न ही अध्यापन सुचारुरूपेण चल पाता है, इसीकारण छात्रोंके प्रति स्नेह-सौहार्दका अभाव बना रहता है। हिन्दी के लिए सप्ताहमें ३-४ घण्टे रखना विषय तथा छात्रोंके साथ अन्याय है—घोर अन्याय। उन्होंने अच्छी पुस्तकोंके अभाव और अश्लील रचनाओंके बहिष्कारकी ओर भी संकेत किया।

डॉ. रामन नायरने व्याकरणके स्थानपर प्रश्नोत्तर पद्धतिसे हिन्दी बोलनेपर बल देते हुए मातृभाषासे हिन्दी और हिन्दीसे मातृभाषामें अनुवाद करनेपर जोर दिया। प्रो. जनार्द्दनन पिल्लैने भावात्मक एकताके संवर्द्धनके लिए पाठ्यपुस्तकोंमें अहिन्दी या इतर भारतीय कवियोंकी सुन्दर अनूदित रचनाओंको संकलित करनेका अच्छा उपयोगी सुझाव दिया। उन्होंने प्रश्न-पत्रमें समुचित न्याय बरतनेकी बात उठाते हुए कहा कि कोई छोटा, कोई बड़ा पद व्याख्या के लिए रखना ठीक नहीं, जबकि अंक भी समान हों। प्रश्न को, अंशको देखते हुए अंकोंका निर्धारण करना उपयोगी होगा। बी. कॉम. के छात्रोंके लिए हिन्दीमें व्यापारिक तथा व्यावसायिक पत्र-व्यवहारका और उसके उपयुक्त पाठ्यक्रम निर्धारित करनेका सुझाव प्रो. आर. के. रावने रखा जोकि सामयिक है। डॉ. गुलाम रसूलने पाठ्यक्रम के बारेमें आपत्ति उठायी कि दक्षिणके विश्वविद्यालयोंमें उत्तर भारतके विश्वविद्यालयोंके पाठ्यक्रमका अन्धानुकरण किया जाता है। उन्होंने स्नातकोत्तर छात्रोंके लिए मौखिक परीक्षाको अत्यन्त आवश्यक बताया। निस्सन्देह ये स्वस्थ सुझाव विचारणीय हैं। प्रो. चन्द्रशेखर नायरके इस मतसे सहमत होना कठिन है कि गद्यमें केवल निबन्ध ही हों और गद्यकी अन्य विधाओंको शामिल न किया जाये (पृ. ५२)। लेकिन संस्मरण, रेखाचित्र, ललित निबन्ध क्या गद्यमें समाहित नहीं होते? श्री बी. के. हरिहरन् उण्णित्तानने अपने भाषणमें बी. ए. पाठ्यक्रमके प्रश्नपत्र देते हुए समय आदिका निश्चय किया है। उन्होंने परीक्षा-प्रणालीमें गुणात्मक उन्नयनपर बल दिया और ४५% अंकोंसे (बी. ए. में) कम पानेवालोंको एम. ए. में प्रवेश न देनेका सुझाव दिया।

अन्तमें डॉ. विश्वनाथ अय्यरने स्नातकोत्तर हिन्दी पाठ्यक्रमपर विचार करते हुए स्तरके गिरनेपर असन्तोष प्रकट किया और कहा कि केरल, मद्रास विश्वविद्यालयोंमें एम. ए., द्वितीय वर्षमें ८ या ९ प्रश्नपत्र न्यायोचित नहीं हैं। उनका यह विचार स्वीकार्य है। घिसी-पिटी प्रश्नपत्रकी प्रणालीसे भी वे असन्तुष्ट हैं। उन्होंने पाठ्यक्रमको क्षेत्रीयताके अनुकूल रखनेका नूतन सुझाव दिया है कि बिहारमें विद्यापति, उत्तर प्रदेशमें तुलसी, सूर, राजस्थानमें पृथ्वीराज आदि को क्रमशः स्थान देना अधिक उपयोगी है।

सुधी प्राध्यापकोंके इन विचारोंपर विचार करना चाहिए, और उन्हींके परामर्शसे पाठ्यक्रम निर्धारित किये जाने चाहिये, क्योंकि वे छात्रोंकी योग्यता आदिसे सुपरिचित रहते हैं। अहिन्दी प्रान्तोंमें अधिक समयभी हिन्दीको मिलना चाहिये, जैसे बी. ए. तक ६ या ९ घण्टे कम-से-कम सप्ताहमें दिये जायें।

लेखन-कार्यपर संगोष्ठीमें अधिक विचार नहीं किया गया, वस्तुतः अधिकाधिक लिखनेके अभ्याससे छात्रोंका स्तर ऊपर उठेगा, मौखिक परीक्षा तो प्रत्येक पाठ्यक्रमके साथ अनिवार्य होनी चाहिये। इसप्रकारके सुझावोंको देखने से ज्ञात होता है कि दक्षिणमें हिन्दी-प्राध्यापक हिन्दीके प्रचार-प्रसारके प्रति कितने सजग हैं और वे किस प्रकार भावात्मक तथा राष्ट्रीय एकताको दृढ़तर करनेमें कृत-संकल्प हैं। हाँ, उन्हें अपने-अपने विश्वविद्यालयोंमें स्वयं पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकें निर्धारित करनेका अधिकार मिलना चाहिये तथा पाठ्यपुस्तकें निर्धारित करने के लिए वि. वि. अनुदान आयोगकी ओरसे उचित धनराशि दी जानी चाहिये। उन्हें इस दिशामें उत्तर भारतके विश्वविद्यालयोंका मुँह नहीं ताकना चाहिये।

—डॉ. निजामउद्दीन

शिक्षण-संस्थाओं, पुस्तकालयों
और
बुद्धिजीवियोंके लिए
उपयोगी और अनिवार्य
'प्रकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश और निवासी

आस्ट्रेलिया

लेखक : बलजीत बग्गा, कुलदीप बग्गा; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : ९१; क्राउन, ७२; मूल्य: ३०० रु.।

चैकोस्लोवाकिया

लेखक : ओम्प्रकाश पालीवाल; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : ८८; क्राउन, ७२; मूल्य: ३.०० रु.।

हम भारतवासी आस्ट्रेलियाको कंगारू और भेड़ोंके देशसे जानते हैं। वहाँके गेहूँसे अपनी क्षुधा बुझा चुके हैं। हमारे क्रिकेट खिलाड़ियोंने वहाँके खिलाड़ियोंसे डटकर मोर्चा लिया है। किन्तु हम आस्ट्रेलियाके बारेमें यह नहीं जानते कि वहाँ आदमी नौकरीके पीछे नहीं घूमता, बल्कि नौकरियाँ व्यक्तियोंका पीछा करती हैं। इत्तिफाकसे यदि कोई व्यक्ति बेकार हो जाता है, तो उसे सरकारकी ओरसे बेकारी-भत्ता मिलता है। वहाँके नागरिकोंको चिकित्सा सम्बन्धी एक विशेष सुविधा मिलती है जिसे 'हवाई डाक्टरी सेवा' का नाम दिया गया है। इस योजनाके अन्तर्गत बड़े-बड़े फार्मों, खानों या दुर्गम स्थानोंपर काम करनेवाले व्यक्तियोंको वायरलेस सेटोंसे सन्देश भेजकर तुरन्त हवाई डॉक्टरी सेवा मिल जाती है। इस सन्दर्भमें एक बात और उल्लेखनीय है कि आस्ट्रेलियामें एक सिरिंजसे केवल एक इंजेक्शन लगाकर उसको फेंक दिया जाता है। आलोच्य पुस्तकमें ऐसीही बहुत-सी जानकारी दी गयी है। इस पुस्तककी सबसे बड़ी कमी यह है कि इसमें भारत और आस्ट्रेलियाके सम्बन्धोंपर प्रकाश नहीं डाला गया है।

'चैकोस्लोवाकिया' के लेखकने चेकोस्लोवाकियाके बारेमें बहुत सी जानकारी देते हुए इस बातका ध्यान रखा है कि पाठकको भारत-चैक सम्बन्धके बारेमें काफी सूचनाएँ मिल जायें। पुस्तकमें एक पूरा अध्याय ही इस विषयको समर्पित किया गया है। लेखकने बताया है कि भारत और चैकोस्लोवाकियाके सम्बन्ध छः शताब्दी पुराने हैं और ये सांस्कृतिक, साहित्यिक और औद्योगिक सभी क्षेत्रोंमें विकसित हुए हैं। चैकोस्लोवाकियाके पहले यात्रीके १४वीं शताब्दीमें भारत आगमनके बाद, दोनों देशोंके बीच जो आवागमन शुरू हुआ, वह अभीतक जारी है। १९४७ में स्वाधीनता मिलनेके बाद चैकोस्लोवाकियाकी मददसे देशमें कितने ही औद्योगिक कल-कारखाने स्थापित करके देशकी औद्योगिक स्थितिको सुधारा गया है। पुस्तकका यह अध्याय सबसे रोचक है।

भारतमें चैकोस्लोवाकियाका काँचका सामान काफी लोकप्रिय है। वहाँकी कठपुतली फिल्मोंका भी यहाँ प्रदर्शन हुआ है। चैकोस्लोवाकियाने रंगमंच और फिल्मको जोड़ कर 'मैजिक लैन्टर्न' के नामसे जो नया प्रयोग किया है, भारतीय नर्तक उदयशकर के 'शंकरस्कोप' पर उसका प्रभाव स्पष्ट है। हम चैकोस्लोवाकियाके जुलियस फूचिकके नामसे भी परिचित हैं, जो वहाँका महान् पत्रकार था, और जिसे नाजियोंने द्वितीय महायुद्धके समय मार डाला था। जूलियस फूचिककी अमर रचना 'फाँसीके फन्दे से' लगभग सभी भारतीय भाषाओंमें उपलब्ध है।

लेखकका यह कथन कि चैक जनता महात्मा गान्धीके नामसे १९वीं शताब्दीके आखिरमें ही परिचित होने लगी थी (पृष्ठ ७१) कुछ असंगत-सा लगता है। महात्मा गान्धी प्रथम महायुद्धके बाद भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेसके अमृतसर अधिवेशनमें ही भारतीय राजनीतिक क्षितिजपर उभरे थे। इसके विपरीत श्यामजी कृष्ण वर्माके सार्वजनिक जीवनका महत्वपूर्ण भाग, १९१२ तक समाप्त हो गया, अतः वे गान्धीसे पहलेकी पीढ़ीके थे, नकि उनके समकालीन। लेखकने देविकारानीके पतिका नाम निकोलस रोरिक दिया है (पृष्ठ ८५) जो गलत है। उनके पतिका नाम स्वेतोस्लाव रोरिक है और निकोलस रोरिक देविकारानीके श्वसुर हैं। पुस्तकमें यदि टैगोरके स्थानपर ठाकुर शब्दका प्रयोग किया जाता तो ज्यादा उचित होता।

—मनमोहन वर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल साहित्य

समीक्षक : ब्रजगोपालदास अग्रवाल

१. आदर्श बालक (लेखक : आचार्य चतुरसेन); २. पहेलियाँ (ले. कृष्ण विकल); ३. बचपनकी कहानियाँ (ले. शरच्चन्द्र); ४. आओ खेलें खेल (ले. कृष्ण विकल); ५. सँपेरेकी लड़की (ले. मस्तराम कपूर); ६. कुछ करो, कुछ बनो (ले. जगदीश); ७. विज्ञानके पहिये (ले. अजयकुमार); ८. कठपुतला (ले. कार्लो कोलोदी); ९. लँगड़े भूत (ले. जोरावरसिंह वर्मा); १०. तीन बनाम तीन (ले. अमृता पांचाली)।

प्रकाशक : सुबोध पाकेट बुक्स, अंसारी रोड, दरिया गंज, दिल्ली-६। मूल्य प्रत्येक : १.०० रु.।

'आदर्श बालक' में अभिमन्यु, गरुड़, ध्रुव, प्रह्लाद, श्रवण और उत्तंककी कहानियाँ हैं। अभिमन्युने गर्भमें ही व्यूह-रचनाका भेद सीख लिया था, मगर माँके सो जानेके कारण वह व्यूहसे बाहर आनेका कौशल न जान पाया। फिरभी, बड़े होकर उसने चक्रव्यूह में घुसकर कौरव-सेना को छिन्न-भिन्नकर दिया और जब जयद्रथने उसे छलसे मार दिया, तो अर्जुनने अगले दिन सूर्यास्तसे पहलेही जयद्रथको मार डालनेकी प्रतिज्ञा की। अभिमन्युके साहस, गरुड़के बल-पराक्रम, ध्रुवके दृढ़ निश्चयके अतिरिक्त हमें उक्त पुस्तकमें प्रह्लादकी ईश्वर-भक्ति, श्रवणकी पितृभक्ति और उत्तंककी गुरुभक्तिकी कहानियाँ पढ़नेको मिलती हैं। सभी कहानियाँ सरल-सुबोध भाषामें रोचक ढंगसे लिखी गयी हैं। हाँ, 'सब युद्धका साज सजते हैं' (पृष्ठ ६); 'पंचजन्य' (पृष्ठ ९); 'ऊर्ध्व-किया' (पृष्ठ ११) जैसी प्रूफ की भूलें खलती हैं।

'पहेलियाँ' में श्रीकृष्ण विकलका नाम रचयिताके रूप में है अथवा संकलनकर्ताके रूपमें, यह स्पष्ट नहीं। पुस्तक की कई पहेलियाँ अमीर खुसरोकी हैं, यथा :

जल-जल चलता बसता गाँव
बस्तीमें ना वा का ठाँव
खुसरा कह दिया वाका नाँव
अरथ करो नहीं छोड़ो गाँव।

और कई ऐसी हैं जो कुछ पत्र-पत्रिकाओंमें पढ़नेको मिली हैं, यथा—'आगे मुर्गी भागी जाय, पीछे अण्डा देती जाय।' इससे लगता है कि यह संकलन है। बहरहाल, पुस्तक बच्चोंका पर्याप्त मनोरंजन करेगी और उनके अन्ताक्षरीके खेलको जमानेमें मदद करेगी। इसमें सन्देह नहीं। पुस्तककी सभी पहेलियाँ अकारादिक्रमसे दी गयी हैं और अन्तमें हर पहेलीका उत्तर भी दिया गया है। कुल मिलाकर प्रायः चार सौ पहेलियाँ हैं।

'बचपनकी कहानियाँ' विख्यात बँगला कथाकार शरत् बाबूकी चार बाल कहानियोंका हिन्दी अनुवाद है, मगर पुस्तकमें अनुवादका कहीं नाम नहीं। अनूदित कृतिमें अनुवादकका नाम न देना कोई स्वस्थ परम्परा नहीं। बहरहाल, अनुवाद अच्छा हुआ है। पहली तीन कहानियोंमें 'लल्लू' के कारनामे—गुरुजीकी मशहरीके ऊपर बर्फका ढेला रखना; दुर्गापूजाके अवसरपर बड़े नाटकीय ढंगसे बलि-प्रथा बन्द करनेकी मनोहर चटर्जीसे प्रतिज्ञा कराना; श्मशानमें मुर्देके साथ लेटकर भूत बनकर गोपाल चाचाकी शेखी खत्म करना—ये सब कारनामे खूब हँसानेवाले हैं। चौथी कहानी कुछ गम्भीर है। लुटेरों और उनके साथ हुई मुठभेड़पर लिखी गयी है। कहानियाँ वाक़ई पठनीय हैं।

'आओ खेलें खेल' में घरके बाहर खेले जानेवाले (आउटडोर) इकतालीस खेल बताये गये हैं। कितने खिलाड़ियोंकी आवश्यकता है, क्या-क्या चीजें चाहिये और कितना समय लगेगा—हर खेलके साथ इन बातोंका उल्लेख किया गया है। ये खेल बच्चोंका पर्याप्त मनोरंजन करेंगे; उनके स्वास्थ्यका निर्माण भी करेंगे। और फिर, इन खेलों से बच्चोंका बौद्धिक व्यायाम भी होगा, उनमें 'टीम स्पिरिट' पैदा होगी। इन सभी दृष्टियोंसे यह पुस्तक उपादेय है।

'सँपेरेकी लड़की' शीर्षक बाल-उपन्यासमें एक छोटी लड़की मैना और अनाथ बालक नन्दूकी कहानी है। दो दिनका भूखा नन्दू एक सँपेरेके यहाँ रहने लगता है। सँपेरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे काम सिखाता है, भोजन भी देता है। एक दिन वह एक भयानक अजगरसे सँपेरेकी प्राण-रक्षा करता है। तब से सँपेरेके यहाँ उसकी और भी पूछ होने लगती है। एक दिन उसे पता चलता है कि सँपेरेके यहाँ रहनेवाली वह लड़की मैना उसकी अपनी लड़की नहीं। मेलेमें माँ-बापसे बिछुड़ जानेपर उसे वह सँपेरा पकड़कर ले आया था। नन्दू मैनाको मुक्त करनेकी ठान लेता है। उसके लिए वह सँपेरेकी नागिनको मार डालता है, जंगलमें अपनी जान जोखिममें डाल देता है और एक दिन पुलिसमें रिपोर्ट कर सँपेरे-सँपेरिनको पकड़वा देता है।

साँपोंके बारेमें कई गलत धारणाएँ इस पुस्तकके पढ़ने से दूर होंगी। नन्दूका चरित्र बच्चोंमें साहस और कर्तव्य-भावना जाग्रत करेगा। पुस्तक स्वाभाविक भाषा-शैलीमें लिखी गयी है। बच्चोंके लिए इसे एक अच्छी कृति ही कहा जायेगा।

'कुछ करो, कुछ बनो' बच्चोंके लिए चरित्र निर्माणकी एक अच्छी कृति है। इसमें सचाई, ईमानदारी, धैर्य-सहनशीलता, नम्रता-दयालुता जैसे मानवीय गुणोंपर अलग-अलग अध्यायोंमें प्रकाश डाला गया है; समय और स्वाध्याय का महत्व समझाया गया है; आस्तिकता तथा जीवमात्रसे प्रेम करनेपर बल दिया गया है। पुस्तककी विशेषता यह है कि न्यूटन, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, दयानन्द, महात्मा गान्धी, लिंकन, नेपोलियन आदि देश-विदेशोंके महापुरुषोंके जीवन से उदाहरण दे-देकर लेखकने अपनी बातको पुष्ट किया है। विश्वास है कि इस पुस्तकका पर्याप्त स्वागत होगा।

कुछ महत्वपूर्ण उपन्यास

अपराधी वैज्ञानिक (वैज्ञानिक उपन्यास)
—यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक' ८.००

सुधा (मलयालमसे अनूदित)
—टी. एन. गोपीनाथ नायर ३.५०

शकुन्तला (अभिज्ञान-शाकुन्तलका रूपान्तर) —विराज ४.५०

प्रवासी (बर्माके प्रवासी भारतीयोंकी समस्यापर आधारित)
—श्यामाचरण मिश्र ५.००

ये पहाड़ी लोग
—यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक' ४.५०

नवभारती सहकार प्रकाशन
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

'विज्ञानके पहिये' में पहियोंके अतिरिक्त भापका इंजन, रेल-इंजन, अन्तर्दहन इंजन, मशीन, आग आदि और कई विषयोंकी बात की गयी है। पाठकोंको प्रतिपादित विषयों का कुछ ज्ञान होगा, इसमें सन्देह नहीं; मगर यदि इतने सारे विषयोंका पुस्तकमें एक साथ समावेश न कर कुछ विषयोंको ही लिया जाता और उन्हें पूरीतरह सरल-सुबोध ढंगसे प्रस्तुत किया जाता, तो पाठकोंका अधिक हित होता। 'भापका इंजन' शीर्षक अध्यायमें भापके इंजनका कहीं कोई उल्लेख नहीं, इसे विषय-प्रतिपादनका दोष ही कहा जायेगा।

'कठपुतला' कार्लो कोलोदीके विश्वविख्यात उपन्यास 'पिनोकियो' का अनुवाद है—किसने किया है, यह बात प्रकाशकने गुप्त रखनी ही ठीक समझी है। पुस्तकमें एक ऐसे कठपुतलेकी कहानी है, जो हाड़-मांसके आदमीकी तरह उछलता-कूदता है, रोता-हँसता है। वह न अपने पापाकी बात मानता है, न अपनी परी बहनकी। पढ़ना-लिखना छोड़कर वह दिन-रात खेलता रहता है। वह अपने दिमागसे कुछ नहीं सोचता और दूसरेकी हर बातपर विश्वास कर लेता है। बादमें वह एकदम अच्छा लड़का बन जाता है। यह पुस्तक पाठकोंको खूब हँसायेगी; उन्हें अच्छा बननेकी शिक्षा भी देगी।

'लँगड़े भूत' उन पाँच बच्चोंकी कहानी है, जो लँगड़े भूत बनकर 'झरना महल' की हत्याका रहस्योद्घाटन करते हैं। अपनी पहली पत्नीकी बीमारी जब राजा नौबतरायको लग गयी, तो राजाके मनमें नफ़रत भर गयी और उन्होंने गुस्सेमें आकर सारे परिवारको नष्ट कर देनेका बीड़ा उठा लिया। वे अपने मित्र कालियाकी हत्याकर स्वयं कालिया बने रहे ताकि वे अपने मनसूबे पूरे कर सकें। लँगड़े भूतोंकी जासूसीने उनकी सारी पोल खोल दी। यह जासूसी उपन्यास बड़ा मनोरंजक है; बच्चोंमें साहस और निर्भीकता पैदा करेगा।

'तीन बनाम तीन' अमृता पांचालीका लिखा बाल-उपन्यास है। इसमें अमृताजीने भारत, बीना और छुट्टन नामक तीन बच्चोंके अजब साहस, सूझबूझ तथा पराक्रम की कहानी कही है। भारत और बीना, दोनों भाई-बहन छुट्टनको तीन गुण्डोंके चंगुलसे मुक्त करते हैं और फिर वे तीनों बच्चे मिलकर उन बदमाशोंको जेलतक पहुँचानेमें सफल होते हैं। उपन्यास पठनीय है; भाषा-शैली सहज-स्वाभाविक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जेबी पुस्तकें

समीक्षक : जीवन

रिपोर्ताज

डाकुओंके बीच

लेखक : गोविन्दसिंह, प्रकाशक : पुष्पी पाकेट बुक्स, इलाहाबाद। पृष्ठ : १२२; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

चम्बल और विन्ध्य प्रदेशके डाकुओंद्वारा आत्मसमर्पणकी घटना १९७२ की ऐतिहासिक घटनाओंमें है। यह एक ऐसी बात हुई जो शायद भारतके अतिरिक्त किसी देशमें सम्भव नहीं। इस विषयपर भारतीय समाचारपत्रोंमें काफी चर्चा रही। हिन्दीमें इस सामयिक घटनापर कई लेखकोंने पुस्तकें प्रकाशित की हैं। गोविन्दसिंहकी यह पुस्तकभी इनमें एक है।

चम्बल घाटीमें दस्युविरोधी अभियानमें ५५ हजार पुलिसके जवान तैनात हैं, १२५ जीपें, ७५ लारियाँ, १९०० औटोमेटिक राइफलोंसे सज्जित। चम्बलमें ४०० और विन्ध्यमें २१० डाकुओंपर मुकदमे दायर हैं, पिछले बीस सालोंमें शासनका ७१ करोड़ रुपया इस अभियानमें खर्च हुआ। जिन डाकुओंने आत्मसमर्पण किया उनमें मोहर सिंहपर ११५ हत्याओं, ६१ डकैतियोंका अभियोग था और २ लाख रुपयेका इनाम उसपर था। माधोसिंहपर ७१ हत्याओं, ६२ डकैतियोंका अभियोग था और डेढ़ लाख रुपया इनाम। अन्य डाकुओंपर भी २२ से ७७ हत्याओंके अभियोग थे और ३ हजार रुपये से ३० हजार रुपयेतकके इनाम घोषित थे।

जयप्रकाशनारायणने, जिनके माध्यमसे डाकुओंने आत्मसमर्पण किया, लिखा है, "इन बागियोंने क्यों आत्मसमर्पण किया ?" उनके अनुसार ये डाकू हमारे समाजमें व्याप्त सामाजिक अन्यायके शिकार हैं और अन्याय सहन न कर सकनेके कारण हताशमें बीहड़की पगडण्डी इन्होंने पकड़ ली। जिनके आतंकसे चम्बल काँपती थी, वे ही अब धार्मिक ग्रन्थ पढ़ रहे हैं। मध्यप्रदेशके मुख्यमन्त्री प्रकाशचन्द्र सेठीने कहा है कि इन पथभ्रमित सदस्योंको समाज सहृदयतापूर्वक स्वीकार करे।

इस घटनाचक्रका आरम्भ माधोसिंहद्वारा स्वयं जयप्रकाश बाबूसे मिलकर आत्मसमर्पणकी योजना पेश करनेसे हुआ। तहसीलदारसिंह और लुक्का (अब पं० लोकमन), जो विनोवा भावेके सामने आत्मसमर्पण कर चुके थे, अभियानमें प्रमुख थे। सरला बहिनके साथ सर्वोदयी कार्यकर्ताओंने डाकुओंको समझानेमें बड़ा हाथ बँटाया।

गोविन्दसिंहने बड़े रोचक ढंगसे घटनाचक्रको प्रस्तुत किया है। सत्य कहानीसे अधिक विचित्र होता है, यह बात इस पुस्तकमें सिद्ध होती है। ये भयानक व्यक्ति भी इंसान हैं, इस ओर ध्यान दिलानेमें पुस्तक सफल होगी।

जीवनी

चन्द्रशेखर आजाद

लेखक : मन्मथनाथ गुप्त; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, जी. टी. रोड, शाहदरा, दिल्ली-३२। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

काकोरी षड्यन्त्र केसके क्रान्तिकारी तथा समाजवादी विचारक बहुमुखी प्रतिभाके लेखक मन्मथनाथ गुप्तने अपने सहयोगी अमर शहीद चन्द्रशेखर आजादके जीवनपर एक प्रमाणिक पुस्तक प्रस्तुत करके सराहनीय कार्य किया है। २३ जुलाई, १९०६ को एक गरीब ब्राह्मण परिवारकी एक टूटी-फूटी झोपड़ीमें चन्द्रशेखरने जन्म लिया और २७ फरवरी, १९३१ को इलाहाबादमें शहीद होकर उन्होंने क्रान्तिके इतिहासमें अमर ज्योति जलायी। पच्चीस वर्षकी इस छोटी-सी जिन्दगीमें उन्होंने यौवनको चिरन्तन कर दिया।

गुप्तने न केवल आजादके साथ अपने सम्पर्कके आधारपर बल्कि भगवानदास माहौरकी पुस्तक 'यशकी धरोहर,' सदाशिव मलकापुरकरके संस्मरण, विश्वनाथ वैशम्पायनके संस्मरणोंके द्वारा आजादके वृत्तान्तको पूरा किया है वहाँ उन्होंने यशपालके संस्मरणपर शंका व्यक्त की है। आजादके जीवनकी कुछ घटनाओं, मुख्यतः उनकी शहादतके ब्यौरेपर इधर काफी विवाद है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजादके जीवनकी कई घटनाएँ गुप्तजीने पुस्तकमें दी हैं, जैसे—एक बार उनकी जेबका कटना, उनका महन्तका चेला बनना, ड्राइवरी सीखना, लूटपाट करते हुए रिवाल्वरका एक महिलाद्वारा छीना जाना, उनके जीवनमें एक लड़कीका उन्हें अपनी ओर खींचनेकी चेष्टा आदि जिससे आजादके व्यक्तित्वके अनेक अज्ञात पहलू उभरते हैं।

आजादके जीवनको देशके क्रान्तिकारी आन्दोलनके परिवेशमें देखते हुए लेखकने गान्धी और नेहरूकी अहिंसा की आलोचना की है। उन्होंने असहयोग आन्दोलन को अत्यधिक महत्व देनेकी बात भ्रामक मानी है।

स्वाधीनताकी रजत-जयन्तीके वर्षमें स्वाधीनताके एक योद्धाकी, जिसके साहस, शौर्य, ओज और बलिदानने युवकोंको जाग्रत किया, यह जीवनी नयी पीढ़ीके लिए अवश्य पठनीय है। प्रकाशक इसे सुलभ करनेके लिए बधाईका पात्र है। मुखपृष्ठपर आजादका चित्र भी है।

शायरी

मीनाकुमारीकी शायरी

सम्पादक : गुलजार; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १२८; ७२, सचित्र; मूल्य : २.०० रु.।

अभिनेत्री मीनाकुमारीकी असामयिक मृत्युके बाद उसके जीवनपर कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। मीना कुमारीकी मृत्युके बादही यह तथ्य भी प्रकाशमें आया है कि वह शायर भी थी। उसकी वसीयतके अनुसार उसकी समस्त रचनाओं, डायरियोंका सर्वाधिकार फिल्मोंके लेखक-निर्देशक गुलजारको है, जिन्होंने अपनी जिम्मेदारी निभाने के लिए यह प्रथम प्रकाशन उसकी शायरीके संचयनका किया है।

अंग्रेजी फिल्मोंकी प्रसिद्ध अभिनेत्री मेरिलिन मनरोकी मृत्युके बादभी, जो एक दुखान्त मृत्यु थी, उसकी कविताएँ प्रकाशमें आयी हैं। मीनाकुमारीकी शायरी भी उसीप्रकार अवश्यम्भावी मृत्यु, असफल प्रेमकी कवितामयी अभिव्यक्ति है।

प्रस्तुत पुस्तकमें २५ गजलें, ३६ नज्में, २६ आजाद नज्में और स्फुट कत'ए तथा शे'र दिये गये हैं। गुलजारने 'एक अहसास—मीनाकुमारी' शीर्षकसे व्यक्तिगत सन्दर्भमें भूमिका दी है।

वैसेतो उर्दू कविताका मुख्य रस करुणा तथा विरह ही है, मीनाकुमारीकी जिन्दगीका दर्द उसकी शायरीमें व्याप्त है। मौतको जैसे उसने अपनी परछाईकी तरह पीछे-पीछे आते देखा—

कोई चाहत है न जरूरत है
मौत क्या इतनी खूबसूरत है।

अपनी जिन्दगीकी निस्सारता, असहायतापर जो वैभव और ख्यातिके बीच पलती रही, उसने कहा—

मैं जिन्दगी को देती रही अपना खूने दिल
खुद मेरी जिन्दगी ने मगर क्या दिया मुझे,
मेरे ही ख्वाब मेरे लिए जहर बन गए
मेरे तसव्वुरात ने ही डस लिया मुझे।

अपनी जादुई तस्वीरके साथ-साथ मीनाकुमारी अपने हृदयमें ऐसा दर्द ढोते रही कि उसने पूछा—

तूने कंधो पे सलीबों को तो देखा है मगर
क्या कहीं देखी है सीने पे पड़ी ऐसी सलीब?
यह कि जहरीले धुएँ जैसी
नीली, सलीब...............

मीनाकुमारीके प्रशंसकोंको ही नहीं काव्यप्रेमियोंको भी एक सच्चे कलाकारकी इन स्वान्तःसुखाय लिखी कविताओंमें रसानुभूति होगी, उर्दू काव्यके मानदण्डपर इसका मूल्यांकन करनेका अवसर तब आयेगा जब मीनाके व्यक्तित्वसे कृतित्वको अलग कर आँका जा सकेगा। पुस्तकमें मीनाके कुछ सुन्दर छायाचित्र भी हैं।

कहानी संग्रह

दुखवा मैं कासे कहूँ

लेखक : आचार्य चतुरसेन; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : २००; ७२; मूल्य : ३.०० रु.।

गूंगे देवता

लेखक : कृश्न चन्दर; प्रकाशक : वही। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

डार्लिंग

लेखक : फिक्र तौंसवी; प्रकाशक : वही। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

स्व. आचार्य चतुरसेन शास्त्रीकी पन्द्रह चर्चित कहानियोंका संग्रह आचार्यजीकी कथायात्राके प्रमुख पड़ावोंका दिग्दर्शन कराता है। राजपूत, मुगल और बौद्धकालीन

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतिहासके पृष्ठोंको साहित्यिक स्वरूप देनेमें आचार्यजीकी कला-साधना निहित थी। 'अम्बपालिका' और 'आचार्य उपगुप्त' कहानियाँ जहाँ बौद्धकालके जीवनको सजीव करती हैं, 'दुखवा मैं कासे कहूँ,' 'दे खुदाकी राहपर' एवं 'पानवाली' मुगलकालको। 'ठकुरानी,' 'राजपूती शान' आदि कई कहानियाँ राजपूती सामन्ती चरित्रोंको उजागर करती हैं। 'जीवन्मृत' एक क्रान्तिकारीकी कहानी है जिसके प्रकाशनके कारण 'चाँद' मासिककी जमानत जब्त हो गयी थी। 'खूनी,' 'पतिता,' 'बेड़नकली' आदि कहानियाँ समाजके पतित और तिरस्कृत वर्गके प्रति सहानुभूति से जन्मीं।

परिशिष्टमें कहानीकारका वक्तव्य है जिससे आचार्यजी के कहानीकारके विकासकी जानकारी मिलती है। आधुनिक हिन्दी कहानीके इतिहासमें चतुरसेन शास्त्रीका अपना स्थान है जो मूर्धन्य न हो, पर महत्वपूर्ण है। प्रत्येक कहानीके आरम्भमें संक्षिप्त परिचय भी दिया गया है। प्रकाशक प्रसिद्ध कहानीकारकी प्रिय एवं प्रतिनिधि कहानियोंको सुलभ संस्करणमें उपलब्ध करनेके लिए बधाईके पात्र हैं।

उर्दू और अंग्रेजीके साथ हिन्दीमें अपने ही याने जानेवाले लोकप्रिय कहानीकार कृश्नचन्दरकी ग्यारह नयी कहानियाँ 'गूंगे देवता' में प्रस्तुत हैं। दर्द गुर्दा, दातुनवाले, घर, बे-रंगो-बू, पिण्डारे, ठण्डा कोठा, क्या करूँ, करीम खाँ, अनुमान, कब्र, शादी, गूँगे देवता। निम्न वर्गके मजदूरों, असामाजिक माने जानेवाले व्यक्तियोंके प्रति प्रगतिशील कथाकार होनेके कारण कृश्नचन्दरकी सहानुभूति रही है और उनकी कृतियोंमें उसके अँधेरे पक्षको उजागर किया गया है। हमारी रूढ़िगत सामाजिक विचारधारा और आजादी के बादके नये शासक-वर्गपर उनका व्यंग्य तीखा रहा है। कृश्नचन्दरकी अपनी शैली है। श्रृंगार और व्यंग्यमें वे सिद्धहस्त हैं। पुस्तक कृश्नचन्दर प्रेमियोंको लुभायेगी ही और नये पाठकोंको मोहेगी। समीक्षककी अपनी प्रतिमें ३२ पृष्ठ लापता हैं, दो फार्म दुबारा सिले हैं। खुदा करे दो रुपये देकर यह हाल न हो।

फिक्र तौंसवीकी हास्य-व्यंग्य कहानियों और व्यंग्य रचनाओंका संग्रह 'डार्लिंग' है। कुल मिलाकर चौदह। पति-पत्नी, कवि, नेता, मजनूँ, फिल्मको लेकर तौंसवीने गुदगुदाया है, चिढ़ाया है, तिलमिलाया है। सामयिक समाज पर करारी चोट की है। डार्लिंगके पति-पत्नी सम्बन्ध समाजपर प्रहार हैं। विदेश जानेवाले 'एक क्रान्तिकारी' की बेवकूफी, फिल्मके चक्करमें 'मास्टर चड़तलाल' अधेड़ प्रेमी मास्टर मक्खनलाल मजेदार हैं। दिल्लीके आधुनिक प्रेमी-प्रेमिकाओंपर भी व्यंग्य है और कवि सम्मेलनी कविका भाषण भी। अन्तमें 'खत लिखेंगे' शीर्षकसे म्युनिसिपल कमिश्नर, धोबी, स्कूल मास्टर, प्रेमिकासे लेकर दुश्मन और चोरतक हर प्रकारके परिचित-अपरिचितको तौंसवीने पत्र लिख मारे हैं और बेचारोंका पर्दाफाश कर दिया। लीडरसे वे कहते हैं, "इस देशमें जो व्यक्ति किसी योग्य नहीं रहता वह लीडर बन जाता है।" तौंसवीकी भाषामें रवानी और तीखापन है और हँसने तथा सोचनेको मजबूर करने की सामर्थ्य।

उपन्यास

नजारे

लेखक : अमृता पांचाली; प्रकाशक : सुबोध पाकेट बुक्स, अंसारी रोड, दिल्ली-६। पृष्ठ : १२४; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

लकीरें

लेखक : पं. मुखराम शर्मा; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १२२; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

"एक पति. दो पत्नियाँ—हाहाकार! जो केवल फिल्मोंमें होता है, वह सचमुच हुआ। जिस पत्नीको उसने बरसोंसे मरी हुई समझा था, वह जिन्दा निकल आयी। और उसने देखा कि उसका पति दूसरी शादी कर रहा है।" सचमुच प्रकाशकीय टिप्पणीके अनुसार फिल्मकी कॉमिक सिचुएशनको लेकर यह उपन्यास लिखा गया है। पहली पत्नीको जिन्दा पाकर पति सुहागरातसे अपनेको बचा लेता है। शरीरपर प्लास्टर लगा लेता है। पहली पत्नी नर्स बनकर उसके साथ रहती है। अन्तमें तलाककी कार्रवाई चलती है और नायक नारकीय तरीकेसे कानूनी दाँव-पेंचसे पुनः पहली पत्नीको प्राप्त करता है। सतही कॉमेडी पसन्द करने वाले सामान्य पाठकके लिए अच्छा मनोरंजन है।

फिल्मसे साहित्यकी ओर आये पं० मुखराम शर्माकी नजर अभी फिल्मकी ही ओर है, यह 'लकीरें' सिद्ध करती है। छात्रोंकी अनुशासनहीनता, पुरानी और नयी पीढ़ीका अन्तराल, समाजसेवाका नशा करनेवाली महिलाको लेकर उपन्यास लिखा गया है जो कलाकुशल साहित्यकारके हाथों एक महत्वपूर्ण कृतिका रूप ले सकता था। किन्तु फिल्मकी दृष्टिसे लिखा जानेके कारण, श्रम न कर सकनेके कारण चालू बनकर रह गया। माता-पिता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

संस्थाके प्रकाशन

आलोचना

छायावाद : नया मूल्यांकन—प्रो. नित्यानन्द पटेल	७.५०
स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य—डॉ. महेन्द्र भटनागर	८.००
रूसी भाषा और संस्कृतमें आन्तरिक समानता—श्रीमती इन्दु लेखा	१.२५
अन्धायुग : एक विवेचन—डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा	प्रेस में

उपन्यास

अपराधी वैज्ञानिक—यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक'	८.००
ये पहाड़ी लोग— ,, ,,	४.५०
सुधा—टी. एन. गोपीनाथ नायर	३.५०
शकुन्तला—विराज	४.५०
प्रवासी—श्यामाचरण मिश्र	५.००

नाटक

देवयानी—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन् नायर	३.५०
श्रेष्ठ एकांकी—डॉ. वासुदेवनन्दन प्रसाद	३.५०

जीवन और दर्शन

शंकराचार्य : जीवन और दर्शन—वैद्य नारायणदत्त	२.५०
महर्षि दयानन्द : जीवन और दर्शन— ,,	५.००
गुरु नानक : जीवन और दर्शन— ,,	५.५०
श्री अरविन्द : जीवन और दर्शन— ,,	३.००

अन्य प्रकाशन

रुपयेका अवमूल्यन और उसका प्रभाव	८.००
समाजवादी बर्मा—श्यामाचरण मिश्र	४.००
विस्तारवादी चीन—जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी	१.२५
कच्छ—श्रीमती पद्मा अग्रवाल	२.२५
अफ्रीकाके राष्ट्रीय नेता—जगमोहनलाल माथुर	२.५०
एवरेस्ट अभियान—डॉ. हरिदत्त भट्ट 'शैलेश'	२.२५

प्रचारित साहित्य

शोध प्रबन्ध

संस्कृत कवितामें रोमाण्टिक प्रवृत्तियाँ—डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा	२०.००
सन्त काव्यका दार्शनिक विश्लेषण—डॉ. मनमोहन सहगल	१५.००
पं. अम्बिकादत्त व्यास : एक अध्ययन—डॉ. कृष्णकुमार	२५.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलोचना

सूरके कृष्ण : एक अनुशीलन—शशि तिवारी	१०.००
कामायनी : इतिहास और रूपक—सुशीला भारती	१०.००
नयी कविताके सात अध्याय—डॉ. देवेश ठाकुर	१२.००
जनकवि दिनकर—डॉ. सत्यकाम वर्मा	५.००
महाकवि प्रसाद— ,,	४.००
महाकवि पन्त— ,,	४.००

भाषा-विज्ञान

भाषा तत्व और वाक्यपदीय—डॉ. सत्यकाम वर्मा	२०.००
भारतीय भाषा विज्ञानकी भूमिका—डॉ. भोलानाथ तिवारी	३२.००

उपन्यास

आचार्य चाणक्य—डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार	६.००

कहानी-संग्रह

अप्सराका सम्मोहन तथा अन्य कहानियाँ—यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक'	५.००
खोये हुए लोग—ओम्प्रकाश निर्मल	५.००

कविता

फार्टी पोइम्स ऑफ डॉ० महेन्द्र भटनागर	१०.००

नाटक

श्री चन्द्रावली नाटिका (भारतेन्दु)—सं. डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा	३.००
मन्दिरकी जोत—चिरंजीत	३.५०
पाँच प्रहसन— ,,	४.००
घेराव— ,,	४.००

अन्य प्रकाशन

अजन्ताकी गुफाएँ—धीरेन्द्रनाथ वर्मा	१२.००
वर्माका इतिहास—श्यामाचरण मिश्र	६.००
हिमगिरि विहार—स्वामी तपोवनम्जी	१०.००

बाल-किशोर साहित्य

प्राचीन कथाएँ १—डॉ. कृष्णकुमार	१.२५
,, २— ,,	१.२५
होलीका हौवा—हरिकृष्ण तैलंग	१.००
जूता चर्चा ,,	१.००
चुन्नू-मुन्नू-पुष्पा (बच्चोंके पाँच नाटक)—चिरंजीत	३.५०

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गंगादेवी-भगीरथ गाँवसे शहर आते हैं। बेटा बलराज क्लबसे बहू शारदा समाजसेवाकी भाषणबाजीसे फुर्सत नहीं पाते। बेटी मीना प्रिन्सिपलके पुस्तक-प्रेमी पुत्र विजय से प्यार करती है। विजयकी बहिन राजेश्वरी प्रोफेसर विनोदकुमारसे जो आदर्श अध्यापक बना है। अन्तमें घटनाचक्र तेज चलता है। नाटकीय बल्कि फिल्मी तरीकेसे विनोदकुमार बदनाम होता है नौकरी छूटती है, विजय उसका दोष स्वयं ले लेता है। मीनाका विवाह जैसेही होनेको है, मण्डपपर दुल्हेको विवाहित सिद्ध किया जाता है। विनोदकुमारको भी निर्दोष सिद्ध कर दिया जाता है। अन्तमें जैसा हर सामाजिक हिन्दी फिल्ममें होता है--विनोद-राजेश्वरी, मीना-विजयके जोड़े दिखाये जाते हैं और खेल खतम, पैसा......। छोटेसे उपन्यासमें दर्जनों पात्र हैं, कई नायक-नायिका, विलेन हैं। फिल्मी पटकथाकी तरह सरासर फेड आउट होते हैं। फिल्म बनी तो बाक्स आफिस हो सकती है।

रूमानो उपन्यास

मेहमान

लेखक : राजवंश; प्रकाशक : स्टार पब्लिकेशंस, आसफअली रोड, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

हारजीत

लेखक : लोकदर्शी; प्रकाशक : वही। पृष्ठ : १२४; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

एक घटा प्यासी

लेखक : शेखर; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

डाकुओंकी पृष्ठभूमिमें लिखे गये उपन्यास मेहमानमें डाकू राखनसिंह, जो कभी रायबहादुरका मित्र था, अपना वचन पूरा करनेके लिए रायबहादुरकी बेटी शीलाका अपहरण कर विवाह कर लेता है, फिर वापस कर देता है। शीलाकी बेटी गुड्डीको कुछ वर्षों बाद वह फिर अपहरण कर लेता है ताकि शीला लौटकर उसके पास आये। शीलाका प्रेमी राजन जाकर गुड्डीको इधर पास लाता है, उधर शीला डाकूके पास पहुँच जाती है। रायबहादुर पुलिसको लेकर राखनको घेरता है। लड़ाईमें शीला अपने पिताके हाथों पतिकी रक्षामें जान देती है और राखन आत्महत्या कर लेता है। राजन जो डाकुओंसे बचते समय सोनियाका मेहमान बना था, उससे विवाह कर लेता है और कहानी खतम।

लोकदर्शीके उपन्यासमें भी देवके बेटेको डाकू उठा ले जाते हैं। देव उसे छुड़ाने जाता है और डाकूकी बेटी अपनी जान देकर उसे बचाती है। देव लौट आता है और डाकू स्वयं लड़केको वापस करने आता है।

'एक प्यासी घटा' है सरोज, जिसका पहला प्रेमी मनोज था, जो घर जाकर लौटा नहीं। मनोजका छोटा भाई विनोद कार्यालयमें सरोजके साथ रहते हुए उससे विवाह करना चाहता है। विनोद गाँव जाता है तो मनोज उसे गीतासे विवाह करनेको कहता है। विनोद अन्तमें सरोजको लेकर लौटता है और मनोज, जो सरोजके लिए सिन्दूरकी पुड़िया सँभाले अविवाहित रहा, आत्महत्या कर लेता है और चाहता है कि सरोज विनोदसे विवाह कर ले, पर सरोज मरते हुए मनोजके हाथों अपनी माँगमें सिन्दूर भरती है। सरोज ही नहीं, मनोज, विनोद, गीता और उसका भाई मुकुन्द सभी अतृप्त प्यारकी प्यासी घटा हैं। भाषा-शैली भावनाके अनुकूल है और चरित्र-चित्रण मोहक। आधुनिक हिन्दी फिल्मोंके अनुरूप नाटकीयता है, अतः लोकप्रियताके लिए उपयुक्त। पृष्ठ ४० पर सरोजके पिताको भाटिया कहा गया और पृष्ठ १११ पर सरोजका नाम सरोजवती खन्ना? बेदागको 'निर्दाग' लिखा गया है। शायद उपन्यास लेखकने दोबारा नहीं पढ़ा, न सम्पादकने।

जासूसी उपन्यास

किरायेका हत्यारा

लेखक : गुप्तदूत; प्रकाशक : स्टार पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली। पृष्ठ : १४०; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

दौड़ती हुई मौत

लेखक : गुप्तदूत; प्रकाशक : वही। पृष्ठ : १३४; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

वीरान बस्ती

लेखक : कर्नल रंजीत; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १२४; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

'गुप्तदूत' के दोनों उपन्यास जासूस संजयके किस्से हैं। 'किरायेका हत्यारा' में दोमें ऐसे मित्रोंकी कहानी है जो अपने एक अमीर मित्रकी सम्पत्तिको हथियानेके लिए जिसकी वसीयतके अनुसार प्रथम उत्तराधिकारी युद्धवीरके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मरनेपर दूसरे मित्रको मिलनेवाली थी, हत्या करता है। युद्धवीरको विक्षिप्त बनाकर स्वयं किरायेका हत्यारा बननेवाला सूरी, अन्ततः अपनी पत्नी और सालेको मारने के बाद संजयके हाथों पकड़ा जाता है।

नगा विद्रोहियोंकी पृष्ठभूमिमें लिखे गये उपन्यास 'दौड़ती हुई मौत' में नगा सरदार चीनी वैज्ञानिककी सहायतासे भेड़ियोंकी तरह बच्चोंको पालकर राष्ट्रद्रोही कार्रवाई करता है। जासूस संजय उसे अन्ततः पकड़ लेनेमें समर्थ होता है। गुप्तदूतके दोनों उपन्यास मनोरंजनके लिए उपयुक्त हैं।

कर्नल रंजीतका जासूस मेजर बलवन्त पहली बार कलकत्ता पहुँचकर केन्यासे भारत आयी दो बहिनों, अंजलि और अंजनीका रहस्य उद्घाटित करता है। अंजनी प्रतिभावान लेखिका है जिसकी प्रतिभाका उपयोग अंजलिके नामसे होता है और अंजनी तहखानेमें बन्द रखी जाती है। अंजनीका पति हेमन्त अफ्रीकाके लंगूर और क्रेन पक्षीके जहरका उपयोगकर हत्या करता है किन्तु जहरसे स्वयं मर जाता है। उपन्यासका घटनाक्रम काफी रोचक है और पाठकको उलझाये रखता है।

× × ×

काली बिल्लीवाला

लेखक : कैप्टेन देवेश; प्रकाशक : पुष्पी पाकेट बुक्स बाईका बाग, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : १३८; ७२; मूल्य : २.०० रु.

कंकालकी फुफकार

लेखक और प्रकाशक : वही। पृष्ठ : १३८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

'काली बिल्लीवाला' एक ब्लैकमेलरकी कहानी है जो अपनी गोदमें एक बिल्ली रखता था। दूसरी ओर पुलिस आये दिनकी आत्महत्याओंके मामलोंकी तलाशमें थी। अन्ततः मेजर दयालने काली बिल्लीवालेपर हाथ डाला और बड़ेही नाटकीय ढंगसे उसे अपने पंजोंमें कसता चला गया, यहाँतक कि काली बिल्लीवालेने कुछ कागजात बेरूत-स्थित अपनी सीक्रेट सर्विसके कार्यालयको भिजवाये जो रास्ते में ही उड़ा लिये गये।

पूरी घटनाका विवेचन और चित्रण सुन्दर और दिलचस्प है। प्रूफ़की गलतियोंकी भरमार है।

'कंकालकी फुफकार' विचित्र दाँव-पेचवाला दिलचस्प उपन्यास है जो वासनाकी परिधिपर जीवटके कारनामोंसे भरा है। उपन्यासमें अन्ततक गोपनीयता बनी रहती है जो पढ़नेवालेको आगे पढ़नेके लिए प्रेरित करती है। वैसे साधारणतः जासूसी उपन्यासोंमें जिज्ञासा नामकी चीज देखनेको नहीं मिलती। प्रूफोंकी शिकायत इसमें भी है।

—सैयद अख्तरुल इस्लाम

मत अभिमत

[इस स्तम्भमें 'प्रकर' में प्रकाशित समीक्षाओंपर आपकी प्रतिक्रिया आमन्त्रित है। प्रतिक्रियाद्वारा आप अपनी असहमति अथवा मतभेद प्रकट कर सकते हैं। कृपया यह यथासम्भव न्यूनतम शब्दोंमें संयत भाषामें भेजें।]

'प्रकर' दिसम्बर अंकमें मेरी लम्बी कविता 'कविताके हाथ' को शायद कलेवरकी दृष्टिसे लघु होनेसे पत्र-पत्रिका के अन्तर्गत रख 'मानव' ने जिसतरहकी पंक्तियाँ लिखीं वे एक विचारणीय और सर्वज्ञात घोर तथ्यकी ओर भले ही तीखा इंगित करती हों किन्तु उसीतरहका व्यवहार समीक्षार्थ भेजी गयी इस पुस्तिकाके साथ भी हो गया।

मुझे श्याम विमल नामके व्यक्तिकी प्रतिष्ठा नहीं, कवितागत 'हीरो' यानी आदमीकी छटपटाहटको पहचानने, उसके लिए जिम्मेदार परोक्ष संचालकपरसे पर्दा उठाने और उसीकी करतूतोंपर प्रहारक समीक्षणकी अपेक्षा थी और रहती है। जिसे यातो 'मानव' ने नहीं उघाड़ा या सम्पादकको लाल कलमने क्रासपर टाँग दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गत पच्चीस वर्षोंका
हिन्दी-साहित्यका सर्वेक्षण

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य

[सम्पादक : डॉ. महेन्द्र भटनागर]

- प्रधान साहित्य-रूपोंको प्रमुख प्रवृत्तियों एवं उपलब्धियोंका प्रमुख समीक्षकों द्वारा उच्चस्तरीय आकलन एवं तटस्थ विश्लेषण
- हिन्दी साहित्यके अध्येताओंके लिए एक अपरिहार्य आलोचना कृति
- अनेक विश्वविद्यालयोंमें स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमके अन्तर्गत सहायक-ग्रन्थके रूप में स्वीकृत

छात्र संस्करण ६.५० रु. सजिल्द ८.०० रु.

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी.)

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

कृपया आलोचकोंको ताकीद करें कि वे शल्य-क्रिया वाले औजार कविताके शरीरकी बजाय उन कारणोंपर चलायें जिनसे 'शरीर' विकृत हुआ है।

—श्याम विमल, १-बी/२२, लाजपतनगर,
नयी दिल्ली-२४

'लिखि कागद कोरे' ('प्रकर', सितम्बर ७२) की समीक्षाका 'टोन' और स्तर दोनों 'प्रकर' में हज्म होने लायक नहीं। समीक्षा—विशेषतः पुस्तक-समीक्षा-- आराधना नहीं है। यह समीक्षा अपनी सीमामें लड़खड़ाते कदम रखती है और इसलिए जल्दीही बाहर भागकर आतंकित स्वरमें कीर्तन करने लगती है।

—डॉ. शी. प्र. मिश्र, ६ लाजपत भवन,
हरणी मार्ग, बड़ौदा-६

दो टूक प्रतिक्रिया 'समस्या और समाधान' की समीक्षापर ('प्रकर', दिसम्बर, ७२)। इस पुस्तककी समीक्षामें आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जैसे प्रतिष्ठित विद्वान्के भाषण, उनकी भावुकता और उनकी मानवतावादी शैलीके सम्बन्धमें समीक्षकके आक्षेप ग्रन्थिमूलक और आपत्तिजनक हो गये हैं। यदि कोई न्यस्त अभिप्राय हो तो उसकी अभिव्यक्ति स्वस्थ समीक्षाके लिए वांछनीय नहीं।

—डॉ. तपेश्वरनाथ, हिन्दी विभाग,
भागलपुर वि. वि., भागलपुर

× × ×

'प्रकर' सचमुच आनेवाली पीढ़ियोंके लिए एक उपयोगी सन्दर्भ-ग्रन्थ होगा। मेरी शुभकामनाएँ सदा आपके साथ हैं।

—गुरुचरणसिंह मोंगिया, हिन्दी विभाग,
गुरुनानक वि. वि., अमृतसर

निश्चित रूपसे 'प्रकर' बहुत सुन्दर पत्र है। उसकी जितनी प्रशंसा की जाये, कम है। पत्रिका अपने उद्देश्यको पूर्ण करनेमें सफल है। अपनी सारी सफलताओंके लिए पत्रिकाके साथ आपभी बधाईके पात्र हैं।

—डॉ. पन्ना, ८, रवीन्द्र निवास,
वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली

हिन्दी पुस्तक-समीक्षाके क्षेत्रमें 'प्रकर' ने मानक कार्य किया है। इसकी तटस्थ और उखाड़-पछाड़से रहित स्वस्थ दृष्टि अत्यन्त सराहनीय है। आशा है इसकेद्वारा पुस्तकों की भीड़मेंसे पठनीय पुस्तकोंको छाँटनेमें सहायता मिल सकेगी।

—डॉ. श्रीधरसिंह, हिन्दी विभाग,
श्री वेंकटेश्वर वि. वि., तिरुपति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्ति सूचना

[इस मास निम्न पुस्तकें समीक्षार्थ प्राप्त हुई हैं। आगामी अंकोंमें इनकी समीक्षा अथवा परिचय प्रस्तुत किया जायेगा। समीक्षार्थ पुस्तककी दो प्रतियाँ आनी चाहियें, एक प्रतिको समीक्षा या परिचयका दायित्व स्वीकार नहीं किया जाता।]

शोध-आलोचना

कबीर वाणी; लेखक : डॉ. सरनामसिंह शर्मा 'अरुण'; प्रकाशक : रंजन प्रकाशन, बाँके विलास, सिटी स्टेशन रोड, आगरा-३। पृष्ठ : १७०+७२; डिमाई, ७२; मूल्य : ६.९० रु.।

छायावाद का काव्य वैभव; लेखक : डॉ. दीनानाथ 'शरण'; प्रकाशक : गयाप्रसाद एण्ड संस, बाँके विलास, सिटी स्टेशन रोड, आगरा-३। पृष्ठ : ३४०; डिमाई, ७२; मूल्य : १५.०० रु.।

मध्यप्रदेशके अहिन्दीभाषियोंकी हिन्दी-सेवा; लेखक : डॉ. व्रजभूषणसिंह 'आदर्श'; प्रकाशक : लोकचेतना प्रकाशन, १८४ शहीद स्मारक पथ, जबलपुर। पृष्ठ : ११८; डिमाई, ७२; मूल्य : ५.०० रु.।

महादेवी और उनकी गद्य रचनाएँ; लेखिका : माधवी राजगोपालन; प्रकाशक : रंजन प्रकाशन, आगरा-३। पृष्ठ : १४८; डिमाई, ६८; मूल्य : ८.०० रु.।

मीराँकी भाषा; लेखिका : डॉ. शशिप्रभा; प्रकाशक : स्मृति प्रकाशन, ६१, महाजनी टोला, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : २०३; डिमाई, ७२; मूल्य : १५.०० रु.।

राजस्थानी गद्य : विकास और प्रकाश (भाग १ : विकास); सम्पादक : डॉ. नरेन्द्र भानावत, डॉ.लक्ष्मी कमल; प्रकाशक : श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा। पृष्ठ : १६८; डि. ७२; मूल्य : १५.००रु.।

रामचन्द्रिका; लेखक : डॉ. प्रेमस्वरूप, प्रकाशक : रंजन प्रकाशन, आगरा-३। पृष्ठ : ५६+६६; डि., ७२; मूल्य : ३.८५ रु.।

रीति काव्यमें शृंगार-निरूपण; लेखक : सुखस्वरूप श्रीवास्तव; प्रकाशक : प्रगति प्रकाशन, बैतुल बिल्डिंग, आगरा-३। पृष्ठ : १५५; डिमाई, ७२; मूल्य : १२.५० रु.।

लोकगीतोंकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि; लेखक : डॉ. विद्या चौहान; प्रकाशक : प्रगति प्रकाशन, आगरा-३। पृष्ठ : ३७६; डिमाई, ७२; मूल्य : ३५.०० रु.।

विनय-पत्रिका; लेखक : डॉ. गोपीनाथ तिवारी; प्रकाशक : रंजन प्रकाशन, आगरा-३। पृष्ठ : २९२ : डिमाई, ७२; तृ. सं.; मूल्य : ६.५० रु.।

विनय-पत्रिका समीक्षा; लेखक : डॉ. गोपीनाथ तिवारी; प्रकाशक : रंजन प्रकाशन, आगरा-३। पृष्ठ : १५६; डिमाई, ७०; मूल्य : ५.९० रु.।

वीर सतसई; सम्पादक : नरोत्तम स्वामी, नरेन्द्र भानावत, लक्ष्मी कमल; प्रकाशक : रंजन प्रकाशन, आगरा-३। पृष्ठ : १४१+१५६; डिमाई, ७०।

शैली विज्ञान और आलोचनाकी नई भूमिका; लेखक : रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव; प्रकाशक : केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा-५। पृष्ठ : ९६; रायल, ७२; मूल्य : ६.०० रु.।

स्वच्छन्दतावादी काव्यका तुलनात्मक अध्ययन; लेखक : डॉ. पी. आदेश्वर राव; प्रकाशक : प्रगति प्रकाशन, आगरा-३। पृष्ठ : ३५०; डिमाई, ७२; मूल्य : ३५.०० रु.।

हिन्दी काव्यमें कृष्णचरितका भावात्मक स्वरूप विकास; लेखक : डॉ. तपेश्वरनाथ; प्रकाशक : हिन्दी प्रचारक संस्थान, सी-२१/३०, पिशाचमोचन, वाराणसी-१। पृष्ठ : ४३९; डिमाई, ७२; मूल्य : ३५.०० रु.।

भाषा-विज्ञान

बदायूँ जनपदकी बोली (शो. प्र.); लेखक : डॉ. राम प्रकाश सक्सेना; प्रकाशक : रंजन प्रकाशन, आगरा-३। पृष्ठ : २१४; रायल, ७२; मूल्य : २५.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय भाषा विज्ञानकी भूमिका; सम्पादक : डॉ. भोलानाथ तिवारी, डॉ. मणिकलाल चतुर्वेदी, डॉ. भगतसिंह; प्रकाशक : पं. मोहनवल्लभ पन्त स्मारक समिति। पृष्ठ : ४७८; डिमाई ७२; मूल्य : ३२.०० रु.।

हिन्दी और मणिपुरी परसर्गोंका तुलनात्मक अध्ययन; लेखक : अरिबम कृष्णमोहन शर्मा; प्रकाशक : केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा-५। पृष्ठ : १०६; रायल,७२; मूल्य : ६.०० रु।

हिन्दी व्याकरण तथा रचना; लेखक : डॉ. कैलाश चन्द्र अग्रवाल; रंजन प्रकाशन, आगरा-३। पृष्ठ : २०२; डिमाई, ७२; मूल्य : ४.०० रु.।

लिपि-विज्ञान

अक्षर कथा; लेखक : गुणाकर मुळे; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : २६७; रायल, ७२; मूल्य : १०.०० रु.।

उपन्यास

अभिशाप या वरदान; लेखिका : अन्नपूर्णा तांगड़ी; प्रकाशक : हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी-१। पृष्ठ : १६४; क्राउन, ७२; मूल्य : ५.०० रु.।

चाँदीकी रात; लेखक : कमल शुक्ल : प्रकाशक : भारतीय ग्रन्थमाला, गूंगे नवाब पार्क, लखनऊ। पृष्ठ : १२२; डिमाई, ७२; द्वि. सं.; मूल्य : ८.०० रु.।

जब धरती बोली; लेखक : श्रीराम शर्मा 'राम'; प्रकाशक : भारतीय ग्रन्थ निकेतन, १३३, लाजपत राय मार्केट, दिल्ली-६। पृष्ठ : २१६; क्राउन, ७२; मूल्य : ८.०० रु.।

वंचिता; लेखिका : चन्द्रकिरण सौनरेक्सा; प्रकाशक : लोकचेतना प्रकाशन, जबलपुर। पृष्ठ : १६०; क्राउन, ७२; मूल्य : ७.०० रु।

कहानी-संग्रह

ईश्वर बाबू अनुपस्थित थे; लेखक : प्रणवकुमार वंद्योपाध्याय; प्रकाशक : दिव्य प्रकाशन, १७४ ई. कमलानगर, दिल्ली-७। पृष्ठ : १५८; क्राउन, ७२; मूल्य : ७.०० रु.।

खत्म होनेके बाद; लेखिका : मणिका मोहिनी; प्रकाशक : ज्ञान भारती प्रकाशन, १७५ ई., कमलानगर, दिल्ली-७। पृष्ठ : १२८; क्राउन, ७२; मूल्य : ६.५० रु.।

चुनावको घुड़दौड़; लेखिका : स्वरूपकुमारी बख्शी; प्रकाशक : भारतीय ग्रन्थमाला, लखनऊ। पृष्ठ : १०२; डिमाई, ७२; मूल्य : ७.०० रु.।

ताप और संताप; लेखक : धनेन्द्रकुमार जैन; प्रकाशक : हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी-१। पृष्ठ : १६७; क्राउन ७२; मूल्य : ५.०० रु.।

बर्फके रंगका शरीर; लेखक : प्रणवकुमार वंद्योपाध्याय; प्रकाशक : इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, ११३/४, पश्चिमी आजादनगर, दिल्ली-५१। पृष्ठ : १२८; क्राउन, ७२; मूल्य : ६.०० रु.।

बहिर्गमन [पहचान/२/५]; लेखक : ज्ञानरंजन; प्रकाशक : इलाहाबाद प्रेस, ३७०, रानीमण्डी, इलाहाबाद-३।

नाटक : एकांकी

आगका चिराग; लेखिका : सुधा मिश्रा; प्रकाशक : भारतीय ग्रन्थमाला, लखनऊ। पृष्ठ : ७५; क्राउन, ७२; मूल्य : २.५० रु.।

तेन्दुआ [पहचान/३/५]; लेखक : मुद्राराक्षस; सम्पादक : अशोक वाजपेयी; प्रकाशक : इलाहाबाद प्रेस, इलाहाबाद-३।

मैं मायके चली जाऊँगी; लेखिका : स्वरूपकुमारी बख्शी; प्रकाशक : भारतीय ग्रन्थमाला, लखनऊ। पृष्ठ : ८७; डिमाई, ७१; मूल्य : ५.०० रु.।

हास्य-व्यंग्य

खट्टर काका; लेखक : हरिमोहन झा; प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, फैज बाजार, दिल्ली-६। पृष्ठ : २३६; डिमाई, ७१; मूल्य : १२.०० रु.।

काव्य-संकलन

कछुएकी पीठपर [पहचान/३/३]; कवि : रमेशचन्द्र शाह; सम्पादक : अशोक वाजपेयी; प्रकाशक : इलाहाबाद प्रेस, इलाहाबाद-३।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता-८; सम्पादक : भागीरथ भार्गव, जयसिंह नीरज; प्रकाशक : कविता प्रकाशन, 'कृष्णायन', आर्यनगर, अलवर। पृष्ठ : १०२; डिमाई, ७२; मूल्य : ६.०० रु.।

कैफियत [पहचान/३/४]; कवि : देवेन्द्रकुमार; सम्पादक : अशोक वाजपेयी; प्रकाशक : इलाहाबाद प्रेस, इलाहाबाद-३।

गीतविच [पहचान/३/१]; कवि : श्रीराम वर्मा; सम्पादक : अशोक वाजपेयी; प्रकाशक : उपर्युक्त।

चाकूसे खेलते हुए [पहचान/२/२]; कवि : सौमित्र मोहन; सम्पादक : अशोक वाजपेयी; प्रकाशक : उपर्युक्त।

जरत्कारु [पहचान/२/४]; कवि : कमलेश; सम्पादक : अशोक वाजपेयी; प्रकाशक : उपर्युक्त।

दीमककी भाषा; कवि : श्याम विमल; प्रकाशक : स्वयम् प्रकाशन, १-बी/२२, लाजपत नगर, नयी दिल्ली-२४। पृष्ठ : १०३; डिमाई, ७०; मूल्य : ८.०० रु.।

निषेध; सम्पादक : जगदीश चतुर्वेदी; प्रकाशक : ज्ञानभारती प्रकाशन, १७५ ई, कमलानगर, दिल्ली-७। पृष्ठ : २०२; डिमाई, ७२; मूल्य : २०.०० रु.।

फैसलेका दिन [पहचान/२]; कवि : आन्द्रे वाज्नेसेंस्की; अनुवाद : श्रीकान्त वर्मा; सम्पादक : अशोक वाजपेयी; प्रकाशक : इलाहाबाद प्रेस, ३७०, रानी मण्डी, इलाहाबाद-३।

युवा हस्ताक्षर; सम्पादक : सलिल गुप्त, चन्द्रेश गुप्त; प्रकाशक : नटराज प्रकाशन, ५२/२६, नयी दाल मण्डी, कानपुर। पृष्ठ : ८८; क्राउन, ७२; मूल्य : १.५० रु.।

राष्ट्र मंगल; कवि : डॉ. इंदरराज बैद 'अधीर'; प्रकाशक : राज प्रकाशन, १-बड़िबेलपुरम्, मद्रास-३३। पृष्ठ : ७२; डिमाई, ७२; मूल्य : ५.०० रु.।

लगभग जयहिन्द [पहचान/२/३]; कवि : विनोद कुमार शुक्ल; सम्पादक : अशोक वाजपयी; प्रकाशक : इलाहाबाद प्रेस, इलाहाबाद-३।

सार्थक-१; डॉ. देवेन्द्र दीपक, डॉ. श्यामसुन्दर दुबे; प्रकाशक : कीर्तिकाम प्रकाशन, अम्बिकापुर (म. प्र.)। पृष्ठ : ७६; डिमाई, ७२; मूल्य : ५.०० रु.।

सुबह होनेसे पहले; कवि : सव्यसाची; प्रकाशक : युगान्तर प्रकाशन, डेम्पीयर, मथुरा। पृष्ठ : ९६; डिमाई, ७१; मूल्य : २.०० रु.।

हड्डियोंमें छिपा ज्वर [पहचान/३/२]; कवि : चन्द्रकान्त देवताले; सम्पादक : अशोक वाजपेयी; प्रकाशक : इलाहाबाद प्रेस, इलाहाबाद।

व्यक्ति : परिचय

कमलापति त्रिपाठी : व्यक्ति और स्रष्टा; लेखक : सुधाकर पांडेय; प्रकाशक : हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी-१। पृष्ठ : ८६; डिमाई, ७२; मूल्य : ३.०० रु.।

श्री अरविन्दायन; लेखक : पण्डित राव रावल; अनुवादिका : कु. धर्मा भट्ट; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ८०; क्राउन दुगना, ७२; मूल्य : ४.०० रु.।

विजयके सूत्रधार : श्री जगजीवनराम व्यक्तित्व एवं संस्मरण; लेखक : डॉ. अशोककुमार वर्मा; प्रकाशक : पंजाबी पुस्तक भण्डार, दरीबाकलाँ, दिल्ली-६। पृष्ठ : ३३०; क्राउन, ७२; मूल्य : १०.०० रु.।

साहित्य जगतके विनोबा : बख्शीजी; लेखक : नर्मदा प्रसाद खरे; प्रकाशक : लोकचेतना प्रकाशन, जबलपुर। पृष्ठ : १३२; क्राउन, ७२; मूल्य : ५.०० रु.।

राजनीति

नेहरू और मार्क्सवाद; लेखक : शशिभूषण; वितरक : स्टार पब्लिकेशंस प्रा. लि., आसफअली रोड, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : १५९; क्राउन, ७२; मूल्य : ६.५० रु.।

निदेशिका

भारतीय लेखक कोश (प्रथम खण्ड); सम्पादक : रामगोपाल परदेसी; प्रकाशक : प्रगति प्रकाशन, बैतुल बिल्डिंग, आगरा-३। पृष्ठ : ४५२; डिमाई, ७०; मूल्य : ६०.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी साहित्य : अलोचना ग्रन्थ सूची; सम्पादक : यशपाल महाजन; प्रकाशक : भारतीय ग्रन्थ निकेतन, १३३, लाजपतराय मार्केट, दिल्ली-६। पृष्ठ : ३३३; क्राउन दुगना, ७१; मूल्य : ४०.०० रु.।

पत्र-पत्रिकाएँ

नया शिक्षक/टीचर टुडे (विशेषांक : ईस्वी सन् २००० में शिक्षा); सम्पादक : एल. एन. गुप्ता, शिवरतन थानवी, गुर इकबालसिंह; प्रकाशक : प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा निदेशालय, राजस्थान, बीकानेर। प्रस्तुत अंक २.५० रु., वार्षिक मूल्य : ८.०० रु.।

विमर्श (वर्ष ४, अंक ४, १९७२); सम्पादक : डॉ॰ मदनगोपाल गुप्त, अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, म. स. विश्वविद्यालय, बड़ौदा (गुजरात)।

बाल-साहित्य

अभिनय एकांकी; लेखक : विष्णु प्रभाकर; प्रकाशक : रंजन प्रकाशन, आगरा-३। पृष्ठ : ८०; क्राउन दुगना, ७२; द्वि. सं.; मूल्य : २.०० रु.।

चाचा नेहरूकी कहानी (चित्रमय झाँकी); लेखक-चित्रकार : एस. डी. सावन्त, एस. डी. बदलकर; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ४३; क्राउन दुगना, ७२; मूल्य : ३.५० रु.।

पढ़ो कहानी : सीखो ज्ञान (चार भाग); लेखिका : पुष्पा बेरी, किरण बेरी; प्रकाशक : हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी-१। पृष्ठ क्रमश : ६४, ६४, ८०, ९६; क्राउन. ७२; मूल्य प्रत्येक : १.५० रु.।

माटी हो गयी सोना (विज्ञान); लेखक : विनोद विभाकर; प्रकाशक : कला मन्दिर प्रकाशन, २५३८, धर्मपुरा, दिल्ली-६। पृष्ठ : ४०; क्राउन दुगना, ७२; मूल्य : २.५० रु.।

मैं बांग्ला देश हूँ; लेखक : नर्मदाप्रसाद खरे, सभामोहन अबधिया; प्रकाशक : लोकचेतना प्रकाशन, जबलपुर। पृष्ठ ६३; क्राउन दुगना, ७२; मूल्य : ३.०० रु.।

जेबी-पुस्तकें

अधूरे होंठ (उपन्यास); लेखिका : अमृता पांचाली; प्रकाशक : सुबोध पाकेट बुक्स, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : १३६; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

गोदावरी (उप.); लेखक : राजाराम शास्त्री; प्रकाशक : लोकप्रिय पाकेट बुक्स, जवाहर नगर, दिल्ली-७। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

घेरेके बाहर (उप.); लेखक : द्वारकाप्रसाद; प्रकाशक : सुबोध पाकेट बुक्स, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : २०८; ७३, च. सं.; मूल्य : ३.०० रु.।

चौराहा (उप.); लेखक : गुरुदत्त; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : २२४; ७२; मूल्य : ३.०० रु.।

पापकी गठरी (जासूसी उप.); लेखक : जोरावरसिंह वर्मा; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

सरल ज्योतिष—प्रश्नखण्ड; लेखक : राजाराम शास्त्री; प्रकाशक : लोकप्रिय पाकेट बुक्स, जवाहर नगर, दिल्ली-७। पृष्ठ : १२८; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

सुबोध मूहूर्त्त ज्योतिष; लेखक : डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली; प्रकाशक : सुबोध पाकेट बुक्स, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : १२७; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश-विदेशकी राजनीतिक परिस्थितियोंमें
निरन्तर परिवर्तनोंकी पृष्ठभूमि प्रदान करनेवाली पुस्तकें

विस्तारवादी चीन

यह पुस्तक चीनकी साम्राज्य-विस्तारकी महत्वाकांक्षाकी कहानी है। इसमें चीनको साम्राज्यवादी भूखके शिकार तिब्बत, सिंक्यांग, भीतरी मंगोलिया और मंचूरियाके पतनका इतिहास है और दक्षिण-पूर्व एशियामें चीनद्वारा भारतीय सभ्यता, धर्म और कलाको नष्ट करनेके प्रयत्नोंकी कहानी है। लेखक हैं : जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी।

उत्तर-प्रदेश सरकारद्वारा पुरस्कृत। (जेबी आकार) मूल्य : १.२५ रु.

कच्छ

इस पुस्तकमें कच्छपर पाकिस्तानी आक्रमण, कच्छसम्बन्धी समझौते और वहांका पूर्ण परिचय है। लेखिका हैं : पद्मा अग्रवाल।

उ. प्र. सरकारद्वारा पुरस्कृत। (जेबी आकार) मूल्य : २.२५ रु.

अफ्रीकाके राष्ट्रीय नेता

अफ्रीकामें निरन्तर संघर्ष होते रहते हैं। सैनिक विद्रोह वहांकी नियति है। अफ्रीकाकी घटनाओंके संचालकों और राजनीतिज्ञोंके साथ अफ्रीकाके प्रत्येक देशका इसमें परिचय है। लेखक हैं : जगमोहनलाल माथुर।

(जेबी आकार) मूल्य : २.५० रु.

समाजवादी बर्मा

बर्मामें सैनिक समाजवादका उदय वहांके वर्तमान राष्ट्रपति नेविनके नेतृत्वमें हुआ। इसका कारण वहांकी पूर्व सरकारके कालमें व्याप्त व्यापक भ्रष्टाचार था। इस परिवर्तनका वहां बसे भारतीयोंपर प्रबल कुप्रभाव हुआ। इसके लेखक हैं बर्मावासी श्यामाचरण मिश्र।

(क्राउन आकार) मूल्य : ४.०० रु.

चारों पुस्तकें एकसाथ मँगानेपर डाक-व्ययकी छूट

नवभारती सहकार प्रकाशन

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्रकर' का नया विशेषांक

भारतीय साहित्य : २५ वर्ष

बहुत शीघ्र प्रकाशित हो रहा है

- इस अंकमें संविधानमें उल्लिखित प्रत्येक भारतीय भाषाकी स्वातन्त्र्योत्तर प्रगतिका सिंहावलोकन होगा।
- हिन्दीकी आलोचना, उपन्यास, कहानी, नाटक, रेडियो नाटक, काव्य, हास्य-व्यंग्य आदि अनेक विधाओंकी स्वातन्त्र्योत्तर प्रगतिपर अलग-अलग लेख होंगे।

लेखक हैं :

अज़ीज़ इन्दौरी (उर्दू), डॉ. अरविन्द देसाई (गुजराती), डॉ. एन. एस. दक्षिणामूर्ति (कन्नड़), डॉ. एस. एन. गणेशन (तमिल), चिरंजीत (हिन्दी—रेडियो नाटक), डॉ. जयचन्द राय (हिन्दी—आलोचना), जी. एन. पिल्लई (मलयालम), डॉ. नन्दकुमार राय (हिन्दी—उपन्यास), नेमिचन्द्र जैन (हिन्दी—नाटक), फूलचन्द मानव (पंजाबी), डॉ. भीमराव कुलकर्णी (मराठी), डॉ. भीमसेन निर्मल (तेलुगु), मोतीलाल जोतवाणी (सिन्धी), रामबहाल तिवारी (बँगला), डॉ. लक्ष्मणदत्त गौतम (हिन्दी—कहानी), श्रीमती विश्ववारा (हिन्दी—हास्य-व्यंग्य), डॉ. वेदव्रत (संस्कृत), शी. प्र. मिश्र (हिन्दी—काव्य), शम्भुनाथ भट्ट 'हलीम' (कश्मीरी)।

विशेषांक मूल्य : ६.०० रु.

अपनी प्रति सुरक्षित करानेके लिए अग्रिम राशि भेजें। रजिस्ट्रीसे मँगानेके लिए १.३५ रु. मूल्यके साथ भेजें।

व्यवस्थापक : 'प्रकर', ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

'नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)' के लिए विद्यासागर विद्यालंकार द्वारा संपादित, प्रताप मुद्रणालय, दिल्ली-७ के लिए दी एज्युकेशनल प्रेस, सिटी स्टेशन मार्ग, आगरा—३ में मुद्रित, ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७ से प्रकाशित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

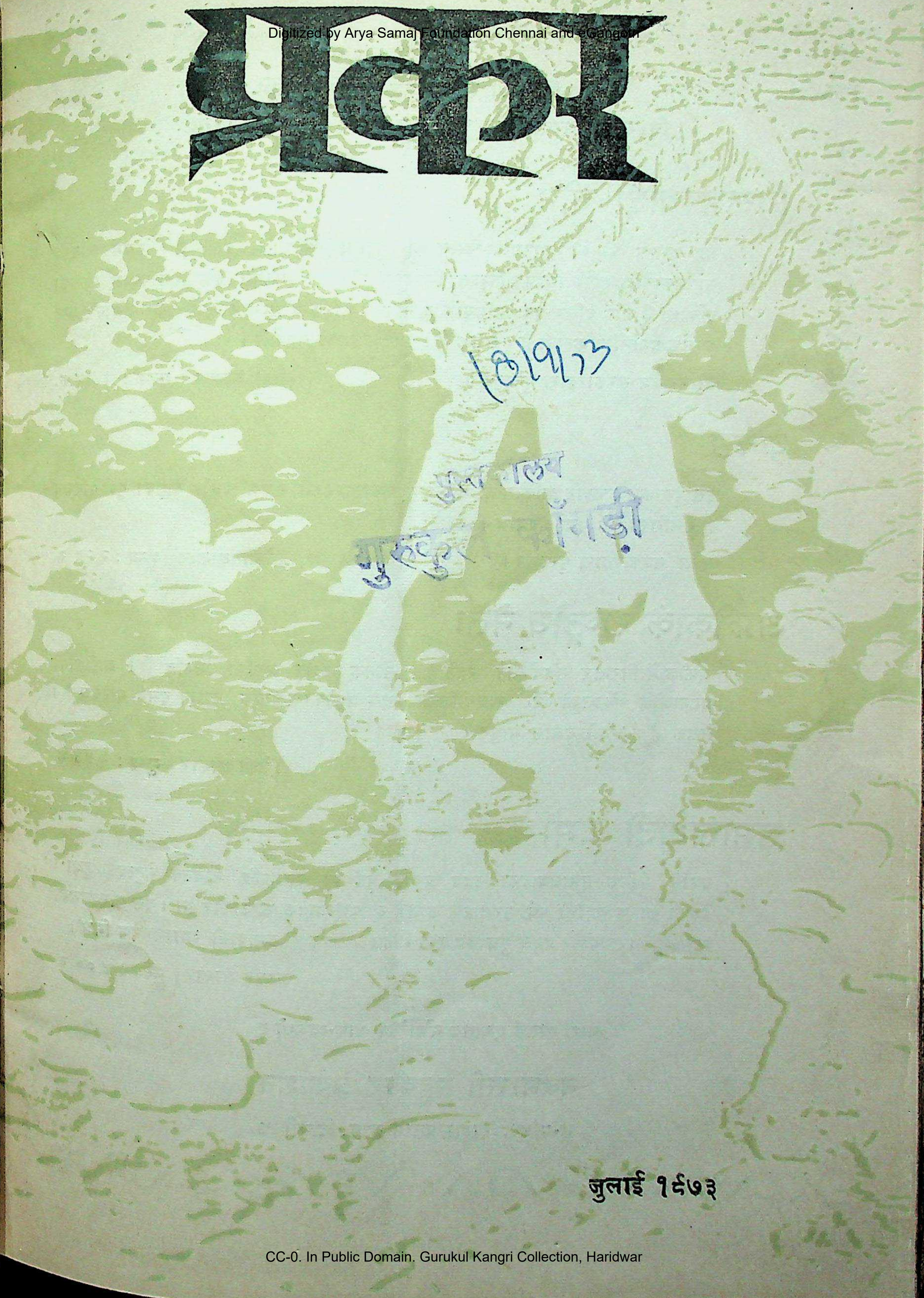

1/8/73
पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश-विदेशकी राजनीतिक परिस्थितियोंमें
निरन्तर परिवर्तनोंकी पृष्ठभूमि प्रदान करनेवाली पुस्तकें

विस्तारवादी चीन

यह पुस्तक चीनकी साम्राज्य-विस्तारकी महत्वाकांक्षाकी कहानी है। इसमें चीनकी साम्राज्यवादी भूखके शिकार तिब्बत, सिंक्यांग, भीतरी मंगोलिया और मंचूरियाके पतनका इतिहास है और दक्षिण-पूर्व एशियामें चीनद्वारा भारतीय सभ्यता, धर्म और कलाको नष्ट करनेके प्रयत्नोंकी कहानी है। लेखक हैं : जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी।

उत्तर-प्रदेश सरकारद्वारा पुरस्कृत। (जेबी आकार) मूल्य : १.२५ रु.

कच्छ

इस पुस्तकमें कच्छपर पाकिस्तानी आक्रमण, कच्छसम्बन्धी समझौते और वहांका पूर्ण परिचय है। लेखिका हैं : पद्मा अग्रवाल।

उ. प्र. सरकारद्वारा पुरस्कृत। (जेबी आकार) मूल्य : २.२५ रु.

अफ्रीकाके राष्ट्रीय नेता

अफ्रीकामें निरन्तर संघर्ष होते रहते हैं। सैनिक विद्रोह वहांकी नियति है। अफ्रीकाकी घटनाओंके संचालकों और राजनीतिज्ञोंके साथ अफ्रीकाके प्रत्येक देशका इसमें परिचय है। लेखक हैं : जगमोहनलाल माथुर।

(जेबी आकार) मूल्य : २.५० रु.

समाजवादी बर्मा

बर्मामें सैनिक समाजवादका उदय वहांके वर्तमान राष्ट्रपति नेविनके नेतृत्वमें हुआ। इसका कारण वहांकी पूर्व सरकारके कालमें व्याप्त व्यापक भ्रष्टाचार था। इस परिवर्तनका वहां बसे भारतीयोंपर प्रबल कुप्रभाव हुआ। इसके लेखक हैं बर्मावासी श्यामाचरण मिश्र।

(क्राउन आकार) मूल्य : ४.०० रु.

चारों पुस्तकें एकसाथ मंगानेपर डाक-व्ययकी छूट

नवभारती सहकार प्रकाशन

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

विषय-सूची

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समीक्षित पुस्तकें	पृष्ठ संख्या	समीक्षक
१. शोध और आलोचना		
आधुनिक भावबोधकी संज्ञा : अमृत राय	१	(१) डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित (२) डॉ. रणवीर रांग्रा
आचार्य राजशेखर : डॉ श्यामा वर्मा	६	डॉ. पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु'
महादेवी और उनकी गद्य-रचनाएँ : माधवी राजगोपालन	८	डॉ. महेन्द्र भटनागर
हिन्दी साहित्य : आलोचना ग्रंथ-सूची (१९४७-१९७१) : यशपाल महाजन	९	मनमोहन वर्मा
आधुनिक निबन्धावलि : सम्पादक–डॉ. विद्या निवास मिश्र	१०	श्यामकिशोर शर्मा
२. राजस्थानी साहित्य		
रणमल्ल छन्द : सं० मूलचन्द प्राणेश	११	काशीराम शर्मा
राजस्थानी गद्य : विकास और प्रकाश–१ : सं० डॉ. नरेन्द्र भानावत, डॉ. लक्ष्मीकमल	१३	डॉ. रामप्रसाद दाधीच
वीर सतसई (सूर्य्यमल) : सं० नरोत्तम स्वामी, नरेन्द्र भानावत, लक्ष्मी कमल	१४	डॉ. रामप्रसाद दाधीच
३. भाषा-विज्ञान		
अक्षर कथा : गुणाकर मुले	१४	डॉ. भोलानाथ तिवारी
४. उपन्यास		
सपनों के टुकड़े : डॉ. रमानाथ अवस्थी	१५	डॉ. नत्थनसिंह
नेपालेश्वर : विराज	१७	केवल अग्निहोत्री
गरीबीसे आगे : बलदेवदत्त शर्मा	१८	डॉ. कृष्णकुमार गोस्वामी
५. कहानी-संग्रह		
खत्म होनेके बाद : मणिका मोहिनो	१९	सुरेन्द्र तिवारी
बर्फ़के रंगका शरीर : प्रणवकुमार बन्धोपाध्याय	२१	सुरेन्द्र तिवारी
६. नाटक		
किंग लियर (शेक्सपियर) : बच्चन	२४	डॉ. शान्तिलाल जैन
७. हास्य-व्यंग्य		
रहा किनारे बैठ : शरद जोशी	२६	डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय
८. काव्यसंकलन		
कविता-८ : सं० भागीरथ भार्गव, जयसिंह नीरज	२८	डॉ. शीतला मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनचीन्हा परिवेश : सुधा गुप्ता	२९	स्वर्ण किरण
ठहरी क्षण भर : राजेन्द्र मिलन	२९	विश्वप्रकाश दीक्षित वटुक
प्रयास-२ : सं० बजरंग बहादुरसिंह, वेद प्रकाश अग्रवाल, अशोककुमार गुप्त	३०	डॉ शीतला मिश्र
अन्तर्धारा : डॉ. रामनरेश 'हंस'	३०	स्वर्णकिरण
श्री मद् भगवद्गीता : गदाधर नारायण	३१	डॉ. रामाभिलाष त्रिपाठी
९. लोक-साहित्य		
हरियाणा लोकगीतोंकी धरती : देवीशंकर प्रभाकर	३२	डॉ. रामस्वरूप आर्य
हरियाणा लोक-कथाएँ : देवीशंकर प्रभाकर	३२	डॉ. रामस्वरूप आर्य
१०. राजनीति		
लोकतन्त्र : डोरोथी पिकल्स	३३	दिनेश भट्ट
भारत और बंगला देशमें चीनी षड्यन्त्र : शशिभूषण	३३	मनमोहन वर्मा
नेहरू और मार्क्सवाद : शशिभूषण	३३	मनमोहन वर्मा
रूसकी खुफियापुलिस : रोनाल्ड हिंगले	३४	दिनेश भट्ट
गरीबी हटाओ : राजेन्द्रमोहन भटनागर	३५	प्रेमकृष्ण टण्डन
दि इण्डो सोवियत ट्रीटी : के. पी. एस. मेनन	३५	मनमोहन वर्मा
११. गांधी-साहित्य		
सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय	३६	मुकुट बिहारी वर्मा
१२. व्यक्ति : संस्मरण		
महात्मागांधी : आत्म साधना : मोहनलाल भट्ट	३८	मुकुट बिहारी वर्मा
भूदान यज्ञके प्रणेता : मोहनलाल भट्ट	३८	मुकुट बिहारी वर्मा
श्री आनन्दस्वामी सरस्वती : रणवीर	३९	वैद्यनाथ शर्मा
१३. जीवन-साहित्य		
जीवन-ज्योति : डॉ. मंगलदेव शास्त्री	४०	डॉ. यदुवीरप्रसाद भटनागर
१४. बाल-साहित्य	४१	
१५. जेबी पुस्तकें	४४	
१६. मत-अभिमत	४५	
१७. प्राप्ति-सूचना	४७	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक भावबोधकी संज्ञा

लेखक : अमृतराय; प्रकाशक : हंस प्रकाशन, इलाहाबाद। पृष्ठ : २०५; डिमाई, ७२; मूल्य : ८.०० रु० ।

अमृतराय हिन्दीके कथाकार होनेके साथही एक स्वतन्त्र चिन्तकभी हैं। साहित्यके मूलगत और समसामयिक प्रश्नोंसे जूझते-उलझते वह उनके बीचसे सही रास्तेको पहचाननेका प्रयत्न करते रहे हैं। पहचानका उनका अपना तौर-तरीका है, अपनी बँधी-सधी मान्यताएँ हैं। इन मान्यताओंका गहरेमें जहाँ मार्क्सवादसे संबंध है, वहाँ उनका अन्तःसंबंध भारतीयतासे भी है।

प्रस्तुत पुस्तक अमृतरायके द्वारा विभिन्न पत्रिकाओंमें लिखे गये १३ लेखोंका संग्रह है, जिनमेंसे तीन समसामयिक प्रश्नोंको हल करनेके लिए लिखे गये लेख हैं, शेष १० साहित्यसे जुड़े हुए हैं। इधर प्रतिबद्धता, विद्रोह, आक्रोश, संत्रास, संवादहीनता और परिवेशको आधुनिकताके संदर्भमें ऊँचे ताकपर पधरानेकी कोशिश की जाती रही है। अमृतराय इस पुस्तकमें उन्हींका सामना करते हैं। और चूँकि ये लेख पत्रिकाओंके लिए लिखे गये हैं इसलिए भी, और इसलिए भी कि स्वयं अमृतराय अपने लेखनमें एक 'पार्टिसिपेण्ट' की हैसियतसे उपस्थित रहते रहे हैं, इन लेखोंमें वैयक्तिकता और व्यक्तित्व दोनोंको खुले तौरपर देखा जा सकता है। दूसरी ओर पत्रिकारिताकी झलक और उसका दबाव बहसके दौरान साफ़ नज़र आने लगता है। यही कारण है कि ये लेख पाठकमें उन्हें पढ़ जानेके लिए रुचि जाग्रत करते हैं और बोझिल स्थितियोंसे बचाकर सहज घरेलू बातचीतका आस्वाद देते हैं। क्योंकि अमृतराय अपनी बात कहनेमेंही नहीं उसे मनवानेके लिएभी महत्त्वपूर्ण मुद्दोंपर बहस ज़ारी रख सकते हैं और चोटका जवाबभी उतनीही स्थिरतासे बखूबी दे सकते हैं, अतः इन लेखोंमें व्यक्तिगत स्तरपर लालित्यका जितना आनन्द प्राप्त होता है उतनाही तल्ख़ीका आस्वादभी प्राप्त होता है। सहज अभिव्यक्ति और सरल भाषा-प्रयोगके सहारे इन लेखोंमें काफ़ी-कुछ कहा गया है।

मानवता और उच्च मानव-आदर्शोंकी स्थापना और उनकी रक्षाको लक्ष्यमें रखनेके कारण अमृतराय उक्त विषयोंपर ख़ास किस्मके परिवेश और उलझी मानसिकताका चित्रण करनेवाले लेखकोंसे अपनी असहमति प्रकट करनेमें नितान्त मुखर हैं। हालत जैसी है उसमें क्रान्ति उन्हें ज़रूरी दिखायी देती है, मगर अपनी संस्कृतिके रास्ते। इसीलिए आधुनिक भावबोधकी चर्चामें वह मार्क्सवादी और अस्तित्ववादी, दोनों धाराओंको 'एक दूसरेकी पूरक' मानते हैं। दोनों दृष्टियाँ 'आदमी' पर निबद्ध हैं और इसीलिए "अस्तित्ववादके दर्शनपर आधारित आजका यह जो आधुनिक भावबोध है, उसके सत्यसे आँख नहीं चुरायी जा सकती।"

पशुत्व और देवत्वके बीच रास्ता खोजकर जीवन-मूल्योंकी स्थापना करनेमें ही साहित्यकी सार्थकता है, न उसका उद्देश्य यश है न अर्थोपार्जन आदि और न ही डॉक्टरी या वकालतके पेशेकी तरह लेखन-कर्म एक पेशा ही है। अमृतराय इसी तर्कके आधारपर रचनाकारसे उसके अपने परिवेश और समाजसे जुड़े रहनेकी अपेक्षा करते हैं—'सामाजिक कार्यकर्ता' के रूपमें या 'एस्टेब्लिशमेण्ट' से जुड़नेके रूपमें नहीं, बल्कि 'गहरे और संश्लिष्ट रूपमें' 'विशिष्ट ज्ञान' के आधारपर। दरअसल "परिवेशसे जुड़नेमें व्यक्तित्व-नाशकी आशंका शुद्ध कलावादी दृष्टिकोण के भीतरसे पैदा होनेवाले काल्पनिक भयसे अधिक कुछ नहीं। जिस अर्थमें साहित्य एक आदमी और दूसरे आदमीके बीच एक सेतु है, उसी अर्थमें साहित्यकी अगर कोई अमरता है तो वह यही कि साहित्य अपने देशकालसे जुड़कर आगेकी बात करे।"

आगेकी बातसे भी पहले अहम् सवाल लेखकीय 'प्रतिबद्धता' का है, जिसके प्रति आजके मुक्तिकामी बहुतसे लेखक मुँह बिचकाते दिखायी देते हैं। अमृतके विचारसे अपने प्रति प्रतिबद्धताका तो कोई अर्थही नहीं होता, क्योंकि प्रतिबद्धताका सम्बन्ध रागात्मक संवेदनासेभी—ही—है और उस रागात्मक संवेदनाको रूप देनेमें व्यक्तिका सौन्दर्यबोध जितना काम देता है उतनाही उसका न्यायबोध और सत्यबोधभी। अतः प्रतिबद्धता हो सकती है तो समाजके प्रतिही। समाजके प्रति प्रतिबद्ध होना साहित्य-कर्मकी उपेक्षा करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है और न जीवन-स्थितिको ज्यों-का-त्यों स्वीकार करना ही है । वस्तुतः अमृतराय साहित्यकारकी सर्जनात्मक क्षमताको, जो उसकी अनुभूतिकी अभिव्यक्ति-क्षमता, उसकी अन्तर्दृष्टि और सर्जनात्मक प्रतिभाके संयोगपर निर्भर रहती है, ही विशेष महत्त्व देते हैं । जीवन-स्थिति में तो साहित्यकारभी वहीं खड़ा होता है जहाँ और सब खड़े हैं । फिर व्यक्तिगत मुक्तिका प्रश्नही कहाँ रह जाता है । रहे तो मानना चाहिये कि यह 'आरोपित बंधन' से 'आरोपित मुक्ति' की ही कामना है । "यह आरोपित मुक्ति जीवनके सत्यको मारकर आत्माके सत्यकी हत्या करती है । जीवनका सत्य सांसारिक बंधनोंके बीचसे पायी जानेवाली मुक्तिमें है, उन बंधनोंको झुठला देनेवाली मुक्तिमें नहीं ।" सांसारिक बंधनोंका रूप अच्छे-बुरेके द्वन्द्वमें दिखायी पड़ता है । और अमृतरायकी 'समझमें श्रेष्ठ साहित्य वह है जो दोनोंके द्वन्द्वको अधिक-से-अधिक ईमानदारीके साथ चित्रित करता है ।' यानी तकरीबन, उससे उस चीज़की सिद्धि होती हो जिसे बरसों पहले आचार्य शुक्लने 'लोकमंगलकी साधनावस्था' कहा था और उसीके आधारपर सिद्धावस्थाका तिरस्कार किया था ।

'विद्रोह' और 'संत्रास' के विषयमें अमृतरायकी भावना एक निर्माणवादीकी है, मूलतः क्रान्तिकी अपेक्षापर बल देकरभी एक विनाशकारी या ध्वंसके विश्वासीकी नहीं है । विद्रोह, संत्रास और आक्रोशके अकर्मण्य नारेबाज़ोंसे तो उनका कोई मेल नहीं है, किन्तु रक्तक्रान्तिकी आवाज़ लगाने वाला उनका स्वर गान्धीवादी उदार मानवतावाद और आदर्शके प्रति आग्रहशील होकर अन्ततः 'इंदिराजी की जय' बोलकर चुप हो जाता है । संत्रास और संत्रासके बीच वह एक भेदक रेखा खींचनेका प्रयास करते हुए आजके अकविता-वादियों और अकहानीकारोंके द्वारा प्रकट किये जानेवाले संत्रासको 'सामाजिक संत्रास' से अलग 'व्यक्तिगत संत्रास' की संज्ञा देकर उसेभी आरोपित-सा बना देते हैं और संत्रास को उसके प्रभावकी दृष्टिसे "सुन्न हो जाने की, एकान्त भयकी" स्थिति मानकर विद्रोहके लिए तैयार जनताकी संत्रासहीनताकी घोषणा करते दिखायी देते हैं । अमृतरायके इस तर्कसे पाठककी दिलजमई होना संभव नहीं । संत्रासको 'सुन्न होनेकी' एक निष्क्रिय स्थिति मात्र मान लेनेपर तो विद्रोहका आधार ही नष्ट हो जायेगा । संत्रासही नहीं है तो विद्रोह किसके प्रति, कैसा विद्रोह और क्यों विद्रोह ? अमृतराय उसे परेशान, दुखी, खोये हुए या झुँझलाये हुए लोगोंकी स्थिति कहकर 'डाइल्यूट' कर लेते हैं और इस नतीजेपर पहुँचते हैं : "सब हैं मगर सन्त्रस्त नहीं हैं, व[...] आये दिन छात्रोंके, मज़दूरोंके, किसानोंके, सफ़ेदपोश क[र्म]चारियोंके इतने प्रदर्शन न हुआ करते और न लोग पुलिस[के] डण्डों और गोलियों और आँसू गैसकी कुछभी परवाह न कर[ते] हुए इस हिम्मत और दिलेरीसे उसमें हिस्सा लेते ।" या[नी] जैसेकि यह बस हिम्मत और दिलेरीही है जो पैर आगे ब[ढ़]वाती है, आदमीका 'डेस्परेट' हो जाना नहीं है । अ[गर यह] बात नये लेखकोंकी हिमायत लेनेकी न मान ली जाये [तो] कहूँगा अमृतका तर्क 'कन्विंसिंग' नहीं लगता ।

अमृतराय 'नई कहानियाँ' के सम्पादकही नहीं, स[...] कहानी-लेखकभी हैं और आजकी कहानीके सन्दर्भमें वह उस[में] 'कथा-रस' और 'सहज कहानी' होनेकी माँग करते हैं [...] कहानीसे उनकी यह अपेक्षा है कि वह पारस्परिक संवाद[को] जन्म दे, गीतकी तरह केवल आत्मग्रस्त होकर न रह जा[ये] और रचनाकारके भीतरकी दुनियाका चित्र उतारनेमें [ही] सीमित न हो । अमृतराय एक दार्शनिककी मुद्रामें 'पि[ण्ड] और ब्रह्माण्ड' की चर्चा करते हुए स्वानुभूति और परा[नु]भूतिमें अविरोधकी कल्पना करते हुए उसके आधार[पर] मार्क्सवादी दृष्टिके अनुकूल व्यक्तिमानस और लोकमानस[की] एकताकी कामना करते हैं । 'सहज कहानी' से उनका तात[्पर्य] यही है कि वह सामाजिक और सार्वभौम सत्यके स्तर[पर] मनुष्य-मात्रके मानसको उद्‌घाटित करती हो, केवल कु[ण्ठा]ग्रस्त, अनास्थावान कुछ सूत्रोंको दुहराकर न रह जा[ये] क्योंकि "लेखकके पास जबतक एक अन्तिम आस्था अ[...] मानवीय संवेदनामें नहीं है, तबतक कोई सार्थक सृष्टि न[हीं] हो सकती ।" अमृतरायका आक्षेप कहानीके शिल्पपर न[हीं] है, उसकी आत्मापर है । वह जानना चाहते हैं, कहानी[का] 'आस्वाद कैसा है ।' और इसकी खोज करते हुए वह [...] चित् और आनन्दके क्षेत्रको पार करके अन्ततः जैसे बुद्ध[की] शरणमें पहुँच जाते हैं बुद्धने कहा था 'अत्त दीपा [भव]' और अमृत कहते हैं 'अपने मनको जगाओ'। साफ़ है [...] उनका सारा चिन्तन भारतीय संस्कारोंके अनुकूल है [...] साथही उनके मार्क्सवादी मनको भी संतोष देता है । [...] लिए वह लेखकीय 'संवेदनाकी सचाई' पर भी बल देते [हैं] साथही 'संवादहीनता' और 'अजनबीपन' को भी साहित्[य] और जीवनमें भी, अग्राह्य मानते हैं । "संवादहीनता त[नाव] से आती है, अपने भीतरका तनाव और अपने बाह[रका] तनाव ।" अतः अमृत चाहते हैं कि उस संवादहीनता[का] 'व्यापक विध्वंस' किया जाये और वह शायद तनावके का[रणों] को क्रान्तिके ज़रिये दूर करनेसे ही हो सकता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तिम तीन लेखोंमेंसे एक उर्दूके क्षेत्रीय भाषा बनाये जानेकी माँगके सिलसिलेमें उर्दू समर्थकों द्वारा फैलाये गये भ्रम और उसके निराकरणको लेकर कुछ तथ्योंपर प्रकाश डालता है और बाक़ी दो साम्प्रदायिकताके सवालको सुलझानेकी दिशामें किये जानेवाले प्रयत्नके लिए सुझाव उपस्थित करनेका काम करते हैं। यह सवाल बड़ा पेचीदा और 'सेंसिटिव' है और अमृतको ग़लत समझे जानेका ख़तरा लिये हुए है। अमृतरायका तरीक़ा एक मध्यस्थका तरीक़ा है, बीच-बचावका याकि दोनों पक्षोंको दो-दो चपत रसीद करके ठीक करनेवालेका। और लेखमें जो बहस उद्धृत हुई है, वह इस बातका प्रमाण उपस्थित करती है कि अमृतको ग़लत समझनेकी ग़लती कईयोंने की भी है।

अमृतरायमें स्वभावकी मृदुलता कुछ ऐसी है जो उन्हें गान्धीवादी आत्म-परिष्कार और हृदय-परिवर्तनकी भाषामें बोलनेको विवश करती है और उनका मार्क्सवादी ज्ञान-संस्कार कुछ ऐसा है जो उसे क्रान्तिके स्वरको ऊँचा करनेके लिए कोंचता रहता है। परन्तु दोनोंके बीच सम्मिलनका एक सहज बिन्दु ऐसा है जो अमृतको जोड़ता अधिक है और वह है मानवीय एकता, सद्भाव और निर्माणकी प्रबल आकांक्षाका। यही कारण है कि अमृतके लेखोंका स्वर आस्थावादी है और संतुलितभी। मतभेदके लिए अवकाश हो सकता है, उससे इन लेखोंपर आँच नहीं आती, क्योंकि सच्चे विचारकर्ताका यह एक सद्गुण है कि वह पाठक या श्रोताके विवेकको जाग्रत करे, उसे सोचने और कहनेके लिए आमन्त्रित करे ताकि संवादकी एक परम्परा क़ायम हो सके। ये लेख इस दिशामें किसीभी बड़े शोध-प्रबन्धकी अपेक्षा कई गुना बड़ा काम करते हैं और अपने उद्देश्यमें सर्वथा सफल हैं। अमृतको बधाई!

—डॉ० आनन्दप्रकाश दीक्षित

× × ×

[२]

आलोच्य पुस्तक अमृतरायकी संपादकीय टिप्पणियोंका संकलन है। पहली टिप्पणीका विषय है 'आधुनिक भावबोधकी संज्ञा' और उसीके आधारपर पुस्तकका नामकरण हुआ है। अन्य टिप्पणियाँ जिन विषयोंको उठाती हैं वे हैं —साहित्य क्यों? कहानीकार और उसका परिवेश, प्रतिबद्धता, विद्रोह और विद्रोहकी भंगिमा, सार्थक विद्रोहकी दिशा, सहज कहानी, सेक्स: आधुनिकता और बीमार आधुनिकता, संत्रास और संवादहीनता। इनके अतिरिक्त, दो समसामयिक विषयोंपर अमृतरायके विचार और उनपर चली लंबी बहसेंभी इस पुस्तकमें संकलित हैं। ये विषय हैं 'उर्दू क्षेत्रीय भाषाकी माँग' और 'सांप्रदायिकताका सवाल'। सांप्रदायिकताका सवाल विषयक बहस वामपक्षी पत्रिका 'मुक्तधारा' में चली थी। चर्चाका प्रवर्तन अमृतरायके लेखसे हुआ था और उसका समापनभी उन्होंने ही किया था। प्रवर्तन और समापनके दोनों लेख इस पुस्तकमें संगृहीत हैं।

कुछ वर्ष पहले 'सहचिन्तन' नामसे अमृतरायका एक निबन्ध-संग्रह निकला था, उसकी तुलनामें यह पुस्तक निश्चय ही सुखद है और इस तथ्यकी साक्षीभी कि इस बीच विकास की अनेक अवस्थाएँ पार करके अमृतराय विचारकी प्रौढ़ता को छूने लगे हैं। लगता है कि लेखन-संबंधी अनेक समस्याओं के साथ वे गहराईसे जूझे हैं और उनके समाधानतक पहुँचनेकी उनमें एक तड़प है जो कई बार सनककी सीमाको छूने लगती है। समस्याके विश्लेषणकी प्रवृत्तिभी उनमें प्रखर है, पर समस्याको ठीक परिपार्श्वमें रखकर उसकी जड़तक पहुँचनेके लिए जिस धैर्यकी अपेक्षा होती है उसका यहाँ अभाव दिखता है। इसके अलावा अमृतरायकी वैचारिक प्रतिबद्धताभी बहुधा आड़े आती है। समस्या सार्थक विद्रोहकी हो या लेखकीय प्रतिबद्धताकी, सहज कहानीकी हो या बीमार आधुनिकताकी, संवादहीनताकी हो या सांप्रदायिकताकी अथवा सन्त्रासकी—उन सबकी जड़ें वे महाजनी सभ्यतामें खोज निकालते हैं और क्रांतिकी दुहाई देकर समाजवादकी स्थापनाका नारा लगाने लगते हैं। 'सांप्रदायिकताका सवाल : उलटी समझके खतरे' विषयक लेखमें उनका यह विश्लेषण उल्लेखनीय है: "जैसे भूख और बेकारी और अशिक्षा और चोर-बाज़ारी और हत्या और आत्महत्या और इस भयानक तेज़ीसे फैलती हुई चोरी-डकैती और अस्मतफरोशी और ऐसीही और भी पाँच सौ समस्याओंका अंतिम समाधान सच्चे समाजवादमें ही है, उसीतरह इस बहुभाषी, बहुजातीय, बहुधर्मावलम्बी महादेशमें भाषाओं, जातियों और धर्मोंकी एकता और पारस्परिक सद्भावकी समस्याका भी अंतिम समाधान सच्चे समाजवादमें ही है।" यह तो समस्याका अतिसरलीकरण हुआ जिसका सहारा लेनेपर मनन-मन्थनकी परेशानीसे जल्दी छुटकारा मिल जाता है।

यह सरलीकरणका ही तो परिणाम है कि दक्षिण-पंथियोंकी पराजय और वामपक्षी शक्तियोंकी विजयमें ही अमृतरायको देश सच्चे समाजवादकी ओर बढ़ता हुआ दिखता है। पर यह सच्चा समाजवाद आखिर है क्या?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या वहभी रामराज्यकी तरह एक 'यूटोपिया' नहीं है, आदर्शवादियोंका एक सुनहला सपना नहीं है ? यदि नहीं तो क्या जो देश महाजनी सभ्यताको ठुकराकर समाजवादको अपना चुके हैं, उनमें इस प्रकारकी सब समस्याएँ समाप्त हो गयी हैं ? शायद नहीं। अमृतरायने 'संवादहीनता' नामक टिप्पणीमें स्वयं इस सत्यको स्वीकारा है : "लेकिन दुर्भाग्य-वश समाजवादी देशोंमें भी हमें इस प्रश्नका अपेक्षित समाधान नहीं मिल सका। यह ठीक है कि वहाँ कोई किसीका प्रतियोगी नहीं, सब काम करते हैं और उसकी मजदूरी पाते हैं। यहभी ठीक है कि वहाँ न तो पैसेकी प्रभुता और प्रतिष्ठा है और न दो व्यक्तियोंके बीच केवल पैसेका नाता। ये सब संवादके अनुकूल स्थितियाँ हैं। लेकिन दो व्यक्तियों के बीच संवाद हो सके इसके लिए जरूरी है कि लोग मुक्त होकर लिख-पढ़ सकें। अगर इसमें कोई बाधा हो तो संवाद नहीं हो सकता, अर्थात् वह मुक्त हार्दिक संवाद जिसकी हम बात कर रहे हैं। इस तरह एक नये प्रकारकी संवाद-हीनताका जन्म होता है जिसके पीछे भय है।" अतः स्पष्ट है कि समाजवादका नाम रटने से काम नहीं चलेगा, नही इस देश या उस देशके समाधानको ओढ़ लेनेसे बात बनेगी। भारतकी समस्याएँ भारतकी अपनी समस्याएँ हैं। उनमेंसे रास्ताभी स्वयं उसे ही निकालना होगा—वाम और दक्षिण की चिन्ता छोड़कर। हो सकता है कि वह मध्यमार्गही हो जो इस देशकी माटीकी महिमा है।

जहाँ उपर्युक्त वैचारिक प्रतिबद्धता आड़े नहीं आती वहाँ अमृतरायकी स्थापनाएँ अपनी निष्पक्ष उद्भावनाओंके कारण पाठकको बरबस अपनी ओर खींच लेती हैं। ये स्थल उनके मानस-मंथनके प्रतीक हैं। 'आधुनिक भावबोधकी संज्ञा' में व्यक्त उनकी यह धारणा कितनी सटीक है : "अगर आदर्शवादके नामपर मनुष्यके जीवन और चरित्रके अंधकार पक्षको बचा जानेकी पुरानी लेखककी प्रवृत्ति उसके लेखनकी 'इंटीग्रिटी' को खण्डित करती थी, वह लेखन न रहकर फेनिल उच्छ्वास बन जाता था, तो उसी तरह आजका आधुनिकतावादी लेखक जब अपने यथार्थ चित्रणके नाम पर मनुष्यके जीवन और चरित्रके ज्योति पक्षको दबा देता है, अनदेखा कर जाता है, तो वहभी अपने लेखनकी 'इंटी-ग्रिटी' को खण्डित करता है और उसका लेखन एक दूसरी तरहका फेनिल उच्छ्वास बन जाता है। जीवनका सत्य दोनोंके हाथसे छूट जाता है, क्योंकि जीवनका सत्य उसके द्वन्द्वमें है।" प्रतिबद्धता विषयक टिप्पणीमें उनकी इस स्थापनासे कौन इन्कार करेगा कि "यह प्रतिबद्धता अपने भीतरसे, अपनी चेतना और अपने विवेकके भीतरसे आने[...] ही सच्ची और सृजन कर्मके लिए शुभ सिद्ध होती है, बाहर[...] आनेवाली किसीभी संस्था या दल या प्रतिष्ठान द्वारा आ[...]पित प्रतिबद्धता अन्ततः स्वतन्त्र सृजन कर्ममें बाधा पहुँचा[...] है और लेखकको छोटा करती है।" (यह बात अलग है [...] अमृतरायकी स्वयं अपनी प्रतिबद्धता कितनी भीतरसे उप[...] है और कितनी बाहरसे आरोपित है, इस विषयमें दो [...] हो सकते हैं)। 'सहज कहानी' की चर्चा करते हुए [...] पाठकोंके मनकी बात दो टूक कह देते हैं : "कहानी पढ़नेवा[...] को इससे बहस नहीं कि आपने 'नयी' कहानी लिखी है [...] 'सचेतन' कहानी लिखी है या 'साठोत्तरी' कहानी लिखी [...] या 'अ-कहानी' लिखी है। जो मन चाहे लिखिये, पूरी छू[...] है आपको, पर वह कथा-रस दीजिये जो पाठक कहानी[...] पाना चाहता है, जिसके पानेका वह न सिर्फ आदी है, ब[...] जो उसकी घुट्टीमें और उससे भी आगे बढ़कर उसके खमीर[...] दाखिल है।"

अमृतरायकी उपर्युक्त और इसी प्रकारकी कई अ[...] स्थापनाओंसे सहमत होते हुए भी पाठक उनके लिए [...] टिप्पणियोंको श्रेय नहीं दे पाता, क्योंकि उनकी शैली पा[...] को साथ लेकर चलनेकी नहीं है और नही लेखक उन्हें अ[...] चिन्तनमें सम्मिलित करता है जैसाकि उसके पहले निबन्ध[...] संग्रह 'सहचिन्तन' का दावा था, जबकि पाठक उससे सह[...] चिन्तन की ही अपेक्षा करता है। सच तो यह है कि अमृत[...]रायकी लेखन-शैली चिन्तनकी है ही नहीं, मुखर चिन्तन[...] तो कतई नहीं। वह तो विशुद्ध मतारोपणकी शैली है[...] अपने पाठकोंके साथ-साथ सोचनेके बजाय वे पहलेके [...] हुए अपने निष्कर्ष उनपर लाद देते हैं और समर्थनमें तर्क[...] तर्क जुटाते जाते हैं जो प्रायः साहित्यकी अपेक्षा राजनीति[...] अधिक निकट पड़ते हैं। 'संवादहीनता' तथा 'सार्थक वि[...] नामक टिप्पणियाँ उनकी साहित्येतर भटकनके अ[...] उदाहरण हैं।

[९]

इसके अतिरिक्त पुस्तक-भरमें ऐसे स्थल बिखरे पड़े [...] जो इस बातकी गवाही देते हैं कि इन टिप्पणियोंको लिख[...] समय अमृतरायका सम्पादक अपनी ऊँची कुर्सीके प्रति सज[...] रहा है और पाठकको बार-बार जताता रहता है कि [...] अनुभव और योग्यतामें ही नहीं, रुतबेमें भी उससे बड़ा है[...] अतः उपदेश देनेकी स्थितिमें है। 'सहज कहानी' में उन[...] यह रूप देखते ही बनता है : "सहज कहानीकी चर्चा करके [...] अपने लिखनेवालोंसे यही कहना चाहते रहे हैं कि अ[...] भीतर बैठकर अपने मनकी सच्ची प्रेरणासे लिखिये, र[...]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छी उतरी या नहीं उतरी, इसकी सनदके लिए अपने बाहर इस पंडे और उस पुरोहितकी ओर नहीं अपने भीतर देखिये, अध्ययन-मननसे आप अपने भीतर स्वयं ऐसे एक आलोचकका निर्माण कर लेंगे जो आपको बता देगा कि आपकी-चीज जैसी बननी चाहिये थी, बनी या नहीं बनी।"

सम्पादकीय दायित्वको ओढ़कर चलनेवाली इस टिप्पणीमें लगता है, किसी आधुनिक लेखकका नहीं, सरस्वतीके सम्पादक पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीका स्वर गूँज रहा है (यहाँ मैं स्वरकी ही बात कर रहा हूँ, कथ्यकी नहीं)। सम्पादकीय 'स्नॉबरी' भी इस पुस्तकमें जहाँ-तहाँ मिल जायेगी। अपनी टिप्पणियोंपर अन्य लेखकोंकी प्रतिक्रियाएँ प्रसंगानुकूल उद्धृत करते हुए उनके नामोल्लेखमें यह प्रवृत्ति उजागर हो उठती है। प्रतिक्रिया जितनी तीखी होगी, उसके लेखकके नामके प्रति सम्पादकीय 'स्नॉबरी' भी उतनी ही गहरी होगी। "जिस सहज कहानीकी बात आप चला रहे हैं क्या वह पुराण-कथाओंमें नहीं है? या किस्सा तोता-मैना या ऐसी कई पुस्तकोंमें नहीं? क्या हम सब उसको लक्ष्य (आधार) बनाकर आपके संदर्भमें लिखें?"—इस प्रतिक्रियाके लेखकका नामोल्लेख यों हुआ है—"गोरखपुरके **कोई** शाक्य पार्थरश्मि लिखते हैं—(पृ० ९७)। इसी प्रकार 'संत्रास' विषयक चर्चामें उस लेखकके नामोल्लेखमें भी उसी 'स्नॉबरी' की गंध आती है—'मेरी इस बातके विरोधमें जबलपुरसे **किन्हीं** श्री ओंकार शुक्लने अपनी प्रतिक्रिया भेजी है।" (पृ० १२६) यही नहीं, कई बार लेखकका नामतक देना भी सम्पादकके रुतबेको सह्य नहीं हुआ—"ऊपर जो कुछ कहा गया है उसके सम्बन्धमें एक नये कथाकार बंधुकी प्रतिक्रिया इस प्रकार है—"क्योंकि उसकी प्रतिक्रियाका आरम्भ ही इस वाक्यसे होता है कि 'मैं आपके इस निष्कर्षसे सहमत नहीं हूँ।" 'किन्हीं' अथवा 'कोई' जैसे शब्दोंका सहारा लिये बिना इन लेखकोंका सहजोल्लेख भी तो किया जा सकता था।

पाठकोंको अपने साथ ले चलनेमें इन संपादकीय टिप्पणियोंकी असमर्थताका एक कारण यहभी है कि इनमें चर्चा अधिकतर सैद्धांतिक ही रही है, वह 'एकेडेमिक' चर्चासे ऊपर नहीं उठ पाती। ये टिप्पणियाँ जानदार बन जातीं यदि चर्चाएँ सोदाहरण होतीं और अपनी स्थापनाओंके समर्थनमें लेखक प्रसंगानुकूल विभिन्न कहानियोंका उल्लेख ही नहीं, विवेचन-विश्लेषण भी करके अपनी बातकी व्यावहारिकताको सिद्ध करता जाता। पर इससे तो अमृतराय जानबूझकर कन्नी काट गये हैं। यह बात उन्होंने 'सेक्स: आधुनिकता और बीमार आधुनिकता' नामक अपनी टिप्पणीपर कहानीकार कृष्णबलदेव वेदकी प्रतिक्रियाके उत्तरमें स्वयं स्वीकार की है: "हमने समझ-बूझकर उन लेखकों या उन कहानियोंका नाम नहीं दिया है जिनमें हमें रुग्ण सेक्सकी यह प्रवृत्ति दिखायी पड़ती है और जिनके सन्दर्भमें हमने यह बात कही है। इसके दो कारण हैं। एक तो यह कि हमें उनके प्रचारका साधन बनना अभीष्ट नहीं, और दूसरे यह कि नाम लेकर चर्चा करनेपर नाम ही प्रमुख हो जाते हैं, दोस्तियाँ और दुश्मनियाँ ढूँढी जाने लगती हैं और बात पीछे छूट जाती है।" इसमें संदेह नहीं कि कहानियों और कहानीकारोंका नाम लेकर चर्चाको सार्थक एवं 'प्वांइटेड' बनाना बड़े जोखिमका काम है, पर वे लोग जो दूसरोंको जोखिम उठानेका उपदेश देते हैं उन्हें स्वयंभी तो जोखिम उठानेकी आदत डालनी चाहिये। 'संत्रास' के अन्तर्गत अमृतरायकी अन्य लेखकोंके प्रति यह शिकायत क्या स्वयं उनपर लागू नहीं होती: "राजनीतिने तो विश्वासभंग किया ही, दुर्भाग्यवश साहित्यकार और विचारकभी अपनी गुत्थियोंमें उलझकर समाजसे कट गया और विचारके नामपर ऐसे-ऐसे गुल-बूटे तराशने लगा जिनसे समाजको कोई प्रयोजन नहीं था और जिनको समाजसे कोई प्रयोजन नहीं था। वर्ना अपने युगके दुख-दर्दको, उसके असंख्य चेहरोंको उनके भीतर गहरे उतरकर, उनकी समस्त असंगतियों और अंतर्विरोधोंके साथ, तमाम ताकत और पस्ती, (ताकि उसका आक्रोश नपुंसक न रहे और उस आक्रोशकी परिणति विद्रोह और क्रान्तिमें हो) हिम्मत और मज़बूतीके साथ देखने और समझने और वाणी देनेसे कौन उसे रोकता है? अगर है तो वह खुद अपना बंदी है।" यहाँ जिस हिम्मत और मज़बूतीकी अपेक्षा अन्य साहित्यकारोंसे की गयी है, उसी हिम्मत और मज़बूतीकी अपेक्षा स्वयं अमृतरायसे क्यों नहीं की जा सकती है?

'डबल स्टैंडर्ड' और 'डबल टॉक' की उपर्युक्त प्रवृत्ति अमृतरायके यहाँ दुर्लभ नहीं प्रतीत होती, यद्यपि अन्य लोगोंमें जब-जब उन्हें यह प्रवृत्ति दिखी है उन्होंने उसकी घोर भर्त्सना की है। 'साम्प्रदायिकताका सवाल' विषयक चर्चाका प्रवर्तन करते हुए वे अपने वामपक्षी दोस्तोंकी इस कमज़ोरीपर उनकी खूब खबर लेते हैं: "एक अजीब तरहका 'डबल थिंक' और 'डबल-टॉक' देखनेमें आता है। मैं अपने ऐसे कितनेही वामपक्षी दोस्तोंको जानता हूँ जो अपने दिलमें अच्छी तरह समझते हैं और आपसमें स्वीकार भी करते हैं कि हिन्दू साम्प्रदायिकताकी ही तरह मुस्लिम साम्प्रदायि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कताभी एक सच्चाई है जिसकी ओरसे आँख नहीं मूँदी जा सकती, लेकिन पब्लिक तौरपर यह बात कहनेमें उनकी ज़बान अटकती है, क्योंकि जाने कैसे उन्होंने यह समझ लिया है कि मुस्लिम साम्प्रदायिकताकी बात कहना हिन्दू साम्प्रदायिकता है। कहना मुश्किल है, पर कौन जाने इस तरहका यह संकोच खुद एक 'इनवर्टेड' किस्मकी, उल्टे मुँहकी हिन्दू साम्प्रदायिकता हो।" अमृतराय शायद यह नहीं जानते कि वह स्वयं इस 'इनवर्टेड' किस्मकी हिन्दू साम्प्रदायिकताके शिकार हैं। यह बात उनके उस सुझावमें निहित है जो उन्होंने इस समस्याके समाधानमें दिया है: "मेरी समझमें, पहले तो हमें दोनों ओरकी साम्प्रदायिकतापर समान रूपसे चोट करना है और फिर जहां उनके खिलाफ अलग-अलग मोर्चा सँभालना है वहाँ हिन्दू साम्प्रदायिकतासे मोर्चा लेनेकी मुख्य ज़िम्मेदारी स्वतंत्रचेता, प्रगतिशील हिन्दू (या हिन्दू नामधारी) विचारकों और बुद्धिजीवियों और कर्मियोंकी हो और मुस्लिम साम्प्रदायिकतासे मोर्चा लेनेकी मुख्य जिम्मेदारी स्वतंत्रचेता, प्रगतिशील मुस्लिम (या मुस्लिम नामधारी) विचारकों, बुद्धिजीवियों और कर्मियोंकी हो।" हिन्दू साम्प्रदायिकतासे मोर्चा लेनेका जो दायित्व उन्होंने हिन्दुओंपर डाला है और मुस्लिम साम्प्रदायिकतासे मोर्चा लेनेका मुसलमानोंपर वह उसी निर्वीर्यताका, या कहें नपुंसकताका, दूसरा रूप है जो उन्हें अपने वामपक्षी दोस्तोंमें दिखी है और जिसके विरुद्ध उन्होंने शिकायत की है। साम्प्रदायिकताकी इस विकट समस्यासे बच निकलनेका एक निरापद रास्ता अमृतरायके उन मित्रोंने अपने लिए निकाल लिया था तो दूसरा निरापद रास्ता अमृतराय स्वयं अपने लिए निकाल रहे हैं—दायित्वका साम्प्रदायिक बँटवारा करके। इससे अधिक शायद उनसे अपेक्षाभी नहीं की जा सकती, क्योंकि जो लोग (वे वामपक्षी हों या दक्षिणपंथी) निरापद रास्तोंपर चलनेके अभ्यस्त हो जाते हैं वे ऐसे मस्त और फक्कड़ एवं निर्भीक व्यक्तित्वकी कल्पना भी नहीं कर सकते जो कबीरकी तरह हिन्दू और मुसलमान दोनोंको, उनकी साम्प्रदायिक संकीर्णताके लिए, समान रूपसे फटकार सके। कबीरको 'डबल टॉक' या 'डिप्लोमेसी' का सहारा लेनेकी आवश्यकता नहीं पड़ी, क्योंकि वे भय और प्रलोभन दोनोंसे मुक्त थे और दुनियाकी कोई ताकत उन्हें सच कहनेसे रोक नहीं सकती थी।

—डॉ० रणवीर रांग्रा

आचार्य राजशेखर

लेखक: डॉ० श्यामा वर्मा; प्रकाशक: मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ६७, मालवीय नगर, भोपाल। पृष्ठ: २६१, डिमाई, ७१; मूल्य: १०.०० रु०।

मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी द्वारा संस्कृत साहित्य समीक्षाकी आचार्य-मालाके अन्तर्गत प्रकाशित 'आचार्य राजशेखर' कवि-नाटककार एवं आचार्य राजशेखरके व्यक्तित्व और कर्त्तृत्वकी सर्वांगीण विवेचना करनेवाली डॉ० श्यामा वर्माकी सुन्दर समालोचना-कृति है। हिन्दीमें राजशेखरपर यह पहली स्वतंत्र पुस्तक है। इस दृष्टिसे एक ओर यह ऐतिहासिक महत्त्वका भागी है, तो दूसरी ओर राजशेखरपर भविष्यमें होनेवाले सूक्ष्म विश्लेषणात्मक कार्योंके लिए दिशा-निर्देशका दायी भी। यह ग्रन्थ कई लम्बी तथ्यपरक सूचियों, सारणियों, तुलनात्मक विवरणों और एकाधिक मानचित्रोंसे उपेत होनेके कारण अपने प्रस्तुतीकरण और विवेचन, दोनोंमें ही वैज्ञानिक बन पड़ा है।

पूरी पुस्तक ४ खण्डों और ८ परिशिष्टोंका संश्लेष है। प्रथम खण्डमें कविके व्यक्तित्व और उसके युगकी परिस्थितियोंका अध्ययन हुआ है। डॉ० श्यामा वर्माने कवि-परिचयके क्रममें राजशेखरके काल-निर्णय, उसके नामकी अनेकता, उसके जन्म-स्थान, वंश, अध्ययन, पारिवारिक जीवन, उसकी कृतियाँ, कृतियोंके रचना-क्रम, उनके विविध प्राप्य संस्करण, राजशेखर द्वारा की गयी यात्राएँ, उसे प्राप्त प्रतिष्ठा और उसकी मृत्युपर अबतक उपलब्ध सारी सामग्रियोंके आलोकमें बड़े विवेकपूर्ण, व्यवस्थित और प्रामाणिक ढंगसे आलोचन करते हुए अपने विचार व्यक्त किये हैं। सामयिक परिस्थितियोंके अन्तर्गत राजशेखरसे पूर्वकी नाट्य एवं शास्त्र-परम्परा, संस्कृत भाषाकी प्रतिष्ठा और उसके आश्रयदाता तथा राजशेखरकालीन राजनीतिक एवं धार्मिक स्थितियोंका सम्यक् अध्ययन उपस्थित किया गया है। साथही निष्कर्ष रूपमें राजशेखरकी कृतियोंपर इनका प्रभावभी दिखलाया गया है।

द्वितीय खण्डमें कविकी 'बाल रामायण', 'बाल भारत', 'बिद्धशाल भंजिका' और 'कर्पूरमंजरी' जैसी सर्जनात्मक नाट्य-कृतियोंका विवेचन है। यह विवेचन वस्तु, नेता और रसके अतिरिक्त प्रकृति-चित्रण, अलंकार-सौष्ठव, छन्दो-विधान, काव्य-दोष, काव्य-सौन्दर्य, भाषा, रचना-शैली एवं नाट्य-कला जैसे कई आयामोंमें पूरा हुआ है। विवरणात्मकताके अलावे गहनता और विस्तार इस विवेचनकी विशेषताएँ हैं। डॉ० श्यामा वर्माने वस्तु-सन्दर्भमें उपर्यु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृतियोंका परिचय देते हुए जहाँ 'बाल रामायण' पर 'महावीर चरितम्' और 'बालभारत' पर 'महाभारत' का सोद्धरण प्रभाव स्पष्ट किया है, वहीं इन कृतियोंमें राजशेखरकी मौलिकताकी सकारण सोद्देश्यताभी निरूपित की है। उनके पात्र द्विज, स्त्री, पुरुष, दिव्य, मर्त्यदिव्य एवं दिव्यमर्त्य वर्गोंमें विभक्त किये गये हैं। नायकके साथ खलनायकका चित्रण भी हुआ है। डॉ० श्यामा वर्मानि ६७ पात्रोंसे युक्त 'बाल रामायण' को 'पात्रोंका जंगल' कहा है। रस-दृष्टिसे राजशेखरकी कृतियोंमें शृंगारका महत्त्व स्थिर किया गया है। लेखिकाने प्रकृति-चित्रणमें ऋतु-वर्णन, बिम्ब-निर्माण और मानवीकरण; अलंकारोंमें सूक्ष्म निरीक्षणवश एकही चित्रमें कई अलंकारोंके संगुम्फन; छन्दमें राजशेखरके काव्यके बहिरंग-विधायक शार्दूलविक्रीडित तथा इनके अतिरिक्त विशिष्ट विषय, विशिष्ट ऋतु, नायिका-प्रभेद, उसकी विविध क्रीड़ाओं, विशिष्ट रस आदिसे संवद्ध विशिष्ट छन्दोंका अवरेखन किया है। राजशेखरकी कृतियोंमें वाक्य-दोष, रस-दोष और अर्थ-दोषका उद्घाटन करते हुए उन्हें ग्रन्थ-सम्पदाकी तुलनामें अत्यल्प बताया गया है, जो उचित ही है। पर 'काव्य-सौन्दर्य' उपशीर्षकसे जो अलगसे विचार किया गया है उसकी आवश्यकता नहीं थी। डॉ० श्यामा वर्मानि इसके अन्तर्गत नाद-सौन्दर्य, शब्द-सौन्दर्य और उक्ति-वैचित्र्यकी ही मीमांसा की है; यद्यपि काव्य-सौन्दर्यका क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। उसमें अलंकार, रस, छन्द आदि सबका समावेश हो जाता है। नाद-सौन्दर्यपर अलंकार-प्रकरणमें विचार सम्भव था और शब्द-सौन्दर्य तथा उक्ति-वैचित्र्यको भाषाके अन्तर्गत लिया जा सकता था। भाषा-विवेचनके क्रममें राजशेखरकी विशाल संस्कृत पर्याय-सम्पदा दिखायी गयी है। उन्होंने शंकरके लिए ३९, सीताके लिए ११ एवं रामके लिए १८ नामोंका उल्लेख किया है। उनकी संस्कृत संस्कृत-भाषाका मार्जित और विकसित रूप है। संस्कृतके अतिरिक्त राजशेखरने शौरसेनी एवं महाराष्ट्री प्राकृतका व्यवहार किया है। उनके मतमें प्राकृत रचना मधुर थी—'पाउदवन्धो वि होइ सुउमारो।' लेखिकाने व्याकरण-शुद्धताके प्रति राजशेखरकी जागरूकताको निर्दिष्ट करते हुए उनकी भाषामें चिन्तनके सत्त्व और संहितिकी संघटना स्पष्ट की है। उनकी रचना-शैलीको समस्त, आविद्ध और पांचाली—तीन शैलियोंमें विभक्त किया गया है। डॉ० श्यामा वर्माने यह स्वीकार किया है कि राजशेखर सदृक-परम्पराके प्रतिष्ठाता थे। उनकी 'कर्पूरमंजरी' से यह परम्परा आरम्भ हो जाती है। लेखिकाने राजशेखरकी नाट्य-कलामें दीर्घ संलाप, शृंगार रस-प्रामुख्य, पुराण और लोकवृत्त जैसे वस्तु-क्षेत्रके दो स्रोत, साथही उनकी सीमितता तथा अन्विति-त्रयकी सफल नियोजनाका उद्घाटन किया है। इसप्रकार यह अध्याय विविध-कोटिक विवेचन और विश्लेषणसे भरा है। पर यदि इस अध्यायके प्रतिपाद्यके हर पहलूका विभाजन लेखिकाने और सटीकता एवं वैज्ञानिकताके आधारपर किया होता तो यह सारी मीमांसा अन्यतम हो उठती।

तृतीय खण्डमें राजशेखरकी प्रसिद्ध काव्यशास्त्रीय कृति 'काव्य मीमांसा' के आधारपर उनके आचार्यत्वका निरूपण हुआ है। लेखिकाने राजशेखर द्वारा विभक्त काव्यमीमांसाके १८ अधिकरणों (अध्यायों) को वर्ण्य-विषयकी दृष्टिसे काव्य-सिद्धान्त, कवि शिक्षा सम्प्रदाय, काव्यशास्त्रीय सम्प्रदाय और राजशेखर तथा 'काव्यमीमांसा' की साहित्य-शास्त्रको देन जैसे ४ अध्यायोंमें वर्गीकृत कर उनकी मीमांसा की है। इनके अन्तर्गत काव्य-लक्षण, काव्य-हेतु, काव्य-प्रयोजन, काव्यात्मा, काव्य-भेद, काव्यार्थ-स्रोत, काव्यार्थ-परिधि, सत्य-शिव-सुन्दर, काव्य-पुरुष, विविध दृष्टियोंसे सिद्ध कवियोंके २७ प्रकार, भावक, काव्यपाक, काव्य-हरण, कवि-समय तथा रस, अलंकार, रीति, ध्वनि और वक्रोक्ति सम्प्रदायोंके साथ राजशेखरके अभिमत विवेचित हुए हैं। विवेच्य खण्डमें पूर्ववर्ती सारे शास्त्रकारोंकी मान्यता एवं कवि-नाटककारोंकी कृति-रम्यतासे राजशेखरकी परिचित बताते हुए उनके द्वारा तत्तत् उद्धृत स्थलोंको भी अवरेखित किया गया है। डॉ० वर्मानि 'काव्यमीमांसा' के आधार-रूपमें कौटिल्यके अर्थशास्त्र एवं वात्स्यायनके कामशास्त्र (सूत्र) का उल्लेख-मात्र न कर इसे तुलनात्मक सन्दर्भोंके साथ सप्रमाण स्पष्ट एवं पुष्ट किया है। राजशेखर मौलिकता, दृष्टिकी सूक्ष्मता और प्रतिपादनकी स्पष्टतासे युक्त आचार्य थे। लेखिकाने उन्हें कवि, कविता और कवित्व-शक्तिका सर्वप्रथम वैज्ञानिक निरूपण करनेका श्रेय दिया है। उन्हें कवि शिक्षा सम्प्रदायका प्रवर्त्तक, 'साहित्य' अर्थ में 'काव्य' का प्रयोग करनेवाला प्रथम व्यक्ति एवं काव्य-पुरुषकी अवतारणा और भुवन-कोशकी चित्रणा करनेवाला मौलिक और सुधी आचार्य कहा गया है। उन्होंने अपने काव्यपुरुष सारस्वतेयकी रचना-प्रक्रियामें महाभारत, वायु-पुराण तथा हर्षचरितमें वर्णित सारस्वतेयकी धारणाका भी उपयोग किया है। डॉ० वर्माका अभिमत है कि राजशेखर रीतिके स्थानपर प्रान्तीय प्रणालीपर आधारित काव्य-पाठ का वर्णन करनेवाले पहले आचार्य तथा रीति-वृत्तिके साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवृत्तिका सामञ्जस्य करनेवालेभी आद्य आचार्य थे। उन्होंने कुन्तकके भी पूर्व वक्रोक्ति-सम्प्रदायकी नींव डालनेका कार्य सम्पन्न किया। हरणकी दृष्टिसे वे श्लेष-यमक अलंकारके भी प्रथम विवेचक हैं। उन्होंने परम्परित १२ काव्यार्थोंके अतिरिक्त ४ इतर काव्यार्थोंकी मौलिक कल्पना की है तथा काव्यपाकको ९ भेदोंमें विभक्तकर वर्तमान भारतीय समीक्षाका सत्यतः सूत्रपात किया है। साहित्यके दोनों पक्ष, काव्य और शास्त्रका स्पष्ट विभाजन उनकी विशिष्टता है। लेखिकाने इस मानीमें उन्हें अँगरेजी विद्वान् 'डिक्विंसी' के समतुल्य महत्त्व दिया है, जो सर्वथा उचित है। इस प्रकार तीसरे खण्डमें यायावरीय राजशेखरका युग-प्रवर्त्तक आचार्यत्व विवेचित हुआ है।

चतुर्थ खण्डमें राजशेखर कालीन भारतका उनके द्वारा चित्रण एवं राजशेखरके परवर्त्ती नाटककारों तथा आचार्योंके बीच उनका स्थान निरूपित करते हुए राजशेखरकी उपलब्धिपर प्रकाश डाला गया है। राजशेखरने अपनी कृतियों में पूर्वदेश, पश्चदेश, दक्षिणापथ, उत्तरापथ एवं मध्यदेश, इनकी नदियाँ तथा पर्वतोंका उल्लेख किया है। उन्होंने देशानुसार वेश एवं पाठ-प्रणालीकी भी चर्चा की है। राजशेखरकी विवेचना करते समय उनके इस राष्ट्रीय-सांस्कृतिक पक्षको कदापि नहीं भुलाया जा सकता। उनके ग्रन्थ सच्चे अर्थमें भारतके सांस्कृतिक भाण्डार हैं। विवेच्य ग्रन्थकी 'प्रस्तावना' में श्री प्रभुदयाल अग्निहोत्रीने बहुत उचित लिखा है कि "राजशेखरकी एक बहुत बड़ी विशेषता उनकी राष्ट्र-भक्ति है। कालिदासके बाद अन्य किसी कवि या आचार्यने भारतके समस्त जनपदों, नदियों, पर्वतों तथा रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूषा और संस्कार आदिके प्रति न इतना प्रेम दिखाया और न उनका इतना विशद वर्णन किया जितना राजशेखरने किया है।" डॉ० वर्माने इस पहलूको भी अच्छी तरह उजागर किया है। परवर्ती नाटककारों में 'चन्द्रलेखा' के रचयिता रुद्रदास, 'रंभामंजरी' के रचयिता जयचन्द्र और 'सिंगारमंजरी' के रचयिता विश्वेश्वर राजशेखर से बहुत दूरतक प्रभावित हैं। ऐसे ही आचार्योंमें जिनसेन, अमर, देवेश्वर, केशव मिश्र, हेमचन्द्र एवं वाग्भट हैं; जिन्होंने राजशेखर-वर्णित 'कवि-समय' को अपने-अपने ग्रन्थमें उद्धृत किया है। अन्य प्रभावित आचार्योंमें आचार्य विश्वनाथ और मम्मटाचार्यके नाम प्रमुख हैं। आचार्य विश्वनाथकी 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' की मान्यता और मम्मटाचार्यकी समन्वयात्मक रचनाशैलीके आधार राजशेखर ही हैं। डॉ० श्यामा वर्माने बड़ी स्पष्टतासे इस खण्डमें राजशेखर-विषयक बारीकियोंका उद्घाटन किया है। पूर्ववर्ती कवियों और राजशेखरका सम्बन्ध प्रेरणा अंगीकृति तथा विलीनता का बताया गया है—"वाल्मीकिसे प्रेरणा पाकर, मेंठकी वक्रोक्तिको अंगीकृत कर तथा स्वयंको भवभूतिमें विलीनकर राजशेखरने 'बाल रामायण' की सर्जना की।" (पृष्ठ २४१) राजशेखरकी उपलब्धि बड़ी है। एक स्वतंत्रचेता आचार्यके रूपमें उन्होंने 'काव्यमीमांसा' में अनेक मौलिक उद्भावनाएँ की हैं। लेखिकाने उन्हें संस्कृतका महान् निर्माता, राष्ट्रीयता एवं संस्कृतिका आख्याता, महाकवि, कविराज और आचार्यका विरुद प्रदान किया है। उसके शब्दोंमें राजशेखरकी सबसे बड़ी उपलब्धि "काव्यशास्त्रको वादोंकी भूमिसे हटाकर सच्चे अर्थमें शास्त्र बनाना, उसके सिद्धान्तोंकी शास्त्रीय प्रतिष्ठापना करना तथा उनको परिमार्जित व्यवस्था देना है।"

इस ग्रन्थके परिशिष्ट महत्त्वपूर्ण हैं। इनका स्थान मानक है। पहले परिशिष्टमें राजशेखरकी पुनरुक्तियों, दूसरेमें अन्य ग्रन्थोंमें प्राप्त राजशेखरकी कृतियोंके स्थल, तीसरेमें राजशेखर द्वारा अन्य ग्रन्थोंके उद्धृत सन्दर्भ, चौथेमें राजशेखरके नाटकोंके सुभाषित, पाँचवेंमें राजशेखर की नाट्यकृतियोंमें प्रयुक्त छन्द, छठेमें राजशेखरकी सूक्तियों, सातवेंमें राजशेखर द्वारा पूर्ववर्ती कवियोंको निवेदित श्रद्धाञ्जलि और आठवेंमें राजशेखरकी प्रशस्तिका नियोजन हुआ है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन परिशिष्टोंने ग्रन्थको पूर्णता प्रदान की है।

लेखिकाकी भाषा बोधगम्य और स्पष्ट है। पर कुछ भूलें खटकती हैं। 'युवावस्था' या 'यौवन' के लिए 'यौवनावस्था' का प्रयोग (पृष्ठ ११६) और 'छह' के लिए 'छः' का व्यवहार (पृष्ठ १७४) ऐसी भूलोंके उदाहरण हैं। कहीं वचनकी असंगतिकी व्याकरणिक त्रुटि है—"काव्यमें **यह** अशोभन बातें प्रस्तुत की गयी हैं" (पृष्ठ १७८) तो कहीं पूरी-की-पूरी वाक्य संरचना ही भ्रष्ट है—"रानी मृगांकावली-विषयक भविष्य घोषणाको सत्य करनेके लिए तथा राजाको अनायास चक्रवर्त्ती बना देनेकी लालसासे स्वयं नायक-नायिकाको प्रणय-सूत्रमें बाँध देती है।" (पृष्ठ ८०) मुद्रणकी भूलें भी चिन्त्य हैं—"वात्स्यायन' के लिए 'वत्स्त्यायन' (पृष्ठ १५७), 'श्रृंखला' के लिए 'श्रृंखला' (पृष्ठ ११७) एवं 'तत्त्व' और 'महत्त्व' के लिए 'तत्व' और 'महत्व'। (पृष्ठ २४०) वर्त्तनीकी दृष्टिसे योजक-चिह्न (-) भी प्रायः उपेक्षित है। किन्तु अकादमी जैसे महत्त्व-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्ण हिन्दी प्रकाशनको अपने ग्रन्थोंको अनिवार्य तौरपर मुद्रण-दोषसे बचाना चाहिये।

'आचार्य राजशेखर' ग्रन्थ डॉ० श्यामा वर्माके गहन अध्ययन, सम्यक् अनुशीलन और उपयोगी विवेचनका परिणाम है। इसके मूलमें सम्प्रेषणीयता-प्रसूत सारे विवरणोंके साथ मूल्य-दृष्टिका विवेचन भी जुड़ा है। यह विश्वविद्यालयीन स्तरका एक लाभप्रद पाठ्यग्रन्थ भी है और वैदुष्यपूर्ण अनुसन्धानात्मक प्रबन्धभी। निस्सन्देह यह मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमीका एक प्रशंस्य प्रकाशन है, जिसमें भारतीय शास्त्रीय विवेचनके प्रति श्रद्धा और सम्मान का भाव सम्मिलित है। आज हिन्दी ग्रन्थोंका मूल्य जहाँ आकाश छूने लगा है वहाँ इस ग्रन्थका कम मूल्य प्रत्येक इच्छुक पाठकको पुस्तक खरीदकर पढ़नेकी सुविधा प्रदान करता है। ग्रन्थ हर दृष्टिसे संग्राह्य है।

—डॉ० पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु'

महादेवी और उनकी गद्य-रचनाएँ

लेखिका : सुश्री माधवी राजगोपालन; प्रकाशक : जर्नलिस्ट कालोनी, बंगलोर–२। पृष्ठ : १४८; डिमाई, ६८; मूल्य : ६.०० रु०।

प्रस्तुत पुस्तक एक लघु शोध-प्रबन्ध है; जिसमें यशस्विनी साहित्य-साधिका श्रीमती महादेवी वर्माके जीवन, व्यक्तित्व और गद्य-कर्तृत्वपर गम्भीर अध्ययन निहित है। पुस्तक सात अध्यायोंमें विभक्त है। प्रथम अध्यायमें महादेवीके जीवन-वृत्तको जन्म, वंश-परिचय, वात्सल्य और उसका प्रभाव, बचपनका जीवन, शिक्षा, विवाह, यौवनके प्रारम्भकी रुचि, अध्यापिका जीवन तथा अन्य साहित्यकारोंसे सम्बन्धके अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया है। इसी अध्यायमें उनके व्यक्तित्वपरभी प्रकाश डाला गया है। व्यक्तित्वमें निम्नलिखित पक्ष समाविष्ट हैं—जीवनके प्रति दार्शनिक दृष्टिकोण, ईश्वर-भक्ति, आदर्श, हँसी, गार्हस्थिक कार्योंमें रुचि, भारतीय संस्कृतिपर आसक्ति, वेदनामय प्रवृत्ति, समाजके प्रति विचार, राष्ट्रीयता, रहस्यवाद तथा अन्य साहित्यकारोंकी राय। द्वितीय अध्यायमें महादेवी वर्माकी रचनाओंका सर्वेक्षण है। तदुपरान्त क्रमशः रेखाचित्र, संस्मरण और आलोचनात्मक गद्यपर वैज्ञानिक पद्धतिपर सविस्तार अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। रेखाचित्र और संस्मरण नामक साहित्य-रूपोंके सैद्धांतिक विवेचन एवं हिन्दीमें उनके ऐतिहासिक विकासको भी समेट लिया गया है। इस प्रकार ये अध्याय अन्यथा भी महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी बन गये हैं। भाषा एवं शैलीपर एक स्वतन्त्र अध्याय है; जो गद्य-रचनाओं के अध्ययनका अपरिहार्य अंग है। अन्तमें 'हिन्दी गद्यको महादेवीकी देन' पर प्रकाश डाला गया है। सहायक-ग्रन्थोंकी सूची भी अपनी उपादेयता प्रकट करती है। लेखिका की भाषा विषयानुकूल, पर प्रांजल है। उसमें अपूर्व सहजता है; कृत्रिमता लेशमात्र भी नहीं। महादेवी वर्माके अध्येताओंके लिए प्रस्तुत पुस्तक अत्यधिक उपयोगी है।

—डॉ० महेन्द्र भटनागर

हिन्दी साहित्य : आलोचना ग्रन्थ-सूची १९४७—१९७१

सम्पादक : यशपाल महाजन; प्रकाशक : भारतीय ग्रंथ निकेतन, १३३ लाजपतराय मार्केट, दिल्ली–६। पृ० ३३६; क्राउन दुगना, ७१; मूल्य : ४०.०० रु०।

हिन्दीमें सन्दर्भ ग्रंथोंकी बहुत कमी है। कुछ तो ऐसे विषय हैं जिनपर किसीभी तरहका सन्दर्भ ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। आलोच्य ग्रंथ एक उल्लेखनीय सन्दर्भ ग्रंथ है जिसमें १९४७ से १९७१ तक हिन्दीमें प्रकाशित आलोचना, निबन्ध तथा भाषाविज्ञानसम्बन्धी पुस्तकोंका ब्यौरा दिया गया है। इस बातका यथासम्भव प्रयत्न किया गया है कि इस संदर्भ ग्रंथमें, विषयसे सम्बन्धित सभी पुस्तकोंका समावेश किया जाये। सन्दर्भ ग्रंथोंका सम्पादन किसी एक व्यक्तिके बसकी बात नहीं है। यह कार्य संस्थाएँही कर सकती हैं। सम्पादक महोदय ने संस्थाके कार्यको स्वयं साधनहीन होते हुए भी सफलतापूर्वक निभाया है, वे बधाईके पात्र हैं।

आलोच्य ग्रंथ तीन भागोंमें विभक्त है। प्रथम भागमें अकारादि क्रमसे सात विषयोंकी पुस्तकोंका संकलन है। इन विषयोंमें कृति और कृतिकार, काव्य, उपन्यास-कहानी, नाटक-एकांकी आदि सम्मिलित हैं। द्वितीय भागमें प्रथम भागकी अनुक्रमणिका दी गयी है। लेखकों तथा पुस्तकोंके नाम अकारादि क्रमसे हैं। तीसरे भागमें प्रकाशकोंके पते हैं। ग्रंथमें एकरूपताका पूरा ख्याल रखा गया है। इसके लिए कई प्रणालियाँ अपनायी गयीं हैं। इन सब प्रणालियोंका ग्रंथके प्रारम्भमें उल्लेख कर दिया गया है।

सन्दर्भ ग्रंथमें लेखकोंकी जन्म और मृत्यु तिथियाँ दी गयी हैं। सम्पादक थोड़ा प्रयत्न करके कुछ और तिथियाँ भी जुटा सकते थे। भगवतीप्रसाद बाजपेयी (मृत्यु ८ मई, १९७३), डॉ० धीरेन्द्र वर्मा (मृत्यु २३ अप्रैल, १९७३), मोहन राकेश (मृत्यु दिसम्बर, १९७२) और मोहनसिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेंगर (मृत्यु १० जनवरी, १९७२) हमसे इस वर्ष और पिछले वर्ष बिछुड़े। इन्हें छोड़कर कुछ साहित्यिकोंकी मृत्यु तिथियाँ ग्रंथ में दी जा सकती थीं, जैसे चन्द्रधर शर्मा गुलेरी (मृत्यु ११ सितम्बर, १९२२), महावीरप्रसाद द्विवेदी (मृत्यु २१ दिसम्बर, १९३८), सुभद्राकुमारी चौहान (मृत्यु १५ फरवरी, १९४८), शिवपूजन सहाय (मृत्यु २१ जनवरी, १९६३), अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी (मृत्यु २१ मार्च, १९६८) और राधिकारमणप्रसाद सिंह (मृत्यु २४ मार्च, १९७१)।

लेखकने भूमिकामें दिल्लीके मारवाड़ी पुस्तकालय, श्यामलाल कालेज पुस्तकालय और दिल्ली विश्वविद्यालयके अधिकारियोंके प्रति आभार प्रकट किया है। इससे प्रतीत होता है कि उन्होंने पुस्तकके सम्पादनमें केवल दिल्लीके पुस्तकालयोंका ही उपयोग किया है। दिल्लीके बाहरके प्रकाशकोंकी सूचनाएँ भी इसमें प्रचुर हैं। अच्छा होता यदि वाराणसीकी नागरी प्रचारिणी सभाके पुस्तकालयका भी उपयोग कर लिया जाता।

पुस्तकमें प्रूफकी एक-दो गलतियाँ देखनेको मिली हैं। बालकृष्ण रावके स्थानपर बालकृष्ण राय (पृष्ठ ९८) छपा है।

आशा है, हिन्दी आलोचना, निबन्ध तथा भाषाविज्ञानके शोधकर्ताओं तथा पुस्तकालयोंके लिए यह ग्रंथ उपयोगी सिद्ध होगा।

—मनमोहन वर्मा

आधुनिक निबन्धावलि

सम्पादक : डॉ० विद्यानिवास मिश्र; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग। पृष्ठ : १९८; क्राउन, ७२; मूल्य : २.७५ रु०।

'आधुनिक निबन्धावलि' डॉ० विद्यानिवास मिश्र द्वारा सम्पादित हिन्दी साहित्यके विविध 'विशेष रूपसे व्यक्ति-व्यंजक' निबन्धोंका संग्रह है। वे विद्वान् जो किसी पूर्वाग्रह अथवा हठधर्मिताके कारण हिन्दी-व्यक्ति-व्यंजक निबन्धोंको आंग्ल-साहित्य अथवा कुछ उत्तरकालमें बाँगला-साहित्यके प्रभावसे हिन्दी-साहित्यमें आया हुआ मानते हैं, उनके मतको ये निबन्ध खण्डित करनेको पर्याप्त हैं। वास्तवमें हिन्दी साहित्य अपने शैशवसेही बड़ा सचेत और स्वतन्त्र प्रकृतिके कारण स्वतः जीवनकी विविध और अनेकानेक साहित्य-विधाओंको अपने परिवेशमें समेटता रहा है। कोई विषय अथवा विधा 'चाहे आजका अधुनातन विषय-विधा' क्यों न हो, हमारे वेद पुराणादिमें सबकुछ 'ज्ञान विज्ञान' निहि है।

प्रस्तुत निबन्ध-संकलनमें बाईस निबन्ध भिन्न-भि विचारोंकी श्रृंखलामें आबद्ध हैं। ये निबन्ध व्यक्ति-व्यंज निबन्ध होते हुए भी हिन्दी साहित्यके अन्य विविध आयामों व्यक्त करनेमें सफल हैं। व्यक्ति-व्यंजक निबन्ध वैज्ञानि अथवा साहित्यिक नहीं होते, ऐसा दावा नहीं किया सकता अपितु "विचार शून्यता जिस व्यक्ति-व्यंजक निब में हो उसे व्यक्ति-व्यंजक निबन्ध मानना ही नहीं चाहिये। (भूमिका : पृ० ४)।

सुविधा और विचारोंकी दृष्टिसे प्रस्तुत निबन्धावलि निबन्धोंको वैचारिक, भावात्मक, हास्यपरक तथा समीक्षा त्मक निबन्धोंमें बाँट सकते हैं। वैचारिक निबन्धोंके अन्त र्गत 'कुटज, समाज-व्यक्ति, पीपल, आजके युगका निष्प्र बौद्धिक वर्ग, नयी कवितापर क्षण भर' बड़े चिन्तन एवं विच पूर्ण निबन्ध हैं। भावात्मक निबन्धोंमें 'बन्दीकी चेत (कमलापति त्रिपाठी), 'इन टूटे हुए दियोंसे काम चला (विद्यानिवास मिश्र) निबन्ध विचारकी गहनतम पर्तों हृदयकी अन्तःसलिलामें अवगाहन कराते हैं। "मातृ इस दुःखपूर्ण और क्षतविक्षत धरातलका सर्वोत्तम वर है। पवित्रता, सौंदर्य, सत्य, स्नेह और कलाका उन्न विकास सम्भवतया माताके मातृहृदयमें ही हुआ है, जि सीमाका बन्धन नहीं है, स्वार्थकी दुर्गन्ध नहीं है, प्रति कांक्षाकी कालिमा नहीं है। माताका वह शुभ्र वात्सल्य अभिशापित मानवकी सबसे बड़ी बहुमूल्य विभूति है (बन्दीकी चेतना : पृष्ठ ५४)। समीक्षात्मक निबन्धोंके अ र्गत 'मेघदूतकी पुस्तक-समीक्षा' निबन्ध समीक्षा-दृ अनुपमेय ही नहीं अपितु समीक्षाके नये एवं स्पष्ट मानद प्रस्तुत करता है। हास्यके अन्तर्गत 'साहित्य-विटप, हिमालय तथा बैलगाड़ीसे' गिने जा सकते हैं। इस विभा का अर्थ यह नहीं कि अन्य निबन्ध 'ऐसे ही' निबन्धा 'पुस्तक' में रख दिये गये हैं अपितु प्रत्येक निबन्ध अ पूर्ण तथा साहित्यिक कसौटीपर खरा उतरता है। 'द महान् व्यक्तित्व'—डॉ० नगेन्द्रका निबन्ध मैथिली गुप्तके जीवनका बड़ा मार्मिक और सम्यक् विवेचन प्र करता है। इसी प्रकार 'तराईका फार्म' रवीन्द्रनाथ त्या निबन्ध आजकी राजनीति और राजनीतिज्ञपर फिट है। नेताजीका सहानुभूतिपूर्ण चिकना-चुपड़ा 'खो व्यवहार आजकी राजनीतिक चालोंको सही व्यक्त करत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसप्रकार, उपर्युक्त विवेचन-विश्लेषणसे समीक्ष्य पुस्तक की उपादेयता स्वयं सिद्ध हो जाती है। निस्सन्देह संकलनके सभी निबन्धकारोंकी सभी कृतियाँ साहित्यके विविध तत्त्वों और आयामोंको अपने परिवेशमें समेटती हुई विचार-भावोंका बड़ा बौद्धिक और रसात्मक समाधान करनेमें सफल हैं। भाषा-शैलीकी सरसताके कारण कुछ जटिल और नीरस विषयों 'निबन्धों' का प्रतिपादनभी बड़े मार्मिक ढंगसे हुआ है, जिनका अपना अनुपमेय रंग-ढंग है। अतः 'आधुनिक निबन्धावलि' स्नातकोत्तर कक्षाओंके लिए ही नहीं अपितु हिन्दी-निबन्ध-विधामें अभिरुचि रखनेवाले अध्येताओं एवं सुधी पाठकों-विचारकोंको अवश्यमेव आप्यायित करेगी।

—श्यामकिशोर शर्मा

राजस्थानी साहित्य

रणमल्ल छन्द

सम्पादक : श्री मूलचन्द प्राणेश, प्रस्तावना लेखक : डॉ० रघुबीरसिंह; प्रकाशक : भारतीय विद्यामन्दिर शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर। पृष्ठ : ६५; डिमाई, ७२; मूल्य : ७.५० रु०।

कवि श्रीधर व्यासकी कृति 'रणमल्ल छन्द' का हिन्दी साहित्यके इतिहासमें उल्लेख तो मिलता था पर वह हिन्दी साहित्यके पाठकको अबतक सुलभ न थी। गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी द्वारा प्रकाशित और गुजराती विद्वान् के० ह० ध्रुव द्वारा सम्पादित गुजराती संस्करणही देखनेमें आता था। हिन्दी भाषामें सर्वांगीण भूमिका, भाषा, रस-अलंकार-छन्द-शैली आदिकी विवेचना, सुबोध हिन्दी टीका और शब्दार्थसे समन्वित यह संस्करण प्रस्तुतकर सम्पादक श्री मूलचंद प्राणेशने वस्तुतः अपने पाण्डित्यका परिचय तो दिया ही है, एक बड़े अभावकी भी पूर्ति की है। ऐसे दुरूह काव्यका सम्पादन एक कठिन कार्य है, विशेषकर प्रामाणिक प्रतियोंके अभावमें। पर सुयोग्य सम्पादकने सम्पादन ही नहीं किया है, सरल भावार्थ और शब्दार्थ देकर तथा काव्यकी भाषाकी विशेषताओंपर प्रकाश डालकर पाठकका मार्ग बहुत सरल कर दिया है। 'छन्द' शब्दके प्रासंगिक अर्थ और उसके अर्थ विकासपर प्रकाश डालकर सम्पादकने इस काव्यको ठीक ही खण्ड काव्य सिद्ध किया है। छन्दमें वर्णित युद्धके ऐतिहासिक विवेचनसे सम्पादकका इतिहासविषयक ज्ञानभी प्रस्फुटित होता है। प्रस्तावना लेखक डॉ० रघुबीरसिंहने काव्यके ऐतिहासिक पक्षका बहुतही सांगोपांग उद्घाटन किया है और रणमल्ल छन्दके ऐतिहासिक महत्त्वको सम्यक्तया सिद्ध किया है।

रणमल्ल छन्दका यह संस्करण सौती साहित्यके इस दुरूह काव्यको पाठकोंके लिए सुबोध और सहृदय-संवेद्य बनानेमें सफल होगा, ऐसी आशा की जा सकती है। इतिहासकारोंके कामकी सामग्रीभी इसमें मिलेगी। पर किसी काव्यको ऐतिहासिकताकी कसौटीपर ही कसना उसके काव्यत्व की उपेक्षा करना है। यदि इतिहासकारोंको इसमें कोई इतिहास-विरोधी उल्लेख दिखायी दें तबभी काव्यत्वका गौरव किसी प्रकार क्षीण नहीं होगा।

पाठ-सम्पादन, भाषा-विवेचन आदिमें कुछ बातें खटकने वाली भी हैं जिनका संकेत केवल इस दृष्टिसे किया जा रहा है कि सम्पादक यदि उचित समझें तो आगामी संस्करणोंमें उन दोषोंका निवारण कर सकें।

पाठ सम्पादनमें खटकनेवाली बात यह है कि अन्य अनेक सम्पादकोंके समान प्रस्तुत सम्पादकने भी प्राप्त प्रतियोंकी वर्त्तनीको यथावत् प्रस्तुत करनेका ही प्रयत्न किया है। इस बातकी ओर ध्यान नहीं दिया कि सौती श्रेणीके ये कवि और इनके प्रतिलिपिकार रचनाओंको लिपिबद्ध करते समय ह्रस्व-दीर्घका ध्यान नहीं रखते थे यद्यपि काव्य पाठके समय सदा ध्यान रखते थे। ये कवि अपने काव्यको श्रव्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काव्य मानते थे, लेख्य या पाठ्य-काव्य नहीं। अतः वे जिस रूपमें अपने काव्यका वाचन करते थे, उसी रूपमें उसे प्रस्तुत करना सम्पादकका कर्तव्य होता है, उस प्रतिलिपित रूपमें प्रस्तुत करना नहीं जो केवल स्मृति सहायकके रूपमें टाँक लिया जाता था। यह स्पष्ट है कि 'अपिमांषं मषं कुर्यात् छंदो भंगे न कारयेत्' के सिद्धान्तको माननेवाले कवियोंको जानबूझकर छंदोभंग करना अभीष्ट नहीं रहा होगा। चार यगणों (ISS) के भुजंग प्रयात छंदको निस्संदेह 'जि बुंबाअ बुंबा उलक्की सलक्की, जिबक्की बहक्की लहक्की चमक्की (६६)' रूपमें प्रस्तुत करना ही कविको अभीष्ट रहा होगा, 'जि बुंबाअ बुंबा उलक्कि सलक्कि, जि बक्कि बहक्कि लहक्कि चमक्कि' रूप में प्रस्तुत करना नहीं। सौती साहित्यके पाठ सम्पादकोंको इस बातका सदा ध्यान रखना चाहिये, तभी वे कविके अभीष्ट उच्चारणतक पाठकको पहुँचा सकेंगे।

पाठ-सम्पादनमें अर्थ संगतिका भी ध्यान रखना अपेक्षित होता है। छंद ४३ से 'परसादि बक्षि दिगत योगिनि जय जया रव अंबरी।' पाठके कारण अर्थमें खींचतान करनी पड़ी है—"दिग दिगंतकी योगिनियोंको प्रसाद दीजिये। (ऐसा कहते हुए) (वे योगनियाँ) आकाशमें जय-जयकार करने लगीं।"

यदि इस पाठमें 'बक्षि' के स्थानपर 'भक्षि' रखा जाता तो अर्थ होता "प्रसाद भक्षण करके योगिनियाँ आकाशमें दिग्-दिगंतमें जयजयकार करने लगीं।" ध्यान रहे इस छंदसे ऊपरके दोहेमें बताया जा चुका है कि योगिनियाँ मत्त होकर रुधिरसे प्रसाद ग्रहण कर रही थीं। हमारे विचारसे कविको अभीष्ट 'भक्षि' ही रहा होगा, 'बक्षि' केवल प्रतिलिपिकारका प्रमाद है।

भाषा विवेचनमें रणमल्ल छंदकी भाषाकी पूरी प्रवृत्तियोंपर प्रकाश डाल सकना कदाचित् कठिन था अतः ध्वनि विचारमें केवल कुछ शब्दोंके तत्सम रूपको उसके आगे कोष्ठमें देकर तत्सम स्वर अथवा व्यंजनके स्थानपर होनेवाले तद्भव स्वर अथवा व्यंजनका उल्लेखकर दिया गया है। इससे यह भ्रम हो सकता है कि यह प्रवृत्ति सार्वत्रिक है। उदाहरणार्थ ख, घ, भ, ध, श की ह में परिणति होती तो है पर सर्वत्र नहीं। पर सम्पादकने यह नहीं बताया कि यह परिणति किन परिस्थितियोंमें होती है, किनमें नहीं। 'युः जु' से प्रतीत होता है कि 'य' के साथ 'उ' का संयोग होने पर उसकी 'ज' में परिणति होती है अन्यत्र नहीं। पर छंद ३३ में 'यम' की परिणति 'जम' में हुई है। अतः 'युः जु' के स्थानपर 'ध : ज' रखा होता तो पूरी योजनाके अधिक अनुरूप होता। इसी प्रकार द्रष्ट : दिट्ठ, दुर्ग : दुग्ग आदि शब्दोंका उल्लेख ध्वनियोंके विवेचनकी योजनाके अनुरूप नहीं है। पहलेके स्थानपर 'दृ : दि' और दूसरे के स्थानपर 'र्ग : ग्ग' लिखना शेष योजनाके अधिक अनुरूप था। 'दृष्ट : दिट्ठ' के 'ष्ट : ट्ठ' और 'मुष्टि : मुट्ठि' को 'ष्ट : ट्ठ' को एक ही स्थानपर देना उचित था। 'ब्राह्मण : बंभण' में 'ह्म : भ' कहना ठीक नहीं; 'ह्म' पहले 'म्ह' बना है, फिर 'म' का अनुस्वार और 'ह' का 'भ' बना है।

शब्द रूपोंमें 'थर थर थाणदार उरिकंपइ' में 'थाणदार' को कर्म कारक बताना ठीक नहीं। अर्थ है "थानेदारका उर थर-थर काँपता है।" "मिइं संगरि समसुद्दीन नड़ी और आरम्भ मैं कियो जेणि उपायो में 'इ' को परसर्ग अथवा अव्यय मानना ठीक नहीं। 'मि' मूल रूपमें नहीं मिलता। वस्तुतः 'मिइं' और 'मैं' ही मूलरूप हैं। इसी प्रकार 'हय' और 'दिसि' में क्रमशः अ और इ परसर्गोंकी कल्पना करना युक्तिसंगत नहीं। 'हय' का 'हयं' सौती साहित्यमें छंदकी सुविधासे सभी विभक्तियोंमें किया जाता है। इसी प्रकार दिसि भी प्रयुक्त होता है। 'सामि कामि भंजिए देहा' में संप्रदायका भाव 'इ' से नहीं प्रकट होता पूरे 'कामि' शब्दसे होता है। 'सामि कामि' का अर्थ है 'स्वाम्यर्थं'। सर्वनाममें 'मिइं' के दो और 'मम' का एक प्रयोग कर्म कारक का बताया गया है। ये तीनों ही कर्ता कारकके प्रयोग हैं (देखिए छं सं० ३२, ३३, ३४)।

क्रियाओंके विवेचनका शीर्षक 'क्रिया तथा कृदंत' रखना समीचीन नहीं। 'क्रियाके तिङन्त तथा कृदन्त [illegible]' कहना अधिक उचित होता। वर्तमानकालसूचक प्रत्यय 'अइ' के उदाहरण में धा कमधज्जधारि करि लिज्जइ देना ठीक नहीं। उसे बादमें आज्ञार्थकके उदाहरणके रूपमें [illegible] दिया गया है; वही ठीकभी है। मफरद (एकाकी), अनेक, सवि आदिको परिमाणवाचक क्रियाविशेषण बताना ठीक नहीं। ये किसी क्रियाकी विशेषता नहीं बताते। 'मुफरद' 'मलिक' (संज्ञा) की विशेषता बताता है, 'अनेक' भी 'मलिक्क' की और 'सवि' तो 'सर्व' से बना तद्भव [illegible] जिसके कारणही 'सर्वनाम' नाम पड़ा था।

अलंकारोंमें उपमाका एक उदाहरण दिया गया है 'तुक्खार तार तत्तार तेजी तरल तिक्ख तुरंगमा' जबकि [illegible] अंशमें कहीं उपमा नहीं है; उपमा तो इससे अगले चरण [illegible] है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी कुछ त्रुटियोंके होते हुएभी प्राणेशजीका यह सम्पादन साहित्यके क्षेत्रमें एक अमूल्य देन है। निस्सन्देह एक विस्मृतप्राय ही नहीं अपितु नामशेष मात्र काव्यको भारतके विशाल भूखण्ड (हिन्दी क्षेत्र) के पाठकोंके लिए सुलभ ही नहीं, सुबोध भी बनाकर प्राणेशजीने अति प्रशंस्य कार्य किया है। मुद्रण आदि उत्तम है, पर कुल ६५ पृष्ठोंकी इस छोटी पुस्तिकाका मूल्य साढ़े सात रुपये रखना उचित नहीं। माना कि सम्पादकको बहुत परिश्रम करना पड़ा होगा पर सम्पादकोंके श्रमको पैसोंमें नहीं आँका जा सकता।

—काशीराम शर्मा

राजस्थानी गद्य विकास और प्रकाश–१

सम्पादक : डॉ० नरेन्द्र भानावत, डॉ० लक्ष्मीकमल;
प्रकाशक : श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा।
पृष्ठ : १६८; डिमाई, ७२; मूल्य : १५.०० रु०।

समीक्ष्य पुस्तक राजस्थानी भाषाके प्राचीन एवं अर्वाचीन गद्यकी विविध विधाओंका संकलन है। सम्पादकने अपने आमुखमें स्पष्ट किया है कि यह संकलन राजस्थानीके स्नातकोत्तर छात्रोंके लिए तैयार किया गया है और इसी अर्थसे इसमें उन रचनाओंको संगृहीत किया गया है जो राजस्थानी गद्यसाहित्यका प्रतिनिधित्व करती हैं। यह सत्य है कि राजस्थानी गद्यका सही प्रतिनिधित्व करनेवाली रचनाओंका अभीतक कोई संकलन उपलब्ध नहीं था। विश्वविद्यालयोंकी पाठ्यपुस्तक समितियोंके समक्ष राजस्थानी का पाठ्यक्रम निर्धारित करते समय यह कठिनाई रहती रही है कि गद्यविधाओंकी कौनसी कृति छात्रोंके लिए उपयोगी रहेगी। सम्पादकों ने इस दृष्टि से यह एक उपयोगी और महत्वपूर्ण काम किया है।

पुस्तक दो खण्डोंमें विभाजित है—प्राचीन खण्डमें धर्मकथा, वर्णनात्मक गद्यकाव्य, ऐतिहासिक वचनिका, ऐतिहासिक जीवनी, ख्यालके अन्तर्गत वात, पत्र, राजनीति सम्बन्धी निबन्ध, लोककथा, पौराणिक गद्य, ऐतिहासिक बात संग्रह, शिलालेख, संस्मरण, ख्याल, ऐतिहासिक गद्य, शृंगारिका वचनिका आदि गद्यविधाओंकी रचनाएँ संगृहीत हैं। इसी प्रकार अर्वाचीन खण्डमें—उपन्यास, नाटक, गद्यकाव्य, विचारात्मक निबन्ध, रेखाचित्र—संस्मरण, भावात्मक निबन्ध, साहित्यिक निबन्ध, ललित निबन्ध, साहित्यिक निबन्ध, ललित निबन्ध, यात्रा वर्णन, उद्बोधनात्मक निबन्ध, कहानी, एकांकी, रेडियो एकांकी, लोककथा, व्रतकथा आदि विधाओंका संकलन किया गया है। संक्षेपमें यह कहें कि राजस्थानी गद्यमें प्रचलित और उपलब्ध सभी विधाओंकी रचनाएँ रखनेकी चेष्टा इस संकलनमें हुई है। प्राचीन गद्य रचनाओंका हिन्दी रूपान्तर भी शब्दक्रममें प्रत्येक पृष्ठपर पाद-टिप्पणियोंकी भाँति दिया गया है। अर्वाचीन गद्य रचनाओंके कठिन शब्दोंका सरलार्थ, शैली और लेखक-परिचय देकर पुस्तककी सामग्री को उपयोगी, सरल-सुबोध बनानेका परिश्रमभी सम्पादकोंने किया है जो स्तुत्य है।

एक-दो बातें इस संग्रहकी रचनाओंके वर्गीकरणके सम्बन्धमें मनमें उठती हैं। एक तो यह कि राजनीति-सम्बन्धी निबन्ध, वर्णनात्मक गद्यकाव्य, शिलालेख, संस्मरण, ऐतिहासिक गद्य, पौराणिक गद्य जैसे गद्य-वर्ग क्या औचित्य रखते हैं? इनकी साहित्यिक प्रामाणिकता क्या है? क्या राजस्थानीके प्राचीन गद्यमें यह सब स्थापित-स्वीकृत विधाओंके रूप में प्रचलित रहे हैं? 'शिलालेख' विषय-विशेषको लिखनेकी रीतिनीतिको प्रकट करते हैं—वह एक साहित्यिक विधा कैसे हो गयी? लोककथा और आभिजात्य साहित्यकी कथाका भेदभी हमें स्वीकार करना पड़ेगा। आभिजात्य साहित्यकी कृतिके अन्तर्गत लोककथाओंको रखनेकी क्या शास्त्रीय संगति है? फिर इसमें दवावैत, अलंकृत गद्य जैसी राजस्थानी गद्यकी एकान्तिक विधाएँ छूटभी गयी हैं।

अर्वाचीन खण्डमें जिन रचनाओंका संकलन हुआ है उनमें बहुत-सी ऐसी हैं जो आधुनिक गद्य-विधाओंका अनुकरण मात्र हैं—न उनमें अभिव्यक्ति सौन्दर्य है और न उनका ऐसा स्तर कि उन्हें स्नातकोत्तर स्तरकी पाठ्यपुस्तक में रखा जा सके। सम्पादकोंकी दृष्टि इन रचनाओंके चयनमें शायद यह बतानेकी रही है कि राजस्थानीमें आधुनिकतम गद्यविधाएँ विद्यमान हैं। पर स्तरकी उपेक्षा नहीं होनी चाहिये।

इस पुस्तकमें एक और अभाव खटकता है—'राजस्थानी गद्यके उद्भव और विकास' पर एक विस्तृत भूमिका इसमें होनी चाहिये थी।

इन थोड़ी-सी कमियोंके बावजूद यह पुस्तक एक अभाव की पूर्ति करती है। उन लोगोंके सामने, जो यह समझते हैं कि राजस्थानीमें गद्य साहित्यका अभाव है, एक जीवन्त वास्तविकताको उजागर करती है। पुस्तकका कलेवर, मुद्रण, साज-सज्जा, प्रस्तुति—सभी मोहक हैं।

× × ×

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीर सतसई (महाकवि सूर्यमल्ल मीसण कृत)

सम्पादक : नरोत्तम स्वामी, नरेन्द्र भानावत, लक्ष्मीकमल; प्रकाशक : रंजन प्रकाशन, आगरा-३। मूल्य : ८.०० रु०।

आलोच्य कृति राजस्थानीके वीररसावतार महाकवि सूर्यमल्ल मीसण कृत 'वीर सतसई' का अभिनव सम्पादित संस्करण है। इससे पूर्व डॉ० कन्हैयालाल सहल और प्रो० पंतराम गौड़ द्वारा सम्पादित एवं बंगाल हिन्दी मण्डल, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित संस्करण उपलब्ध था। 'वीर सतसई' राजस्थानी वीर काव्यकी मुकुटमणि है। पिछले लम्बे अर्सेसे यह डिंगल और हिन्दीकी स्नातकोत्तर परीक्षाके प्रश्नपत्रोंमें पढ़ायी जाती रही है। वीर सतसईके छन्द अपनी साहित्यिक मार्मिकताके कारण लोकके कण्ठोपहार भी हैं। इससे सिद्ध हो जाता है कि यह कवि विद्वानों एवं लोक दोनोंमें समान रूपसे समादृत रहे हैं।

सम्पादकोंने छात्रोंकी सुविधा और उपयोगिताको ध्यानमें रखकर इसे चार खण्डोंमें विभाजित किया है। प्रथम खण्ड में राजस्थानी वीरकाव्यकी सामान्य विशेषताएँ, उसकी पृष्ठभूमि और काव्यरूप, वीररसके प्रमुख कवि और काव्य तथा वीर सतसई साहित्य। दूसरे खण्डमें सूर्यमल्ल मीसणके जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्वपर विस्तारसे प्रकाश डाला है। तीसरे खण्डमें वीरसतसईकी विस्तारसे साहित्यिक समीक्षा प्रस्तुत की गयी है—इसमें वे सारे विषय समाहित हैं जो परीक्षाकी दृष्टिसे आवश्यक समझे जाते हैं। चौथे खण्डमें वीर सतसईका मूलपाठ, अर्थ और टिप्पणियाँ दी गयी हैं।

इस संस्करणकी एक और मुख्य विशेषता है और वह है दोहोंको विषयक्रममें रखना। इस प्रकार वीर सतसईके सम्पूर्ण दोहे सोलह शीर्षकोंमें वर्गीकृत किये गये हैं, वे विषय हैं : मंगलाचरण, प्रस्तावना, बंदीजन जातियाँ, वीरके प्रतीक, वीर, स्वामी और सेवक, वीर नारी, वीर बालक और वीर युवक, वीर पति, युद्धकी तैयारी, युद्ध, आक्रमणकारी शत्रु और डाकू, वीरका मरण, सती, कायर, प्रकीर्णक। यह व्यवस्था-क्रम छात्रोंकी दृष्टिसे अत्यन्त उपयोगी है। विषय-विशेषके दोहे उन्हें एकही स्थानपर पढ़ने-समझनेके लिए मिल जायेंगे। वे अपेक्षित प्रश्नोंकी तैयारी सुविधा-पूर्वक कर लेंगे।

पुस्तकके अन्तमें पद्यानुक्रमणिका और विषयानुक्रमणिका देकर इसे और भी उपयोगी बना दिया है। तीनों सम्पादक प्राध्यापक हैं, अतः छात्रोंकी कठिनाइयोंको भली भाँति समझते हैं।

आशा है, यह कृति छात्रोंमें लोकप्रिय होगी। पुस्तककी साज-सज्जा, मुद्रण और प्रस्तुतिभी आकर्षक है।

—डॉ० रामप्रसाद दाधीच

भाषा-विज्ञान

अक्षर-कथा

लेखक : गुणाकर मुले; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : २६६; रायल, ७२; मूल्य : १०.०० रु०।

लेखनके उद्भव और विकासपर रूसी, अंग्रेज़ी आदि यूरोपीय भाषाओंमें अनेक प्रामाणिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, जिनमें श्निसेरकी इस्तोरिया पिसेमेन (१९०३) Clodd की The Story of the Alphabet (१९३८), Diringer की Writing (१९६२) तथा The Alphabet (१९५३) एवं Gelb के A Study of Writing (१९५२) उल्लेख्य हैं। भारतीय भाषाओंमें इस विषयपर अब तक कोई गम्भीर अध्ययन नहीं हुआ था। कुछ चर्चाओंके रूपमें इस विषयका उल्लेख अवश्य हुआ है। प्रस्तुत पुस्तक 'अक्षर-कथा' इस दिशामें प्रथम व्यवस्थित प्रयास है।

पुस्तक दो खण्डोंमें विभक्त है। प्रथम खण्डमें आरम्भिक लेखनके उद्भव और विकासकी जानकारी दी गयी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बादमें प्राचीन मिस्री, कीलाक्षर, चीनी, जापानी, हित्ती, क्रीट द्वीपीय, सेमेटिक, कनानी, आरमेई, अरबी, यूनानी, एत्रुस्कन, लैटिन, रूनी तथा मय लिपियोंका परिचय है ।

द्वितीय खण्डमें भारतीय लिपियाँ हैं जिनमें सिंधु घाटी, खरोष्ठी और ब्राह्मीसे लेकर आधुनिक नागरी, बँगला आदिका परिचय दिया गया है। इस खण्डके अन्तिम अध्यायमें (उपसंहारके पूर्व) विदेशों (श्रीलंका, तिब्बत, बर्मा, स्याम, जावा, मलय, चंपा आदि) में भारतीय लिपिपर भी प्रकाश डाला गया है। अनेक लिपियोंके ब्लॉकभी हैं जिससे पुस्तक अधिक उपयोगी तथा रुचिकर हो गयी है ।

परिशिष्टमें भाषा-परिवारोंका संक्षिप्त विभाजन है जो विषयसे बहुत सम्बद्ध नहीं कहा जा सकता ।

पुस्तक परिचयात्मक है, अतः इससे विषयकी बहुत गहराईकी आशा नहीं की जा सकती, किन्तु कुछ बातें ऐसी हैं जो परिचयात्मक पुस्तकके लिएभी ठीक नहीं मानी जायेंगी। उदाहरणके लिए पृष्ठ ७ पर चित्र-लेखनपर ६-७ पंक्तियाँ दी गयी हैं । लिपिकी लगभग ढाई सौ पृष्ठोंकी पुस्तकमें चित्रलिपिपर इतनी कम सामग्री बिल्कुल ही अपर्याप्त मानी जायेगी । पृष्ठ ९ पर अक्षरात्मक और वर्णमालात्मक लेखनका भेद स्पष्ट नहीं है । लेखकको दोनोंमें अन्तर स्पष्ट कर देना चाहिये था । परिचयात्मक पुस्तकमें कमसे-कम लिपि विशेषके पूरे लिपिचिह्न तो देने ही चाहिये । इस बातका ध्यान न रखनेसे कहीं-कहीं परिचय अधूरा रह गया है । उदाहरणके लिए पृष्ठ १०६ से १०९ तक अरबी लिपिका परिचय है । इसमें लेखनके तीन नमूने तीन कालोंके हैं । परिचयके लिए ये नमूने उतने आवश्यक नहीं माने जा सकते जितना एक ऐसा चित्र जिसमें अरबीके पूरे लिपि-चिह्न दिये गये हों। पृष्ठ २६२ पर भारोपीय परिवारकी शाखाओं-प्रशाखाओंका चित्र है । लगता है कि लेखक इस विषयकी नयी खोजोंसे अपरिचित है, अब 'हित्ती' भारोपीयकी बेटी न मानी जाकर बहन मानी जाती है । इसी तरह इस चित्रमें ईरानी और भारतीयके बीचमें 'दरद' को भी आना चाहिये । इस प्रकारकी अनेकानेक अन्य बातें भी जोड़ी जा सकती हैं।

इन कमियोंके बावजूद पुस्तक उपयोगी है । इससे हिंदी वाङ्मय की उल्लेख्य श्रीवृद्धि हुई है ।

—डॉ० भोलानाथ तिवारी

उपन्यास

सपनोंके टुकड़े

लेखक : डॉ० रमानाथ त्रिपाठी; प्रकाशक : भारती साहित्य सदन, नयी दिल्ली । पृष्ठ : १२५; क्राउन, ७२; मूल्य : ४.०० रु० ।

'सपनोंके टुकड़े' श्री रमानाथ त्रिपाठीका, भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलनकी पृष्ठभूमिपर लिखा गया, यथार्थवादी उपन्यास है । सन् १९४२ हमारे राष्ट्रीय इतिहासका महत्वपूर्ण वर्ष है। इस समय एक ओर तो देशभक्त जनता भारतसे अंग्रेजी-साम्राज्यके मूलोच्छेदन-हेतु शासकीय व्यवस्थाको भंग करनेपर कटिबद्ध थी । डाकखाने, रेलवे स्टेशन, तहसील, थाना और सरकारी भवनोंको अग्निकी भेंट करनेपर जनता तुली थी; दूसरी ओर अंग्रेज भक्त पुलिस आन्दोलनकारियोंको गोलीका शिकार बनाकर दमनकारी नीति अपनाये हुए थी और तीसरी ओर देशका व्यापारी वर्ग अंग्रेजोंका भी साथ दे रहा था और राष्ट्रीय नेताओंका अभिनन्दन भी कर रहा था। देशकी राजनीतिक चेतना-सम्पन्न जनता नेहरू तथा गान्धीकी अन्ध-भक्त भी थी और उनके कार्यों तथा नीतिकी कटु आलोचक भी । कुछ लोगोंको गान्धीजी तथा नेहरूजीकी राष्ट्रीय भूमिकापर सन्देह भी था । विशेषतः भारतीय क्रान्तिकारियोंके सम्बन्धमें निर्धारित इनकी नीतिकी जनता घोर विरोधी थी । वह सरदार भगतसिंह और नेताजीको नेहरू तथा गान्धीके समान ही देशभक्त मानती थी और आजभी मानती है । भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टीकी राष्ट्रीय भूमिकाके सम्मुखभी बहुत बड़ा प्रश्नचिह्न लगा हुआ था । अंग्रेजोंकी भारतीय पुलिस जनतापर लाठी और गोली बरसा रही थी । सामूहिक जुर्माना वसूल कर रही थी। पैसोंके अभावमें, गरीब जनता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने खानेके बरतन और पहननेके आभूषण बेचकर पुलिस का पेट भर रही थी। ऐसी स्थितिमें भी, केवल अन्तर्राष्ट्रीय नीतिपालनकी बौद्धिक चेतनाके आवेशमें, कम्यूनिस्ट पार्टी अंग्रेजी सरकारका समर्थन कर रही थी। भारतकी समूची जनताकी भावनाके विपरीत, द्वितीय विश्वयुद्ध अंग्रेज-विजय की कामना कर रही थी।

देशकी उक्त सामाजिक तथा राजनीतिक पृष्ठभूमिमें इस उपन्यासकी रचना हुई है। प्रस्तुत कृतिका 'अन्नू' सन् ४२ के उन अनेक क्रान्तिकारी छात्रोंका प्रतीक है, जो जलूस निकालते और भारत विजयके साथ-साथ अंग्रेज मुर्दाबादके नारे बुलन्द करते थे। अंग्रेजी पुलिसके दमनकी शिकार बनी जनताका प्रतिनिधि है—'अर्जुन', जिसके पजामेमें चूहे छोड़ दिये गये और नाभिपर कीड़े रखकर कटोरा बाँधा गया था। 'अन्नू' की मौसी और नानी, उस भारतीय जनताका प्रतिनिधित्व करती हैं, जिसने पुलिसकी मारपीटसे अपने बच्चोंको सुरक्षित रखनेके उद्देश्यसे पैरोंके कड़े और खानेके पात्र बेचकर रिश्वतें दी थीं। 'अन्नू' स्वयं गान्धीजीके अनुयायी तथा प्रशंसक वर्गका प्रतीक है। 'मोहन' भारतकी गान्धी-विरोधी जनताका प्रतिनिधित्व करता है। उसकी मान्यता है कि काँग्रेस देशसे भ्रष्टाचार मिटाकर राष्ट्रीय भावना भरनेमें असमर्थ रही (पृष्ठ ७४)। वह देशसे अंग्रेजीयतके उन्मूलनमें भी पूर्णतः असफल रही है (वहीं)। नेहरू तथा गान्धीजीने केवल तुष्टीकरणकी नीतिको अपनाया है और देशको दुर्बल बनाया है (वहीं)। वह यह भी मानता है कि रूस अपनी सीमामें एकता तथा सामंजस्यकी नीतिपर चलता है और अन्य देशोंमें विषमता तथा भेद उत्पन्न करता है।

इस उपन्यासकी वस्तु-योजनाके अन्तर्गत उक्त राजनीतिक यथार्थके साथ-साथ सामाजिक यथार्थका अंकन भी हुआ है। भारतीय समाजका हर्ष-उल्लास तथा व्यथा-वेदना लोक-गीतोंके माध्यमसे प्रवाहित होती रही है। इस कृतिके कुछ लोकगीत हमारे सामाजिक जीवनकी अनुभूतिका यथार्थ स्वरूप प्रस्तुत करते हैं। प्रस्तुत उपन्यासमें अंकित संक्रान्ति पर्व, भारतीय समाजकी परम्परागत रीति-रिवाजोंको प्रकटित करता है। भारतके ग्रामीण समाजकी सर्वाधिक दुःखद स्थिति है, सर्प-दंशनकी घटना। इस घटनाके समय देशके अनेक व्यक्ति चिकित्साके अभावमें, ग्रामीण प्रकारकी रोग-निदान पद्धतिके फलस्वरूप, मृत्युके शिकार होते हैं। 'सिया' की मृत्यु इसी स्थितिकी ज्ञापक है।

इस उपन्यासका वस्तु-विधान सहज, सरल और रोचक है। उपन्यासकारका उद्देश्य सामाजिक तथा राजनीतिक जीवनकी वास्तविकता तथा विषमताका चित्रण करना है और इस उद्देश्यमें वह सफल हुआ है। इसके अतिरिक्त लेखक छोटी जातियोंकी बालिकाओंके साथ होने वाले बलात्कारके कारण तथा परिस्थितियोंपरभी प्रहार करना चाहता है और वह इस कार्यमें सफल मनोरथ हुआ भी है। आँख-मिचौनी खेलते हुए भोली-भाली बालिका 'सिया' 'बानेसुरा' की वासनाका शिकार बनती है और फिर तबतक बनती ही रहती है, जबतक 'अन्नू' का नैतिक बल और पावन सम्पर्क उसको उपलब्ध नहीं हो जाता। 'अन्नू' की अनुपस्थितिमें, 'बानेसुरा' के सहयोग तथा परामर्शसे पुलिस-दरोगा भी 'सिया' की विवशता तथा निरीहताका दुरुपयोग करता है। यह घटना, भारतकी अनेक महिलाओंके साथ होनेवाले बलात्कारका प्रमाण है। 'सिया' की वेदनामें देशके महिला-वर्गकी वेदना निहित है।

वस्तु-योजनाके माध्यमसे, सामाजिक यथार्थकी विभीषिका, राजनीतिक जीवनके विषमतामूलक प्रपंच और वैयक्तिक जीवनकी वेगमयी अनुभूतिके साथ-साथ चारित्रिक संयमका चित्रण उपन्यासकी विशेषता है।

इस कृतिकी पात्रयोजना स्वाभाविक तथा विशेष उद्देश्य प्रेरित है। 'अन्नू' और 'मोहन' क्रान्तिकारी तथा विचारक छात्र-समाजका प्रतिनिधित्व करते हैं। ये दोनों, देशकी दो-धाराओंमें प्रवाहित राजनीतिक चेतनाके प्रतीक हैं। पहला गान्धीवादका आवरण डाले हुए है और दूसरा गान्धी द्वारा समर्थित राजनीतिक विचारधारासे पृथक् है, किन्तु उसको लेनिन अथवा मार्क्सवादी नहीं माना जा सकता। उसे राष्ट्रवादी कहा जाये तो किसीको आपत्ति न होगी। उसका आचरण संतुलित तथा संयमित है। यद्यपि उसके चरित्रका सम्यक् विकास नहीं हुआ, फिरभी उसकी संक्षिप्त उपस्थिति महत्त्वपूर्ण है। इस पात्रका समावेश केवल गान्धी-विरोधी प्रवृत्तिकी व्यंजनाहेतु हुआ है। इस पात्रके पूर्ण विकासके अभावमें, गान्धी-विरोधी मनोवृत्ति अभिव्यक्तिकी आकांक्षामें सिसकती रह गयी है। पहले पात्रका विकास दूसरेकी अपेक्षाअधिक है, किन्तु पूर्ण नहीं है। यथार्थमें, उपन्यासके संक्षिप्त कलेवरमें, इस पात्रका पूर्ण विकास संभव भी न था। 'अन्नू' सीधा और सरल युवक है। वह 'सिया' के न तो संकेत समझ पाता है और न उसके कार्योंका रहस्य। वह उस युवा-वर्गका विलोम है, जो नारीके क्षणिक सम्पर्कमें आते ही, वासना-सरितामें डुबकियाँ खाने लगता है। 'सिया' की बाहोंका गर्दनके नीचे स्पर्श और मुखपर उसकी उष्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्वासोंकी अनुभूति 'अन्नू' की गंभीरतामें स्पन्दन अवश्य उत्पन्न करती है, ज्वार नहीं लाती। वह दूसरी करवट लेकर सो जाता है। इसी प्रकार 'रमा' का सौन्दर्य उसको आकर्षित करता है, विपथगामी नहीं। वह मनुष्य है, भारत की परम्परागत प्रयोगशालामें ढला; फ्रॉयडकी पाठशालाका सिर-फिरा जीव नहीं है। इस चरित्रकी सर्जनामें रचनाकी सफलता है।

'अन्नू' व्यक्तिवादी चेतना-सम्पन्न प्राणी नहीं है। उसका चिंतन तथा कार्य समाजोन्मुखी है। वह सन् ४२ के राष्ट्रीय आन्दोलनमें सक्रिय भाग लेता है। जनताके दुःख-दर्दमें सम्मिलित होता है। 'सिया' जैसी छोटी जातिकी बालिकाकी सहायता करता है। सर्प-दंशनके समय, रोग-शैय्यासे उठकर उसको देखने जाता है। उसकी डॉक्टरी चिकित्सा हेतु अपनी एकमात्र पूंजी अर्पित कर देता है और भारतीय स्वाधीनता उपलब्धिसे पूर्व विवाह न करनेकी प्रतिज्ञा करता है। अन्नूके रूपमें, उपन्यासकारने एक स्वस्थ चरित्र प्रस्तुत किया है।

नारी पात्रोंमें प्रभावशाली चरित्र है—'रमा' का। वह 'अन्नू' की ओर आकर्षित है; उसकी कविताओंकी प्रशंसक है, पर उसकी कविताओंको निराश व्यक्तिकी अभिव्यक्ति मानकर उसको संघर्ष और स्वाधीनताके गायनका परामर्श देती है। वह 'अज्ञेय' के नारी-पात्रोंसे सर्वथा भिन्न है। उसका सृजन भारतकी मिट्टीसे हुआ है। उसकी रगोंमें भारतीयताका रक्त प्रवाहित होता है। यद्यपि इस चरित्रका पूर्ण विकास नहीं हुआ, फिरभी उसका लघु-विकास स्तुत्य है। वह बहुतसे उपन्यासोंकी नारियोंसे अधिक सबल तथा सजीव है। वह भले घर तथा ब्राह्मण कुलोत्पन्न बालिका है। उसका यह विश्वास है, पर 'सिया' के आत्मविश्वास तथा दृढ़ताके सामने नगण्य। यदि पतिने उसको तलाक़ दे दिया तो वह क्या करेगी ? के उत्तर में उसके शब्द देखने योग्य हैं: "तो अपनी माँके साथ खेतोंपर काम करते हुए जीवन बिता दूँगी। दो अच्छर पढ़ लिये हैं, सिलाई सीख लूँगी। एक बात और है कि हमारी जातिमें दूसरा विवाहभी हो जाता है" (पृष्ठ ८०)। ये शब्द नारी जातिके विश्वास, दृढ़ता, आत्मगौरव और आत्मनिर्भरताके प्रतीक हैं। 'सिया' नारी-समाजका गर्व और गौरव है। वह उपन्यासकारकी मानस-कृति है।

'बानेसुरा' मानव-समाजका अन्धकारमय पक्ष है। वह प्रत्येक बुराई को प्रवर्तित करता है। सियाके साथ बलात्कार करता है। उसको पुलिस-दरोगा द्वारा अपमानित करानेका प्रयत्न करता है। उसको बदनाम करनेके लिए उसके पतिको झूठा पत्र लिखवाता है। वह मानवके कलंक और दानव-पक्षका प्रतीक है। वह यथार्थमें आजके जीवनको प्रकट करता है।

प्रस्तुत कृतिका उद्देश्य मानवके स्वरूपका उद्घाटन, उसके सद्-असद् रूपोंका विश्लेषण, उसकी वैयक्तिक तथा सामाजिक चेतनाका स्पष्टीकरण और भारतके सामाजिक तथा राजनीतिक यथार्थका प्रस्तुतीकरण है। गान्धीवाद और काँग्रेसजनोंके प्रचारके फलस्वरूप यह तथ्य सामने आने लगा है कि भारतकी राजनीतिक स्वाधीनता गान्धी तथा नेहरूजीके नेतृत्वमें संचालित काँग्रेसके प्रयत्नस्वरूप ही प्राप्त हुई। दूसरे, भारतकी क्रान्ति अहिंसक और रक्त-विहीन क्रान्ति है। मोहनके शब्दोंसे इन दोनों मान्यताओंका निराकरण होता है। भारतके राजनीतिक आन्दोलनमें गान्धीजीकी सफलता एक है। वे राजाके महलसे लेकर गरीबकी झोंपड़ीतक देशभक्तिकी भावना उत्पन्न करनेमें सफल हुए और उनकी विफलता है, उनके अनुयायियों द्वारा ही, उनकी मान्यता तथा विश्वासोंकी अवहेलना। काँग्रेसियोंने गान्धीवादको अपना अस्त्र बनाया है, विश्वास नहीं। मंत्रीके पदतक पहुँचनेकी वह नसैनी बनकर रह गया है, राष्ट्रके समाजवादी स्वरूपके निर्माणका अजेय साधन नहीं। काँग्रेसके पच्चीस वर्षके शासनमें भ्रष्टाचार बढ़ा है, घटा नहीं। जनताकी परेशानियाँ संवर्धित हुई हैं, कम नहीं। काँग्रेसजन पद-लोलुप हुए हैं, जनताके सेवक नहीं बने। उन्होंने समूची जनतामें देशभक्तिकी भावना जगानेमें भी सफलता प्राप्त नहीं की। इनके अधिकतर कार्य दलगत अथवा व्यक्तिगत लाभसे प्रेरित हैं, देशभक्तिकी भावनासे नहीं।

उक्त सामाजिक यथार्थको अभिव्यक्त करना प्रस्तुत उपन्यासका मुख्य उद्देश्य है।

—डॉ० नत्थनसिंह

नेपालेश्वर

लेखक : विराज; प्रकाशक : आत्माराम एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली। पृष्ठ : ३४४; डिमाई, ७३; मूल्य : २०.०० रु०।

'नेपालेश्वर' उपन्यास हमारे पड़ौसी देश नेपालके इतिहासके एक अंशको आधार बनाकर लिखा गया है। मोटे तौरपर इसका घटनाचक्र विक्रम संवत् १८३२ से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकर विक्रम संवत् १९१० तक फैला हुआ है। यदि ठीक-ठीक कहा जाये, तो यह एक उपन्यास न होकर दो उपन्यास मिले हुए हैं। या कहना चाहिये कि एक ही उपन्यासके दो भागोंको इकट्ठा कर दिया गया है। पहले भागका नायक रणबहादुरशाह है, जबकि दूसरे भागका नायक जंगबहादुर है।

महाराज रणबहादुरशाह भावुक, सनकी और उच्छृङ्खल राजा हैं। समाजके नियमोंतकको मानकर वे नहीं चलते। स्वयं क्षत्रिय होकर वे तीसरा विवाह एक ब्राह्मण कन्यासे कर लेते हैं। इस तीसरी रानीपर रीझकर वे उसके भावी पुत्रको राजसिंहासनका उत्तराधिकारी बनानेका वचन देते हैं। पर जब उसे सिंहासनपर बिठानेका कोई सीधा उपाय दिखायी नहीं पड़ता, तब स्वयंही अपने गुणी, निर्दोष ज्येष्ठपुत्र रणोद्दीपशाहकी हत्या करवा देते हैं। राजदरबार क्षुब्ध हो उठता है। राजाको गद्दीसे उतारकर देशसे निकल जानेको विवश किया जाता है। वे भारतमें काशीमें आकर रहते हैं। उनकी रानी त्रिपुरसुन्दरीदेवी, जिसके पुत्र रणोद्दीपशाहकी उन्होंने हत्या करवायी थी, पतिव्रता होनेके नाते उनके साथ आती है। काशीमें रहकर अंग्रेजोंसे साँठ-गाँठ करके रणबहादुरशाह नेपालके राजसिंहासनपर पुनः अधिकार कर लेते हैं। पर अन्तमें वे हत्यारेकी खुखरीका शिकार बनते हैं।

उपन्यासके उत्तरार्धके नायक जंगबहादुरको नेपालका नेपोलियन कहा जा सकता है, पर केवल इस अर्थमें कि बिल्कुल दीन-हीन स्थितिसे उठकर उसने अपने दुस्साहस और सूझ-बूझसे सारे नेपालकी शासन सत्तापर अधिकार कर लिया। उसकी धूर्तता इस तथ्यसे स्पष्ट है कि राजसत्ता पूरी तरह हथिया लेनेके बादभी उसने राजवंशके सुरेन्द्रवीर विक्रमशाहको ही राजा बनाये रखा और उनकी स्थिति 'शानदार कैदियों' की-सी बना दी। वह स्वयं प्रधानमंत्री रहते हुए ही उन 'कैदियों' का काराध्यक्ष बन बैठा।

और इस राजसत्ताको हथियानेके लिए इस जंगबहादुरने क्या नहीं किया? अपने आश्रयदाता, उपकारी मामा मातबरसिंहकी उसने स्वयं हत्या की; औरभी, जिस-जिस टहनीका सहारा लेकर वह ऊपर चढ़ता गया, उसीको काटता चला गया। आखिर उसकी टक्कर रानी राज्यलक्ष्मीदेवीसे हुई, जो जंगबहादुरकी ही तरह विवेकहीन और सत्तालोलुप थी; उसीकी तरह हिंस्र थी। पर बड़ा गुंडा छोटे गुंडेको हरा देता है। इस सत्ता-संघर्षमें राजमहलमें हुई निर्मम हत्याएँ सचमुचही रोंगटे खड़े कर देनेवाली हैं।

इस रोचक कथावस्तुका निर्वाह करनेके लिए जो पात्र उपस्थित होते हैं, वे भी असाधारण हैं। रणबहादुरशाह और त्रिपुरसुन्दरीके अलावा राजाके चाचा बहादुरशाह हैं, जो राजापर भी ऐसा कठोर शासन रखते थे कि अन्तमें रुष्ट होकर राजा उन्हें कैद ही करवा लेता है। रानी अनुरागलक्ष्मी है, जिसे इतना रूप मिला था कि संसारमें कमको ही मिला होगा; पर जो शीतलाके कारण उस रूपको गँवा बैठी और जिसने कुरूप होकर जीनेके बजाय आत्मघात कर लेना भला समझा। भीमसेन थापा, जिन्होंने लगभग तीस बरसतक प्रधानमंत्री रहकर नेपालपर निष्कंटक राज्य किया, अन्तमें अपमानित, उत्पीड़ित होकर कारागारमें आत्महत्या करनेको विवश हुए। मातबरसिंहको, जिन्हें आग्रहपूर्वक प्रधानमंत्री बनाया गया था, राजमहलमें बुलाकर गोली मार दी गयी। रानी राज्यलक्ष्मीदेवीने अपने गुप्त प्रेमीकी हत्यासे क्षुब्ध होकर नेपाल दरबारके सभी भारदारोंको गाजर-मूलीकी तरह कटवा डाला। साम्राज्यलक्ष्मीदेवी, जो अंग्रेज़ोंसे टक्कर लेनेकी योजना बना रही थीं, अंग्रेज़ोंके विष-प्रयोगकी शिकार हुईं। बाबा हरिहरनाथ हैं, जो भारतके सन् १८५७ के महाविद्रोहमें नेपालकी सहायता प्राप्त करनेके लिए, भारतसे नेपाल और नेपालसे भारत आया-जाया करते थे। अंग्रेज़ रेज़ीडेंट हैं, जो हर उथल-पुथलका लाभ ब्रिटिश साम्राज्यके हितके लिए उठानेको तत्पर रहता था। गगनसिंह है, जो रानीसे अवैध प्रेम करता था और जिसे इसका मूल्य अपने प्राण देकर चुकाना पड़ा। इन सभी पात्रोंने इस उपन्यासमें ऐसी चकाचौंध उत्पन्न कर दी है कि पाठक स्तब्ध, मुग्ध रह जाता है।

लेखकने उपन्यासके लिए एक रोमांचकारी कथा चुनी है, जिसमें सत्यका आधार होनेके कारण प्रबल आकर्षण है। उसका निर्वाह बहुत सुन्दर ढंगसे हुआ है। सरल भाषा और सजीव वर्णनोंके कारण पाठक, नदीमें नावकी तरह अनायास बहता चला जाता है और उन चित्रविचित्र दृश्योंको देखता है, जिनकी उसने पहले कल्पना भी नहीं की थी।

'नेपालेश्वर' सचमुचही एक बहुमुखी लेखकका महान उपन्यास है, जो पाठकको एक ऐसे विचित्र लोकमें, विचित्र घटना चक्रमें पहुँचा देता है, जो यदि सत्य न होता, तो एकदम अविश्वसनीय होता।

पुस्तकका आवरण, सज्जा और छपाई अच्छी है, किन्तु यह प्रेसके भूतोंकी मारसे बच नहीं सकी है।

—केवल अग्निहोत्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गरीबोंसे आगे

लेखक : बलदेवदत्त शर्मा; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य संसार, नयी सड़क, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १३६; क्राउन ७२; मूल्य : ५.०० रु० ।

यह आदर्शवादी उपन्यास हरियाणा प्रान्तके एक गाँवसे सम्बन्धित है । इसे आंचलिक उपन्यासकी कड़ीमें रखनेका प्रयास किया गया है । इसमें गाँवके एक जमींदारकी कहानी है जो जमींदारी उन्मूलनके बाद गाँवकी किसान जातिका उद्धार करना चाहता है, किन्तु स्वार्थकी प्रबल झंझा उसे रोके रहती है । परिस्थितियोंसे लाभ उठानेमें पाप नहीं है किन्तु परिस्थितियोंके लाभके लोभमें पड़कर आत्माका हनन करना पाप है । और यही कारण है कि इस जमींदारको अन्तमें आत्महत्या करनी पड़ती है ।

गाँवके जमींदार चौधरी भोपालसिंह व्यवहार-कुशल, सहृदय और बुद्धिमान हैं । जमींदारी उन्मूलन अधिनियमसे बहुत कुछ अप्रभावित । गाँवके सरपंचके रूपमें वहाँकी कायापलट कर दी । इसमें उन्हें माँगेराम जैसे वयोवृद्ध और जयनारायण जैसे नवयुवकसे काफी सहायता मिली । ग्राम-विकास कार्यक्रमके अन्तर्गत दूर-दूर तक पक्की सड़कें बन गयीं, स्कूल खोले गये, ट्यूबवेल लगाये गये तथा सामूहिक खेती की गयी । फिरभी परम्परागत सामन्तीसे चौधरी साहब बचे हुए नहीं थे । ऊपरसे चापलूसी और खुशामद नहीं चाहते थे किन्तु भीतरसे उन्हें इनकी बड़ी इच्छा रहती थी । सामूहिक खेतीसे जो गेहूँ पैदा हुआ, उसे उन्होंने बाजार-भावपर बेचकर गाँववालोंमें बाँट दिया किन्तु कुछ लाभ कमाने हेतु उन्होंने आढ़तीसे इसे अगले महीने महँगे भाव पर बेचनेके लिए कहा । इससे उन्हें साढ़े चार हज़ार रुपये का लाभ हुआ । यह बात मांगेराम, जयनारायण और उनके पुत्र गोवर्धनको मालूम हो गयी । पिता-पुत्रमें झड़प हुई और पत्नीने भी काभी अपमान किया । चौधरी साहब इस अपमानको सहन न कर सके और गाँवके एक तालाब पांचालसरमें कूदकर उन्होंने आत्महत्या कर ली । फिरभी चौधरी भोपालसिंह बड़ेही सहृदय, भावुक, बुद्धिमान, विचारशील और गाँवका हित करनेवाले व्यक्तियोंमें गिने जा सकते हैं ।

जयनारायण एक कर्मठ युवक है, वह आदर्शवादी है, जनसेवक है, चित्रकार है । गोवर्धन चौधरी भोपालसिंहका दूसरा पुत्र है । कृषिमें डिग्रीप्राप्त, सुलझा हुआ और विचार-शील युवक है । उसमें जमींदारीकी बू किंचित मात्र नहीं है । इसी प्रकार मांगेराम, सूरतसिंह, प्रभुदयाल, माधोप्रसाद, विद्यासागरके चित्रण भी सुन्दर हैं । नारी पात्रोंमें धनवन्ती और जयन्तीके चरित्र महत्त्वपूर्ण हैं । धनवन्ती जमींदारकी पत्नी, पर व्यवहारकुशल । जयन्ती शहरकी लड़की होते हुए भी मर्यादामें रहनेवाली लड़की है । यही कारण है कि गाँवके लड़के गोवर्धनके प्रति आकृष्ट होकर और विवाहके पश्चात् अपने-आपको गाँवकी नारीके रूपमें ढाल लेती है ।

उपन्यासमें सब कुछ आदर्श-प्रेरित है । शिल्प-विधानकी दृष्टिसे इसकी वर्णन-प्रणालीमें बहाव है और रोचकता है । संवादोंमें कहीं-कहीं अस्वाभाविकता खटकती है । कहीं-कहीं ग्रामीण शब्दोंका प्रयोग हुआ है जो सटीक है । समग्र रूपमें यह उपन्यास अपने ढंगका अच्छा उपन्यास है और सामुदायिक विकासके पुस्तकालयोंके लिए उपयोगी ।

—डॉ० कृष्णकुमार गोस्वामी

कहानी संग्रह

खत्म होनेके बाद

लेखिका : मणिकामोहिनी; प्रकाशक : ज्ञान भारती, १७५ ई, कमलानगर, दिल्ली-७ । पृष्ठ : १२८; क्राउन ७२; मूल्य : ६.५० रु० ।

साठोत्तरी पीढ़ीके साथ-साथ हिन्दी कहानीमें जो सबसे अधिक परिवर्तित चीज नज़र आयी, वह थी दाम्पत्य-जीवन की संवेदनाओंका सूक्ष्म वर्णन । दाम्पत्यका जो आदर्श या मान्य रूप इससे पूर्व साहित्यमें चला आ रहा था, उसको इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीढ़ीने खत्म करके स्त्री-पुरुषके बीच बदलते सम्बन्धोंकी बात उठायी। पति-पत्नीके बीच बनते-टूटते सम्बन्धोंको यथार्थका रंग दिया। दूधनाथसिंह या ज्ञानरंजनही नहीं, मणिकामोहिनीकी चर्चा भी हम इसी संदर्भमें कर सकते हैं। बल्कि यथार्थ तो यह है कि मणिकाने ही दाम्पत्यको 'गहराई' और समझदारीसे छुआ और 'एक भोगे हुए जीवन' (सही तौरपर भोगा हुआ) के रूपमें उसे प्रतिपादित किया। ऐसीही कुछ कहानियोंका यह संग्रह 'खत्म होनेके बाद' है जो स्त्री-पुरुष और पति-पत्नीके सम्बन्धोंकी बात सचमुच वहींसे शुरू करता है, जहाँसे ये सम्बन्ध टूटते होते हैं या टूट चुके होते हैं।

इस संग्रहकी तेरह कहानियोंमेंसे बारह कहानियाँ 'विवाह पूर्व' और 'विवाहके पश्चात्' की मिली-जुली कहानियाँ हैं। अधिकतर कहानियाँ यही दर्शाती हैं कि आम आदमी शादीसे पूर्व 'प्रेम' तो बहुत अच्छी तरह कर लेता है, प्रेम निभाता भी है, पर शादीके बाद वह जैसे सबकुछ भूल जाता है और 'कहीं और' प्रेम करनेकी ताकमें लगा रहता है, क्योंकि औरत मर्दके लिए आग तो होती है पर अपनी नहीं, औरोंकी। और इस स्थितिमें आकर पति, पत्नीको घरका एक फालतू सामान समझ लेता है और पत्नी, पतिको 'बस यों ही' लेने लगती है। इस तरह जब 'फालतूपना' और 'यों ही' का बोध ज्यादा बढ़ जाता है, तब सम्बन्धोंकी बात बड़ी तेजीसे उठने लगती है। दुराव और अलगावकी स्थिति भी उसी तेजीसे बन आती है। इस तथ्य और सत्यको ये कहानियाँ अधिक सूक्ष्मता और सूझबूझसे पकड़ती हैं, यह निस्संदेह कहा जा सकता है। सम्भव है इसके पीछे एक अशेष अनुभव हो जो बार-बार इन कहानियोंको एकही जगहपर चक्कर लगवाता रहता है और सबका अन्तभी एकही जगह नजर आता है—अलगाव।

सम्बन्धोंका टूटनाभी एक विचित्र बात है। कुछ सम्बन्ध होते हैं जो एक झटकेके साथ टूट जाते हैं और कुछ सम्बन्धोंके धागेको खींच-खींचकर तोड़ना पड़ता है या आहिस्ते-आहिस्ते डोरी खिचती जाती है और अनजानेही एक दिन सम्बन्ध टूट जाते हैं। पति-पत्नीका सम्बन्धभी कुछ इसी तरहका है। यह झटकेसे कभी नहीं टूटता, टूटनेमें समय लेता है। कई बार तो ऐसाभी होता है कि भीतरसे ये सम्बन्ध टूट चुके होते हैं और बाहरी तौरपर दिखावा मात्र बचा होता है। 'एकही बिस्तरपर' की नायिका-पत्नी की अनुभूति कुछ इसी तरहकी है। इस अनुभूतिके कारणही वह अपनेको पूर्ण पाकर भी एकदम 'निरर्थक' महसूस करती है साथी। पतिकी बाहें जब उसे कसती होती हैं, वह एक अनावश्यक भार महसूस करती रहती है और जब पतिके हाथ उससे अलग हट जाते हैं, बिना किसी क्रियाके, तो न उसे अच्छा लगता है, न बुरा। बल्कि वह महसूस करती है कि पतिके करवट बदल लेनेसे वे दोनों (पति-पत्नी) बँटकर अलग-अलग बिस्तरोंपर हो गये हैं।

यह बिस्तरका अलग होना सचमुच बिस्तरका अलग होना नहीं है बल्कि सम्बन्धोंका अलगाव है यह। इस अलगावको 'लेखिका' औरभी खूबीसे प्रकट करती है 'बोरियत' में या 'विषयान्तर' में या 'खत्म होनेके बाद' में। 'बोरियत' और 'विषयान्तर' में बहुत हदतक समानता है—चरित्रों और विचारोंकी। पर 'खत्म होनेके बाद' में पति-पत्नीके बीच एक तीसरा पुरुषभी है, जिसे साधारण शब्दोंमें प्रेमी कहा जा सकता है। यहाँ नायिकाकी मनःस्थिति 'सेक्स' को भी तिरस्कृत करनेकी है, जबकि दाम्पत्य सुखके लिए यह अनिवार्य है। पर इसका कारण शायद एकही है कि उनके (पति-पत्नी) के बीचका सम्बन्ध खत्म हो चुका है और इसके खत्म हो जानेके बाद वह शारीरिक तौरपरभी खत्म हो गयी है। उसकी यौनेच्छाएँ सुप्त नहीं हैं पर दबी जरूर हैं। उसका यह ठण्डापन उसका पति भलेही सह जाता हो, प्रेमी नहीं सह पाता और वह उसे पहलेकी तरह 'हाट' चाहता है। इसके लिए कोशिशें भी करता है और सफलभी होता है। क्योंकि उसकी हरकतोंसे प्रभावित हो नायिका सोचने लगती है—दिल चाह रहा था कि अपनेको उससे छुड़ानेके लिए जबरदस्ती न करूँ। आखिर जब वह भावुक हो सकता है तो मेरा मनभी तो डाँवाडोल हो सकता है! 'बहने' का अधिकार क्या सिर्फ पुरुषको है?' जब इस तरह बहनेकी स्थिति बन आती है तब नायिका सोचती है अपने सम्बन्धोंकी बात और पतिकी कमियोंकी बात—'मेरा मन हुआ, उससे मैं अपने पतिकी बुराई करूँ।' उसकी इच्छा है कि विवाहित प्रेमीभी अपनी पत्नीकी बुराई करे। पर वह ऐसा नहीं करता तो नायिका विस्मित होती है—मुझे लगा वह मूर्ख है, बेहद मूर्ख जो अपनी पत्नीकी कमियोंका ब्यौरा मेरे सम्मुख पेश नहीं कर रहा। उसे नहीं मालूम ऐसा करनेसे ऐसे समयमें दोनोंको नैतिक साहस मिल सकता है।

नायिकाका यह सोच अपने सम्बन्धोंसे, पति-पुरुषसे, घर-गृहस्थीसे पलायनका सीधा नतीजा है। हालाँकि वह जानती है कि वह इससे भाग नहीं सकती, वह बुरी तरह इससे बँध चुकी है और अभी, शादीके इतने वर्षों बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने पूर्व-प्रेमीसे जो कुछ कह रही है, गलत, झूठ, फरेब ! और तब जब भावुकताके घेरेसे अलग आकर प्रेमी कहता है 'एक बात कहूँ ? आपको बुरा लग सकता है....मैं अपनी पत्नीको बहुत प्यार करता हूँ और मेरा गृहस्थ जीवन बहुत सुखी है'—तब वह उसे बेहद मूर्ख समझती है और कहती है—'मैंभी आपको बता दूँ कि मैं अपने पतिको बहुत प्यार करती हूँ ।'

यों यह झूठ अतीतको झुठलाकर वर्तमानको अपनानेका एक तरीका है। और इस तरह यह कहानी दोहरे स्तरपर चलती है। एक तरफ विवाह-पूर्व प्रेमकी अनुभूतियाँ हैं, जिसे एकही स्तरपर प्रेमी-प्रेमिका दोनों महसूस करते हैं। जिसमें कोमलता है, भावुकता है, स्वप्न है। दूसरी तरफ 'वैवाहिक' कड़ुवाहटें हैं, ठंडापन है, तिक्तता है, ऊब है और उससे छुटकारा पानेकी छटपटाहट है।

'खत्म होनेके बाद' एकही विस्तरपर, बोरियत, तलाश, जलांघ पूरक और विषयान्तर कहानियाँ जीवनको अति आधुनिक मानकर चलनेवाले पति-पत्नी या प्रेमी-प्रेमिकाके बाहरी सम्बन्धोंकी चर्चा उनके अव्यक्त विचारोंके माध्यमसे करती हैं, साथही जिस सूक्ष्मताके साथ ये आन्तरिक तनाव, दुराव और सतही लगावको प्रकट करती हैं, वह अन्यत्र दुर्लभ है। सम्भव है कि इन कहानियोंपर यह दोष लगाया जाये कि ये एकही मनःस्थितिकी कहानियाँ हैं, एकही भाव-चरित्रकी कहानियाँ। पर इसके साथही इस बातसे भी असहमत नहीं हुआ जा सकता कि ये कहानियाँ अगर एकही मनःस्थितिको वर्णित करती हैं तबभी उन्हें गहराईसे कुरेदती-परखती हैं। जड़तक किसीभी बातको छूती हैं। इन्हें पढ़कर हम 'कुछ' महसूस कम करते हैं, भोगते ज्यादा हैं और इस 'भोग' की स्थितितक पहुँचाना ही इन कहानियोंकी सार्थकता है। इन कहानियोंमें न तो सचमुचमें कहीं 'विषयान्तर' ही है और न बुनावट ही, न निरर्थकता ही। एक सहजता है जो बराबर हर कहानीमें है।

इसके विपरीत लेखिकापर एकरसताका दोष लगाया जा सकता है। इन कहानियोंको पढ़ते हुए एकही बात समझमें आती है कि लेखिकाके विचारोंका दायरा बहुत सीमित है। वह एक खास बिन्दु पर ही अटकी हुई है जहाँसे न तो कहीं एक कदम आगे बढ़ती दिखती है न पीछे हटती ही। मानाकि दाम्पत्य सचमुचमें एक बहुत बड़ा दायरा है पर एक लेखकके लिए पति-पत्नीके रिश्तों, प्रेमी-प्रेमिकाके कटाक्षों और घरेलू कलहोंसे ऊपर उठनाभी आवश्यक होता है। अगर वह ऐसा नहीं करता, अपने एकही अनुभवको बार-बार दुहराता रहता है तो उसे 'चूका हुआ' मान लेनेमें विशेष असुविधा नहीं होती। हालाँकि इस संग्रहमें सभी कहानियाँ इसी तरहकी हैं कि एकही चीजका बार-बार पढ़नेकी-सी अनुभूति पैदा होती है फिरभी मणिकामोहिनीपर तत्काल यह दोष पूरे तौरपर नहीं थोपा जा सकता कि वे एक 'दायरे' मेंही चल रही हैं। उनकी चेष्टा है कुछ बाहरी दुनियाँके साथभी चलें, कुछ दाम्पत्यसे अलग जीवनको भी वे समेटें। कहानी 'एक मेरा दोस्त' कुछ इसी तरहका आभास देती है। विश्वास है, लेखिकाका यह 'दोहराव' आगे चलकर समाप्त हो जायेगा।

—सुरेन्द्र तिवारी

बर्फके रंगका शरीर

लेखक : प्रणवकुमार वन्द्योपाध्याय; प्रकाशक : इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, ११३/४, पश्चिमी आजाद नगर; दिल्ली-५१।

युवा-पीढ़ीके कथाकारोंके बीच प्रणवकुमार वन्द्योपाध्यायका नाम भी अपरिचित नहीं रहा है। थोड़ेसे समयमें प्रणवने काफी लिखा और अच्छा लिखा, इसमें सन्देह नहीं है। और सबसे बड़ी बात यह है कि प्रणवने अभीतक अपने को दोहराना शुरू नहीं किया है, जबकि युवा-कथाकारोंके बीचभी बहुतसे लोग दुहरावसे ग्रस्त हैं।

प्रणवकुमारकी अधिकतर कहानियाँ व्यक्तिकी उलझी मानसिकताकी कहानियाँ हैं। यह मानसिकता आजकी युवा-पीढ़ीकी है। इसलिए कहा जा सकता है कि प्रणवकी अधिकतर कहानियाँ पूर्णतया युवा-वर्गकी कहानियाँ हैं। युवा-वर्गका असंतोष, आक्रोश, भय, छटपटाहट कुछ कहानियोंमें प्राप्य है। प्यार, परिवार, विवाह आदि कई प्रचलित फार्मुलोंसे अलग प्रणवने कुछ नयी चीजोंको छुआ है, इसमें संदेह नहीं। उदाहरणके तौरपर 'बर्फके रंगका शरीर' नामक संग्रहकी कहानियोंको लिया जा सकता है। शीर्षक कहानी 'बर्फके रंगका शरीर' ही एक अछूती मानसिकताकी कहानी है। किशोरी पम्मीका 'बिल्लियों' के प्रति अटूट प्रेमही इस कहानीका 'कथ्य' है। पम्मी बिल्लीके बच्चोंके प्रति अधिक मोहासिक्त है और घरमें मम्मीके विरोधके बावजूद वह इनका मोह नहीं त्याग पाती। एक दिन एक बच्चा उसे काफी अस्वस्थ नजर आता है और वह चाहती है कि मम्मीसे कहकर उसके लिए कुछ दवा वगैरह मँगवाये। पर उसे पता है कि बिल्लीका नाम सुना नहीं कि मम्मी भड़क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उठेंगी। या फिर इस कदर खामोशी हो जायेगी कि उनके सामने खड़ा नहीं हुआ जा सकता।' इसलिए वह मम्मीसे कुछ नहीं कह पाती ! सफेद रंगकी बिल्ली अंतिम साँस लेती रहती है। वह जब कुछ कर नहीं पाती तो आकर चुपकेसे उस बिल्लीके पास बैठ जाती है और दोनों हथेलियोंसे हलकेसे सफेद बिल्लीको पकड़ लेती है। बालोंके नीचे दबा उसका शरीर कुछ देरके लिए हलकेसे थर्राया, फिर एकाएक पत्थर बन गया। तब बालोंके बावजूद उसका शरीर बहुत ठण्डा लग रहा था। बिलकुल बर्फ जैसा।

यह कहानी बड़ी सतर्क दृष्टिकी कहानी है। मरकर बिल्लीका शरीर बर्फके रंगका कम होता है, मम्मीके प्रति पम्मीका मोह, लगावका रंग ज्यादा बदलता है। बिल्लीके प्रति की गयी उपेक्षा, पम्मी अपने प्रति की गयी उपेक्षा मानती है और तभी वह इन लोगोंसे—मम्मीसे, चन्दर (नौकर) से सबसे विमुख होती है। इसे कैशोर्य-भावुकता कहकर भलेही टाल दें, पर इससे इंकार नहीं किया जा सकता कि किशोर-मानसिकतामें यह भावुकताही ज्यादा सही है।

किशोर-वयकी एक और कहानी है—प्रेमिका। किशोरावस्थामें प्रेम एक अद्भुत चीज़ है। पर यह प्रेम 'भयहीन' नहीं होता, 'भययुक्त' होता है। 'प्रेमिका' का किशोर नायक केशु चौदह वर्षकी उम्रमें पहुँचकर अपनेको छोटा माननेको तैयार नहीं है और वह अपनेको बड़ा मानकर सिगरेटभी पीता है, प्यारभी करता है। पर दोनोंही स्थितियों में सतर्क रहता है, डरा रहता है। वह तोषीसे प्रेमकी शुरूआत करता है— तोषी, जो सातवीं या आठवींकी छात्रा है। तोषी अपनी उम्रसे कहीं अधिक निडर है, शायद इसलिए कि लड़कियाँ उम्रसे पहलेही ज्यादा समझदार हो जाती हैं। वह निडरताके साथ केशुसे मिलती है। पर वह डरपोक है और तोषीकी नजरमें कायरभी, तभी वह 'चची' को देखकर या 'बड़का' (बड़ा भाई)को देखकर तोषीको छोड़कर भाग खड़ा होता है।

यह किशोरावस्था जहाँ अत्यधिक ढीठ है, वहीं भावुक और भययुक्त भी। केशु और तोषीका यह प्यार आजकी एक समस्या है। इस उम्रमें 'प्रेम' और 'सेक्स' के प्रति व्यक्ति अत्यधिक उत्सुक होता है, पर अभीतक हमारा समाज, हमारे विचार ऐसे नहीं बने हैं कि हम उनकी इस उत्सुकता को सही दिशा दे सकें। तभी होता यह है कि 'लुकछिप' कर मिलना चलता रहता है और किसीभी परिचितका चेहरा नजर आतेही 'केशु' भागता है और तोषी उसे कायर समझती है। अगर इस किशोर-मानसिकताको सही ढंगसे किसी तरह ... तो शायद ऐसा न हो !....पर ? पर इसका कोई समाधान लेखकके पासभी नहीं है और तभी वह सिर्फ मन:स्थितिका वर्णन करके ही रह गया है।

अगली कहानी 'क' में लेखकने एक प्रयोग करनेकी चेष्टा की है। नाटकके चरित्रोंकी तरह उसे पहले कहानीके चरित्रोंकी रूपरेखा देकर उनसे पाठकका जैसे परिचय कराया है। ये चरित्र एक व्यक्तिके मृत-देहके इर्द-गिर्द बैठे आपसी बातोंमें निमग्न हैं। और जैसाकि होना चाहिए मृत व्यक्तिको 'अच्छा-बुरा' सिद्ध करनेकी कोशिशमें निमग्न हैं और तभी पुलिस आकर उस मृत देहको उठा ले जाती है और लोग आपसी बातोंमें किसी निष्कर्षपर नहीं पहुँच पाते हैं।

यह कहानी 'कथ्यहीनता' की बात उठा सकती है। 'कथ्यहीनता' इधरके कुछ लेखकोंने खासतौरसे अपनायी है और प्रणवकी कुछ कहानियाँभी इस तरहकी हैं। पर उनकी कथ्यहीनता 'अकहानी' तक नहीं पहुँचती बल्कि एक विशेष समय या किसी खास चरित्रकी मानसिकतामें ही उलझी रहती है।

व्यक्तिगत उलझनोंके साथ पारिवारिक सम्बन्धोंकी बातभी कुछ कहानियोंमें उठायीभर गयी है, पर एक तटस्थता के साथ। ध्वस्त, प्रथम पुरुष, वह जनमेजय था, युद्धमन आदि। 'युद्धमन' और 'शरणार्थी' से युद्धसम्बन्धी कहानियोंका भ्रमभी हो सकता है। शायद लेखकका मंतव्य यही रहा है और तभी शरणार्थीमें 'शरणार्थी' यूसुफको लेखकने ढाकासे उठाकर 'दिल्ली' में डाल दिया है। वह जगह-जगह अपने पुराने परिचितोंके पास चाहे-अनचाहे रूपसे पहुँचता रहता है, यह सोचकर कि उसे कोई काम मिल जाये। पर ऐसा नहीं होता। उसे कहीं काम नहीं मिलता। वह अपने जिस दोस्तके यहाँ टिका हुआ है वह भी अब उससे ऊब चुका है। यूसुफ अपने बीवी-बच्चोंको अगरतल्ला शरणार्थी कैम्पमें छोड़कर दिल्ली आया है और दिल्लीसे निराश होकर वह फिर अगरतल्लाही लौट आता है। लौटते हुए उसके मनमें है कि पता नहीं फिर कभी वह ढाका पहुँच पायेगा या नहीं।

इसी तरह 'युद्धमन' में भी 'ढाका' से भागा हुआ ... बाल हिन्दुस्तानमें पहुँचकर शरणार्थी बना हुआ है। लोगोंके सामने कई तरहसे ढाका-कथाकी चर्चाएँ करता है और उसकी बातोंके बीच एक वतनपरस्त व्यक्तिकी झलक आता है। वास्तवमें चाहे 'युद्धमन' हो या शरणार्थी इन दोनोंका नायक-व्यक्ति युद्धसे, उतना त्रस्त नजर ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आता, जितना अपने सम्बन्धोंसे। ये सम्बन्ध चाहे 'हिन्दुस्तान' वाले हों या पाकिस्तानवाले, इससे कोई खास अन्तर नहीं पड़ता। इनको देखकर बस इतना ही महसूस होता है कि ये दोनों तरफसे सताये हुए लोग हैं। और सताये हुए लोगोंके चरित्रको उभारनेके लिए लेखकने संवेदनाओंको जिस तरह 'सहानुभूति' के साथ जोड़ दिया है, वह औचित्य-पूर्ण नहीं लगता। मानाकि इस तरहसे एक विगलित करुणा उपजानेमें लेखक समर्थ हो सका है, पर व्यक्ति-निष्ठाको उसने तोड़ा है। व्यक्तिको समाप्त करनेका यह एक सीधा तरीका है कि उसकी निष्ठाको, उसके आत्मविश्वासको खत्म कर दिया जाये। मानसिक हत्या भी इसे ही कह सकते हैं। वरना कोई कारण नजर नहीं आता कि यूसुफ फिरसे शरणार्थी कैम्पमें जाकर शरणार्थी तो अपनेको कहलाये, पर दिल्लीमें 'अकेले' कहीं टिककर कुछ न करे। वह दूसरे सैकड़ों-हजारों शरणार्थियोंकी तरह मेहनत करके अपनेको पाल भी सकता था।

बहरहाल ये कहानियाँ 'माँग' की कहानियाँ हैं। शरणार्थी देशमें आये, उनपर कुछ लिखना था, ये कहानियाँ लिख दी गयीं और इसी कारण इनमें आत्मीय अनुभूति कहीं नहीं है। साथही ये कहानियाँ प्रणवकी अन्य कहानियोंके समक्ष, जो इस संग्रहमें हैं, बनावटी वातावरणकी कहानियाँ लगती हैं। कमसे कम शरणार्थी कहानी तो पूर्णतया 'ताना-बाना' के बीच बनी हुई कहानी है। इसी तरह स्कूलके वातावरणको माध्यम बनाकरभी एक और कहानी गढ़ी गयी है—हे महाजीवन। इसमें एक लड़का है विपिन जो लड़कियोंको छेड़ता है। उसे इस हरकतके कारण स्कूलसे निकालनेकी योजना सारे मास्टर मिलकर बनाते हैं। उनकी नजरमें वह नक्सली भी है और नक्सली लड़कोंके कारण स्कूलकी इज्जत खराब होती है। शायद लेखकने नक्सलका यही अर्थ लगाया है कि जो लड़की छेड़े वह नक्सलीभी हो। एक आदर्शवादी कहानीकी तरह इस कहानीका अन्तभी होता है। जो विपिन अपनी हरकतोंसे सभी मास्टरों और हेड-मास्टरको तंग किये रहता है वही अन्तमें सड़कके किनारे एक घायल भिखारी बच्चेकी देखरेखमें मग्न पाया जाता है। इस तरह की अन्तवाली कहानियाँ जिनमें जान-समझकर किसी चरित्रका आदर्श रूप पेश किया गया हो, प्रेमचन्दके जमानेमें अत्यधिक लिखी गयी थीं और उनकी उपयोगिता तभी ज्यादा थी।

इसी तरहकी एक और चरित्रप्रधान कहानी है—'कहानी नहीं है'। 'कहानी नहीं है' की भूमिका जिस तरह लेखकने व्यक्तिगत लेखनके स्तरपर बाँधी है, पूरी कहानीमें उस भूमिकाका कहीं निर्वाह नहीं है। यहाँतक कि एक लेखकीय दावाभी लेखक प्रस्तुत करता है—आपको मेरी कहानियाँ चरित्रोंकी फोटोग्राफीही अगर लगती हैं तो इसे मैं अपना दुर्भाग्य तो खैर नहीं मानूँगा लेकिन समझ यही लूँगा कि आपके पास विवेचनकी शक्ति अभी परिपक्व नहीं है। इस अहम्पूर्ण कथनके बाद लेखकने अपनी कहानियोंका जो रूप रखा है, वहभी दर्शनीय है—ज्यादा शब्द-जाल न रचकर मैं सिर्फ इतनाही अपनी कहानियोंके बारेमें बताऊँगा कि वे कल्पना-प्रसूत हैं। जो लेखक आजभी 'कल्पना' को ही कहानी मानता हो, उसके बारेमें क्या विचार बनाया जा सकता है? फिरभी (अगर लेखक इसे कहानी कहनेकी अनुमति दे?)यह कहानी 'कहानी नहीं है' बड़ी विचित्र स्थितियोंको लेकर चलती है। लेखकका आना-जाना मिसेज स्वामीनाथनके घर ज्यादा है और उनके बच्चेके प्रति लगावभी। उसी घरमें एक क्रिस्टीनाभी है जो नौकरानी है, पर माँसे ज्यादा बच्चेको प्यार करती है। उसके बारेमें लेखकने अन्ततक एक रहस्य बनाये रखा है कि वह विवाहिता है। अन्तमें क्रिस्टीना एक दिन घर छोड़कर जाते वक्त चोरीके सामानके साथ पकड़ी जाती है। उसके टिनके बक्सेमें मिसेज स्वामीनाथनका कम्बल और शाल है। उस वक्त पता चलता है लेखकको कि वह विवाहिता है, माँ बननेवाली है। इस घटनाक्रमका दर्शक लेखक है और वह क्रिस्टीनासे कहता है—'मैं कभी सोचताभी नहीं था कि तुम चोरी कर सकती हो।'

और क्रिस्टीना प्रेमचन्दीय आदर्शमें बोलती है—चोरी किया तो उसका सजा मुझे मिलता ही था। उसपर अफसोस नहीं होता। मगर हम एक मदर बन रहा है थोड़ेही दिन बाद। अपने आनेवाले बेबीके लिए अपना कमाईसे हमने स्वेटर बनाया था, टोपी बनाया था। मेम-साहबसे हम अब यह कैसे माँगेगा वापस? हमारा बेबीको देनेके लिए हमारे पास कुछ नहीं है सर! हम बिलकुल भिखारी बन गया।

और क्रिस्टीनाकी यह घटना, यह पीड़ा 'कहानी नहीं है' को पूरी तरह एक चारित्रिक आदर्शवादी कहानी बना देती है।

इन कहानियोंके साथ एक सचमुचकी सही कहानीभी है—शगूफा। यह व्यक्ति-मनके खोखलेपनको, व्यक्तिके 'अहम्' को इतनी अच्छी तरह प्रस्तुत करती है कि अनायासही मुँहसे निकल पड़ता है—वाह! एक औरतको लेकर एक भीड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चर्चारत है। इस भीड़में कई लोग तरह-तरहसे औरत को जाननेका दम्भ भरते हैं। यहाँतक कि उसपर गलत-सही दोषारोपणभी करनेसे नहीं चूकते। जबकि ये लोग उस औरतको जानते तो नहीं ही हैं, उसे एकबार देखातक नहीं है। पर कुछ लोगोंके बीच अपनेको 'बड़ा' साबित करनेके लिए उनके 'शगूफे' चलते रहते हैं।

कहा जा सकता है, कहानीका कथ्य नया नहीं है, पर कहनेका ढंग नया है। लेखकने एक-एक व्यक्तिके 'ऐक्शन' को किसी निर्देशककी तरहही निर्देशित किया है और तभी सारी भीड़ एकसाथ अभिनय करती हुई-सी प्रतीत होती है।

यों प्रणवकी एक खूबी है कि वह एक ऐसे दलदलसे बचा नजर आता है जिसमें आजके प्रायः सभी कथाकार डुबकी लगा रहे हैं। यह दलदल है 'सेक्स' का। प्रणवकी कहानियाँ सेक्सकी कहानियाँ नहीं है। कहानियोंके अन्दर सेक्स जरूर है। पर यह कहीं अतिशयोक्तिके रूपमें नहीं है और न सेक्स लानेके लिए सेक्सका वर्णन ही है, बल्कि 'व्यक्ति-चरित्रों' की जरूरतकी पूर्तिके लिए 'सेक्स' का आवश्यक उपयोग है। कई कहानियाँ ऐसी हैं जिनमें चाहकर 'सेक्स' को घुसेड़ा जा सकता था, पर प्रणवने कहीं ऐसा नहीं किया है, इसके लिए उसकी प्रशंसा करनीही पड़ेगी।

अन्तमें इस कहानी-संग्रहकी कई कहानियोंमें जो युवा आक्रोश या 'युवा-चिन्ता' उभरकर आयी है वह अधिकतर कहानियोंमें नहीं है। शायद यह इसलिए भी कि सभी कहानियाँ कुछ अलग-अलग कथ्य लेकर चलती हैं और इसलिए उनमें कई रूप हैं, कई शिल्प है और संवेदनात्मक अनुभवका अलग-अलग संसार है। उम्मीद की जा सकती है कि प्रणवकी यह भिन्नता बनी रहेगी।

—सुरेन्द्र तिवारी

नाटक

किंग लियर

लेखक : शेक्सपियर, अनुवादक : बच्चन; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६। पृष्ठ : १७४; क्राउन ७२; मूल्य : ६.०० रु०।

'मैकबेथ', 'ओथेलो' और 'हेमलेट'—जिनमेंसे प्रथम दो रेडियो और रंगमंचके माध्यमसे जनतातक पहुँचकर अपनी सफलता सिद्ध कर चुके हैं— के बाद 'किंग लियर' के अनुवादके साथ बच्चनजीकी शेक्सपियरके सर्वश्रेष्ठ नाट्य-चतुष्ट्यको हिन्दी भाषामें प्रस्तुतकर देनेकी चिर-संचित अभिलाषा पूर्ण हो जाती है।

'किंग लियर' की गणना शेक्सपियरके सर्वश्रेष्ठ नाटकके रूपमें की जाती है। पाँच अंकोंके इस दुःखांत नाटकका कथ्य मानव-चरित्रके वन्दनीय एवं निन्दनीय–दोनों पक्षोंसे सम्बद्ध है। चरित्रगत वैभिन्नयके विश्लेषणमें विद्यमान व्यापकता, गहनता और सूक्ष्मताके साथही वैज्ञानिक तटस्थता शेक्सपियरको समयके प्रवाहमें टिक जानेवाले विश्वके प्रथम श्रेणीके साहित्यकारोंकी पंक्तिमें खड़ा कर देती है। ऐसी महान् सृजनात्मक प्रतिभाकी विशिष्ट नाट्य-कृतियोंके सफल अनुवाद करके बच्चनजीने यह साबित कर दिया है कि ऊँचाईपर बैठे हुए रचनाकारकी रचनाओंके साथ अनुवादकका रागात्मक सम्बन्ध स्थापित होना अत्यन्त आवश्यक है। यही नहीं, उसके लिए इस बातकी भी अहमियत है कि वह जिस भाषासे अनुवाद करे और जिस भाषामें करे—दोनोंपर—उसका समान अधिकार हो। अनुवादककी सबसे बड़ी सफलता तो इसमें है कि अनुवाद, अनुवाद न लगकर मौलिक लगने लगे। ऐसा उसी दशामें सम्भव है जबकि सृजनमें शब्दके स्थानको पूरी बारीकीके साथ समझ लिया जाये। ऐसा इसलिए कि शब्दके स्थूल या बाह्य रूप और उसके कोश-पर्यायको अन्तिम सत्य मानकर चलनेवाला अनुवादक मूलकी हत्या कर बैठेगा। "अनुवाद मूलका स्थान नहीं ले सकता। मूल से परिचितोंको अनुवाद हेय लगे तो अस्वाभाविक न होगा"—बच्चनजीका यह वाक्य जहाँ एक ओर अनुवादककी सीमाओंका बोध कराता है वहाँ दूसरी ओर इससे उनकी शालीनताका पताभी लगता है। वर्ना प्रस्तुत अनुवाद किसी कदर कम प्रभावपूर्ण नहीं है।

पिताके प्रति संततिकी अकृतज्ञतासे परिचित कराने वाले इस नाटकमें लियरकी दोनों पुत्रियों—गॉनेरिल और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रीगनके दुष्टतापूर्ण व्यवहारके विरोधमें तीसरी पुत्री कारडीलियाके चरित्रमें अपार पितृ-भक्तिके भावकी अवतारणा की गयी है। ग्लास्टर और उसके दो पुत्रों—एडगर और एडमंडको लेकर क्रमशः पितृ-प्रेम और पितृ-द्रोहकी प्रासंगिक कथा वस्तुतः पिताके प्रति पुत्रियोंके दुर्व्यवहारसे सम्बद्ध मूल कथाके रंगको और अधिक गहरा करनेके लिए ही नियोजित है। कथ्यका यह तो हुआ पहला पक्ष, दूसरा पक्ष है प्रेमके उत्कृष्ट एवं निकृष्ट रूपोंसे सम्बद्ध। प्रेमका प्रथम रूप प्रकट होता है कारडीलियाके आचरणमें, जो धनके प्रति अनुरक्त ड्यूक ऑफ बरगण्डीके स्थानपर, निश्छल प्रेम भावसे प्रेरित होकर फ्रांसके सम्राट्को अपने पतिके रूपमें ग्रहण करलेती है। प्रेमका घृणित रूप प्रकट होता है—गॉनेरिल और रीगनके चरित्रमें, जोकि परिणीता होकर भी एडमंडके प्रति अपनी वासना प्रकट करती हैं। "अपने विनाशके क्षणोंमें जहाँ बुरा केवल अपनी विवशता देखता है वहाँ भला किसी-न-किसी रूपमें अपने उत्सर्गकी सार्थकतासे अचेत नहीं रहता।" अनुवादके आरम्भमें 'प्रवेशिका' के अन्तर्गत प्रयुक्त बच्चनजीके ये शब्द क्रमशः गॉनेरिल और रीगन एवं किंग-लियर और कारडीलियाके निधनकी दार्शनिक व्याख्या प्रस्तुत करते हैं।

अनुवाद कितना बढ़िया और जोरदार हुआ है, शब्दोंके प्रयोगमें अनुवादक कितना सावधान रहा है, किस खूबीके साथ मूलकृतिमें निहित सौन्दर्यको उद्घाटित किया गया है—ऐसे सभी प्रश्नोंके अत्यन्त समाधानकारक उत्तर प्रस्तुत अनुवादके जरिये प्राप्त किये जा सकते हैं। 'किंगलियर' के इस अनूदित रूपमें ऐसी अनेक पंक्तियाँ मिल जायेंगी जिन्हें मूलके साथ रखकर देखनेपर, अनुवादककी अनुवाद-क्षमता-का पता लगाना आसान हो जायेगा—

(१) "नभ देवोंके लिए धराके वासी हम सब उसी तरह हैं, नटखट लड़कोंकी नज़रोंमें जैसे कीड़े-खेल-खेलमें हमको मार दिया करते वे।"

चौथा अंक, पहला दृश्य

"As flies to wanton boys, we are to the gods
They kill us for their sport."

(२) "न्यायी हैं देवता, हमारी दुर्बलताओंका शिकार हमें बनाकर दंडित करते हैं।"

पाँचवां अंक, तीसरा दृश्य

"The gods are just and of our pleasant vices make instrument to plague us."

(३) "यह नक्षत्रों, नभके नक्षत्रोंकी माया! वही हमारे व्यक्तित्वोंके निर्माता हैं।"

चौथा अंक, तीसरा दृश्य

It is the stares,
the stars above us govern our conditions.

(४) वृद्धोंके प्रति सम्मानकी यह नीति हमारे जीवनके सबसे मधुर दिनोंमें दुदियाँको हमारे लिए सबसे कटु बना देती है, हमारे सौभाग्यसे हमको इतने दिनोंतक वंचित रखती है कि हम स्वयं वृद्ध हो जाते हैं और उसका कुछभी रस नहीं ले पाते।"

पहला अंक, दूसरा दृश्य

उपर्युक्त उदाहरण हिन्दी और अँग्रेजीपर बच्चनजीके समान अधिकारको सिद्ध करते हैं। भावोंके अनुरूपही शब्दोंके प्रयोगके कारण प्रस्तुत अनुवाद मूलके समानही अपना प्रभाव छोड़ जाता है—पाठकों और दर्शकोंके मनपर।

जो पाठक अथवा रसज्ञ अँग्रेजी भाषा नहीं जानते हैं अथवा जिनकी इस भाषामें विशेष गति नहीं है, उनके लिए तो यह अनुवाद, साहित्यमें रस लेनेवाले विशिष्ट वर्गकी तुलनामें अधिक उपयोगी सिद्ध होगा। बड़ीही साफ-सुथरी, सरल और सुन्दर भाषाका आश्रय लिया गया है इस अनुवादमें। प्रेषणीयताकी कसौटीपर यह रचना एकदम खरी उतरती है। प्रांजलता, संक्षिप्तता और यथार्थता—अभिव्यक्तिके ये तीनों गुण इस अनुवादमें मिलते हैं। सामान्य जनताको ध्यानमें रखकर किया जानेवाला यह अनुवाद पाठक और दर्शकमें भी उन्हीं भावों एवं विचारोंको अंकुरित करनेमें सफल रहा है, जिनकी प्रेरणा रचनाके मूलमें है।

'किंगलियर' का यह पद्य-गद्यानुवाद बच्चनजीको हिन्दीके ऐसे साहित्यकारोंकी पंक्तिमें बिठा देता है, जो पद्यके साथही गद्य-रचनाके क्षेत्रमेंभी अपनी धाक जमा चुके हैं।

'मूलसे अनभिज्ञोंको' निश्चयही 'अनुवादसे मूलकी महत्ताका' पता लग जायेगा।

—डॉ० शान्तिलाल जैन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा किनारे बैठ

लेखक : शरद जोशी; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : १३३; क्राउन, ७२; मूल्य ५.०० रु.।

शरद जोशी अपनी प्रकृतिसे प्रयोगधर्मा कलाकार हैं। अपने व्यंग्योंमें वस्तु और शिल्पकी दोहरीतलाश करते हुए उन्हें अक्सर देखा जा सकता है। लेकिन उनका प्रिय शौक व्यंग्यमें रीति-कर्म करना है। उनकी-सी नट-मुद्रा हिन्दीके किसी व्यंग्यकारकी नहीं है। इस मानेमें उनकी उपलब्धि शीर्षस्थ है। सीधे आक्रमणकी खुश्कीसे लगाकर हँसी-मज़ाककी पिच्छल-प्रसन्न शैलीके इन दो सिरोंके बीच उन्होंने इतने नये कोण तलाशे हैं कि व्यंग्य-शिल्पकी दिशामें उनकी निर्णायक भूमिकाको नकारा न जा सकेगा।

'रहा किनारे बैठ' उनकी प्रयोगधर्मिता की शीर्ष उपलब्धि है।

प्रयोगकी बेचैनी सार्थकके साथ निरर्थक दिशाओंमें भी भटकाती है। शरद जोशीके साथभी कई बार ऐसा हुआ है कि जिन बातोंको एकऋजु स्वीकारात्मक शैलीमें स्वीकार करना ही अधिक उचित और मानवीय होता, उनपरभी जनाबने टेढ़ी निगाह ही डाली है। सिर्फ एक उदाहरण दूंगा। 'कोमलकान्त रोग और माधुरी दवाएँ' व्यंग्यमें कविराज' जैसे पारिभाषिक शब्द और औषधियोंके काव्यात्मक और मनोवैज्ञानिक नामोंको लेकर आयुर्वेदकी ही मखौल उड़ायी गयी है। सूचीपत्र देखकर दिमाग़में पैदा हुई सूझको इतना लम्बा तानना 'आराम कुर्सीपर पड़े-पड़े इन्द्रधनु रौंदने' से भी ज्यादह दिमागी एय्याशी है। लेखक और पाठकके रिश्तोंमें जो एक सहज विश्वसनीयता और आस्था होती है, वह ऐसी जगह निश्चित रूपसे खण्डित हो जाती है।

लेकिन जहाँ-कहीं स्रोतको विकृत न करते हुए उनका इस्तेमाल शैलीगत उपादानोंके लिए किया गया है, वहाँ व्यंग्यमें अनोखी काट पैदा हुई है। और विसंगतियोंकी विलक्षण लाक्षणिक आभा मिल गयी है। नौकरशाहीमें आम आदमी कितना असहाय और बेचारा है और स्वयं अफसरभी पूरे तन्त्रमें कितने अवश ढंगसे बंधा है; इसे 'अफसर' व्यंग्यमें दर्शनकी भाषा और लहजेमें कहा गया है जो अपनी खामियोंके बावजूद कलात्मक है। परमात्मा और मायाकी व्याख्यामें दार्शनिक कितने असहाय हैं? दर्शन-भाषाकी अनन्त तार्किकतामें उनकी असहायता छलक जाती है। नौकरशाहीके लिए उसका इस्तेमाल, खासकर हमारे करीबके अनुभव-संसारके विराट, असहाय और व्याख्यातीत अनुभवके लिए न केवल संगत है, बल्कि व्यंजक भी है।—'एक आत्मा है जो शरीरके रिटायर होनेके बाद नया शरीर ग्रहण कर लेती है। अफसर नहीं जाता, वह क़ायम रहता है।' नौकरशाहीकी सनातन परम्पराका दबाव जैसे इस वाक्यने कई गुना बढ़ा दिया है।

छायावादकी उत्सवधर्मी भाषा और व्यक्तिवादी रोमानकी वायवीय भाषाका प्रयोग ओढ़ी हुई फैशनेबल ज़िंदगी और नकली आभिजात्यको निरावृत करनेमें सच-मुचही एक सही औजारका काम करती है। ऐसी भाषाका सही इस्तेमाल 'सितार सुननेकी पोशाक', 'बीटलोंका संगीत सुनकर', 'उपमाओंकी उपयोगिता' वगैरहमें हुआ है—'काश तुम्हारी दाढ़ी बढ़ी होती! तुम्हारे बाल रुखे और लम्बे होते, तब तुम सितारको कहीं अधिक गहराईसे समझ पाते'—जैसे रचना विधानसे फैशनको खूबसूरतीसे छलागया है। जिससे वह बिना प्रयासके निरावृत हो गयी है। लेकिन शिल्पका बेहतरीन इस्तेमाल 'तुम कब जाओगे अतिथि' में हुआ है। इसकी भाषा दरसल प्रेम-निमन्त्रणकी रूमानी भाषा है, लेकिन विपरीत प्रसंगमें, इसके उपयोगसे स्थितिको शीर्षासन करानेका-सा लुत्फ पैदा होता है। भाषाके आग्रह और अन्दाज़का विपर्यय एक अतिरिक्त आयामकी तलाश भी बन गयी है कि अतिथि निजी भी, और परिस्थितियोंकी वज़हसे अवांछित भी, मगर रिश्ते और सभ्यताके आग्रहको देखते हुए, उसे झटक देनाभी जान पर आ रहा है। और अन्ततः मिठासभरा यह जुमला कि 'सोचो प्रिय शराफ़तभी कोई चीज़ होती है और 'गेटाउट' भी एक वाक्य है, जो बोला जा सकता है' कंगन पहने हुए सुकुमार और गोरे हाथोंसे रसीद चप्पल-सा है। एक भिन्न शिल्प 'सवालोंसे उठते हुए सवाल' में इस्तेमाल हुआ है, जहाँ गणितकी तरह यथार्थ जीवनके विपर्ययको किंचित सीधी ऊष्मामें प्रकट किया गया है। गणितकी भाषा औज़ारसे सपाट बयानी भी शिल्पकी काट बन गयी है।

एकही व्यंग्यके भीतर ललित निबन्धकार जैसी बहुमुखी तलाश शरद जोशी बराबर करते रहे हैं। इससे कई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारके रूपमें उनका चौकन्नापन ज़ाहिर होता है। लेकिन कईबार ऐसी तलाशमें वे विखर जाते हैं। उनके व्यंग्योंसे गुज़रते हुए मुझे लगता है कि उन्होंने ऐसे मकान बनाये हैं, जिनमें सैंकड़ों खिड़कियाँ और दरवाज़े हैं, यहाँतक कि मकानके रूपमें उनकी समग्र और अन्वित सत्ता रह ही नहीं पाती। 'इतने झरोखोंके बावजूद ज़िंदगी (या व्यंग्य) का यह हवामहल खड़ा रहता है ताज्जुब!

('जिन्दगीको कुरेदती हुई कला' से साभार)

'रहा किनारे बैठ' में शरदजोशीने व्यंग्यकी जो नयी डिज़ाइनें तैयार की हैं उसके सिलसिलेमें मेरी अगली बात शायद रूमानी शब्द चातुर्य प्रतीत होगी, मगर यह सच है कि संग्रहके अधिकांश व्यंग्य व्यंग्य-गीतियाँ हैं। यह सिर्फ इसलिए नहीं कि इन व्यंग्योंमें उन्होंने छोटे-छोटे 'टी वी टी टुट्-टुर' प्रसंग उठाये हैं, बल्कि इसलिए भी कि व्यंग्य-शिल्पकी कमनीयता, काल्पनिकता, व्यंग्यकी पनहियों का आहिस्ते प्रहार। पर्यावरणका कसैला मिठास, तथा प्रतिमा-निर्माण आदिने समूची रचनात्मकताको गीतिमत्ता देदी है।

एक व्यंग्यकारकी ज़ुबानमें यह सुनना अपने आपमें एक गीतात्मक अनुभव है कि 'टेलीफोनसे रिसता किसी लड़कीका प्रणय-निवेदन मक्खनके प्यालेमें डाल दिया जाये और जमजानेपर उसे छुरीसे काटा जाये तब उस तटस्थ दर्शककी पीड़ा जिसे मैथिलीशरण गुप्तकी 'अबला जीवन (हाय!) तुम्हारी यही कहानी' याद नहीं है, जिस प्रकार अव्यक्त रह जाती है, उसी प्रकार मैं कुछ नहीं कह पा रहा था।' (बोटलोंका संगीत सुनकर) यहाँतक कि शीर्षकसे ही शिल्प-की कमनीयता प्रारम्भ हो जाती है—'झरतानीम: शाश्वत भीम', 'एक ठिठुरते दिनकी डायरी', 'ऊनके डोरे', 'न खड़े होनेका दर्द', 'पराए पत्रोंकी सुगन्ध' वगैरहसे ज़ाहिर है कि यह व्यंग्यकी नये किस्मकी भूमिका है।

व्यंग्य दरअस्ल विपर्यय और विसंगतिकी ही कला है। इसे किसी ज़मानेमें विदूषकी परिधान और चेष्टा से, छिछली और ऊल जलूल भाषामें या हास्यके उपादानोंके बिना इसे रचा जाता था। भाषाके कई मजाकिए खाके व्यंग्यमें खिंचे मिलेंगे। जबसे व्यंग्य-हास्य-प्रधान उपहास-कर्मसे अधिक गहरे आशय सम्प्रेषित करने लगा, तबसे विसंगतियोंकी तलाश जीवन-प्रक्रिया, व्यवस्था और व्यक्तित्वमें की जाने लगी। उसीके अनुरूप भाषा और स्थितियोंसे खिलवाड़ कम हो गया! शरद जोशीके पहले दो संग्रहोंमें भाषाके साथ काफी सस्ते खेल खेले गये थे। लेकिन 'रहा किनारे बैठ' में उन्होंने भाषाकी अभिनव दृष्टि और व्यंग्यकी नयी मुद्राका अन्वेषण किया है। इससे हिन्दी व्यंग्यपर शाब्दिक खिलवाड़का एकाधिकार बिना अधिक वाचाल हुए, खत्म होनेमें मदद मिलेगी।

लेकिन शिल्पकी गहरी तलाश और सही उपयोगके बावजूद वे महज़ चिकोटी काटने या प्रायः 'वो पकड़ा' जैसे करिश्मे करनेकी मुद्रामें ही पाये जाते हैं। शुरूसे आखीरतक झकझोरकर बेचैन करनेका कोई रचनात्मक प्रयास उनमें दिखायी नहीं देता। अधिक से अधिक कहीं-कहीं तीखे जुमलोंसे क्षणभरको वैचारिक धक्का भर देनेकी स्थिति तक पहुँच पाये हैं जैसे सवालोंसे उठते सवाल' में।

'रहा किनारे बैठ' में शरद जोशीने व्यंग्यके छोटे-छोटे अछूते प्रसंग उठाये हैं। कुछ व्यंग्योंमें उनकी सूझ काफी चमत्कृत करती है—जैसे 'झ' झरने का, छाता हाथमें लेकर, 'झरता नीम : शाश्वत भीम', आदिमें। लेकिन संग्रहका सबसे ऊँचा स्वर नकली अभिजात्यके खिलाफ है, जो एक सार्थक स्वर कहा जा सकता है। जहाँतक लड़के-लड़कियोंके फैशनपर किये गये व्यंग्योंका सवाल है—लगता है लेखक प्रौढ़ हो गया है और उसमें मास्टरोंकी-सी आदतें आ गयीं हैं। शायद यह शुभ लक्षण हो!

शरद जोशीके अगले व्यंग्योंमें समन्वित ऊष्मा और आदमीके बुनियादी संघर्षके लिए उनकी असह्य बेचैनी प्रतीक्षित रहेगी।

—डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय

शिक्षण-संस्थाओं, पुस्तकालयों
और
बुद्धिजीवियोंके लिए
उपयोगी और अनिवार्य
'प्रकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काव्य संकलन

कविता—८

सम्पादक : भागीरथ भार्गव एवं डॉ० जयसिंह नीरज; प्रकाशक : कविता प्रकाशन, 'कृष्णायन' आर्य नगर, अलवर। पृष्ठ : १०२; डिमाई ७२; मूल्य : ६.०० रु०।

सन् ६० से प्रकाशित हो रही पत्रिकाका यह आठवाँ अंक है। सम्पादकीयमें कविता-लेखनको प्रकाशनसे सम्बद्ध करते हुए व्यावसायिक और सरकारी पत्रिकाओं तथा आकाशवाणीकी कविता-नीतिपर प्रहार किया गया है। कविता-संकलनोंके प्रकाशकों और सरकारी साहित्य अकादमियोंके द्वारा ताजी कविताका प्रकाशन और सही वितरण न कर पानेकी स्थितिपर दुःख प्रकट किया गया है। कहा गया है कि समसामयिक कहानी, उपन्यास और नाटक भाव-बोधकी दृष्टिसे कविताकी तुलनामें पश्चात्पद, अपर्याप्त और सीमित रह गये हैं। कहीं ऐसा तो नहीं कि नाच न आवै आंगन टेढ़ा? इसी पत्रिकामें श्री विजेन्द्र अनिलने 'नुमाइशी कविताओं' की बात उठायी है। अन्योंको हीन दिखाकर खुदको महान दिखानेकी प्रवृत्ति इस कथनके पीछे हो सकती है। यदि यह सच है, तो यह घातक है!

सम्पादकीय तथा मंजुल उपाध्याय, राम निहाल गुन्जन, प्रभाकर श्रोभिय और माहेश्वर तिवारीके लेखोंमें समकालीन कविताके कथ्य, प्रकृति और विशिष्टताओंका विवेचन किया गया है। लेखकोंके मंतव्यों और 'समकालीन' शब्दकी व्याप्ति (अव्याप्ति!) से असहमत होने वाले पाठकभी यह अवश्य स्वीकारेंगे कि इन सभी लेखकोंने समीक्षाकी बेलाग, निष्कपट और बनावटहीन भाषाका प्रयोग किया है। इन्होंने अपने विवेचनोंमें पूर्वोत्तर पक्षोंके साथ समान रूपसे न्याय किया है। ऐसा आजकल प्रायः कमही होता है।

श्री माहेश्वर तिवारी कविताको प्रतिपक्षसे तथा प्रतिपक्षको जब राजनीतिक प्रतिबद्धता, व्यवस्था-विरोध और राजनीतिक विरोधके शब्द-जालसे आगे 'सांस्कृतिक तथा सामाजिक अन्तर-चेतनाकी सुरक्षाके प्रश्नसे जोड़ते हैं, तब वे 'सींचो मूल पिवैं सब डारी' वाली बात चरितार्थ करते हैं। यह एक प्रवृत्तिगत शुभारम्भ है।

डॉ० प्रभाकर श्रोभिय 'शोषणके खिलाफ सच्ची कविताकी असली पहचान' पर जोर देते हैं। यह ठीकभी है क्योंकि शोषणके नवतर-सूक्ष्म-विराटतर माया-चक्रको अच्छी तरह समझे बिना प्रतिपक्षकी सही कविता लिखना-पहचानना कठिन है।

श्री विजेन्द्र अनिलने ('कविता और राजनीति') कविताकी राजनीति' और 'कवितापनकी केंचुल' दोनोंको एक साथ नकारते हुए कविताके दायित्त्वको निरूपित किया है। उनके अनुसार जो कविता श्रोता-पाठकोंके दिमागमें आसानीसे नहीं बैठती, वह केवल नुमाइशी चीज़ है। बात नयी नहीं है, किन्तु आजकी कविताकी मूल समस्याको सामने लाती है। कविता दावा तो करे प्रतिपक्षकी आवाज होनेका लेकिन हो वह समझकी पकड़के बाहर। तब उसके होने न होनेमें फर्क क्या है? यह लेख वहाँ कमजोर हो जाता है, जहाँ लेखक मानवीय मूल्यों और कविता मूल्योंको समानान्तर स्थितिमें रखता है। सम्भवतः 'कविताके मूल्यों' पद बन्धसे लेखकका आशय कविताके अनुशासनसे है। हालांकि बात तबभी नहीं बनती। जोभी हो, यह दोष प्रमाद प्रेरित लगता है; अभिप्राय प्रेरित नहीं।

'कविता-८' कविताको प्रतिपक्षसे जोड़नेका प्रयास या इस जोड़का समर्थन है। संकलित सभी कविताएँ यथाशक्ति इस समर्थनको बलदेती हैं। विशिष्ट कविता 'बीमार लड़का' (नन्द चतुर्वेदी) 'अपनी शिराओंमें पूरे मनुष्यके रवतकी साझेदारी' का आह्वान तो करती है किन्तु उसमें धार नहीं है। दुश्मनको नंगा नहीं किया जा सका है। ऊर्जा भलमनसीकी पोशाक पहनकर सहम-सी गयी है। ऋतुराज और राजकुमार कुम्भजकी कविताएँ 'असरदार' हैं। वारीन्द्र कुमार वर्मा, बलदेव वंशी, अक्षय उपाध्याय, हेमन्त 'शेष' और यादवेन्द्र पाण्डेयकी कविताएँ कोंचती-टोंचती हैं। इनमें हिचक नहीं है। हिचकका यह अभाव दुश्मनकी सही समझके कारण उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है। प्रतिपक्षका युयुत्स, सत्य इनमें प्रकट हुआ है।

कविता-पत्रिकाके १०० पृष्ठोंमें केवल ३६ पृष्ठ कविताओंके हैं। कारण कुछ भी रहा हो। साज-सज्जा छपाई आश्वस्त करती है। पत्रिकाकी पूरी सामग्रीका सम-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्वित प्रभाव कविताको प्रतिपक्ष से सम्बद्ध करनेके आग्रहमें घनीभूत हुआ है। संकलित आग्रहको प्रखतर बना सकनेके लिए सम्पादक बधाईके पात्र हैं।

—डॉ० शीतला मिश्र

अनचीन्हा परिवेश

कवियित्री : सुधा गुप्ता; प्रकाशक : कविता प्रकाशन, आर्य नगर, अलवर (राजस्थान); पृष्ठ : ८४; डिमाई ७०; मूल्य : ५.०० रु०।

'अनचीन्हा परिवेश' कवियित्री सुधा गुप्ताकी कविताओं-का कदाचित प्रथम 'संकलन' (अथवा संग्रह ?) है जिसमें नब्बे छोटी कविताएँ प्रस्तुत की गयी हैं। कवियित्रीके सम्बन्धमें सम्भवतः प्रकाशकीय निवेदन है कि 'कुमारी सुधाने अपने सुन्दर व सशक्त लेखनके कारण आजकी हिन्दी कवितामें विशिष्ट स्थान बना लिया है। तथा आधुनिक नवलेखनके भावबोधको अपने सही रूपमें पहचाना है'। प्रकाशकके निवेदनसे सबका सहमत होना न स्वाभाविक है न अनिवार्य। 'अनचीन्हा परिवेश' की कविताएँ इस बातका प्रमाण कि कवियित्री प्रियतमकी प्रतीक्षामें रत है उसमें आत्मविश्वास है, साहस है, उत्साह है, परिवेशके जहरको पीनेकी क्षमता है। प्राकृतिक वातावरणसे कविता लिखनेकी प्रेरणा कवियित्रीको मिली है। नवलेखनका क्षेत्र विस्तृत है और कवियित्री द्वारा प्रस्तुत ये कविताएँ नवलेखनका उदाहरण न सकती हैं। नवलेखनमें प्राप्य कुण्ठा, घुटन, पीड़न, अजनवीपन आदि सबको यहाँ खोज-खोजकर निकाला जा सकता है। कवियित्रीकी प्रस्तुत कविता सम्पूर्ण संग्रहके कथ्यको बताती है—

नानी की कहानीके
राजकुमारकी तरह
किसी तिलस्मसे
आ जाओ निकट मेरे
मैं बन्दिनी परी
करूँगी
प्रतीक्षा तुम्हारी-(आह्वान, पृ. ४३)

कवियित्री कहती है कि 'हम दो समानान्तर रेखाओंपर हैं—एक असम्भवके लिए गुहारते हम और समानान्तर रेखाओंके चिर-मिलनका स्वप्न पाले हैं... हम आश्वस्त अपने वर्तमानके प्रति और सोचते हैं भविष्य उज्ज्वल ही (आश्वस्त, पृ० ४६)—कवियित्रीके मस्तिष्कमें 'समानान्तर रेखा' की इयत्ता-ईदृक्ता स्पष्ट है या नहीं—यह प्रश्न यहाँ उठ सकता है या कवियित्री असम्भव-सम्भवीका चमत्कार उत्पन्न करना चाहती है। कवियित्रीके बिम्ब अधिकांशतः बौद्धिक हैं यथा—डूबते सूरजका शेषचिन्ह। सूने मस्तकपर रखकर। जगह-जगह भटकी हूँ। लानेके लिए। बदलेमें। उगते सूरजका नवोन्मेष तेज,किन्तु लौटनेपर शामसे ही हुआ है। साक्षात्कार (विनिमय, पृ. ५२) सूरजके उगते-डूबनेकी कल्पनाके माध्यमसे यहाँ मात्र चमत्कार उत्पन्न किया गया है (क्योंकि सूरज स्थिर ग्रह हैं न उगते हैं, न डूबते हैं—भौगोलिक सत्य)।

कविताएँ नवगीतके छोरको छूती हैं और कहीं-कहीं प्रकृतिके रोचक चित्र दीखते हैं यथा—'मसूरीकी सुबह' या 'यह शाम'। कवियित्रीका कथ्य साफ है पर परिवेश अनचीन्हा है यह समझमें नहीं आता। कविताओंमें भावगत एवं शिल्पगत विविधताका प्रायः अभाव है पर निश्चयही संग्रह उपेक्ष्य नहीं है।

—स्वर्णकिरण

ठहरो क्षण भर

कवि : राजेन्द्र मिलन; प्रकाशक : यूनिको पब्लिकेशंस, घटिया आजमखां, आगरा—३। पृष्ठ : १०४ डिमाई ७३; मूल्य : ८.०० रु०।

संग्रहपर केन्द्रीय हिन्दी-संस्थान, आगराके निदेशक डाक्टर ब्रजेश्वर वर्माके 'दृष्टिकोण' की मुहर लगी है, अतः क्षणभर ठहरकर पढ़नेको विवश तो होनाही पड़ता है। 'दृष्टिकोण' की बातें दुहरानेसे कोई लाभ नहीं। हाँ, इससे सहमत होना कठिन अवश्य है। युगीन टूटन, घुटन, अनास्था, कुण्ठा और उसकी प्रतिक्रिया-जनित विद्रोह तो कविताओंमें है; किन्तु अभिव्यक्तिमें प्रखरता नहीं है, लड़खड़ाहट है। कुछ उदाहरण लें—'सुर्ख मुस्कानें कर्ज कहतीं चुकाओ', 'ये खुले निपट परिधान न लज्जा-लत्ता खो देना', 'खोकर न चैन करार रूपका छत्रा खो देना', 'ऊपर मँडराती आओ', 'आइना आरज़ू बन सिमट जायेगा', 'महज केवल एक', 'उंडेलकर दोनों किवाड़ें', 'पकड़ बैठी हो छिपे संदर्भकी जूँ', 'मट्टी खूब उलीचे', 'काँपती से धरित्री हो त्रस्त' इत्यादि पंक्तियोंपर किसी प्रकारकी टिप्पणिकी आवश्यकता नहीं है; पाठक स्वयं समझ लें। 'आजा मन सांवरिया' कवितामें पपीहा, कोयलिया, मोर एक साथ हैं, कदम की छैयाँ भी है —देश-कालका कैसा ध्यान ? इसी कवितामें 'लिपटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तनसे चोली रे' भी है—राधाका एजेंट चाहता था कि वह तनसे लिपटी न होकर खिसक गयी होती।

इस संग्रहमें यह एक अच्छी बात है कि कुछ कविताएँ बच्चोंके लिए भी हैं—शिमला-नैनीतालकी, आये दिन बरसात के, पड़े कड़ाकेके जाड़े। 'बुद्धिजीवी सकिलोंमें कौन किसका भार?' और 'मनुष्यताकी हो रही रिहर्सली तलाश' भी खूब है। महाप्राण-निराला, सजल हो गई, आई-गई हो गई, पुश्तैनी जनसेवक, धवल पताका फहरे' चोर के पाँव आदि कुछ अच्छी कविताएँ भी हैं। बहरहाल 'काव्य-यात्रा' में कविने फ़रमाया है—'क्या मुझमें सबसे अलग हटकर कहनेका माद्दा है?' जीहाँ, आपकी अटपटी भाषासे तो (आज सुचूतीं रक्त धाराएँ) यही सिद्ध होता है।

—विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक'

प्रयास—२

सम्पादक : श्री बजरंग बहादुरसिंह, वेदप्रकाश अग्रवाल और अशोककुमार गुप्त; प्रकाशक : कीर्त्तिकार प्रकाशन, अम्बिकापुर, म० प्र०। पृष्ठ ३६; डिमाई ७२; मूल्य : १.०० रु०।

मध्यप्रदेशके सरगुजा अंचलके नौ कवियों—तीनों सम्पादकों सहित असफाक खान, मनेन्द्र 'अनिमेष', कु० रंजना सिंह, विजय कुमार गुप्त, कु० शैलसिंह और कु० शोभा कत्यालकी तीन-तीन चार-चार कविताएँ इस संकलनमें दी गयी हैं। सभी कवियोंने वक्तव्य बाजीका स्वाद भी लिया है। आत्म-विश्वास पानेके लिये तो ठीक है अन्यथा वक्तव्यके बदले प्रत्येक कवि एक-एक कविता और देता तो ठीक रहता।

असफाक खानकी 'उदित किरण', अशोककुमार गुप्तकी 'साइलेन्स क्लास' तथा 'उदास चेहरा', बजरंग बहादुर सिंहकी 'सावन प्रश्न चिन्ह', वेद प्रकाश अग्रवालकी 'जीनेकी कला', कु. शैलसिंहकी 'सभी और' कु. शोभा कत्यालकी 'हिंसक संगीन' कविताओंमें कुछ हैं, जो आश्वस्त करता है।

एक बात बड़ी सुखदायी है कि इन सभी कवियोंमें एक छटपटाहट है और इसलिए आशा की जाती है कि कभी ये सभी सशक्त हस्ताक्षर बन सकते हैं बशर्त्ते ये लोग अपनी जमीनपर दृढ़ रहें (दिल्ली-इलाहाबादके झोंकेमें न वहें), भूमिका-वक्तव्य आदिके लटकोंसे बचे रहकर भ्रम न पालें और अपनी भाषाको माँजें।

कवियित्री शैल तत्सम शब्दोंके बचकाने मोहकी उपयोगितापर विचार कर सकती हैं। श्री विजयकु[illegible] गुप्तपर दिल्ली-इलाहाबादका भूत सवार दिखता है। [illegible] संकलनके गुप्त-कवि क्या शब्द-कोशमें 'गुप्ता' शब्दका [illegible] देखनेका कष्ट करेंगे?

अन्तमें पुराने कुछ शब्दोंमें समापन—सुनो स[illegible] करो मनकी, पर सबके हितकी।

—डॉ. शीतला [illegible]

अन्तर्धारा

कवि : डॉ० रामनरेश 'हंस'; प्रकाशक : परमान[illegible] साहित्य सदन, कंचनामा, मखदुमपुर (गया)। [illegible] क्रा० ७२; मूल्य : २.०० रु०।

'अन्तर्धारा' हिन्दी जगत्के नातिख्यात कवि डॉ० [illegible] नरेश मिश्र 'हँस' की कुछ चुनी हुई कविताओंका संग्र[illegible] 'प्रस्तावना' लेखक प्रो. त्रिपाठी सियारमणका कथन [illegible] ठीक प्रतीत होता है कि 'अन्तर्धारा' में कवि द्वारा [illegible] विषयों एवं विविध विधाओंकी कुल २५ कविताएँ सं[illegible] हैं जिनमें खण्डित आस्था, मानवके 'बहुरूपिया' [illegible] प्रशासनिक बिडम्बना, अधिकार-लिप्सा, शोषण-चक्र, [illegible] स्वार्थपरता, विद्यार्थियों और बुद्धिजीवियोंमें व्याप्त [illegible] शासनहीनता, लोभ और चाटुकारिता, ढोंगी कवि[illegible] अहम्मन्यता आदि विभिन्न पक्षोंका सम्यक् समाहार [illegible] जो कविके गम्भीर चिंतन तथा परिपक्व अनुभवका प[illegible] है। कवि बहुपठित, एकाधिक भाषाका अधिकारी, [illegible] मर्मज्ञ है और अपने परिवेशके प्रति जागरूक है [illegible] अर्न्धाराकी कविताएँ हमारा ध्यान किंचित आकृष्ट [illegible] हैं। कवि अपनी बातको सीधे ढंगसे कहने का आग्रही [illegible]

प्रभो! कामना यही हमारी।
मिले सहजही शरण तुम्हारी॥
शुभ तत्त्वोंसे शुभ्र विश्व हो,
वसुधाको अभिनव प्रकाश दो,
मानवता रो रही, हास दो,
रविका तेज हृदयमें भरकर,
आत्माको नव स्वर-विलास दो।
सागर सम गम्भीर, गगनसम व्यापक देखें सब नर[illegible]
प्रभो.... ([illegible]

कविका मानवतावाद यहाँ कविको सहज ए[illegible] हृदयका व्यक्ति सिद्ध करता है पर कविका व्यं[illegible] कविके सहज एवं सरल हृदयको दृष्टि छायामें डाल दे[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पास किया न कोय,
एकै बार जो गैस पढ़ै, पास तुरन्ते होय ।

× × ×

फिल्म गीत घरपर रटे, नित्य सिनेमा जाय ।
कचर कूट ट्यूशन पढ़े, कभी न फेल्योर पाय ॥
(पृ. १८)

या

मुझे बनाना दीनदयालु केवल कॉलेजका शिक्षक
ट्यूशन करूँ, गप्प झांड़ूँ बस, बनूँ परीक्षक औ शिक्षक ।
(पृ. २०)

या

मेरी भव-बाधा हरो, लेडी अप-टू-डेट ।
मिस्टरके दिलमें बसी, चलत चाल रिसेंट ।
(पृ. २३)

छन्दपर कविका विशेष अधिकार नहीं है जिससे स्थान-स्थान-पर यतिभंग दीखता है । एक उदाहरण :

चाह नहीं इस **इलेक्शन**में एम. एल. ए. मन्त्री हो जाऊँ ।
चाह नहीं घेराव और पथराव-**लीडर** में कहलाऊँ ।
(पृ. १९)

भाषा-प्रयोगके मामलेमेंभी कवि सावधान नहीं है ।

अंतर्धारा, वास्तवमें सांप्रतिक परिवेशके प्रति विद्रोह-भावनाके पर्यायके रूपमें प्रस्तुत दीखती है और कवि हास्य-व्यंग्यके ही माध्यमसे सही, परिवेशगत असंगति या विसं-गतिमें सुधार लानेको उत्सुक है । संग्रहके व्यक्तित्वको समझनेका वस्तुतः एक आधार माध्यम है ।

—स्वर्णकिरण

श्रीमद्भगवद्गीता

अनुवादक : गदाधर नारायण; गरुड़ पेपर बैक्स, वैकुण्ठ, ई/४२२, ए ब्लाक, सोनारी, जमशेदपुर-११ (बिहार) पृष्ठ : १००; जेबी ७२; मूल्य १.२५ रु० ।

श्रीमद्भगवद्गीता एक १८ अध्यायी क्षीणकाय होते हुएभी महान् ग्रन्थ है । जिसमें कर्म-भक्ति और ज्ञानकी महिमा वर्णित है । जिसे श्रीकृष्णने कुरुक्षेत्रके युद्ध में मोह-ग्रसित अर्जुनको सुनाया था । मूल संस्कृत ग्रन्थका कविने अनुवाद हिन्दी भाषामें काव्यात्मक रूपमें किया है । विशे-षता यह है कि जिस प्रकारके छन्दोंका प्रयोग मूल भाषामें है उसी प्रकारके छन्दोंका प्रयोग अनुवादकी भाषामें भी करनेका प्रयास हुआ है । संस्कृतकी ही भाँति तुकान्त रहित भी है । भाषा सरल एवं सुबोध हिन्दी है । तत्सम शब्दोंके साथही उर्दूके शब्दोंका भी प्रयोग किया जाता है । अनुवाद भावानुवाद न होकर अन्वर्थानुवादके रूपमें किया गया है । उदाहर-णार्थ कतिपय अंश दृष्टव्य है—

मूल—क्लैव्यं मास्मगमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते । क्षुद्रं हृदय दैविल्यं त्यक्तोत्तिष्ठ परन्तप २।३७ गी

अनुवाद—छोड़ो ख्याल नपुंसकताका शोभा पार्थ न देती तुझको ।
त्याग क्षुद्र दुर्वलता उर की उठो परन्तप समर भूमि यह ॥(७)

एक अन्य उदाहरण :—

मूल—सर्वधर्मान् परित्यज्य मानेक शरणं ब्रज । अहं त्वां सर्वपापेम्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः (१८।६६ गी)

अनुवाद—छोड़ जगतके सब धर्मोंको एक शरण मेरी तू आ ।
सब पापोंसे मुक्त करूँगा मैं तुझको तू शोक न कर ॥
(६७)

अनुवादमें कुछ खटकनेवाली बाते रह गयी :—गलत (४) जरा (३) । ऐसा ज्ञात होता है कि रचनाकारको शब्दोंका अभाव हो गया है । "शंख अनन्त विजय राजाका, कुन्ती-पुत्रका धर्मराजका" (३) में तीन 'क' का प्रयोग खटकता है जबकि राजा और कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरके लिए ही प्रयुक्त हुआ है ।

आशा है फिर भी काव्यप्रेमी बन्धु गीताका ज्ञान संस्कृत न जानते हुए भी प्राप्त कर सकते है ।

—डॉ० रामभिलाष त्रिपाठी

नवीन प्रकाशनोंके
परिचय, विवेचन,
आलोचना और मूल्यांकन
का मासिक
'प्रकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक साहित्य

हरियाणा : लोकगीतोंकी धरती

लेखक : देवीशंकर प्रभाकर; प्रकाशक : उमेश प्रकाशन, ५ नाथ मार्केट, नयी सड़क, दिल्ली–६। पृष्ठ ६४; डिमाई, ७२; मूल्य : ४.५० रु०।

हरियाणा : लोककथाएँ

लेखक और प्रकाशक : उपर्युक्ता। पृष्ठ : ६२; डिमाई ७२; मूल्य : ४.५० रु०।

लोकगीतों एवं लोक कथाओंमें साहित्यका आदिम रूप सुरक्षित है। शिष्ट-साहित्यमें शास्त्रीयताका बन्धन रहता है तथा कृत्रिम मर्यादाओंके कारण उसकी आत्माका सहज विकास नहीं हो पाता है। लोक-साहित्यमें शिष्ट-साहित्यकी अपेक्षा अधिक सरसता, भाव-प्रवणता एवं मार्मिकता विद्यमान रहती है।

लोकगीतोंपर क्षेत्रीय प्रभावभी दृष्टिगोचर होता है। 'ब्रज लोक साहित्यका अध्ययन', 'भोजपुरी लोक साहित्यका अध्ययन', 'मैथिली लोक गीतोंका अध्ययन', 'गढ़वाली लोक साहित्य', 'बघेली लोक साहित्य' आदि ग्रन्थ इसके स्पष्ट प्रमाण हैं। इस दिशामें श्री देवीशंकर प्रभाकरने भी महत्त्वपूर्ण प्रयास किये हैं। यहाँ उनकी दो पुस्तकों–– 'हरियाणा : लोकगीतोंकी धरती' तथा 'हरियाणाकी लोककथाएँ' पर संक्षेपमें विचार किया जा रहा है।

'हरियाणा : लोकगीतोंकी धरती' के आरम्भमें श्री प्रभाकरने लोक-साहित्यकी महत्ता स्थापित करते हुए लोकगीतोंके वैशिष्टयका उल्लेख किया है। लोकगीतोंको उन्होंने दो मुख्य भागोंमें विभक्त किया है––'संस्कार गीत' एवं 'ऋतु गीत'। संस्कार गीतोंकेभी दो उपविभाग किये गये हैं––'विवाहके अवसरके गीत' तथा 'जन्मके अवसरके गीत'। क्रमभी दृष्टिसे यदि जन्मके अवसरके मीत पहले रखे जाते तो अच्छा रहता। ऋतु गीतोंके चार वि[illegible] किये गए हैं––'फाल्गुनका रागरंग', 'सावनकी ब[illegible]' 'आश्विनके पर्वगीत' तथा 'कार्तिक गीत'। चतुर्थ अ[illegible] 'लोकगीतोंकी विविधता' है। पंचम अध्यायमें 'लोकगी[illegible] मार्मिक भाव' का विवेचन किया गया है।

'हरियाणा की लोक कथाएँ' के प्रथम अध्यायमें लेख[illegible] मोटे रूपमें लोककथा साहित्यका निम्नलिखित वर्गी[illegible] प्रस्तुत किया है––(क) जन आख्यान, (ख) वीर गा[illegible] (ग) लोक कथाएँ, (घ) काल्पनिक कथाएँ। द्वि[illegible] अध्यायमें हरियाणाकी वीर गाथाओं का उल्लेख है। [illegible] आल्हा, भूरा बादल, फत्ता जयमल तथा वीर जवाहरम[illegible] काव्यमय आख्यानोंसे ओजस्वी उदाहरणोंका संकलन कि[illegible] गया है। तृतीय अध्याय 'पीर गाथा' में हरियाणामें प्रच[illegible] जाहरपीरकी कथा दी गयी है। डॉ० सत्येन्द्रने अ[illegible] पुस्तक 'जाहरपीर गुरू गुग्गा' में इस महान सन्तसे सं[illegible] लोक साहित्यपर विस्तारपूर्वक विचार किया है।

चौथे, पाँचवे तथा छठे अध्याय हरियाणाके प्र[illegible] प्रेमाख्यान 'निहाल दे' पर हैं। इनमें चौथे तथा पाँ[illegible] अध्यायोंमें 'निहालदे' की लोकप्रियता, ऐतिहासिकता त[illegible] कथाशिल्प आदिपर विचार किया गया है तथा छठे अध्या[illegible] 'निहाल दे' का मूल पाठ प्रस्तुत किया गया है। 'निहाल [illegible] इस मूल पाठका अध्ययन हिन्दी जगतमें निश्चयही मह[illegible] पूर्ण सिद्ध होगा।' मूलपाठकी पाद टिप्पणियोंमें क[illegible] शब्दोंका अर्थ देकर उसे और भी उपयोगी बना दिया [illegible] है।

लोक-साहित्यके क्षेत्रमें उक्त दोनों पुस्तकें महत्व[illegible] भूमिका निभायेंगी।

—डॉ० रामस्वरूप आ[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजनीति

'लोकतन्त्र'

लेखक : डोरोथी पिकल्स; अनुवादिका : विजय श्री भारद्वाज; प्रकाशक : पी० के० पब्लिकेशन्स, ३०७२, प्रताप स्ट्रीट, गोला मार्केट, दरियागंज दिल्ली-६। पृष्ठ : २२१; क्राउन ७२; मूल्य : ४.०० रु०।

विश्वमें प्रचलित सभी प्रणालियोंमें सर्वाधिक मान्य एवं सर्वाधिक विवादास्पद प्रणाली 'लोकतन्त्र' है। निश्चित है कि इस प्रकारकी विवादास्पद प्रणालीपर विभिन्न विचारकोंके विचार उठेंगे। प्रस्तुत पुस्तक लोकतन्त्रकी परिभाषासे ही प्रारम्भ होती। लेखकका अभिप्राय राजनीति विज्ञानके सामान्य अध्येताको 'लोकतन्त्र' प्रणालीसे परिचित कराना है। इसी उद्देश्यसे लिखी गयी यह पुस्तक अपने अन्तिम परिच्छेदमें लोकतन्त्रकी उपयोगितापर प्रश्न चिन्ह लगाकर समाप्त होती है। पुस्तकमें चर्चित अध्यायोंका सभी 'लोकतन्त्र' के आवश्यक तत्त्वोंके आधारपर वर्णित है। प्रथम अध्यायमें ही लेखक लिखता है कि यह एक दर्शनके रूपमें भी अंगीकृत हो सकता है। इसी प्रकार दूसरे अध्यायमें प्रत्यक्ष लोकतन्त्रकी चर्चा करते हुए लेखकने एथेन्सका उदाहरण देते हुए पेरेक्लीजके भाषणका उद्धरण देकर पुस्तककी उपादेयताको बढ़ाया है।

सम्पूर्ण पुस्तकमें लोकतन्त्रके प्रत्येक पहलूपर चर्चा है। लोकतन्त्रका आर्थिक पक्ष तथा सामाजिक पक्षका प्रतिपादन लेखकीय अध्ययनके विस्तारका परिचय देता है। दो खण्डोंमें विभक्त पुस्तक जहाँ प्रथम खण्डमें लोकतन्त्र-की संकल्पानाओंसे परिचय करवाती है वहीं दूसरे खण्डमें लोकतन्त्री व्यवहारकी कुछ समस्याओंसे अवगत कराती है। 'लोकतन्त्र' में आस्था रखनेवाला एवं उस प्रणालीमें जीवनयापन करनेवाला हर मनुष्य इन समस्याओंके समाधानकी ओर उत्सुकताभरी नजरोंसे देखता है। इन्हीं समस्याओंमें संविधान, चुनाव, प्रतिनिधित्व, विपक्ष आदिकी ऐसी समस्याएँ हैं जो कभी-कभी लोकतन्त्री व्यवस्थापर प्रश्न चिन्ह लगा देती हैं। पुस्तकका अन्तिम अध्यायही केन्द्र बिन्दुभी है। यही पुस्तकके प्रयोजनको सार्थकता प्रदान करनेवाला अध्याय है। १९६० के पश्चात् लोकतन्त्वात्मक पद्धतिमें जो बदलावकी प्रक्रियाआयी है, लेखकने बदलावके इसी पक्षपर उँगली रखी है। प्रायः हर देशमें उच्च शिक्षाकी बाढ़ने लोकतन्त्रके लिए खतरेको जन्म दिया : "युवा बुद्धिजीवीके संघर्षशील अल्पमतने परम्परागत लोकतन्त्री तरीकोंके प्रति मोहभंगके वर्तमान वातावरणमें इन शिकायतोंका दुरुपयोग अधिक कम उम्रके **नौसीखिए** विद्यार्थियोंका समय जुटानेके लिए किया, जिसका उद्देश्य स्वयं लोकतन्त्रपर प्रहार करनेकी अगुवाई करना था"। प्रस्तुत उदाहरण अनुवादकी पकड़का नजरिया भी देता है। पुस्तकका अन्त संसदवादकी जर्जरतापर प्रकाश डालता है। अतः पूर्ण पुस्तक लोकतन्त्रपर स्वयंमें एक 'प्राथमिक विचार' के निर्धारणके लिए पर्याप्त है। प्रसन्नता होती है कि अनुवादकने पुस्तकपर परिश्रमकर विषयकी सार्थकताको बनाये रखा। पुस्तककी उपयोगितासे राजनीति विज्ञानके सामान्य पाठक एवं विद्यार्थी अधिक लाभान्वित होंगे। क्योंकि विभिन्न स्थानोंपर दिये गये उद्धरण व सन्दर्भ ग्रन्थ सूची उनके विस्तृत अध्ययनमें सहायक होगी।

—दिनेश भट्ट

भारत और बंगला देशमें चीनी षड्यन्त्र

लेखक : शशि भूषण; प्रकाशक : हिन्दी बुक सेंटर, आसफअली रोड, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : १५६; क्राउन ७३; मूल्य : ४.५० रु०।

नेहरू और मार्क्सवाद

लेखक और प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १५९; क्राउन ७२; मूल्य : ६.५० रु०।

शशि भूषण, संसदके कांग्रेसी सदस्य हैं। समाजवादमें उनका विश्वास है किन्तु वे कट्टरपन्थी नहीं हैं। देशकी परिस्थितिके सन्दर्भमें संशोधित व समन्वित समाजवाद चाहते हैं। उन्होंने १९७२ में पहली पुस्तक और १९७३ में दूसरी पुस्तक प्रकाशित की। ये दोनोंही पुस्तकें समसामयिक राजनीतिसे सम्बन्धित हैं। "भारत और बंगला देशमें चीनी षड्यन्त्र" में भारतीय उपमहाद्वीपमें चीनकी वर्तमान राजनीतिका विश्लेषण है। शशि भूषण, हालमें चीन गये थे। वहाँ उन्हें जो अनुभव हुए और उन्होंने वहाँ के मन्तव्यों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं कार्य नीतियोंकी जो जानकारी प्राप्त की, उसीके आधार-पर प्रालोच्य पुस्तक लिखी।

पुस्तकमें चार अध्याय हैं—बंगला देश और चीनी नेता, हिन्दुस्तान और चीन, विश्वके प्रगतिशील आन्दोलनमें तोड़फोड़ और चीनी नेताओंकी सिद्धान्तहीनता। पहले अध्यायमें लेखकने स्पष्ट कर दिया है कि विश्वके स्वाधीनता आन्दोलनोंके समर्थनका ढोंग रचनेवाले चीनने किस प्रकार बंगला देशके विरुद्ध पाकिस्तानकी मदद की और आजभी पाकिस्तानके टूटनेपर आंसू बहाते हुए, उपमहाद्वीपकी वास्तविकताकी अनदेखी कर रहा है। दूसरे अध्यायमें लेखकने दिखाया है १९५४ में भारतके साथ मिलकर पंच-शीलके सिद्धान्तोंके निर्माण करनेवालेने स्वयं १९६२में उन सिद्धान्तोंको ताकपर रखकर सदियोंके दोस्तपर हमला किया और आजभी भारतकी भूमिपर कब्जा किये हुए है। 'विश्वके प्रगतिशील आन्दोलनमें तोड़फोड़' अध्यायसे स्पष्ट है कि चीन विश्व राजनीतिमें अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिक्रियावादी गिरोहका सदस्य है। इन्हीं तोड़फोड़की कार्रवाइयोंके कारण हर जगह चीनका भण्डाफोड़ हो गया है और उसे एक-दो जगह छोड़कर सभी देशोंमें मुंहकी खानी पड़ी है।

अन्तिम अध्यायमें चीनी शासकोंकी सिद्धान्तहीनताकी चर्चा है। लेखक ने स्पष्ट कर दिया है कि "आजके युगमें माओवाद दूसरा बोनापार्टिज्म है जो सेनाका सहारा लेता है, वर्गों और राष्ट्रोंके बीच पैंतरेबाजी करता है, क्रांतिके गीत गाता है, परन्तु क्रान्तियोंके साथ विश्वासघात करता है।" (पृष्ठ ११४)। लेखकका दृढ़ विचार है कि दोनों देशोंमें मैत्री सम्बन्ध तभी कायम हो सकते हैं जब चीनको यह विश्वास हो जाये कि भारतभी चीन जैसीही महाशक्ति है। उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि हम चीनी षड्यन्त्रोंका विरोध करते हैं और करते रहेंगे किन्तु वहांकी जनतासे हमारी मित्रता अटूट है और एक दिन ऐसा अवश्य आयेगा जब चीनकी क्रान्तिकारी जनता अपने देशके वर्तमान षड़यन्त्रकारियोंकी असलियत पहचानकर तथा उनको किनारे लगाकर भारतके साथ अपने परम्परागत मैत्री सम्बन्धोंको फिरसे दृढ़ करेगी।

× × ×

१९१७ में सोवियत क्रान्तिकी सफलताके बाद जवाहर-लाल नेहरूका झुकाव मार्क्सवादकी ओर दिन प्रति दिन बढ़ता गया। उनके हृदयमें पूंजीवाद तथा साम्राज्यवादके प्रति घृणा थी। वे समाजवादी विचारोंकी रोशनीमें भारतकी समस्याओंका अध्ययन करने लगे। "विश्व इतिहासकी झलक", "पिताके पत्र पुत्रीके नाम", "मेरी कहानी" और 'हिन्दुस्तानकी कहानी' में उनके विचार बिखरे पड़े हैं। उन्होंने उत्तर प्रदेशके किसान आन्दोलनको जन्म भी दिया तथा देशके मजदूर आन्दोलनकी नींवभी डाली। किन्तु वही जवाहरलाल नेहरू, सत्तारुढ़ होनेके बाद बदलते गये और उनके विचारभी संशोधित होते गये। अपने समस्त यौवन कालमें दुर्दान्त साम्राज्यवादसे जूझनेवाले नेहरूने देशकी परिस्थितियोंको देखते हुए मिश्रित अर्थ व्यवस्थाका कार्यक्रम रखा। पुस्तकमें सत्तारूढ़ होनेके पूर्वके नेहरूके विचारोंका सही प्रतिनिधित्व हुआ है किन्तु सत्तारूढ़ होनेके बाद उनके विचारोंमें किस प्रकार परिवर्तन आया, इसकी झांकी नहींके बराबर है। नेहरूके विचारोंके ऐतिहासिक अध्ययनकी दृष्टिसे पुस्तक सारगर्भित है किन्तु उसमें उनके संशोधित विचारोंका नितान्त अभाव खटकता है।

—मनमोहन वर्मा

'रूसकी खुफिया पुलिस'

लेखक : रोनाल्ड हिंगले; अनुवादिका : विजय श्री भारद्वाज; प्रकाशक : नेशनल एकाडमी ६, अंसारी मार्केट, दरियागंज, दिल्ली-११०००६। पृष्ठ : ३७१; क्राउन, ७३; मूल्य : ४.०० रु०।

प्रस्तुत पुस्तक 'रूसकी खुपिया पुलिस' जैसाकि नामसे ही लगता है—सन् १५६५ से १९७० तक पुलिस कारनामोंका सशक्त दस्तावेज है। पुस्तक न केवल साम्यवादी रूसकी लौह आवरण नीतिके कारनामोंको ही उद्घाटित करती है वरन् जार-शाहीके युगमें पीड़ित मानवताकाभी जीवन्त दस्तावेज है।

विभिन्न पुस्तकों, स्रोतोंसे प्राप्त सामग्रीपर आधारित लेखकीय अध्ययन कहीं भावुकतावश नहीं बहा वरन् तटस्थ सर्वेक्षणकर्त्ताकी भाँति तथ्योंपर ही केन्द्रित रहा, यही कारण है कि लेखक प्रस्तावनामें दिये अपने उस आग्रहकी रक्षा करनेमें समर्थ हुआ है कि 'पुस्तकको लोकप्रिय बनानेके लिए अथवा सनसनी फैलानेवाला आग्रह लेखकका नहीं है।' रूसमें बुद्धिजीवीपर सत्ताका प्रकोप हमेशा ही रहा है। बुद्धिजीवीपर आतंककी एक लम्बी शृंखला है, जहाँ जार-शाहीके शिकार पुश्किन, दास्तोव्यस्की रहे, वहीं साम्यवादी शासनमें बोरिस पास्तरनाक सोल्झेनित्सीन आदि बुद्धि-जीवीभी व्यवस्थाके शिकार बने हैं। गुप्त मुकदमों द्वारा बिना मुकदमोंके ही दण्ड देनेकी व्यवस्था इन पुलिस संगठनोंकी विशेषता रही है। पुस्तकमें औप्रिचनीनासे लेकर के. जी. बी. जैसे अत्यधिक शक्तिशाली संगठनोंपर विस्तृत साम-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभिन्न पुस्तकोंके आधारपर संगृहीत है । अनुवादिका विजयश्री भारद्वाजने व्यवस्थित भाषामें अनुवाद करनेमें सफलता पायी है । पुस्तककी छपाई सुन्दर है । पुस्तक निस्सन्देह पठनीय है ।

—दिनेश भट्ट

गरीबी हटाओ

प्रकाशक : उमेश प्रकाशन, ५ नाथ मार्केट, नयी सड़क; दिल्ली-६ । पृष्ठ : १०३; डिमाई, ७२; मूल्य : ४.५० रु० ।

प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधीने १९७१में लोकसभाके मध्यावधि चुनावसे पूर्व काँग्रेसके मन्चसे नारा दिया था "गरीबी हटाओ" । नारेने जादूका कार्य किया और कांग्रेस भारी बहुमतसे विजयी हुई । १९७३ का आधा वर्ष खत्म हो गया है और पूरा वर्षभी इसी प्रकार बीत जायेगा गरीबी न हटी है और न हटनेके लक्षण हैं । सरकारने कई क्रान्तिकारी कदम अवश्य उठाये हैं किन्तु दिन-प्रति-दिनकी बढ़ती हुई मँहगाईने जनताकी कमर तोड़ दी है जिससे गरीबी बढ़तीही जा रही है, कम नहीं हो रही है । लेखकने सत्यही लिखा है कि "गरीबी न सरकार हटा सकती है और न मन्चपर चिल्लाने-चीखनेवाले विरोधी । . . . . गरीबोंको तो अपनी रोटियाँ छीननी पड़ेंगी (पृष्ठ ११) । गरीबी पैदायशी नहीं, हालातकी देन है (पृष्ठ ११) । जबतक हालात नहीं बदले जाते गरीबी नहीं हटनेकी ।

आलोच्य पुस्तक १० अध्यायोंमें विभाजित है । इन अध्यायोंमें गरीबीका प्रादुर्भाव कैसे हुआ इसको हटानेमें सरकारका क्या योगदान है, और व्यक्तिगत उत्तरदायित्व और प्रयास क्या है, सभीपर प्रकाश डाला गया है । गरीबी हटानेके लिए गैर सरकारी क्षेत्रोंका क्या सहयोग है तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ क्या कर रही हैं, आदि प्रश्नोंकी भी चर्चा की गयी है । लेखकका मत है कि गरीबी हटानेके लिए दो ही रास्ते हैं—पहला है नक्सली योजना और दूसरा ग्राम-स्वराज्य । कहने की आवश्यकता नहीं है कि लेखकने ग्राम-स्वराज्यकी योजनाको सशक्त योजनाकी संज्ञा दी है । बारीकीसे देखनेपर लेखकके विचारों व तर्कोंमें काफी विरोधाभास है और वह इसलिए कि गरीबी कैसे पैदा हुई इस बारेमें वह स्पष्ट है किन्तु गरीबी कैसे हटेगी, इसपर वह स्पष्ट नहीं है ।

पुस्तककी भाषा कहीं-कहीं भावनात्मक है जैसे "गरीबी रौख नरक है, अपराधकी दुनियाँका प्रवेश द्वार है और लोकतन्त्र तथा मानवताके लिए कलंक है ।"

—प्रेमकृष्ण टंडन

दि इण्डो सोवियत ट्रिटी-सैटिंग एण्ड सीक्वैल (अंग्रेजी प्रकाशन)

लेखक : के० पी० एस० मैनन, प्रकाशक : विकास पब्लिशिंग हाउस, ५, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १५६; डिमाई, ७२; मूल्य : १८ रु० ।

के० पी० एस० मैनन (जन्म १८९८) भारतीय सिविल सेवाके अधिकारी रहे हैं । १९२१ में सेवामें आनेके बादसे उन्होंने सेवासे निवृत्त होनेतक, बहुत-से महत्त्वपूर्ण पदोंपर कार्य किया । १९५२ से १९६१ तक सोवियत संघमें भारतीय राजदूत रहे । आजकल भारत-सोवियत-सांस्कृतिक सोसाइटीके अध्यक्ष हैं । उन्होंने समय-समयपर समाचार पत्रोंके लिए कुछ लेख लिखे, जो पुस्तकके रूपमें "दि इण्डो सोवियत ट्रिटी - सेटिंग एण्ड मीनिंग (the Indo-Soviet Treaty-Setting, And Sequl)के नामसे१९७१ में प्रकाशित हुई । आलोच्य पुस्तक उसी पुस्तकका द्वितीय संस्करण है जो पिछले वर्ष प्रकाशित हुआ । इस संस्करणमें पहले संस्करणके एक से नौ तकके अध्याय सम्मिलित किये गये हैं । ये सभी लेख फरवरी १९७१ से अगस्त १९७१ के बीच लिखे गये थे । साथही आलोच्य ग्रन्थमें कुछ नये लेखों तथा प्रसारणोंको सम्मिलित कर लिया गया है । जो बंगला देशके संकटके फलस्वरूप १४ दिनके भारत-पाक युद्धके बाद नये गणतन्त्रके अभ्युदयके सन्दर्भ में लिखे गये । इन लेखोंमें भारत सोवियत सम्बन्धोंपर प्रकाश डालते हुए, दोनों देशोंके बीच शान्ति, मैत्री और सहयोगके लिए हुई २० वर्षकी सन्धिके महत्त्वको आँका गया है । सामयिक राजनीतिमें दिलचस्पी रखनेवाले पाठकोंके लिए पुस्तक रोचक है ।

—मनमोहन वर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पूर्ण गान्धी वाङ्मय (खण्ड ४६)

प्रकाशक—प्रकाशन-विभाग, सूचना और प्रसार मंत्रालय, भारत-सरकार, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ४८७; डिमाई, ७२; मूल्य : ७.५० रु०।

गान्धी-वाङमयके प्रस्तुत खण्डमें गान्धीजीके १६ अप्रैलसे १७ जून १९३१ तकके कार्यकलापकी झाँकी मिलती है। गान्धी-इर्विन पैक्टके नामसे प्रसिद्ध अस्थायी समझौतेके बादकी यह वह कालावधि है जब उसपर अमलमें आनेवाली कठिनाइयोंके बावजूद गान्धीजी उस समझौतेको पारस्परिक विश्वास और सहयोगकी उसी भावनासे कार्यान्वित करानेको प्रयत्नशील थे जिससे कि वह किया गया था। भारत-सरकारके "गृह-मंत्री एमसेनको उन्होंने आश्वासन दिया कि "समझौता भंग न होने देनेकी दृष्टिसे मैं ऐसा कोई काम नहीं करूँगा, जिसे करना मेरे लिए अशोभनीय हो।" और गान्धीजी से हुई वार्त्ताकी अपनी प्रतिक्रियामें एमर्सनने माना कि गान्धीजी "समझौतेका पूरा-पूरा पालन करानेके लिए पहलेसे अधिक चिन्तित हैं।" फिरभी, जैसाकि गान्धीजीने एणरूजको लिखे पत्रमें बताया, "अफ़सरोंकी काहिली, अनिच्छा और विरोध" के कारण कठिनाई हो रही थी और राजगोपालाचारीको उन्होंने प्रान्तीय सरकारोंके विरोधी रुखका स्पष्ट उल्लेख करते हुए लिखा कि "उनसे समझौते-पर अमल कराना अत्यन्तही दुष्कर है, शेरकी दाढ़ निकालने जैसा।"

एक ओर सरकारी रुख उन्हें परेशान कर रहा था, दूसरी ओर हिंसावादियोंकी संख्या नगण्य होते हुए भी उनके हिंसक कार्योंसे राजनैतिक हत्याको...बड़े पैमानेपर... अविवेकपूर्ण समर्थन" मिलनेसे वे चिंतित थे। इस खण्डका प्रारम्भही 'हिंसावादिता' शीर्षक लेखसे हुआ है, जिसमें गान्धीजीने स्वीकार किया है कि कराची-काँग्रेसमें स्वीकृत भगतसिंह सम्बन्धी प्रस्तावका असर शायद बिलकुल उलटा ही पड़ा। लगता है मानो उसने लोगोंको बेखटके हत्याकीही प्रशंसा करनेका अधिकार दे दिया।" और अहिंसाको दुर्बलका नहीं बलवानका शस्त्र बताते हुए इस बातपर ज़ोर दिया कि "अन्य देशोंके बारेमें वस्तुस्थिति चाहे जो [...] कम-से-कम हिन्दुस्तानमेंतो राजनीतिक हत्या देशको [...] सानही पहुँचा सकती है।" ख़ासकर उस हालतमें "जब [...] शान्तिपूर्ण उपायोंसे स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका एक ऐसा [...] प्रयोग किया जारहा है जैसा अभीतककी दुनियामें अभ[...] ही है।" और "भारतमें वर्त्तमान असाधारण लोकजा[...] केवल अहिंसक रीतिसे ही हुई है, जिसमें स्त्रियोंकी जागृ[...] शामिल है।"

गोलमेज परिषदमें जाया जाये या नहीं, यह प्रश्[...] विचाराधीन था और गान्धीजीकी मनःस्थिति कुछ [...] प्रकारकी थी कि साम्प्रदायिक समस्याका जबतक सम[...] न हो जाये तबतक जाना सार्थक नहीं होगा, क्योंकि (जै[...] डॉ० अंसारीको उन्होंने लिखा) "यदि मेरे अपनेही [...] यहाँ परस्पर फूट रहेगी तो मैं (वहाँ) क्या माँगें रख पा[...] और राष्ट्रीय माँगको बहुत दृढ़ताके साथ कैसे पेश [...] पाऊँगा?" फिर, जैसाकि ४ जूनके 'यंग इंडिया' में उ[...] लिखा, "दिल्ली-समझौतेके मार्गमें नाज़ुक स्थिति[...] उत्पन्न होते रहना मेरे लन्दन जानेकी एक दूसरी बाधा [...] (क्योंकि) समझौता न टूटने देनेके लिए मेरी उपस्थिति [...] आवश्यक है।" इसके बावजूद ४ जूनके अंकमें ही प्रक[...] एक दूसरे लेखमें उन्होंने कहा : "मैं यदि यह देखूं कि [...] लन्दन जाना सर्वथा निरापद है तो गोलमेज़ परिषदमें [...] लेनेके लिए वहाँ जानेमें कोई संकोच नहीं करूँगा।"

इन उलझनोंके बावजूद इस समयभी हम गान्धीजी[...] आश्रमवासियों तथा अन्य लोगोंकी छोटी-छोटी [...] भी दिलचस्पी लेते पाते हैं। काँग्रेसके झगड़ों, रचना[...] और खासकर खादी, बहिष्कार तथा हरिजनोंके [...] बराबर योगदान करते देखते हैं। स्वराज्यका अर्थ [...] "हिन्दुस्तानके नर-कंकालोंकी मुक्ति" बताकर कहा [...] गूंगे जब बोलने लगेंगे और जब ये लंगड़े-लूले चलने [...] तभी यह कहा जा सकता है कि पूर्ण स्वराज्य मिल [...] (पृ० ११) अपने लंगोटी-धारणकी पृष्ठभूमि [...] सभामें देखी ग़रीबीका ज़िक्र करते हुए बतायी : "मु[...] कि सभ्यताका त्याग किये बिना यदि मैं अनावश्यक ए[...] इंच कपड़ेका त्याग कर सकूं, तो उन करोड़ों अधनंगे [...]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहन-सहनके अधिक समीप होकर उनसे अपनेको जोड़ सकूंगा। इसके सिवा और पुरअसर जवाब मैं उन लोगोंको क्या देसकता था? फलतः यह परिवर्तन मैंने मदुराकी सभाके बाद दूसरे दिन सवेरे ही कर डाला।" (पृष्ठ ५७)। भारतीय संस्कृतिको 'संस्कृतियोंका मिश्रण' बताते हुए कहा: "संस्कृतियाँ भिन्न-भिन्न धर्मोंसे निकलकर भौगोलिक तथा दूसरे जिस प्रकारके भिन्न वातावरणमें पहुँची हैं उनके कारण उनका रूपान्तर होगया है। इस प्रकार मुसलमानी सभ्यताका रूप अरब, तुर्की, मिस्र और हिन्दुस्तानमें एकही नहीं है,बल्कि उसपर विभिन्न सम्बन्धित देशोंकी परिस्थितियों-का असर पड़ा है। इसी अर्थमें भारतीय संस्कृति भारतीय ही है। वह न सम्पूर्णतया हिन्दू संस्कृति है, न इस्लामी और न कोई दूसरी। वह सब संस्कृतियोंका मिश्रण है और सच्चे अर्थोंमें पूर्वकी संस्कृति है।" उनके अनुसार "अपनेको भारतीय कहलानेवाले हर एक स्त्री-पुरुषका धर्म है कि वह इस संस्कृतिको अपनाये, इसका रक्षक बने और इसपर होनेवाले आक्रमणोंका सामना करे।" और पश्चिमी सभ्यता-के नक्कालोंको उन्होंने चेतावनी दी कि यूरोपकी सभ्यताकी "अगर हम नकल करेंगे तो उसका परिणाम हिन्दुस्तानका नाश ही होगा।" (पृष्ठ ५७)।

पंचायतोंके बारेमें गान्धीजीने मत व्यक्त किया कि उन्हें फौजदारीके हक़ नहीं होने चाहिए और दीवानी मामलोंका विचार वे तब करें जब दोनों फरीक़ पंचायतमें अपनी शिका-यतें पेश करें। यही नहीं, उन्होंने यहभी कहा कि "किसी पंचायतको जुर्मानेका अधिकार नहीं होना चाहिए; नैतिक अधिकार, कठोर पक्षपातहीनता और दोनों पक्षोंका स्वेच्छा-पूर्वक आज्ञापालनही उसकी दीवानी डिक्रियोंकी स्वीकृतिका आधार होना चाहिए।" साथ ही हरएक पंचायतसे अपेक्षा की कि "(क) वह गाँवके बालक-बालिकाओंकी शिक्षाका प्रबन्ध करे; (ख) सफ़ाईकी व्यवस्था करे; (ग) औषध आदिका इन्तजाम करे; (घ) गाँवके तालाब और कुओंकी मरम्मत तथा सफ़ाईका खयाल रखे; (ङ) तथाकथित अंत्यजों (हरिजनों) की उन्नति और उनकी दैनिक आव-श्यकताओंका ध्यान रखे।" (पृष्ठ २५६)। सुधारकोंको सलाह दी कि वे "ढेंढ़-चमार भाइयोंको उनके धन्धेको छोड़ने-की सीखन दें, बल्कि उन्हें वह धन्धा भलीभाँति सिखादें" (पृ. ३६२), क्योंकि उनके अनुसार, "अस्पृश्यताका निवा-रण चमार आदिके धन्धेको छोड़नेसे नहीं होगा, परन्तु जब हिन्दू जनता अपने पापको समझेगी और अंत्यज (हरिजन) भाई अपनेमेंसे उन बुराइयोंको दूर करेंगे जो उनमें घुस गयी हैं, तभी अस्पृश्यताका निवारण होगा।" (पृ० ३६३)। और पुत्र-मृत्युकी पीड़ासे पीड़ित माताके खान-पानमें कमी करनेपर लिखा: "पुत्र मरे या पति, उसका शोक मिथ्या है और अज्ञान है। इसे केवल ज्ञानकी बात समझकर कोई इसकी उपेक्षा न करे, बल्कि हृदयमें स्थान देकर इसपर अमल करे। जहाँ सबको मरना ही है, वहाँ आज या कलका काल-भेद मात्र रह जाता है। उसका शोक क्या करना? मरता तो सिर्फ़ शरीर है; उसका तो यह स्वभाव है, इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं। यह निश्चय है कि उसमें रहने-वाला जीव कभी नहीं मरता, जीवका स्वभाव अमरता है। इतना निश्चयात्मक ज्ञान होते हुएभी शोक किसलिए?" और 'यदि शोक अवश्यम्भावी हो, तो क्या उस शोकका निवारण उपवास या खुराककी कमीसे हो सकता है? उससे लाभ किसे होगा? मरनेवालेको? और फिर क्या मरनेवाली देहको या अमर आत्माको? खानेवाली देह तो राख हो चुकी है, या उसे कीड़े खा रहे हैं। आत्मा तो न खाती है न पीती है, तो फिर माता या पत्नी खानेमें संकोच क्यों करे?" (पृ० ३६५-३६६)। तात्पर्य यह कि 'कम खानेसे मरने वालेकी देह या आत्माका कोई सम्बन्ध नहीं है। देहयुक्त आत्माके कल्याणका इच्छुक, उसकी यादको कायम रखनेवाला व्यक्ति, उपवास करके अपनी इच्छा पूरी नहीं कर सकता, बल्कि उसके गुणोंके अनुकरणसे दोनों बातें साध सकता है।" (पृष्ठ ३६६)।

इसी तरहकी अनेक विचारोत्तेजक बातें और उत्तम सलाहें इसमें समाविष्ट हैं, जिनपर ध्यान देकर बहुत लाभ उठाया जा सकता है।

—मुकुट बिहारी वर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्मा गान्धी : आत्म साधना
भूदान यज्ञ के प्रणेता : विनोवा

लेखक : मोहनलाल भट्ट; प्रकाशक : राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा । पृष्ठ : २३६, २३२; क्राउन, ७२; मूल्य क्रमशः ५.५० रु०, ५.०० रु० ।

'आत्मसाधना' गान्धीजीके क्रान्तिकारी जीवन-प्रसंगों तथा सत्यके प्रयोगोंकी कथा है । प्रास्ताविकमें लेखकने कहा है : "गान्धीजीका जीवन-वृत्तान्त, जो उनकी आत्म-साधनाको प्राधान्य देकर लिखा गया हो, एक स्थानपर उपलब्ध नहीं है । उन्होंने अपनी 'आत्मकथा' को सत्यके प्रयोगोंका नाम दिया है और उसमें उनकी आत्म-साधनाकी झाँकी मिलती है । परन्तु वह अधूरी है और उसमेंभी दक्षिण अफ्रीकाके सत्याग्रहका इतिहास अलग पुस्तकके रूपमें प्रकाशित हुआ है । इसलिए गान्धीजीका समग्र जीवन-वृत्तान्त, उनकी आत्मसाधनाकी दृष्टिसे प्राधान्य देकर तैयार करनेका हमारा यह नम्र प्रयत्न है ।" इसीलिए इसमें गान्धीजीके जन्मसे मरणतकका विवरण उपलब्ध है और किस प्रकार साधारण व्यक्तिसे वे महान बने, इसका सरस वर्णन है ।

विनोवाजीको लोग गान्धीजीके आध्यात्मिक उत्तराधिकारीके रूपमें जानते हैं और भूदानसे लेकर ग्रामदान तथा जीवनदानतकका प्रचारकर वे आज विश्व-विख्यात हो गये हैं । वे सन्त कैसे बने, उन्होंने कैसे अध्ययन और स्वाध्याय किया तथा कैसे गान्धीजीके सम्पर्कमें आकर तप और साधनाका जीवन बिताते हुए ग्राम-स्वराज और विश्व-स्वराजके मार्गदर्शक बने, यह इस पुस्तक ('विनोवा') के छोटे-छोटे ५१ अध्यायोंमें रोचक ढंगसे बताया गया है । साथही एक परिशिष्टमें ग्रामदानपर विस्तृत प्रकाश डाला गया है और एक परिशिष्टमें महाराष्ट्रके एक प्रकाण्ड पण्डित द्वारा संस्कृतमें रचित 'भूमिदान यज्ञोपनिषद' को उसके हिन्दी अर्थ-सहित दिया गया है,जिसके अन्तिम पद्यका हिन्दी-अर्थ निम्न प्रकार है :

"हे अखिल विश्वका पोषण करनेवाली भूमिदेवी ! तू हमपर प्रसन्न हो । दुनियाँभरके लोगोंके पोषणका सारा बोझ तुझपर ही है । हे भूमिदेवी ! तेरी प्रसन्नतामें ही इस सारी दुनियाँका मंगलही मंगल निहित है ।"

विनोवाजीके जीवन और विकास सम्बन्धी दि[...] जानकारी इसमें मिलती है । जिस भूदानके लिए वे वि[...] विख्यात हुए उसकी मूल भावना प्रारम्भके प्रका[...] निवेदनमें ही उपलब्ध है । रहा सर्वोदय, उसका पृष्ठ [...] २१४ में विनोवाजीके शब्दोंमें इस प्रकार प्रतिपादन [...] "मनुष्यके हाथमें विज्ञानकी बड़ी शक्तियाँ आज आयी [...] फिरभी कोई निर्भय होकर सो नहीं सकता । सर्वत्र [...] ही भय दिखायी देता है । कोई सुखी नहीं, दुःखीही दि[...] देते हैं । आज दुनियाँमें जितना ज्ञान है उतना पहले [...] नहीं था, परन्तु भयभी उतना ही है । इसलिए हम पश्चि[...] विज्ञान लेना चाहते हैं और भारतका समाजशास्त्र [...] आत्मज्ञानपर खड़ा है । हम इन दोनोंको जोड़ना चाह[...] यह कार्य सर्वोदयका है ।"

इस प्रकार गान्धीजी और विनोबाजीके बारेमें जान[...] के लिए ये दोनों पुस्तकें उपयोगी हैं ।

—मुकुट बिहारी [...]

बारडोली के सरदार

लेखक : रंजन परमार; प्रकाशक : राष्ट्रभाषा [...] समिति, वर्धा । पृष्ठ : ३०४; क्राउन, ७२; [...] ६.५० रु० ।

राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी टण्डन-ग्रन्थमाला[...] तीसरी पुस्तक है, जिसमें सरदार पटेलका संस्मर[...] चरित्र-चित्रण है । ३०२ संस्मरण-चित्रणोंमें इसे वि[...] किया गया है, जिनका आरम्भ बड़ौदाके संस्कृत-[...] गुजराती शिक्षकके साथ हुई नौकझोंकसे और अ[...] दाहके 'अन्तिम दिन' से होता है । प्रत्येक अध्याय कि[...] घटनाका ही चित्रण है, जिससे जानकारीके साथ [...] रोचक भी होगयी है ।

सरदार पटेलके जीवन और कार्योंपर इससे [...] प्रकाश पड़ता है, साथही तत्कालीन परिस्थिति और [...] युगमें स्वराज्य-प्राप्तिकी दिशामें हुई गतिविधिकी जा[...] भी मिलती है । खेड़ा-सत्याग्रहके बाद गान्धीजीने [...] भाईके बारेमें कहा था : "वल्लभभाईको प्रथम बार [...] मैं मन-ही-मन यह सोचने लगा कि यह अक्खड़ पु[...] क्या काम आयेगा ? किन्तु जैसे-जैसे वे मेरे निकट[...]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आते गये, मेरा यह विचार दृढ़तामें बदलता गया कि मुझे तो वल्लभभाई जैसे आदमीकी ही आवश्यकता है। यदि मुझे वल्लभभाई न मिलते, तो जो काम हुआ है वह न होता।' (पृ० १३)। इससे सरदार पटेलका ठीक मूल्यांकन ही नहीं होता, बल्कि गान्धीजीकी पारखी दृष्टिकाभी पता चलता है और इस यथार्थका बोध होता है कि गान्धीजीकी योजनाओं-के क्रियान्वयनमें वल्लभभाईका पूर्ण योगदान था।

डॉ० अन्सारीको मुख्त्यारअहमदके बजाय महमूद (पृ० ३६) लिखने जैसी कुछ भूलोंपर ध्यान न दें तो इससे सरदार पटेलके जीवनकी अच्छी झांकी मिलती है और खरे, नरीमान आदि प्रकरणोंके लिए कुछ लोग सरदार पटेलको जो दोष देते हैं उसकाभी समाधान हो जाता है। वस्तुतः सरदारका जो रूप सामने आता है वह यही कि वे सत्ता या पदके लोलुप कभी नहीं रहे और न किसीके प्रति द्वेष-भावना से कोई काम उन्होंने किया, बल्कि देश या संस्थाके हितमें जो कटु कर्त्तव्य सामने आया उसे निष्ठापूर्वक निरासक्त भावसे ही उन्होंने किया। इसीसे सरदार पटेल संगठन और राष्ट्रको सुदृढ़ करनेवालोंमें सर्वोपरि माने जाते हैं।

—मुकुटबिहारी वर्मा

श्री आनन्द स्वामी सरस्वती

लेखक : श्री रणवीर; अनुवादक—सुनील शर्मा; प्रकाशक : गोविन्दराम हासानन्द, नयी सड़क, दिल्ली-६। पृष्ठ संख्या : ३४८ + १६ (चित्र सहित); फाउन, ७३०; मूल्य : ८.०० रु०।

प्रस्तुत पुस्तक उर्दूसे अनूदित है और पुस्तकके लेखक दैनिक 'मिलाप' के सम्पादक हैं और श्री आनन्द स्वामीके पुत्र हैं जिससे इस जीवनीकी प्रामाणिकता और बढ़ गयी है। पुस्तकमें लेखकका अपना व्यक्तित्वभी उभरकर सामने आया है कारण कि वह नायक का आत्मवत् जो ठहरा। हिन्दीमें ऐसी जीवनियोंका नितान्त अभाव है जो अन्तरंग व्यक्तियों द्वारा लिखी गयी हों। पुस्तकमें आसान उर्दूके शब्दोंके प्रयोगसे भाषामें सरलता है। अन्तमें कई चित्र देकर पुस्तक-की उपयोगितामें वृद्धि हो गयी है।

प्रस्तुत पुस्तक शीर्षकों एवं उप-शीर्षकोंमें नहीं बँटी है वरन् धारावाहिक रूपमें प्रस्तुत है। इसकी रोचकतामें वृद्धि करनेवाली बातें हैं : स्वतन्त्रता-संग्रामकी झाँकी और यौगिक चमत्कारों एवं कुछ ऐसीही घटनाओंका वर्णन। फिरभी पुस्तककी प्रामाणिकतामें रंचमात्रभी सन्देह नहीं।

प्रारम्भमें लेखकने सूरी-वंशका परिचय दिया है और एक महत्त्वपूर्ण विवादास्पद मसलेका हल उपस्थित किया है कि भारतपर हमला करनेवाली सबसे पहली एक सूरी महिलाही थी। उसका हमला ईसा पूर्व चार हज़ार साल पहले हुआ था। इस रहस्योद्घाटनके बाद कहीं क्रमवार तो कहीं बेतरतीब ढंगसे स्वामीजीकी जीवनगाथा लिखी गयी है। इस पुस्तकसे यह भी ज्ञात होता है कि कैसे एक सामान्य स्थितिका साधारण पढ़ा-लिखा व्यक्तिभी गौरवके उच्चतम शिखरपर पहुँच सकता है। उनका सम्पूर्ण जीवन सादगी, सेवा, त्याग एवं निष्ठाका जीवन है। उन्होंने सदैव दूसरोंको शान्ति एवं प्रकाश प्रदान किया है। उनका आनन्दस्वामी नामभी अपनेमें सार्थक है कारण कि उनके जीवनमें अवसादका पदार्पण कभी हुआ ही नहीं। देश और विदेशोंमें भी स्वामीजीकी अदभुत विद्वत्ता एवं क्षमताकी धाक जम गयी। संन्यास ग्रहण करनेके बाद इस पकी आयु-मेंभी वे चैन नहीं लेते और सारी दुनियाँका भ्रमणभी हालमें कर आये हैं। नब्बे वर्षकी आयुमें भी उनका कार्यकलाप स्पृहणीय और महनीय है। इस घोर भौतिकतावादी एवं अनास्थावादी युगमें उनके जीवनसे युवक-युवतियोंको मार्ग दर्शन मिलेगा। स्वामीजीने इतर धर्मावलम्बियोंकोभी मोहित कर लिया है। इस तरह वे पक्के राष्ट्रवादी हैं। स्वामीजीको कुछ गुण्डोंने बदनाम भी करना चाहा परन्तु उन्होंने किसीके दुर्व्यवहार एवं दुर्वचनपर ध्यान नहीं दिया। सहिष्णुताकी सीख उनसे प्रत्येक व्यक्तिको लेनी चाहिये। पुस्तककी छपाई-सफाई, आवरण एवं जिल्दसाजीसे किसी-को निराश नहीं होना पड़ेगा।

—प्रो० वैद्यनाथ शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन-साहित्य

जीवन-ज्योति

लेखक : डॉ० मंगलदेव शास्त्री; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, बी ४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ ३३६; डिमा० ७२; मूल्य : १६०० रु०।

डॉ० मंगलदेव शास्त्री संस्कृत वाङमयके अधीत विद्वान् हैं। वेद और वैदिक वाङमयके दीर्घकालीन अनुशीलनसे अन्तःकरणमें जिस दिव्य, भास्वर प्रकाशकी अनुभूति हुई, 'जीवन ज्योति' को उसीका मूर्त रूप कहा जाये तो अनुचित न होगा।

आधुनिक भौतिक युँगकी समस्त चिंताका विषय एक-ही है—सृष्टिका शृंगार मानव सुखी कैसे हो? ज्ञान-विज्ञानका समस्त अन्वेषण इसी एक महत् उद्देश्यसे परिचालित है। किन्तु, यह एक अत्यंत आश्चर्यका ही विषय है कि मनुष्यको जितना अधिक सुखी बनानेका प्रयत्न किया जा रहा है, उतनाही वह और अधिक दीन-हीन, मलिन और दुखी होता जा रहा है। लगता हैं जैसे सम्पूर्ण भौतिक प्रगति मानवको सुखी करनेके प्रयत्नमें व्यर्थ और निष्फलसी हुई जा रही है। इसका स्पष्ट प्रमाण यह है कि भौतिक सुख सुविधाओंके चतुर्दिक प्रसारके मध्यभी आजका मानव एक गहरी निराशा और अनास्थामें डूबा हुआ कुण्ठाग्रस्त जीवन व्यतीत कर रहा है। 'महान' होनेके क्रममें वह इतना 'लघु' हो गया है कि एक अज्ञात भय, आशंका और मानसिक तनावसे निरन्तर संत्रस्त रहता है। 'सम्पन्न' होते हुएभी वह विपन्न बन इस जीवनको भार स्वरूप ढोते हुए दम तोड़ देता है। ऐसेही विपन्न, श्रीहत और सर्वहारा आधुनिक मानवको जीवन-दृष्टि और आत्मिक शक्ति प्रदान करनेके लिए डॉ० शास्त्रीने 'जीवन ज्योति' को राष्ट्र भाषाके माध्यमसे राष्ट्रके समक्ष प्रस्तुत किया है।

अपने दीर्घ अध्ययन, मनन और चिन्तनके परिणाम-स्वरूप जिस अन्तर्दृष्टिका शास्त्रीजीको बोध हुआ, उसीको ज्योतिर्मय सोलह रश्मियोंके रूपमें विभक्त किया है। जिस प्रकार सोलह कलाओंसे युक्त होनेपर ही चन्द्रमा अमृत तत्त्वसे परिपूर्ण होता है, मानव जीवनभी इन सोलह रश्मियोंमें वर्णित सिद्धान्तोंका अवलम्ब लेकर अपने रिक्त जीवनको आनन्दसे पूर्ण कर सकता है। 'व्रत पालन', 'चारित्र्य-सम्पति', 'स्वास्थ्य सम्पति', 'भाव संशुद्धि,' 'मनःप्रसाद, आनन्दानुभव' और 'सन्नीति-'निदर्शन' शीर्षक रश्मियोंमें लेखकने जिन सिद्धान्तोंका प्रतिपादन किया है, उन्हें अपना-कर मानव 'जीनेकी कला' सीख सकता है। जीवनमें अप-नाये गये व्रतका निष्ठापूर्वक पालन करते हुए, निर्मल चरित्र और उत्तम स्वास्थ्यकी प्रभासे आलोकित कर्मठ व्यक्ति भाव संशुद्धि और मनःप्रसादनकी मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं-से आनन्दानुभव करता हुआ अपना जीवन आदर्शमय व्यतीत कर सकता है।

जीवन साफल्यके लिए निर्दिष्ट उपर्युक्त साधनोंके अतिरिक्त शास्त्रीजीने 'तत्त्व-मीमांसा', 'अध्यात्म योग' और 'प्रज्ञाप्रसाद' के अन्तर्गत परमात्म तत्त्व, आत्माका स्वरूप, योग-साधनाका स्वरूप आत्म-साक्षात्कार, परम तत्त्वका साक्षात्कार, ओंकारकी महिमा आदि गूढ़ आध्या-त्मिक विषयोंका सरस और सुस्पष्ट बोध कराया है। जीवन और जगतके वास्तविक स्वरूपका बोध हो जानेपर मनुष्य आचरण गत सिद्धान्तोंका पालन करते हुए इसी सांसारिक जीवनमें आत्म साक्षात्कार करनेमें सफल हो सकता है।

इस पुस्तकका वैशिष्ट्य उस 'जीवन दृष्टि' में परि-लक्षित किया जा सकता है, जिसे लेखक ने 'जीवन संगी-तक', 'दुखमिमाँसा', 'कर्मदर्शन', 'मेरी अक्षय निधि', और 'व्यष्टि तथा समष्टिका सामंजस्य' शीर्षक रश्मियोंमें विकसित की है। हमेशासे हम यह सुनते आ रहे हैं कि यह संसार क्षण-भंगुर, असार, मिथ्या और दुखमय है, अतः त्याज है। हम इस संसारमें अकेलेही आये हैं और अकेलेही जायेंगे, इत्यादि परम्परागत मान्यताओंने हमें अन्तर्मुखी, कायर, भीरु अकर्मण्य और घोर निराशावादी बनाकर हमारा कितना अधिक अहित किया है, यह सर्वविदित है। जीवन और जगतके प्रति इस निराशावादी रूग्ण दृष्टिकोणके स्थानपर आशावादी स्वस्थ दृष्टिकी प्रस्थापना की गयी है। जीवन परम प्रभुका परमोत्कृष्ट प्रसाद है जिसका समुचित लाभ लेनेके लिए हमें आशाका अंचल दृढ़तापूर्वक सदैवही पकड़े रहना है। आशाकी ज्योतिर्मय किरणोंसे आत्म-जड़ता और हीनताके कुहासेका विच्छेदकर अपने जीवनको सम्पूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना होगा। संसारमें दुख अधिक है सुख कम, प्राय: इसकी हम सदैव शिकायत करते रहते हैं। किन्तु इस संसार-सागरमें सुख और दुख दोनोंकी समान सत्ता है और दोनोंही मानव जीवनके लिए अपरिहार्य हैं। वस्तुत: दुख हमारे लिए अभिशाप नहीं, वरन प्रभुके मंगलमय वरदान हैं। अन्धकार-की प्राचीपर जिस प्रकार उषाका उदय होता है, दुखकी क्रोड़से उसी प्रकार सुखका विकास होता है। अत: दुख हेय और त्याज नहीं है। प्रभुका प्रसाद समझकर उसे स्वेच्छया स्वीकार करनेपर वह दुख, दुख प्रतीत नहीं होगा और हम उससे उसी प्रकारसे अप्रभावित रहेंगे जिस प्रकार शिव काल-कूट पान करनेपर रहे। अत: आशावादका समाश्रय लेकर कर्मठ व्यक्ति सुख और दुखको स्वीकार करता हुआ अक्षय निधिकी शक्तिसे रस, ग्रहणकर अपनी सांसारिक यात्रा निर्भिकतासे सम्पूर्ण करता है। गिरता हुआ नैतिक स्तर आजकी एक प्रधान समस्या है। इसका सबसे बड़ा कारण यही है कि वाह्य प्रलोभन अथवा नरकके भयही सदाचरणके मूल आधार रहे। नैतिक जीवन आत्माकी एक आन्तरिक आवश्यकता है, इसे जबतक स्वीकार नहीं किया जायेगा तब-तक वाह्य प्रेरणाएँ सदैव व्यर्थ सिद्ध होंगी। हमारा राष्ट्रका समग्र जीवन तभी सम्मुन्नत हो सकता है जब हम नैतिकता और सदाचरणको अपनी अन्त:प्रेरणासे अपने जीवनका एक अनिवार्य अंग बना लेंगे।

इस प्रकार आजके विघटानकारी युगमें, जबकि हमारे सम्पूर्ण जीवन-मूल्योंका तेजीसे विघटन हो रहा है, चारों ओर एक गहरी अनास्था, कुण्ठा और निराशा परिव्याप्त है, प्रस्तुत पुस्तक जीवन-ज्योतिका प्रकाशन अपने आपमें एक सामयिक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। लेखकने इसे वक्ता और श्रोताकी पौराणिक शैलीमें अत्यन्त सरल सजीव और सुबोध ढंगसे राष्ट्रभाषाके माध्यमसे प्रस्तुत किया है, जिसको आत्मसात करनेपर जीवन निसन्देह ज्योतिर्मय हो सकता है।

—डॉ० यदुवीर प्रसाद भटनागर

बाल साहित्य

खेल खिलौनोंका संसार (नाटक)

लेखिका : रेखा जैन; प्रकाशक : राधाकृष्ण प्रकाशन, २ अंसारी रोड, दिल्ली-६। पृष्ठ : ११६; क्राउन, ७३; मूल्य : ४.०० रु०।

"बच्चोंको सचमुच रंगमंचीय अनुभव देने, उनकी कल्पनाशक्ति और सर्जनात्मकता जगानेके लिए ऐसे नाटक अधिक उपयुक्त हैं जो सुन्दरता, अनोखेपन और चमत्कारसे भरे हों तथा बच्चोंके दैनिक जीवनसे सम्बन्धित खेलकूदपर आधारित हों। इस तरहके नाटकोंमें उन्हें आनन्दभी मिलता है और साथही सीधे-सीधे उपदेशके बिनाही उनमें भलेबुरेकी पहचानभी पैदा होती है—जैसे अत्याचारी, धोखेबाज़ या स्वार्थी पात्रोंके लिए घृणा और दयालु, ईमान-दार, परोपकारी पात्रोंके लिए प्रेम और आदर-भाव जाग जाता है।" लेखिकाके इन विचारोंसे निश्चयही सहमत हुआ जा सकता है। आज बच्चोंके लिए 'सही नाटकोंका नितान्त अभाव है। कारण यह है कि इस दिशामें अभी-भी दक़ियानूसी विचारोंको छोड़ा नहीं जा सका। 'श्रवण-कुमार'—'अभिमन्यु' के कथानक आजभी आदर्श रूपमें बच्चोंके मँचपर विराजमान हैं और बच्चोंकी नाटकके प्रति मनोवैज्ञानिक-प्रवृत्तिके अनुकूल विषयों तथा अभिनयका कोई महत्त्व नहीं है। स्कूलके जलसोंमें, विशेष अवसरोंपर प्रस्तुत कार्यक्रमोंमें भी बड़ोंकी विचारधारा और 'व्यक्ति-विशेष' को प्रसन्न करनेका ही आधिक्य होता है। बाल-साहित्यकी इस उपेक्षित दिशाने पिछले कुछ वर्षोंमें लेखकों और नाट्यकारोंका ध्यान आकर्षित किया है। इसके फल-स्वरूप बच्चोंके लिए आधुनिक परिवेशमें लिखे गये मँचीय नाटकोंकी रचना आरम्भ हुई है।

रेखा जैनका 'खेल-खिलौनोंका संसार' बाल-नाट्य-साहित्य' की एक उपलब्धिके रूपमें स्वीकार होनी चाहिये। लेखिकाने व्यक्तिगत अनुभवोंके आधारपर, बाल-मनोवृत्ति-के अनुकूल नाटकोंकी रचना की है और उन्हें सफलतापूर्वक मँचपर प्रस्तुतभी किया है। वस्तुत: बाल-नाटकोंकी विशे-षता यही होती है कि वे न केवल अभिनेता-बालकोंको,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बल्कि दर्शक बालकोंको भी अपनेमें डुबा लें। और इसके लिए आवश्यक होता है–एक सशक्त कथानक—ऐसा कथानक जो बच्चोंके जीवनसे सम्बद्ध हो, जिसका घटना-स्थल बच्चोंके आसपास हो, जिसके पात्र बच्चे हों और जिसका प्रभाव उनका कोमल-मन स्वाभाविक रीतिसे ग्रहण करले। दिल्लीके चिल्ड्रंस लिटिल थियेटरमें काम करते हुए लेखिकाने अनुभव किया है कि "पढ़ाई लिखाईमें उदासीन या अन्य समस्यावाले बच्चोंको भी जब विभिन्न पात्रोंके माध्यमसे अपने-आपको अभिव्यक्त करनेका मौक़ा मिलता है तो वे अक्सर सामान्य या कभी-कभी तेज़ बच्चे भी बन जाते हैं और दूसरे क्षेत्रोंमें भी उन्नति करने लगते हैं।" यह 'सही नाटक' का प्रभाव ही सम्भव बना सकता है।

बाल-नाटकोंमें बच्चोंका अधिकाधिक सम्मिलित होने और अपनी अभिनेयताको विकसित करनेके पूरे अवसर होने चाहिए। यह तभी-सम्भव हो पाता है जब नाटक ऐसा हो जिसे बच्चे सरलतासे कंठस्थ करलें और अपने सीमित साधनोंमें मँचपर प्रस्तुत कर लें। नाटकोंकी भाषा, सम्वाद आदि अपनी पृथक विशिष्टता रखते हैं और उन्हें बाल-रुचिके अनुकूलही प्रस्तुत किया जाना चाहिये। प्रस्तुत पुस्तकके सभी नाटकोंमें—'खेल खिलौनोंका संसार', 'बहादुर चुन्नू', 'अप्सराका तोता', 'काक भगोड़ा', 'उद्यम धीरज बड़ी चीज़ है', 'मुन्नीका जन्मदिन' और 'कठपुतलीका खेल' में ये सभी विशेषताएँ हैं और लेखिका इनके लिए बधाईकी पात्र है।

—**डॉ० हरिकृष्ण देवसरे**

वारपर वार उपन्यास

लेखक : मनहर चौहान, प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज, दिल्ली-६। क्राउन, ७३; मूल्य : ३·५० रु०।

नयी पीढ़ीके सृजनशील लेखक मनहर चौहानकी इतिहासमें अच्छी पैठ है और बाल साहित्यमें विशेष रुचि। भारतमें ईस्ट इण्डिया कम्पनीकी स्थापनासे लेकर देशकी स्वतन्त्रताके प्रभातककी रोमाँचक इतिहास कथाको सोलह रोचक उपन्यासोंके पादमयसे किशोरोंके लिए वे विशेषरूपसे लिख रहे हैं। कथामालाके ४ भाग प्रकाशित हो चुके हैं और नवीनतम पाँचवाँ भाग "वारपर वार" के नामसे प्रकाशित हुआ है।

आलोच्य पुस्तकमें मराठा कालकी राजनीति है। ऐतिहासिक पात्रोंके माध्यमसे लेखकने बताया है कि ब्रि[illegible] सरकारके प्रतिनिधियों-रेजिडेंटोंने किस प्रकार एक म[illegible] सरदारको दूसरे सरदारके विरुद्ध खड़ाकर कैसे [illegible] उल्लू सिद्ध किया था। गवर्नर जनरल वेल्सली, कर्नल [illegible] कर्नल कालिन्स और कैप्टन फाइलास, सभी ऐतिहा[illegible] पात्र थे जो लेखकके हाथों सजीव होकर अपनी धूर्तता [illegible] मक्कारीको स्वयं प्रदर्शित करते हैं। ऐतिहासिक घटना[illegible] पुस्तकमें इतनी रोचकतासे प्रस्तुत किया गया है [illegible] उसे एक बार शुरू करनेपर खत्म किये बिना नहीं [illegible] जाता। आशा है "अंग्रेज आए और गए" शीर्षक इस [illegible] न्यास मालाका स्वागत होगा।

—**प्रेमकृष्ण [illegible]**

'प्रसिद्ध वैज्ञानिक'

लेखक : जीन बेथेले; अनुवादक : रामचन्द्र ति[illegible]
प्रकाशक : शिक्षा भारती, कश्मीरी गेट, दिल्ली[illegible]
पृष्ठ : ४८; डिमाई दुगना। मूल्य ४.०० रु०।

'मरुस्थल'

लेखक : पेलिक्स सटन; अनुवादक : सूर्य[illegible] तिवारी। शेष बातें उपर्युक्त।

'प्रसिद्ध वैज्ञानिक' में आर्कमेडीज़, कोपरनिकस, [illegible] लेई, हार्वे, लेवेनहुक, न्यूटन, फैराडे, डार्विन, पास्चर, मे[illegible] क्यूरी, आइन्स्टाइन, फ्लेमिंग, सी० वी० रामन—इन [illegible] विश्वविख्यात वैज्ञानिकोंके जीवनचरित्रों और उनके [illegible] सन्धान-आविष्कारोंका परिचय दिया गया है। [illegible] विज्ञानके क्षेत्रमें किसने क्या किया, कैसे किया और [illegible] खोज-सिद्धान्तका हमारे जीवनमें क्या महत्त्व है—[illegible] लेखकने इन सब बातोंको समझानेकी चेष्टा की है। [illegible] वादकी भाषा भी अच्छी है। कई स्थानोंपर कुछ त[illegible] शब्दों और पुस्तकोंके नामोंको हिन्दीमें अनूदित किया [illegible] है, यथा—'प्राकृतिक वरण द्वारा जातियोंकी उ[illegible]' (पृष्ठ २७); 'योग्यतमको उत्तरजीविता' (पृष्ठ [illegible]) 'मनुष्यकी उत्पत्ति' (२८); 'विशिष्ट घनत्त्व' (पृष्ठ [illegible]) अच्छा होता यदि इनके मूल रूपोंको देवनागरी [illegible] रखा जाता और कोष्ठकोंमें इनके ये हिन्दी अर्थ दिये [illegible] पृष्ठ ३७ पर 'रेडियो ऐक्टिवता' में हिन्दी-अंग्रेजीकी [illegible] बड़ी बेतुकी लगती है। पृष्ठ ४१ पर 'विद्यार्थिनी' [illegible] खटकता है। इसमें सन्देह नहीं कि 'प्रस्तुत पुस्तक भा[illegible] उदीयमान पीढ़ीमें विज्ञानके प्रति सम्मान और गहरी [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाग्रत करनेमें बहुत सहायक होगी' लेकिन अड़तालीस पृष्ठोंकी ऐसी पुस्तकें खरीदकर पढ़नेवाले लोग हमारे देशमें पर्याप्त संख्यामें मिलेंगे, इस बातमें पूरा सन्देह है। ये दोनों पुस्तकें आफसेटपर छपी हैं और शुरुसे अखीरतक चित्रोंसे सुसज्जित हैं।

'मरुस्थल' विश्वके विभिन्न मरुस्थलोंके विषयमें बताती है। विश्वके सभी मरुस्थल एक जैसे नहीं; यदि उनमें कोई समानता है तो यही कि वे पानीके अभावसे ग्रसित हैं। मरुस्थल कैसे बने; वहाँके निवासियोंका रहन-सहन, खान-पान कैसा है; वहाँ कौन-कौनसे जीव-जन्तु, पेड़-पौधे पाये जाते हैं—इस प्रकारकी बहुत-सी बातें इस पुस्तकमें पढ़नेको मिलती हैं। कितनीही दिलचस्प बातोंकी जानकारीभी होती है, जैसे—(१) सहाराके तुरेग मुसलमानोंमें औरतें नहीं, मर्द अपने चेहरेपर नकाब डालते हैं। वे जब खाना खाते हैं, तो बाँये हाथसे अपनी नकाब उठाते हैं और दाँयेसे उसके नीचे मुँहमें कौर डालते हैं। (२) सहाराके सौदागर मुसाबितोंमें युवती पत्नी पतिके परदेस जानेके बाद, फिर उससे उस समयतक नहीं मिलती जबतक कि दोनों बूढ़े नहीं हो जाते। (३) सहाराके ही टेडा कबीलेमें कोई युवक विवाहके योग्य तभी समझा जाता है, जब वह किसी दूसरे कबीलेसे ऊँट चुराकर ले आये।' (४) कालाहारीके बुशमैन शुतुर्मुर्गके अण्डोंको बड़ा स्वादिष्ट समझते हैं; पानी भरकर रखनेके लिएभी उनका प्रयोग किया जाता है। (५) आस्ट्रेलियाई मरुके बिन्डीबू घुटनोंके बल छिछले तालमें जाते हैं और पशुओंकी तरह मुँहसे पानी सुड़कते हैं।

—ब्रजगोपालदास अग्रवाल

शंकर-पार्वतीकी लोक-कथाएँ
बुद्धिमानीकी लोक-कथाएँ

लेखक-कुणाल श्रीवास्तव; प्रकाशक-राष्ट्रभाषा प्रकाशन, १५/२३, राजेन्द्रनगर, नई दिल्ली। पृष्ठ: १२०; क्राउन, ७२; । मूल्यः ३.५० रुपये प्रत्येक।

पहिली पुस्तकमें छह लोक-कथाएँ हैं। पार्वतीने बड़ी चालतासे शंकरसे शृंगी बजवा दी, तो अकालग्रस्त राज्यमें जी बरस गया। चेरीका रोना देखकर शंकरने आटेके को सुन्दर-सा राजकुमार बना कर बाँझ रानीका जीवन खुशीसे भर दिया। ब्राह्मणवेशी शंकरने राजकुमारको शाप दिया कि वह पन्द्रह सालका होते ही मर जायेगा, मगर राजकुमारने शंकरको उनके दो वरदानोंकी बातमें ऐसा फँसाया कि न वरदान पूरे हुए, न वह मरा। शंकरने पार्वतीको दिन-रात दिखाते-दिखाते स्पष्ट कर दिया कि रातमें भी दिन होता है, दिनकी दोपहरीभी रात-जैसी होती है। शंकरने सेठको एक सन्तान दे दी, तो उसकी नीयत बिगड़ गयी और दण्डके रूपमें उसे मन्दिरमें चाँदीकी जगह सोनेका त्रिशूल लगवाना पड़ा। पण्डितजीकी करनी ऐसी थी कि हाथ आई चीज़भी उन्हें न मिल पाती। ये कथाएँ शंकरके आशुतोषवाले रूप और क्रोधी स्वभाव दोनोंका अच्छा परिचय देती हैं। पुस्तक बड़ी रोचक है।

× × ×

दूसरी पुस्तकमें सात कथाएँ हैं। किसानने एक-एक कर नाई, मुँशी, पण्डित और जमींदारको निबटाया। मंझला बेटा बलि होते-होते हँस पड़ा और बच गया। कुम्हारने हू-ब-हू अपनेको मूर्तियोंमें गढ़कर अपना मृत्यु-काल टाल दिया। मगर अपने अहँकारसे अपने पैरों कुल्हाड़ी मार ली। पण्डितजीके लड़केने 'मेरे दो पिता हैं' कहकर सौतेली माँका प्यार पा लिया। गणेशजीने माता-पिता लिखकर एक चक्कर लगा लिया, तो वे सबसे बड़े देवताके रूपमें सर्वप्रथम पूज्य हो गये। मुसाफिर बूढ़ेको खुशकर उसकी लड़की और धन-दौलत पा गया। कहारोंके सरदारने दो पंक्तियाँ गाकर डाकुओंके हाथ-पैर बँधवा दिये। इन सब कथाओंमें बुद्धि और सूझबूझका चमत्कार है। आखिर अक्ल बड़ी या भैंस? पुस्तक रोचक शैलीमें लिखी गयी है। सचित्र है।

—ब्रजगोपालदास अग्रवाल

माटी होगयी सोना

लेखक: विनोद विभाकर, प्रकाशक-कला प्रकाशन मन्दिर २५३८, धर्मपुरा, दिल्ली-६। पृष्ठ: ३६; क्राउन दुगना, ७२; मूल्यः २.५० रु०।

प्रकृतिने हमें इतना कुछ दिया है कि हम उसका अधिकाधिक उपयोग करते रहें, फिरभी उसका भण्डार कम नहीं होता। यह हमारे कौशलपर निर्भर करता है कि हम कैसे उसका उपयोग करें और लाभ उठायें। 'माटी होगयी सोना' में कुछ ऐसीही वस्तुओंकी चर्चा की गयी है जो बहुत छोटी हैं, किन्तु अनमोल हैं। तारकोल, लाख, अभ्रक, रबर, नमक, मोम और जिप्समके विभिन्न उपयोगों, उनसे चलनेवाले उद्योगों तथा मानव-जीवनके लिए उनकी उप-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगिताकी चर्चा प्रस्तुत पुस्तकमें की गयी है। लेखकने विषय वस्तुको रोचक और सरलबनाकर प्रस्तुत किया है जिससे बालपाठक उसे समझ सकें। विषयवस्तु स्पष्ट करनेके लिए स्थान-स्थानपर चित्रभी दिये गये हैं। विज्ञानकी जानकारी बच्चोंको इस रीतिसे देनेमें उनमें उसके प्रति रुचि जागृत होती है और वे उद्यमी तथा अच्छे वैज्ञानिक बनते हैं। पुस्तकको छपाई, साज-सज्जा सुन्दर है, किन्तु मूल्य अधिक है।

—डॉ० हरिकृष्ण देवसरे

जेबी पुस्तकें

समीक्षक : जीवन

रोमांटिक उपन्यास

रातें पापकी प्यारकी

लेखक : पारस; प्रकाशक : पुष्पी पाकेट बुक्स, इलाहाबाद। पृष्ठ : १३२; १९७३; मूल्य : २०० रु०।

मेरे हमसफर

लेखक और प्रकाशक : उपर्युक्त; पृष्ठ : १३४, १९७२ मूल्य : २.०० रु०।

प्यारके फूल

लेखक और प्रकाशक : उपर्युक्त; पृष्ठ : १४२; १९७२ मूल्य : २.०० रु०।

'असाधारण सामाजिक कोटिके लोकप्रिय उपन्यासोंमें सेक्सकी चाशनी काफी गाढ़ी होनी चाहिये यह मानकर ये उपन्यास लिखे गये हैं। "रातें पापकी" का नायक हर शाम एक नयी लड़कीके साथ गुजारता था। क्योंकि वह एक दुराचारी सेठका बेटा है, अतः लड़कियोंको बापकी दौलत लुटाकर माँका बदला लेना है उसे। वह दो लड़कियोंसे विवाह कर लेता है जिनमें एक ऐसी लड़की है जो उसके पिताके साथ रह चुकी थी।

'मेरे हमसफर' एक गरीब लड़कीकी कहानी है जो यौन पीड़ित रहती है और अपहृत होनेके बाद कैबरे नृत्यमें सेक्स व्यापार करती है, जहाँ अन्ततः उसका पहला प्रेमी उसे मिल जाता है।

'प्यारके फूल' को न केवल आपबीती और सच्ची घटना कहा गया है बल्कि उसके नायक 'पारस' स्वयं हैं जिसे एक अज्ञात जज उसकी रचनाओंसे प्रभावित होकर अपने घरका प्रबन्ध सौंपकर मर जाता है। जजकी भागी हुई मृत लड़कीकी अवस्क बच्चीको वेश्यावृत्तिसे बचानेके बाद पारस उससे ब्याह कर लेता है। पोती जजकी वारिस बन जाती है।

व्यभिचार, वेश्यावृत्ति वासनोत्तेजक विवरणोंसे भरे इन 'सामाजिक' उपन्यासोंका अधकचरी मानसिक उम्रके युवकों-युवतियोंमें प्रचार होगा ही।

जासूसी उपन्यास

मौत के अँधेरे में

लेखक : कैप्टन देवेश; प्रकाशक : पुष्पी पाकेट बुक्स इलाहाबाद। पृष्ठ १४३; मूल्य २.०० रु०।

हत्यापर हत्या

लेखक : प्रकाशक: वही पृष्ठ : १४४; मूल्य २.०० रु०।

हत्यासे पहले

लेखक-प्रकाशक : वही। पृष्ठ १४०; मूल्य : २.०० रु०।

खूनी पत्र

लेखक : कर्नल राना; प्रकाशक : वही। पृष्ठ : १३[illegible] मूल्य : २.०० रु०।

जासूसी उपन्यासोंके छद्म लेखकोंको प्रकाशकोंने कैप्टन और कर्नलतक पद देही दिये हैं। भविष्यमें कदाचित् और पदोन्नति होजाये, किन्तु अधिकांश कैप्टन कर्नल [illegible] चालू ही हैं, चाहे विक्रीके मैदानमें वे अपने प्रकाशकोंके लिए काफी बाजी मार ले रहे हैं!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशकके द्वारा 'उपन्यास सम्राट' घोषित किये गये कैप्टेन देवेशके उपन्यासोंमें "विचित्र दांवपेंच, वेनकाव वासना और जीवटके कारनामे" भरे हुए हैं जिनमें वेनकाव वासना अधिक उभरी है। जब लगातार हत्या पर हत्या हो चुकती हैं तब अन्ततः अपराधी पकड़ा ही जाता है। जासूसी कलाका बुद्धि चातुर्य कैप्टेन देवेशके जासूस कैप्टेन सामन्तके पास नहीं है।

अलबत्ता कर्नल रानाने 'खूनी पत्र' में विज्ञानकी प्रगतिसे जासूस और अपराधीके नये विकास की बात कही है तथा वे प्रत्येक अज्ञात कारणके खोजको जासूसी मानते हैं, किन्तु उनकी पुस्तक जो बंगला देशके मुक्ति संग्रामको दर्शानेके लिए लिखी गयी है अखबारोंकी कतरन मात्र बनकर रह गयी है। नायक जासूस रंजीत है जो भारतकी ओरसे मुक्ति-संग्रामकी सहायतार्थ गया है। किन्तु इतिहासकी सबसे बड़ी ट्रेजेडी और सबसे बड़े मुक्ति संग्रामको कलात्मक रूप दे सकना भविष्यके किसी वाल्मीकि या तुलसीदासके ही बूतेकी बात है।

ज्योतिष

सुबोध मुहूर्त ज्योतिष

लेखक : डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली; प्रकाशक : सुबोध पाकेट बुक्स, दिल्ली-६। पृष्ठ १२७; ७३; मूल्य : २·०० रु०।

डॉ० श्रीमालीने भारतीय ज्योतिष विद्याको सरल रूपमें सुलभ करनेवाली अपनी पुस्तकोंमें एक और वृद्धि दी है। फलित ज्योतिषका व्यावहारिक लाभ है, ज्योतिषीके लिए ५२ अधिक, यजमानके लिए कम नहीं। फलित ज्योतिषकी मान्यता है कि जीवनका प्रत्येक क्षण किसी-न-किसी ग्रहसे संचालित है और ग्रह जीवनके प्रत्येक कार्यमें साधक भी हैं बाधक भी। मुहूर्त ज्योतिष हमें इस बातका बोध कराता है कि किस समय किस कार्यमें गोचर ग्रह साधक है किस समय बाधक। पुस्तकमें कालभेदके सभी अंश-मुहूर्त, संवत्सर, ऋतु, मासनक्षत्र, वार, पलके स्वामी देय, भेद दिये गये हैं तथा पूजा, दसों संस्कार, व्यापार, आदि सभी कार्योंके शुभ मुहूर्त बताये गये हैं। फिल्म आरम्भ करने, दुकान खोलनेसे मन्त्रिपद ग्रहण करनेतकके मुहूर्त विवाह आदि संस्कारोंके मुहूर्तके साथ हैं। इसका अध्ययनकर ब्राह्मणों, ज्योतिषियोंके कारोबारमें प्रवेश करनेमें सुविधा होगी, ज्योतिषके इस पक्षमें आस्था रखनेवालोंके लिए उपयोगी है।

मत अभिमत

[इस स्तम्भमें 'प्रकर' में प्रकाशित समीक्षाओंपर आपकी प्रतिक्रिया आमन्त्रित है। प्रतिक्रिया द्वारा आप अपनी असहमति अथवा मतभेद प्रकट कर सकते हैं। यह प्रतिक्रिया यथा सम्भव न्यूनतम शब्दोंमें संयत भाषामें भेजें]

फरवरी '७३ का 'प्रकर' अंक देखा। प्रारम्भिक समीक्षा-से लेकर 'मत-अभिमत' व 'प्राप्ति-सूचना' तकके अन्तिम स्तम्भोंतक। सभी अंग प्रायः सधे-सजे हुए - जैसाकि वे प्रायः रहते आये हैं।

पर, जहाँ दृष्टि अटक गयी, वह है - 'यादोंकी परछाईयाँ' (आचार्य चतुरसेन शास्त्रीकी प्रशंसित संस्मरणात्मक कृति) और उसपर श्री सुरेन्द्र तिवारीकी सुन्दर समीक्षा।

यह प्रसन्नताकी बात है कि हिन्दीके संस्मरण-साहित्यके विरल अंगपर इधर कृती लेखकोंका ध्यान जाने लगा है और अनेकानेक यशस्वी रचनाओंसे इसमें माँसल गरिमा आने लगी है। बच्चनजीकी धूमभरी ऐसीही रचना—'क्या भूलूं क्या याद करूँ' के बाद अब 'यादोंकी परछाईयाँ' का नम्बर है। यह बात इसलिए भी कही जा रही है कि आधुनिक कविताकी धूममें पुराने कवि बच्चनजी उसी चावसे सुने गये जिस चावसे नये कथाकारोंके बीच पुराने लेखक आचार्य चतुरसेन पढ़े गये हैं। तब, दोनोंमें ही नियतिने यह अन्तर अवश्य रखा कि जहाँ बच्चनजी गोष्ठी व लोक-मंचकी हरदिल-अजीज़ीके साथ विश्वविद्यालय (पाठ्यक्रमों) के कवि भी बने रहे, वहाँ आचार्य चतुरसेनको यह दूसरा सौभाग्य प्रायः नहीं मिला। किन्तु, इससे उनके विपुल साहित्य-सम्पद्की अवहेलना नहीं हो सकती। गुण तो क्या मात्र परिमाणकी दृष्टिसे भी वह महार्घ है।

सन् १९०९ से १९४९ के बीचके ४० वर्षोंमें आचार्यने लगभग ८४ पुस्तकें विविध विषयोंपर लिखीं। अर्थात् १० हजारसे अधिक पृष्ठ रंग डाले। कहते हैं—आचार्यने अपने यौवन और वैभवसे युक्त जीवनके पूर्वाह्नको इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्रोंमें निचोड़ दिया। पर, हाथ कुछ न लगा। नतीजा—इस कोरे प्रतिदानसे क्षुब्ध स्वाभिमानी लेखकने इस सम्पूर्ण साहित्य-सम्पदाको रद्दकर हिन्दी उपन्यासको अपनी 'वैशालीकी नगरवधू' का अनमोल उपहार प्रदान किया। साथ ही, कथा-साहित्य-सोपानकी प्रेमचन्दी ४थी पैड़ीके बाद-की ५वीं पैड़ीका अकेले शिलान्यास किया जिसपर उनकी कृतियोंसे निःसृत 'इतिहासरस' के प्रभात झरते रहे। (जाहिर है—यह रचना इसी भागलपुरसे प्रकाशित हुई)।

हिन्दी साहित्य और विशेषतः समीक्षा-जगत्के लिए यह कृतघ्नताकी बात है कि आचार्यकी इस अद्भुत कृति व अन्य कृतियों, यथा : 'वयं रक्षामः', (वग्रासादि) का अबतक सम्यक् मूल्यांकन नहीं किया गया। न ही विश्वविद्यालयकी उच्च कक्षाओंमें हम 'गोदान' से आगे बढ़ सके। कभी-कहीं 'नदीके द्वीप' तक बढ़े भी तो प्रेमचन्द और अज्ञेयके बीच एक पूरे द्वीपकी दूरी छूट गयी। आचार्य चतुरसेनको हम जाने-अनजाने छोड़ते आये और आजतक छोड़ते जा रहे हैं। और तो और 'व्यक्तित्व और कृतित्व' की जयमाल लिये सत्पात्रोंकी टोहमें भटकनेवाले शोधार्थी भी चतुरसेन शास्त्री-जीसे नज़र बचा गये। इसे हम आधुनिक कथासाहित्यके क्षेत्रमें एक दुर्भाग्यपूर्ण अध्याहार करार देते हैं। और, इसी प्रसंगमें शास्त्रीजीके सम्बन्धमें समीक्षक श्री सुरेन्द्र तिवारी-के इस वक्तव्यका अनुमोदन करते हैं कि 'उनका लेखन अपना एक इतिहास बना गया।' (पृष्ठ ७)। बहुतोंकी नाईं तिवारीजी भी मानते हैं कि 'भले ही दलबन्दी और पक्ष-पातके कारण आलोचकोंकी नज़र उनतक न पहुँची हो या पहुँचकर भी उनतक न अड़ी हो, जिसका अफसोस उन्हें भी था, फिरभी वे लिखनेसे कभी पीछे न रहे और उन लोगोंसे बेहतर लिख गये जिनकी चर्चा तो है, पर कलम हर महीने बदल जाती है। फिरभी, रचना तैयार नहीं हो पाती' (पृष्ठ ७)।

हमतो यहाँतक कहते हैं कि शास्त्रीजीने उपन्यास-लेखनको—पहली और शायद अन्तिम वार—बैठे-ठाले व्यक्ति-की ख़ाम-ख्याली चेष्टाके स्थानपर गम्भीर स्वाध्याय, आसनस्थ चिन्तन और अविराम मननका सुपरिणाम सिद्ध किया है। शायद इस अध्ययनगत विस्तार और चिन्तनगत गहराईके कारण ही तो सामान्य समीक्षकको उनके अनुशीलन-मूल्यांकनका साहस नहीं होता? याकि कृतिकी महत्ताके लिए उनपर बड़े प्रकाशकोंका बिल्ला लगना एक आवश्यक शर्त है? अथवा, साहित्य मात्र प्रचारकी वस्तु है या प्रसारकी भी, उसका परिमाणात्मक मूल्य मात्र है अथवा गुणात्मक उत्कर्ष भी? उक्त आशंकाओंको, सम्भव है, ग़लत अर्थ दिया जाये—चुनौती समझी जाये—पर आत्मनिरीक्षणसे कभी-कभी मनको समाधान मिल जाता है।

आशा है, सुधीजन यदि उक्त निवेदनपर ध्यान देंगे तो हिन्दीके भालपर लगा कृतघ्नताका यह धब्बा शीघ्र मिट सकेगा क्योंकि हमारे बीच आजभी गुण-गाहकोंका टोटा नहीं है।

अन्तमें, श्री सुरेन्द्र तिवारी इस संस्मरणकी संतुलित समीक्षाके लिए वधाईके पात्र हैं।

—डॉ. तपेश्वरनाथ, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग
भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर (बिहार)

× × ×

सन्देह नहीं, लेखन और प्रकाशनके सन्दर्भमें 'प्रकर' एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कड़ी है। अपनेमें पूर्ण समर्थ और सक्षम। गागरमें सागर भरा है। इस बहुमूल्य पत्रिकाने आपने लेखक और पाठकको एक दूसरेके बहुत समीप कर दिया।

—प्रेममोहन श्रीवास्तव, कूंचा नीम, बदायूं (उ. प्र.)

× × ×

'प्रकर' नवीन प्रकाशित पुस्तकोंके सम्बन्धोंमें जो आलोचनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, वह निस्संदेह सराहनीय है। आजके व्यस्त युगमें मनुष्यके लिए यह सम्भव नहीं है कि वह देशके विभिन्न भागोंमें प्रकाशित पुस्तकोंके बारेमें यथासमय जान सके। 'प्रकर' के माध्यमसे वह अपनी रुचिकी पुस्तकोंका चयन कर सकता है। इस दृष्टिसे 'प्रकर' का प्रकाशन अभिनन्दनीय है।

—मदनलाल 'योगेन्द्र', मदन-सदन, कलेक्टरेट मार्ग
शाजापुर (म. प्र.)

× × ×

'प्रकर' अपने ढंगका अनोखा पत्र है और बुद्धिजीवियोंके लिए एक बड़ी आवश्यकताकी पूर्ति करता है। साहित्य-जीवियोंको नवप्रकाशित ग्रन्थोंसे परिचित कराना एवं नव सृजनके लिए प्रेरित करना भी एक आवश्यक और महत्त्वपूर्ण कार्य है।

—श्याम स्रोत्रिय, वरिष्ठाध्यापक, स्रो जौहरी राजकीय
उ. मा. वि., लाडनूं (राजस्थान)

ज्ञान-पिपासुओंके लिए 'प्रकर' एक सूची प्रस्तुत करता है। पाठक और सर्जक दोनोंके लिए पठनीय। पत्रिका हिन्दीमें अनन्यतम है। मेरी वधाई स्वीकार करें।

—धर्मेन्द्रकुमार शुक्ल, ११७/३९७ एल, कालिका नगर
कानपुर-५ (उ. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्ति सूचना

[गत दो मासों में निम्न पुस्तकें समीक्षार्थ प्राप्त हुई हैं। आगामी अंकोंमें इनकी समीक्षा अथवा परिचय प्रस्तुत किया जायेगा। समीक्षार्थ पुस्तकको दो प्रतियाँ आनी चाहियें, एक प्रतिकी समीक्षा या परिचयका दायित्व स्वीकार नहीं किया जाता।]

शोध-आलोचना

अंग्रेज़ीकी स्वच्छन्द कविता; लेखक : प्रमोद वर्मा; प्रकाशक : मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ९७ मालवीय नगर, भोपाल-३ (म.प्र.)। पृष्ठ : १७४; डिमाई, ७१; मूल्य : ७.५०रु.।

कवि प्रसादकी सौन्दर्य भावना; लेखक : अविनाश श्रीवास्तव; प्रका. जयभारत प्रकाशन, ६५, कल्याण भवन, तिलक मार्ग, अहमदाबाद। पृष्ठ : ११५; डिमा० ७२; मूल्य : २.५० रु.।

काव्य-पीठिका; लेखक : प्रो. जोसेफ मुण्डश्शेरी; अनुवादक : रामचन्द्र देव; प्रका. राधाकृष्ण प्रकाशन, २ अन्सारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : ८८; डिमा. ७३; मूल्य : ८.०० रु.।

गांधी; विचारधाराका हिन्दी साहित्यपर प्रभाव; (शो. प्र.); लेखक : डॉ. अरविन्द जोशी; प्रका० जवाहर पुस्तकालय, मथुरा (उ. प्र.)। पृष्ठ : ५३०; डिमा० ७३; मूल्य : ४०.०० रु.।

गोस्वामी तुलसीदास : जीवनवृत्त और व्यक्तित्व; ले० कुलदीप; नारायण राय 'झड़प'; प्रका०, अ. भा. ब्रा. परिषद् (बंग), ५० रामकृष्णपुर लेन, हावड़ा (प. बंगाल)। पृष्ठ : ६८८; डिमा०, ७२; मूल्य : ३१.००रु.

छायावादकी रसांगिकता; ले० रमेशचन्द्र शाह; प्रका० राधाकृष्ण पकाशन, २ अन्सारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : १५७; डिमा० ७३; मूल्य : ९.०० रु.।

ध्वनि-सिद्धान्त तथा तुलनीय साहित्य चिन्तन; ले० डॉ. बच्चूलाल अवस्थी 'ज्ञान' प्रका० मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल-३। पृष्ठ : ५७६; रायल, ७२; मूल्य : २२.५० रु.।

मध्ययुगीन हिन्दीके सूफ़ी इतर मुसलमान कवि (शो. प्र.); ले० डॉ. उदयशंकर श्रीवास्तव; प्रका० जवाहर पुस्तकालय, मथुरा (उ. प्र.)। पृष्ठ : ४५०; डिमा० ७३; मूल्य : ३५.०० रु.।

मार्क्सवादी साहित्य चिन्तन : इतिहास तथा सिद्धान्त; लेखक : डॉ. शिवकुमार मिश्र; प्रका० मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल-३। पृष्ठ : ५२०; डिमा० ७३; मूल्य : २०.०० रु.।

श्री रामचरित मानसकी काव्य कला; ले० रूप हुक्कू तथा डॉ. हरिहरनाथ हुक्कू; प्रका० विनोद पुस्तक मन्दिर, रांगेय राघव मार्ग, आगरा-२। पृष्ठ : ३५५, डिमा० ७३; मूल्य : १०.०० रु.।

संस्कृत में एकांकी रूपक; ले० डॉ. वीरबाला शर्मा; प्रका० मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल-३। पृष्ठ : ३८३; डिमाई ७२; मूल्य : १२.५० रु.।

सूरदासकी लालित्य चेतना; ले० डॉ. परेश; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, बी।४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : २२४; डिमा. ७२; मूल्य : १५.०० रु.।

हमारा साहित्य (१९७०); सम्पादक : श्यामलाल शर्मा; प्रका० ललित कला, संस्कृति तथा साहित्य अकादमी, जम्मू (कश्मीर)। पृष्ठ : २५७; डिमा० ७२; मूल्य : ८.०० रु.।

निबन्ध संकलन

आधुनिकता और राष्ट्रीयता; ले० डॉ. राजमल बोरा; प्रका० नमिता प्रकाशन, ६ आनन्दनगर, टाउन हॉल, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)। पृष्ठ : १०३; डिमा० ७३; मूल्य : ६.५० रु.।

का वार्ता; ले० राजेन्द्र प्रसाद सिंह; प्रका० प्रगति प्रकाशन, बैतुल बिल्डिंग, आगरा-३। पृष्ठ : १५१; क्राउन ७३; मूल्य : ५.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुनियाँ नई और पुरानी; लेखक : डॉ. विद्याप्रकाश दत्त; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : २७; डिमा० ७३; मूल्य : १.०० रु. ।

भारतीय साहित्य; ले० डॉ. गौरीशंकर मिश्र 'द्विजेन्द्र'; प्रका० परिमल प्रकाशन, ७४३, मोतीलाल नेहरू नगर, इलाहाबाद-२ । पृष्ठ : २२७; क्राउन ७३; मूल्य : ८.५० रु. ।

व्यास पर्व ; ले० दुर्गा भागवत; प्रका० भारतीय ज्ञानपीठ, बी । ४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : ११६; डिमा० ७३; मूल्य : ८.०० रु. ।

साहित्य-चिन्तन ; ले० डॉ. तपेश्वरनाथ; प्रका० हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो. बा. १०६, पिशाचमोचन, वाराणसी-१ । पृष्ठ : ३१२; डिमा० ७२; मूल्य: ८.०० रु. ।

उपन्यास

अवहेलना; लेखक : राजेन्द्र जगोत्ता; प्रका० यूनिको पब्लिकेशंस, घटिया आज़म खाँ, आगरा-३ । पृष्ठ : १३२; क्राउन, ७३; मूल्य : ५.०० रु. ।

आधा पुल; ले० जगदीशचन्द्र; प्रका० भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : १६६; डिमा० ७३; मूल्य : १२.०० रु. ।

आनन्द पर्वत; ले० गदाधर नारायण; प्रका० बिहार ग्रन्थ कुटीर, खज़ाँची रोड, पटना-४ । पृष्ठ : ३७६; क्राउन, ७१; मूल्य : १२.०० रु. ।

एक थी तारा; ले० रमानाथ त्रिपाठी; प्रका० भारतीय साहित्य सदन, ३०।६० कनाट सरकस, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : १२३; क्राउन, मूल्य : ४.०० रु. ।

और खेल अधूरा रह गया; ले० ज्ञानस्वरूप भटनागर; प्रका० शब्दकार, २२०३, गली डकौतान, तुर्कमान गेट, दिल्ली-६ । पृष्ठ : २७५; क्राउन ७२; मूल्य : १०.०० रु. ।

किन्नरी; ले० शालिग्राम मिश्र; प्रका० आत्माराम एण्ड सन्स, कश्मीरी दरवाज़ा, दिल्ली-६ । पृष्ठ : २५६; डिमा० ७३; मूल्य : १५.०० रु. ।

कोई एक घर; ले० मनहर चौहान; प्रका० उमेश प्रकाशन, ५, नाथ मार्केट, नयी सड़क, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १५५; क्राउन, ७३; मूल्य : ५.५० रु. ।

नेपालेश्वर; ले० विराज; प्रका० आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ३४२; डिमा० ७३; मूल्य : २०.०० रु. ।

राजूली मालूसाही; ले० यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक'; प्रका० रंजन प्रकाशन, बाँके विलास, सिटी स्टेशन रोड, आगरा-३ । पृष्ठ : २३२; क्राउन, ७३; मूल्य : ८.०० रु. ।

शृंखला; ले० गदाधर नारायण; प्रका० बिहार ग्रन्थ कुटीर, पटना-४ । पृष्ठ : १२६; क्राउन ७२; मूल्य : ३.०० रु. ।

सपनोंके टुकड़े; ले० रमानाथ त्रिपाठी; प्रका० भारतीय साहित्य सदन, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : १२५; क्राउन ७२; मूल्य : ४.०० रु. ।

सेनानी पुष्यमित्र; ले० सत्यकेतु विद्यालंकार; प्रका० राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ४६...; क्राउन ७३; मूल्य : १७.०० रु. ।

अनूदित उपन्यास

काँटा और कली (मूल : तमिल); लेखक : पूर्ण... चन्द्रन उमाचन्द्रन; प्रका० आत्माराम एण्ड सन्स, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६ । पृष्ठ : २५०; डिमा० ७२; मूल्य : १५.०० रु. ।

कैंसर वार्ड (भाग-२); लेखक : अलेक्जैंडर सोल्झेनित्स्तीन; अनुवादिका : विजयश्री भारद्वाज, प्रका० नेशनल एकाडमी, ६ अन्सारी मार्केट, दरियागंज, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ३१२; क्राउन ७३; मूल्य : ८.०० रु. ।

चाँद काला है (मूल : बंगला); लेखक : मनोज ...; अनुवादक : रसिक बिहारी; राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी दरवाज़ा, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १...; क्राउन ७३; मूल्य : ६.०० रु. ।

चौदह दिन (मूल : तमिल); लेखिका : सुजा...; अनुवादक : शौरिराजन; प्रका० कृष्णा ब्रदर्स, कचहरी रोड, अजमेर (राज.) । पृष्ठ : १०६; क्रा. ...; मूल्य : ४.०० रु. ।

जोगी मत जा : (मूल : बंगला); ले० विमल मित्र; अनुवादिका : पुष्पा देवड़ा; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १४८; क्रा० ७३; मूल्य : ६.०० रु. ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमककका पुतलासागरमें (मूल : बंगला); ले० धनंजय वैरागी; रूपान्तर : योगेन्द्र चौधरी; प्रका० भारतीय ज्ञानपीठ, बी।४५-४७, कनाट प्लेस; नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ३४२; डिमा० ७२; मूल्य : १६.०० रु.।

सूरजमुखी (मूल : अंग्रेज़ी); ले० मुल्कराज आनन्द; अनुवादक : राधानाथ चतुर्वेदी; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली-६। पृष्ठ : ७२६; क्रा० ७३; मूल्य : २०.०० रु.।

हाल मुरीदोंका (मूल : पंजाबी); ले० कर्तारसिंह दुग्गल; अनुवाद : श्रीमती विजय चौहान; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली-६। पृष्ठ : ६९६; क्रा० ७३; मूल्य : २०.०० रु.।

कहानी संग्रह

अतीतमें कुछ; ले० गंगाप्रसाद विमल; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली-६। पृष्ठ : १५६; क्रा० ७२; मूल्य : ७.०० रु.।

मेरी आँखोंसे; (बँगला कहानियाँ); अनुवादिका : पुष्पा देवड़ा; प्रकाशक: राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली-६। पृष्ठ : १४४; डिमा० ७३; मूल्य : ८.०० रु.।

मेरी प्रिय कहानियाँ; लेखिका : शिवानी; प्रका० राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-६। पृष्ठ : १५७; क्रा. ७३; मूल्य : ५.०० रु.।

सिकन्दर हार गया; ले० अमृतलाल नागर; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली-६। पृष्ठ : ११६; क्रा० ७३; मूल्य : ६.०० रु.।

नाटक एकांकी

अण्डेके छिलके अन्य एकांकी तथा बीज नाटक; ले० मोहन राकेश; प्रका० राधाकृष्ण प्रकाशन, २ अन्सारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : २००; क्रा० ७३; मूल्य : ११.०० रु.।

आजके रंग नाटक; सम्पादक : इब्राहिम अलकाज़ी, पु. ल. देशपाण्डे, सुरेश अवस्थी; प्रकाशक : राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली-६। पृष्ठ : ४३४; डिमा० ७३ (राज संस्करण); मूल्य : ३५.०० रु.।

काव्य संकलन

गीत सौरभ; सम्पादक : ठाकुर भूपतिसिंह; प्रका० नवसाहित्य प्रकाशन समिति, पाटन, जबलपुर। पृष्ठ : ९०; क्रा० ७३; मूल्य : २.५० रु.।

घिरते बादल : खुलते बादल; कवि : शेख़ आदम आबूवाला; प्रका० दीप्रा पब्लिशर्स, ९ चेतन सोसायटी, पालड़ी, अहमदाबाद। पृष्ठ : १४३; क्रा० ७३; मूल्य : ५.०० रु.।

चटपटी नज़्में; शायर : रज़ा नक़वी 'वाही'; प्रका० पी. के. पब्लिकेशंस, ३०७२, प्रताप स्ट्रीट, गोला मार्केट, दिल्ली-६। पृष्ठ : १३५; क्रा० ७३; मूल्य : ६.०० रु.

चाँदके दाग़; कवि : कमर मेवाड़ी; प्रका० संबोधन प्रकाशन, कांकरोली (राज.)। पृष्ठ : १०४; क्रा. ७०; मूल्य : ३.५० रु.।

ठहरो क्षण भर; कवि : राजेन्द्र मिलन; प्रका० यूनिको पब्लिकेशंस, घटिया आज़म खाँ, आगरा-३। पृष्ठ : १०४; डिमा० ७३; मूल्य : ८.०० रु.।

बुनी हुई रस्सी; कवि : भवानी प्रसाद मिश्र; प्रका० सरला प्रकाशन, २७९५, नेताजी नगर, नयी दिल्ली-२३ पृष्ठ : १४४; डिमा० ७१; मूल्य : १०.०० रु.।

भीड़का जन्म; कवि : मानिक बच्छावत; प्रका० अमिताभ प्रकाशन, २० बालमुकुन्द मक्कर रोड, कलकत्ता-७ पृष्ठ : ७२; डिमा० ७२; मूल्य : ६.०० रु.।

मानसिक सन्निपात और टूटे हुए एवरेस्ट; कवि : अविनाश श्रीवास्तव; प्रका० जयभारत प्रकाशन, कल्याण भुवन, तिलक मार्ग, अहमदाबाद। पृष्ठ : ९७; डिमा० ७२; मूल्य : २.०० रु.।

माँ; कवि : उमाकान्त मालवीय; प्रका० साहित्य भवन (प्रा.) लिमिटेड, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : ९३; क्राउन ७३; मूल्य : ३.५० रु.।

शून्य पुरुष और वस्तुएँ; कवि : वीरेन्द्रकुमार जैन; प्रका० भारतीय ज्ञानपीठ, बी।४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : २२०; डिमा० ७२; मूल्य : १५.०० रु.।

सींगपर उगी लाश; कवि : ओमप्रकाश भाटिया; प्रका० सूर्य प्रकाशन, नयी सड़क, दिल्ली-६। पृष्ठ : १६; डिमा० ७३; मूल्य : १.०० रु.।

स्मृति सत्ता भविष्यत् तथा अन्य श्रेष्ठ कविताएं; कवि : विष्णु दे; प्रका० भारतीय ज्ञानपीठ, बी।४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : २३५; डिमा० ७२; मूल्य : १२.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शायरी

ग्लिम्पिसिस बाम मई हाबीज (उर्दू शायरी—फारसी और देवनागरी लिपि, अंग्रेज़ी अनुवाद सहित); शायर : डॉ. प्रेमलाल शफा देहलवी, सदर बाज़ार, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ३०; डिमा० दुगना ७१ (राज संस्करण); मूल्य : २५.०० रु. ।

हास्य-व्यंग्य

टालू मिक्सचर; ले० श्याम नारायण बैजल; प्रका० पार्वती प्रकाशन, मदारी गेट, बरेली । पृष्ठ : ११२; क्रा० ७२; मूल्य : ६.०० रु. ।

बन्त कथा; लेखिका : शान्ति मेहरोत्रा; प्रका० भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : १४३; क्रा० ७२; मूल्य : ७.०० रु. ।

व्यक्ति : संस्मरण

आधुनिक भारतके निर्माता : रमेशचन्द्र दत्त; ले० आर. सी. दत्त; प्रका० प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : १९१; डिमा० ७२; मूल्य : ३.५० रु. ।

एक कार्यकर्त्ताकी डायरी (दो भाग); लेखक : सीताराम सेकसरिया; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, बी/४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१ । भाग-१—पृष्ठ : ४४८; डिमा० ७२; मूल्य : २२.०० रु.; भाग-२—पृष्ठ : ३३५; डिमा० ७२; मूल्य : १८.०० रु.

जीवनकी धूप छाँवसे; ले० गोपाल दास; प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : ११२; क्रा० ७३; मूल्य : ६.०० रु.

जो याद रह गया; ले० रिषभदास रांका; प्रका० भारत जैन महामण्डल, भारत इंशुरैंस बिल्डिंग, १५-ए हार्निमन सर्कल, फोर्ट, बम्बई-१ । पृष्ठ : २५२; क्रा० ७२; मूल्य : ६.०० रु. ।

नोबेल पुरस्कार विजेता महिलाएँ; लेखिका : आशारानी व्होरा; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी दरवाज़ा, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १३६; क्रा० ७३; मूल्य : ५.७५ रु. ।

हृषीकेश-रचनावली; सम्पादक : सतीशचन्द्र चतुर्वेदी; प्रकाशक : चन्द्रादित्य प्रकाशन, चौबेजीका कटरा, किनारी बाजार, आगरा-३ । पृष्ठ : ७५२; डिमा० ७३; मूल्य : ३५.०० रु. ।

जन सम्पर्क

लोक-सम्पर्क; लेखक : राजेन्द्र; प्रकाशक : हरि[याणा] हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ३०२६।१९डी, चण्डीग[ढ़] । पृष्ठ : २५६; डिमा० ७२; मूल्य : १५.०० रु. ।

पत्रकारिता

भारतीय समाचार पत्रोंका संगठन एवं प्रबन्ध; डॉ. सुकमाल जैन; प्रका० मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अ[का]दमी, ९७ मालवीय नगर, भोपाल-३ । पृष्ठ : ३[...] डिमा० ७२; मूल्य : मूल्य : १०.५० रु. ।

राजनीति

दूरके पड़ौसी; ले० कुलदीप नय्यर; प्रकाशक : वि[...] पब्लिशिंग हाउस, ५ अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली[...] पृष्ठ : २५०; डिमा० ७३; मूल्य : १८.०० रु. ।

रूसकी आज़ाद कलम; ले० पीटर रेड्डुवे; [अनु]वादिका : विजयश्री भारद्वाज; प्रकाशक : नेश[नल] अकादमी, ६ अंसारी मार्केट, दरियागंज, दिल्ली[...] पृष्ठ : ४३२; डिमा० ७३; मूल्य : ६.०० रु. ।

रूसकी खुफ़िया पुलिस; ले० रोनाल्ड डिंगले; [अनु०] विजयश्री भारद्वाज; प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : ३७१; क्रा० ७३; मूल्य : ४.०० रु. ।

सामाजिक तथा राजनीतिक शास्त्रके सिद्धान्त; लेखक : अर्नेट बार्कर; अनुवादक : बोधराज [...] प्रकाशक : हरियाणा हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ३०[...] १९डी, चण्डीगढ़ । पृष्ठ : ३४८; डिमा० ७२; मू[ल्य] : १५.०० रु. ।

अर्थशास्त्र

राष्ट्रीय आय तथा मूल्य स्तर; ले० मार्टिन जे. [...] अनु० विजेन्द्रकुमार श्रीवास्तव; प्रका० मध्य[प्रदेश] हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ९७ मालवीय नगर, भोपाल[...] पृष्ठ : ३४६; रायल ७२; मूल्य : १६.०० रु. ।

मनोविज्ञान

मनोविकार-विज्ञान; ले० ओ. हौबर्ट मौरर; [अनु०] डॉ. बांकेलाल शर्मा; प्रका० हरियाणा हिन्दी ग्रन्थ अ[का]दमी, चण्डीगढ़ । पृष्ठ : २८८; डिमा० ७२; मू[ल्य] : १५.०० रु. ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणि-विज्ञान

कीट-विज्ञान (भाग-१); ले० डॉ. ए. डी. इम्स; अनु० डॉ. जगदीशचन्द्र मूना; प्रकाशक : विश्वविद्यालय ग्रन्थ निर्माण निदेशालय, (दिल्ली विश्वविद्यालय), ईए-७, मॉडल टाउन, दिल्ली-९। पृष्ठ : ३७८; रायल ७१; मूल्य : १५.०० रु.।

अकशेरुकी प्राणि जगत् (भाग-२); लेखिका : लिबी हेन्रिता हाइमन; अनुवादक : डॉ. हरसरनसिंह बिश्नोई; प्रका० विश्वविद्यालय ग्रन्थ निर्माण निदेशालय, ईए-७; मॉडल टाउन, दिल्ली-९। पृष्ठ : ६०८; रायल ७२; मूल्य : २७.५० रु.।

वन्य-जीवन

जंगल और जानवर; लेखक : भगवतीशरण सिंह; प्रका० राधाकृष्ण प्रकाशन, पृष्ठ : १८४; क्रा० ७३; मूल्य : ६.०० रु.।

कला

बाघकी गुफाएँ; लें० महेश्वरीदयाल खरे; प्रका० मध्य-प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल। पृष्ठ : १४७; क्राउन दुगना, ७१; मूल्य : १५.०० रु.।

पत्र-पत्रिकाएँ

अतिमर्श; सम्पादक : नरेन्द्र कोहली, एस-३६२, ग्रेटर कैलाश-I, नयी दिल्ली-४८। अंक : १.५० रु., वार्षिक मूल्य : ५.०० रु.।

अनुशीलन; सं० डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर; प्रका० हिन्दी विभाग, कोचिन विश्वविद्यालय, कोचिन-२२।

कङ्क (कथा अंक); सं. निर्मल शर्मा, दयानन्द मार्ग, धानमण्डी, रतलाम (म. प्र.)। प्रस्तुत अंक : २.५० रु.

कथ्य-३; सं० राणा प्रतापसिंह, सुरेश पाण्डेय; गिरधर भवन, भरतपुर सिमली, मालसलामी, पटना-८। पृष्ठ : ७४; प्रस्तुत अंक : १.०० रु.।

नया शिक्षक (उत्तम शिक्षाके लिए उत्तम पुस्तकें, अक्टूबर-दिसम्बर (७२); सम्पादक : एल. एन. गुप्ता, शिवरतन थानवी, गुरइकबाल सिंह; प्रका० निदेशक, प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा विभाग, राजस्थान, बीकानेर। पृष्ठ : ३८४; रायल; मूल्य : २.५० रु.।

ब्रजभारती; सं० वृन्दावनदास; प्रका० अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मण्डल, मथुरा। पृष्ठ : ४५; डिमा० ७३, वार्षिक मूल्य : ४.०० रु.।

मंच (स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी विशेषांक); सम्पादक : राकेश वत्स, सरस्वती कालेज, अम्बाला छावनी। मूल्य : १०.०० रु.।

लेकिन-६; सं० विनय अश्म; प्रका० शब्द महल, रतनपुर, गिद्धौर, मुंगेर (विहार)।

बनजा-१; सं. लाला जगदल पुरी; प्रका० उद्गम साहित्य समिति, जगदलपुर (म. प्र.)। मूल्य : १.२५रु.

शोध-पत्रिका; प्रधान सम्पादक : डॉ. कृष्णकुमार; प्रका. ठा. देवसिंह बिष्ठ राजकीय महाविद्यालय, नैनीताल (उ. प्र.)।

श्रद्धा; सं. वेदव्रत; प्रका० स्वामी श्रद्धानन्द कालेज, अलीपुर, दिल्ली-३६।

सप्तांशु (साम्प्रतिक हिन्दी कहानी विशेषांक-७३); सम्पादक : परमानन्द गुप्त; व्यवस्था कार्यालय : १०१२ गोल्लार गंगन्ना लेन, नगरथपेट, क्रॉस, बंगलौर-२। प्रस्तुत अंक : ८.०० रु.।

सम्मेलन-पत्रिका (साहित्य-संस्कृति-भाषा विशेषांक); सम्पादक : ज्योतिप्रसाद मिश्र निर्मल, रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद। पृष्ठ : ३७९; रायल ७३; मूल्य : १०.०० रु.

हम; सम्पादक : मंजुल उपाध्याय, हरि महर्षि; सम्पर्क : सी १८५, ज्ञानमार्ग, तिलक नगर, जयपुर-४। वार्षिक मूल्य : ६.०० रु.।

किशोर-बाल साहित्य

आख़िरी छलाँग (शिकार कथा); लेखक : डॉ. विगत; प्रकाशक : ज्ञानभारती बाल पाकेट बुक्स, विश्वेश्वरनाथ रोड, लखनऊ (उ. प्र.)। पृष्ठ : ११२; बाल जेबी (क्रा. आधा) ७३; मूल्य : १.१० रु.।

आल्हा ऊदल (लोक साहित्य); ले. चन्द्रशेखर मिश्र; प्रका० प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१ पृष्ठ : ६८; रायल ७३; मूल्य : २.२५ रु.।

चुगलखोर मैना (कहानी-संग्रह); लेखिका : नयनतारा; प्रका. ज्ञानभारती बल पाकेट बुक्स, लखनऊ। पृष्ठ : १११; बा. जे. ७३; मूल्य : १.१० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगतगुरु शंकराचार्य (जीवनी); लें० डॉ. विगत; प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : ११२; बा. जे. ७३; मूल्य : १.१० रु. ।

झाँसीकी रानी (जीवनी); ले० प्राणनाथ वानप्रस्थी; प्रका० राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ४८; क्रा. ७३; मूल्य : १.०० रु. ।

तुलसीका ब्याह (लघु उपन्यास); ले० दुर्गा भागवत; अनु० शान्तिदेवी; प्रका० प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : ३३; फूल स्कैप ७२; मूल्य : १.५० रु. ।

दिल्लीमें कौवे (क. सं.); ले० ज्यो निर्भय आर्य; प्रका० ज्ञानभारती बाल पाकेट बुक्स, लखनऊ । पृष्ठ : १०७; बा. जे. ७३; मूल्य : १.१० रु. ।

देवीदास या विचित्रकुमार (उप.); ले० जयशंकर शर्मा; प्रका० ज्ञानभारती बाल पाकेट बुक्स, लखनऊ । पृष्ठ : १०८; बा. जे. ७३; मूल्य : १.१० रु. ।

पौराणिक कथाएँ (क. सं.); ले० ब्रह्म दत्त शर्मा; प्रका० प्रकाशन विभाग, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : ९२; क्राउन दुगना ७३; मूल्य : ३.५० रु. ।

महाराणा प्रताप (जीवनी); ले. डॉ. रघुवीर सिंह; प्रका० प्रकाशन विभाग, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : ७६; रायल ७२; मूल्य : २.५० रु. ।

मिस्टर चम्पत (क. सं.); ले. शंकर सुलतानपुरी; प्रका. ज्ञानभारती बाल पाकेट बुक्स, लखनऊ । पृष्ठ : १०७; बा. जे. ७३; मूल्य : १.१० रु. ।

रऊफ़ चाचाका गदहा (क. सं.); प्रका० प्रकाशन विभाग, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : ११२, क्रा. दु. ७३ (द्वि. सं.); मूल्य : २.७५ रु. ।

हरियाणा (इतिहास); ले० शशिभूषण सिंहल; प्रका० प्रकाशन विभाग, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : ४९; डिमा० ७२; मूल्य : १.५० रु. ।

हीरोंके व्यापारी (जासूसी उप.); ले० इन्द्रदेव; प्रका० प्रकाशन विभाग, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : २४; डिमा. ७३; मूल्य : १.५० रु. ।

जेबी पुस्तकें

अनुराग (फिलमी)—ले० शक्ति सामन्त; प्रका० स्टार पाकेट बुक्स, आसफ अली रोड, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : १५१; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

अन्धा प्रेम (उप.); ले. क्रान्ति त्रिवेदी; प्रकाशक : उपर्युक्त । पृष्ठ : १५८; ७३; २.०० रु. ।

आधा रास्ता (उप.); ले० कृश्नचन्दर; प्रका० हिन्द पाकेट बुक्स, जी. टी. रोड, शाहदरा, दिल्ली-३२ । पृष्ठ : १२७; ७३; २.०० रु. ।

आशीर्वाद (फिल्मी); ले० हृषीकेश मुकर्जी; प्रका० उपर्युक्त । पृष्ठ : १२७; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

कसम (उप.); ले० शेखर; प्रका० हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२ । पृष्ठ : १२७; ७३; मूल्य : २.०० रु.

काँपती उँगलियाँ (उप.); ले० गोविन्द मिश्र; प्रका० स्टार पाकेट बुक्स, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : ११०; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

गाँधीके देशसे लेनिनके देशमें (यात्रा); ले० शंकर दयाल सिंह; प्रका० स्टार पाकेट बुक्स, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ९६; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

ताश और लाश (जासूसी उप.); ले० कैप्टेन देवेश; प्रका० पुष्पी कार्यालय, ११९-बी, बाईका बाग, इलाहाबाद-३ । पृष्ठ : १४१; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

तिकोनी तसवीरें (उप.); लेखक : पारस; प्रका० उपर्युक्त । पृष्ठ : १४१; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

दीवाना (रूमानी); ले० लोकदर्शी; प्रका० स्टार पाकेट बुक्स, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

पुराने घाव : नये नश्तर (उप.); ले० पारस; प्रका० पुष्पी कार्यालय, इलाहाबाद-३ । पृष्ठ : १४४; ७३, मूल्य : २.०० रु. ।

बिछुड़े साथी (उप.); ले० पारस; प्रका० उपर्युक्त । पृष्ठ : १५१; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

भगवान महावीर (जीवनी); ले० गोकुल चन्द्र जैन; प्रका० हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२ । पृष्ठ : १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

भारत ज्ञानकोश (वार्षिकको १९७३-७४); सं० योगराज थानवी; प्रका० हिन्द पाकेट बुक्स, जी.टी. रोड शाहदरा, दिल्ली-३२ । पृष्ठ : २५६; ७३; मूल्य : ३.०० रु. ।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मदहोश (रूमानी); ले० राजवंश; प्रका० स्टार पाकेट बुक्स, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : १३८; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

महापुरुषोंके प्रेरणा स्रोत (सूक्तियाँ); ले० सत्यकाम विद्यालंकार; प्रका० हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२। पृष्ठ : १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

महारानी (उप.); ले० दीवान जरमनीदास; प्रका० उपर्युक्त। पृष्ठ : १६२; ७३; मूल्य : ३.०० रु.।

मोमकी कलियाँ (उप.); ले० प्रशान्त; प्रका० पुष्पी कार्यालय, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : १३७; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

मौतकी कलियाँ (जा. उप.); ले० कर्नल राना; प्रका० उपर्युक्त। पृष्ठ : १२६; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

मौतके नाखून (जा. उप.); ले० गुआदूत; प्रका० स्टार पाकेट बुक्स, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : १२४; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

विश्वास (उप.); ले० पारस; प्रका० पुष्पी कार्यालय, इलाहाबाद। पृष्ठ : १४२; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

शरीफ़ोंका कटरा (उप.); लेखक : मन्यथनाथ गुप्त; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२। पृष्ठ : १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

शर्त (उप.); ले० राजवंश; प्रका० स्टार पाकेट बुक्स, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ११८; ७३; मूल्य : २.०० रु.

षड्यंत्र (जा. उप.); लेखक : कर्नल रंजीत; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२। पृष्ठ : १३४; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

सी. आई. ए. एजेंट (उप.); ले० ए. मनीश; प्रका० पुष्पी कार्यालय, इलाहाबाद। पृष्ठ : १४२; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

सोनिया (उप.); ले० समीर; प्रका० स्टार पाकेट बुक्स, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : १२४; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

स्वादिष्ट भोजन कला; ले० अरुणा शेठ; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२। पृष्ठ : १३६; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

नन्हीं पुस्तकें

असाधारण कहानियाँ; ले० बालकृष्ण बलदुवा; प्रका० नन्हीं पुस्तकें, ५७।१५० सिरकी मुहाल, कानपुर-१। पृष्ठ : १६०; ६.६०—९ सेमी. ७२; मूल्य : २.०० रु.।

कुछ चिन्तन : कुछ अनुभूतियाँ; ले० प्रका० उपर्युक्त। पृष्ठ : ६४; ६.५०—९ सेमी. ७१; मूल्य : १.०० रु.

तुलसीदास : रामचरितमानस (संक्षिप्त); सं० प्रका० उपर्युक्त। पृष्ठ : १६२; ६.५०—९ सेमी; ७२; मूल्य : २.०० रु.।

नींवका गारा; ले० कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १८५; आकार उपर्युक्त; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

मिनी कहानियाँ; ले० भगवानदास सफड़िया; प्रका० उपर्युक्त। पृष्ठ : ७२; आकार उपर्युक्त, ७२; मूल्य : १.०० रु.।

विश्व काव्य; संकलन : बालकृष्ण बलदुवा; प्रका० उपर्युक्त। शेष उपर्युक्त।

व्यंग-विनोद; ले० विनोद सोमानी 'हंस'; प्रकाशक : उपर्युका। पृष्ठ : ६४; ६.५०—९ सेमी.; ७२; मूल्य : १.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देशके वित्तमन्त्रीने घोषणा की है :

इस समय रुपयेका मूल्य केवल ४२.४ पैसे है

- ० रुपयेका यह अवमूल्यन क्यों ?
- ० इस अवमूल्यनका हमारी अर्थव्यवस्थापर क्या प्रभाव है ?

इन प्रश्नों तथा अन्य सम्बद्ध समस्याओंका उत्तर पानेके लिए पढ़ें :

रुपयेका अवमूल्यन और उसका प्रभाव

इस महत्वपूर्ण पुस्तकमें मुद्राके अवमूल्यनकी आवश्यकता और देशकी अर्थव्यवस्थापर उसके प्रभावकी अधिकारी विद्वानोंद्वारा विवेचना की गयी है ।

लेखक

०पी. सी. भट्टाचार्य (भू. पू. गवर्नर रिजर्व बैंक), ०एच. वी. आर. अयंगार (भू. पू. गवर्नर रिजर्व बैंक), ०डॉ. वी. के. आर. वी. राव (भू. पू. शिक्षामंत्री), ०एम. आर. मसानी, ०रमणभाई बी. अमीन, ०बाबूभाई एम. चिनाई, ०सी. सी. देसाई, ०वी. एम. दांडेकर ०डॉ. सैम्युअल पाल, ०डॉ. ज्ञानचन्द, ०एस. आर. महनीत, ०रामनाथ ए. पोद्दार, ०जी.डी. सोमाणी, ०डी.के. रांगणेकर, ०क. रंगाचारी, ०वीरेन्द्र अग्रवाल ।

मूल्य : आठ रुपये

नवभारती सहकार प्रकाशन

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

किशोर-बाल साहित्य

साहस और यात्रा

एवरेस्ट अभियान

डॉ. हरिदत्त भट्ट 'शैलेश' की इस पुस्तकमें विश्वकी सबसे ऊँची चोटीपर हुए अवतकके अभियानोंका पूरा इतिहास और विवरण

जेबी आकार : मूल्य : २.

जीवनियाँ

इस पुस्तकमालाके सभी ग्रन्थोंमें महापुरुषोंके जीवन और उनके विचारों, उपदेशों, चिन्तन... विवरण अलग-अलग खण्डों में है :

श्री अरविन्द : जीवन और दर्शन
लेखक : रवीन्द्र (पाण्डिचेरी)
मूल्य : ३.००

श्री शंकराचार्य : जीवन और दर्शन
लेखक : नारायणदत्त वैद्य
मूल्य : २.५०

महर्षि दयानन्द : जीवन और दर्शन
लेखक : नारायणदत्त वैद्य
मूल्य : ५.००

गुरु नानक : जीवन और दर्शन
लेखक : नारायणदत्त वैद्य
मूल्य : ५.५०

बाल-साहित्य

होलीका हौवा
लेखक : हरिकृष्ण तैलंग
मूल्य : १.००

जूता चर्चा
लेखक : हरिकृष्ण तैलंग
मूल्य : १.००

नवभारती सहकार प्रकाशन

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

FORTY POEMS
OF
MAHENDRA BHATNAGAR

Price : Rs. 10/-

Dr. Mahendra Bhatnagar's is one of the significant post-independence voices in Hindi Poetry, expressing the lyricism and pathos, aspirations and yearnings of the modern Indian intellect. Rooted deep into the Indian soil, these poems reflect not only the moods of a poet but of a complex age.

OPINIONS :

"The poems reflect the personality of the poet and the milieu in which he is creating. The translations are facile and smooth. The printing is eye-catching."

—Dr. Ramvilas Sharma

"The translation has the necessary clarity and sharpness. It succeeds in preserving the spirit of the original poems."

—Dr. Nagendra

"Dr. Mahendra Bhatnagar is a well established Hindi poet. 'Forty Poems' includes some of his best work. Mahendra writes of freedom, struggle, victory of oppressed humanity and its vision of a new world. He writes of the beauty of nature, of love and hate, of joy and sorrow. He writes with zest and a feeling of exaltation. His doetry has both strength and beauty."

—Prof. Prakash Chandra Gupta

[*The Literary Half-Yearly*, Mysore]

"Mahendra Bhatnagar is Browning, Shelley and Maykovsky welded into one. He is a visionary, he is a comrade-in-arms and he is an architect......The poet has a very sensitive ear for candences and knows how to use them."

—Dr. Vidya Nivas Mishra

Available at :

NAVA BHARATI SAHAKAR PRAKASHAN

A-8/42, RANA PRATAP BAGH, DELHI–7

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गत पच्चीस वर्षोंका

हिन्दी-साहित्यका सर्वेक्षण

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी साहित्य

[सम्पादक : डॉ० महेन्द्र भटनागर]

- प्रधान साहित्य-रूपोंकी प्रमुख प्रवृत्तियों एवं उपलब्धियों का प्रमुख समीक्षकोंद्वारा उच्चस्तरीय आकलन एवं तटस्थ विश्लेषण
- हिन्दी साहित्यके अध्येताओंके लिए एक अपरिहार्य आलोचना कृति
- अनेक विश्वविद्यालयोंमें स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमके अन्तर्गत सहायक-ग्रन्थके रूप में स्वीकृत

छात्र संस्करण ६.५० रु. सजिल्द ८.०० रु.

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

'नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)' के लिए विद्यासागर विद्यालंकारद्वारा सम्पादित, प्रताप मुद्रणालय, दिल्ली-७ के लिए दी एज्युकेशनल प्रेस, सिटी स्टेशन मार्ग, आगरा-३ में मुद्रित, ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७ से प्रकाशित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

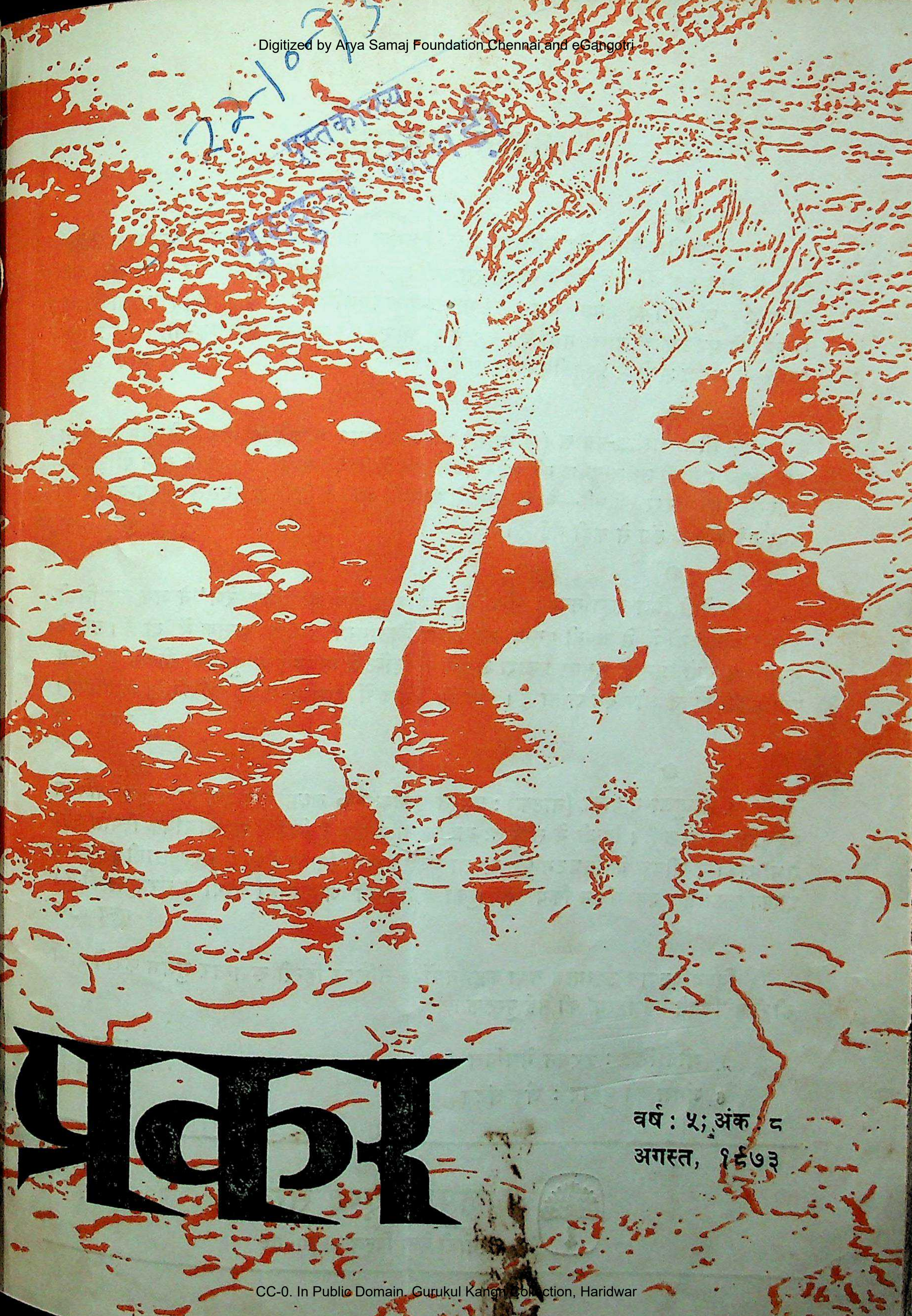

प्रकर

वर्ष : ५; अंक : ८
अगस्त, १९७३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवीन प्रकाशन

●

1. **भारतीय सेना और युद्धकला** : ले० कर्नल गौतम शर्मा की इस पुस्तक में वैदिक काल से आज तक की भारतीय सेना का संगठन, युद्ध-कौशल, अस्त्र-शस्त्र, युद्ध-नीति और लड़े गये महत्वपूर्ण युद्धों का जीवन्त वर्णन है। भारत-पाक निर्णायक युद्ध में भारतीय पक्ष की विजय के कारणों पर प्रकाश डाला गया है। दरअस्ल, भारत की सुरक्षा और युद्ध-नीति का प्रस्तुत पुस्तक में सहज शैली में प्रस्तुतीकरण हुआ है। मूल्य 15.00

●

2: **तीस-चालीस-पचास** (उपन्यास) : डॉ० प्रभाकर माचवे का यह नवीनतम उपन्यास इस समूचे युग की उथल-पुथल को बड़े मार्मिक ढंग से व्यक्त करता है। इसमें तीन पीढ़ियों—कांग्रेसी, कम्यूनिस्ट, हिप्पी—के माध्यम से बीसवीं सदी के तेजी से बदलते मानव-जीवन की कथा बड़े रोचक ढंग से कही गई है। मूल्य 6.00

●

3. **मेरी प्रिय कहानियाँ** : लोकप्रिय कथाकार फणीश्वरनाथ 'रेणु' ने अब तक लिखी अपनी कहानियों में से अपनी पसन्द की श्रेष्ठ कहानियाँ प्रस्तुत पुस्तक में दी हैं। उन्हें ये कहानियाँ क्यों प्रिय हैं, इसपर प्रकाश डालने की दृष्टि से आरम्भ में भूमिका दी गई है जिससे पुस्तक का महत्व और बढ़ जाता है। एक ही जिल्द में कथाकार की प्रतिनिधि कहानियाँ। मूल्य 5.00

●

4. **अब्दुला दीवाना** (नाटक) : प्रस्तुत पुस्तक डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल का नवीनतम बहुचर्चित नाटक है। हिन्दी में संभवतः यह पहला नाटक है जिसमें समसामयिक स्थिति और सभी क्षेत्रों में जीवन के विघटन पर चुभता हुआ प्रहार किया गया है। राजधानी दिल्ली में इसका सफलतापूर्वक मंचन किया जा चुका है जिसकी जानकार लोगों ने सराहना की है। मूल्य 6.00

विश्वविख्यात उपन्यास तथा कहानियों के संक्षिप्त हिन्दी रूपान्तर सुलभ कराने वाली सीरीज 'किशोर-साहित्य' की नई पुस्तकें।

5. **मोबीडिक** : हरमन मेलविल मूल्य 2.00
6 **जंगल की पुकार** : जैक लंडन मूल्य 2.00

राजपाल एण्ड सन्ज़
कश्मीरी गेट, दिल्ली-110006

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष : ५
अंक : ८
अगस्त १९७३

प्रकर

सम्पादक : विद्यासागर विद्यालंकार
सम्पर्क : ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७
सम्पादक-मण्डल : डॉ. भोलानाथ तिवारी (अध्यक्ष); मुकुट बिहारी वर्मा, डॉ. जयचन्द्र राय (उपाध्यक्ष); डॉ. देवेन्द्र कुमार, सुभाषचन्द्र विद्यालंकार (सदस्य),
वार्षिक मूल्य : नौ रुपये मात्र
सामान्य अंक : पचहत्तर पैसे मात्र

समीक्षित पुस्तकें	पृष्ठ संख्या	समीक्षक
१. शोध-आलोचना		
स्व. गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश' : व्यक्तित्व एवं साहित्य—डॉ. विजयकुमार शुक्ल	३	डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित
स्वच्छन्दतावादी काव्यका तुलनात्मक अध्ययन—डॉ. पी. आदेश्वर राव	६	डॉ. पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु'
हिन्दी सन्त काव्यमें प्रतीक विधान—डॉ. देवेन्द्र आर्य	८	डॉ. शशिभूषण सिंहल
श्री रामचरितमानसकी काव्यकला—श्री रूप हुक्कू और डॉ. हरिहरनाथ हुक्कू	९	डॉ. रमानाथ त्रिपाठी
मीराबाँईकी काव्य साधना—डॉ. रामप्रकाश	१०	डॉ. यदुवीरप्रसाद भटनागर
आचार्य भरत—डॉ. शिवशरण शर्मा	११	डॉ. रंजन
२. निबन्ध-संकलन		
साहित्य-चिन्तन—डॉ. तपेश्वरनाथ प्रसाद	१३	डॉ. हरिनारायण मिश्र
भारतीय साहित्य—डॉ. गौरीशंकर मिश्र 'द्विजेन्द्र'	१३	डॉ. सियाराम तिवारी
तुलसी-स्मारिका—सम्पादक डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल	१५	डॉ. कृष्णकुमार गोस्वामी
३. भाषा-विज्ञान		
प्राकृत भाषाएँ और भारतीय संस्कृति में उनका अवदान—डॉ. एस. एम. कत्रे	१५	डॉ. भोलानाथ तिवारी
मुहावरे और लोकोक्तियाँ—डॉ. देवेन्द्र आर्य	१७	डॉ. भोलानाथ तिवारी
४. उपन्यास		
जुगल-बन्दी—गिरिराज किशोर	१७	हेमचन्द जैन
और खेल अधूरा रह गया—ज्ञानस्वरूप भटनागर	१८	डॉ. रमानाथ त्रिपाठी
दायरे—गुरुदत्त	२०	माधव पण्डित
५. अनूदित उपन्यास		
दायरे के बाहर—विमल मित्र	२१	डॉ. नत्थनसिंह
६. कहानी-संग्रह		
हम फिदाए लखनऊ—अमृतलाल नागर	२३	डॉ. मदन केवलिया
चुनाव की घुड़ दौड़—स्वरूपकुमारी बख्शी	२४	अवधनरायण जायसवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. काव्य-संकलन	२५	डॉ. गिरिराज शरण अग्रवाल
सुबह होने से पहले—सव्य साची	२६	स्वर्ण किरण
टूटा समय—निरंजन	२६	डॉ. शीतला मिश्र
प्यासी धरती—जीवितराम सेतपाल	२७	स्वर्ण किरण
हथेलियों में ब्रह्माण्ड—भागीरथ भार्गव	२८	डॉ. शीतला मिश्र
कानपुर के युवा हस्ताक्षर—चन्द्रेश गुप्त, सलिल गुप्त	२९	विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक'
भीड़ का जन्म—मानिक बच्छावत	२९	स्वर्ण किरण
अनन्य मानसा—अम्बिकाप्रसाद दिव्य	३०	डॉ. शीतला मिश्र
गूँज और नैसर्गिकी—मुनिलाल उपाध्याय 'सरस'	३०	श्याम किशोर शर्मा
संशय के संगी—महावीर गौड़	३१	डॉ. शीतला मिश्र
अरावली-गुंजन—सम्पादक बलबीरसिंह, रूपनारायण		
८. प्रशासन		
लोक प्रशासन : सिद्धान्त एवं व्यवहार—बी. एम. सिन्हा	३१	ओमप्रकाश गाबा
प्रशासनिक संस्थाएँ—प्रो. जियाउद्दीनखाँ, अन्तरसिंह	३३	ओमप्रकाश गाबा
९. सामयिक राजनीति		
दुबचेक का पतन क्यों ?—पावेल टिग्रिड	३४	दिनेश भट्ट
१०. शिकार साहित्य		
हाथियों का खेदा—विराज	३६	विवेककुमार
११. जीवन : संस्मरण		
जो याद रह गया—रिषमदास रांका	३६	वैद्यनाथ शर्मा
विजय के सूत्रधार श्री जगजीवनराम—डॉ. अशोककुमार वर्मा	३६	विलास गुप्ते
साहित्य जगत के विनोबा : बख्शीजी—नर्मदाप्रसाद खरे	३८	विलास गुप्ते
१२. निदेशिका		
भारतीय लेखक कोश—रामगोपाल परदेसी	३९	मनमोहन वर्मा
१३. पत्र-पत्रिकाएँ		
अनुशीलन (रामकाव्य विशेषांक)—सम्पादक डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर	४०	डॉ. रमानाथ त्रिपाठी
१४. किशोर-बाल साहित्य	४३	डॉ. हरिकृष्ण देवसरे और
१५. जेबी पुस्तकें	४६	ब्रजगोपालदास अग्रवाल 'जीवन'
१६. प्राप्ति-सूचना	५०	—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्व. गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश': व्यक्तित्व एवं साहित्य

लेखकः डॉ. विजयकुमार शुक्ल; प्रकाशकः हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग। पृष्ठः ३२२; डिमाई, ७१; मूल्यः ३०.०० रु.।

स्व. गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश' : व्यक्तित्व-ले० डॉ० विजयकुमार शुक्ल, प्रकाशक-हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, पृ० रायल डेमी-३२६, मूल्य-तीस रुपये।

हिन्दी साहित्यकी ऐसी असंख्य रचनाएँ हैं जो आलोचकों और शोधकर्ताओंकी कृपा-दृष्टिसे वंचित रह जानेके कारण आलमारियोंमें बन्द रह गयी हैं। अनेक लेखक हैं जो प्रचारके हथकण्डों अथवा अनुगामियोंके अभावमें उपेक्षित ही रह गये हैं। शोधकी भी स्थिति यह है कि किसी प्रकारकी गहरी पैठके बिना एम. ए. करते ही प्रबन्ध लेखनके लिए तत्पर आर्त बेकार विद्यार्थी इधर-उधरसे नोच-खसोटकर कुछ-न-कुछ लिख मारते हैं, और केवल बहु प्रचारित नामोंकी ही पुनरावृत्ति करके सन्तुष्ट हो जाते हैं विडम्बना यह है कि पुराने साहित्यकी शोधके समय तो कभी काम न आनेवाले बेठन भी खुलने लगते हैं और जिन्होंने कभी दो-चार छन्द ही लिखे होंगे उन्हें भी इतिहासका विषय बना लिया जाता है, किन्तु जब समकालीनकी चर्चा करनी होती है तब प्रतिष्ठितोंका उल्लेख ही पर्याप्त मान लिया जाता है। द्विवेदी काल या छायावाद कालके कितने ही ऐसे लेखक दबे पड़े रह गये हैं। छायावादके नामपर तो लोग चतुष्टयीसे बाहर किसीका नाम ही नहीं लेते।

ऐसी स्थितिमें यदि स्व०. गिरिजादत्त शुक्ल "गिरीश" भी बहुत सीमातक उपेक्षित रह गये तो आश्चर्य क्या है? इसे दुर्भाग्य कहा जाये या सौभाग्य कि उनपर शोधके लिए कलम चलानी पड़ी स्वयं उनके पुत्र श्री विजयकुमार शुक्लको। दुर्भाग्य इसलिए कि पिताके सम्बन्धमें न तो आशंसापूर्ण ही लिखा जा सकता है—क्योंकि वह लोकको मात्र प्रशंसा जान पड़ने लगती है—न उनकी आलोचना करनेका साहस ही बटोरा जा सकता है। शोधके लिए अपेक्षित तटस्थ दृष्टिकी रक्षा इस स्थितिमें बहुतही कठिन है, और इस प्रकारका शोधकार्य इसीलिए बहुत जोखिमभरा और दुस्साहसका है। फिरभी सौभाग्य इसलिए कि जो सूचनाएँ पुत्रको सहज उपलब्ध हैं और जिनका ज्ञान उसे साहचर्य मात्रसे प्राप्त रहा होगा, वह कोई दूसरा कभी-कभी परिश्रम करनेपर भी प्राप्त नहीं कर सकता, अतः सामग्री तटस्थ भले ही हो, अधूरी भी रह जाती है। हाँ, सूचनाके साथ गहरी आत्मीयता बाधक भी हो सकती है।

डॉ० विजयकुमार शुक्लके इस शोधप्रबन्धको देखते हुए ऐसा नहीं लगता कि यह दुर्भाग्यकी स्थिति कही जा सके, क्योंकि डॉ. शुक्लने आद्यन्त तटस्थता और निष्पक्षताके साथ-साथ तार्किकताके सहारे विवेचन किया है। निःसन्देह उनके प्रबन्धसे उनका यह दुःख तो स्पष्ट है कि 'गिरीश' जी की मौलिक और प्रथमतः उपस्थित दृष्टि की—चाहे वह आलोचना क्षेत्रमें हो या सर्जनात्मक क्षेत्रमें अवहेलना हुई है और उन्हें उनका प्राप्य नहीं मिला, किन्तु दूसरी ओर यह भी स्पष्ट है कि "गिरीश" जी की कमजोरियाँ भी उनकी आँखसे बचकर नहीं निकल सकी हैं। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी तथा "हरिऔध" जीके साथ 'गिरीश' जीके सम्बन्धों और उनकी आलोचनापर उनके सम्बन्धोंके प्रभावके वर्णनमें डॉ० शुक्लने निर्ममता पूर्वक "गिरीश" जी के राग-द्वेषकी झाँकी प्रस्तुत की है और उन्हें इसके लिए अपनी आलोचनाका लक्ष्य बनाया है।

प्रबन्धसे यह भी पूर्णतया स्पष्ट है कि डॉ. शुक्लने अपने कार्यकी सीमाएँ भली प्रकार निश्चित की हैं और अनावश्यक बातोंकी भरतीके फेरमें वे नहीं पड़े हैं। न प्रबन्धमें सामयिक स्थितियोंका अलग-अलग अध्याय दिखाकर लेखा प्रस्तुत किया गया है, न हर शीर्षकके अन्तर्गत उससे पूर्वके साहित्यकी परम्परापर भी अनावश्यक सामग्री रखी गयी है। विवेचनकी मौलिकताके विषयमें भी सन्देह नहीं किया जा सकता क्योंकि एक तो "गिरीश" जी के विषयमें पहले इतना कुछ लिखा ही नहीं गया कि उसके संग्रहमात्रकी शंका उपस्थित हो, दूसरे यह कि लेखकने स्थान-स्थानपर स्वयं अपनी मान्यताओंको भी प्रस्तुत करनेका प्रयत्न किया है और उन्हें यथासम्भव प्रामाणिकता देनेकी चेष्टा की है।

प्रबन्ध पाँच अध्यायोंमें विभक्त है। इनमें क्रमशः (१) गिरीशजीका पारिवारिक व साहित्यिक व्यक्तित्व, (२) काव्यसिद्धान्त तथा गिरीशजीके खण्डकाव्य एवं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तारकवध महाकाव्य, (३) समालोचना-विकास, सिद्धान्त एवं गिरीशजीकी समीक्षा कृतियाँ, (४) उपन्यास-सिद्धान्त तथा गिरीशजीके उपन्यास और (५) गिरीशजी का मूल्यांकन व स्थान-निर्धारण नामक शीर्षक दिये गये हैं।

लेखककी मौलिकताकी दृष्टिसे कुछ तथ्य उल्लेखनीय भी हैं और विचारणीय भी। यथा, प्रथम अध्यायमें (पृ०२६) गिरीशजीके "महाकवि हरिऔध" तथा "गुप्तजीकी काव्य-धारा" को समालोचना प्रबन्धके प्रथम नमूने कहा गया है। इसी अध्यायमें (पृष्ठ ३४) आचार्य म० प्र० द्विवेदीके लेखन को ध्यानमें रखते हुए आचार्य शुक्लको दो बातोंमें आचार्य द्विवेदीका ऋणी बताया है—एक तो लोकसंग्रह मूलक भावकी स्वीकृति और उसे सैद्धान्तिक रूप देनेमें और दूसरे, व्यावहारिक निवन्धों के विषय-निर्वाचनके विषयमें। इनमेंसे प्रथम स्थापनाके विषयमें पुनः समालोचनाके सन्दर्भ में आगेके अध्यायोंमें विस्तार किया गया है, किन्तु आचार्य शुक्लकी भूमिकाओंको देखते हुए "गिरीश" जी को इसकी नींव डालनेकी दृष्टिसे महत्त्व देना कठिन ही जान पड़ता है, हाँ उन्हें नींवका लाभ उठाकर उसपर व्यवस्थित प्रासाद-रचनाके लिए श्रेय दिया जा सकता है।

इसी प्रकार दूसरे अध्यायमें लेखकने प्रबन्ध काव्य तथा महाकाव्यका पारस्परिक भेद स्पष्ट करनेके हेतु लम्बा ऊहापोह प्रस्तुत किया है। इस स्थानपर (पृष्ठ ४३ से ४६ तक) आचार्य शुक्ल द्वारा "जायसी ग्रन्थावली" की भूमिकामें प्रस्तुत की गयी प्रबन्ध-काव्यकी परिभाषाको आदर्श-रूप मानते हुए भी उसे व्याख्या-सापेक्ष बताकर प्रबन्ध, काव्य प्रबन्धाभास, गद्य, पद्य महाकाव्य और उपन्यासके बीच अन्तर किया गया है वह उलझन भरा है और या तो ऐसे वाक्योंपर जाकर समाप्त होता है कि 'प्रबन्ध अवयव है, काव्य उसमें निहित आत्मा है।" अथवा 'दशरूपक' का सहारा लेकर काव्यमें सांस्कृतिक उदात्तता की चर्चापर समाप्त होता है। स्वयं काव्य क्या है यह इस सारे प्रसंगसे कठिनाईसे ही कहीं व्यक्त होता है। जो हो, अन्त में लेखक महाकाव्यकी अपनी परिभाषा स्थिर करते हुए कहता है—"जिस पद्यमूलक संश्लिष्ट कथानक-संगठन में चरित्रनायक एवं अन्यपात्रोंकी बहुमुखी घटनाओंके माध्यमसे सांस्कृतिक मूल्यवृद्धि, औदात्य, रसात्मक बोधतत्व विशिष्ट रूपसे प्रस्तुत हो—महाकाव्य है।" (पृ. ४६)। महाकाव्यकी प्राचीनों द्वारा दी गयी परिभाषाओंमेंसे जो कुछ अनावश्यक है उसे त्यागकर तथा नायक एवं प्रतिनायकके व्यापारों में नायकके सत्पक्षकी विजयकी धारणा-को साँस्कृतिक मूल्यवृद्धि और औदात्यके द्वारा व्याख्यायित करके ही यहाँ प्रस्तुत किया गया है। इस नयी व्याख्याकी आवश्यकता पड़ी पश्चिमी धारणाओंके प्रकाशमें प्रस्तुत विचारोंको देखकर। किन्तु पृष्ठ ४६ पर वह जब समन्वित-में परिणाम प्रस्तुत करने लगता है तो फिर छन्द परिवर्तन और मंगलाचरण जैसी चीजें समेट लेता है। सब कुछको समेटते हुए भी जो चीज यहाँ छूट जाती है वह है "जीवन-की सम्पूर्णताका चित्रण-विधान" जिसे प्रबन्ध-लेखक डॉ. प्रबन्धकाव्य तक ही सीमित रखते हैं।

उनकी यह बात समझना और भी कठिन हो जाता है जब वे इस निष्कर्षपर पहुँचते हैं कि—"प्रबन्धकाव्यके अन्तर्गत खण्डकाव्य भी स्वीकृत होता है क्योंकि दोनों (?) वस्तुमूलक (कथा प्रधान) होते हैं। दोनोंके बीच अन्तर इतना ही किया जाना सम्भव है कि एकमें जीवनकी सम्पूर्णता का चित्रण—विधान हुआ करता है और दूसरेमें जीवनका खण्ड पक्ष ही अपनी इकाईमें पूर्ण रूपसे चित्रित होता है। प्रबन्ध काव्य एवं खण्डकाव्य दोनों काव्योंमें प्रतिष्ठापित औदात्य, रस, देवत्वके कारण महाकव्य भी कहे जा सकते हैं। खण्डकाव्यमें सर्ग प्रबन्धकाव्यके अनुपातमें कम होते हैं व शेष अन्य सभी पक्ष आवश्यक रूपसे प्रबंध-काव्यकी मान्यताओंके अन्तर्गत स्वीकृत होते हैं। (पृ॰४६) खण्डकाव्यको भी महाकाव्य बना देने और उसे प्रबन्धकी तुलनामें रखनेका करिश्मा ही दिखाना अभीष्ट था तो प्रबन्धकाव्य और महाकाव्य मामक दो भेद ही क्यों नहीं रख दिये गये, अथवा बृहद्काव्य, खण्डकाव्य, महाकाव्य संज्ञाएँ क्यों नहीं दी गयीं ?

तीसरे अध्यायमें डॉ॰ शुक्लने पहले अध्याय के समान ही आचार्य शुक्लको समीक्षाके क्षेत्रमें भी द्विवेदी युगके अन्तर्गत ही रखना उचित माना है और वह किसी भी "शुक्लयुग" नामका निषेध करते हुए आचार्य शुक्लसे हथियार डालकर समर्पण करानेका उत्साह भी प्रकट करते हैं। द्विवेदीजीके आशीर्वादकी छाया शुक्लजीमें देखकर उनके सब किये-करायेपर पानी फेर देते हैं, इस बातको नहीं देखते कि आलोचनाका वास्तविक स्वरूप ही वस्तुतः शुक्लजीके साथ उभरा, आचार्य द्विवेदी उसे कोई रूप न दे सके। आचार्य शुक्लकी प्रखरता और संयोजन गरिमा ही नहीं, उनके बाद उनकी पद्धतिपर चलने वाले आलोचकोंको भी ध्यानमें रखा जाता तो आचार्य शुक्लसे उनका श्रेय छीननेकी आवश्यकता न पड़ती। आचार्य शुक्लके प्रतिपक्षमें डॉ॰ शुक्लकी यह मान्यताएँ भी विचारणीय हैं।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) "उनके द्वारा गुण व्यापक हुआ लेकिन वस्तु निबन्धों में, भूमिकाओंमें या इतिहासके वृत्त संकलन संदर्भमें एक निश्चित प्रारूप नहीं पा सका। उनमें समालोचना है लेकिन वस्तुशिल्प नहीं। उनका इतिहास समालोचनाका प्रबन्ध नहीं। उनके इतिहासमें समालोचना न हो तो भी इतिहास-वस्तु को, जो हैं, उतनेको क्षति न पहुँचेगी।"

(२) "आचार्य शुक्ल ने मान्यताएँ स्थिर कीं। लेकिन समालोचनाकी कसौटीके लिए क्या किया? उन्होंने तो आदर्शवादी सिद्धान्त प्रतिपादित किये, लेकिन समालोचनों को शास्त्रीय रूपसे वस्तुन्मुखी बनानेको दृष्टि से क्या किया?

(३) "जीवनके सांगोपांग अध्ययनके लिए काव्यमें प्रबन्ध-संदर्भमें लोकसंग्रह मूलकता आवश्यकताको अनिवार्य कहा, लेकिन समालोचनाको प्रबन्ध सन्दर्भमें रखकर सांगोपांग अध्ययनकी प्रवृत्तिकी आवश्यकताको अनिवार्य क्यों नहीं माना?"

"गिरीश"कृत "महाकवि हरिऔध" को लेखकने समालोचना प्रबन्धका पहला प्रयास माना है, किन्तु उसमें निहित दृष्टिके प्रति आक्षेप करते हुए उसने स्थान-स्थान पर "हरिऔध" जी के प्रति "गिरीश" जीकी पक्षधरता, अति सहानुभूतिशीलता, राग द्वेषसे युक्तता तथा प्रचार भावनाका दर्शन कराया है और यह निष्कर्ष दिया है— "यह स्पष्ट है कि गिरीशजीकी अनेक दिये गये सफाइयों-के बावजूद भी "महाकवि हरिऔध" द्विवेदी-युगके रूपमें स्थित पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीके समस्त अस्तित्वको निर्मूल सिद्ध कर देनेके निमित्त एक "षड्यंत्र" है। मालूम होता है कि गिरीशजीने द्विवेदीजी के स्थानपर हरिऔधजी-को स्थापित करनेके प्रयासमें "महाकवि हरिऔध' का लेखनकार्य संपन्न किया है।" (पृ० ११९)

"गिरीश" जीके सम्बन्धमें डा० शुक्ल ने लिखा है कि समालोचनामें जीवनी-तत्त्वको वे सहायक मानते थे। उन्होंने यह भी कहा है कि "लेखकोंने इस "प्रणाली" का दुरुपयोग किया है जिसके परिणामस्वरूप ही इसके विरोध में "प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न होने लगी हैं।" किन्तु डॉ० शुक्ल स्वयं "गिरीश" जीको इसके लिए प्रामाणिक नहीं मानते और उनसे केवल इसलिए असहमति प्रकट करते हैं" क्योंकि 'महा-कवि हरिऔध" तक इस प्रणालीका वस्तुतः विकास ही नहीं हुआ था।" (पृ०१४२)। कहना न होगा कि केवल 'महा-कवि हरिऔध' को प्राथमिकता प्रदान करने के लिए डॉ० शुक्ल स्वयंगिरीशजीके कथनको अप्रामाणिक ठहरा रहे हैं और इसीलिए "विकास" शब्दका प्रयोग करते हैं, "अरम्भ" का नहीं जिसके दूषण भी गिरीशजीके सामने आने लगे थे।

तीसरे तथा चौथे अध्यायमें डॉ० शुक्लने क्रमशः "गिरीश-जीकी कृतियोंकी विषयवस्तु आदिकी दृष्टि से उनका परिचय भी दिया है और उनकी समालोचना भी विस्तृत रूपमें प्रस्तुत की है। "प्रियप्रवास" तथा आचार्य शुक्ल सम्बन्धी "गिरीश" जीकी मान्यताओंको देनेके साथही स्वयं इन दोनोंकी विषयवस्तु या विचारोंको भी दिया गया है, जो मेरी दृष्टिमें अनावश्यक है। पाँचवा अध्याय उपसंहारके रूपमें है जिसमें पर्व विवेचनका सार उपस्थित है और उसके आधारपर "गिरीश" जीको शोककाव्यका प्रथम लेखक, मनोवैज्ञानिक आधारपर उपन्यास-लेखन-की नींव डालनेवाले तथा महाकाव्यकारकी अपेक्षा समा-लोचकके रूपमें श्रेष्ठ माना गया है।

वस्तुतः सम्पूर्ण प्रबन्धमें अनेक स्थान हैं जो ध्यान पूर्वक पढ़ने और विचार करनेकी अपेक्षा रखते हैं। यहाँ सबका दिया जाना सम्भव नहीं है। सम्पूर्ण प्रबन्धसे "गिरीश" जीका व्यक्तित्व और उनका कर्तृत्व भलीप्रकार सामने आता है। समकालिक इसिहासका संकलन करनेवाले लेखकोंको इससे बहुत-सी अच्छी जानकारी प्राप्त हो सकती है।

इतना सब होते हुए भी एक बात है जो अत्यन्त कष्ट-दायक है और इस प्रबन्धके गौरवको नष्ट करती है। सम्पूर्ण प्रबन्धमें अशुद्ध भाषा, त्रुटित वाक्यों और अव्याकर-णिक प्रयोगोंकी भरमार है। शायदही कोई पृष्ठ ऐसा हो जिसमें दस-पाँच बार इन बाधाओंसे पाठकको जूझना न पड़ता हो और प्रबन्ध पढ़नेका उत्साह भंग न हो जाता हो। केवल बचाव वहाँ हो पाता है जहाँ दूसरोंके कथन उद्धृत किये गये हैं। इससे स्पष्ट है कि स्वयं प्रबन्ध-लेखक-का भाषापर अधिकार नहीं है, अन्यथा यदि ये मुद्रणकी ही भूलें होती तो उद्धरणमें भी हुई होतीं। यों मुद्रणकी भ्रष्टता भी सारे ग्रंथमें उजागर है और वह भाषाकी भूलोंके साथ मिलकर प्रबन्ध को सर्वथा अपाठ्य बनानेकी ही भूमिका अदा करता है। इससे अधिक लज्जाकी बात क्या हो सकती है कि प्रबन्ध "हिन्दी-साहित्य सम्मेलन जैसी संस्थासे छपा हो और उसकी जिल्दपर ही वर्तनीकी भयकर-भूल अंकित हो—प्रबन्धके नाममें, "स्व० गिरजादत्त शुक्ल" "गिरिश" के रूपमें। मैं समझता हूँ सम्लेलनको यह प्रबन्ध असावधान मुद्रणके परम श्रेष्ठ उदाहरणके रूप में अपने यहाँ शीशे में जड़ाकर रखना चाहिये। भला होता कि सम्मेलन इसकी सारी प्रतियाँ बाजारसे वापस लेकर पुनमुद्रणका दायित्व वहन करता।

—डॉ० आनन्दप्रकाश दीक्षित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वच्छन्दतावादी काव्यका तुलनात्मक अध्ययन

लेखक : डॉ० पी० आदेश्वरराव; प्रकाशक : प्रगति प्रकाशन, आगरा-३। पृष्ठ : १२+३५०; रॉयल, ७२ ; मूल्य : ३५.०० रुपये।

'स्वच्छन्दतावादी काव्यका तुलनात्मक अध्ययन : हिन्दी और तेलुगु' आन्ध्र विश्वविद्यालयके हिन्दी-प्राध्यापक डॉ० पी० आदेश्वररावका बहुपठित, सुविवेचित और मौलिक शोध-प्रबन्ध है। इस ग्रन्थपर शोधकर्ताको वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय, तिरुपति द्वारा पी० एच०डी० उपाधि प्राप्त हुई है। हिन्दी-अनुसन्धानके अन्तर्गत यद्यपि तुलनात्मक अध्ययनकी परम्परा अभी बड़ी छोटी है तथापि इस दिशामें उपलब्ध अध्ययनकी सम्पन्नता और ऊँची समृद्धिको अस्वीकार नहीं किया जा सकता। ऐसे अनुसन्धाताओंमें पांक्तेय डॉ० जगदीश गुप्त (हिन्दी और गुजराती कृष्ण-काव्यका तुलनात्मक अध्ययन), डॉ. रत्नकुमारी (हिन्दी और बंगलाके वैष्णव कवियोंका तुलनात्मक अध्ययन), डॉ० के० भास्कर नय्यर (हिन्दी और मलयालमके भक्त कवियोंका तुलनात्मक अध्ययन), डॉ० इ० पाँडुरग राव (आन्ध्र हिन्दी रूपक), डॉ. हिरण्मय (हिन्दी और कन्नड़में भक्ति आन्दोलनका तुलनात्मक अध्ययन), डॉ० प्रभाकर माचवे (हिन्दी और मराठीका निर्गुण सन्त काव्य), डॉ. शंकर राजुलु नायुडु (कम्बन और तुलसी : एक तुलनात्मक अध्ययन) प्रभृतिके साथ अब डॉ० पी० आदेश्वररावका नामभी जुड़ जाता है; डॉ० रावका यह प्रबन्ध एक विशिष्ट काव्य-धाराकी तुलनाके माध्यमसे एक उत्तम शोध-प्रयासके रूपमें अपनी परम्पराका अनुसरण ही नहीं करता, अपितु उसका अपेक्षित विकास भी करता है। सांस्कृतिक और साहित्यिक दृष्टिसे हिन्दी और तेलुगु—दो भिन्न भाषाओंके बीच यह ग्रन्थ समन्वयात्मक रूपमें पारस्परिक भाषा-विरोधका उच्छेदक एवं भावात्मक एकताके तत्त्वोंका सम्मेलक-समाहारक है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयीने कभी संकेत करते हुए कहा था कि "भारतीय संस्कृतिकी एकताके वे तत्त्व प्रकाशमें आने चाहिये, जो विभिन्न प्रादेशिक साहित्योंके माध्यमसे मुखर हैं।" निस्सन्देह डॉ० रावका यह ग्रन्थ इस विशिष्ट क्षेत्रमें अपना मानक महत्त्व प्रतिष्ठापित करता है।

सात अध्यायोंमें विभाजित इस प्रबन्धका विवेचन पूर्ण सन्तुलित है। प्रथम अध्यायमें तुलनात्मक अनुसन्धानकी प्रक्रिया और उसकी उपयोगिताकी मीमांसा है। द्वितीय अध्यायमें प्रेरणा और प्रभाव-रूप युग-परिस्थितिका निरुपण है। तृतीय अध्यायमें स्वच्छन्दतावादके शास्त्रीय स्वरूप-निर्धारणके साथ उसकी साहित्यिक मान्यताओंका विवेचन-विश्लेषण है। शेष चार अध्यायोंमें हिन्दी और तेलुगु क्रमशः विवेच्य काव्यधाराके ऐतिहासिक विकास-क्रम, उसके भावपक्ष, कला-पक्ष एवं उसके प्रमुख कवियोंका तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। शोधकर्त्ताने सूक्ष्म शोध-दृष्टि एक साथ शोध-विषयकी पृष्ठभूमि, उसकी सैद्धान्तिकी तथा दोनों साहित्योंमें उसके व्यावहारिक विनियोगके बीच काव्य सन्तुलनको कुशलतासे सुस्थिर करते है। स्वच्छन्दतावादके तात्त्विक विवेचनके अन्तर्गत उसकी परिभाषा, प्रकृति, भावगत एवं कलागत साहित्यिक मान्यता, काव्य-प्रेरणा तथा रचना-प्रक्रिया एवं शैली और अभिव्यक्ति-विषयक समीक्षण प्राप्त होता है, जो सभी तरह प्रामाणिक, सुसम्मत, पुष्ट और सर्वांगीण है। डॉ० रावने इस प्रबन्धमें दोनों स्वच्छन्दतावादी साहित्यके तुलनात्मक परिशीलनको कई सन्दर्भों और वर्गोंमें विवेचित-विश्लेषित किया है—१. साहित्य प्रणायनके मूलमें प्रेरक-प्रभावक युग-परिस्थितियोंका अध्ययन, २. साहित्यके क्रमिक विकासका ऐतिहासिक अध्ययन, ३. साहित्यकी विशिष्ट प्रवृत्ति-परक भाव-सम्पदाका अध्ययन, ४. साहित्यकी विशिष्ट प्रवृत्ति-परक कलात्मक अभिव्यक्तिका अध्ययन और ५. साहित्यके विशिष्ट धाराके विशिष्ट कवियोंका अध्ययन। इस ज्ञान-मन्थनमें विद्वान लेखकने हिन्दी और तेलुगु दोनोंमें स्वच्छन्दतावादी काव्य-धाराके ऐतिहासिक विकास-क्रमको स्पष्ट कर तुलनात्मक अध्ययनको विशेषतः गौरवान्वित किया है। इससे अनुसन्धाताकी आलोचनात्मक समझके अतिरिक्त उसके साहित्येतिहासिक अवबोधका भी सार्थक परिज्ञान प्राप्त होता है। तुलनात्मक विवेचनके अन्तिम चार अध्याय स्वतन्त्र रूपमें भी अलग-अलग अपने आपमें पूर्ण अनुसन्धान के विषय हैं। डॉ. रावने इनका विवेचन गहरी परख और सम्यक् विस्तारके साथ किया है। इस दृष्टिसे ये अध्याय अगले शोध कार्योंके लिए दिशा-निर्देशनका दायित्व सम्वहन करते हैं।

डॉ० रावका यह शोध-ग्रन्थ तुलनात्मक दृष्टिसे सम्बलित होनेके बावजूद उसी चौहद्दीमें सीमित नहीं होकर हिन्दी या तेलुगु स्वच्छन्दतावादी काव्यका स्वतन्त्रतः भी व्यापक अध्ययन प्रस्तुत करता है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्यके स्वच्छन्दतावादकी दृष्टिसे तो यह एक अत्यन्त व्यवस्थित अध्ययन है।

ग्रन्थके विषय-प्रतिपादनमें लेखककी दृष्टि अत्यन्त विश्लेषणात्मक और पूर्वग्रह-रहित है। चाहे अनुसन्धान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रक्रियाकी विश्लेषण हो या स्वच्छन्दतावादकी शास्त्रीय विवेचना ; चाहे युग-प्रभाव या ऐतिहासिक क्रम-विकासका प्रसंग हो या भावपक्ष और कलापक्षका सन्दर्भ, सर्वत्र शोध-कर्ताने अपनी विश्लेषणवादी दृष्टिसे उपलब्ध तथ्योंका अधिकाधिक उपयुक्त वर्गीकरण करते हुए स्वच्छन्दतावादी काव्यके अध्ययनका विस्तार किया है। डॉ० रावके विश्लेषणकी एक बड़ी विशेषता उसका प्रत्याशा-परक या सोपानिक होना है। उन्होंने हिन्दीमें स्वच्छन्दतावादके ३ उत्थान मानते हुए प्रथम उत्थानमें मुकुटधर पाण्डेय, श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, मैथिलीशरण गुप्त आदि कवियोंको, द्वितीय उत्थानमें प्रसिद्ध छायावादी बृहत्-चतुष्टयको और तृतीय उत्थानमें नवीन, रामकुमार, बच्चन, दिनकर आदिको हर प्रकारके पूर्वग्रहसे रहित होकर समुचित स्थान दिया है। इस प्रकार उन्होंने स्वच्छन्दतावादी मूल्योंके प्रतिही आग्रह दिखाया है, व्यक्ति-विशेषके प्रति उनका कहीं कोई पूर्व-निर्धारित राग-मोह नहीं है। तेलुगुके विवेचनमें भी वे कहीं भावातिरेक प्रदर्शित नहीं करते।

ग्रन्थकारने पाद-टिप्पणीमें तेलुगुके मूल काव्योद्धरणोंको नागरी लिपिमें देनेके साथ-साथ हिन्दीमें उसका सरस और प्रांजल अनुवाद भी प्रस्तुत किया है। यह एक ओर डॉ० रावके कारयित्री प्रतिभा-सम्पन्न सहृदय-सम्वेद्य होने और हिन्दीपर उनके समर्थ अधिकार रखनेका द्योतक है तो दूसरी ओर हिन्दी भाषा-भाषीके लिए अर्थ-बोधके साथ तेलुगु-काव्यका रसास्वाद करा सकनेकी विशेष सुविधाका निर्मायक भी ! अनुवादके ऐसे स्थल दर्श्य हैं—

(१) "मास मुझे ऐसा होता है—
धीरे-धीरे लिपट पीठसे मेरी
बाँध मुझे कोमल कर-युगके आलिंगनमें
प्रेयसि मुझपर छा जाती है।"
— तल्लावझ्झुल शिवशंकर शास्त्री (पृष्ठ–१३१ पर)

(२) "ऋषियोंके पावन तप-धनसे
धरणीशोंके शौर्य-हारसे
कवि-प्रभुओंके भाव-सूत्रसे
भक्त, रत्न-शुचि राग-दुग्धसे
हे पुत्र, तुम्हारा दिव्य विश्व चिर शोभित !
हे पुत्र, तुम्हार पुण्य देश नित दीपित !
—रायप्रोलु सुब्बाराव (पृष्ठ–१६६ पर)

इन काव्य-स्थलोंको पाठसे ऐसा नहीं लगता कि ये अनूदित सन्दर्भ हैं, अपितु ये मौलिक काव्यांशका आह्लाद देते हैं।

इन सारी विशेषताओंके रहते हुए भी शोध-प्रबन्धमें ३ स्पष्ट दुर्बलताएँ हैं—१. प्रारूपात्मक त्रुटि, २. प्राक्कथनात्मक असंगति और ३. विषयानुक्रमणीकी अवैज्ञानिक प्रस्तुति। प्रारूपकी दृष्टिसे विपर्यस्तता और अभावत्मकताकी २ त्रुटियाँ अनायास पाठकको खटकने लगती हैं—१. ग्रन्थमें दूसरे और तीसरे अध्यायका स्थान विपर्यस्त हो गया है। पहले स्वच्छन्दतावादी शास्त्रीय विवेचन होना चाहिये था, फिर प्रेरक-प्रभावक युग-परिस्थितियोंका अध्ययन। तुलनात्मक विवेचनके सारे द्वार शास्त्रीय निरूपणके बाद एक क्रममें खुलने चाहिये थे। २. तुलनात्मक अध्ययनकी वैज्ञानिकता, सटीकता और सूक्ष्मताके लिहाज़से भावपक्षमें समाविष्ट विचार-पक्ष या दर्शन-पक्षके लिए कला-पक्षकी ही तरह स्वतन्त्र अध्यायका नियोजन होना चाहिये था। इससे विचार-पक्षको अलगसे बल और महत्त्व मिल पाता ! दूसरी दुर्बलता प्राक्कथनकी असंगतिकी है। प्राक्कथनमें ८ अध्यायोंका उल्लेख है, किन्तु विषय-सूची और प्रबन्धमें केवल ७ अध्याय उपलब्ध होते हैं। कभी-कभी ऐसी छोटी भूल भी मूलतः असावधानता-प्रसूत होनेके बावजूद प्रबन्धकी स्तरीयता को कलंकित करने लगती है। तीसरी दुर्बलता ग्रन्थकी विषयानुक्रमणीका निरुपयोगी होना है। शोध-प्रबन्धोंमें प्रायः विषयानुक्रमणीका महत्त्व २ रूपोंमें होता है। प्रथमतः इससे एक-एक अध्यायके अन्तर्गत नियोजित सामग्रीकी परिचयात्मक जानकारी मिलती है। द्वितीयतः उन सामग्रियोंको निर्दिष्ट करनेवाली पृष्ठ-संख्याका भी अभिसूचन होता है। पर इस प्रबन्धमें विषयानुक्रमणीका प्राक्कथनमें वर्णित अध्यायीकरणके अलावा कोई उपयोग नहीं दीख पड़ता।

तुलनात्मक अध्ययनके निष्कर्षके लिए अनुसन्धाताको दो विषयोंके बीच एकरूपता, भेदकता और श्रेष्ठताका बिना किसी लाग-लपेटके निर्णय करना पड़ता है। 'स्वच्छन्दतावादी काव्यका तुलनात्मक अध्ययन' के लेखकको यह क्षमता प्राप्त है—(१) दोके बीच एक रूपता—"वास्तवमें भक्त न होते हुए भी निराला एवं अप्पारावने भक्ति-सम्बन्धी गीत लिखे।" (पृष्ठ—३३५) (२) दोके बीच भेदकता—'वंगरम्भाकी अपेक्षा महादेवी संस्कृतके तत्सम शब्दोंका अधिक प्रयोग करती हैं।" (पृष्ठ—३४१) (३) दोके बीच श्रेष्ठता—"यह निस्सन्देह कहा जा सकता है कि महादेवीका काव्य वंगरम्भाके काव्यकी तुलनामें विशाल एवं गहन है।" (पृष्ठ—३४१)

प्रबन्धका अभिव्यक्ति-पक्ष पारदर्शी है। भाषा प्रसाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मयी है। सामान्यतः शोध-प्रबन्धोंमें प्रयुक्त होनेवाली दुर्बोध और जटिल भाषासे लेखकने इस कृतिको आद्यन्त बचाया है। पर उसने प्रचलित तत्सम शब्दोंका व्यवहार करते हुए भी समालोचनात्मक पदोंका महत्त्व क्षुण्ण नहीं होने दिया है। उसे सन्धि और समासोंका कोई आग्रह नहीं है, फिर भी यत्र-तत्र 'प्रणय-वैकल्य-जन्य' (पृष्ठ—१२२) जैसी सामासिकता मिल जाती है। कहीं-कहीं रूपकात्मक अभिव्यक्ति भी प्राप्त होती है—"मिलनके अत्यन्त मार्मिक चित्रोंसे उनका काव्य-लोक भरा हुआ है।" (पृष्ठ—१३०) प्रबन्धकी वाक्य-संरचना सुलझी हुई है। इससे अधिकाधिक अर्थ-संप्रेष्यता आयी है। इस दृष्टिसे डॉ० रावकी भाषा उर्वर है। लेखकको उचित अनुच्छेदीकरणका ज्ञान है, जिससे पाठक कभी प्रबन्ध-पाठमें ऊब या उकताहटका अनुभव नहीं कर सकता। फलतः प्रतिपादन का हर नया पहलू विहंगावलोकनमें ही पकड़में आ जाता है और अध्येता अनुशीलनकी गहनतामें तल्लीन हो जाता है।

कुल मिलाकर यह प्रबन्ध तुलनात्मक रूप में दोनों प्रदेशोंके कवियोंकी चित्तवृत्तियोंमें प्रतिबिम्बित साम्यमूलक और वैषम्यमूलक आधारोंका सन्धान करने वाला तथा इन आधारोंपर दोनों काव्य-धाराओंकी स्वरूपगत निकटता और भिन्नताका आख्यान करनेवाला है। यह भावात्मक-ऐक्यका भी पथ-प्रदर्शक ग्रन्थ है। इसने एक सर्वथा अछूते विषयपर मानक ऐतिहासिक महत्त्व अर्जित करते हुए हिन्दी अनुसन्धानमें ज्ञानकी महत्त्वपूर्ण दिशाका विस्तार किया है। यह स्तरीय, पठनीय, विवेचनीय और संग्रहणीय है। एक हिन्दीतर हिन्दी-सेवीके इस उत्तम ग्रन्थको प्रकाशित करनेके लिए प्रगति प्रकाशन बधाईका पात्र है।

—डॉ. पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु'

हिन्दी सन्त काव्यमें प्रतीक विधान

लेखक : डॉ. देवेन्द्र आर्य; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : ४४४; डिमाई, ७१ ; मूल्य : ३५.०० रु.।

आलोच्य पुस्तक एक शोध-प्रबन्ध है, इसपर सन् १९६८ में आगरा विश्वविद्यालयसे पी-एस० डी० की उपाधि प्रदान की जा चुकी है। पुस्तकमें लेखकने प्रतीकके स्वरूप, प्रयोग-परम्परा और हिन्दी सन्त काव्यमें उसके विधानपर विचार किया है।

पुस्तकके विषयको भली-भाँति हृदयंगम करनेके लिए यहाँ प्रतीक विचारणीय है। प्रतीक अभिव्यक्तिका प्रमुख सहायक है। भाषाकी अभिव्यक्तिके तीन स्तर हो सकते हैं—बोध कराना, अंकित करना और व्यंजित करना। जैसे, कहा जाये कि 'क' बराबर है 'ख' के। यहाँ 'क', 'ख' का सूचक या चिह्न है। यह बोध करानेकी स्थिति है। यदि कहा जाये कि क,ख—जैसा है, तो खसे परिचित होनेके कारण हम उसके माध्यमसे 'क' को मनपर अंकित कर लेंगे। इससे भी आगेकी स्थिति है व्यंजनाकी, जहाँ क कहने से, प्रभाव-साम्यके कारण, 'ख' की अनुभूति स्वतः हो जाती है। यह प्रतीक प्रयोग है। इसलिए कहा गया है कि कविताकी भाषा अनुकरण (चिह्न) से सादृश्य (अलंकार) की ओर, और सादृश्यसे प्रतीककी ओर अग्रसर होती है।

सादृश्यमें, प्रस्तुत वस्तुके स्वरूपको स्पष्ट करनेके लिए अप्रस्तुतको एक नये संदर्भमें उसके साथ रखा जाता है। जैसे, 'टूटे तरुकी छुटी लता-सी दीन दलित भारत की विधवा है।' में दीनताके लक्षणपर भारतकी विधवाका सन्दर्भ निराश्रित लतासे जोड़ा गया है। यहाँ उपमेय विधवाके लिए उपमान लता है। प्रतीक भी उपमान होता है, किन्तु उसमें अन्य विशेषताएँ होती हैं। इसके साथ उपमेयका कथन नहीं होता है, वह छिपा रहता है। प्रतीकमें उपमान और अन्तर्हित उपमेयके बीच प्रभाव-साम्यका प्रगाढ़ सम्बन्ध होता है। जैसे, 'सजल सजल मेरे दीपक जल' पंक्तिमें हमारी आँखोंमें स्थूल दीपक है और ध्यान साधनापर है। प्रतीकका उपमान नयी सूझ लिये होता है। यदि वह काव्य-प्रयोगसे उपमेयके लिए रूढ़ हो गया है, तो नयी सूझके अभावमें सहृदयोंको आलोडित करनेमें समर्थ न होगा। अतः अब कह सकते हैं—प्रतीक वह नूतन स्थूल माध्यम है जो प्रभाव साम्यके बलपर अन्तर्हित उपमेयकी व्यंजना करता है। इस प्रक्रियामें प्रतीक अपनी स्थूलताको सूक्ष्म अर्थके प्रति विलय कर देता है।

पुस्तकके प्रथम अध्यायमें लेखकने उपलब्ध परिभाषाओंका विश्लेषणकर निष्कर्ष-रूपमें यह परिभाषा दी है—"प्रतीक सूक्ष्मातिसूक्ष्म आन्तरिक भावनाओंका ऐसा मूर्त विधान है जो एक बारगी समस्त वातावरणको मुखरित कर देता है, चाहे उनका (भावनाओंका) सम्वन्ध अतीन्द्रिय और अलौकिकसे हो या भौतिक ऐन्द्रिक लोकसे।"—प्रतीककी यह परिभाषा उपयुक्त है। इसी क्रममें, लेखकने प्रतीककी तुलना, मिलती-जुलती अन्य अभिव्यक्ति-विधियों—संकेत, उपमा, रूपक, रूपकातिशयोक्ति, अन्योक्ति, रूपककाव्य तथा शब्द-शक्ति—से की है। इस प्रसंगमें, 'मानवीकरण' से भी यदि प्रतीककी तुलना की गयी होती तो विषयके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवेचन औरभी पूर्ण होता। मानवीकरण और प्रतीकका निकटका सम्बन्ध है। इन दोनोंका सूक्ष्म भेद-निदर्शन अपेक्षित है।

-पुस्तकके प्रथमके अतिरिक्त अगले चार अध्यायोंमें शोध-समस्याकी भूमिका तैयार की गयी है। ये अध्याय हैं—(२) प्रतीक साहित्यका रहस्यात्मक स्वरूप, (३) भारतीय वाङ्मयमें प्रतीकोंका विकास, (४) हिन्दी साहित्यमें प्रतीक परम्पराका उद्भव और विकास, तथा (५) सन्त काव्यमें प्रतीक परम्परा और विकास। इन अध्यायोंसे विषय-विवेचनका क्रम बना है तथा अध्ययनकी दृष्टि सम्पन्न हुई है।

पुस्तकका मुख्य विवेचन छठे अध्याय 'सन्त साहित्यमें प्रयुक्त प्रतीक' के सौसे अधिक पृष्ठोंमें हुआ है। इसमें सन्त कवियों द्वारा प्रयुक्त प्रतीकोंका वर्गीकरण निम्नलिखित प्रकार से किया गया है :—

१. भावात्मक रहस्यपरक प्रतीक, २. तात्त्विक या दार्शनिक प्रतीक, ३. साधनात्मक रहस्यपरक पारिभाषिक प्रतीक (यौगिक प्रतीक), ४. संख्यावाचक प्रतीक, ५. विपर्ययप्रधान प्रतीक—उलटबाँसी। इन वर्गोंके आगे उपवर्ग किये गये हैं। जैसे, भावात्मक रहस्यपरक प्रतीकोंके उपवर्ग ये हैं—(१) आत्मा-परमात्मामें एकता प्रदर्शित करनेवाले माधुर्य भावके प्रतीक—(१) दास्यभावाके प्रतीक, (२) सख्यभावके प्रतीक, (३) वात्सल्य भावके प्रतीक, (४) दाम्पत्य भावके प्रतीक—(क) पूर्वानुराग, (ख) मिलनकी उत्सुकता और विरह भाव, (ग) मिलन, तथा (घ) आध्यात्मिक, विवाहोपरान्त उल्लास, इत्यादि। इस वर्गीकरणके किंचित उल्लेखसे तात्पर्य, यह स्पष्ट करना है कि लेखकने सन्त काव्यका निगमन शैलीसे अध्ययन करके सामग्री-संकलन और उसका वर्गीकरण विधिवत् किया है। फिर उसने प्रत्येक उपवर्गका प्रतिनिधि उदाहरण प्रस्तुत करके उसकी व्याख्या की है। साथही, उस कोटिके अन्य प्रतीकोंका उल्लेख किया है। अध्ययनकी व्यवस्था, दृष्टिकी स्पष्टता तथा विवेचनकी प्रांजलताके आधारपर ग्रन्थका यह मूल अध्याय उल्लेखनीय बन पड़ा है। प्रतीक-प्रयोग तथा सन्त साहित्यमें रुचि रखने वाले अध्येताओंके लिए यह निस्संदेह ज्ञानवर्धक सिद्ध होगा।

इससे अगले, लगभग इतने ही आकारके सातवें अध्याय 'सन्त साहित्य—परिचयात्मक विवरण' में लेखकने कबीर, रैदास, नानक, गरीबदास आदि बीस सन्तोंके काव्य-में प्रकारान्तरसे, प्रतीकके उक्त पाँच वर्गोंका अध्ययन प्रस्तुत किया है। यह अध्याय विशिष्ट सन्त कविके प्रतीक विधानका पृथक स्वरूप स्पष्ट करनेके लिए रखा गया है, किन्तु इस विधिसे विषयकी पुनरावृत्ति अधिक हुई है।

बादके दो अध्यायोंमें सन्त काव्यको प्रतीक प्रयोगकी दृष्टिसे हिन्दीके अन्य कालीन काव्योंसे जोड़ा गया है। सन्त काव्यके प्रतीकोंका परवर्ती काव्यपर जो प्रभाव देखा गया है, वह अधिक संक्षिप्त हो गया है।

पुस्तकका शीर्षक है—हिन्दी सन्त काव्यमें प्रतीक विधान' किन्तु इसके प्रमुख छठे तथा सातवें अध्यायोंमें सन्त साहित्यमें प्रयुक्त प्रतीकोंका विवेचन हुआ है। इस प्रसंगमें काव्य और साहित्य, शब्दोंका भिन्न प्रयोग असंगत जान पड़ता है। पुस्तकमें अशुद्ध प्रयोग तथा छपाईकी भूलें भी देखनेमें आती हैं, यद्यपि ये अधिक नहीं हैं। अन्तमें कहा जा सकता है कि डॉ देवेन्द्र आर्यने सन्त काव्यके मर्मोद्घाटन-की दृष्टिसे उसके प्रतीक विधान जैसे महत्त्वपूर्ण विषयपर विचार किया है। विषयके अनुरूप उनका अध्ययन गहन और विवेचन-शैली प्रौढ़ है। पुस्तककी छपाईभी सुरुचि-पूर्ण है।

—डॉ. शशिभूषण सिंहल

श्री रामचरितमानसकी काव्यकला

लेखक : श्रीमती रूप हुक्कू और डॉ. हरिहरनाथ हुक्कू ; प्रकाशक : विनोद पुस्तक मन्दिर, अस्पताल मार्ग आगरा-३। पृष्ठ : ३५५ ; डिमाई, ७३ ; मूल्य : १०.०० रु.।

आगरा-विश्वविद्यालयके हिन्दी-प्राध्यापकोंके लिए डॉ. हुक्कूका नाम अविदित नहीं है, वे इस विश्वविद्यालयके प्रथम डी. लिट्. हैं। उन्होंने भूमिकामें स्वयं स्वीकार किया है कि प्रस्तुत ग्रन्थमें उनके शोध प्रबन्धका पूरा समाहार नहीं है। उनकी पत्नी श्रीमती रूप हुक्कू और उन्होंने पिछले ४० वर्षोंमें जो कुछ पढ़ा-सोचा-समझा-लिखा, उसके सारका कुछ संकलन इसमें है।

समस्त ग्रन्थ चार अध्यायोंमें विभक्त है—प्रथम अध्याय 'कुछ चरित्र' में लेखक-द्वयने राम, जानकी, रावण, कैकयी, भरत और हनुमानके चरित्रोंपर विचार किया है। राम जैसे महत्त्वपूर्ण पात्रके तुलनात्मक अध्ययनके लिए केवल वाल्मीकि-रामायण ही नहीं अपितु अध्यात्म-रामायण, हनुमन्नाटक, रघुवंश, महावीर चरित्र भट्टिकाव्य, जानकी-हरण, आश्चर्य-चूड़ामणि, बाल-रामायण, प्रसन्न राघव, कुन्दमाला, उत्तर- रामचरित आदि अनेक ग्रन्थोंमें प्रस्तुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-चरित्र और मानसके राम-चरित्रका अन्तर प्रतिपादित किया गया है। वाल्मीकिके राममें काम-शोक-अहंकारका आधिक्य है। निश्चयही पूर्ण आदर्श एवं ब्रह्मके नाते इस राममें कई अभाव रह गये थे। वाल्मीकिके रामकी आवेश-मयी स्थिति मानुषी हो जाती है, दैविक नहीं। लेखक-द्वयके शब्दोंमें—अनन्तको सीमित इस प्रकार करना कि सीमा भंग न हो और अनन्त असीम भी बना रहे, गुणातीतको गुणलिप्त करना और फिरभी उसे निर्गुण रहने देना, अच्युत को चलायमान करके भी उसे अच्युत रखना, आजको जन्म देकर, बाँधकरभी असीम बन्धन-रहित स्वतन्त्रता देना, जो विकार-रहित है उसे प्रेम-विह्वल और वियोग-सन्तप्त बना देना, ऐसे शत्रुओंके बीच उसे खड़ा कर देना जिनकी घृणा प्रकट थी और क्रूरता स्पष्ट, और फिर उसने उन कठोर राक्षसोंको प्रेमदान करवाना, उसको पूर्ण मानव बनाना और पूर्ण दैवभी, मानवताके आँसुओंसे भिगोकर उसे कमल-सा सूखा रखना—जो किसी ने नहीं किया, जो साहित्य-संसारमें कोई न कर सका, वह करनेमें यदि पूर्णतः कोई सफल हुए तो केवल कविवर तुलसी।' (पृष्ठ २४)। कहा जा सकता है कि लेखक गो० तुलसीदासका पक्षधर है, किन्तु उसके पक्षपातका आधार सही है।

द्वितीय अध्याय 'कुछ प्रसंग' में केवल चार प्रसंगों (१. विश्वामित्र-आगमन तथा अहल्योद्धार प्रसंग, २. जानकी-स्वयंवर तथा परशुराम-आगमन प्रसंग, ३. कैकेयी वरदान-याचना प्रसंग और ४. सीताहरण-प्रसंग) का तुलनात्मक अध्ययनकर काव्य-सौन्दर्यकी दृष्टिसे मानसकी उत्कृष्टताका प्रतिपादन है।

तृतीय अध्याय 'कुछ और' सबसे बड़ा है, इसमें १० विषयोंपर विचार प्रकट किये गये हैं। लेखक द्वयने 'तापस-प्रकरण' को प्रक्षिप्त नहीं माना है, साथही उसे तुलसीदास, हनुमान आदिभी नहीं। इनका मत है कि यहाँ मानसकार संकेत दे रहा है कि अनेक परिचय-हीन तेजपुंज तापसभी रामसे मिलने आये थे। 'तुलसीके शब्द' के अन्तर्गत कुछ शब्दोंका अर्थ-परिचय दिया गया है, जैसे कि 'रोदन ठाना', 'सुजाना' आदि, किन्तु 'बिहाइ' शब्दके अर्थ—'अनुपस्थित' से सहमत होना कठिन है।

अन्तिम अध्याय 'और कुछ' में ५ विषय लिये गये हैं। वस्तुतः तीसरे-चौथे अध्यायोंके वर्गीकरणका कोई विशेष आधार होना चाहिए था।

हर्षका विषय है कि लेखक-द्वयने अत्यन्त दुरूह एवं जटिल विषयोंपर विचार न कर पुस्तकको गरिष्ठ नहीं होने दिया है। प्रत्येक विषयपर सूक्ष्मतासे विचार किया गया है किन्तु सामग्रीमें रोचकताका ह्रास नहीं होने पाया है। निश्चयही अन्य ग्रन्थोंकी तुलनामें इसमें नूतनता का स्वाद मिलता है, साथही तुलसीदास तथा मानसके प्रति लेखक-द्वयकी प्रगाढ़ अवस्थाका भी परिचय प्राप्त होता है। भाषा आद्यन्त मार्जित, प्रवाहमयी एवं प्रसाद-गुण-सम्पन्न है। कहीं-कहीं शैली पाठकोंके सामने खड़े होकर वार्त्तालाप जैसी हो गयी है। पाठकोंको भली प्रकार समझानेके लिए शब्द-कृपणताका परित्याग है। कहीं-कहीं कथा वाचकों की हल्की-सी गन्ध मिल जाती है, तो कहीं-कहीं संस्कृत तत्सम शब्दोंका धारप्रवाह प्रयोग भाषाको काव्यगुण-सम्पन्न कर देता है। मुद्रण और सज्जा आकर्षक हैं, प्रूफकी अशुद्धियाँ कम हैं।

—डॉ रमानाथ त्रिपाठी

मीराँबाईकी काव्य साधना

लेखक : डॉ० रामप्रकाश ; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य संसार, नयी सड़क, दिल्ली-६। पृष्ठ : १२८; डिमाई ७२; मूल्य : ७.५० रु.।

मध्ययुगीन हिन्दी कृष्ण-काव्यमें मीराँ अपनी गहन भाव-साधनाके लिए विख्यात हैं। सूर तथा अन्यान्य कृष्ण-भक्त कवियोंको अपने अंतसके प्रकाशन हेतु जहाँ राधा और गोपियोंका माध्यम ग्रहणकर नारी भावनाका आरोपण करना पड़ा, वहाँ मीराँको नारी होनेके कारण वह स्थिति सहज ही प्राप्त थी। इसीलिए उनकी अनुभूतिमें जो तीव्रता, मार्मिकता और गहरी संवेदना है, वह आजतक अध्येताओंको अपनी ओर आकृष्ट किये हुए हैं। हिन्दी पाठकोंके समक्ष मीराँकी इस अप्रतिम भाव-राशिका समय-समयपर आलोडन-विलोडन होता रहा है। मीरां बाईकी काव्य साधना भी इसी दिशामें एक अद्यतन प्रयास है जिसमें लेखकने साहित्य समीक्षाकी परम्परागत प्रणालीको अपनाते हुए भी मीराँके व्यक्तित्वके एक सर्वथा नवीन आयामका उद्घाटन किया है।

अपने गिरधर गोपालकी प्रेमाभक्तिमें आपाद मस्तक डूबी हुई प्रेम दीवानी मीराँके व्यक्तित्वमें लेखकने विद्रोहिणी मीराँ के व्यक्तित्वका परिदर्शन किया है। हम जानते हैं कि मीराँको अपने सम्पूर्ण जीवन पर्यन्त प्रतिकूलताओंका सामना करना पड़ा, परिवेशगत सामाजिक रूढ़ मान्यताओंके विरुद्ध संघर्ष करना पड़ा। माँ भवानीकी उपासना करनेवाले राज परिवारमें नन्दललाकी आराधना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस संघर्षका सूत्रपात होता है, जिसका चरम विकास पति-की मृत्यु हो जानेपर मीराँके सती होनेकी अस्वीकृतिमें देखा जा सकता है और जिसकी परि-समाप्ति समस्त सामाजिक और पारिवारिक मर्यादाओं एवं बन्धनोंको तोड़नेवाली "प्रेम दीवानी" मीराँके स्वरूपमें हुई। सामन्तीय वैभव और विलासका तिरस्कार और सामाजिक मान्यताओंका विरोध करनेवाली मीराँकी यह विद्रोहिणी आकृति उनकी काव्यानुभूतिमें स्थान-स्थान पर उभरी है, जिसकी लेखकने सोदाहरण पुष्टि की है।

मीराँकी भक्ति भावनाके सम्बन्धमें लेखकका यह मन्तव्य कि वह परम्परागत भक्ति आन्दोलनकी देन नहीं है, "जीवनके पग-पगपर सामाजिक प्रताड़नाओंसे आहत उनका मन जब-जब भी अपने प्रियके प्रति आर्तनाद कर उठा है, तभी उनकी वाणी भक्तिमय हो गयी है," मीराँकी भक्ति साधनापर एक प्रश्न चिन्ह सा लगा देता है। यह ठीक है कि मीराँके काव्यमें तत्कालीन सामाजिक और पारिवारिक मान्यताओंके विरुद्ध विद्रोहके स्वर मुखरित हुए हैं, किन्तु उनकी भक्ति भावना किन्हीं सामाजिक प्रताड़नाओं और वर्जनाओंका परिणाम नहीं कही जा सकती। मीराँकी भक्ति उनके हृदयके अन्तरतमसे उद्बुध हुई है जिसे अनुकूल परिवेशने पुष्ट किया है। अपने दादा राव दुदाके अंचल में उनके हृदयमें वैष्णव भक्तिके संस्कारों का बीज वपन हुआ, चचेरे भाई जैयमलके भक्तिमय साहचर्य ने उसे पुष्ट एवं विकसित किया, जो आगे चलकर विरोधी परिस्थितियोंके भयंकर झंझाबातमें भी दृढ़ और स्थिर रही। अतः मनोवैज्ञानिक दृष्टिसे देखनेपर उनकी भक्ति भावना प्रतिक्रिया मूलक दीखनेपर भी, उनकी आन्तरिक रागात्मक अनुभूतिका परिणाम है जो अबोध अवस्थामें ही सांवरेके रंगमें रंग गयी थी। फिरभी मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्षमें मीराँके काव्यका ये मूल्यांकन उन्हें आधुनिक दृष्टि-बोधसे जोड़नेका एक अच्छा प्रयास है।

पुस्तककी सम्पूर्ण सामग्रीको तीन खण्डोंमें वर्गीकृत किया गया है। प्रथम खण्डमें मीराँकी जन्म-तिथि, नाम, विवाह, प्रवास, मीराँके गुरू तथा उनके गोलोकवास और उनकी रचनाओंपर गवेषणात्मक दृष्टिसे विस्तारमें विवेचन किया गया है। इसी क्रममें मीराँके जीवन वृतसे सम्बन्धित अनेक चमत्कारिक घटनाओं—विषपानकी घटना आदि-की बुद्धि सम्मत व्याख्या प्रस्तुत की गयी है जो आधुनिक बौद्धिक तृप्तिके अनुकूल है। द्वितीय खण्डमें मीराँके अनुभूति पक्षका विभिन्न विचार-बिन्दुओंके अन्तर्गत विवेचनापूर्ण परिशीलन किया गया है, जिसमें लेखककी सूक्ष्म अन्तदृष्टिका स्थान-स्थानपर अच्छा परिचय मिलता है। तृतीय खण्डमें मीराँके काव्यका कला पक्ष परम्परागत पद्धतिमें विश्लेषित किया है। लेखकने अपने सम्पूर्ण विवेचनमें विद्यार्थियोंकी दृष्टिको अपने अन्तर्पथमें बराबर ध्यानमें रखा है और विषय सामग्रीको सुबोध और सुग्राह्य बनानेके लिए निष्कर्ष है "तात्पर्य है", 'इस प्रकार' आदि का स्थान-स्थानपर प्रयोग किया है, जिससे अध्येताओंको पर्याप्त सहायता मिलेगी। पुस्तककी भाषा भी परिष्कृत, सरल और सुबोध है। समग्रतः पुस्तकके निर्माणमें लेखककी उपयोगितावादी दृष्टि अधिक कार्य कर रही है, जो मीराँके अध्ययनके लिए निसन्देह एक अध्ययन सामग्री सिद्ध होगी।

—डॉ. यदुवीरप्रसाद भटनागर
६५, भवालकर भवन, देवास म० प्र०

"आचार्य भरत"

लेखकः डॉ० शिवशरण शर्मा; प्रकाशकः मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ९७ मालवीयनगर; भोपाल-३ पृष्ठः १९६; डिमाई, ७१; मूल्य : १०.००रु०।

प्रस्तुत ग्रन्थकी भूमिकामें कहा गया है कि आजसे लगभग दो हजार वर्ष पूर्वके जनजीवन एवं उसकी सांस्कृतिक थातीका परिचय पानेके लिए आचार्य भारतके नामसे विख्यात नाट्य-शास्त्रका अनुशीलन आवश्यक है। साहित्य-शास्त्रका कोईभी विद्यार्थी, चाहे वह किसीभी भाषाका हो, भारतका सम्यक् अनुशीलन किये बिना विषयका अधिकारी नहीं माना जा सकता। अतः प्रस्तुत साहित्य-समीक्षा के क्षेत्रमें एक अभावकी पूर्ति करती है।

लेखक हिन्दी व संस्कृतके अधिकारी विद्वान है। उन्होंने अद्यावधि प्रकाशित तत्सम्बन्धी आलोचनात्मक पुस्तकोंका गम्भीर अध्ययन किया है। फिरभी आचार्य भरत जैसे अन्तःप्रज्ञ शास्त्रवेत्ताके साथ यात्राकर पाना दुरुह कार्य सिद्ध हुआ है। यह कहा जा सकता है कि पुस्तक आचार्य भरत के नाट्य-शास्त्रकी मीमांसा है।

इसमें सन्देह नहीं कि लेखकने भरतके नाट्यशास्त्रका अध्ययन मनन और चिन्तन काफी मनोयोग पूर्वक किया है। उसने डॉ० घोष, आचार्य अभिनव, आचार्य विश्वेश्वर, प्रो० सुब्बाराव, कु० गोदावरी, प्रो० डी० आर० मनक और प्रो० रंगाचार्य आदि विद्वानों द्वारा नाट्यशास्त्रपर प्रकाशित साहित्यके अवलोकनके पश्चात् अपने मन्तव्यों-को स्वतन्त्र रूपसे प्रस्तुत किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक १३ परिच्छेदों में विभक्त है। जिसमें आचार्य भरतपर एक परिच्छेद है। शेष सब नाट्य-शास्त्रसे सम्बन्धि हैं, जबकि पुस्तकको 'आचार्य भरत' नाम से अभिहित किया गया है।

नाटक के बारे में पाणिनि और पातञ्जलि द्वारा उल्लेख मिलता है। दुर्भाग्यवश ये उल्लिखित ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हैं। भरतका नाट्यशास्त्र वर्षों तक विस्मृत रहा। वर्षों बाद इसका प्रकाशन रेमन तथा उनके शिष्य फ्राँसीसी विद्वान श्री ग्रोंसे ने १८८८ से १८९८ के बीच अथक परिश्रम के बाद कराया। यही नाट्यशास्त्रका पहला क्रमबद्ध प्रकाशन है जिसका श्रेय भारतीय पण्डितोंको नहीं अपितु विदेशी विद्वानोंको मिला। भारतीय विद्वान २८९४ से १९६४ तक नाट्यशास्त्रप१८कार्य करते रहे। फलस्वरूप उसके ३३ अध्यायों का प्रकाशन हुआ। भारतीय विद्वानोंमें डॉ० घोष, आचार्य विश्वेश्वर और डॉ० रघुवंशका नाम विशेष रूपसे उल्लेखनीय है। यह खेद की बात है कि इस ७० वर्षकी लम्बी अवधिमें भी इसका हिन्दी अनुवाद समग्र रूपसे प्रकाशमें नहीं आया। डॉ० रघुवंशने नाट्यशास्त्रके प्रथम ७ अध्यायों का हिन्दी अनुवाद किया। इसी क्रममें विवेच्य पुस्तक नाट्यशास्त्रको समझने, समझाने व परखनेका प्रथम प्रवेश द्वार है।

भारत का नाट्यशास्त्र भारतीय कलित कलाओंका विश्वकोष है। संस्कृत साहित्यके पश्चात्य समीक्षकोंने यह धारणा प्रचलित की कि भारतीय नाटककी उत्पत्ति ग्रीक नाटकसे हुई है। परन्तु जैसा कि ऊपर पाणिनि और पतञ्जलिका उल्लेख किया गया है, उससे मासके नाटक और बौद्ध नाटकों के अवशेषों के शोध से अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि भारतीय नाटकों का प्रारम्भ स्वतन्त्र रूप से और प्राचीनकाल से हुआ था। संस्कृत नाटकों के कथानकों के बीज पूर्वकालीन वाङ्मयके इतिहास में स्पष्ट दिखायी देते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में लेखक ने इस समस्या को उठाया है।

भरतके संक्षिप्त परिचय के प्रथम परिच्छेद के बाद द्वितीय परिच्छेदमें बाद परिच्छेद में ग्रन्थका संक्षिप्त परिचय है। उसकी विशेषता, प्रकाशन, प्रक्षेप, आकार प्रकार' पाठभेद, पुनरुक्तियाँ तथा असंगतियों, भाषा शैली, ग्रन्थके व्याख्याकार रचनाकाल पूर्ववर्ती तथा परवर्ती तथा परवर्ती नाट्याचार्यों के सम्बन्धमें विवेचन किया गया है।

पुस्तककी कुछ बातें विशेष रूपसे ध्यान आकर्षित करती हैं। तृतीय अध्यायमें नाट्यशास्त्र १ से पांच अध्याय तककी सभी बातों तथा नाटककी उत्पत्ति भूतलपर अवतरण, प्रयोजन और उसका क्षेत्र आदिकी चर्चा की गयी है। परन्तु इनके स्पष्टीकरण के लिए नाट्यशास्त्र के १५ श्लोक उदाहरण स्वरूप उद्धत किये गये हैं सम्भवतः विषय-वस्तु के प्रतिपादन के लिए सबसे अधिक की आवश्यकता नहीं थी।

आचार्य भरत रस सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं। उनकी सम्मतिमें नाटकमें रसकी ही प्रधानता रहती है। अतः नाट्यशास्त्र रूपकी सफलताका आधार सफल रसाभिव्यक्ति को मानते हैं। रस सम्बन्धी विवेचनाको विवेच्य पुस्तक के चतुर्थ और अष्टम अध्यायमें स्थान दिया गया है। चतुर्थ अध्यायमें दशरूप विधान और अष्टम अध्यायमें रस तथा भावकी व्यंजना स्पष्ट रूपसेकी गयी हैं। विद्वान लेखकने रस तथा भावका प्रस्तुत करते समय नाट्यशास्त्र को आधार मानकर विभिन्न परिवर्ती आचार्यों—भट्ट लोलट, शंकुत, भट्ट नायक और अभिनवगुप्तकी व्याख्याओं से विषय आकर्षक और सुलभ हो गया है। नाट्यशास्त्र केवल चार ही रस मानता है और बाकी चारकी उत्पत्ति बड़ी कुशलतासे दिखायी गयी है। लेखकने यहाँ शकां उपस्थितकी है और विवेचनामें अभिनव गुप्तका सहारा लिया है, जो लेखककी विवेचना पद्धतिके कौशलको प्रकट करता है। नाट्यशास्त्र में नाट्य विद्याकी प्रमुखता है, परन्तु साथही अलंकार, संगीत, छन्द आदि शास्त्रों सिद्धान्तोंका प्रतिपादन भी है। इसके अतिरिक्त कुछ गद्य भी है। नाट्यशास्त्रकी इस सारी सामग्रीपर लेखकने विचार किया है। वस्तुतः इस अध्ययनके कारण नाट्यशास्त्र के अध्ययन-अध्यापन में बहुत सहायता मिलेगी।

यह पुस्तक अपने क्षेत्र की अकेली प्रतीत होती है। फिरभी पुस्तकके नामकरणके बारेमें पुनः विचार करनेका अनुरोध हम लेखक और प्रकाशकसे करना चाहेंगे।

—डॉ० रं...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निबन्ध संकलन

साहित्य चिन्तन

लेखक : तपेश्वरनाथ प्रसाद; वितरक-हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी-१ मूल्य: ८.०० रु.।

'साहित्य चिन्तन' डॉ० तपेश्वरनाथके पन्द्रह मौलिक, विद्वत्तापूर्ण निबन्धोंका संकलन है। आदि कालसे आधुनिक कालतकको विभिन्न भूमियोंमें जहाँ-जहाँ चित्तवृत्ति रमी है, लेखक ने गहराईसे देखा-परखा है, आत्मविभोर होकर सोचा है। लेखक खोजी है और दूसरोंके निष्कर्ष दुहराने और अपने निष्कर्ष थोपनेकी बजाय निजी सूझ-समझसे सुस्पष्ट विवेचन करता चलता है विभिन्न और कहीं-कहीं परस्पर विरोधी-विचार-सरणियोंसे सम्पृक्त रहनेके बावबूद किसी विशेषवाद पद्धतिको अपने विवेकपर हावी नहीं होने देता, अपनी सत्ताको यथासम्भव और यथावसर निरपेक्ष तथा अप्रभावित रखता है। गम्भीर विषयोंपर पूर्ण आत्मविश्वास और आस्थासे लिखना शुरू किया है, तन्मयतासे निर्वाह किया है। कविता, कहानी, भाषा-समस्या, पाठालोचन रङ्गमंच, भक्ति, शृंगार हर जगह लेखक विचारशील, उत्सुक अध्येताके रूपमें अपनेको प्रस्तुत करता है और यों पुस्तक का 'साहित्य चिन्तन' नाम सार्थक है। संकलनके निबन्धों के जैसे शीर्षक हैं, वैसे ही शीर्षक हिन्दी शोध-प्रबन्धोंके भी हुआ करते हैं और इन निबन्धोंकी कसावट महसूस करते-करते मैं बार-बार सोचता रहा हूँ कि विश्वविद्यालयों और महाविद्यलयोंके नवोदित आचार्य नये-पुराने कितने ही विषयोंको अन्धाधुन्ध शोधनेकी वजाय उनपर अच्छे, ढंगके निबन्ध ही क्यों नहीं लिखते।

संकलनके निबन्धोंके विषयोंमें इतना अधिक वैभिन्य है कि उनकी शास्त्रीय अथवा अध्यापकीय समीक्षकोंके लिए वर्गीकरण की अनिवार्यता प्रमुख हो उठती है और फिर निबन्धोंकी सामग्रीके परीक्षण और प्रतिपादनकी विधी या विधियोंके विश्लेषणका कार्य सामने उपस्थित हो जाता है। मैं ऐसा करनेकी मनःस्थितिमें इसलिए भी नहीं हूँ कि सामग्रीकी प्रामाणिकता मुझे कहीं संदिग्ध प्रतीत नहीं हुई, नहीं प्रतिपादन एकांगी अथवा अनानुपातिक लगा। पुस्तकके २६२ पृष्ठोंमें लेखकके साहचार्यमें रहनेपर विवेकको बराबर स्फूर्ति मिलती रही है। कहीं खटका है तो बस ले-देकर दो जगह। हिन्दी कहानीका विकास दिखलाते हुए लेखकने यशपाल-अज्ञेयतक तो समीक्षाका साकलन ठीक रखा है, लेकिन नयी कहानी और उसके बादकी कहानियोंसे केवल दो पृष्ठोंमें दस-पाँच नाम गिनाकर फुर्सत पाली है और विहारके लेखकोंके प्रति अतिरिक्त सहृदयताका परिचय दे डाला है! भारती की कनुप्रियाको कृष्णकाव्यकी परम्परामें रखकर कविको कृष्णभक्तिके अथवा कृष्णभक्त कवियोंसे जोड़कर देखना भी अजीब-सा लगा। सोचनेकी बात यह है कि राम या कृष्ण पर लिखी जानेवाली सारी कविता क्या पूर्ववर्ती काव्य परम्परासे सम्प्रक्तकी जा सकती है। निष्कर्ष यदि नकारात्मक हो तो हम आधुनिक बोधकी किसी सबल, सतेज और सम्प्रण कविताको शास्त्रीयता और गतानुगतिक विवेचनके बीहड़ जंगलमें छोड़ देनेकी निष्ठुरता क्यों बरतें? यों तपेश्वरजीने मेहनत काफी कर डाली है, और कनुप्रियाकी सबसे पहली एकेडेमिक समीक्षा सम्भवतः उन्हीं की है।

पुस्तकके कई निबन्धों (जैसे पारिजातहरणके विभिन्न संस्करण 'मधुरस और कबीरके पद' मीराकी मधुरोपासना आदि) में प्रतिपाद्य विषयों पर हुए पूर्ववर्ती कार्योंकी दायित्वपूर्ण समीक्षा की गयी है और सुविधाप्रेमी तथा चतुर लेखकोंकी भ्रान्तियोंको बड़ी दक्षतासे सामने लाया गया है। ऐसे स्थलोंपर लेखक अपना कथ्य विपुल प्रमाणोंको साक्षी मानकर उपस्थित करता है।

पुस्तककी बहुत बड़ी सार्थकता इसबातमें भी है कि इसमें बहुत सारे ऐसे संकेत-सूत्र बिखरे पड़े हैं जिनके आधारपर व्यवस्थित और उपयोगी कार्य हो सकते हैं। पुस्तक जिज्ञासाका शमन करनेके साथ-साथ जिज्ञासाको बढ़ाती है।

डॉ. हरिनारायण मिश्र

भारतीय साहित्य

लेखक : डॉ० गौरीशंकर मिश्र 'द्विजेन्द्र'; प्रकाशक : परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद पृष्ठः २२७; क्राउन; मूल्य : ८.५० रु.।

समीक्ष्य पुस्तक दस निबन्धोंका संकलन है—(१) संस्कृत-साहित्यमें हास्य और पैरोडी, (२) कालिदासकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमर कृतिः मेघदूत, (३) कालिदास और तुलसीदासः शिव-विवाहके सन्दर्भ में, (४) भवभूतिकी भावाभिव्यक्ति, (५) संस्कृतका प्रथम नाटककारः भास, (६) रवीन्द्रनाथकी काव्य-साधना, (७) शैली और मेघ, (८) आँसू और मानस-मूर्च्छना, (९) अनामन्त्रित मेहमानः एक अध्ययन, और (१०) रामदतिन मिश्र और काव्यशास्त्र। इन शीर्षकों को देखनेपर पाठकका ध्यान सर्वप्रथम पुस्तकके नामकी अतिव्याप्तिपर चला जाये तो इसे अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता। यही नहीं, 'शैली और मेघ' तो इस नामके औचित्यपरभी प्रश्न-चिह्न लगा रहा है। लेखकने 'उपक्रम' के अन्तर्गत पाठककी इस खटकका अनुमानकर इसके निराकरणका प्रयास किया है। 'उपक्रम' के अन्तर्गत लेखकने एक कार्य अवश्य किया है कि कवि और आलोचकका तुलनात्मक परिचय देते हुए आलोचनाके विभिन्न प्रकारों का संक्षिप्त परिचय दे दिया है।

ये आलोचनाएँ पाण्डित्यका आन्तक नहीं जमातीं, पाठकको सच्चे अर्थमें रसस्वादन कराती हैं। इस तरह आलोचनाका जो प्रयोजन होता है उसे ये आलोचनाएँ सच्चे अर्थमें पूरा कररही हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि ये निबंध लेखककी विद्वताका परिचय नहीं देते। आलोचकका कहीं पाण्डित्य शोभनीय है जो पाठकको यह अनुभव करा दे कि प्रतिपादित विषयके सम्बन्धमें उसका ज्ञान बढ़ गया है। ये दसों लेख इस प्रकार के पाण्डित्यकी घोषणा कर रहे हैं। 'आलोचना' का व्युतपत्ति लभ्य अर्थ है 'सब ओर से देखना'। इस रूपमें भी प्रस्तुत पुस्तकके आलोचनाका सही मानदण्ड प्रस्तुत करते हैं। प्रतिपाद्य विषयको आलोचक व्यापक परिवेशमें उपस्थापित करता है। भवभूतिपर विचार करते हुए वह तुलसीदास और जयशंकरप्रसादतक दृष्टि लाता हैं, रवीन्द्रनाथकी काव्य-साधनाका अवलोकन करता हुआ विद्यापति, कबीर, मीराँबाई और 'निराला' पर दृष्टिपात करना नहीं भूलता। इसी तरह अँग्रेजी-साहित्य पर लिखते हुए आलोचक हिन्दी साहित्यको बिस्मृत नहीं करता।

आलोचककी दृष्टि व्यापक ही नहीं सूक्ष्म भी है। वह विषयको केवल सब ओरसे ही नहीं देखता, उसकी तहमें भी जाता है शैली और मेघपर लिखते हुए शैली के व्यक्तित्व और कर्तृत्वकी भी झलक दिखायी गयी है। इसी तरह आलोचक अपने विषयको एक प्रशस्त पृष्ठभूमि देता है। 'आँसू' और 'मानस मूच्छर्छना' पर तुलनात्मक विचार करते हुए विरह-काव्यकी प्राचीन परम्पराको उपस्थित किया गया है। 'अनामन्त्रित मेहमान' पर लिखनेके पूर्व हिन्दी-उपन्यासका भी संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

इन निम्बन्धोंमें लेखकके साहित्य-विषयक चिन्तन ही देखनेको नहीं मिलते, मानव-जीवनके विषयमें भी लेखकके चिन्तन यत्र-तत्र जड़े हुए हैं जिन्हें सूक्तियोंके रूपमें देखा जा सकता है। उपस्थापन-शैलीके साथ-साथ इन सूक्तियों के कारण भी आलोचनाएँ रचनाका आनन्द देतीं हैं।

संकलित निबन्धोंमें सभी प्रकारके निबन्ध हैं इसमें संस्कृत-साहित्यमें हास्य और पैरोडी' समान गवेषणात्मक निबन्ध हैं तो 'मेघदूत'—जैसी कृतिपर भी निबन्ध है जिस पर कितने ग्रन्थ और लेख लिखे गये हैं, इसका कोई ठिकाना नहीं है। इसीतरह 'रामचरित मानस' के समान अतिशय लोकप्रिय ग्रन्थ इसके विवेच्य विषयकी परिधिमें है तो 'अनामन्त्रित मेहमान' के सदृश अल्पज्ञात कृतिपर भी लेखककी दृष्टि गयी है। इसमें कालिदास और तुलसीदास हैं तो शैली भी है, काव्य है तो काव्यशास्त्र भी है। इस प्रकार यह छोटी-सी पुस्तक अपनी व्याप्तिकी ओर भी ध्यान खींचती है। इसमें संगृहीत सभी लेख अपना पूर्ण औचित्य सिद्ध करते हैं। नवीन विषय यदि लेखककी अन्वेषिणी दृष्टिका परिचय देते हैं तो चर्चित विषय लेखक की नवीन दृष्टिके साक्षी हैं। इसी तरह अध्ययन एवं काव्य की मर्मोद घाटिनी प्रतिभा, दोनोंके ही दर्शन इन निबन्धोंमें होते हैं।

भाषाकी साधुता और सरलतापनको मुग्ध कर लेती है। आजकल आलोचनाकी भाषा ऐसी होती जा रही है जो अपनेमें ही पाठकको उलझा लेती है। इन लेखोंकी भाषा तत्काल विषयपर पहुँचा देती है। इन आलोचनाओं की भाषा वह 'गाइड' है जो यात्रीको दृष्टव्यसे परिचय कराता चलता है, न कि अपनी ही ओर दर्शकका ध्यान खींचता है।

डॉ. गौरीशंकर मिश्र 'द्विजेन्द्र' छन्द शास्त्रके अप्रतिम आचार्य, सुकवि और संस्कृत तथा प्राचीन हिन्दी-साहित्यके गम्भीर अध्येता हैं। प्रस्तुत पुस्तक उनकी दूसरी विशेषताकी अप्रत्यक्ष (आलोचना केवल कविका नहीं, अपितु सर्वोत्तम कविका अधिकार है!) और तीसरी विशेषताकी प्रत्यक्ष साक्षिणी है।

डॉ. सियराम तिवारी

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी स्मारिका

सम्पादकः डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल; प्रकाशकः मानस चतुश्शती आयोजन समिति, सम्भल (उ० प्र०) पृष्ठ १००: क्राउन, ७३; मूल्य : ४.००

प्रस्तुत पुस्तकमें तुलसी एवं उनके साहित्यके सम्बन्धमें कुछ फुटकर लेख हैं। लेख अधिकांशतः पुराने हैं और इनमें समीक्षा तो कम है, विवरण आदिकी प्रधानता है। किसी महत्त्वपूर्ण समस्याको भी नहीं उठाया गया और न इसमें बदलते संदर्भोंमें आलोचनाका विकसित रूप है। तुलसी और उनके साहित्यके बारेमें समसामयिक प्रासंगिकताको ध्यानमें रखकर यदि कुछ कहा गया होता तो पुस्तक बहुत उपयोगी हो जाती। परन्तु जिस उद्देश्यको लेकर मानस चतुश्शती आयोजन समिति, सम्भलने इस पुस्तकका प्रकाशन किया है, उस दृष्टिसे यह पुस्तक उपयोगी है।

'तुलसी स्मारिका' में दो खण्ड हैं। एकमें तुलसी और उनके साहित्यके सम्बन्धमें नौ लेख हैं। दूसरेमें विभिन्न कवियों द्वारा तुलसी काव्यांजलि है। और अन्तमें तुलसी काव्यमें से कुछ महत्त्वपूर्ण उद्धरण लिखे गये हैं।

डॉ० रामदत्त भारद्वाजका 'गोस्वामी तुलसीदासका जन्मस्थान' लेख बहुत ही पुराना एवं विवादास्पब है। बाबू वृन्दावनदास कृत "तुलसीदास और उनका मानस" में मानसकी कुछ विशिष्टिताओंका उल्लेख मात्र किया गया है किन्तु उनका विश्लेषण नहीं मिलता भगवान शरण भारद्वाज 'प्रदीप' कृत 'तुलसीकाव्यकी सांस्कृतिक,' पृष्ठभूमि,' विश्वदेवकी त्रिगुणायत कृत 'तुलसीका समाज दर्शन,' डॉ० राजनारायण कृत 'सर और तुलसी,' श्री सतीशचन्द्र गुप्त' लोकनायक तुलसी' लेख परम्परागत शैलीमें लिखे गये हैं। श्री गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर' कृत साध्वी रत्नावली और उनका काव्य एक अच्छा लेख है और रत्नावलीके काव्यका दिग्दर्शन करता है। यदि इसका अधिक विश्लेषण किया जाता तो यह लेख अधिक शसक्त बन जाता। कहीं-कहीं लेखक ने कुछ नयी बातोंका संकेत किया है, किन्तु उन्हें स्पष्ट नहीं किया है। "गोस्वामी जी का जन्म स्थान और पाणिग्रहण संस्कार" उपशीर्षक में (पृष्ठ ३७) गोस्वामीजीके जन्मस्थानके बारेमें कोई उल्लेख नहीं मिलता, केवल उपशीर्षक ही दिखाई देता है। फिरभी लेखका पुस्तकमें अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है। यदि रत्नावलीके काव्यपर एक स्वतन्त्र पुस्तक लिखी जाय तो हमारे विचारमें हिन्दी साहित्यको एक नयी दिशा मिलेगी। 'तुलसी सम्बन्धी शोधका विवरण' केवल विवरण न होकर शोध कार्यों का विश्लेषण होता तो इस लेखकी उपयोगिता और बढ़ गयी होती। दूसरे खण्डमें तुलसी काव्यांजलिमें चार कविताएँ दी गयी हैं जो वास्तवमें तुलसीके प्रति श्रद्धाके पुष्प हैं। तुतसी-काव्य-सुधामें विनयपत्रिका, गीतावली, रामाज्ञा, दोहावली, कवितावली, रामचरितमानससे जो उद्धरण लिये गये हैं वे महत्त्वपूर्ण और उत्तभ हैं। यह चयन अच्छा हुआ है।

--डॉ० कृष्णकुमार गोस्वामी

भाषा-विज्ञान

प्राकृत भाषाएँ और भारतीय संस्कृति में उनका अवदान

लेखक : डॉ० एस० एम० कत्रे; अनु०, डॉ० रमाशंकर जैतली; प्रकाशकः राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ए-२६।२ विद्यालय मार्ग, तिलकनगर, जयपुर-४। पृष्ठ : ९४; डिमाई, ७२; मूल्य : ६·००

डॉ० कत्रे ने १९४५ में श्री क० म० मुंशीके आमन्त्रण पर Prakrit languages and Their Contribution To Indian Culture नामक पुस्तक लिखी थी, प्रस्तुत उसीका हिन्दी अनुवाद है।

मूल पुस्तक अपने समयकी बहुत महत्त्वपूर्ण पुस्तक रही है, और अभीतक कोई दूसरी पुस्तक इसका स्थान नहीं ले सकी है। यह बहुत ही अच्छा हुआ कि डॉ० जैतली और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रन्थ अकादशीके प्रयाससे अब यह पुस्तक हिन्दी पाठकोंके लिए उपलब्ध हो गयी है। यों इधर २५ वर्षोंमें प्राकृतोंके क्षेत्रमें हुए कार्योंके प्रकाशमें यदि इसमें कुछ परिवर्तन हो गया तो और भी अच्छा होता।

डॉ० कत्रेकी यह पुस्तक प्राकृतिक भाषाओंके परिचय तथा उनके भारतीय संस्कृतिमें योगदानकी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण है। भूमिका में 'प्राकृत' शब्दकी व्युत्पत्ति उनकी परम्परा तथा उनके विभिन्न प्रकारों (धार्मिक साहित्यक नाटकीय, अभिलेखीय तथा लौकिक आदि) का परिचय है। आगे प्राकृतों के साहित्यका सर्वेक्षण है। यह उल्लेख्य है कि डॉ० कत्रे ने प्राकृत शब्द का प्रयोग विस्तृत अर्थ में किया है जिसमें पालि, प्राकृत, अपभ्रंश तीनों आ जाती हैं। इस तरह इस सर्वेक्षणमें संक्षेपमें लगभग १५०० वर्षोंके साहित्यका परिचय मिल जाता है। अगले अध्यायमें प्राकृतों की भाषागत विशेषताएँ दी गयी हैं जिसमें ध्वनि-व्यवस्था कारकीय रूप, क्रिया-रूप, शब्द-भण्डार मुख्य हैं। वाक्य-विन्यासपर केवल २-३ पंक्तियाँ हैं। यदि इसपर भी कुछ विस्तारसे विचारकर लिया गया होता तो पुस्तककी उपयोगिता बढ़ जाती। यों प्राकृतोंके वाक्य-विन्यासपर डॉ० सेन की पुस्तक (Historical syntax of middle Indo-Aryan) देखी जा सकती है। चौथे अध्याय का शीर्षक है : 'मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाओंका प्राचीन और नवीन भारतीय आर्य-भाषाओंकी देन'। जहाँ तक नवीन भारतीय आर्य-भाषाओंका प्रश्न है। उनको देन तो स्पष्ट और सर्वविदित है। इस अध्यायका मुख्य आकर्षण है वैदिक और लौकिक संस्कृतको प्राकृतोंकी देन। इस विषय पर पहले वाकरनागेल तथा कोबी आदिने भी विचार किया था। डॉ० कत्रे ने उनका उपयोग तो किया ही है, कुछ नई चीजें भी जोड़ी हैं। पाँचवें अध्यायमें कला और विज्ञानको प्राकृतों की देनका प्रश्न उठाया गया है। सामान्यतः इन क्षेत्रोंमें संस्कृतके देनकी ही चर्चाकी जाती है। इस अध्यायमें विद्वान लेखकने स्पष्ट कर दिया है कि प्राकृतें भी इस क्षेत्रमें महत्त्वपूर्ण हैं। अन्त में पूरे अध्ययन को उपसंहारित किया गया है। इस प्रकार संभवतः अपने विचारपर यह अकेली पुस्तक है।

अनुवाद तथा पुस्तक वर्तमान रूपके बारेमें कुछ बातें विचारणीय हैं। सबसे पहले तो पुस्तकका शीर्षक ही लें। Contribction का हिन्दी अनुवाद 'अवदान' किया गया मेरे विचार में 'योगदान' कहीं अच्छा अनुवाद होता। 'अवदान' हिन्दी में प्रचलित शब्द नहीं है। यदि हिन्दीमें इस अर्थ में कोई शब्द उपलब्ध न होता तो नये शब्दकी अपेक्षा हो सकती थी, किन्तु, 'योगदान' के रहते 'अवदान' का प्रयोग अनावश्यक था। यों अर्थकी दृष्टिसे भी 'अवदान' शब्द Contributicn का समानार्थी नहीं है। संस्कृत इसका अर्थशास्त्र-विहीनकर्म, गौरवपूर्ण कर्म किया ग काम, विभाजन, शुद्धिकरण, पराक्रम, उल्लंघन आदि है कालिदासने इस शब्दका प्रयोग 'प्रसंशनीय कर्म' 'पराक्रम' आर्यसे ही (विश्ववसुप्राग्रहरैः प्रवीणैः संगी मानत्रिपुरावारदान—कुमारसंभव नैऋ तदनमय मंत्रवन् प्रायदस्त्रमवदानत्रतोषितात्—रघुवंश) क्रिया है। अनु वादकने स्वयं पुस्तक में कई स्थानों पर Contribut के लिए 'योगदान' का प्रयोग किया है।

पुस्तकमें निदेशक का नाम स० ही० वास्यापन दि गया है तथा लेखकका नाम एस० एम० कत्रे,। हि में नामों अँग्रेजी अक्षरोंका इस प्रकारका प्रयोग बहुत ख कता है। मूल पुस्तकमें भी 'सुमित्र मंगेश कत्रे दिया ग है, अतः यह नहीं कहा जा सकता कि अनुवादक पूरे न से परिचित नहीं था। वस्तुतः या 'सु० मं० कत्रे' चाहिये था या पूरा नाम। हिन्दी पुस्तकोंको इस त और संकर प्रवृत्तिसे अब छुटकारा मिलना ही चाहिए।

लेखकको 'एस० एम० कत्रे' लिखा गया है तथा उसके नीचे अनुवादक 'डॉ० रमाशंकर जैतली'। दोनों नाम अलग-अलग होते तो कोई बात नहीं एक साथ होने पर एक नामके साथ डॉ० तथा दूसरे के साथ इसका 'अभाव' खटकता है। कहनेकी आवश्य नहीं कि कत्रे भी डाक्टर हैं।

प्राक्कथन में डॉ० सुकुमार सेन को 'खैर प्रोफे कहा गया है। शब्द कदाचित 'खैर प्रोफेसर' है।

मूल पुस्तक का एक अंश है 'In fact we m not-vest here; we can still enlarge the mea ing of this word to include several varieties Incorrect Sanskrit.'। अनुवाद है। वस्तुतः हमें विश्राम नहीं करना है........(पृ०२) तत्त्वतः यहाँ का अर्थ 'विश्राम' न होकर 'रुकना है। भूलमें है' wh vecal cheras do not vsbrate' अनुवाद है 'जब तन्त्रीमें कम्पन नहीं होता (पृ० ४३) vocal chords हिन्दीमें 'घोषतन्त्रीय' न कहकर 'स्वरतन्त्रियाँ' कहते अनुवाद होना चाहिए था, जब स्वरतन्त्रियोंमें कम्पन होता'। इस तरहकी काफी अव्यवस्थाएं अनुवादमें है

इस प्रकारकी तकनीकी पुस्तकोंमें फ्रूफ की गलत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामान्य पुस्तकों की तुलनामें अधिक खटकती हैं। लगता है अकादमी का ध्यान इस ओर नहीं गया है। यों, इन सारी बातोंके बावजूद यह प्रकाशन हिन्दी के भाषावैज्ञा-वाङ्मयकी एक महत्त्वपूर्ण देन है।

मुहावरे और लोकोक्तियाँ

लेखक : डॉ० देवेन्द्र आर्य; : प्रकाशक : हिन्दी साहित्य संसार—१५४३, नयी सड़क, दिल्ली-६। पृष्ठ: १०७; क्राउन, ७२; मूल्य: २·०० ।

छात्रोपयोगी इस पुस्तक के प्रथम भाग में ४० पृष्ठों में ४६७ मुहावरों के अर्थ और प्रयोग दिये गये हैं तथा दूसरे भाग में ५६ पृष्ठोंमें ३२४ लोकोक्तियोंके यह बड़ी अजीब बात है कि हिन्दीके अनेक लेखकों के मनमें मुहावरे और लोकोक्ति का अन्तर स्पष्ट नहीं है। प्रस्तुत पुस्तकका लेखक भी इस भ्रमका शिकार है। उसने भूमिकामें दोनों का अन्तर स्पष्ट करनेका प्रयत्न किया है—यह बात दूसरी है कि कथ्यको वह ठीक से पकड़ नहीं सका है। इसी-लिए मूल पुस्तकमें वह दोनोंमें भेद नहीं कर सका है, और लोकोक्तिवाले भागमें 'जान हथेली पर लिए घूमना' (पृष्ठ-१०६) 'सूखे धानोंमें पानी पड़ना' (पृ०-१०४) रोज कुआँ खोदना रोज पानी पीना' (पृ-१०१) 'मेढ़कीको जुकाम होना' (पृ०-९१) 'बिस्मिल्लाह ही गलत होना' (पृ०-९५) 'पानी पीकर जात पूछना' (पृ०-९२) 'टकेके वास्ते मस्जिद ढाना' (पृ०-८३) 'जिस थाली में खाना उसीमें छेद करना' (पृ०-८१) आदि अनेक मुहावरे आदि भी आ गये हैं। मुहावरेवाले अंशमें लोकोक्तियाँ भी हैं: भई गति 'भई गति सांप छछूंदर केरी' (पृ० ४०) कई मुहा-तथा लोकोक्तियाँ गलत भी हैं। उदाहरणके लिए पृष्ठ १०३ पर एक लोकोक्ति दी गयी है: 'समय पात तरुवर फले केतिक खींचो तीर' 'तीर खींचने से तरु वर फलने का भला क्या सम्बन्ध? मूलतः यह लोकोक्ति है: 'समय पाय तरुवर फरै केतिक सींचो नीर'। इस प्रकार की और भी कई अशुद्धियाँ हैं अर्थ तथा प्रयोग भी कई जगह भ्रामक हैं।

हिन्दी का यह दुर्भाग्य है कि छात्रोपयोगी पुस्तकें लिखना सबसे आसान माना जाता है, और इसीलिए इस क्षेत्रमें लेखकों की भरमार हो गई। वास्तविकता यह है कि छात्रोंके लिए उपयुक्त पुस्तकोंका लेखन काफी कठिन है, कम-से-कम उससे बहुत कठिन है, जितना हिन्दीका पाठ्य-पुस्तक लेखक उसे मानता है।

—डॉ० भोलानाथ तिवारी

उपन्यास

जुगलबन्दी

लेखक : गिरिराज किशोर; प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, ८-फैज बाजार दिल्ली-६। पृष्ठ : ४३७ : डिमाई, १९७३, मूल्य : २५.०० रु.।

उपन्यास-लेखकों की बढ़ती भीड़में सातवें दशककी पीढ़ीके कुछ नये और विशिष्ट कथाकारोंने कहानी-विद्यासे लेखन शुरू कर क्रमशः उपन्यासकी ओर साहसिक ढंगसे सफल कदम बढ़ाया है। ये वे कथा-लेखक हैं जो इतिहास बोध और युग-बोधके आधारपर जीवनके प्रतिएक दृष्टि पा लेते हैं और फिर उनकी यही दृष्टि उनके लेखनमें सम्वेदना, 'स्टाइल', और 'कन्सेप्शन' के नये और अछूते कोणोंको उभारनेमें सक्रिय बनी रहती है। फिरतो पाठकोंके मनमें उनकी एक खास इमेज बनती है।

गिरिराज किशोर एक ऐसे ही उपन्यास-लेखक हैं और उनका ताजा उपन्यास 'जुगलबन्दी' हमारी उक्त धारणाको पुष्ट करता है। यह उपन्यास व्यापक कथा-संदर्भोंके लेखक की एक उल्लेखनीय रचना बनी है—एक ऐसी रचना जिसमें लेखककी मानसिकतापर कुछ नये बदलते व्यापक सामाजिक जीवनानुभवों का दवाब सक्रिय रहा है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभव तथा अभिव्यक्ति दोनों ही स्तरोंपर लेखकीय कलात्मक क्षमताका एक नया आयाम खुला है।

'जुगलबन्दी' का कैन्वस आजादीके आन्दोलनसे जुड़ी जिन्दगी अपने ढंगसे समेटे है। इस जिन्दगीको उपन्यासमें रखनेके पीछे लेखकका एक खास मकसद रहा है। इस प्रकारकी जिन्दगी अपका जटिलतामें देशीपन और विदेशीपन दोनोंके बीचसे एक सही भारतको समझनेमें मददगार बनी हैं। 'जुगलबन्दी' का लेखक एक साथ हमें उन अनेक दुनियाओंको भी सही-सच्चा जायजा लेनेको विवश कर देता है जो परस्पर विरोधी-बिचार धाराओं और जीवन स्तरों पर टिकी है। एक दुनियाँके केन्द्र-बिन्दु हैं—शिवचरण बाबू और उनका परिवार जिसमें उनकी बूढ़ी माँ और पतिहीन बेटी भी है जो जर्जर रूढ़ि वादिता और परम्पराका पल्ला छोड़ती ही नहीं हैं अपितु धन-भक्ति और परिजनोंकी आलोचना जिनकी सम्पत्ति है। परिवारमें बीरू और उनकी अपाहिज पत्नी की अपनी ही एक लाचार और बेवस दुनियाँ है जो मानवीय विवशता और करुणा का उजागर करती है। शिवचरण बाबूके परिवारकी कहानी उपन्यासमें एक साथ हमें अनेक यात्राएँ कराती चलती है। यही नयी सम्वेदना और बोधका स्तर है जहाँसे उपन्यासमें मनोवैज्ञानिकताका समावेश होता है। गिरिराज किशोरने इस परिवारकी जन-स्थितियोंकी छट पटाहट और बेचैनीको मानसिक स्तरपर बड़ी तलखी से पकड़ा है। किन्तु परिवार के मुखिया शिवचरण बाबूकी बेचैनीको लेखकने शारीरिक स्तरपर भी समझा है। लेखककी यह अनुभूति अनेक नाजुक स्थितियोंमें पारस्परिक अभिव्यक्तिके संकटके क्षणोंको जैसे उजागर करती रहती है। शिवचरण बाबूके जरिये लेखकने उन तमाम लोगोंको जान लेनेमें हमारी मदद की है जिन्हें अंग्रेज-भक्तिके अलावा देशकी आजादीकी अहमियत और सच्चाई समझमें ही नहीं आती थी। यह अलग बात है कि ऐसा करनेमें उन्हें अनेक स्तरोंपर कितना भी मूल्य क्यों न चुकाना पड़ा हो। दूसरी ओर कुछ वे अवसरवादी लोग हैं जो आजादीकी लड़ाईमें सुविधाएँ और सहूलियतें पानेके लिहाजसे कूदे थे। यही सुख सुविधाभोगी ज़मात आजादी मिलते ही रातों-रात मालदार और सत्तारूढ़ हो जानेका स्वप्न लेकर चली थी और आजादीके बाद इन लोगोंकी जमातें बढ़ती चली गयी। निहित स्वार्थोंकी राजनीतिकी छायामें ये लोग केवल निजी लाभके लिए देशमें लूट-पाटकी साजिशें करते रहे और देश धीरे-धीरे पंगु और अपाहिज बनता चला गया। ऐसे वातावरणमें शिवचरण बाबू जैसे लोग पीछे धकेल दिये गये और सत्ता उन्हीं लोगोंने हथिया ली और आजादीकी लड़ाईमें त्याग और संघर्ष करनेवालों की जमातको राजनीतिक कुचक्रोंसे तोड़कर अलग क दिया। गिरिराज किशोरने 'जुगलबन्दी' में आजके भारत जिन्दगी स्वाधीनता आन्दोलनकी छायामें उसकी सम्पूर्णता चित्रित की है जो रह-रहकर व्यक्तिगत स्वार्थोंकी राजनीति के विषैले फनसे जूझती-लड़ती नयी मानव-मर्यादाकी ट्रेजे की वृहद् गाथा बन गयी है तिसपर लेखककी कुशल कथ विन्यास क्षमताकी विशेषता यह है कि उसने स्वाधीन आन्दोलनसे सम्बन्ध घटनाओं तथा पारिवारिक त सामाजिक संदर्भोंके बीचमेंसे उभरते हुए व्यक्तिके मानसि संघर्ष और नैतिक द्वन्द्वके अकनको तत्कालीनजन-समुदा वहिरंत्र आचरणके साथ जोड़ दिया है। उपन्यासमें जि जिन्दगीका चित्रण हुआ है वह अपनी जटिलतामें आज जिन्दगीकी जटिलतासे कुछ कम नहीं है।

'जुगलबन्दी' में लम्बे-लम्बे विवरण अनेक स्थलों आते तो हैं किन्तु इसे लेखककी कुशल चित्रण शक्ति कहा जायेगा कि उसने उपन्यासको रिपोतार्ज बननेसे ए दम बचा लिया है और उपन्यासके खत्म होते-न-हों पाठकके मनपर एक हल्की-सी करुणाकी छाया पड़ती जो उपन्यासको अतिरिक्त अर्थ बता देती है।

जितना विशाल चित्रपट उपन्यासकारने इस उपन्या चुना है उसके फैलावको देखते हुए उसके सफल निर्वा लिए लेखकके जिस अत्यन्त गहरी और बहुमुखी रच दृष्टिकी अपेक्षा उसके पाठक और आलोचक दोनोंको थी, उसे लेखक अपनी दृष्टिकी गहराई और मनः सृष्टि सम्पन्नतामें सानुपात न होनेके कारण नहीं दे पाया है।

फिरभी 'जुगलबन्दी' एक अनूठा उपन्यास है अपने पाठकों को बेहद छूता है—सम्वेदना और संरच दोनोंही स्तरोंपर।

—हेमचन्द

और खेल अधूरा रह गया

लेखक : श्री ज्ञानस्वरूप भटनागर; प्रकाशक : शब्दका गली डकौतान, तुर्कमान गेट, दिल्ली-६। पृष्ठ २७५; क्राउन, ७२ मूल्य : १०.०० रु.।

प्रकाशकीय टिप्पणीमें इस उपन्यासको 'हिन्दीमें प्र क्रीड़ा-उपन्यास' बताकर जो कुछ कहा गया है, उ आंशिक सत्य तो है ही। 'क्रिकेट टेस्ट मैचकी पृष्ठ भूमि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खेलमें जीवनके विविध मार्मिक पहलुओंकी बारीकियाँ और जीवनमें खेलके घात-प्रतिघात' का चित्रण अवश्य है, किन्तु कुछ कमही प्रभावशाली बन पाया है। इसका कारण है। इस उपन्यासमें किसी कनकपुरमें हुए टेस्ट मैचकी पृष्ठ भूमिमें भुवनेश्वर नामक पत्रकारको उपस्थितकर अनेक प्रकारके घात-प्रतिघात प्रस्तुत किये गये हैं। क्रिकेटका मैच भारतके गिने चुने चार-पाँच नगरोंमें खेला जाता है। पाठक तत्काल समझ जाता है कि यह कनकपुर कानपुर है। लेखक कानपुरका है और वह स्वयं पत्रकार है। खतरा इस बातका था कि उसके बारीक चित्रणको क्रिकेट के खिलाड़ी, प्रबन्धक एव कुछ व्यवसायी अपनेपर करारी चोट मान बैठते। इस स्थितिसे बचनेके लिए उसने छद्मता ओढ़ी और यही बात उसके उपन्यासको कुछ दुर्बल बना गयी। क्रिकेट, उसके खिलाड़ियों और कानपुरके चित्र धुंधले पड़ गये।

वैसे कानपुरवासी या कानपुरसे परिचित व्यक्ति तुरन्त कनकपुरकी सत्यताको पकड़ लेगा। गंगाके किनारे सात मील लम्बी और मीलभर चौड़ी पट्टीपर बने पूँजी-पतियोंके बँगले (पृ०-२०) और किस नगरमें हैं? विजय पार्क क्या ग्रीन पार्क नहीं है? इसीप्रकार क्रिश्चियन कालेज वस्तुत: क्राइस्ट चर्च कालेज तथा विक्रम कालेज विक्रमाजीत सिंह सनातन धर्म कालेज हैं। लम्बे-चौड़े जंगलके मध्य बने 'गोल्डन, ओक' में विदेशी खिलाड़ी ठहराये जाते हैं यह स्थान क्या कानपुर का कमला स्ट्रिट नहीं है? और बी. जी. उद्योग—जाने दीजिये लेखकके साथ कनपुरिया समीक्षकभी लपेटमें आ सकता है।

एक क्रिकेट मैच पार्कमें चलता है तो दूसरा मैच कई-कई पात्रोंके मनोंमें चलता है। लेखकने इसकी संगति बिठानेकी चेष्टा की है और उसे कहीं-कहीं पर्याप्त सफलता भी मिली है। क्रिकेटके कई सजीव दृश्य पाठकके मन: चक्षुओंके आगे आते जाते हैं—विद्यार्थी कक्षकी उपेक्षा, कूड़ा करकटका ढेर, टिकटोंकी चोर बाजारी, मुफ्तखोर दर्शक। खेलका यथार्थ चित्रण करते हुए कई-कई वर्गों (पुलिस, उद्योगपति, अफसर, उच्छंखल युवक-युवती) का भी सजीव वर्णन चलता जाता है, इनकी कुण्ठाओं और कुत्साओंका भी।

क्रिकेटको आवश्यकतासे अधिक महत्त्व देकर राष्ट्रका जो अहित किया गया है, उससे लेखक अनवगत नहीं है। क्रिकेटके पीछे बदहवास होते लोग, खिलाड़ियोंके हस्ताक्षर-संग्रहके लिए नयी पीढ़ीका पागलपन देखकर लेखक चिन्तित प्रतीत होता है—क्रिकेट स्वयं एक अंग्रेजी सामन्तवादी खेल है। भारतमें इस खेलकी इतनी व्यापक स्वीकृतिका भी स्वातन्त्र्य युगके पूर्वकी दास भावना तथा भारतीय भेड़िया धसानकी प्रवृत्तिके अतिरिक्त और कोई कारण नहीं है—(८३)। 'इन नालायक लोगों (क्रिकेटके खिलाड़ियों) को इस प्रकारकी इज्जत दी जाती है—(२३९)' खिलाड़ी शराब पीते और लड़कियोंके साथ जंगलीपनका व्यवहार करते हैं। भारतीय टीमके खिलाड़ी हस्ताक्षर माँगती लड़कियोंसे शुल्क स्वरूप चुम्बन माँगते हैं और कुछ बेशर्म लड़कियाँ उनकी माँग पूरीभी कर देती हैं। अंसारी नामक खिलाड़ी एकान्तमें एक लड़कीसे चूमाचाटी करता है और उसके घरके लड़कों द्वारा मार खाता है। विदेशी टीमके दो खिलाड़ी हस्ताक्षर लेने आयी अल्हड़, शोख, साहसी और तितली-सी फुदकती अजरा नामक षोडशीको भारमाकर दबोच लेते हैं और उसके वस्त्र और तनकी जो दुर्दशा करते है, इसे पढ़कर पाठक सिहर जाता है और वास्तवमें इन खिलाड़ियोंके प्रति लेखकके दृष्टिकोणसे सहमत हो जाता है।

श्री भटनागर सुन्दरियोंके तनकी सजावट और कसावटके मादक चित्रणमें पटु हैं। उन्होंने अनेक कामातुरा रणमियों एवं कामुक प्रौढ़ोंको भी क्रिकेटके मैदानमें उपस्थित किया है, यहाँ लेखक पत्रकार अथवा उपन्यासकार के स्थानपर यौन मनोवैज्ञानिक बननेका प्रयास करता है। बलराज नामक पात्रके मुँहसे कहलाया गया है—'तुम किसी जड़ सुन्दर स्त्रीको पसन्द करोगे अथवा किसी तथा कथित कुरुप लेकिन वासना विहल स्त्रीको, जो तुम्हारी प्रत्येक कामातुर क्रियाका द्विगुणित कामातुरतासे प्रत्युत्तर दे।'—(१३२)। उपन्यासमें ऐसे अनेक प्रौढ़-प्रौढ़ाएँ हैं जिनका जीवन संयमहीन है, वे स्वच्छन्दता-पूर्वक यौन-सम्बन्ध स्थापित करते हैं और खुलकर मद्यपान करते हैं। उपन्यासमें शायद ही कोई पात्र हो जो शराब न पीता हो।

उपन्यासका एक आकर्षक नारी पात्र कमरुन्निसा बेगम है, जो हिन्दू, ईसाई और मुसलमान किसीकी भी प्रणायिनी बन जाती है, जो प्रौढ़ा होकर भी बनाव-चुनावके कारण आजभी युवकोंके हृदयमें कराह-आह उत्पन्न कर सकती है। इस अत्याधुनिक नारी पात्रके हृदयमेंभी कहीं हाहाकार है, कहीं छिपा हुआ मातृत्व है।

लगता है कमरुन्निसा बेगमका ही किशोर संस्करण है अल्हड़ अजरा, जिसकी प्यारी उपस्थित प्रौढ़ एवं युवाओं को एक साथ सुगन्ध विह्वल कर देती है। जिसे देख युवा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'स्वीट' कहकर चांटे खाने हैं और प्रौढ़ उसके प्रति वात्सल्य और प्रणयकी एक साथ अनुभूति करते हैं। ऐसी प्यारी बालिकाको जिस निर्दयताके साथ मसला गया है, वह वर्णन अत्यन्त लोमहर्षक है।

ऐसेभी स्थल हैं जहाँ उपन्यासकार पत्रकारपर जमा रहा है, किन्तु अनेक स्थानोंपर पत्रकार उपन्यासकारको दबोच लेता है। ऐसे स्थलोंसे सम्बद्ध तीस-चालीस पृष्ठ कम किये जा सकते थे; तब कथा और अधिक सुगठित हो जाती, साथही पात्रोंकी पलटनभी कुछ कम हो जाती।

लेखक अँग्रेजीका पत्रकार है; किन्तु हिन्दीका प्रेमी। उसका हिन्दी-प्रेम कई स्थानोंपर प्रकट है। उसने क्रिकेटकी अँग्रेजी शब्दावलीके लिए हिन्दी पर्यायभी दिये हैं, स्लिप-पृष्ठिका, मेटेन ओवर-अक्षत संक्रम, गुगली—भ्रामिका, विकेट—यष्टि, स्क्वेयर कट-वर्ग कर्तन, आदि। कहीं-कहीं भाषा जोरदार है।

निस्संदेह उपन्यास अपने ढंगका अनूठा है। यदि लेखक अपने पत्रकारको कुछ नियन्त्रित कर सके तो उसकी कृतियाँ और भी अधिक व्यवस्थित, कलात्मक और रोचक हो सकती हैं, तब यत्र तत्र दिखायी पड़नेवाली इति-वृत्तात्मकता भी कम हो जायेगी।

—डॉ. रमानाथ त्रिपाठी

दायरे

लेखक : गुरुदत्त; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज दिल्ली-६। पृष्ठ : २३६; क्राउन ७२; मूल्य : ८.०० रु.।

श्री गुरुदत्त परम्परावादी आदर्शों और सिद्धान्तोंके प्रचारक उपन्यासकार हैं, इसलिए देशके बहुसंख्यक पर-म्परावादी समाजमें लोकप्रिय हैं। उनकी परम्परावादी मान्यताओंमें यदि कहीं कुछ आधुनिकता भी दिखायी देती है तो वह ब्रिटिशकालके प्रारम्भके सुधारवादी आन्दोलनोंकी मान्यता तक सीमित है। 'दायरे' उपन्याससे उनकी यह मानसिक स्थिति स्पष्ट हो जाती है। वे विवाह और स्त्री स्वाधीनताकी समस्याको उठाते हैं। विवाह सम्बन्धी आधु-निक जटिलताओं, युगोंके परीक्षणोंसे उत्पन्न नयी अनुभूतियों और इस परिप्रेक्ष्यमें विकसित नये चिन्तनों और दृष्टकोणों के स्थानपर एक ओर वे रूढ़ीभूत विवाह-प्रणालीसे बँधे हैं, दूसरी ओर मानवीय विशेषतः स्त्री स्वातन्त्र्य सम्बन्धी वर्तमान धारणोंसे कटकर सुधारवादी आन्दोलनों द्वारा चित्रित स्त्री-स्वातन्त्र्यकी मान्यताओंसे जुड़े हुए हैं। लेखक की दृष्टमें यही भारतीयता है, और इसी भारतीयताके एक दायरेमें बाँधकर घटनाओं, पात्रों और विवरणोंकी सृष्टि वह इस उपन्यासमें करता है। नये समीक्षक 'उपन्यास' की जो परिभाषा करने लगे हैं, उस दृष्टिसे यह उपन्यास न होकर एक रोचक विवरण-पत्रिका है जिसमें परम्परावादी मान्यताओंके ताने-बानेमें आधुनिक याथातथ्य चित्र भी दृष्टि गोचर होते हैं।

उपन्यासकी मुख्य पात्र सिद्धेश्वरी आदर्शवादी है, पर उसका आदर्श बालूकी रेतपर टिका है जोकि जीवनके यथार्थ स्थितियोंमें ढह जाता है। वह प्रकृतिके विधि-विधानमें विश्वास रखती है, उसकी वकालत करती है, परन्तु उसीसे संघर्ष करती है। स्त्री-स्वातन्त्र्यका समर्थन करती है, परन्तु विवाह-प्रणालीकी दासता स्वीकार कर लेती है और इस दासता-प्रदत्त सुख-सुविधाओंका उपभोग करती है।

आधुनिक भारतीय परिवारोंमें जिस अर्थ-लिप्साका जन्म हुआ है और अर्थवादिताके पीछे जिस पारिवारिक प्रणालीमें विच्छिन्नता आयी है, सुधा खोसला उसकी एक घटक है। इसप्रकारकी सर्वपरिचित और सर्वमुक्त घटना निस्सन्देह पाठकका मनोरंजन अवश्य करती हैं, परन्तु न तो समाजकी समस्याओंके समाधानका संकेत करती हैं, सामाजिक प्रगतिकी दिशामें कोई योगदान करती हैं।

ये दोनों स्त्री-पात्र स्त्री स्वातन्त्र्यकी किसी नयी दिशा का संकेत इसीकारण नहीं दे पाते, क्योंकि उपन्यासकारकी मानसिकता कुछ अतीतके सुधारवादी आन्दोलनोंसे [illegible] हुई है।

लेखककी अपनी राजनीतिक मान्यताएँ भी हैं जोकि उप-न्यासमें निरन्तर उभरती हैं। सम्भवतः यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि कृतिका मूल उद्देश्य राजनीतिक प्रचार है। लेखककी राजनीतिक मान्यताएँ भी ऊपर चर्चित अतीतके सुधारवादी आन्दोलनों और नितान्त प्राचीनता के प्रति मोहसे उत्पन्न हैं। फिरभी अपनी इन मान्यताओं को पर्याप्त कुशलताके साथ प्रस्तुत करता है और बहुधा [illegible] प्रतिपद्यके दम्भ, पाखण्ड और उसकी धूर्तताको उजागर कर अपनी मान्यताको स्थापित किया है। इस दृष्टिसे उप[illegible] के पात्र कमलेश्वरकुमारसिंह और शिवकुमार उल्लेख[illegible] हैं। दोनों ही सत्तारूढ़ दलसे सम्बद्ध हैं और अपनी स्थितिका राजनीतिक और आर्थिक लाभ उठानेमें [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी नहीं हिचकिचाते। वस्तुतः वर्तमान भ्रष्ट सत्ता-प्रतिष्ठान के कुत्सित रूपको उभारनेका जो अवसर उपलब्ध था, था, परन्तु प्रगति विरोधी प्रतिक्रियावादी तथा अतीतसे चिपकी धाराओंके कारण लेखक उस अवसरका प्रभावशाली ढंगसे लाभ उठाने में असमर्थ रहा है।

परन्तु हिन्दीका वर्तमान बहुसंख्यक पाठक सम्भवतः इस सूक्ष्म अन्तर्दृष्टिसे उपन्यास नहीं पढ़ता, उसे रोचकता चाहिये और अपनी परम्परागत मान्यताओंकी तुष्टि। यह सब उसे उपन्यासमें उपलब्ध होगा।

माधव पण्डित

अनूदित उपन्यास

दायरेके बाहर

मूल उपन्यासकार : विमल मित्र; रूपान्तर हंसकुमार तिवारी; प्रकाशक : राधाकृष्ण प्रकाशन, २ अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : ४१६; क्राउन, ७२; मूल्य : १२.५० रु.।

बँगला भाषाके प्रख्यात उपन्यासकार विमलमित्रका 'दायरेके बाहर' एक बृहत् उपन्यास है। इस कृतिकी वस्तु-योजना द्वितीय विश्वयुद्धके परिणाम स्वरूप उत्पन्न मँहगाई व्यथा पैसे होते हुए भी वस्तुओंकी अप्राप्ति, व्यारी वर्गकी धनोपार्जनकी मनोवृत्ति, भारत-विभाजनके दुष्परिणाम शरणार्थियोंके सम्मान पूर्वक पुनर्वास-हेतु किये गये आदर्श मय वैयक्तिक प्रयास, अध्यापकीय जीवनकी विषमता, शिक्षा संस्थाओंके प्रबन्धकोंकी स्वार्थप्रेरित एवं अँग्रेज प्रशंसक-मनोवृत्ति, छात्र-समाजकी विद्रोही-भावना, प्रधानाचार्योंकी अध्यापक विरोधी और मैनेजर-समर्थक नीति, जापानी बम्बारीसे बचनेके लिए कलकत्ताकी जनताका पलायन रेलगाड़ियोंकी भीड़ और कुलियों तथा टैक्सी ड्रायवरोंकी अधिकतम कमा लेनेकी लालसा आदिसे हुई है। इसके अतिरिक्त, भारतीय जनतामें सुभाव विषयक मान्यता, हिंसा विरोधी धारणा, धर्म तथा कर्म विषयक चिन्तन और व्यक्ति समाजके सम्बन्धोंका विश्लेषणभी यथास्थान हुआहै। इस सबके मध्यसे, कलकत्ताका द्वितीय विश्वयुद्ध कालीन समाज उभरकर आया है, अपनी समस्त समता तथा विषमता और अच्छाई तथा बुराई लेकर।

इसी समाजके पात्र हैं—अध्यापक 'सदानन्द', व्यापारी 'विलास चौधरी', महान् क्रान्तिकारी 'गौरदास', आदर्श-प्रेरित तथा भीरू 'शेखर' और अनेक मानसिक द्वन्द्वोंसे परिपूर्ण 'सुरुचि'।

कलकत्ताकी सामाजिक दशा तथा जीवनके चित्रणके साथ, उक्त पाँच पात्रोंके जीवन-दर्शन, सामाजिक कार्य, द्वन्द्व और विषमताका चित्रण करण करना ही इस कृतिका उद्देश्य है।

इस रचनाके पात्र जीवनके प्रति पराङ्मुख भी हैं और कर्त्तव्य-प्रेरित भी। दूसरे वर्गके पात्रोंमें 'सुरुचि', 'विलास चौधरी' और 'गोपाल' की गणनाकी जा सकती है और दूसरे वर्गमें शेखरकी। इसमें कुछ पात्रोंकी सृष्टि वैयक्तिक आदर्शोंपर भी की गई है और कुछ पात्रोंकी सामाजिक आदर्शोंपर। 'सुरुचि', 'विलास चौधरी,' 'गोपाल' और 'शेखर' केवल अपने लिए जीवित रहते हैं और 'सदानन्द' तथा 'गौरदास' केवल दूसरोंके लिए भी।

'सुरुचि' सदानन्दकी बेटी है। कालिजकी छात्रा है। आधुनिक छात्राओंके समस्त गुणावगुणोंसे उसके चरित्रकी सर्जना हुई है। शकुन्तलाकी भूमिकामें स्टेजपर उतरती है और यथार्थमें अपना दुष्यन्त चुन लेती है। पहले महान् लोफर 'प्रिन्स' को और फिर 'शेखर' को। स्वप्नमें वह 'प्रिन्स' की भर्त्सना करती और 'शेखर' को ग्रहण। 'शेखर' के कमरेमें जाकर आत्मसमर्पण कर देती है। 'शेखर' का गर्भ लेकर यथार्थमें 'शकुन्तला' बन जाती है। 'राहुल' को जन्म देती है, रुग्ण पिताकी चिकित्सा तथा जीविकोपार्जन-के लिए कार्यालयोंमें नौकरी करती है, मनचले मैनेजरोंकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाससे स्वयको बचाती है और अन्तमें पिताके आग्रह तथा 'विलास चौधरी' के उपकारके फलस्वरूप 'विलास चौधरी'के साथ विवाहकर लेती है। उसके जीवनकी विषमता यह है कि स्त्री होकर भी वह 'विलास चौधरी' की स्त्री नहीं बन पाती। सुहाग रातसे ही वह 'शेखर-पुत्र 'राहुल' को अपने साथ सुलाती है, विलास चौधरीके साथ पर्यंकशायी नहीं होती। उसके इस व्रतका निर्वाह ही, एक ओर तो 'विलास चौधरी' की शीघ्र मृत्युका कारण बनता है और दूसरे उसके जीवनका अभिशाप। 'विलास चौधरी' से प्राप्त सम्पत्तिसे वह 'गौरदास के' आश्रमको सहारा देकर लोकहितका कार्य करती है। वह 'विलास चौधरी' की विधवा भी बनी रहना चाहती है और शेखरकी प्रेमिका भी। यही उसके जीवनकी विषमता है। इसीका कलात्मक चित्रण करना, उपन्यासकारका अभिप्रेत हैं। वह जीवनके प्रारम्भसे ही एक छलको अपने सिरपर वहन करती है। उसमें साहस नहीं कि उसको प्रकट करके यथार्थकी अभिव्यक्ति करे। 'राहुल' को वह अपना पुत्र न बताकर, भाई बताती है। यदि वह, साहस करके सत्यका आश्रम लेती, तो पिता उसे विलास-चौधरी के साथ विवाह का आग्रह नहीं करता, न विलास चौधरीही उससे विवाह करनेकी योजना बनाते और न 'शेखर' ही उसको धोकेबाज समझकर भागता। उसके जीवनकी विषमता ही समस्त विडम्बता का कारण बन जाती है। यथार्थमें 'सुरुचि' भारतकी उस नारीका प्रतीक है, जो छात्र-जीवनमें रोमांस भी कर सकती है, एक महान् असत्यका निर्वाह भी कर सकती है और एक आदर्शके निर्वाहका ढोंग भी कर सकती है। वह प्राच्य तथा पाश्चात्य नारी-आदर्शोंका समन्वित रूप है। यही उसके चरित्रका रहस्य है।

'शेखर' भारतके उस पुरुष समाजका प्रतीक है जो प्राण दे सकता है, किन्तु अपनी प्रेमिकाको दूसरेकी पत्नी बनता नहीं देख सकता। उसको जब सुरुचिकी विवशता, असत्यके आवरणमें अन्तर्निहित सत्य और उसके मानसिक द्वन्द्व तथा ग्लानि का आभास होता है और जब उसको सुरुचि की पावनता तथा 'राहुल' की वास्तविकताका ज्ञान होता है, तो आत्महत्या कर लेता है। यथार्थमें वह भीरू तथा कायर है। एक बार 'सुरुचि' को गर्भवती बनाकर जेल चला जाता है और दूसरी बार अपनी मृत्युसे उसे आजीवन जलनेके लिए, छोड़ देता है। ये दोनों ही पात्र रोमाण्टिक तथा कल्पनाजीवी हैं। परिस्थितियोंको अपने अनुकूल बनानेकी क्षमताका अभाव तथा दोनोंके जीवनको विषाक्त बनानेवाले असत्यके अवारणके निरावरणकी दुर्बलता उनके व्यक्तित्वकी कमजोरियाँ हैं।

'सदानन्द' भारतके अध्यापकवर्गका प्रतिनिधि पात्र है। यह सत्य तथा कर्म निष्ट व्यक्ति है। ट्यूशन करके आजीविका कमाता है। राष्ट्रभक्ति और खादी-प्रेम उसके शौक हैं। राष्ट्रीय आन्दोलनमें जेल गया था। सरकारी नौकरी छोड़कर अध्यापकी की। निःसहाय बालकों तथा देश-भक्तों को आश्रय देता है। बालकोंको देशभक्त बनाना उसके जीवनका ध्येय है। अराजकताका विरोधी है। 'शेखर' तथा 'सुरुचि' को इतिहास, दर्शन तथा राजनीतिके उपदेश देता हैं। स्कूलके मन्त्रीकी व्यावसायिक नीतिका शिकार होता है। 'शेखर' और 'सुरुचि' के सम्बन्धोंसे अनवगत रहता है। अपने ही घरके सत्यको समझनेमें असफल होता है और अन्तमें विलास चौधरीके उपकारोंसे प्रभावित होकर 'सुरुचि' को उससे विवाह करनेका आदेश देकर यह लीला समाप्त कर देता है।

इस चरित्रकी सर्जनामें उपन्यासकार सफल रहा है। एक टिपीकल अध्यापकके रूपमें उसका चरित्र खूब निखरा है। दर्शन और राजनीतिके क्षेत्रमें योग्य होते हुए भी 'सददानन्द' जीवनके क्षेत्रमें असफल है।

'गौरदास' इस कृतिका प्रभावशाली चरित्र है। राजनीतिक नेताओंकी नीतियोंके शिकार बने बांगला देशके शरणार्थियोंकी हितकामना हेतु वह एक संस्थानकी स्थापना करता है। वह अपने संस्थानके व्यक्तियोंको, देशके विभिन्न प्रदेशोंमें भेजकर, वहाँ की कला तथा उपजकी विधिका ज्ञान करता है और शरणार्थी-शिविरमें उनका उत्पादन कराता है। वह ध्वंसपर निर्माणकी योजना करनेका प्रयास कर रहा है। 'सुरुचि' की उदारताको दानप्रियतामें परिणत करके उसे कर्म-क्षेत्रमें उतारता है। इतना होनेपर भी वह शेखर तथा सुरुचि की विषमताको मिटानेमें असफल रहता है। वह उनका मर्म नहीं समझ पाता। 'सुरुचि' की अश्रुधाराओं 'शेखर' की उदासीनता उसको किसी निर्णयपर नहीं पहुँचाती और उसके आश्रममें एक महान् दुःखान्त नाटक आरम्भ हो जाता है। अतः कहा जा सकता है कि वह व्यवहार कुशल कम, दार्शनिक अधिक है।

उपन्यासके अधिकांश पात्र रोमाण्टिक हैं और इनको रूपायित करनेमें उपन्यासकार सफल हुआ है। यह बात अवश्य है कि वह जीवन्त पात्रों की सृष्टि नहीं कर पाया है।

इस उपन्यासका वस्तु-विन्यास और चरित्र-योजना कलात्मक है। कथा-प्रसंगके मध्य, सदानन्दकी पुस्तकें

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पृष्ठोंका उल्लेख, भारतके स्वातन्त्र्य-संग्रामका इतिहास प्रस्तुत करता है। फलतः आजका पाठक, कहानीके माध्यम से, आजादीकी जंगका इतिहास जान लेता है। यह इस कृतिकी महान् उपलब्धि है। कलकत्ता नगरका विकास और द्वितीय विश्व-युद्धका समाज भली प्रकार अंकित हुआ है।

इस उपन्यासके रूपान्तरकार प्रसिद्ध लेखक तथा कवि हंसकुमार तिवारी हैं। अनुवाद स्वच्छ और निर्दोष है। ऐसी कृतियोंके अनुवादसे हिन्दीका कथा साहित्य समृद्ध होता है।

—डॉ. नत्थनसिंह

कहानी संग्रह

हम फिदाए लखनऊ

लेखक : अमृतलाल नागर; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : ११६; क्राउन, ७३; मूल्य: ५.०० रु.।

लखनऊकी नाजी-अदापर प्रत्येक लखनवीको फख्र है और होना भी चाहिये। प्रेमचन्दकी 'शतरंजके खिलाड़ी' कहानी आजभी लखनऊके पुराने नवाबी जमानेको तरोताजा करती है। उस लखनऊके रंगीन माहौलकी सदाबहार झाँकी नागरजीने 'हम फिदाए लखनऊ' में भी दिखायी है।

इस संग्रहमें १४ कहानियाँ हैं जो लखनऊ वासियोंके मिजाज और तेवरको सही ढंगसे अभिव्यक्ति करती हैं। वहाँके जनजीवनके उतार-चढ़ाव, हँसी मज़ाक, भावभाँगिमा ठीक पैमानेसे पेश किये गये हैं। आज प्रत्येक व्यक्ति वह नहीं है, जो बाहरसे दीखता है, उसका मुखौटा उसकी आन्तरिकताको इस सीमातक छुपानेमें लगा रहता है कि अधिकांश अवसरोंपर व्यक्तिका सही व्यक्तित्व पहचानसे परे हो जाता है, और जब कलई खुलती है तो उसका रंग देखने लायक होता है। राजाओं-नवाबोंका पता नहीं रहा, पर लखनऊके अनेक तथाकथित **'नवाबसाहब'** जब चुस्त चपकन पहने सुरमीली आँखें लिए पान खानेके लिए सीने-पर लगी पतली-सी जेबमें, जरा कमर झूकाकर नजाकतके साथ दो उँगलियाँ डालकर पैसे निकालते हैं, तो उस अदा-पर दिल बाग़-बाग़ हो उठता है। उनकी रईसी और शानशौकतकी पोल तब खुलती है जब उनके शहज़ादे छः पैबन्दोंसे जुड़ा हुआ मैला पाजामा पहने, नंगे बदन, गले और बाहोंमें आठ-दस गण्डे ताबीज बांधे प्रकट होते हैं, जिसे वह अपना बेटा नहीं कह पाते और तेज़ तर्रार पत्नी-के लिए उनके पास यही शब्द रह जाते हैं,—'क्या बताऊँ हज़रत! गरीब समझकर मैंने इसे पनाह दी, अपनी बीबी की तरह रखता हूँ मगर। (पृष्ठ १३) और यहाँ उनकी सारी शोखियाँ ख़तम हो जाती हैं।

'डाक्टरी साइनबोर्ड' में गलीकूचेमें प्रेक्टिस करनेवाले तथाकथित डाक्टर और उसकी फीस हड़पनेवाले सेठोंपर अच्छा व्यंग्य किया गया है—साथ ही लोगोंकी शरारतों और उनकी जिन्दादिलीकी करतूत भी दिखायी गयी है। **'चकल्लस'** में लेखकने अनेक प्रकारकी चकल्लसोंका उल्लेख किया है, जैसे बैंड बिठायेकी चकल्लस, मुफ्तकी चकल्लस मोल लेना, खुदाई चकल्लस इत्यादि। उदाहरण देते समय आजकी निरर्थक बातोंपर भी करारा व्यंग्य किया गया है—स्वतन्त्र भारतमें बच्चे उत्पादकके गृह कुटीर उद्योग की बढोत्तरीसे होड़ लेनेवाली कोई चीज़ है तो केवल सेमीनारों और विचार गोष्ठियोंकी फस्ली-बेफस्ली बेतहाशा पैदावार, (पृष्ठ ३१) आजकी गोष्ठियोंके विषय क़ितने सार्थक (?) होते हैं—'बहस इसी पर चल निकली कि उपन्यास मोटा भला या पतला'

'पीपल परीकी दास्तान' पुरानी शैलीमें लिखी शरवती के इस्ककी नयी दास्तान है। जादू-टोने-टोटके सभीका मौके-बे-मौके प्रयोग किया गया है। उपसंहार है—'जैसे यतीम शरबतीकी ज़िन्दगीके धारेमें करमए इलाहीकी मिठास घुली, उसका दिन फिरा वैसे खुदाकरे सबका फिरे'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(पृ० ४५) इस पंक्तिको पढ़कर परसाईजीका व्यंग्य 'जैसे उनके दिन फिरे' याद आ जाता है।

लेखकको अनेक पात्रों और उनके व्यवहारोंकी पूरी जानकारी है और उनके सम्बन्धमें वे निर्णायक बात कहते हैं। **'बनफशा बेगमके नूरेनजर'** २७-२८ वर्षीय टुन्नू मियाँ बच्चों जैसी हरकतें करते हैं। इधर **'हाजी कुल्फीवाला'** अपने खालिस मालसे ही नहीं बल्कि अपनी बातों और अदब कायदेसे ग्राहकोंको खुश रखते हैं, उधर **'खटकिन भाभी'** के तीरे नज़रका शिकार मुहल्लेके करीब-करीब सभी ५५ सालापेशेनयापता जवान हो चुके हैं और उसे पानेकी होड़ सभीमें लगी हुई है, चाहे वह लाला बनारसीदास हो या चुन्नीमल। **'मुंशी बख्तावरलाल'** दूर की डींग हाँकते हैं, तो **'नजीरमियाँ'** बी हैदरीके सामने अपने दिलको उछालते रहते हैं। मतलब कि सभी 'शहरके अन्देशे' से खौफ़ खाये हुए हैं। इन सबके माध्यमसे लेखकने लखनऊके जीवनका किसी-न-किसी रूपमें दर्शाया है। वे सभी 'मलिके ज़मानिया' के शुक्रगुजार हैं और लखनऊकी संस्कृतको बचानेमें स्वयंको जिम्मेदार ठहराते हैं—हकीकत में सभी भुक्खड़ हैं और इधर-उधरसे पैसे कबाड़कर गुजारा करते हैं और मानते हैं कि लखनऊकी रोनक सिर्फ उनके दमखमसे है। लखनऊकी मौजमस्ती, दुखदर्द इन्हींके माध्यमसे प्रकाश पा सका है।

भाषा देवनागरी लिपिमें होते हुए भी उर्दूके शब्दोंसे वहाँकी तहज़ीबको रूपायित किया गया है। भाषामें ताज़गी और वर्णन शैलीमें दमदार भंगिमा है। कहीं-कहीं कथ्यकी एकरसता बेरियत पैदा करती है।

'रातकी बाहोंमें' सिमटे अनेक नगरोंपर कहानीसंग्रह निकल चुका हैं, पूरे नगरके श्वासप्रश्वासको लेकर लिखे गये ऐसे संग्रहोंकी आवश्यकता है।

—डॉ० मदन केवलिया

चुनाव की घुड़दौड़

लेखिका: स्वरूप कुमारी बख्शी; प्रकाशक: भारतीय ग्रन्थशाला, गूंगे नवाब पार्क, अमीनाबाद, लखनऊ। पृष्ट : १०२; डिदाही, ७२; मूल्य : ७·०० रु०।

लेखक और पाठकके बीच सम्वाद स्थापित करनेके लिए समकालीन जीवन-सन्दर्भोंके मध्य आदमीके बदलते हुए सम्बधोंके नव्यतम आयमोंके अछूते स्तरोंसे कथ्यका चुनाव आवश्यक है। साथही तेजतर चालसे बदलते हुए समय सत्यको कमलबन्द करनेके लिए जीवन्त और समकालीन भाषा की जरूरत है। परम्परागत अर्थ दे... वाले शब्दोंमें नई सम्वेदना भरनेके लिए रचना प्रक्रियाके दौरान शब्दोंके परम्परित अर्थ और नये अनुभव संस्कारों के बीच चलने वाले द्वन्द्वमें यथार्थ स्तरपर कलाका... कितना सचेत रह पाया है, यह आज विचारणीय है।

स्वरूप कुमारी बक्शी द्वारा लिखित 'चुनावकी घुड़दौड़' कहानी-संकलनकी कुल आठ कहानियोंमें से पाँचवी और आठवीं कहानी क्रमशः "रूबी मेम साहब" और "चुनाव की घुड़दौड़" उक्त अनिवार्य शर्तों को किसी हद तक पूरा करती है।

'रूबी मेम साहब' में बक्शीने दाम्पत्य सम्बन्धोंमें ध्वस्त होते हुए पुराने सोशियल टेबूज़ टूटते हुए परम्परित मूल्य, सम्बन्धोंके बीच चलने वाली चिटींगको नाटकीय रोचक सम्वादोंके साथ आजकी रूखड़ और खुरदुरी भाषा में व्यक्त किया है। इस कहानीके समस्त पात्र एक दूसरे को चीट करने में लगे रहते हैं। पुरुष आर्थिक उप-यो... को दृष्टिगत रखते हुए औरतें तलाश करके उन्हें पत्नि बनाते हैं, और अपना करक्शन दबानेके लिए तथा व्यावसायिक उन्नतिके लिए बतौर साधन उनका उपयोग करते है। पत्नियाँ भी आर्थिक समृद्धि और विलासकी ओर आकर्षित होकर बड़े अफसरों और अपने पतियों को 'चीट' करती है। यह कहानी आभिसर वर्गमें बढ़ती हुई दायित्व हीतता और करप्शन तथा दाम्पत्य सम्बन्धों के बीच पनपती हुई CHEATING को बेबाक स्पष्ट करती।

'चुनावकी घुड़दौड़' कहानीमें बक्शीने चुनावके स... उठ खड़े होने वाले अवसरवादी राजनीतिक दलाल नेताओं और इनकी चिकनी-चुपड़ी बातोंसे सहजही ... बन जानेवाले डॉ० नरेश जैसे भोले लोगोंके माध्यमसे ... सभक्त तुर्श राजनीतिक व्यंग्य उभरा है। चुनावके स... चट्टोंबाबू, बुलाकी जैसे राजनीतिक दलाल, और ... झम्मनलाल व मियाँ असगर जैसे अवसरवादी नेता ... हो जाते हैं और चुनावको एक व्यावसायिक घुड़दौड़की ... तक अर्थहीन बना देते हैं। कहानीकी भाषा भी समकालीन राजनयिक परिवेशका विश्वसनीय बोध देती है।

जिस तरह 'जयशंकर प्रसाद' छायावादी मानसिकता के कवि थे, किन्तु वे 'गुण्डा' और 'बेड़ी' कहानियोंमें आ... जाने ही युग सम्वेदनासे सम्पृक्त हो गये थे, ठीक उसी तरह 'बक्शी' भी उच्च दोनों कहानियोंमें समकालीन मानसिकता से जुड़ गयी है, क्योंकि शेष छः कहानियोंमें वे शिल्प और कथ्यके स्तरपर युग सम्वेदनासे काफी दूर है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बच्चोंका गज' कहानीमें बक्शीने हिन्दु-मुस्लिम-भाई-भाईका थोथा आदर्मवादी नारा बुलन्द किया है, जो विभाजनकाल के अमानुषिक और क्रूरतम परिप्रेक्ष्यमें सर्वथ अदृश्य और अकल्पनीय था। अफसोस की बात है कि बक्शी ऐसे निर्मम परिपेक्हिैंव्हमें भी 'तूलसी जयन्ती' की मुद्रा अख्तियारक अपने सीमित व स्थूल दृष्टिकोणके साथ 'वास्तव' से कटकर रह जाती है।

'मूर्ख बालक' में वचकाना ढंगसे रूढ़ एवं अव्यवहृत आदर्श भावनाको तहजीह दी गयी है। दरअसल यह 'बच्चोंकी दुनियाँ' की कहानी है, क्योंकि आज न तो सोहनलाल जैसे भाई और मूर्ख बालक जैसे लड़के कहीं नहीं है 'पेन खो गया' रहस्यमय अलौकिक प्रेमकी छायावादी कहानी है जो बक्शीके मेण्टल मेकेनिज्मके अनुरूप ही है। 'चमेली रानी' में लेखिकाने समृद्ध घरोंकी औरतों पर व्यंग्य करते हुए चमेली रानी भंगिनके माध्यमसे नकली स्थितियाँ निर्मितकर आदर्शका घिसापिटा नारा लगाया है।

'कुरूप कन्या' में बक्शीने कुरूप व सुरूप लड़कियोंकी भगवानके नामपर मनचाही नियति निश्चित की है। इस तरहके सरलीकरणका आजकी रचनाशीलताके सन्दर्भमें कोई अर्थ नहीं है। मेरी बात लेखिकाके निम्न कथनसे साफ हो जाती—"भगवानकी कलाके दो भेद हैं—एक सुरूप दूसरा कुरूप। एक सौन्दर्य तथा संगीतके सृजनके द्वारा सृष्टिमें आनन्द तथा प्रेमका संचार करता है, दूसरा कुरूपता और कष्टके द्वारा सेवाकी प्रेरणा देता है। 'माला' हृदय-परिवर्तनकी कहानी है।

एक तरफ आजकी वाहियात अर्थव्यवस्था बड़ी-क्रूरता से आदमीको मनी-माईन्डेड बनाकर दिनोंदिन मानवीय सम्वेदनासे अलगकर रही है, दूसरी तरफ बक्शी जैसी लेखिका निरी भावुक और कृत्रिम स्थितियाँ निर्मित कर औरतको भौतिकतासे दूर भावुकताकी प्रतिमूर्ति बनाकर प्रस्तुत कर रही है। इस तरहकी रूमानियत प्रबुद्ध पाठकों सन्तुष्ट नहीं कर सकती।

—अवधनरायण जायसवाल

काव्य संकलन

सुबह होनेसे पहले

कवि : सव्यसाची; प्रकाशक : युगान्तर प्रकाशन, डेम्पीयर नगर, मथुरा। पृष्ठ : ६६; डिमाई, ७१; मूल्य : २.०० रुपये।

'सुबह होनेसे पहले' की कविताओंमें उत्पीड़न, अनास्था पलायन, पराजयबोध, आत्मघातकी अँधेरी घाटियोंके बीच आक्रोश, संघर्ष, विस्फोट, संकल्प, आस्था, विद्रोहके रास्तेसे गुजरते हुए युग-परिवर्तनकी मंजिलतक पहुँचनेकी छटपटाहट है, कविने इसे स्पार्टिक्स, मार्क्स, लेनिन, फ्यूचिक, लुमुम्बा, चेग्वेवारा, रेजिस डेब्रे, नाजिम हिकमत, गोर्की, नारूदा, काडवैल, आडेन, नजरूल इस्लाम, निराला, राहुल सांकृत्यायन और मुक्तिबोधकी उस परम्पराको समर्पित किया है जो शोषित-पीड़ित मानवताके हितमें सत्य की खोज, उसकी अभिव्यक्ति और स्थापनाके लिए जीवन-का मोह छोड़कर निरन्तर संघर्षमें जूझती रही है। इस सम्बन्धमें कविका आत्मकथ्य पर्याप्त महत्त्वपूर्ण है, "जिस अमानुषिक व्यवस्थाने मेरे तन-मनको तोड़कर मुझे विषैली हवासे भरे हुए अँधेरे कमरेमें कैद करके एक घिनौनी जिन्दगी जीनेके लिए विवश कर दिया है, उस अनाचारी व्यवस्थाकी इमारतको तोड़कर गिराना ही मेरा लक्ष्य है और इसी मंजिलतक पहुँचनेके लिए में कलमका उपयोग करता हूँ।

कवि अपने सामाजिक परिवेशको रंगीन चश्मेसे देखनेका आदी नहीं है। वह सभी कुछ साफ और खुली आँखोंसे देखता है इसलिए उसका सौन्दर्य-बोध साफ-साफ बदला हुआ है। "अन्धा युग और उखड़े हुए लोग" नामक इस सर्वप्रथम कवितासे निकलती इस ध्वनिको देखिये :

ये देवदारके सुन्दर वृक्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खिलखिलाती लिली, मुस्काता गुलाब
शरमायी-सी गुलमोहर, झेंपती कनेर
रिरियाता हुआ गेंदा
और बालकको भाँति शोर मचाती
सीटो बजाकर दौड़ लगाती यह हवा,
ये सब तुम्हारी उपमाएँ हैं, मेरी नहीं·
मेरी दृष्टिको बच्चेको चेचक
बिटियाकी फीस और
मकानके किरायेने चुरा लिया है।

इसीप्रकार दर्द सहते रहनेंकी विवशता, सूरजकी कैद और टूटता फौलाद, दिशाहीन पीढ़ी, अभिमन्युकी प्रतीक्षा, सुबह होनेसे पहले, चक्रव्यूहमें कैद जिन्दगी, गाँधी शताब्दी-एक प्रश्न चिन्ह, माया दर्पणका शहर, आतंक, अँधेरी शताब्दियोंकी कैदसे सूरजकी मुक्ति आदि कविताओंमें वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक अन्तर्विरोधोंकी जीती-जागती तस्वीर प्रस्तुत की गयी है।

प्रस्तुत संग्रहमें संकलित रचनाएँ उन सभी पाठकोंको रुचिकर लगेंगी जो समाजमें व्याप्त कुप्रथाओं, विडम्बनाओं और भटकावोंसे भरी और आत्मघाती परिस्थितियोंके प्रति विद्रोहकी भावना रखते हैं तथा अपनी खोजमें भटकावोंकी अनेक अन्धी गुफाओंके बीचसे गुजरते हुए सुबहके उजले उजालेसे भरे मैदानतक पहुँचना चाहते हैं।

—डा. गिरिराज शरण अग्रवाल

टूटा समय

कवि : निरंजन; प्रकाशक : कुमार प्रकाशन, २४३ ग, गड़हरा, बेगूसराय (बिहार। पृष्ठ : १६; डिमाई ७२; मूल्य : १.०० रु.।

'टूटा समय' कवि निरंजनकी नयी कविताओंका सकलन (या संग्रह ?) है जिसके पीछे न कविकी कोई भूमिका है न प्रकाशकका कोई निवेदन। यह कविको अपने कथ्यके प्रति विश्वस्त सिद्ध करता है। कवि कविताको समझनेके लिए शायद किसी भूमिकाका मुखापेक्षी नहीं है अपितु वह यह मानकर चलता है कि कविता स्वयं अपनेमें एक भूमिका है उसका उद्देश्य पानीकी तरह साफ है। 'टूटा समय' कविके परिवेशको ही नहीं सम्पूर्ण देशके यथार्थ चित्रको हमारे सामने रखता है—उसने 'मुझसे विश्वास माँगा मैंने उसे अपना पालतू विश्वासघात दिया [पृष्ठ १], मेरी हालतपर मेरे दोस्त आँसू बहाकर चले गये ढाढ़स देनेके लिए। शुभ चिन्तकोंकी कतारें बनती बिगड़ती रहीं (पृष्ठ १)। हर व्यक्ति होता है अपने देशकी एक सीमा और यह सीमा होती है हर व्यक्तिकी जिन्दगी की एक शर्त···हमने अपने फौलादी हाथोंसे तोड़ दि झूठे भगवानकी मूर्तियोंको, मिटा दिया भाग्यकी टेढ़ी-मेढ़ी लकीरोंको और सरपर उठा लिया अपने देशको (पृ.६-७)

'टूटा समयकी व्यंजना कविको यथार्थवादी' साम्यवादी दायरेमें रखनेको विवश करती है—गलत धारणाओं की खड़ी मान्यताओंने मुझे चारों ओरसे घेर रखा है, मैं इस घेरेको तोड़कर स्वच्छ साँस लेनेकी छटपटाहटमें आपको सभी जगहोंमें तोड़ रहा हूँ (पृष्ठ १०) या

भातकी फूटी पतीली बेचकर
पत्नीने नव वर्षके उपहारमें
सैनिकोंके बिक रहे पुराने मोजे-जूतेकी खरीद
बीमार-लाचार पतिके ठिठुरते-काँपते पैरोंमें पहनाकर
शुभकामनाके शब्दोंमें कहा--
न घरमें चावल है न पतीली। (पृष्ठ १६)

कवि सुधारवादी है और साम्प्रतिक वातावरणसे उसे घोर असन्तोष है। वह सचाईको कहनेमें किसी तरहकी हिचकका अनुभव नहीं करता, न ही अपनी अनुभूतियोंपर किसी तरहका मुलम्मा चढ़ाकर रखना चाहता है और रखता है। बदले हुए मूल्योंको देखकर कविके मनमें आक्रोश है। वह समता, स्वतन्त्रता एवं भ्रातृत्व की गैरिक किरणोंसे सबको आलोकित देखनेका आकांक्षी है।

एक-एक पृष्ठमें दो-दो तीन-तीन कविताओंके प्रकाशनसे यह स्पष्ट है कि कवि पृष्ठोंको फैलकर या पुस्तकको मोटी बनाकर न तो पाठकोंको भुलावेमें रखना चाहता है न उनसे अधिक पैसे ऐंठना चाहता है। जो लोग पृष्ठ सीमा देखकर पुस्तकका मूल्यांकन करते हैं, भाव सम्पदा को महत्त्व नहीं देते उनके लिए यह पुस्तक एक चुनौती है। ठीकसे छापनेपर यही पुस्तक दुगुनी तिगुनी मोटी हो सकती थी। कवि संग्रहकी कविताओंके लिए प्रशंसाका पात्र है।

—स्वर्ण किरण

प्यासी धरती

कवि : जीवितराम सितपाल; प्रकाशक-जीवन प्रकाशन, २०५ शीप, बम्बई-२२। पृष्ठ ८०; डिमाई ७२; मूल्य ३.०० रु. सन् १९७२ (जनवरी) द।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्यासी धरती' के रचयिता सिन्धी भाषी हैं। इस संकलनमें पिछले भारत-पाकिस्तान युद्ध (बँगला देशके सन्दर्भमें) के समय लिखे बयालीस गीत और 'प्यासी धरती' नामक एक एकांकी संकलित हैं। सेतपालजी नेशनल कालेज बाँदामें हिन्दीके प्राध्यापक हैं। प्राध्यापक 'अजातशत्रु' ने कवि-परिचय लिखा है और सेतपालजीके विभागाध्यक्ष श्री रामशकल शर्माने 'दो शब्द' में कविकी सम्भावनाओं पर प्रकाश डाला है। इन दोनोंमें अतिशयोक्ति कहीं नहीं है। जो कुछ लिखा गया है, कवि उससे अधिककी पात्रता रखता है।

इस संकलनकी एक विशेषता यह है कि प्रत्येक रचना के पहले टिप्पणी दी गयी हैं जो रोचक हैं और सम्बन्धित गीतोंकी विषय-वस्तुपर प्रकाशभी डालती हैं। इतनाही नहीं, उनसे कविकी प्रतिज्ञा, उससे संघर्ष और उसकी आन्तरिक रचनाका भी पता चलता है। कविका यह कहना सच है कि "यदि टिप्पणियों सहित गीतोंको पढ़ा जाये तो ये एक लम्बी कहानी या लघु उपन्यास-का-सा आनन्द देंगे।"

युद्ध कालीन तमाम रचनाओंकी तरह इनमें सस्ती भावुकता और सतही नारे बाजीके द्वारा खून गरमानेकी प्रवृत्ति नहीं दिखायी पड़ती। कवि-चित्तकी आकुलता चिन्तनसे संयामित होकर सधे शिल्पके सहारे इन गीतोंमें प्रकट हुई है। श्री सेतपालजीको बहुत-बहुत बधाइयाँ ?

गीतोंमें आह्वान, ललकार, मंजिलका पता, बलवान बनानेका उद्बोधन, चुनौती और इनके साथ वीर बाँकुडे बालकोंकी युद्धभाषीन भावनाएँ हैं। राष्ट्रध्वज, राष्ट्रीय एकताका प्रतीक हिन्दी, वीर जवान, श्रमिक, राष्ट्रीय एकता, सुरक्षा-दान, विजयवाहिनी, नौ सैनिक, पाकिस्तानी तानाशाह, हिमालय, शिवाजी, गान्धी, नेहरू, लालबहादुर, इन्दिरा, बँगलादेश—सभी कुछ तो हैं, पर इनमें सतही और सस्ता कम है।

कुछ गीत कविके अपने दुख-दर्द और उसकी अपनी प्रतिज्ञाको उजागर करते हैं। सभी गीत गेय हैं और हैं अपने कविके स्वच्छ दर्पण। यह संकलन जिनभी हाथोंमें पहुंचेगा, वे इसका स्वागत करेंगे और आशा करेंगे कि संग्रामी कवि देशके भीतर लड़े जा रहे संग्रामके लिये अबोला न रहेगा। बुद्धि व्यापारियोंके शीश महलों, सरकारी और व्यावसायिक तिलिस्म गुफाओंसे हिन्दी कविता को मुक्त कराकर देशकी करोड़-करोड़ संग्रामी जनताको उसका सहारा देनेमें श्रीसेतपाल जैसे कवि, अमूल्य योगदानकर सकते हैं। आशा है कवि 'सुधियोंकी सेज' (शृंगार रसके कचोटनेवाले मधुर गीतोंका शीघ्र प्रकाश्य संग्रह) पर सोनेके बजाये समयकी पुकारको सुन संग्रामकी रण-भेरी लेकर उपस्थित होगा।

डॉ० शीतला मिश्र

हथेलियोंमें ब्रह्मांड

कवि: भागीरथ भार्गव; प्रकाशक: कविता प्रकाशन, आर्यनगर, अलवर (राजस्थान)। संस्करण : प्रथम, १९७०: पृष्ठ: ७२; डिमाई: ७०; मूल्य: ५·००रु०।

हथेलियों में ब्रह्मांड कवि और लेखक भागीरथभार्गव की चुनी हुई कविताओंका कदाचित् प्रथम संग्रह है जो तनावके वातावरणकी उपज हैं। सम्भवतः प्रकाशकके द्वारा यह निवेदित है कि भागीरथ भार्गवकी कविताएँ अव्यक्त को व्यक्त करनेकी कोशिशसे उत्पन्न अटूट खामोशीसे सम्बद्ध हैं और ये शिरा-ताड़ तनावकी कविताएँ हैं जिनके विषय हैं—बोझिल होती हवाएँ, अवरुद्ध होती साँसें और विवेक तथा समझदारीका असत्य होता जाता भार। कविताओंमें निश्चयही प्रयोग-चमत्कारका नितान्त अभाव है। ऐसा प्रतीत होता है, दैनन्दिन जीवनमें जो कुछभी अनुभव हुआ है, कविने उसे व्यक्तकर देनेका प्रयास किया है। यों कविताओंमें बौद्धिकताका अभाव नहीं है और कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है, कि कवि बिल्कुल सामान्य बातको कविता के रूप में रखता है। यथा 'गाथा एक देशकी'। कविको पछतावा है कदाचित् अचरज भी कि उसका सारा परिवेश दूषित हो गया है, तबकौननिकट आकर उसे सहारा देगा? युक्लिप्टिसकी कतारोंमें उसे लगता है, 'किसी मधुबाला की कदली जंघा हो'।

अनास्थाकेके इस युगमें
मेरी जीविका, मेरा सृजन
पावन नहीं रहा है'
इसीलिए आनेवाली पीढ़ीको
अपनी गंध, अपनी छुअन
देना नहीं चाहता हूँ। [पृ० ६८]

कवि अकेला नहीं है। वह कहता है, 'ओ समुखि' तुम्हारा रूप-सौदर्य आज फिर......फिर, मुझे घेरता है [पृ० ४९], कवि पर छायावादी कवि पंतका प्रभाव दीखता है—मरुभूमिमें कोई अदृश्य हाथ, कोई मौन निमन्त्रण, कोई बीणा की स्वर लहरी, कोई पायलकी रुनझुन.... [पृ०५६]।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राकृतिक दृश्योंके यथावत् चित्रणमें कविको सफलता मिली है, यथा 'झील पर संध्या' शीर्षक कविता।

कविकी कविताएँ अधिकांशतः सम्बोधगति हैं और सहज-सरल अनुभूति एवं अभिव्यक्तिके कारण किंचित विचारका विषय है। आज हिन्दी कविताकी जो विभिन्न धाराएँ हैं उनका एक रूप यह भी है—सादा बयानी, सपाट बयानी, न किसी तरह धूमधाम न कोई शिल्पगत चाकचिक्य। भागीरथ भार्गवकी ये कविताएँ गद्य-गीतकी तरह मुक्तछंदमें लिखित हैं। इन्हें कस-कसकर छापा जाता तो पुस्तककी लगभग चौथाई हो जाती।

हथेलियोंमें 'ब्रह्मांड' संग्रहकी पहली कविता है जिस पर संग्रहका नामकरण किया गया है। कविका आत्म-विश्वास यहाँ मुखपर है और इस बातका पता चलता है कि कवि अनास्थावादी नहीं है अपितु 'दो हथेलियोंमें ब्रह्मांड' थामे हुए है और अपने वातावरणके जहरको पी रहा है। संग्रह निस्सन्देह असामान्य ही है।

—स्वर्णकिरण

कानपुर के युवा हस्ताक्षर

सम्पादक: चन्द्रेशगुप्त और सलिलगुप्त; प्रकाशक: नटराज प्रकाशन, कानपुर। पृष्ठ: ८८; क्राउन, ७२; मूल्य-डेढ़ रुपया;

'युवाहस्ताक्षर कानपुर' महानगरकी साठोत्तरी युवा पीढ़ीके ग्यारह कवियोंकी सवक्तव्य रचनाओंका संकलन है। इन वक्तव्योंमें गीत-विधाका समर्थन किया गया है; उसके स्वरूपको परिभाषित करने, गीत-नवगीतके भेदको व्यर्थ बताने और आजके परिवेशमें कवि-धर्मकी रूपरेखा स्थिर करने जैसे सवम्लोंपर विचार व्यक्त किये गये हैं। सम्भव है, इन वक्तव्योंके कारण विशेषरुचिके पाठक इस संकलनकी कविताओंको न पढ़नेका गलत निर्णय कर बैठें। शक होता है कि कानपुरकी समग्र काव्य-प्रतिभा [सन् ६० के बाद की] का इसमें प्रतिनिधित्व हुआ है। यदि यह शक व्यर्थ है, तब कहना होगा कि कानपुरकी साठोत्तरी हिन्दी कविता गीति परकटी है।

वक्तव्योंका अधिकांश घिसा-पिटा, अधकचरा, कुछ थोड़ा संयत और कुछ चटपटा जायकेदार है। हिन्दी-क्षेत्र के एक महानगरकी प्रतिनिधि (तथा कथित) काव्य-मनीषाका यह स्तर देखकर दुख होता है। संकलित कवि हैं—आनन्द शर्मा, उद्भ्रान्त, चन्द्रेश गुप्त, प्रसाद निष्काम रंजन अधीर, विनोद तरुण, नरेन्द्र पाण्डेय, प्रतीक मिश्र विश्वनाथ शतदल और सलिल गुप्त।

'रसदात्री लयका अविर्भाव' करनेवाली शब्द व्यवस्था को कविता मानते हुए उसके लिए श्री आनन्दशर्माने हृदय मस्तिष्कके विभेदवाली नासपाती पाल रखी है। उनके लिए 'सम्वेदनात्मक ज्ञान' और 'ज्ञानात्मक सम्वेदन' का कोई अर्थ नहीं। श्री उद्भ्रान्त 'अर्थकी लय' से संश्लिष्ट गद्य को नयी कविता और पद्यको नया गीत मानते हैं। दोनों को रूपविधानके कारण भिन्न मानते हैं। श्री चन्द्रेशगुप्त तथा सलिलगुप्त और शतदलके वक्तव्योंमें नवीनता तो नहीं पर सुलझन और जागरूकता है। श्री विश्वनाथका वक्तव्य कविताकी धुन्ध है। अन्योंके वक्तव्य लिजलिजे और कड़े शब्दोंकी प्रदर्शनी भर हैं। लगता है संकलित कवि भोले हैं वरना चमकदार वक्तव्य गढ़ लेना, आजकल मुश्किल काम नहीं।

श्री आनन्दशर्मा की कविताएँ उनके वक्तव्यका अंकुश नहीं मानतीं। उनके गीतोंका आलम दर्द भरा है, इस दर्द का दार्शनिक अभिनन्दन भी है उनमें किन्तु गीतोंका समन्वित प्रभाव विलापके-जैसा है। उद्भ्रान्त कविताओंसे प्रभावित करते हैं—'उछाल मोरपंखी' अच्छी रचना है। चन्द्रेशगुप्तकी कविता 'इस महानगरमें' बहुत कमजोर है। अन्य रचनाएँ प्रभावित करती हैं। उनकी 'व्याख्या अधूरी' में मुक्त बोध झाँकते-से दिखाते हैं। नरेन्द्र पाण्डेयकी 'स्थिति बोध', 'प्रश्न ज्यों खड़े' और 'मुझे मिल जाएगा' कविताएँ सत्वशील हैं। श्री प्रतीक मिश्रमें आक्रोश है जो व्यंग्यके सहारे प्रकट होता है। अतिकथनके कारण व्यग्य भी धरा है। लगता है कि कवि श्रीदिनकर सोनवलकरकी राहपर आगे बढ़ रहा है। श्री प्रसाद निष्कामकी काव्य-चेतना सन् ५० के आस-पास उद्बोधन-प्रबोधनके जंगलमें चक्कर काट रही है। गीत-नवगीतके अन्तरको भाषा-स्तरमें देखने वाले रंजन अधीरकी रचनाएँ संचत शब्द-साधनाका विश्वास पैदा करती हैं। जहाँ श्रीविनोद तरुणकी कविताएँ प्रभावित करती हैं, वहाँ श्री विश्वनाथकी कविताओं में अन्य मनस्क बनानेवाली विषादकी छाया पसरी पड़ी है जिसकी एकतानताको व्यंग्य कहीं-कही भंग करता है। शतदलकी कविताएँ सहज-प्रसन्न हैं पर कहीं-कहीं उसपर हीन-भावकी काली छाया जैसी कोई चीज खिन्नकर देती है। सलिल गुप्तका कवि सम्भावनाशील है। वह आक्रोश को घिराकर उसे अपनी सृष्टिका उपादान बनानेके लिए आवश्यक धीरजको बरत सकनेकी क्षमता रखता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काश ! मसीहा बननेके फेरमें वह दुराग्रहोंका शिकार न हो जाये !

संकलन सुन्दर छपा है। कविताएँ भी कुल मिलाकर निराश नहीं करतीं। वक्तव्योंने नाटक पृष्ठ बिगाड़े हैं। स्थिति वक्तव्यसे नहीं, सृजनशीलतासे बनती है। ये कविताएँ 'घासका घराना है' तो हैं नहीं, कि समझनेके लिए वक्तव्य सहायक सिद्ध होता।

—डॉ. शीतला मिश्र

भीड़ का जन्म

कवि : मानिक बच्छावत; प्रकाशक : अमिताय प्रकाशन, २०, जाल मुकुन्द मक्कर रोड, कलकत्ता–७। पृष्ठ : ७२; डिमाई : ७२; मूल्य : ६.०० रुपये।

'दृष्टिकोण' के रूपमें न तो किसी डॉक्टरकी मुहर है न ही कविने स्वयं अपनी प्रशंसामें कुछ लिखा है। कविताएँ स्वयं बोलती हैं और मैं कहूँगा कि इस संग्रहकी अधिकांश कविताएँ श्रेष्ठ कोटिकी हैं। बड़े साफ सुथरे ढंग से खरी बात कहनेमें कवि कुशल है। ठहराव, नगर समस्या, डींग, होना, दवाखाना, बड़े लोग, परिवेश, स्थितियाँ, जुलूस आदि कविताएँ बहुत सारगर्भित और भाषा बोलीकी ओरसे धनिक हैं। आलपिन, पनघट, गृह-युद्ध आदिको यही कवि लिख सकता था। आपभी 'आलपिन' की स्थिति भाँप लीजिये और कहिये कि वस्तु स्थितिको कितनी चुभनके साथ कवि कह सकता है—'एक खत है—दूसरा उसका उत्तर—और दोनों—आलपिनसे जुड़े हैं—जैसे एक हिस्सा—एक तरफ—किन्तु दोनोंके बीच मध्यस्थता—करती हुई—यह एक कड़ी है—ऐसी कई आलपिनों पर—सारी दुनियाँ खड़ी है।'' एक और कविता है, जो हम सबसे जुड़ी है—''यह मेरा देश।'' इसकी कुछ पंक्तियाँ लीजिये—'यह मेरा देश—मुझे महसूस होता है—सिमटकर कुछ दिनोंमें मुझतक ही सीमित रह जायगा' और 'राजनीति अपने मनसूबेके—लिए देशको—बहुत बड़ा महलुम बना रही है—जिस बातसे टूटे थे हम—उसे फिरसे जिला रही है।'' ये संकेत बहुत स्पष्ट किन्तु गहरे हैं। यदि कवि शब्द-प्रयोगके प्रति कुछ सावधानी बरतता और कुछ कविताओंको संग्रहसे निकालनेका साहस करता (मोह साहसका शत्रु है) तो वह 'भीड़के जन्म' की विद्रूपतासे बच सकता था।

—विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक'

अनन्य-मानसा

कवि : अम्बिका प्रसाद 'दिव्य'; प्रकाशक : साहित्य-सदन, अजमगढ़ (जिला पन्ना) (म. प्र)। पृष्ठ : १०८; डिमाई; मूल्य : ३.५० रु.

'अनन्या मानसा' कवि अम्बिकाप्रसाद द्विव्यके कुछ-एक गद्य-गीतोंका एक नातिलघु संग्रह है। कवि 'दो शब्द' (संग्रह की भूमिका) में कहता है—अनन्यमानसा अपनी सम्पूर्ण चेतनाको लेकर चली है, उसने अपनी चेतनाकी शक्तिको समझा है और उसका निरन्तर विस्तारमें आप तैरती हुई, स्वयं अपने चतुर्दिक् भावोंका एक वातावरण बनाती हुई बढ़ी है तथा उसका प्रत्येक गीत उसकी अपनी एक भूमिका है। और वह स्वयं प्रत्येक गीतकी अपनेमें भूमिका है। 'अनन्य-मानसा' का कविभी अनन्य-मानसा उसे देखता है। कविका कथन संग्रहके गीतोंके परिप्रेक्ष्यमें अतिरंजित नहीं है। कवि अनन्य-मानसाको एक शक्तिके रूपमें स्वीकार करता है—संसारकी चालिका-शक्तिके रूपमें और इसी शक्ति की क्रीड़ाके रूपमें संसारको देखता है। कभी उद्वेलित होता है कभी सौन्दर्य-राशिमें अब डूब करता है, कभी यौवनका मद्य पीता है, कभी जीवनके दर्शनमात्रसे तृप्त होता है इत्यादि। परिवेशगत उन्मुक्त प्रकृति कविको जीवन्त मालूम पड़ती है और यह दृष्टि कविको छायावादसे आबद्ध कहनेको बाध्य करती है। कविमें औत्सुक्यका भाव है, समर्पण शीलता है, चिन्तनके प्रति आकर्षण है, सौन्दर्यकी भूख है, आस्थाका आधिक्य है। कविमें आत्मबोध है। आत्म चेतना या आत्मशक्तिके प्रति कवि संदिग्ध नहीं है। वह कहता है—

मैं एक लघुदीपक हूँ और तू एक विशाल सूर्य !
परन्तु तब भी मेरेमें कोई आत्म-ग्लानि नहीं !
[पृष्ठ १]

कवि गीत-लेखनका कारण बतलाता है :

मैं तेरे लिए कुछ नहीं लिखता,
अपने लिए भी मैं कुछ नहीं लिखता,
लिखने के लिए भी में कुछ नहीं लिखता।
मैं लिखता हूँ क्योंकि लिखने का बीज
मेरे शरीरके आलबालमें कहीं पड़ गया है।
[पृष्ठ २]

सम्भव है गीत-लेखनका कवि द्वारा प्रस्तुत यह कारण सबको स्वीकार न हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवि 'अनन्य मानसा' के नाम लेना नहीं चाहता—मैं तेरा नाम न लूंगा [पृष्ठ ४१], अपनी आँखोंसे देखना चाहता है—मैं चाहता हूँ तुझे अपनी आंखोंसे देखूं [पृ. ८०] कविने उसका गीत सुना है— मैंने कहीं तेरा गीत सुना है—[पृष्ठ १००] वह अपना चित्र—स्वयं बनाये—तू अपना चित्र स्वयं बना [पृष्ठ १०५] आदि। कविको 'विभिन्न दार्शनिक' की संज्ञा देता है। कविपर विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी आन्तजलिका प्रभाव स्पष्ट है—अनन्य मानसा स्त्रीशक्ति एवं पुरुष-शक्तिका समाहार है कवि 'दो शब्द' में अनन्य मानसाको सिद्धान्त रूपमें जो उपस्थापित करता है व्यवहार रूपमें उसीकी पुष्टिपर ध्यान नहीं देता। गीतकार कविका यह भावोन्माद चिन्तन, एवं विचारका विषय है।

—**स्वर्ण किरण**

गूँज
नैसर्गिकी

कवि : मुनिलाल उपाध्याय 'सरस'; प्रकाशक : सरस साहित्य कुटीर, जनता उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, नगर बाजार, बस्ती (म. प्र.)। पृष्ठ क्रमश : ८२, ७६; क्राउन : ७२; मूल्य प्रत्येक १.५० रु.।

कवि श्रीमुनिलाल उपाध्याय 'सरस' के पहले काव्य-संग्रह 'गूंज' में ग्यारह छन्द-बद्ध रचनाएँ हैं। निरालासे प्रभावित 'भारती-स्तवन' से संकलन शुरू होता है। कवि 'जीवनकी गतियोंमें प्रयाण भाव लहर उठे' का विश्वासी है। उसकी सम्वेदन-सम्पक्षके संकेतक कुछ पद-बन्ध इस प्रकार हैं—'जन-जनके प्रेममें', 'वीरताका जागरण हो वाणीका आगमन हो, कवियोंकी भावनासे शक्ति रूप', 'समृद्धिसे सजे हुए वि हँस उठे गाँव नगर'। जंगको मानवतामय देखनेका अभिलाषी यह कवि किसी न-मजदूरोंकी गरिया-शक्तिसे परिचित है और समझता है कि समझानेसे पूंजी पतियोंके हृदय बदल जायेंगे और वे उनको मानव बनकर अपनायेंगे। इस संकलनकी छत्रपति शिवाजी, पाकिस्तानके प्रति, जय बांगला और क्रान्तिकी गूंज कविताएँ वर्णन प्रधान हैं।

कविका दूसरा काव्य-संग्रह 'नैसर्गिकी' छन्द-बद्ध ऋतु-काव्य है। 'भारती-स्तवन' के पश्चात् इसमें छहों ऋतुओंका क्रमशः निरूपण है। भाषा आधुनिक हिन्दी है किन्तु कविकी चेतना परम्पराके संस्कारोंमें बेतरह बँधी है। धनिकोंके सुख-विलासको लुब्ध नेत्रोंसे देखना और गरीबोंके दुर्भाग्यपर आह-हाय कर देना पुरानी चलन है। कविके पास सम्वेदनशील हृदय तो है किन्तु अपने परिवेशको पहचान अभी नहीं है। यह अच्छा है कि समाज के दलित-गलित पक्षके प्रति उसमें सहानुभूति है। उसे और प्रखर होना है। अन्यथा उसका देश और मानवता प्रेम खोखला ही रहने वाला है।

'गूंज' के बाद 'नैसर्गिकी' की राह पकड़ लेना दुर्भाग्य-पूर्ण है। बिल्लीके आगे आँखें बन्द किये कबूतरकी तरह सब कुछ को निरापद मानकर खोखले हर्षोल्लासमें मग्न रहनेकी प्रवृत्ति कभी शुभ नहीं रही है, आज तो एकदम नहीं। बस्ती-की-बस्तीको ही हजारों रोग हैं जो भारतके गाँव-गाँवके रोग हैं। क्या उपाध्यायजी उन्हें अपने शब्दों बाँधकर लेखनी सार्थक करेंगे ?

— **डॉ. शीतला मिश्र**

'संशयके संगी'

कवि : महावीर गौड़; प्रकाशक : सरिता एन प्रकाशन सुजानगढ़ (राजस्थान)। पृ. : ६१; क्राउन, ७: मूल्य : २.०० रु.।

'संशयके संगी' महावीर गौड़की ६१ कविताओंका संकलन है। पुस्तकका नामकरण आलोच्य पुस्तककी कविता 'संशयके संगी' पर आधारित है। विचार एवम् भाव दृष्टिसे प्रस्तुत कविताओंको श्रृंगार, देश-प्रेम, राजनीति जीवन-संघर्ष एवम् जीवन-सत्य 'घुटन, आक्रोश, दर्द आदि भागोंमें विभाजित कर सकते हैं। 'ठण्डी सांसें' कविता कविका चिन्तन देशकी सही स्थिति आंकता है— देखा। इस देशका बचपन। हाथ फैलाये। यौवन। छलकाये। और बुढ़ापा। निष्प्रभ (निष्प्रभ) आँखे। पांखे। ठण्डी साँसे। पृष्ठ ६। 'नारे बदल गये', 'राजनीति चलती है, कविताओंमें देशकी व्यवस्था और इसको बनाने वाले 'राजनीति एवम् राजनीतिज्ञ' पर व्यंग्यका प्रयोग मात्र है। 'दोगला प्रभात' कवितामें प्रकृतिके प्रत्येक शाश्वत सत्य उपादानोंके माध्यमसे कवि द्वारा 'दोगला प्रभात' जन्म दिलाना विचारकी दृष्टिसे अनौचित्यकी बात प्र करता है। 'मंजिल सुन लेगी', 'गंवार गीतोंसे हो न प भोर', दर्द है। जीवन है, 'कुछेक कविताएँ अच्छी पड़ी हैं।

शिल्पकी दृष्टिसे 'संशयके संगी' में अधिकांश कविता में कविके भाव जहाँ तहाँ सुव्यवस्थित होकर चले मध्य या अन्त तक पहुँचते-पहुँचते चुक जाते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभावसे दृष्टिसे हल्के पड़ जाते हैं। फिरभी, कवि गौड़का प्रथम प्रयास होनेके कारण सराहनीय है, साथही संकलनकी कुछेक कविताएँ भविष्यकी नयी उपलब्धि सम्भावनाओं के प्रति आश्वस्त भी करती हैं, ऐसा विश्वास किया जा सकता है।

—श्यामकिशोर शर्मा

अरावली-गुंजन

सम्पादक : बलबीरसिंह 'करुण' और रूपनारायण 'चन्द्रल'; प्रकाशक : भारतीय साहित्य परिषद्, अलवर (राजस्थान)। पृष्ठ ५८; क्राउन ७२; मूल्य : ३.५० रु.।

स्वतन्त्रताकी रजत-जयन्तीके अवसरपर भारतीय साहित्य परिषद्, अलवरकी ओरसे जिलेके बत्तीस कवियों-की रचनाएँ 'अरावली-गुंजन' में संकलितकी गयी हैं। यह परिषद्का तीसरा प्रकाशन है। 'अलवरके साहित्य-कार, 'अलवरका स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी काव्य' और 'पचशर' के प्रकाशनकी योजना हाथमें है। परिषद्का कार्य सराहनीय ही समझा जायेगा। बताया गया है कि इस संकलन-में अलवर जिलेके नये-पुराने, चर्चित-अचर्चित, युवा-वृद्ध सभी प्रतिनिधि कवियोंको शामिल किया गया है। इस तरहके प्रयास सर्वथा स्वागत योग्य हैं।

सम्पादकोंने अपनी भूमिका में एक वाक्य लिखा है— 'परिषद् की गति विधियाँ बन्द कमरों अथवा कागजी आडम्बरोंतक ही सीमित न रहकर [याने चलता वह रूप भी है!] जन-जीवनसे घुल मिल चली हैं। विश्वास है कि परिषद् के कार्यकर्त्ता वैसा कुछ नहीं करते होंगे।

इस संकलनमें आरम्भिक द्विवेदी-युगसे लेकर आज तककी काव्य-प्रवृत्तियोंके प्राय सभी नमूने यत्किंचित मिलते हैं। इससे जिलेकी साहित्य-चेतनाका आभास मिलता है। कविता और पाठकके बीचकी दूरीको घटाने-मिटानेके प्रयासियोंको इस ओर ऐसे संकलनोंसे कामके बहुत संकेत मिल सकेंगे। ऐसे संकलनोंके अनेक उपयोग हैं और आशा है कि सुधीजनोंका ध्यान इधर जायेगा। और वे इनका समुचित उपयोग करेंगे। सम्पादक और परिषद् बधाईके पात्र हैं।

—डॉ. शीतला मिश्र

प्रशासन

लोक प्रशासन : सिद्धान्त एवं व्यवहार

लेखक : बी. एस. सिन्हा; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ए-२६१२. विद्यालय मार्ग तिलक नगर, जयपुर-४; वितरक : इण्टरकाण्टिनेन्टल बुक हाउस, चौड़ा रास्ता, जयपुर। पृष्ठ : २३८; रायल, ७२; मूल्य : १२.०० रु.।

प्रशासनिक संस्थाएँ

लेखक : प्रो. जियाउद्दीन खाँ, अन्तरसिंह; प्रकाशक : और वितरक : उपर्युक्त। पृष्ठ : २८७; डिमाई, ७१; मूल्य : १२.५० रु.।

भारतीय भाषाओंको उच्च शिक्षाका समर्थ माध्यम बनानेकी राष्ट्रीय नीतिको कार्यान्वित करनेके लिए १९६८ में भारत सरकारने एक बृहत्-योजनाका सूत्रपात किया था। इसके अन्तर्गत प्रादेशिक भाषाओंमें विश्वविद्यालय स्तरके ग्रन्थ तैयार करनेके लिए ग्रन्थ अकादमियोंकी स्थापना की गयी थी, जिसमें एक राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भी है। अतः यह आशा करना स्वाभाविक है कि इन अकादमियोंसे जो ग्रन्थ प्रकाशित हों, वे न केवल हिन्दी वाङमय में वैज्ञानिक तथा मानविकी विषयोंके साहित्यके अभावकी पूर्ति करें बल्कि उपयुक्त स्तरके भी हों, ताकि यह शिकायत दूर हो सके कि हिन्दी माध्यमसे पढ़नेवाला विद्यार्थी अपेक्षाकृत निम्न स्तरका होता है। प्रस्तुत पुस्तकोंका प्रकाशन निसन्देह इस अभावकी पूर्तिकी दिशामें एक प्रयत्न है क्योंकि लोक-प्रशासन जैसे विषयपर हिन्दीमें अच्छी पुस्तकें बहुत कम हैं। पहली पुस्तक 'लोक प्रकासन : सिद्धान्त एवं व्यवहार' की विषय-वस्तुको तीन भागोंमें बाँटा गया है : प्रशासनके सिद्धान्त; राष्ट्रीय प्रशासन; और अन्तर्राष्ट्रीय प्रशासन। दूसरी पुस्तकमें सात अध्याय हैं : राज्य, सरकार, व्यवस्थापिका, कानून एवं न्याय, निर्वाचन, प्रजातन्त्रकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आय-कर दाता!

आय-कर विभाग ने प्रत्येक आय-कर दाता के लिये एक

स्थायी लेखा नम्बर

नियत कर दिया है

ऐसा यह सुनिश्चित करने के लिये किया गया है कि निर्धारितियों से प्राप्त भुगतान के चालान, ब्योरों और अन्य सभी चिट्ठी पत्रियों को ठीक तरह से दर्ज किया और पत्रावली में रखा जा सके। अगर, आपको गलती से दो स्थायी लेखा नम्बर मिल गये हों या कोई नम्बर नहीं मिला हो तो कृपा करके अपने कर निर्धारण आय-कर अधिकारी/आयकर आयुक्त से एक नम्बर रद्द करने को या एक ही नम्बर नियत करने को कहिये।

कृपया अपने आय के ब्योरों, चालानों आदि पर अपना सही स्थायी लेखा नम्बर अवश्य लिखिये ताकि विभाग आपकी अच्छी सेवा कर सके।

निरीक्षण निदेशालय
(गवेषणा, आंकड़े और प्रकाशन)
नई दिल्ली

davp 73/167

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारणा, जनता और प्रशासन। दोनों पुस्तकोंमें प्रत्येक अध्यायके अन्तमें विशेष्य अध्ययनके लिए देखने योग्य पुस्तकोंका विवरण दिया गया है जो प्रायः सब स्वभावतः अँग्रेजीकी है क्योंकि हिन्दीमें इन विषयोंपर अभी स्तरीय ग्रन्थ नहीं है ! परन्तु न तो इन पुस्तकोंके अन्तमें हिन्दी-अँग्रेजी या अँग्रेजी-हिन्दी पारिभाषिक शब्दावली दी गयी है (इसके बगैर निर्दिष्ट अँग्रेजी पुस्तकोंका अध्ययन कैसे होगा ?), न विस्तृत अनुक्रमणिका दी गयी है। पहली पुस्तकके पाठ्य अंशमें हिन्दी पारिभाषिक शब्दोंके साथ कहीं-कहीं अँग्रेजी पर्याय कोष्ठकमें दिये गये हैं, पर दूसरी पुस्तकमें इतनाभी नहीं किया गया है। विषयका विवेचन दोनों पुस्तकोंके अन्तर्गत सरल भाषा-शैलीमें किया गया है परन्तु इन्हें पढ़नेके बाद यह बात छिपी नहीं रह जाती कि सरलताके साथ स्तरका निर्वाह नहीं हो पाया है। यह बात ध्यान देनेकी है कि लोक-प्रशासन विषय प्रायः स्नातकोत्तर स्तरपरही पढ़ाया जाता है, परन्तु ये पुस्तकें कहींसे भी स्नातकोत्तर स्तरकी मालूम नहीं होती बल्कि बाजारमें बिकने वाले शॉर्ट नोट्स' का मुक़ाबला करती हैं। विवेच्य विषयको जगह-जगह 'प्वाइण्ट्स' बनाकर प्रस्तुत किया गया है, जैसे पहली पुस्तकमें लोककल्याणकारी राज्यकी दस विशेषताएँ गिनायी गयी हैं (पृष्ठ ३४-३६) और दूसरी पुस्तकमें लोककल्याणकारी राज्यकी नौ विशेषताएँ गिनायी गयी हैं (पृष्ठ ३६-३८)। हायर सेकेंण्डरी स्तरकी पुस्तकमें यह शैली अपनायी जाये तो वह क्षम्य हो भी सकती है, पर स्नातकोत्तर स्तरपर जहाँ संकलपनाओं का गहन अध्ययन अपेक्षित होता है, यह तरीक़ा स्तरकी गिरावटका ही सूचक है। फिर, इन पुस्तकोंकी भाषा और कथ्यको देखते हुए भी अच्छे स्तरका दावा कहींभी नहीं किया जा सकता। कुछ झलकियाँ पर्याप्त होंगी :

लोक-प्रशासन : सिद्धान्त और व्यवहार

"वर्तमान युगमें सरकारोंने अपने हाथमें इतनी सत्ता केन्द्रित करली है कि वे अपने मित्रोंको मालामाल कर दे कें और शत्रुओंका सर्वथा नामोंनिशान मिटा दें।" (पृष्ठ ६) यहाँ 'सरकारों' से क्या तात्पर्य है, उनके मित्र और शत्रु कौन हैं ?

"सन्तुष्ट कर्मचारी असन्तुष्ट कर्मचारीसे अधिक उत्पादक होते हैं।" (पृष्ठ ११)

"जीवन वृत्तान्त दृष्टिकोण" (पृष्ठ १३) यह शब्द कैसे बना ?

"लोकमत मतदान (public opinion poll)" (पृष्ठ १५)।

"ओ० एण्ड एम० प्रयाग" (पृष्ठ ७६) 'ऑडिट' (पृष्ठ, १४४)। क्या इनके हिन्दी पर्याय १९६८ में प्रकाशित 'समेकित प्रशासन शब्दावली' में उपलब्ध नहीं थे ?

"अदमनकारी शक्तियाँ" (पृष्ठ ९५)।

पृष्ठ १८० पर कैबिनेट सम्बन्धी मामलोंके विभागमें तीन कक्ष गिनाये गये हैं जिनमें पहलेको केवल 'नागरिक कक्ष' लिखा, है और तीन पंक्तियोंके बाद कोई हवाला दिये बगैर उसकी जगह 'सिविल विंग, लिख दिया गया है। पृष्ठ २०८ पर (General assembly) को 'साधारण सभा' लिखा गया है जबकि १९६६ में ही प्रकाशित मानविकी शब्दावली-1 के अन्तर्गत इसके लिए 'महासभा' स्थिर किया गया है।

प्रशासनिक संस्थाएँ

"आधारभूत कानून या संवैधानिक कानून जिनका निर्माण सभी वयस्क नागरिक मिलकर करते हैं" (पृ.९)। वयस्क नागरिक करते हैं या उनके निर्वाचित प्रतिनिधि करते हैं ?

"कम-से-कम आधे सदस्य गैर अधिकारी (नान-औफिसियल्स) थे" (पृष्ठ ९९)। गैर अधिकारी अधिकारी क्या होते हैं ? गैर सरकारी क्यों नहीं ?

"भारतकी केन्द्रीय व्यवस्थापिकाको ⋯⋯धन स्वीकार करनेका अधिकार दिया गया।" (पृ० १०५)। धन स्वीकार करनेका अधिकार दिया गया या धनकी स्वीकृति देनेका ?

"चोरी किए गए निर्वाचन, ⋯⋯बिगड़ा हुआ निर्वाचन, ⋯⋯तैयार निर्वाचन" (पृष्ठ, १३) जैसे प्रयोग उपयुक्त नहीं है ?

पुस्तकोंकी छपाई-सफाई साधारण है। दूसरी पुस्तकमें वर्तनीकी भूलें भी बहुत खटकती हैं, कुल मिलाकर, मुझे यह माननेमें सन्देह है कि ये पुस्तकें हिन्दी वाङ्मयकी श्रीवृद्धि कर सकेंगी।

ओम प्रकाश गाबा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामयिक राजनीति

दुबचेक का पतन क्यों ?

लेखक : पावेल टिग्रिड; अनुवादक : लेखराम; प्रकाशक : नेशनल : एकाडमी, ६, अंसारी मार्केट, दरियागंज, दिल्ली-११०००६ । पृष्ठ २८६; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.०० रु. ।

साम्यवादी अन्धानुकरणकी नीतिके विरुद्ध जेहिन्द बोलने वालोंमें आलेक्सान्द्र दुबचेक भी रहे हैं। स्वयं कट्टर साम्यवादी होते हुए भी उन्होंने राष्ट्रीय सम्मानको प्राथमिकता देनेका संकल्प किया और यहीं-इसी निश्चयसे ही साम्यवादी ऐसकी उस वीरतापूर्ण कारवाहीका प्रारम्भ होता है जो कि चेकस्लोवाकियाके पतनमें तो सक्रिय रही है। बल्कि जिसने देशभक्त दुबचेकको अपनेही देशमें निर्वासित होनेके लिए विवश किया।

यदि दुबचेकके पतनमें सहायक तत्त्वोंकी समीक्षा की जाये तो दुबचेक इतिहासके उन पृष्ठोंको टटोलना होगा जिनमें स्टालिनवादी नौकर शाहीके बीजोंने गहरे घुसकर शासन तन्त्रको शिथिल कर दिया था। १९४८ में स्टालिन के गुमाइन्पे नोवोलीने जब सत्ता सम्हाली है, प्रायः वे ही वायदे दोहराये जो हर सत्तालोलुप गद्दीनसीं होते घोषणा करता है। नोवोली कट्टर ढंगका ऐसा व्यक्ति था, जिसने दिवालिएपनकी ओर अग्रसर इस शासनकी अध्यक्षता की। (पृष्ठ १८)। नोवोलीका काल एक तानशाहका काल था, जहां शासनके मूल्यांकन, विश्लेषण एवं आलोचनापर पाबन्दी थी, वस्तुतः नोवोलीके शासनमें ही दुबचेकके पतन के बीज छिपे थे। एक लम्बे अन्तरालतक जनमतकी अभिव्यक्ति पर रोके लगाये रखना और फिर एकाएक रोक हटा लेना—दुबचेकके लिए यह विनाशकारी सिद्ध हुई। दो दर्शकोसे रुका हुआ विस्फोट एकाएक फूट पड़ा, "चेकमें समाजवाद" विषयपर साम्यवादी शासनकी बखिया उधेड़ी जाने लगी, लोकमत का तूफान और आँधी दुबचेकको उड़ा ले गयी, जब पानीके बहावके लिए द्वार खोले जा चुके हों, तब दुबचेकका उसके बहाव के विरुद्ध तैरना व्यर्थ और असम्भव था (वही पृष्ठ १८)। अतः कहना न होगा कि दुबचेक स्वयं अपनी गलतीके शिकार भी हुए। नोवोलीके त्यागपत्रके बाद जन-आक्रोशकी पृष्ठभूमिको आंकनेवाला दुबचेक उसके महत्त्व व विस्तारको कूतनेमें असफल रहा। पुस्तकमें दुबचेकके पतनसे सम्बन्धित कारणोंका सूक्ष्मतासे विश्लेषण किया गया है। अपनी उदारवादी नीति सचिव पदपर पुराने गुटका ही आधिपत्य होना आदि ऐसे कारण रहे जिन्होंने चैक इतिहासके परिवर्तनके दौरमें सक्रिय भूमिका निबाही।

दुबचेक वैसे इस स्थितिसे अनभिज्ञ नहीं थे कि सामयिक परिस्थितियाँ बड़ी विषम हैं। लेकिन इसके विपरीत उन्होंने व्यापक रूपसे गले हुए शासनको हाथमें लेकर भूल की थी—"अपनी इच्छाके विरुद्ध कैसे दुबचेकको शक्ति और अधिकार मिला और उसे उत्तराधिकारमें कैसी भीषण बदनाम स्थिति प्राप्त हुई" (पृष्ठ ६१) 'यह स्थिति उनके परम्परागत ढंगसे कार्य करनेके फलस्वरूप उत्पन्न हुई। सोवियत रूसके प्रति सम्बन्धोंका निर्धारण एक ऐसा विषय था जिसे विषादके लिए खुला छोड़ दिया गया। फलस्वरूप सोवियत हस्तक्षेपकी धमकियोंका दौर प्रारम्भ हुआ एवं दुबचेकका मुँह बन्द करनेकी कोशिश भी। दुबचेकने रूसके प्रति एक स्वतन्त्र सम्बन्धकी स्थापना पर बल दिया और यहीं सोवियत रूसके आक्रोशका शिकार भी हुआ। परम्परागत सोवियति नीति इस अनपेक्षित सम्बन्धके लिए तैयार नहीं थी—यही कारण है कि बिना किसी गुप्त कूटनीतिके सोवियत रूसने टैंकोंकी भाषामें बात करना ज्यादा उपयुक्त समझना। हांलाकि इस आक्रमणको उचित सिद्ध करनेके लिए एक 'श्वेत पुस्तिका' का भी प्रकाशन हुआ, जिसमें मुख्य कारणोंको छोड़कर अन्य सभी गौण कारणोंकी चर्चा की गयी। वस्तुतः—चैकस्लोवाकियामें जो आन्तरिक स्थिति पैदा हुई, लगभग एकमात्र उसीके कारण सोवियत हितों और स्वार्थोंको खतरा उत्पन्न हो गया" (पृष्ठ ७६)। इस कारणपर पुस्तकमें पूरा एक अध्याय है। २१ अगस्त १९६८ को हुई उस बर्बरतापूर्ण कार्रवाहीका वर्णन प्रस्तुत पुस्तकमें विस्तारसे किया गया है। सोवियत रूसने कट्टर पंथियोंका समर्थक कर उदारवादी दुबचेक एवं उनके साथियोंकी उपेक्षा तो की ही, फूट डालनेमें भी कोई-कसर नहीं छोड़ी। विभिन्न वार्ताओंके दौरान सोवियत नेतृत्व द्वारा दुबचेककी एक कम महत्व-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्ण व्यक्तित्वके रूपमें आका गया। स्वाबोधाको प्रथम सचिव, गणतान्त्रिक सर्वोच्च पदका कार्यभार सम्हालनेको कहा गया जिसे कि स्वबोधाने स्वीकार करनेसे उसी तीव्रता से इन्कार कर दिया। समझौतेकी लादी गयी शर्तोंका उल्लेख दुबचेकने रूससे लौटकर किया। "प्रायः सारी चैक और स्लोवाक जनताने वह भाषण सुना। सारा भाषण सिसकियोंसे भरा था और रुक-रुककर आगे बढ़ता था," (पृष्ठ १४६)। इसी प्रोटोकोलमें दुबचेकके पतनके अदृश्य तत्व विद्यमान थे। यह प्रोटोकोल ऐसा है जिसमें चैकोस्लोवाकियाको आदेश दिये गये हैं, राजनीतिक, सैद्धान्तिक और संगठनात्मक निर्देश दिये गये हैं और चैक सरकारसे माँगें की गयी हैं। यह एक अनूठा और दुर्लभ अन्तर्राष्ट्रीय समझौता है चैक जनताके विरोधमें इसमें कठोर व्यवस्थाएँ की गयी हैं। प्रोटोकोलमें कुछ व्यवस्थाएँ इतनी अस्पष्ट हैं कि इच्छानुसार उनकी कोई भी व्याख्या की जा सकती है।

इस बीच सोवियत पक्षधरोंकी सहायतासे दुबचेक विरोधी अभियान का संचालन किया गया, और चैकोस्लोवाकियाके पुनर्स्तालिनीकरणका शुरू किया गया। इस प्रक्रियाको 'सामान्यीकरण' का नाम दिया गया। 'सामान्यीकरण' के दौरमें रूसी कूटनीतिज्ञ अपनी माँगें दुबचेक व अन्य साथियोंके समक्ष 'आन्तिमेंत्थम' के रूपमें प्रस्तुत करते थे। यह सब देशकी जनताको यह बतानेके लिए किया जारहा था कि उसे पता चल सके कि यहाँ का असली मालिक कौन है। इस दौरान दुबचेकके नेतृत्वमें सोवियत रूसको प्रसन्न रखनेके हर सम्भव उपाय किये गये। पर इस नीतिका परिणाम भी अनुकूल नहीं रहा। 'सामान्यीकरण' का कार्य दृढ़तापूर्वक प्रगति करता रहा, दुबचेकके कार्यक्रम और उसके राजनीतिक दृष्टिकोणके अस्पष्ट और अस्थिर तत्त्व एक बार पुनः उसकी अपनी पराजयके कारण बने (पृष्ठ १८२)।

हुसाकके उत्तराधिकारीके रूपमें आनेके पश्चात् दुबचेक की यातनाओंका दौर प्रारम्भ हुआ, यूरोपीय इतिहासमें प्रमुख स्थान रखनेवाले दुबचेकको तुर्कीमें राजदूतका पद दिया गया लेकिन सोवियत आकाओंकी, विरोधियोंका सफाया करने की नीतिके फलस्वरूप वापस बुलाकर कई दिन गायब रखा गया, इस दौरान अक्सान्द्र दुबचेकको ... का प्रयत्न किया गया, (पृष्ठ २३६)। अपराधोंकी एक लम्बी सूची तैयारकर उसपर दुबचेककी बलात् स्वीकृति माँगी गयी। इस प्रयोजनसे दुबचेकको शारीरिक व मानसिक यातनाएँ दी गयीं।

'दुबचेक का प्रयोग—शव परीक्षा' अध्यायमें एक तटस्थ अध्येताओंका दृष्टिकोण है। दुबचेक और उनके साथियोंने जो प्रयोग किये उन प्रयोगोंके साथ सोवियत रूस द्वारा सामंजस्य न बैठा पाना ही इसकी अन्तिम परिणति थी। पुस्तकमें ऐसी सम्भावनाओंका भी उल्लेख है कि दुबचेक अपनी स्थिति सम्हाल भी सकता था। लेकिन उस स्थितिमें उसे जन-समर्थनसे हाथ धोना पड़ा। इसे स्पष्ट करते हुए लेखकका कहना है कि दुबचेक और उसके साथियोंके लिए 'दूसरा सम्भावित हल-यह था, अपने उदारता और लोकतन्त्रीकरणके कार्यक्रमको ठीक अन्ततक ले जाना—एक ऐसी व्यवस्थाकी स्थापना करते, जोकि मार्क्सवादी-लेनिनवादी-सिद्धान्तोंके, जिस रूपमें ये सिद्धान्त साम्यवादी देशोंमें आज लागू हैं, बुनियादी रूपमें विपरीत और विरोधिनी होती, यदि ऐसा हो जाता, तब यह बात अत्यधिक सन्देहपूर्ण थी कि दुबचेकका दल सत्तापर अपना एकाधिकार बहुत देर तक बनाये रख पाता।" (पृ.२४३)। चैक जनताने बिना प्रतिरोधके आत्मसमर्पण किया। इस आत्म-समर्पणका, जिसकी चैक नेताओंने इतनी जोरोंसे पैरवी की जो इनाम इन्हें मिला वह यह था कि उन्हें और लज्जित किया गया तथा उन्हें और भी सजाएँ दी गयीं,

उपर्युक्त संकटको लेखक सिर्फ चेकोस्लोवाकियातक ही सीमित नहीं मानता वरन् यह संकट कभी भी अन्य साम्यवादी देशोंका भी संकट हो सकता है, विशेष रूपसे पड़ोसी साम्यवादी राष्ट्र-रूमानिया और युगोस्लावियाकी जनता पर ऐसीही बर्बता पूर्ण कार्रवाईकी शुरुआत हो सकती है। समस्त प्रमाणोंको दृष्टिगत रखते हुए एक बात स्पष्ट हो जाती है कि सोवियत रूस अपने यूरोपीय स्वार्थों एवं हितोंको केन्द्रबनाकर अपनी नीतिका संचालन करता है। यदि वह चैकोस्लोवाकियामें हुए 'मानवतायुक्त समाजवाद' के प्रयोगको छूट देता तो स्वाभाविक है कि पोलैण्ड व पूर्वी जर्मनी जैसे देशोंके भी इसकी चपेटमें आजानेकी सम्भावना बढ़ जाती—यही सोवियत रूसकी चिन्ता है। और यही सम्भावना दुबचेक जैसे स्वतन्त्र चिन्तकको अपने चिन्तनमें रूसको न छोड़ पानेकी विवशता लिए हुए है। पुस्तक यूरोपीय इतिहासके उपेक्षित दस्तावेजका संग्रहणीय संकसंकलन है। अनुवाद सुन्दर बना है मेटअप व छपाई अच्छी है।

—दिनेश भट्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिकार साहित्य

हाथियोंका खेदा

लेखक : विराज ; प्रकाशक : राजपाल एन्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली—६, पृष्ठ : ११० (तथा ८ पृष्ठ फोटो); क्राउन. ७३; मूल्य: ५०० रु. ।

वन्य जीवोंके विषयमें विराजने पहले भी अनेक पुस्तकें लिखी हैं। इस पुस्तकमें उन्होंने मैसूर राज्यमें खेदेकी पद्धति द्वारा जंगली हाथियोंको पकड़नेका वर्णन किया है। अन्तिम खेदा सन् १९७१ के शुरूमें काकनकोटके जंगलमें हुआ था। विराज इस अवसरपर गये थे और उन्होंने वहाँ खेदेकी कार्रवाईके फोटो भी लिये। इस आयोजनमें दर्शकोंके लिए ढाई सौ और दो सौ रुपयेके टिकट लगाये गये थे और दफ्तरशाहीकी कृपासे सबसे अच्छी तरह इस विशाल तमाशेको देखनेका सुअवसर उन हजारों लोगोंको मिला, जिन्होंने कोई टिकट खरीदा ही नहीं था। हाथियोंसेभी अधिक मनुष्य स्वभावकी जानकारी इस पुस्तकके पृष्ठोंमें झलकती है।

खेदा बहुत बड़ा आयोजन होता है, जिसमें सैकड़ों आदमी महीनों कामपर जुटे रहते हैं और लाखों रुपयेकी धनराशि इसपर खर्च हो जाती है।

हाथियोंको पकड़नेके लिए किस प्रकार विशाल बाड़ा बनाया जाता है; किस प्रकार हाथियोंके झुंडको धीरे-धीरे हाँककर उस बाड़ेकी दिशामें लाते है; और अन्तिम निश्चित दिन किस प्रकार सैकड़ों आदमी और बीसियों कुमुकी (पालतू हाथी) मिलकर जंगली हाथियोंको खदेड़कर उस विशाल बाड़ेमें घुसनेको विवश करदेते हैं; किस प्रकार एक-एक जंगली हाथीको पालतू हाथियोंकी सहायतासे रस्सोंसे बाँधा जाता है; पहले-पहल रस्सोंसे बँधनेपर जंगली हाथीकी प्रतिक्रियाएँ क्या होती हैं, यह सब बड़ी सरल भाषामें इस पुस्तकमें किया गया है।

खेदा बहुत बड़ा आयोजन होता है, जिसमें सैकड़ों आदमी महीनों कामपर जुटे रहते हैं और लाखों रुपयेकी धनराशि इसपर खर्च हो जाती है। किसी समय हाथियोंको पकड़ना और उन्हें बेचना आर्थिक दृष्टिसे उपयोगी रहा हो, पर अब तो इसका महत्त्व एक तमाशेके रूपमें ही है, जिसमें दर्शकोंको बेचे गये टिकटोंसे ही लाखों रुपयेकी आय हो जाती है। पकड़े गये हाथियोंका उपयोग बहुत नहीं है, इसलिए बहुतसे हाथियोंको फिर जंगलमें छोड़ देना पड़ता है।

खेदेका अत्यन्त सजीव एवं रोचक वर्णन इस पुस्तकमें दिया गया है। चित्रोंसे पुस्तकका आकर्षण और बढ़ गया है, हालांकि चित्र कुछ और अच्छे होतें, तो भला रहता। किशोर-साहित्यमें यह पुस्तक उत्कृष्ट स्थान प्राप्त करेगी।

—विवेककुमार

जीवन संस्मरण

जो याद रह गया

लेखक : रिषभदास रांका ; प्रकाशक : भारत जैन महामण्डल, भारत इंश्युरेंस बिल्डिंग, १५ ए हार्निमन सर्कल, फोर्ट, बम्बई-१। पृष्ठ : २५२ ; डिमाई ७२ ; मूल्य: ६.०० रु.।

आमतौरपर आत्मकथाएँ रोचक नहीं हुआ करतीं परन्तु यह तो अपवाद है। आत्मकथा लिखना एक कठिन काम है और उसमें भी एक गाँधीवादी द्वारा। आत्मप्रशंसा या आत्मनिन्दासे बचना मुश्किल है परन्तु प्रस्तुत पुस्तकमें अति सन्तुलित दृष्टि से काम लिया गया है। हिन्दीमें अनुदित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाँधीजीकी आत्मकथा' के अतिरिक्त किसीभी अन्य आत्मकथाने मुझे इतना अधिक अभिभूत नहीं किया। लगता है कि लेखक अपने भोगे हुए क्षणों को सच्चाई के साथ उतारता चला गया है और प्रतीत होता है जैसे सिनेमाकी रील सामनेसे गुजर रही हो।

पुस्तक में सत्याग्रह-संग्राम एवं गाँधीजीके रचनात्मक कार्योंकी झाँकी प्रचुर परिमाण में मिलती है। सन् ४२ के आन्दोलनके कुछ अज्ञात पहलुओंपरभी पुस्तकसे प्रकाश पड़ता है। आजादीकी लड़ाईको अहिंसात्मक लड़ाई कहा जाता है परन्तु इसमें भी रक्तपात हुआ था। इसकी जानकारी इस पुस्तकसे मिलती है।

गांधीजीके रचनात्मक तथा आन्दोलनात्मक कार्योंकी इसमें पूरी झाँकी मिल जाती है। लेखकने बार-बार यह कबूल किया है कि वह एक हिसाबी आदमी है और हिसाबी आदमीका दिमाग वकौल 'बेकन' बड़ा ही सन्तुलित होता है। उसे किसी समस्याका समाधान शीघ्र सूझ जाता है। इस समस्या बहुल देशोंमें अधिक-से-अधिक सामाजिक कार्यकर्त्ताओंको पैदा करनेमें यह पुस्तक सफल होगी, ऐसी मेरी मान्यता है। जीवनियाँ प्रेरणा देती हैं और उनकी सार्थकता तभी है जबकि उन्हें पढ़कर वैसा बननेकी इच्छा पाठकोंमें जगे। मुझे तो इस पुस्तकने बहुत मार्ग-दर्शन दिया है और उम्मीद है, दूसरेभी आलोक पायेंगे। परमार्थ और स्वार्थ साथ-साथ चल नहीं सकते परन्तु वह स्वार्थीभी आदर पायेगा जिसका स्वार्थ भी परमार्थके लिए हो।

इस पुस्तकमें ऐसे-ऐसे कार्यकर्त्ताओंके नामोंसे वाकिफ हुआ जिन्होंने बलिदान तो महान् किया परन्तु स्वयं अज्ञात बने रहना पसन्द किया। नये-नये कृषि प्रयोगों एवं वैज्ञानिक गोपालनकी जानकारीभी इस पुस्तकमें हम पाते हैं। अपरिग्रह, अहिंसा, गोपालन आदि, के व्यावहारिक ढंगसे भी अवगत हुआ जा सकता है। यह एक साधककी जीवनी है जोकि 'पद्मपत्र मिवांयसा' है।

वास्तवमें ऐसी सुरुचिपूर्ण एवं सूचनात्मक साहित्य-सर्जनाके प्रकाशनके लिए लेखक एवं प्रकाशक बधाईके पात्र हैं। लेखक मराठी भाषी हैं इसलिए मराठी मुहावरे, प्रयोग एवं शब्द जाने-अनजाने आ गये हैं परन्तु इससे विषयको समझनेमें माथापच्ची नहीं करनी पड़ती है। जब हिन्दीको राष्ट्रभाषा बनना है तो इसे सभी प्रदेशों एवं धर्मोंकी शब्दावलीको पचाना पड़ेगा और तभी सही मानेमें इसे गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त होगा। 'अपने' की जगह 'मेरे-तेरे' के प्रयोग यत्किंचित खटकते हैं। मराठी पदोंके अर्थ भी दे दिये जाते तो अच्छा होता कारण कि इसे पढ़नेवाले अधिकतर लोग गैर-मराठी भाषी होंगे। एकवचन वाली दीर्घ ईकारान्त और ऊकारांत संज्ञाओंको बहुवचन में भी यथावत रखा गया है जबकि उन्हें ह्रस्व कर देने चाहिये था। पुस्तकके नाम एवं लेखकके नामके विवरण में भी लोगोंको भ्रम हो सकता है।

—वैद्यनाथ शर्मा

विजयके सूत्रधार श्री जगजीवनराम : व्यक्तित्व एवं संस्मरण

लेखक : डॉ० अशोककुमार वर्मा; प्रकाशक : पंजाबी पुस्तक भण्डार, दरीबा कला, दिल्ली—६। पृष्ठ:३३०; क्राउन, ७२; मूल्य : १०·०० रु०

भावुकताका अतिरेक किस प्रकार जीवनी या संस्मरण को प्रशस्तिपरक कीर्तनका रूप दे देता है, इसका यह पुस्तक श्रेष्ठ उदाहरण है। श्री जगजीवनरामके राजनैतिक एवं सामाजिक कर्तृत्य से इन्कार नहीं किया जा सकता। स्वर्गीय भीमराव अम्बेडकर के उपरान्त वे दलित समाजके एक प्रमुख दिशा-निर्देशक एवं सुधारक रहे हैं। फिर भी जिस प्रकार सर्वत्र भावावेशकी स्थिति दिखायी देती है उससे पुस्तक जीवनी या सन्मरण के संतुलित, लेखक स्वरूप से हटकर चौराहेके भाषणपतिके निकट पहुँच जाती है। प्रारम्भके 'परिचय' में ही, "आइये हमारे साथ। आज हम एक अद्भुत भागवत् पुरुषके दर्शनको चलें" कहकर लेखक इस बात पर आ जाता है—"आज तक इनके पाससे कोई निराश नहीं लौटा है। ये औढ़रदानी जो ठहरे। इनकी झोलीमें आप जो चाहेंगे सब मिलेगा।"

श्री जगजीबनरामका सम्पूर्ण जीवन एवं कृतित्व देश की राजनीतिके सन्दर्भमें प्रस्तुत हुआ है और यही इस ग्रन्थ की विशेषता है। ऐसा लगता है कि हम देशके स्वतन्त्रयोतर इतिहास को पढ़ रहे हैं। दलित समाजकी क्रमशः जागृति एवं समाजकी बदलती मनोवृतिका चित्रण बड़े सुन्दर ढंग से हुआ है। पुस्तकोंमें उद्धरणों एवं कथाओंका कलेवर कुल सामग्रीका चालीस प्रतिशत है। उद्धरण एवं बोधकथाएँ जहाँ पुस्तकको पाठनीय बनाने में सहायक रहा है, वहीं अनावश्यक विस्तार एवं प्रसंगांतर भी करती है। अच्छा होता मूल कथनकी ओर अधिक ध्यान दिया जाता।

लेखकने कहीं-कहीं स्पष्टवादिकताका परिचय दिया है। प्राचीन आर्योंके गोमांस-भक्षणका जगजीवनरामजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा समर्थन कर चोरीका आरोप, युवा तुर्कोंका विरोध आदि प्रसंग उठाकर लेखकने बेइज्जत दूसरा पहलू भी सामने रखा है। यह बात अलग है कि अन्तमें उन्हीं का पक्ष लिया गया है। इसीके साथ जब लेखक अपनी ओरसे लम्बे-लम्बे उद्धरण देकर जगजीवनरामजीके पक्षका समर्थन करने लगता है तो उसकी सार्थकता समझ में नहीं आती।

रक्षामन्त्रीके जीवनके समस्त पहलुओंको लेखकने ध्यानमें रखा है। राजनीतिक क्षेत्रके साथ-साथ उनके व्यक्तिगत जीवनमें व्याप्त हिन्दुत्त्व-निष्ठा, विनोदप्रियता और सादगी आदि प्रसंगों परभी प्रकाश डाला गया है। परदेके आड़की कुछ जानकारी भी दी गयी है। नेहरूजी के सन्दर्भ में यह कथन विचारणीय है, "वे (नेहरू) नहीं चाहते थे कि बाबूजी अपनी कार्यक्षमता और दक्षता से ज्यादा प्रभावशाली और लोकप्रिय बने;" या "नेहरूजीकी शुरूसे यह प्रवृत्ति थी कि वे अपनी हाँ में हाँ मिलाने वाले व्यक्तियोंको ही ज्यादा पसन्द करते थे।

रक्षा-मन्त्रीपर लिखी कविताकी संगति समझमें नहीं आती। इतना तो मानना पड़ेगा कि लेखककी रोचक शैली पुस्तकको पठनीय बनाये रखी है

साहित्य जगत्के विनोवा : बख्शीजी

लेखकः नर्मदाप्रसाद खरे; प्रकाशः लोकचेतना प्रकाशन जबलपुर। पृष्ठ १३२; क्रा. ७२; मूल्यः५·००।

नर्मदाप्रसाद खरे एक मंजे हुए लेखक है (वे कवि भी हैं)। उनकी लेखनीसे निकली यह पुस्तक एक सर्वांगपूर्ण जीवनीका उदाहरण प्रस्तुत करती है। हिन्दी साहित्य-जगतमें बीच का एक अर्सा ऐसा गुजर गया जिसमें नयेपन की झोंक में पुराने साहित्यकारों को एकदम भुला दिया गया। सवाल नयेपनका न होकर टिक पानेवाली रचनाओंका है। स्वर्गीय पदुमलाल पन्नालाल बख्शीने हिन्दी साहित्य की काफी सेवा की है। इस नाते उनकी सेवाओं का स्मरण करानेवाला यह ग्रन्थ एक स्तुत्य प्रयास है।

ग्रन्थमें व्यक्तित्व एवं कृतित्व दोनोंही पक्षोंका समावेश है। बख्शीजी के सौम्य और शान्त स्वभावका परिचय किसी कहानीके पात्र-परिचयसे कम रोचक नहीं यही हमें लेखक की लेखनीकी प्रौढ़ताका अभिमान होता है। बीड़ी-प्रेस, प्रकाशककी रिश्वत, चन्द्रकाता-संततिका मायाजाल आदि प्रसंग जहाँ बख्शीजीके जीवन के विभिन्न पहलुओंको प्रस्तुत करते हैं वहीं पुस्तक में सरलता का संचार भी करते हैं।

जीवनी यदि जीवन तक ही सीमित रह जायें तो वह अधूरी कही जायेगी। लेखकने पृष्ठभूमिके बतौर यहाँ साहित्य-जगतको भी लिया है। खेरागढ़ की रानी द्वारा वचन देने परभी मकान न देनेका प्रसंग सामन्तवादी मनोवृत्ति पर अच्छा व्यंग्य करता है। जब बख्शीजी ने "सरस्वती" का सम्पादन भार ग्रहण किया था तब हिन्दी की यह प्रसिद्ध पत्रिका महावीरप्रसाद द्विवेदीके व्यक्तित्वमें पूरी तरह डूबी हुई थी। बख्शीजीने उसे बड़े साहसके साथ आगे बढ़ाया। इनकी विशेषता यही है कि उन्होंने छायावाद कवियोंकी रचनाओंको मुखपृष्ठ पर प्रकाशित किया, जिनके प्रति द्विवेदीजी सामान्यतः अरुचि एवं रोष व्यक्त कर चुके थे। इस प्रकार उन्होंने सम्पादकीय अधिकार एवं व्यतिगत उदारता को सार्थक किया। बख्शीजी के 'विश्व साहित्जक' व 'हिन्दी साहित्य विमर्ग' ही वे समीक्षात्मक ग्रन्थ है जिनमें शुरू-शुरू में पाश्चात्य मानदण्डों को सन्तुलित रूप में ग्रहण किया गया। खरेजीने ठीक ही लिखा है, "वास्तवमें आधुनिक आलोचना प्रणालीके प्रवर्तक बख्शीजी हैं।" उनके साहित्यक जीवनके सभी पहलुओं का परिचय दिया गया है। कवि, कहानीकार, निबन्धकार समीक्षक एवं आत्मकथा लेखकके रूपमें वे हमारे सामने आये। इन सबकी झाँकी देकर खरेजीनेइस विस्मृत साहित्यकारके पुनर्मूल्यांकनकी आवश्यकता प्रतिपादितकी है। सम्पूर्ण बख्शी साहित्यका अलगसे विवरण शायद इसीलिए दियागया है। 'अपनी नजर में' प्रसंग में साहित्य के प्रति बख्शीजीके विचार दिये गये हैं। आवश्यक नहीं कि उनसे सहमत हुआ जाये।

बख्शीजीकी व्यक्तिगत विशेषता थी शिक्षा कर्मको प्रतिष्ठा देनेकी आमतौरपर शिक्षकको एक तेजहीन, निरीह प्राणी समझा जाता है, किन्तु उन्होंने अपनी निष्ठा, स्वाभिमान और साधनशुचितासे इस पदकी गरिमाको बढ़ाया। वे प्राचीन ऋषि परम्पराके एक सिद्धान्तिष्ठ शिक्षक थे।

वर्तमान साहित्य एवं साहित्यकारों पर बख्शीजीके विचारोंके सन्दर्भ में खरेजीके साहित्यपर भी प्रशंसात्मक हैं। इसे अधिक फील करनेकी आवश्यकता नहीं, आखिर पुस्तक-लेखकको इतनी सुविधा तो मिलना चाहिये। कुल मिलाकर पुस्तक संग्रहणीय है।

विलास गुप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्देशिका

भारतीय लेखक कोश

लेखक : रामगोपाल परदेशी; प्रकाशक-प्रगति प्रकाशन, बंतुल बिल्डिंग, आगरा—३; पृष्ठ ४४८; डिमाई, ७०; मूल्य : ६०·०० रु. ।

आलोच्य पुस्तकके बारेमें कहा गया है कि इसमें हिन्दी उर्दू, पंजाबी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, तेलुगु आदि भाषाओंके लेखकों और लेखिकाओंका परिचय है, किन्तु सत्य यह है कि इसमें मुख्यत: हिन्दीके लेखक और लेखिकाएं ही हैं। अन्य भाषाओंके लेखकोंके नाम बहुतही सीमित संख्यामें हैं। हिन्दीके भी मजे और पुराने लेखक कम हैं, नये ज्यादा हैं। पुस्तकमें ऐसे लेखकोंका उल्लेख है जिन्होंने छात्रावस्थाके दिनोंमें स्कूली-पत्रिकाओंमें लिखा था, बादमें उनका कोई योगदान नहीं हुआ। एक अन्य लेखकने रेडियोसे एक-दो गीत प्रसारित हुए और उनके गीतोंका एक संग्रह पुस्तकके प्रकाशनके समय प्रकाशनार्थ तैयार था। एक लेखककी केवल एक रचना प्रकाशित हुई। कई लेखकोंके बारेमें कहा गया है कि उनकी रचनाएँ प्रकाशनार्थ तैयार हैं। पुस्तकोंमें हिन्दी विभागाध्यक्षोंके नामोंको सम्मिलित करनेमें पूरी सजगता दिखायी गयी है। इस दृष्टिसे पुस्तक प्रकाशकोंके लिए बहुत उपयोगी है।

बहुतसे व्यक्तियोंके परिचयोंसे उनका व्यक्तित्व ही नहीं उभरता। पटना संग्रालयाध्यक्षके पदसे अभी हालमें निवृत्त डॉ. परमेश्वरीलाल गुप्तके बारेमें यह उल्लेख करना चाहिये था कि वे भारतीय सिक्कोंके अधिकृत विद्वान हैं। ऐसे ही हैं मुकन्दीलाल बैरिस्टर, जिन्होंने गढ़वाली चित्रकलाको विशिष्ट चित्रशालीके रूपमें प्रतिष्ठित किया। "विशाल भारतके" भू. पू. सम्पादक बनारसीदास चतुर्वेदी के विषयमें उल्लेखनीय है कि उन्होंने क्रान्तिकारियों और प्रवासी भारतीयोंके लिए बहुत कुछ किया है। सीतामऊके डॉ. महाराजकुमार रघुबीरसिंहका भारतके मध्यकालके इतिहासपर गहरा अध्ययन है। उन्होंने अपना इतना विशाल पुस्तकालय बनाया है कि मध्य कालके इतिहासपर शोध करनेवालोंके लिए वह आकर्षणका केन्द्र है। रजिया सज्जाद 'जहीर', सजाद जहीरकी पत्नी तो हैं ही, किन्तु उर्दू कथा-साहित्यमें उनका अपना विशिष्ट स्थान है। एक लेखकके बारेमें कहा गया है कि उन्होंने मैथिली लोक-साहित्यपर ठोस कार्य किया है, किन्तु लोकगीतोंके लिए देशके कोने-कोनेकी यात्रा करनेवाले देवेन्द्र सत्यार्थीके बारेमें केवल मात्र यह कहा गया है कि उनका व्यवसाय लेखन है। अंग्रेजीसे हिन्दीमें अधिकृत शब्दकोषके रचयिता कामिल बुल्केके बारेमें कहा गया है कि वे कई पुस्तकोंके लेखक हैं। भगवतीचरण वर्माकी रचनाओंमें उनकी महत्वपूर्ण कृति 'चित्रलेखा' का उल्लेख नहीं है। प्रबोधकुमार मजूमदार मुख्यता बंगलासे हिन्दीमें अनुवाद करते हैं। महेश्वरदयालने दिल्लीके इतिहासपर ही लिखा है। सम्पतलाल पुरोहित केवल फिल्मी पत्रकार हैं। डॉ. गौरीशंकर सचानको व्यंग्यलेखक बताया गया है, लेकिन हरिशंकर परसाईको कहानीकार और उपन्यासकार कहा गया है। गौरीशंकर आजादके बारेमें उल्लेख है कि उन्हें हिन्द राष्ट्र कविकी उपाधि प्राप्त है, किन्तु सोहनलाल द्विवेदीका सेखन, लेख और निबन्धतक ही सीमित है।

हिन्दी कवियोंके बारेमें स्वयं बोलती कुछ टिप्पणियाँ ये हैं :

दिनकर—भारतके सर्वाधिक प्रतिनिधि कवि
हरिवंशराय 'बच्चन'—हिन्दीके सर्वाधिक लोकप्रिय कवि
सुमित्रानन्दन पन्त—हिन्दीके सुप्रसिद्ध कवि
उपेन्द्रनाथ 'अश्क'—हिन्दीके प्रतिष्ठित कवि
शिवमंगलसिंह 'सुमन'—प्रसिद्ध हिन्दी कवि
भवानीप्रसाद मिश्र—हिन्दीके मूधर्न्य गीतकार।
महादेवी वर्मा—हिन्दीकी सर्वश्रेष्ठ कवयित्री
सुमित्राकुमारी सिन्हा—हिन्दीकी मुख्य कवयित्री
अज्ञेय—नयी कविताके प्रवर्त्तक कवि
धर्मवीर भारती—नयी कविताके अत्यन्त समर्थ कवि
जगदीश गुप्त—नयी कविताके प्रमुख कवि
दृष्यन्त कुमार—नयी कविताके प्रतिनिधि कवि
गिरिजाकुमार माथुर—तार सप्तकके प्रमुख कवि
केदारनाथसिंह—तीसरे सप्तकके कवि, नयी कविताके चर्चित कवि
देवकीनन्दन कुम्हेरिया द्वीपके—ब्रज भाषाके प्रमुख कवि

कई लेखकोंके नाम दो बार दे दिए हैं. जैसे धीरेन्द्र वर्मा (पृष्ठ १५० और ४१३), डॉ. रामकुमार वर्मा—(पृष्ठ २४५ और २४७) और डॉ. भगवतशरण उपाध्याय (दोनों पृष्ठ ४२४)।

मनमोहन वर्मा]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्र-पत्रिकाएँ

अनुशीलन (रामकाव्य विशेषांक)

सम्पादक : डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर; प्रकाशक: हिन्दी-विभाग, कोचिन विश्वविद्यालय, कोचिन (केरल) । पृष्ठ : १४८; डिमाई, ७२ ।

कोचीन-विश्वविद्यालय में हिन्दी-विभाग की स्थापना को अभी बहुत अधिक समय नहीं हुआ किन्तु इसी बीच इसने अपने विभागाध्यक्ष डॉ. विश्वनाथ अय्यरके निर्देशन-में शोध-विषयक पर्याप्त प्रगतिकर ली है। 'अनुशीलन' विश्वविद्यालयका शोध प्रधान वार्षिक संकलन है और प्रस्तुत अंक मानस-चतुश्शतीके सन्दर्भमें प्रकाशित राम-काव्य-विशेषाँक है ।

इसमें १४ लेखोंका संकलन है, जिनमें प्रथम तीन लेख उत्तर भारतीयोंके और शेष दक्षिणी हिन्दी-विद्वानोंके हैं। समस्त लेखोंको तीन वर्गोंमें विभाजित किया गया है—१-मानस-सम्बन्धित लेख (१—६), २-मलयालमके रामकाव्य (७—११) और ३-अन्य द्रविड़ भाषाओंके रामकाव्य (१२—१४)

● प्रथम वर्गके प्रथम निबन्ध 'रामचरितमानस' में श्री सीताराम चतुर्वेदीने सम्भावना प्रकट की है कि गोस्वामीजीने अयोध्यामें रहकर केवल १५-१६ दिनमें मानसकी रचनाकर डाली थी। पृष्ठ ६ पर उन्होंने मानसकी महत्ता प्रतिपादितकी है। मानस क्या है, इसकी रचना क्योंकी गयी, किसनेकी और क्योंकी—इन प्रश्नोंपर भी विचार किया गया है ।

'तुलसीका सौन्दर्य बोध' डॉ. रामरतन भटनागरका एक गम्भीर लेख है। आप मानते हैं कि सौन्दर्य-बोधके लिए तप चाहिए, वाणीको समय चाहिए। सौन्दर्य-सृष्टिके लिए कल्पनाका नियन्त्रण आवश्यक है। तुलसीकी दृष्टि अंगोंकी मांसलतापर नहीं रुकती, आत्माकी पवित्रतातक जाती है। बड़ी तैयारीके बाद 'मानस' के लेखनमें तुलसीने जिस संयम, सौष्ठव और सन्तुलनका परिचय दिया है, वह विश्व साहित्यमें भी अप्रतिम है। भटनागरजी को यह विचारपूर्ण लेख यदि उदाहरण-परिपुष्ट होता तो सरस भी हो जाता ।

डॉ. रामेश्वर दयालु अग्रवालका 'कम्बन् और तुलसी' का तुलनात्मक मूल्यांकन एक विशिष्ट लेख है। वस्तुतः इसे तृतीय वर्गमें आना चाहिये था। डॉ. अग्रवालने दोनों कवियोंकी कई दृष्टियोंसे तुलनाकी है। दोनोंने उत्तरकाण्ड की कथाका बहिष्कार किया है, दोनोंने राम सीताके पूर्व रागका वर्णन किया है। दोनोंके धार्मिक, राजनीतिक एवं सामाजिक विचारोंमें समानता है। नारीके प्रति कम्बन् अधिक उदार थे, क्योंकि वे तुलसीदासके समान सन्त नहीं थे। गोस्वामीजी ने सीता अथवा अन्य किसी नारीके शारीरिक सौन्दर्यका वर्णन नहीं किया, जबकि कम्बन्ने किया है और वे इसमें सफल भी हुए हैं। उन्होंने सुन्दरियोंके केशोंको पके अमलताश उदरको वटपत्र, नितम्बोंको रथका मध्य भाग (जहाँ रथी बैठता है) अथवा सर्पफणके सदृश तथा भुजाओंको हरे बाँसके समान बताया है। तुलसी कम्बनकी उपेक्षा पुरुष-सौन्दर्यका अधिक हृदय-ग्राही चित्रण करते हैं ।

सुश्री बी. शुशीला ने 'रामचरित्रमानसकी सामाजिकता' पर प्रकाश डाला है तो सुश्री बी. पद्मिनीने रामचरित-मानसकी सूक्तियोंका सौन्दर्य वर्णन किया है। दोनों महिलाओंने अपने-अपने क्षेत्रमें परिश्रम किया है प्रथमने तुलसीकी नारी-विषयक दृष्टिपर भी उदारता-पूर्वक विचार किया है। पद्मिनीजी सूक्तियोंपर शोधकार्य कर रही हैं। उन्होंने जो उदाहरण प्रस्तुत किये हैं, क्या वे सब सूक्तियोंके अन्तर्गत आते हैं? ऐसे तो मानसकी प्रायः प्रत्येक पंक्ति ही सूक्ति बन जायेगी, है भी कुछ ऐसा ही; तथापि मेरा नम्र परामर्श है कि सूक्तिकी परिभाषा-कसौटीपर खरी उतारनेवाली विशिष्ट उक्तियोंको लेकर ही पद्मिनीजी अपना महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पादित करें कार्य तो अधिक उपादेय होगा। एक अन्य महिला डॉ. एल. सुनीताने कैकेयीके कलंक—निवारण' पर प्रकाश डाला है ।

● द्वितीय वर्गमें श्री के. करुणाकरन एषुमंगलमने अपने लेख 'मलयालममें समकाव्य—संक्षिप्त सर्वेक्षण' में मलयालमके प्राचीन प्रकीर्ण लोकगीतोंसे उपलब्ध रामकथा का वर्णन करते हुए आधुनिक साहित्यतक रामकथाके विकासका संक्षिप्त रूप प्रस्तुत किया है ।

केरलीय समाजमें बहुत पहलेसे रामविषयक गीतोंका गायक होता था। आजभी सन्ध्या-समय 'रामसंकीर्तन रामकाव्य होता है। लेखकके मतानुसार पहलेके प्रमुख मलयालममें इन्हीं लोकगीतोंकी विधापर लिखे गये थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकारके साहित्यको 'पाट्टु' कहा जाता है। 'रामचरितम् पाट्टु (१२वीं शती) मलयालमका प्राचीनतम रामकाव्य है, इसके रचयिता श्रीचीरामन माने जाते हैं। यह एक वीर काव्य है। पी. एम. जोसफने अपने निबन्धमें लिखा है कि सम्पूर्ण रामायणका वर्णनकर इसमें संसारके अल्पबुद्धियोंके लिए रामकथाका थोड़ा-सा भाग प्रस्तुत किया गया है। इसका प्रतिपाद्य युद्धकाण्डकी कथा है। इसमें सीता-विलाप और रावण-विलापके रूपमें करुण रसका चित्रण हुआ है।

दूसरी 'पाट्टु' रचना रामकथा पाट्टु है। इसकी भाषा उस समयकी है, जबकि मलयालमपर तमिषका प्रभाव था। इस ग्रन्थका गायन 'चन्द्रवलयम' बाद्यके साथ विष्णु मन्दिरोंमें होता है। डॉ. एन. रामन नायरने इस ग्रन्थपर अपने स्वतन्त्र लेखमें इसका रचनाकाल १३-१४वीं शती बताया है। इसके लेखक थे एक कृषक श्री आशान। 'आशानका काव्य वीर इतिहास-काव्य है, तुलसीका भक्तिकाव्य। पारायण सुख अभिनेयता के गुणमें रामचरित्रमानस और रामकथापाट्टु में अपूर्व समानता है।' इस गेय महाकाव्यमें अनेक कलात्मक विशेषताएँ बतायी गयी हैं—यथा, धनुष चढ़ाते रामकी स्थिति और बाण-आहत बालिका रामके प्रति कथन। इस कविका हास्य-व्यंग्य भी उल्लेखनीय है। प्रथम दिनके युद्धमें हारकर भागते हुए रावणपर अच्छी फबतियाँ कसी गयी हैं।

'कृष्णशश-रायायण' १४वीं शतीके रामपणिक्कर (कृष्णशशन) की रचना है। रामकाव्यको मलयालमकी साहित्यिक काव्य परम्परामें स्थान देनेका प्रयत्न पहले पहल इन्होंने ही किया।

'रामायण चंपू' १५वीं शतीके पूनम नंपूतिरिकी रचना है। इसमें मणिप्रवालम् काव्यपद्धतिका आदिमस्वरूप है। तुंचत्तु रामनुजन एवुत्तच्छनके रामकाव्यंका संक्षिप्त परिचय डॉ. रामचन्द्र देवने दिया है। एषुत्तच्छनका जन्म १६-१७वीं शतीमें मलाबारमें हुआ था। इनके युगमें पुर्तगालियोंके अत्याचार हो रहे थे, देशी राजा आपसमें जूझते रहते थे। इस कविने जनमानसमें नयी आशाका संचार किया। 'उसकी सत्प्रेरणाके कारणके केरलीय समाज अनेक विसंगतियोंसे अपनेको बचा सका। शूद्र-जातीय एषुत्तचछनने ब्रह्मनाथके प्रति समादरका भाव व्यक्त किया है। उनकी अध्यात्य रामायणम्, संस्कृतकी अध्यात्म रामायणका छायानुवाद ही कही जायेगी। कथा, चरित्र आदिकी दृष्टिसे इसमें मौलिकता है। इसके राम तुलसीके रामके ही समान मन्मथ शतकोटि सुन्दर, अत्यन्त सुशील एवं परदुःखकातर हैं।

डॉ. एन. रामन नायरने रामकथापाट्टु पर लिके अपने निबन्धमें एषुत्तच्छनकी भाषापर भी विचार किया है। उन्होंने लिखा है कि मलयालम भाषाकी दो धाराएँ थीं, प्रथम धारामें तमिषके शब्दोंका बाहुल्य था और इसमें लिखे काव्य पाट्टु कहलाते थे। संस्कृतधाराकी रचनाएँ मणिप्रवालम् कहलाती थीं। यह स्थिति एषुत्तच्छनके समयतक रही थी, इन्होंने दोनों धाराओंको मिला दिया और केरलमें परिनिष्ठत भाषाशैलीको प्रचार किया। इसीलिए ये मलयालमके पिता कहलाते हैं।

डॉ. एन. ई. विश्वनाथ आयरने केरल वर्ग रामायण पर निबन्धमें लिखा है कि इस रामायणके रचयिता केरल वर्मा १६४५ ई. में उत्पन्न हुए एवं ईर्ष्यालु जनोंके द्वारा १६९६ में मार डाले गये। केरलमें 'अध्यात्म रामायणम्' की लोकप्रियताके कारण आव 'केरल वर्ग रामायण' विस्मृतप्राय हो गयी है। इसमें पाँच काण्ड हैं। युद्ध काण्ड और किसीका रचा हुआ है। कविकी शब्दावली बड़ी सरल, भावमधुर और सहज अनुप्रासके कारण नाद-लय युक्त बतानी गयी है। इसमें सुन्दर सम्वादोंका भी समायोजन है। परशुराम-सम्वादमें कवि अपनी ओरसे जोड़ देता है कि परशुराम रामके हाथों में वैष्णव धनुष समर्पित करनेके बाद केरल चले गये और वह भूखंड कश्यपको दानमें दिया।

श्री एषुमंगलमयने रामकाव्यका सर्वेक्षण करते हुए उपर्युक्त कुछ रामकाव्यों तथा कुछ अन्य काव्योंका संक्षिप्त परिचय देते हुए लेखान्तमें ५७ राम कथा विषयक मलयालम ग्रन्थोंकी सूची दी है।

● तृतीय वर्गमें आता है 'अन्य द्राविष भाषाओंमें रामकाव्य'। अपने निबन्ध—'कन्नडमें रामकाव्य' में डॉ. एम. एस. कृष्णमूर्ति बताते हैं कि इस भाषाके साहित्यमें रामायणकी एक विस्तृत परम्परा रही है, कुमार व्यासकी इस पंक्तिको वे प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत करते हैं—'रामकथाके कवियोंके भारसे शेषनाग डोल उठा।' कन्नडमें उपलब्ध रामकाव्योंको तीन श्रेणियोंमें बाँटा गया है—१—जैन रामायण २. वैदिक रामायण और ३. तान्त्रिक रामामण। जैन रामायणोंका अपना वैशिष्ट्य है, यद्यपि उनमें कथाको विकृत किया गया है। वैदिक रामायणोंमें नरहरिकी तोखे रामायण (१५०० ई.) का सर्वाधिक महत्त्व है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसमें केवल छहकाण्ड हैं इसमें कई नहीं उद्भावनाएँ भी हैं। तान्त्रिक रामायणोंके अन्तर्गत मुख्य ग्रन्थ मुद्रण कृत 'अद्भुत रामायण' हैं, जिसमें भगवान् रामसे भी मूल प्रकृति रूपिणी सीता बड़ी बतायी गयी हैं। निबन्ध-लेखकने आधुनिक युगके रामकाव्योंमें डॉ. के. वी. पुट्टपाजी (कुवेंपु) के 'रामायण दर्शन' का विशेष उल्लेख किया है। यह ग्रन्थ साहित्य एकेडमी और ज्ञानपीठ द्वारा पुरस्कृत हुआ है। 'महाछन्दस' नामक अमिताक्षर छन्दमें लिखित यह महाकाव्य आधुनिक युगके विचारोंको भी अपनेमें समाहित किये है। पन्तजीकी भाँति कुवेंपुजीने इसमें नव चेतनावाद (आध्यात्मिक विकासवाद) का प्रतिपादन किया है। चरित्रकी दृष्टिसे भी नवीन उद्भावनाएँ हैं, उर्मिला तपस्विनी है और रावणभक्त है। सीता-त्यागके बदले राम स्वयं अग्नि-प्रवेश करते हैं।

'हिन्दी और कन्नडके रामकाव्य'—एक तुलनात्मक अध्ययनमें डॉ. एस. एम. रामचन्द्र स्वामी लिखते है कि १५८० ई. के पूर्व कन्नडमें जैन रामकाव्य लिखे गये थे; इसके पश्चात् वैदिक रामकाव्योंका सृजन हुआ। हिन्दीमें १५०० ई. के पूर्व कोई विशेष रामकाव्य उपलब्ध नहीं होता। 'आज हिन्दी साहित्यकी एक सर्वश्रेष्ठ कृति एक रामकाव्य है और हिन्दी साहित्यके कवि सम्राट् हैं। एक राम कथाकार, पर यह सौभाग्य कन्नडके रामकाव्योंको उपलब्ध नहीं हुआ। यहाँ तो वह स्थान महाभारतको प्राप्त है। लोकप्रियताकी दृष्टिसे भी कन्नडके रामकाव्य हिन्दीके रामकाव्यकी समता नहीं कर पाते।.......जैन कवियोंके रामकाव्य साम्प्रदायिक ही नहीं थे, वरन् वस्तु-विधान, शैली तथा भाषाकी दृष्टिसे अपेक्षाकृत जटिलभी थे। अतः जैन परम्पराके रामकाव्य लोक जीवनको हिन्दी रामकाव्योंकी भाँति अनुप्राणित नहीं कर सके। इतनाही नहीं जैन धर्मावलम्बी जनताके बीचभी ये काव्य अधिक लोकप्रिय रहे हों, ऐसा दीख नहीं पड़ता।'

'तेलगुमें रामकाव्य' निबन्धमें डॉ. के रामनाथनने घोषणा की है कि आन्ध्रमें रामकथा, रामनाथ आदिकी जितनी लोकप्रियता है, उतनी शायदही किसी प्रदेशमें हो। आन्ध्रमें असंख्य रामभजनमन्दिर, राममन्दिर और रामभक्त संघ बताये गये हैं। रामभक्तिसे सम्बन्धित 'भद्राचलम्' का पुण्य क्षेत्रभी यही है। विद्वान निबन्धकारने आन्ध्रमें उपलब्ध असंख्य रामकाव्योंको अनेक शीर्षक उप-शीर्षक देकर विभाजित किया है। इनका विशद परिचय देनेका अवसर इस निबन्धमें नहीं था। उसने आधुनिक कवि सम्राट् विश्वनाथ सत्यनारायणके प्रसिद्ध ग्रन्थ 'रामायण कल्प वृक्षम्' (ज्ञानपीठ द्वारा पुरस्कृत) की भी चर्चा की है।

पुस्तकके परिशिष्टमें तेलुगुके प्रसिद्ध रामकाव्यों—रंग-नाथ रामायण, भास्कर रामायण, रामाभ्युदयमु, मोल्ल रामायण और रामायण कल्प वृक्षका संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

इस प्रकारके लेख संग्रह उत्तर-दक्षिण भारतके मध्य सेतु बन्धका कार्यकर देशकी भावात्मक एकतामें सहायक सिद्ध होते हैं। दक्षिणके विद्वानोंने श्रमपूर्वक राष्ट्रभाषा सीखी और उसमें इतनी गति प्राप्त करली कि उसे शुद्ध रूपमें लिखकर अपने गम्भीर विचार व्यक्त किये। आज हिन्दी शोध छात्रोंकी संख्या निरन्तर जैसें जैसे बढ़ती जाती है, शोधके विषय वैसे ही कम पड़ते प्रतीत होते हैं। यदि हिन्दी भाषी शोध छात्र सचमें साधनापूर्वक कोई ठोस कार्य करना चाहते हैं तो वे दक्षिणकी कोई भाषा सीखें, फिर उन्हें शोध विषयोंके अकालकी अनुभूति नहीं होगी। 'अनुशीलन' का यह रामकाव्य विशेषांक ही तुलनात्मक अध्ययनके लगभग एक दर्जन विषय सुधार सकता है। इस विशेषांकमें किसी एक विषयपर बहुत गहराई तक प्रवेश का अवकाश नहीं था। मेरा अनुरोध है कि 'अनुशीलन' का कोई ऐसा भी विशेषांक प्रकाशित हो, जिसमें इन्हीं विषयोंमें केवल चार पाँच पर विस्तार सहित विचार किया जाये।

रामचरित मानस चतुश्शतीके अवसरपर मैं इस प्रकार के प्रयासका अभिनन्दन करता हूँ।

—डॉ. रमानाथ त्रिपाठी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किशोर-बाल साहित्य

पिंकूके कारनामे

लेखक : कार्लो कलौदी ; रूपान्तर : विश्वनाथ गुप्त ; प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली–१ । पृष्ठ : ११५ ; रायल, ७२ ; मूल्य : ३.२५ रु.

फंतासी बच्चोंकी कल्पनाको वास्तविकता प्रदान करती है। जिस असम्भवके बारेमें बच्चे अपने कल्पनाजगत्में निराश हो जाते हैं, उसे सम्भव बनाकर फंतासी उनके मन को गुदगुदा देती है। गुड़ियों से खेलना और बातें करना बच्चोंके अपने कल्पना जगत्की उपज होती है। और अगर कहीं वह गुड़िया सचमुचही बातें करने लगे, इधर-उधर घूमने लगे तो बच्चोंको कितनी खुशी हो। किन्तु वास्तवमें ऐसा नहीं होता। यदि सम्भव होता है तो फंतासीकी सहायतासे जो उनके कल्पानागतकी बातोंको इतना सजीव बना देती है कि वे उसमें विचरण करते समय सबकुछ भूल जाते हैं। बच्चोंकी मनकी बातोंका तादात्म्य जब इस तरह स्थापित होता है तो वह उनके लिए बड़ी सुखद स्थिति होती है। बाल-कहानियोंके लेखककी सफलता इसी तादात्म्यकी स्थितिको समझने और कथामें उसे प्रस्तुत करनेमें निर्भर करती है। विश्वकी अनेक महान् कृतियोंकी सफलताका रहस्य यही रहा है और वे इतनी शाश्वत हैं कि आजभी बच्चे उन्हें उतनीही रुचिसे पढ़ते हैं।

कार्लो कलोदीने गुड़ियोंके संसारसे बच्चोंके सम्बन्धोंको देखा-परखा था और उसीसे प्रभावित होकर उन्होंने एक ऐसे पुतलेकी कल्पना की जो बना तो था काठका, पर काम करता था बिलकुल बच्चों जैसा। यह चरित्र बच्चोंके लिए न केवल अनोखा है, बल्कि वे उसे अपनेही जैसा समझने लगते हैं। उसके सारे कार्यकलापभी बच्चोंके ही समान होते हैं और वे उनमें इतने घुलमिल जाते हैं कि बिलकुल भूल जाते हैं कि यह लकड़ीका बना है। पिंकू (कठपुतला) जब स्कूल पढ़ने जाता है तो लड़के उसकी खिल्ली उड़ाते हैं। पिंकू पहले तो चुप रहा, पर जब बर्दाश्त न कर सका तो सबसे बदमाश लड़केकी पीठपर उसने एक लात जमा दी। "ओह ! कितना कड़ा है इसका पैर।" कहकर उस लड़केने जब ध्यानसे उसे देखा तो आश्चर्यसे भर गया कि यह लकड़ी का बना है।

'पिंकू' के कारनामे'—अंग्रेजीके प्रसिद्ध बालकथा-ग्रन्थ 'पिनेको' का अनुवाद है। लेखकने 'पिंकू' को एक ऐसे चरित्रके रूपमें प्रस्तुत किया है जो बड़ोंका कहना नहीं मानता, पढ़ने-लिखनेमें मन नहीं लगता, व्यर्थके कामोंमें समय नष्ट करता है। किन्तु धीरे-धीरे वह अपनी भूलोंको समझने लगता है और पछताता है। सौभाग्यवश वह कठपुतली एक दिन हाड़-मांसके लड़केमें बदल जाता है।

पुस्तककी पूरी कथा एक सशक्त फंतासीके रूपमें है जिसका ताना-बाना यथार्थके धरातलपर किया गया है और अन्तमें बड़ी ही कुशलतासे लेखकने उसे आजके जीवनसे जोड़ दिया है।

पुस्तक छपाई, चित्र आदि सुन्दर हैं। अनुवाद सहज और बोधगम्य है।

—डॉ. हरिकृष्ण देवसरे

'आचार्य द्रोण'

'महाराणा राजसिंह'

लेखक : कुणाल श्रीवास्तव; प्रकाशक—उमेश प्रकाशन, ५, नाथ मार्केट; नई सड़क, दिल्ली-६; पृष्ठ क्रमशः १११,६५; क्रा० ७२; मूल्य ३.०० रुपये प्रत्येक।

'आचार्य द्रोण' में महाभारतके अमर पात्र द्रोणाचार्यके जीवन-चरित्रको उपन्यासके रूपमें प्रस्तुत किया गया है। महर्षि अग्निवेशके आश्रममें शिक्षा प्राप्त करनेवाला आचार्य द्रोणका बालसखा और सहपाठी द्रुपद जब पांचाल देशका राजा बन गया, तो उसने निर्धन द्रोणको अपने दरबारसे दुत्कार कर भगा दिया। और एक दिन कुरुवंशके एकसौ छह राजपुत्रोंने गुरु दक्षिणा स्वरूप द्रुपदको बन्दी बनाकर आचार्य द्रोणके आगे प्रस्तुत कर दिया। द्रोणने अपने अपमानका बदला ले लिया, मगर कुरुक्षेत्रकी लड़ाईमें द्रुपद-पुत्र धृष्टद्युम्नने अपने पिताके अपमानका बदला लेने के लिए द्रोणका सिर काट दिया। और प्रधान पात्र द्रोणसे जुड़ी हुई हैं एकलव्य, कर्ण, अर्जुन आदिकी कहानियाँ, जो हमें इस पुस्तकमें पढ़नेको मिलती हैं। पुस्तक बड़ी रोचक है। पुस्तककी छपाई तो ठीक है मगर प्रूफकी अनेक भूलें यत्र-तत्र-सर्वत्र बिखरी मिलती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजपूतानेमें मेवाड़के महाराणा राजसिंह ही एक ऐसे शासक थे, जिन्होंने औरंगजेबकी अधीनता स्वीकार नहीं की और जो उससे टक्कर लेनेका साहस कर सकते थे। औरंगजेबने रूप नगरके सामन्तकी बेटी प्रभावतीको अपनी बेगम बनाना चाहा, तो प्रभावतीने महाराणा राजसिंहको आत्मसमर्पण करते हुए एक पत्र लिखा। राजसिंहने उससे शादी कर राजपूती आनकी रक्षा की। औरंगजेबने जोधपुर—नरेश जसवन्तसिंहको छलसे मरवा दिया, तो महाराणाने उनकी विधवा पत्नी, लड़के और अनुचर दुर्गादासको भी शरण दी। अन्तमें महाराणाने लड़ाईमें औरंगजेबको ऐसी करारी मात दी कि फिर उसने कभी भूलकर भी राजपूतानेकी ओर नहीं देखा। कुणाल श्री वास्तवकी सहज-स्वाभाविक भाषा-शैलीमें लिखा महाराणाका शौर्य-साहसभरा यह चरित्र बड़ा रोचक है।

—ब्रजगोपालदास अग्रवाल

श्री अरविन्दायन

मूल गुजराती लेखक : पंडितराव रावल; हिन्दी अनुवाद : कु० धर्माभट्ट; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग पटियाला हाऊस; नयी दिल्ली। पृष्ठ : ४०; क्राउन दुगना, ७२; मूल्य ; ४.०० रु.।

आधुनिक भारतको दार्शनिक नवचिन्तन देनेवाले, बहुमुखी प्रतिमाके धनी महर्षि अरविन्दपर लिखी गयी इस पुस्तकमें उनके व्यक्तित्व, चिन्तन और दर्शनके सभी पहलू बड़ी कुशलतासे समाहित हैं। बचपनसे लेकर अरविन्द-आश्रमकी स्थापना और महाप्रयाणतककी जीवन-गाथाको लेखकने अत्यन्त सुबोध शैलीमें प्रस्तुत किया है। श्री अरविन्दका जीवन तथा दर्शन इस बीच कई पुस्तकोंमें प्रकाशित हुआ है। किन्तु यह पुस्तक इस अर्थमें उन सबसे पृथक है कि जिसमें भाषा और विचारोंकी दुरूहता नहीं आने पायी। लेखकका उद्देश्य भी यही था कि पुस्तक बालकों, किशोरों और विद्यार्थियों तथा कम पढ़े-लिखे लोगोंके काम आये। इस उद्देश्यकी पूर्तिमें लेखक अवश्य सफल हुआ है, ऐसा मेरा विचार है।

श्री अरविन्दका जीवन एक रोचक एवं प्रेरक कथा-कृतिके समान था। देश प्रेमके बीज उनके बचपनमें ही अंकुरित हो गये थे। जीवनको वह गहन चिन्तन और निःस्वार्थभावसे जीना चाहते थे। किसीभी कामको भविष्यके लिए छोड़ना उन्हें पसंद न था, क्योंकि वह उसके दुष्परिणामका परिचय पा चुके थे।

श्री अरविन्द योगी ही नहीं कुशल राजनीतिज्ञ, कवि और दार्शनिक भी थे। कविता लिखना उन्होंने सोलह और अठारह वर्षके बीच प्रारम्भ किया था और उनकी यह कला जीवन भर बनी रही। उनका 'सावित्री' महाकाव्य इसका प्रमाण है। उन्होंने देशको 'क्रांति' का मन्त्र दिया था। वे कहते थे—"मातृभूमिकी मुक्तिके लिए क्या आत्म बलिदान करना कठिन है? जीवनमें सुख प्राप्त करनेके लिए मनुष्य कितनेही कष्ट उठता है। देशकी स्वतन्त्रताके लिए किसीभी प्रकारका त्याग मुश्किल नहीं है। भारत स्वतन्त्र नहीं होगा तो मानवभी मुक्त नहीं होगा।"

और फिर जैसे-जैसे उनकी साधना गहन होती गयी, आध्यात्मिक चिन्तन बढ़ता गया तो वे उस महाशक्तिको खोज सके जो सर्वोपरि है। उस महाशक्तिका महाज्ञान, उनके ही शब्दोंमें एक ऐसी विद्या है, एक ऐसी शक्ति है जो अपनी फूँक मात्रसे यूरोपकी समस्त प्रचंड शक्तिको तिनकेकी तरह उड़ा सकती है।

पुस्तकके अनुवादकी भाषा सरल, सहज और बोधगम्य है। श्री अरविन्दके जीवन तथा दर्शनका परिचय प्रस्तुत कर बाल-पाठकोंको देशके इस महर्षिके बारेमें जानकारी देनेका यह प्रयास स्तुत्य है।

—डॉ० हरिकृष्ण देवसरे

चन्द्रशेखर आजाद

लेखक : सुरेन्द्र जोशी; प्रकाशक : उमेश प्रकाशन, ५, नाथ मार्केट, दिल्ली—६; पृष्ठ : १०४; क्राउन ७२, मूल्य : ६.०० रु.।

प्रस्तुत उपन्यास भारतके वीर सपूत चन्द्रशेखर आजादके जीवनपर आधारित है। लेखकने आजादके क्रान्तिकारी जीवनको बड़ेही रोचक ढंगसे चित्रित किया है। पुस्तककी रोचकता इसी बातसे स्पष्ट हो जाती है कि इसे एक बार शुरूकर अन्ततक पढ़े बिना बन्द करनेकी इच्छा नहीं होती। आजादके धैर्य और सूझबूझने कितनीही बार उन्हें स्वयंको और उनके दलको कैसी-कैसी कठिनाइयोंसे बचाया। इसका अच्छा परिचय यह पुस्तक कराती है। आजाद—जैसे निःस्वार्थ देशभक्तका चरित्र—ऐसे देशभक्तका चरित्र—ऐने देशभक्तका चरित्र जिसने विदेशी शासककी गोलीसे मरनेकी अपेक्षा अपनी गोलीसे मर जाना कहीं अधिक अच्छा। समझा—हमारे किशोरोंको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदैव प्रेरणा देता रहेगा। पृष्ठ ७२ पर २० अक्तूबरको साइमनके लाहौर पहुँचनेकी बात कही गयी है, और लाला लाजपतरायका देहान्त १७ अक्तूबरको बताया गया है। ऐसी भूल अच्छी नहीं।

—ब्रजगोपालदास अग्रवाल

अभिनय एकांकी

लेखक : विष्णु प्रभाकर; प्रकाशक : रंजन प्रकाशन बांकेविलास, सिटीस्टेशन रोड; आगरा-३ पृष्ठ ८०; क्राउन दुगना, ७२; मूल्य : २.०० रु.।

बच्चोंके लिए विशेष रूपसे लिखे गये मंचीय नाटकों की अभी-भी बहुत कमी है। आवश्यकता उन नाटकोंकी है, जो बच्चोंकी समस्याओंके कथानकोंपर आधारित हों, जिनकी भाषा-सम्वाद शैली उनमें ज्ञान-स्तरके अनुकूल हो, और जिन्हें वे स्वयं मंचपर प्रस्तुत कर सकें। विष्णुजीने बच्चोंके लिए ऐसे कई नाटक लिखे हैं, और प्रस्तुत पुस्तक उसी क्रमकी है। इसमें पाँच छोटे-छोटे एकांकी हैं। 'ईमानदार लड़का' में जहाँ, एक ओर बच्चोंके मनमें ईमानदारीका भाव जागृत करनेका प्रयास है, वहीं अमीर-गरीबका भेदभाव भूलकर सच्चे मानव-प्रेमकी स्थापनाभी की गयी है। 'न्याय' में सिद्धार्थ की प्रसिद्ध कहानी द्वारा 'हिंसा और अहिंसा' के भावको स्पष्ट किया गया है। 'पंच परमेश्वर' में पंचोंके फैसलेका महत्त्व बताया गया है। 'बहादुर बेटा' में देशभक्त बालकका चरित्र उजागर किया गया है, और 'साहसी-सन्दीप' में मानव-सेवाही सबसे बड़ी सेवा है, को प्रतिपादित किया गया है। सभी एकांकियोंके कथानक बाल-सुलभ मनोवृत्तियोंके अनुकूल हैं। अभिनेयता और मंच-व्यवस्था भी बच्चोंको ध्यानमें रखकर प्रस्तुत की गयी है। ऐसे मूर्धन्य लेखककी कृतिको और सुन्दर रूप में छापकर प्रकाशक गौरवन्वित होता।

—डॉ० हरिकृष्ण देवसरे

नैतिकता की कहानियाँ भाग

लेखक : सुशीलकुमार। प्रकाशक: राष्ट्रभाषा प्रकाशन १५/२३ राजेन्द्रनगर, नई दिल्ली। पृष्ठ: १२६ : क्राउन ७२; मूल्य ३.५० रु.

अपने पुत्रके हत्यारे इन्द्रसे बदला लेनेके लिए अमरावतीके निर्माता विश्वकर्मा त्वष्टाने अपने तपसे एक असुर युवक वृषके शरीरको ऐसा बना दिया कि दुनियाँका कोई अस्त्र-शस्त्र कुछ न बिगाड़ सके, मगर जब शक्ति मदमें अन्धे उस वृत्रासुरने समस्त पृथ्वीपर विनाश शुरू कर दिया और महर्षि दधीचितकको मार डाला, तो त्वष्टाने स्वयं उस अनाचारीको खत्म करनेके लिए दधीचिकी अस्थियोंसे एक अमोघास्त्र (वज्र) बनाकर इन्द्र को दे दिया। इसके अतिरिक्त पुस्तककी अन्य कहानियाँ ये हैं—देवगुरु वृहस्पतिके पुत्र कच द्वारा असुरोंके आचार्य शुक्रसे मृतसंजीवनी विद्या प्राप्त करना; अश्विनी कुमारों द्वारा बूढ़े-रोगी च्यवन ऋषिको युवावस्था प्रदान करना और च्यवनका अपने यज्ञमें इन्द्र और अश्विनीकुमारोंको एक साथ सोम-पान कराना; अंगशके युवराज शतधन्वाका अंगारक और उसकी भाभीकी सेवाओंके प्रतिदान स्वरूप अंगारकके अग्रज षड़-यन्त्रकारी अमात्य संगरको जीवन-दान करना; विदर्भराजकी उदारताके फलस्वरूप कोषका निरन्तर रिक्त होना और महामात्य एवं सुमेधकी सूझबूझसे स्थितिमें स्थायी सुधार होना।

'भारतीय इतिहासकी प्रामाणिक गौरव-गाथा तथा नैतिकता एवं सदाचारकी ओर प्रेरित करनेवाली रोचक एवं सशक्त कथाओं के संकलन' की योजनाके अन्तर्गत यह पुस्तक निकाली गयी है। भाषा-शैली निःसन्देह बड़ी रोचक है। प्रूफकी त्रुटियाँ कुछ अधिक ही हैं—'अग्निकी बेटी' (पृष्ठ ७); 'रथपर आडिग खड़ा' (२०); 'रथकी गड़गड़ाहट ओज भरने लगा' (२२); 'नारीका मृदुह्लास' (७२); 'साजपुत्री' (७२); 'मांव!' (८८)। छपाई अच्छी है।

—ब्रजगोपालदास अग्रवाल

नवीन प्रकाशनोंके
परिचय, विवेचन,
आलोचना और मूल्यांकन
का मासिक
'प्रकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जेबी पुस्तकें

समीक्षक : जीवन

जीवनी

भगवान महावीर

लेखक: गोकुलचन्द जैन; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, जो. टी. रोड, शाहदरा दिल्ली-३२। पृष्ठ:१२८; क्राउन ७३; मूल्य :२.०० रु० ।

भारतमें सांस्कृतिक क्रान्ति चेतना उत्पन्न करने वाले जिन दो महापुरुषोंको भगवानका स्तर मिला है। वे भगवान महावीर और भगवान बुद्ध थे, जिनके धर्मसे अधिक सामाजिक सांस्कृतिक थातीका प्रभाव भारतकी मिट्टीमें ढाई हजार वर्षोंसे छाया हुआ है, सिद्धार्थकी भाँति इस राजकुमारने भी महान ऐश्वर्यमें जन्म लेकर लोक कल्याण की भावनासे साधना और त्याग का मार्ग अपनाया और युगों से मानवको उस पथपर चलनेकी प्रेरणा दी। २५०० वां महावीर-निर्वाण-महोत्सव निकट है, उसे दृष्टिमें रखते हुए प्रकाशकोंने यह पुस्तक विशेष रूपसे लिखकर जन-सुलभ की है।

डॉ० गोकुलचन्द जैन तटस्थ लेखन और स्वस्थ चिन्तन के लिए प्रसिद्ध हो चुके हैं। उनके द्वारा लिखित इस छोटी पुस्तकमें भगवान महावीरके जीवन, दर्शन और परम्परा को समझनेमें उपयोगी योगदान किया गया है। महावीर को बहुत व्यापक दृष्टिसे देखते हुए पूर्व परम्परासे लेकर महावीरके जीवन और जीवन-दर्शनके साथ पच्चीस सौ वर्षकी विरासतकोभी आकलित किया गया है महावीर से प्रभावित साहित्य कलाकाभी विवरण है। जैन पन्थी रीतिरिवाजोंको बताया गया है। अन्तके बारह पृष्ठोंमें महावीर-सन्देशमें उनके अमर वचन उद्धत हैं।

आज के भारत के लोकतान्त्रिक धर्म निरपेक्ष आदर्श का महावीरके आदर्शसे सम्पर्क स्थापितकर विद्वान लेखक ने कहा है—"निसन्देह आज का युग महावीरके अधिक निकट आ रहा है।"

प्राक्कथन मुनि सुशीलकुमार ने लिखा है जिन्होंने स्वीकार किया है कि "एक लघुकाय पुस्तक में इतनी सामग्री इसके पूर्व देखनेमें नहीं आयी।" यह टिप्पणी पुस्तक का सर्वोत्तम प्रमाणपत्र है। यही इसकी विशेषता है। इसका हार्दिक स्वागत करते हुए मुनिजीके शब्दोंमें यही कामना है कि इसका विश्वव्यापी प्रसार हो ताकि हम अपनी परम्परा को और अच्छी तरह समझें तथा समाजवादी समाजको महावीर जैसे महापुरुषकी प्रेरणा से निर्मित कर सके।

प्रेरणात्मक संकलन

महापुरुषों के प्रेरणा-स्रोत

लेखक : सत्यकाम विद्यालंकार; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली ३२। पृष्ठ : १२८; क्राउन : ७३; मूल्य : २.०० रु.

श्री सत्यकाम विद्यालंकारने आधुनिक युगके विश्व-प्रसिद्ध विचारकोंके ऐसे विचारोंका संकलन प्रस्तुत किया है जो केवल विचार न रहकर विश्वास बन चुके हैं। इन विचारकोंमें कवि कलाकार—रवीन्द्रनाथ, नन्दलाल बसु, रोमां रोला, पिकासो, हक्सले, फाकनर, माम, पर्ल बक, ताराशंकर, हजारी प्रसाद आदि हैं। योगी समाज सुधारक महर्षि दयानन्द, अरविन्द, विवेकानन्द, रमण माने गुरुजी, विनोबाजी आदि हैं। राजनीतिक समाजसेवी महात्मा गान्धी, नेहरू, आजाद, जाकिर हुसैन, नरेन्द्रदेव आदि हैं। विद्वान वैज्ञानिक रसल, आइन्सटीन, राधाकृष्णन, लिन-युतांग, टायनबी, सम्पूर्णानन्द प्रभृति हैं। इस प्रकार ५० से अधिक प्राच्य पाश्चात्य महापुरुषोंके दो-दो चार उद्धरण सुरुचिसे संकलित किये गये हैं, प्रत्येक महापुरुषका दस-बारह पंक्तियोंमें संक्षिप्त जीवन परिचय जन्म-मृत्यु तिथियाँ भी दी गयी हैं। यदि उद्धरणका सन्दर्भ भी दिया जाता तो बेहतर था, तथापि संकलन संग्रहणीय है। युवा-वृद्ध सभी को प्रेरणा प्राप्त करने के लिए इसे सदा पास रखना चाहिये। संकलनकर्ता तथा प्रकाशक बधाही के पात्र हैं। मुद्रण सुन्दर है।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विविध—पाककला

स्वादिष्ट भोजनकला

लेखिका : अरुणा शेठ; रूपान्तर : कृष्णा विकल; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली, ३२ । पृष्ठ:७३; मूल्य : २·००

गृह विज्ञान महिलाओंके लिएतो अनिवार्य है ही आजके होटलजीवी युगमें पुरुषोंके लिए भी । पाककला पर पुस्तकें काफी कीमती होती हैं, इसलिए प्रस्तुत सुलभ पुस्तकका स्वागत है । अरुणा शेठ ये 'द न्यू इन्डियन कुक बुक' मोपंक अंग्रेजी पुस्तक लिखी है जिसका रूपान्तर प्रस्तुत किया गया है, श्रीमती शेठने विदेशमें भोजनका अध्ययन किया है ओर काफी कार्यक्रम प्रस्तुत किये हैं । प्रस्तुत पुस्तक में २५० प्रकारके भारतीय भोजन बनाने के नुस्खे दिये गये हैं । ठण्डे, मीठे व्यंज़न, रसदार मिठाइयाँ बर्फी, पकवान, सलाद, उत्तर "भारतके प्रिय पकवान — सब्जियां, चावल शाहकारी, पुलाव, नास्ते, गुजरात, महाराष्ट्र, दक्षिण भारतके प्रिय पकवान, चटनियाँ, रायते का विवरण है । बचे हुए भोजनका उपयोग और अन्न रहित पकवान बनानेका तरीका बताया गया है । इस प्रकार भारतीय निरामिष भोजन का विशद विवरण है । आरम्भमें संक्षेपमें सन्तुलित आहारपर विचार किया गया है । इस व्यावहारिक पुस्तकका उपयोग पढ़ने और कार्यान्वित करनेमें हैं कुशल गृहणियाँ अपने अतिथियों का प्रियजनोंका आदर करनेमें इससे सहायता प्राप्त करेगीं ।

रूमानी उपन्यास

बिछड़े साथी

लेखक : पारस; प्रकाशक : पुष्पी पाकेट बुक्स, बाईका बाग, इलाहाबाद; पृष्ठ १५१; ७३; मूल्य : २·००रु०

तिकोनी तस्वीरें

लेखक और प्रकाशक: वही । पृष्ठ १४० पृ० ७३; मूल्य २०·०रु० ।

पुराने घाव नये नश्तर

लेखक और प्रकाशक: वही पृष्ठ १४४; ७३; मूल्य २.०० रु० ।

विश्वास

लेखक और प्रकाशक : वही । पृष्ठ १४२; ७३; मूल्य २०० रु० ।

मोम की कलियाँ

लेखक : प्रशान्त; प्रकाशक : वही पृष्ठ १३६; ७३; मूल्य २·००

कसम

लेखक : शेखर; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स दिल्ली-३२ । पृष्ठ १२७; ७३; मूल्य : २·००

अप्रत्याशित संयोग, अतिशय नाटकीयता, सम्वाद और भावुकता हिन्दी फिल्मोंके फार्मूले हैं, वही जेवी पुस्तकोंमें रोमाण्टिक उपन्यासके नामपर प्रस्तुत होते हैं । 'पारस' के चार उपन्यास एक साथ सामने आये हैं जिनमेंसे बिछड़े साथी तथा तिकोनी तस्वीरें खानाबदोश और आदिवासी समाज की पृष्ठभूमि पर लिखे गये हैं । मुनरी और गोपा एक दूसरे से प्यार करते हुए बिछड़े साथी हो जाते हैं बीचमें एक बाबू चला आता है पर अन्त में विलेन हट जाताहै और कहानी सुखान्त बन जाती है । घरमें पत्नी होते हुए इंजीनियर आदिवासी औरत से लड़की पैदा हुई उसे पालता है । विवाहित की वेटी भी पलती है । अन्ततः रहस्य खुल जाने पर परिवार में सब प्रसन्न हो जाते हैं -

जयाके दो प्रेमी हैं मधुकर अध्यापक और अफसर जयन्त, एक्सीडेण्टमें मधुकर अपंग हो जाता है । जया न चाहते हुए भी जयन्तसे विवाह कर लेती हैं । पुराने घाव नये नश्तर' में जयाके अन्तर्द्वन्द्वको उपन्या थोड़ा ऊँचे स्तर पर पहुँचा देता है । हरिद्वार में जया शान्ति के लिए अध्यात्म की खोजमें सम्मोहित होकर स्वामी के जाल में फँस जानी है किन्तु जयन्त स्वामी को गिरफ्तार करनेमें समर्थ होता है । जया मधुकर के पास जाना चाहती है किन्तु ट्रेन पहुँचने के पूर्वभयन्तसे वापस चलने को कहती है । जयन्त और जया का चरित्र-चित्रण कलात्मक है । पुस्तक में लगता है कि लेखक (?) में प्रतिभा है जो उसे सही अर्थों में उपन्यासकार बना सकती है ।

'विश्वास' एक सेठजीकी वेश्या से उत्पन्न लड़कीकी कहानी है जिसे वह सोलहवें बर्ष एक बदसूरत सेठको सौंप देते हैं । हास्यास्पद स्थिति में युवती उसको छोड़कर एक अनजान युवकको, जिसने समुद्र की लहरोंसे उसे बचाया था, अपना घर बसा लेती है । अश्वाभाविकता, उपन्यास में भरी है,

'प्रशान्त' की 'मौम की कलियाँ' आधुनिक समाजके क्लब जीवनमें बिगड़ी पम्मी की कहानी है, जिसको गर्भ पात करना पड़ता है, एक विदेशी छात्र पम्मी को बदनाम

CC-0. In,Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते हुए उसके प्रेमी को गोली मार देता है। ऐसा मालूम पड़ता है कि लेखक कहानी को सम्हाल नहीं पाया और उसने विलेनको मार डाला। पुष्पी के सभी प्रकाशन छपाई सफाईके सस्ते स्तर पर हैं, यद्यपि उपन्यासोंमें वासनाका नंगा चित्रण नहीं है। ट्रेडमार्क रचनाओंमें एक-सा स्तरभी नहीं होता। किसी पुस्तकमें स्तर सामान्य होता है किसी में काफी नीचे।

'शेखर' भी लोकप्रिय नाम है जिसकी कृतियां फिल्मी फार्मूले पर होती हैं, '**कसम**' स्त्रीके त्यागकी, विशेषतः ग्रामीण स्त्रीके त्यागकी एक और कहानी है। एक्सीडेण्टमें घायल कलक्टर राजन कपूर ग्रामीण विधवा शकुनके निकट आ जाता है जिस पत्नी मीनाक्षीको मृत मानकर राजन शकुन से विवास कर लेता है वह जिन्दा निकलती है। मीनाक्षी शकुनके लिए अपनेको हटा लेती है पर संयोगवश भेद खुल जानेसे शकुन, जैसा फिल्मों में होता सीढ़ियोंसे गिरकर तीसरे आदमी को बाहर कर देती है। शकुन का चरित्र कुछ उभरा है। शेखर के उपन्यासकी परम्परामें उसके प्रिय प्रशंकोंके लिए एक और भेंट पसन्द की जायेगी।

जासूसी उपन्यास

सी० आई० ए० एजेन्ट

लेखक : ए. मनीश; प्रकाशक : पुष्पी कार्यालय, इलाहाबाद; पृष्ठ १४२; १९७३; मूल्य : २·००

मौत की तलाश

लेखक : कर्नल राना; प्रकाशक : उपर्युक्त पृष्ठ :१२८ १९७३ मूल्य २.००

ताश की लाश

लेखक : केप्टेन देवेश; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ१४१ १९७३; मूल्य : २·००

षड़यन्त्र

लेखक ; कर्नल रंजीत; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स लि०; दिल्ली-३२ पृष्ठ १३४; १९७३ मूल्य : २·००

प्रधानमन्त्री और कांग्रेस अध्यक्ष द्वारा सी० आइ० ए० की गतिविधियों पर की गयी टिप्पणियोंसे प्रेरित होकर कुछ जासूसी उपन्यास इधर छपे हैं। मनीशके उपन्यासमें कम, राजनीतिक अधिक है। यह सिद्ध केरनेका प्रयास किया गया है कि सी० आई० ए० का हब्बा सरकार ने खड़ा किया है। कहानीमें एक मन्त्री का बेटा बलात्कार और हत्या करता है जिमें छिपानेको सी० आई० ए० का हब्बा खड़ा किया जाता है। बीच-बीचमें वक्तव्यभी दिये गये हैं।

'कर्नल राना' ने पाप और अपराधको साहित्यमें स्थान देने की भूमिकाके साथ है मादक हेरोइनके व्यापार तथा मानव रक्त लेकर उसमें -हेराइन मिलाकर हत्या करानेवाली अमरीकी संस्थाके भारतमें फैले हुए जालका भण्डाफोड़ होने की रोचक कहानी गढ़ी है।

केप्टन देवेशने 'लाश और ताश' में परमाणु आयोग के भारतीय रहस्यों का पता लगानेके लिए चीनी गैंग तथा एक भारतीय सेठकी सांठगांठसे हत्याओं का रहस्योद्घाटन किया है जिसमें भारतीय वैज्ञानिक के देश प्रेम को दर्शाया है।

कर्नल रंजीतने विलायतसे हिप्नोटिज्म सीखकर आये एक असीर लड़केके ऐसे षड़यन्त्र की कहानी अत्यन्त रोचक और रहस्यपूर्ण ढंगसे प्रस्तुतकी है जो सम्भोहित व्यक्तियों से हत्या कराता है और सम्भोहित सुन्दरियोंसे अपनी वासनापूर्ति करता है। अन्तमें ही मेजर बलबन्त असली अपराधी का पता लगा पाता है।

चारों जासूसी उपन्यासों की विशेषका यह है कि इनमें अपराधके आधार अमरीका, चीन और ब्रिटेनसे संचालित हैं। आजकी स्थितिमें वैज्ञानिक तरीकोंसे विदेश द्वारा प्रेरित षड़यन्त्र भारतमें होनेकी सम्भावना है अतः इनकी कल्पनाका वास्तविकतासे सम्बन्ध है। पुष्पी प्रकाशनकी पुस्तकोंका कागज और छपाई अति साधारण है, जिसमें सुधार अपेक्षित है।

फिल्म-स्क्रिप्ट

आशीर्वाद

लेखक : हृषीकेश मुकर्जी ; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स; दिल्ली-३२; पृष्ठ १२८; ७३(८ पृष्ठ फोटो); मूल्य : २·००

हृषीकेश मुकर्जीकी कहानी-स्क्रिप्ट निर्देशकी इस फिल्मको राष्ट्रपति पुरस्कार मिला था। सम्बाद गुलजार के हैं। त्याग और बलिदान और वात्सल्यके अभिनयके के लिए अशोककुमारने इसमें नाम कमाया है, दयालु जमीदार क्रूर पत्नीके अत्याचारोंसे परेशान एक झूठे अपराधको स्वीकारकर जेल चला जाता है, अन्तमें मुक्त होकर अपनी बेटीके विवाहमें जा उसे आशीर्वाद देकर मर जाता है। सम्वाद सुन्दर सजीव है।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नन्ही पुस्तकें

संचालक एवं सम्पादक—श्री बालकृष्ण बालदुवा; प्रकाशक—व्यवस्थापिका, नन्हीं पुस्तकें, ५७।१५० सिरकी मोहाल, कानपुर-१ प्रकाशित पुस्तिकाओंकी संख्या-१७; आकार-२॥"×३॥"; मूल्य एक रुपया से लेकर दो रुपये।

आजका युग 'प्रयोगोंका युग' कहलाता है। जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें नित्य नवीन प्रयोग हो रहे हैं—कुछ सार्थक, कुछ निरर्थक; कुछ उपयोगी, कुछ अनुपयोगी। "नन्हीं पुस्तकें" हिन्दीके प्रकाशन-व्यवसायके क्षेत्रमें एक सार्थक, उपयोगी और स्वागत योग्य प्रयोग है।

"नन्हीं पुस्तकें" शीर्षक पुस्तक मालामें अबतक १७ मिनी पुस्तिकाएं प्रकाशित हो चुकी हैं—कुछ चिन्तन कुछ अनुभूति, कालजयी दोहे, विश्वकाव्य, अन्धोंका देश, बाल गीत, मिनी कहानियाँ, जादूभरी खाल, रामचरितमानस, नींवका गारा, असाधारण कहानियाँ, रंगवद्गीता, व्यंग्य-विनोद, विचित्र त्रसरेणु, चार संस्मरण, देश प्रेमके बाल-गीत, और दर्दकी भीड़। इनमेंसे कुछ भी बालकृष्ण बलदुवाकी मौलिक कृतियाँ हैं, जैसे—कुछ चिन्तन कुछ अनुभूति, (संकलित, विचार और भाव), नींवका गारा (संस्मरणात्मक लघुकथाओंका संग्रह) असाधारण कहानियों (कहानी संग्रह) एवं चार संस्मरण (संग्रह)। कालजयी दोहे, विश्व काव्य, अन्धोंका देश आदि पुस्तिकाएँ बलदुवा जी द्वारा संकलित-सम्पादित अमर कृतियोंके संक्षिप्त संस्करण हैं। इसीप्रकार "रामचरित मानस" और "भगवद् गीता" के संक्षिप्त संस्करण भी स्तुत्य प्रयास हैं। "मिनी कहानियाँ" श्री भगवानदास सफाड़ियाँकी लघु कथाओंका संग्रह है। "जादू भरी खाल" विश्वविख्यात फ्रान्सीसी उपन्यासकार बालजक की अमरकृति का संक्षिप्त अनुवाद "व्यंग विनोद" श्री विनोद सोमानी 'हंस' के कुछ चुने हुए मुक्तकों और तुलकोंका संग्रह है। "विचित्र १" श्री भवानीशंकर द्वारा संकलित विश्व एवं देश-विदेशके अनोखे एवं विचित्र सत्योंका रोचक संग्रह है। "त्रसरेणु" हिन्दीके विख्यात एवं वरिष्ठ कवि श्रीकेदारनाथ मिश्र 'प्रभात' के छोटे-छोटे भाव-छन्दोंका संग्रह है। "देश-प्रेमके बाल-गीत" श्री कृष्णचन्द तिवारी 'राष्ट्रबन्धु' द्वारा संकलित राष्ट्रीयता एवं देश-प्रेम सम्बन्धी उत्कृष्ट गीतोंका संग्रह है। "दर्दकी भीड़" श्रीमती ममता माम पानीकी कहानियों का संग्रह है।

ये सभी पुस्तिकाएँ अपने आपमें सम्पूर्ण साहित्य हैं—रोचक, उपयोगी और पठनीय। इनका नन्हा आकार इनकी विशेषता है—नयनभिराम और संग्रह-योग्य। अधिकांश पुस्तिकाएँ उपयोगी सन्दर्भों और उद्धरणोंके प्रयोगकी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण सिद्ध होंगी। काष्ठकी सुन्दर पेटिकाके साथ १३ पुस्तिकाओंका एक सेट बच्चोंके जन्म दिवसों, विवादिके शुभ अवसरों आदिपर उपहारके रूपमें भेंट देनेके लिए अत्यन्त उपयोगी नवीन और मौलिक वस्तु सिद्ध होगी। प्रत्येक पुस्तिका "नावकके तीर" अथवा "गागरमें सागर" वाली उक्तिको चरितार्थ करती है। छात्र-छात्राओंके लिए तो यह पुस्तिकाएँ ज्ञान-कोशका काम देंगी।

दिल्लीमें आयोजित "एशिया १९७२" मेलेमें उत्तर प्रदेशके मण्डपमें राज्यके लघु-उद्योग प्रखण्डमें "प्रदर्शित "नन्हीं पुस्तकों" का सेट काष्ठ पेटिका सहित देश-विदेशके दर्शकों-पर्यटकोंके लिए अति लुभावनी एवं आकर्षणकी वस्तु थी। अनेक पत्र-पत्रिकाओं एवं हिन्दीके कई वरिष्ठ विद्वानोंने इस अभिनव प्रयासकी मुक्त कण्ठसे सराहना की है, जिससे प्रेरित होकर अन्य स्थानोंमें भी इसी प्रकारकी नन्हीं पुस्तकोंके प्रकाशनकी चर्चा सुननेमें आने लगी है। किन्तु वरिष्ठ कवि, पत्रकार, कथाकार एवं विचारक श्री बालकृष्ण बलदुबा निसन्देह नन्हीं पुस्तकोंके प्रकाशन-क्षेत्रमें अग्रणी, सर्वप्रथम एवं मार्ग दर्शक होनेका श्रेय अवश्य प्राप्त करेंगे।

—ललितमोहन अवस्थी

शिक्षण-संस्थाओं, पुस्तकालयों
और
बुद्धिजीवियोंके लिए
उपयोगी और अनिवार्य
'प्रकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्ति सूचना

[इस मास निम्न पुस्तकें समीक्षार्थ प्राप्त हुई हैं। आगामी अंकोंमें इनकी समीक्षा अथवा परिचय प्रस्तुत किया जायेगा। समीक्षार्थ पुस्तकको दो प्रतियाँ आनी चाहियें, एक प्रतिकी समीक्षा या परिचयका दायित्व स्वीकार नहीं किया जाता।]

शोध-आलोचना

उड़िया नाटक और रंगमंच; लेखक : नीलमणि मिश्र; प्रकाशक : अभिनव भारती, ४२, सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : १५६; डिमाई, ७२; मूल्य : २१.०० रु.।

छायावाद : प्रकृति और प्रयोग; लेखक : डॉ. कमला प्रसाद पाण्डेय; प्रकाशक : साहित्य वाणी, ५ गोसाईं टोला, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : २२०; डिमाई, ७२; मूल्य : १४.०० रु.।

जायसीके पद्मावतका मूल्यांकन; लेखक : डॉ. जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, प्रा. हरेन्द्रप्रताप सिन्हा; प्रकाशक : स्मृति प्रकाशन, ६१ महाजनी टोला, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : २८६; क्राउन, ७२; मूल्य : ६.०० रु.।

तुलसीदासोत्तर हिन्दी राम साहित्य; लेखक : डॉ० रामलखन पाण्डेय; प्रकाशक : अभिनव भारती, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : २८८; डिमाई, ७२; मूल्य : २२.०० रु.।

हिन्दी साहित्य शास्त्रकी भूमिका; लेखक : डॉ० कृष्ण वल्लभ जोशी; प्रकाशक : स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : १६३; डिमाई, ७३; मूल्य: ९००रु.

निबन्ध संकलन

चिन्तन; लेखकः प्रेमप्रकाश गौतम; प्रकाशकः साहित्य प्रकाशन, १४५८, मालीवाड़ा, दिल्ली-६। पृष्ठ : १३५; डिमाई; ७३; मूल्य : १५ ०० रु.।

तुलसी-स्मारिका : सम्पादक : डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल; प्रकाशक : मानस चतुश्शती आयोजन समिति, सम्भल (उ. प्र.)। पृष्ठ : ४६; डिमाई, ७३; मूल्य : २.०० रु.।

दृष्टिकोण ; लेखिका : प्रा. शकुन्तला भार्गव 'अर्चना' कमला नेहरू हाल, जोधपुर। पृष्ठ : २०६; डिमाई, ७२; मूल्य : १२.५० रु.।

मैथिलीशरण गुप्त; सम्पादक : डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित; प्रकाशक : स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : २०७; डिमाई, ७२; मूल्य : ११.०० रु।

शोध-साधना; लेखक : कुंवर चन्द्रप्रकाश सिंह; प्रकाशक : स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : २४०; डिमाई, ७३; मूल्य : १२.०० रु.।

भाषा विज्ञान

मालवीकी उत्पत्ति और विकास (शो. प्र.); लेखक; डॉ. बंसीधर; प्रकाशक : रामनारायणलाल बेनीप्रसाद कटरा, इलाहाबाद। पृष्ठ: २९९, डिमाई, ७३; मूल्य : २०.०० रु.।

उपन्यास

कन्धेसे टंगी बगावत; लेखकः अजित पुष्कल; प्रकाशकः स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद। पृष्ठ : ३५४; क्राउन, ७३; मूल्य : ११.०० रु.।

खारे जलका गाँव; लेखक : डॉ. भगवतीप्रसाद शुक्ल; प्रकाशक : स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : १३६; क्राउन, ७३; मूल्य : ५.०० रु.।

तीस चालीस पचास; लेखकःप्रभाकर माचवे; प्रकाशक राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : १३६; क्राउन, ७३; मूल्यः ६.०० रु.।

मनका व्यापार; लेखकःराजेश्वरप्रसाद सिंह; प्रकाशकः स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : १३०; क्राउन, ७३; मूल्य : ५.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुल्तान-ए मालवा; लेखक : इकबाल बहादुर देवसरे; प्रकाशक : स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद-३ । पृष्ठ : ४११; क्राउन, ७२; मूल्य : १४.०० रु. ।

कहानी संग्रह

नये पुराने माँ-बाप; लेखक : गोविन्द मिश्र; प्रकाशक: रचना प्रकाशन, ४५-ए खुल्दाबाद, इलाहाबाद-१ । पृष्ठ : १७४; क्राउन, ७३; मूल्य : ७.५० रु. ।

फिर एक बार; लेखक : ओमप्रकाश मेहरा; प्रकाशक : स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद । पृष्ठ : १२४; क्राउन; मूल्य : ४.५० रु. ।

मेरी प्रिय कहानियाँ; लेखक : फणीश्वरनाथ रेणु; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस; कश्मीरी दरवाज़ा, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १४७; क्राउन, ७३; मूल्य : ५.०० रु. ।

नाटक

अब्दुला दीवाना; लेखक : लक्ष्मीनारायण लाल; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ११३; क्राउन, ७३; मूल्य : ६.०० रु. ।

सुनयना; लेखक : स्वर्णकिरण; प्रकाशक : मिथिलेश प्रकाशन, आरा (बिहार) पृष्ठ : १०१; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.०० रु. ।

काव्य

खुले कमरे : बन्द द्वार : कवि : रमेश मेहता; प्रकाशक साक्षा प्रकाशन, २३५, रिंहाड़ी, जम्मू । पृष्ठ : ६४; डिमाई, ७२; मूल्य : ३.०० रु. ।

द्वा सुपर्णा; कवि : शकुन्तला भार्गव 'अर्चना' कमला नेहरू हाल, जोधपुर । पृष्ठ : ३८; डिमाई, ७२; मूल्य : ६.०० रु. ।

बांगलोदय; कवि : नीरस; प्रकाशक : मार्तण्ड प्रकाशन, १४५; कृष्णपुरी, अलीगढ़ । पृष्ठ : ८८; क्राउन, ७२; मूल्य : ४.०० रु. ।

बिरवा के पात; कवि : ध्रुव मिश्र, द्वारा एस. पी. (सेन्ट्रल), इम्फाल (मणिपुर) । पृष्ठ : ४४; डिमाई, ७३ ।

मृगजल; कवि : शकुन्तला भार्गव 'अर्चना', कमला नेहरू हॉल, जोधपुर । पृष्ठ : १५१; डिमाई, ७२; मूल्य : १२.०० रु ।

ये सम्पुट सीपी के; कवि कुमार विमल; प्रकाशक : अनुपम प्रकाशन, पटना कालेज के सामने, पटना-६ । पृष्ठ : ६४; डिमाई, ६२; मूल्य : ५.५० रु. ।

वर्जित देश एवं दिग्वासना (खण्ड काव्य); कवि : शकुन्तला भार्गव 'अर्चना', कमला नेहरू हॉल, जोधपुर । पृष्ठ : ७७+३८; क्राउन, ७२; मूल्य : ५ ०० रु. ।

शाहिका; कवि : अखिलेश कुमार शाही; प्रकाशक, प्रेस सर्विस ऑफ इण्डिया, बिहारी साव लेन, पटना-४ । पृष्ठ : ३२; डिमाई, ७३; मूल्य : १.७० । रु. ।

सुलोचना; कवि : स्वर्ण किरण; प्रकाशक मिथिलेश प्रकाशन, आरा (बिहार) । पृष्ठ : ५६; क्राउन, ७३; मूल्य : २.०० रु ।

विविध संकलन

कुछ कविताएँ : कुछ कहानियाँ; लेखक प्रेमप्रकाश गौतम; प्रकाशक : नीराजना प्रकाशन, दिल्ली । पृष्ठ : ८२; क्राउन, ७३; मूल्य : ४.०० रु. ।

कला

मध्यकालीन भारतीय कलाएँ एवं उनका विकास; लेखक : डॉ. रामनाथ; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ए-२६/२, विद्यालय मार्ग, तिलक नगर, जयपुर-४ । पृष्ठ : ९६+आर्ट पेपर पर ९६ चित्र; डिमाई दुगना, ७३; मूल्य : ३५.०० रु. ।

राजनीति

आधुनिक भारत में मुस्लिम राजनीतिक विचारक; लेखक : डॉ. एम. एस. जैन; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४ । पृष्ठ : १८८; रायल, ७३; मूल्य : १२.०० रु. ।

तुर्की की राजनीति एवं प्रशासन; लेखिका : डॉ. शील के आसोपा; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४ । पृष्ठ : २२८; रायल, ७३; मूल्य : १२ ०० रु. ।

नेताजी मारे गये : लेखक : अखिलेश कुमार शाही; प्रकाशक : प्रेस सर्विस ऑफ इण्डिया, बिहारी साव लेन, पटना-४ । पृष्ठ : ४३; क्राउन ७३; मूल्य : २.६० रु. ।

इतिहास

इतिहास : स्वरूप एवं सिद्धान्त; सम्पादक : गोविन्द-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द्र पाण्डे; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : २८२; रायल, ७३।

मारवाड़ से मुग़लों के सम्बन्ध; लेखक : डॉ. विश्वेश्वर स्वरूप भार्गव; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : ९३; डिमाई, ७३; मूल्य : ५.०० रु.।

राजस्थान के इतिहास के स्रोत; लेखक : डॉ. गोपीनाथ शर्मा; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : ३०८; रायल, ७३; मूल्य : १५.०० रु.।

अर्थशास्त्र

भारतीय श्रमिक-वर्ग आन्दोलन; लेखक : डॉ. जगन्नाथ स्वरूप माथुर; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : ५२७; रायल, ७३; मूल्य : २०.०० रु।

विपणन-प्रबन्ध; लेखक : जगमोहन सहगल; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : ४७९; रायल, ७३; मूल्य : २०.०० रु.।

समाज शास्त्र

कृषक समाज तथा कृषक संस्कृति; लेखक : रेडफील्ड, अनुवादक : यशदेव शल्य; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : १०६; डिमाई, ७३; मूल्य : ५.००।

लघु समुदाय; लेखक : रेडफील्ड, अनुवादक : यशदेव शल्य; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : २१८; डिमाई, ७३; मूल्य : ८.५० रु.।

समाजशास्त्र विवेचन; लेखक : नरेन्द्रकुमार सिन्धी, वसुधाकर गोस्वामी; प्रकाशक : राजस्थान : हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : ३१४; रायल, ७३; मूल्य : १५.०० रु।

दर्शन

ज्ञान-मीमांसा; लेखक : प्रकाशन दयाकृष्ण; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : ७९; डिमाई, ७३; मूल्य : ४.५० रु.।

ज्ञान, मूल्य और सत्; लेखक : संगमलाल पाण्डेय; प्रकाशक : साहित्यवाणी, इलाहाबाद-३। पृष्ठ : १५१; डिमाई, ७३; मूल्य : १०.०० रु.।

तर्क रेखा; लेखक : डॉ. सुरेन्द्र बारलिंगे; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : २३६; डिमाई, ७२; मूल्य : १२.०० रु.।

प्रतीकात्मक तर्क शास्त्र; लेखक : डॉ. राजनारायण; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : १८३; डिमाई, ७३; मूल्य : १०.०० रु.।

मूल्य-मीमांसा; लेखक : गोविन्दचन्द्र पाण्डे; प्रकाशक, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : ३००; रायल, ७३; मूल्य : १५.०० रु.।

शिक्षा-शास्त्र

इतिहास-शिक्षण; लेखक : उपेन्द्रनाथ दीक्षित, हेतसिंह बघेला; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : २५०; रायल, ७२; मूल्य : १४.५० रु.।

गणित-शिक्षण; लेखक : एस. एल. जैन; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : ३०४; रायल, ७३; मूल्य : १५.०० रु.।

निर्देशन के मूल तत्त्व; लेखक : डॉ. इन्दु दुबे, डॉ. अरविन्द फाटक; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : २६२; रायल, ७३; मूल्य : १५.०० रु.।

विद्यालय शिक्षा का तुलनात्मक अध्ययन; लेखक : डॉ. एडमन्ड किंग, अनुवादक : डॉ. आई. बी. वर्मा; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : ४७९; डिमाई, ७३; मूल्य : १७.०० रु.।

शिक्षण के लिए आयोजन; लेखक : जगदीश नारायण पुरोहित; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-४। पृष्ठ : ३४१; रायल, ७२; मूल्य : १८.०० रु.।

आहार-विज्ञान

आहार एवं पोषाहार; ले. : डॉ. सत्यदेव आर्य; प्रका. राज. हि. ग्रं. अका. जयपुर-४। पृष्ठ: २८७; डिमा. ७३; मूल्य: १२.५० रु.।

गणित

गति-विज्ञान; ले. : आर. सी. गौड़; प्रकाशक: राज. हि. ग्रं. अका., जयपुर-४। पृष्ठ: ३२१; डिमा. ७३; मूल्य: १४.५० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भौतिकी

क्वान्टम यान्त्रिकी; ले. : एल. आई. शिफ, अनु. : डॉ. सीताराम शर्मा; प्रका. : राज. हि. ग्रं. अका., जयपुर-४। पृष्ठ: ६२२; रायल, ७३; मूल्य: २२.०० रु.।

प्रारम्भिक ऊष्मागतिकी, गैसोंका अणुगति सिद्धान्त और सांख्यिकीय यांत्रिकी; ले. : फ्रांसिस वेस्टन सियर्स, अनु. : डॉ. महेशप्रकाश सक्सेना; प्रकाशक : राजस्थान हि. ग्रं. अकादमी, जयपुर। पृष्ठ: ३८९; रायल, ७३; मूल्य: १६.०० रु.।

भौतिकी की नई दिशाएँ; ले. : श्यामलाल काकानी; प्रका. : राज. हि. ग्रं. अका., जयपुर। पृष्ठ: १४२; डिमा. ७२; मूल्य: ७.०० रु.।

रसायन

कैरोटिनाइड्स ; ले. : डॉ. केशरीलाल मेनारिया; प्रका. : राज. ग्रं. अका., जयपुर। पृष्ठ: ३१०; डिमा. ७३; मूल्य: १४.५० रु.।

संश्लेषित रेशे; ले० : अमृतकौर सौंध, एन. के. माथुर ; प्रका. : राज. हि. ग्रं. अका., जयपुर। पृष्ठ: ९३; डिमा. ७३; मूल्य: ५.०० रु.।

भूगर्भ-विज्ञान

खनिज जगत्; ले. : डॉ. धर्मेन्द्रकुमार श्रीलाल सोलंकी; प्रका. : राज. हि. ग्रं. अका., जयपुर। पृष्ठ : ४३२; रायल, ७३; मूल्य: २४.०० रु.।

सैन्यविज्ञान

भारत सैन्य-विज्ञान; ले. : देवदत्त शास्त्री; प्रका. : स्मृति प्रकाशन, ६१. महाजनी टोला, इलाहाबाद-३। पृष्ठ: ३२०; क्राउन, ७३; मूल्य: १८.०० रु.।

भारतीय सेना और युद्ध कला; ले. : कर्नल गौतम शर्मा, रूपान्तर: वीरेन्द्रकुमार गुप्ता; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी दरवाज़ा, दिल्ली-६। पृष्ठ : २३२ डिमा, ७३; मूल्य : १५.०० रु.।

भारतीय सैन्य पद्धति; ले. : देवदत्त शास्त्री; प्रका. : स्मृति-प्रकाशन, इलाहाबाद। पृष्ठ : १६७; डिमा. ७३; मूल्य : १०.०० रु.।

पुस्तकालय विज्ञान

पुस्तकालय संगठन एवं संचालन ; ले. : श्यामनाथ श्रीवास्तव, सुभाषचन्द्र वर्मा; प्रका. : राज. हि. ग्रं. अका., जयपुर-४। पृष्ठ: २१२; रायल, ७३; मूल्य: १२.०० रु.।

ज्ञानकोश

ज्ञान-सरोवर (भाग-५); प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली १ ; पृष्ठ : ४३२ : क्राउन दुगना, ७३; मूल्य: ९.०० रु.।

गान्धी साहित्य

गान्धी वाङ्मय (खण्ड ४७, ४८); प्रका.: प्रकाशन विभाग, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ क्रमश: ५२७, ५९५; डिमा. ७२; मूल्य प्रत्येक खण्ड : ७.५० रु.।

विचार : सूक्ति

पथ का प्रभाव; लेखक: लाओ-त्स, अनु. जगदीशचन्द्र जैन; प्रकाशन: साहित्य अकादमी, फिरोज़शाह रोड, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ: ८१; क्राउन. ७३; मूल्य: २.५० रु.।

पत्र-पत्रिकाएँ

अन्तराल-३; सम्पादक: नचिकेता, शिवा मेडिकल हाल कंकड़ बाग रोड, पटना-२०। पृष्ठ : १३२; डिमा ७३; मूल्य : ५.०० रु.।

आभा (त्रैमासिक, मार्च ७३); सम्पा. : महेश रामजियावन; प्रकाशक: भारती प्रकाशन, त्रिओले (मारीशस)। मूल्य : १.५० रु.।

आयाम (जून ७३) ; सम्पा. डॉ. ओमानन्द अ. सारस्वत; अतिथि सम्पा. फूलचन्द 'मानव'; एस.सी. एफ. एफ. ३-४, सैक्टर १९ सी, चंडीगढ़।

विद्या (जून, ७२); सम्पा. रामप्रवेश जायसवाल, डॉ. रणवीर रांग्रा, जगदीश चतुर्वेदी, शेरजंग गर्ग; प्रका. : केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, पश्चिमी खण्ड ७, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली-२२। पृष्ठ : २५२; डिमाई. ७२; मूल्य: १.०० रु.।

विश्वभारती (खण्ड १३, अंक २; त्रैमासिक); सम्पा. रामसिंह तोमर; प्रकाशक: हिन्दी भवन, विश्वभारती, शान्ति निकेतन (पं. बंगाल)। वार्षिक शुल्क: १०.०० रु.।

वेदप्रकाश (पं. बिहारीलाल शास्त्री अभिनन्दन विशेषांक); सम्पा. : विजयकुमार; प्रका. : गोविन्दराम हासानन्द, नयी सड़क दिल्ली-६। पृष्ठ : १००+४०; क्राउन, ७३; वार्षिक मूल्य : ३.०० रु.।

किशोर-बाल साहित्य

अनोखे चुटकले; संकलनकर्ता: कृष्ण विकल; प्रका. :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैरामाउट पब्लिकेशंन, दरियागंज, दिल्ली-६ । पृष्ठः ७८; १९७३; मूल्यः १.०० रु. ।

अन्ताक्षरी; ले. : श्रीकृष्ण; प्रका. : सुबोध पाकेट बुक्स, अंसारी रोड, दरिया गंज, दिल्ली ६ । पृष्ठ : ८०; १९७३, मूल्य : १.०० रु. ।

आदर्श बालक (उपन्यास); लेखक : आचार्य चतुरसेन; प्रकाशक : सुबोध पाकेट बुक्स, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ७५; ७३; मूल्य : १.०० रु. ।

घर में विज्ञान (विज्ञान); ले. डॉ. शुकदेव दुबे; प्रका.: स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद । पृष्ठ : ४७; क्राउन, ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

जंगल की कहानी; ले. : जैक लंडन, रूपा. : श्रीकान्त व्यास; प्रका. : शिक्षा भारती, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ७९; क्राउन, ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

दहाड़ता जंगल (उप.); लेखक : सुनील शर्मा; प्रका. : पैरामाइंट पब्लिकेशंस, दरियागंज, दिल्ली-६ । पृष्ठः ७५; ७३; मूल्यः १.०० रु. ।

देश-देश का जादू; लेखकः डॉ. हरिकृष्ण देवसरे; प्रका. : स्मृति प्रकाशन इलाहाबाद । पृष्ठ : ७०; क्राउन, ७३; मूल्य : २.५० रु. ।

देवी की शान (उप.); ले. : मनहर चौहान; प्रका. : सुबोध पाकेट बुक्स; दिल्ली-६ । पृष्ठ : ८७; ७३; मूल्यः १.०० रु ।

भिखारी और राजकुमार (उप.); ले : मार्क ट्वीन; प्रकाशक : पैरामाउंट पब्लिकेशंस, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ८५; ७३; मूल्य : १.०० रु. ।

भूतनाथ (उप.); ले. : मस्तराम कपूर 'उर्मिल; प्रका. पैरामाउंट पब्लिकेशंस, दिल्ली-६ । पृष्ठः ७२; ७३; मूल्यः १.०० रु. ।

महाबली भीमसेन (जीवनी); ले. : सन्तराम वत्स्य; प्रका. : पैरामाउंट पब्लिकेशंस, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ८६; ७३; मूल्यः १.०० रु. ।

मोबीडिक; ले. : हर्मन मेलविल; रूपान्तरः श्रीकान्त व्यास; प्रका.: शिक्षा भारती, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १००; क्राउन, ७३; मूल्यः २.०० रु. ।

रासमणिका लड़का (उप.); ले. : रवीन्द्रनाथ ठाकुर; प्रका. : सुबोध पाकेट बुक्स, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ८६; ७३; मूल्य : १.०० रु. ।

सतरंगा हाथी (उप.); प्रकाशक : सुबोध पाकेट बुक्स, दरियागंज, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ९६; ७३; मूल्यः १.०० रु. ।

जेबी पुस्तकें

अजीब आदमी (उप.); लेखिका : इस्मत चुग़ताई; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, जी. टी. रोड, शाहदरा, दिल्ली-३२; पृष्ठ : १२८; मूल्यः २.०० रु. ।

असली नकली चेहरे (उप.); ले. : दयानन्द वर्मा; प्रका.: स्टार पाकेट बुक्स, आसक अली रोड, नई दिल्ली-१ । पृष्ठः १२२; ७३; मूल्यः २.०० रु. ।

आक के पत्ते (उप.) ; लेखिका : अमृता प्रीतम प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२ । पृष्ठः १२७; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

कंजा (लघु उप.); लेखिका : शिवानी; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२ । पृष्ठ : १९९; ७३; मूल्यः ३.०० रु. ।

खून की होली (जा. उप); ले. : गुप्त दूत; प्रका.: स्टार पाकेट, बुक्स नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : १२४; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

फागुन (फिलमी साहि.); ले. : राजेन्द्रसिंह बेदी; प्रका. : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२ । पृष्ठ : १२८;७३; मूल्य : २.०० रु. ।

भविष्यवाणियाँ जो सच निकलीं (ज्योतिष); प्रका. : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२ । पृष्ठ : १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

मौत के फन्दे (जा. उप.); ले. : कर्नल रंजीत; प्रका. : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२ । पृष्ठ : ११८; ७३; मूल्यः २.०० रु. ।

शिकायत (उप.); लेखक : शेखर; प्रका. : हिन्द पाकेट बुक्स, नयी दिल्ली-३२ । पृष्ठ : १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

सूना दर्पण (उप.); लेखक : लोकदर्शी; प्रका. : स्टार पाकेट बुक्स, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : १४४; ७३; मूल्य : २.०० रु. ।

सोने की पत्नी (उप.); ले. : आचार्य चतुरसेन; प्रका : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२ । पृष्ठ : १९७; ७३; मूल्यः ३.०० रु. ।

संगम (उप.); ले. : गुरुदत्त; प्रका. : स्टार पाकेट बुक्स, नयी दिल्ली-१ । पृष्ठ : २१२ ; ७३ ; मूल्य : ३.०० रु. ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर]

प्रकाशित पुस्तकों की सूची

क्र.	पुस्तक का नाम	एवं पृष्ठ संख्या	मूल्य
1.	सदिश विश्लेषण	212	10.00
2.	अवकल समीकरण	90	4.50
3.	चुम्बक द्रवगतिकी	140	7.50
4.	गति विज्ञान	322	14.50
5.	आहार एवं पोषाहार	288	12.50
6.	भौतिकी की नई दिशाएँ	142	7.00
7.	उष्मा गतिकी	390	16.00
8.	क्वांन्टम यांत्रिकी	622	22.00
9.	महासागर-भाग-I	520	22.00
10.	खनिज जगत्	432	24.00
11.	प्रायोगिक रसायन	392 सजिल्द अजिल्द	16.00 12.00
12.	नाइट्रोजन चक्र एवं नाइट्रोजन योगिकीकरण	64	4.00
13.	समस्थानिक	276	15.00
14.	गैस विश्लेषण	42	3.25
15.	प्रावस्थानियम एवं उसके प्रयोग	294	13.50
16.	संकुलमितीय अनुमापन	160	7.50
17.	कैरोटिनाइट्स	306	14.50
18.	संश्लेषित रेशे	94	5.00
19.	परिवर्द्धनात्मक शरीर क्रिया विज्ञान की रूप रेखा	—	12.00
20.	पुस्तकालय संगठन एवं संचालन	212	12.00
21.	द्रव्य, व्यापार और विनियोग	454	15.00
22.	कराधान	232	5.00
23.	मजदूरी	172	5.00
24.	उद्योग का नियंत्रण	160	5.50
25.	विपणन प्रबन्ध	480	20.00
26.	भारतीय श्रमिक वर्ग आन्दोलन	528	20.00
27.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि खण्ड-1	690	17.00
28.	„ खण्ड-2	544	13.25
29.	इंगलैण्ड का सामाजिक इतिहास	570	15.00
30.	सत्रहवीं शताब्दी का यूरोप	584	14.25
31.	बृहत्तर भारत	54	2.50
32.	सवाई जयसिंह	224	10.00
33.	उन्नीसवीं शताब्दी का अजमेर	294	16.00
34.	चौहान सम्राट पृथ्वीराज तृतीय और उनका युग	102	5.00
35.	राजस्थान इतिहास के स्रोत	308	15.00
36.	इतिहास स्वरूप एवं सिद्धांत	292	15.50
37.	महाराजा जसवन्तसिंह एवं उनका समय	208	10.00
38.	मारवाड़ से मुगलों के सम्बन्ध	94	5.00
39.	मध्ययुगीन भारतीय कलाएँ एवं उनका विकास (सचित्र)	172 साधारण पुस्तकालय	32.50 35.00
40.	दर्शन के सौ वर्ष	640	15.00
41.	संस्कृति मानव कर्त्तृत्व की व्याख्या	144	4.50
42.	तर्क एवं दर्शन का विवेचन	104	6.00
43.	उपनिषद् दर्शन का रचनात्मक सर्वेक्षण	320	10.00
44.	भारतीय दर्शन का इतिहास भाग—4	456	16.00
45.	नीति दर्शन की पूर्व पीठिका	388	20.00
46.	प्रयोजनवाद	248	10.00
47.	तर्क रेखा	236	12.00
48.	प्रतीकात्मक तर्कशास्त्र	184	10·00
49.	ज्ञान मीमांसा	80	4·50
50.	मूल्य मीमांसा	302	15·00
51.	आधुनिक चित्रकला का इतिहास	404	18·00
52.	कला के सिद्धान्त	326	11·00
53.	उदात्त भावना: एक विवेचन	218	11·00

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्र.	पुस्तक का नाम	एवं पृष्ठ संख्या	मूल्य
54.	प्राकृत भाषाएँ एवं उनका भारतीय संस्कृति में अवदान	94	6·00
55.	शृंगार रसः भावना एवं विश्लेषण	244	12·00
56.	द्राविड़ भाषाओं की व्याकरणिक संरचना	—	5·00
57.	औद्योगिक सम्बन्धों का मनोविज्ञान	332	13.50
51.	राजस्थान में राजनैतिक जनजागरण	126	7.00
59.	बीसवीं शताब्दी का विश्व भाग-I	470	18.25
60.	भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास	350	18.00
61.	भारतीय संविधानः स्वरूप एवं व्यवहार	384	16·25
62.	अन्तर्राष्ट्रीय कानून एवं संगठन की नवीन प्रवृत्तियाँ	204	10·00
63·	आधुनिक भारत में मुस्लिम राजनैतिक विचारक	188	12·00
64.	तुर्की की राजनीति एवं प्रशासन	228	11.00
65.	प्रशासनिक संस्थायें	288 सां०स पु० सं	10·00 12·50
66.	लोक प्रशासनः सिद्धान्त एवं व्यवहार	240.	12·00
67.	समाजशास्त्रीय पद्धति के नियम	122	6·00

क्र.	पुस्तक का नाम	एवं पृष्ठ संख्या	मूल्य
68.	सामाजिक परिवर्तन	332	10·00
69.	भारतीय जतजातियाँ	170	6·00
70.	लघु समुदाय	218	8·50
71.	कृषक समाज एवं संस्कृति	106	5·00
72.	समाज शास्त्र विवेचन	314	15·00
73.	भारत के लिये समाज शास्त्र	238	10·00
74.	भारतीय शिक्षा की वर्तमान समस्याएँ	594	25.00
75.	पाठ योजनाएँ	262	10.06
76.	शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार	426	19·00
77.	शैक्षिक अनुसंधान का विधिशास्त्र	236	12·50
78.	शिक्षा के दार्शनिक आधार		7·50
79.	भारतीय शिक्षा का समाज शास्त्र	258	12·00
80.	शिक्षण के लिए आयोजन	342	18·00
81.	इतिहास शिक्षण	250	14·50
82.	निर्देशन के मूल तत्त्व	262	15·00
83.	विद्यालय शिक्षा का तुलनात्मक अध्ययन	480	17·00
84.	गणित शिक्षण	308	15·00
55·	प्रारम्भिक गति विज्ञान	256	10·00
86.	अर्द्ध सूक्ष्म गुणात्मक विश्लेषण	202	10·00
87.	भारतीय दर्शन का इतिहास भाग 2	548	20·00
88·	ग्रामीण भारत	284	12·50
89.	विज्ञान शिक्षण	232	9·00
90·	तुलनात्मक शिक्षा	500	20·00

[आगामी मास के अन्त तक प्रकाश्य पुस्तकें]

1. लैसर और उनके उपयोग
2. आग्नेय शैलों का विवरणात्मक शिलावीक्षण भाग–1
3. ,, भाग–2
4. मौसम विज्ञान
5. जलवायु विज्ञान के मूल तत्त्व
6. रेडियो एक्टीवता
7. बनस्पति क्रिया और परिस्थति विज्ञान
8. भारतीय पादप परिस्थिति विज्ञान
9. परिस्थिति विज्ञान
10. आधुनिक राज्य का सुरक्षा तन्त्र
11. महाराजा अजीतसिंह एवं उनका युग
12. आधुनिक तर्क शास्त्र एक परिचय
13. रस गंगाधर
14. शंकरोत्तर अद्वैत वेदान्त में मिथ्यात्व निरुपण
15. उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज
16. समाज ज्ञान शिक्षण
17. शिक्षक प्रशिक्षण सिद्धांत
18. अनुरंजनात्मक क्रियायें
19. माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण

पुस्तक प्राप्ति स्थान

(1) इन्टर कोन्टीनेन्टल बुक हाउस, शारदा भवन के सामने, चौड़ा रास्ता, जयपुर–3

(2) राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, (बिक्री शाखा) ए' 26/2 विद्यालय मार्ग, तिलक नगर, जयपुर–4

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश-विदेशकी राजनीतिक परिस्थितियोंमें
निरन्तर परिवर्तनोंकी पृष्ठभूमि प्रदान करनेवाली पुस्तकें

विस्तारवादी चीन

यह पुस्तक चीनकी साम्राज्य-विस्तारकी महत्वाकांक्षाकी कहानी है। इसमें चीनकी साम्राज्यवादी भूखके शिकार तिब्बत, सिक्यांग, भीतरी मंगोलिया और मंचूरियाके पतनका इतिहास है और दक्षिण-पूर्व एशियामें चीनद्वारा भारतीय सभ्यता, धर्म और कलाको नष्ट करनेके प्रयत्नोंकी कहानी है। लेखक हैं: जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी।

उत्तर-प्रदेश सरकारद्वारा पुरस्कृत। (जेबी आकार) मूल्य : १.२५ रु.

कच्छ

इस पुस्तकमें कच्छपर पाकिस्तानी आक्रमण, कच्छसम्बन्धी समझौते और वहाँका पूर्ण परिचय है। लेखिका हैं : पद्मा अग्रवाल।

उ. प्र. सरकारद्वारा पुरस्कृत। (जेबी आकार) मूल्य : २.२५ रु.

अफ्रीकाके राष्ट्रीय नेता

अफ्रीकामें निरन्तर संघर्ष होते रहते हैं। सैनिक विद्रोह वहाँकी नियति है। अफ्रीकाकी घटनाओंके संचालकों और राजनीतिज्ञोंके साथ अफ्रीकाके प्रत्येक देशका इसमें परिचय है। लेखक हैं : जगमोहनलाल माथुर।

(जेबी आकार) मूल्य : २.५० रु.

समाजवादी बर्मा

बर्मामें सैनिक समाजवादका उदय वहाँके वर्तमान राष्ट्रपति नेविनके नेतृत्वमें हुआ। इसका कारण वहाँकी पूर्व सरकारके कालमें व्याप्त व्यापक भ्रष्टाचार था। इस परिवर्तनका वहाँ बसे भारतीयोंपर प्रबल कुप्रभाव हुआ। इसके लेखक हैं बर्मावासी श्यामाचरण मिश्र।

(क्राउन आकार) मूल्य : ४.०० रु.

चारों पुस्तकें एकसाथ मँगानेपर डाक-व्ययकी छूट

नवभारती सहकार प्रकाशन
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्रकर' का आगामी महत्त्वपूर्ण विशेषांक

१९७२ के उल्लेखनीय प्रकाशन

●

इस विशेषांक में सभी भारतीय भाषाओंके १९७२ के महत्त्वपूर्ण, विशिष्ट और उल्लेखनीय प्रकाशनोंपर समीक्षात्मक लेख होंगे।

●

हिन्दीकी सभी प्रमुख विधाओंके १९७२ के विशिष्ट प्रकाशनोंपर अलग-अलग लेख होंगे।

●

सभी लेखक अपने क्षेत्रके अधिकारी विद्वान् हैं।

●

'प्रकर' के स्थायी ग्राहकोंको यह विशेषांक ६.०० रु० के वार्षिक शुल्कमें प्राप्त होगा। जनवरी ७४ से 'प्रकर' का वार्षिक शुल्क १२ रु. हो जायेगा। इसलिए अभी से ६.०० रु० वार्षिक शुल्क भेजकर यह लाभ उठा सकते हैं।

मूल्य : छः रुपये

पृष्ठ संख्या : लगभग २००

पूर्व प्रकाशित विशेषांक

१९६९ के उल्लेखनीय प्रकाशन	१.०० रु०
१९७० ,, ,,	४.०० रु०
१९७१ ,, ,,	६.०० रु०
भारतीय साहित्य : २५ वर्ष	६.०० रु०
अहिन्दी भाषियोंका हिन्दी साहित्य	४.०० रु०

'प्रकर', ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली ११०००७

'नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)' के लिए विद्यासागर विद्यालंकारद्वारा सम्पादित, प्रताप मुद्रणालय, दिल्ली-७ के लिए दी एज्युकेशनल प्रेस, सिटी स्टेशन मार्ग, आगरा-३ में मुद्रित, ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७ [टेलीफून नम्बर : २२३८६३] से प्रकाशित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

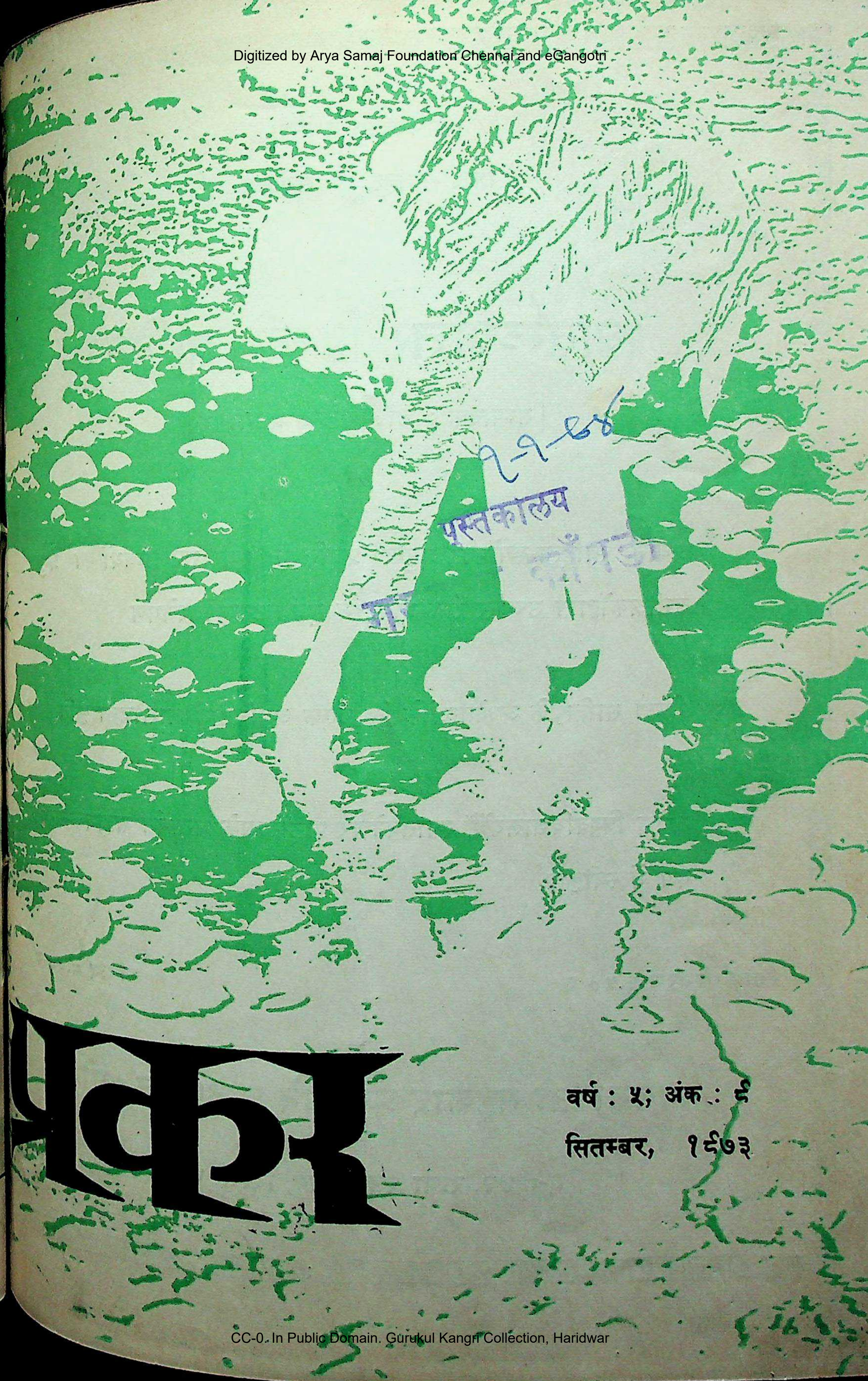

9-7-84
पुस्तकालय

प्रकर

वर्ष : ५; अंक : ९

सितम्बर, १९७३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गत पच्चीस वर्षोंका

हिन्दी-साहित्यका सर्वेक्षण

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी साहित्य

[सम्पादक : डॉ० महेन्द्र भटनागर]

- प्रधान साहित्य-रूपोंकी प्रमुख प्रवृत्तियों एवं उपलब्धियों का प्रमुख समीक्षकोंद्वारा उच्चस्तरीय आकलन एवं तटस्थ विश्लेषण

- हिन्दी साहित्यके अध्येताओंके लिए एक अपरिहार्य आलोचना कृति

- अनेक विश्वविद्यालयोंमें स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमके अन्तर्गत सहायक-ग्रन्थके रूप में स्वीकृत

छात्र संस्करण ६.५० रु. सजिल्द ८.०० रु.

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नये प्रकाशन

पारसी-हिंदी रंगमंच (निबन्ध) : सुप्रसिद्ध नाटककार डा० लक्ष्मी नारायण लाल ने इस पुस्तक में कभी जनता में अत्यधिक लोकप्रिय पारसी थियेटर के रंगमंच का विशद और रोचक अध्ययन प्रस्तुत किया है। आज के सिनेमा और नाटक को प्रभावित करने-वाला यह रंगमंच अपने-आपमें कितना प्रभावकारी, उदात्त और विशाल रहा है यह सब कुछ यहां देखने को मिलता है। 13.00

मरीचिका (उपन्यास) : हिन्दी के नये लेखकों में सुपरिचित और बहुप्रशंसित लेखक गंगा प्रसाद विमल का यह नया उपन्यास अपने आसपास की दुनिया की नई भाषा, नई दृष्टि में जानकारी प्रस्तुत करता है। लेखक की स्वच्छ-स्पष्ट शैली और वैसे ही कथानक पढ़कर मन को ताज़ापन महसूस होता है। 7.00

सोना (उपन्यास) : यह पुस्तक अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध उपन्यासकार भवानी भट्टाचार्य के अंग्रेज़ी उपन्यास 'ए गॉडेस नेम्ड गोल्ड' का संक्षिप्त हिन्दी रूपान्तर है जो विश्व की कई भाषाओं में अनुवादित हो चुका है। स्वतंत्रताप्राप्ति के बाद के ग्राम्य जीवन की सहज-सरल कथा यहां कोमलता से प्रस्तुत हुई है कि वह मन में अनायास उतरती चली जाती है। 7.00

बीमार शहर (उपन्यास) : हिन्दी के जाने-माने लेखक राजेन्द्र अवस्थी ने अपने इस नये उपन्यास में बहुशिक्षित युवक-युवतियों में बढ़ रहे विद्रोह, द्वन्द्व, संघर्ष और एक नये जीवन की तलाश की छटपटाहट का बहुत जीवन्त भाषा में चित्रण किया है। 8.00

स्वादिष्ट भोजन कला : भारत के सभी प्रान्तों में खाने-पकाने की सैकड़ों विधियाँ प्रचलित हैं। घरेलू महिलाएं बिना पढ़े-लिखे अपने घर के खाने-पकाने से ही परिचित होती हैं। अरुणा शेठ ने प्रस्तुत पुस्तक में देश के सभी प्रान्तों की स्वादिष्ट खाद्य वस्तुएं, पकवान आदि बनाने की बड़ी सरल विधियां दे दी हैं जिन्हें पढ़कर काम में लाया जा सकता है तथा भोजन की एकसरता दूर की जा सकती है। 5.75

राजपाल एण्ड सन्ज़

कश्मीरी गेट, दिल्ली-6

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी विशिष्ट उपलब्धियाँ

स्वामी रामतीर्थ साहित्य

भारतीय नवजागरण के मेलदृष्टा स्वामी रामतीर्थ के विचारों एवं भाषणों का विषयानुसार सुव्यवस्थित संकलन प्रस्तुत है, सरल भाषा और रोचक शैली में, अलग-अलग जिल्दों में—

- हमारा भारत
- मानवता और विश्व प्रेम
- आनन्द की पगदण्डियाँ
- बृह्मचर्य की शक्ति
- रामतीर्थ सूक्ति सुधा
- हमारा राष्ट्रीय धर्म
- गृहस्त धर्म
- व्यावहारिक वेदान्त
- सफलता का रहस्य
- स्वामी रामतीर्थ (जीवनी)

प्रत्येक का मूल्य ५.००

श्री अरविन्द साहित्य

- आई० सी० एस० के पद व सुख ऐश्वर्य भरे जीवन को स्वाधीनता संग्राम में सहज झोंक देने वाले
- गांधी, तिलक, सुभाष व अन्य महान क्रांतिकारियों के प्रेरणा श्रोत
- राष्ट्रीयता व विश्व बंधुत्त्व की समन्वय मूर्ति
- ज्ञान विज्ञान के सजीव कोश
- महान् दार्शनिक एवं महायोगी

श्री अरविन्द

के जीवन तथा साहित्य का अन्तरंग-दर्शन प्रस्तुत हैं, चार खण्डों में—

- क्रान्तियोगी श्री अरविन्द
- महायोगी श्री अरविन्द
- श्री अरविन्द विचार दर्शन
- श्री अरविन्द साहित्य दर्शन

प्रत्येक का मूल्य १५.००

अन्य नवीन प्रकाशन

स्वामी रामतीर्थ और उनकी कविता	डॉ० श्रीमती उर्वशी सूरती	१२.००
नैतिक शिक्षा	डॉ० श्रीमती उर्वशी सूरती	१५.००
आधुनिक हिन्दी काव्य में काम	डॉ० बरसानेलाल चतुर्वेदी	१५.००
आधुनिक हिन्दी कविता और रवीन्द्र	डॉ० रामेश्वरदयाल मिश्र	२५.००

प्रभात प्रकाशन २०५, चावड़ी बाजार, दिल्ली-६

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष : ५
अंक : ६
सितम्बर १९७३

प्रकर

सम्पादक : विद्यासागर विद्यालंकार

सम्पर्क : ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

सम्पादक-मण्डल : डॉ० भोलानाथ तिवारी (अध्यक्ष); मुकुटबिहारी वर्मा, डॉ० जयचन्द्र राय (उपाध्यक्ष); डॉ० देवेन्द्र कुमार, सुभाषचन्द्र विद्यालंकार (सदस्य),

वार्षिक मूल्य : नौ रुपये मात्र

सामान्य अंक : पचहत्तर पैसे मात्र

समीक्षित पुस्तकें	पृष्ठ संख्या	समीक्षक
१. भाषा-विज्ञान		
शैली विज्ञान और आलोचना की नयी भूमिका—डॉ० रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव	५	डॉ० सुरेश कुमार
आधुनिक हिन्दी व्याकरण तथा रचना—डॉ० कैलाशचन्द्र अग्रवाल	८	डॉ० भोलानाथ तिवारी
२. शोध और आलोचना		
मीरां और आण्डालका तुलनात्मक अध्ययन—डॉ० ना० सुन्दरम्	९	डॉ० राजनारायण राय
प्रसादके काव्यका शास्त्रीय अध्ययन—डॉ० सुरेन्द्रनाथ सिंह	१०	डॉ० आनन्द प्रकाश दीक्षित
अलक्षित निराला—डॉ० सूर्यप्रसाद दीक्षित	११	नरेन्द्र शर्मा
मध्ययुगीन हिन्दी के सूफी-इतर मुसलमान कवि—डॉ० उदयशंकर श्रीवास्तव	१४	शम्भु शुक्ल
रीतिकाव्यमें श्रृंगार निरूपण—सुखस्वरूप श्रीवास्तव	१५	डॉ० पाण्डेय शशिभूषण शीतांशु'
अंग्रेज़ी की स्वच्छ कविता—प्रमोद वर्मा	१६	डॉ० नन्दकुमार राय
कवि प्रसादकी सौन्दर्य भावना—अविनाश	१७	श्यामकिशोर शर्मा
३. निबन्ध-संकलन		
समस्या और समाधान—डॉ० नगेन्द्र	१८	प्रेमकान्त टंडन
आलवाल—स०ही० वात्स्यायन	१८	प्रेमकान्त टंडन
४. संस्कृत अध्ययन		
संस्कृत में एकांकी रूपक—डॉ० वीरबाला शर्मा	१९	डॉ० ब्रह्ममित्र अवस्थी
५. संकलन-साहित्य		
हमारा साहित्य ७०—संपादक : श्यामलाल शर्मा	२१	डॉ० रजनीकान्त लहरी
हृषीकेश रचनावली—संपादक : सतीशचन्द्र चतुर्वेदी	२२	डॉ० बरसानेलाल चतुर्वेदी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. छात्र-साहित्य		
यशपाल और उनकी दिव्या : प्रो० भूषण स्वामी	२३	विमलेश गोस्वामी
प्रियप्रवास दर्शन--संपादक : डॉ० वेदप्रकाश शास्त्री	२३	कमलेश भटनागर
७. उपन्यास		
एक थी तारा--डॉ० रमानाथ त्रिपाठी	२४	डॉ० नत्थनसिंह
ये गलियां ये रास्ते--द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण'	२७	डॉ० रमानाथ त्रिपाठी
शृंखला--गदाधर नारायण	२८	डॉ० सियाराम तिवारी
कैंजा—शिवानी	२९	डॉ० तिलकराज वडेहरा
जब धरती बोली—श्रीराम शर्मा 'राम'	३०	डॉ० प्रेमप्रकाश भट्ट
८. कहानी-संग्रह		
आदम और हव्वा--मेहरुन्निसा परवेज	३०	डॉ० रमेश तिवारी
दो कथाएँ : दो दिशाएँ--हरिकृष्ण श्रीवास्तव	३२	डॉ० रामाभिलाष त्रिपाठी
९. काव्य-संकलन		
सींग पर उगी हुई लाश--अराज	३२	सुलेख शर्मा
राष्ट्रमंगल--डॉ० इन्दरराज वैद 'अधीर'	३३	डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल
बांगलोदय--नीरस	३४	सुन्दरलाल कथूरिया
निरगन्धा--हरिकृष्ण श्रीवास्तव	३४	डॉ० रामाभिलाष त्रिपाठी
१०. उर्दू-शायरी		
उर्दू की नई शायरी--संपादक : इन्द्रकुमार पुरोहित	३५	अजीज इन्दौरी
११. हास्य-व्यंग्य		
तिलस्म—शरद जोशी	३६	डॉ० रमेश तिवारी
टालू मिक्सचर--श्याम नारायण बैजल	३७	सीताराम खोडावाल
१२. राजनीति विज्ञान		
सामाजिक तथा राजनैतिक शास्त्र के सिद्धान्त—अर्नेस्ट बार्कर	३७	दिनेश भट्ट
१३. अर्थशास्त्र		
जीवइ-सिद्धान्त--पुरुषोत्तम सर्राफ	३९	डॉ० प्रेमप्रकाश भट्ट
१४. वैदिक-साहित्य		
वेदार्थ-विज्ञान—रामशरण वशिष्ठ	४०	डॉ० ब्रह्ममित्र अवस्थी
वैदिक सम्पदा--वीरसेन वेदश्रमी	४१	सुभाष विद्यालंकार
दो रास्ते--महात्मा आनन्द स्वामी	४१	वैद्यनाथ शर्मा
ओंकारोपासना--डॉ० रामनरेश मिश्र	४२	डॉ० ब्रह्ममित्र अवस्थी
१५. पत्र-पत्रिकाएँ		
कङ्कू--संपादक : निर्मल शर्मा	४३	डॉ० मदन केवलिया
सप्तांशु—संपादक : परमानन्द गुप्त	४४	डॉ० मदन केवलिया
नये विज्ञापन—संपादक : रावी	४५	विनोद अग्रवाल
१६. किशोर-बाल साहित्य	४५	डॉ० हरिकृष्ण देवसरे
१७. जेबी पुस्तकें	४७	जीवन
१८. प्राप्ति सूचना	५१	———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैलीविज्ञान और आलोचनाकी नई भूमिका

लेखक : डॉ० रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव; प्रकाशक : केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा-५ । पृष्ठ : ९६; रायल, ७२; मूल्य : ६.०० रु० ।

यह पुस्तक 'शैलीविज्ञानकी भूमिका' शीर्षकसे लेखक द्वारा दिये गये उन तीन प्रसार व्याख्यानोंका संग्रह है जो उसने फरवरी १९७० में केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरामें दिये थे। इनके शीर्षक हैं :

(१) विज्ञान और साहित्य : सृजनात्मक प्रक्रियाकी समानता,

(२) विज्ञान और कविता : अभिव्यक्ति पद्धतिकी विशिष्टता,

(३) शैलीविज्ञान—आलोचनाका भाषावादी दृष्टिकोण : स्वरूप एवं प्रकृति ।

इनके अतिरिक्त पुस्तकमें दो परिशिष्ट हैं, जिनमें लेखकके **'आलोचना'** में पूर्वप्रकाशित दो लेख पुनर्मुद्रित हुए हैं : (१) काव्यभाषा और शैलीविज्ञान, (२) भाषावैज्ञानिक दृष्टि और आलोचनाकी नयी भूमिका। अन्तमें लगभग सौ पुस्तकोंकी एक समेकित सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची है जिसमें अंग्रेज़ी और हिन्दीकी पुस्तकोंके अलावा कुछ रूसी पुस्तकों-लेखोंका भी समावेश किया गया है ।

यद्यपि तीन व्याख्यानही इस पुस्तकके मेरुदण्ड हैं और लेखकने अपने पूर्वप्रकाशित लेखोंसे अपने व्याख्यानोंको तैयार करनेमें काफी सहायता ली है—यह बात लेखकने स्वयं कही है—तथापि पाठकके लिए उनके पूर्वप्रकाशित लेखभी समान रूपसे महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि उनसे लेखकके दृष्टिकोणको समझनेमें काफी सहायता मिलती है । उचित तो यह होगा कि पाठक पहले परिशिष्टगत लेखोंको पढ़े, विपरीत क्रमसे, और बादमें व्याख्यानोंको पढ़े, अनुक्रमसे । इसीप्रकार लेखकके दृष्टिकोणको समझनेकी दृष्टिसे पुस्तक की भूमिकाभी महत्त्वपूर्ण है जो लेखकीय प्राक्कथनके साथ विषयकी भूमिकाभी बनती है ।

पुस्तकका विषय है शैलीविज्ञान, जिसका नाम अब हिन्दीमें भी पिछले लगभग दस वर्षोंसे सुना जाने लगा है। यह नाम (Stylistics के अनुवादके रूपमें) तथा इससे उपलक्षित वर्तमान दृष्टि पश्चिमसे आयी है और इसके प्रवर्तनका श्रेय मूलतः भाषाविज्ञानियोंको है । लेखकभी व्यवसायसे भाषाविज्ञानी है, यद्यपि साहित्य-समीक्षापर भी इससे पहले उसकी कलम चल चुकी है ।

शैलीविज्ञान एक विवादग्रस्त विषय है, जिसके अपने कई कारण हैं । इसका मूल कारण यह मालूम होता है कि हम अभी इस बातपर सहमत नहीं हो सके कि शैलीविज्ञानका लक्ष्य क्या हो, जो पुनः इस बातपर अवलम्बित है कि साहित्यिक रचनाकी प्रकृति और संरचनाका स्वरूप क्या है । केवल इतना कहना पर्याप्त नहीं कि भाषा तथा साहित्यको जोड़नेवाली संकल्पना 'शैली' है । वस्तुतः इसीकी व्याख्या करनेके प्रयत्नमें ही शैलीविज्ञानके विषयमें तरह-तरहकी दृष्टियाँ तथा विश्लेषणके मॉडल और विधियाँ सामने आयी हैं । प्रस्तुत पुस्तकभी इसीप्रकारके प्रयत्नका परिणाम है । इसमें लेखकने शैलीविज्ञानके औचित्यको सिद्ध करनेके साथ-साथ उसके स्वरूपपर भी प्रकाश डाला है और उसे 'आलोचनाकी नयी भूमिका' कहा है ।

लेखकने मुख्य रूपसे पाश्चात्य काव्य-चिन्तनके सन्दर्भमें यह भूमिका प्रस्तुत की है । लेखकके अनुसार, विज्ञान और साहित्यका अन्तर केवल अभिव्यक्ति पक्षका अन्तर है; विज्ञानकी अभिव्यक्ति पद्धति निर्वचनात्मक (Operational) है, साहित्यकी प्रत्यक्षीकरणमूलक (Presentational), यद्यपि सृजनात्मक प्रक्रियाकी दृष्टिसे दोनोंमें समानता है और दोनोंका क्षेत्र भी एकही है—अनुभवसिद्ध संसार । अतः विज्ञानकी अभिव्यक्ति-पद्धतिको प्रतिफलित करनेवाली तर्कभाषा तथा साहित्यकी अभिव्यक्ति-पद्धतिको प्रतिफलित करनेवाली काव्यभाषाको परस्पर विरोधी न समझकर एकही रेखाके दो अन्तिम छोर समझना चाहिये । यही कारण है कि वैज्ञानिक पद्धतिका साहित्यिक पद्धतिमें उपयोजन (application) युक्तियुक्त है । 'अभिव्यक्ति पक्षके इस आधारपर साहित्यके अध्ययनकी वैज्ञानिक पद्धति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को शैलीविज्ञान कह सकते हैं' (१२)। इसी प्रसंगको बढ़ाते हुए लेखकने साहित्यकी सृजन प्रक्रिया (२४-२८), काव्य-भाषा तथा काव्य-बिम्बकी प्रकृति (२८-३२), कविताके बिम्बवादी तथा भाषावादी दृष्टिकोण (३४-४३), तर्क-भाषा तथा काव्यभाषा (४६-५३), संस्कृत काव्यशास्त्रकी सदृश मान्यताएँ (५४-५५), आदिपर विचार किया है, तथा रोमन याकोबसनके युक्तिक्रम तथा मॉडल (४४-४५) को स्वीकार करते हुए अन्तमें शैलीवैज्ञानिक अध्ययनका एक नमूना प्रस्तुत किया है (५६-६८) जिसका विशेष महत्त्व है। सम्पूर्ण विवेचनमें काफ़ी उपयोगी सामग्री संकलित है। पाश्चात्य काव्यचिन्तनके सम्बद्ध इतिहासका संक्षिप्त और व्यवस्थित लेखा-जोखा है। विवेचनकी भाषा घुमावदार होते हुए भी हिन्दी आलोचनाकी पिटी-पिटाई लकीरसे अलग हटी हुई तथा एक प्रकारका ताज़ापन लिये हुए है।

पहले कहा जा चुका है कि शैलीविज्ञानके कार्यक्षेत्रको लेकर इतना विवाद नहीं जितना उसके लक्ष्यको लेकर है। समीक्ष्य पुस्तकके विषयमें इस समीक्षककी धारणा है कि लेखक यद्यपि सिद्धान्ततः यह मानता है कि शैलीविज्ञान साहित्य तथा भाषाके अध्ययनको जोड़नेवाली कड़ी है, व्यवहारमें वह इसे जिस रूपमें प्रस्तुत करता है, वह अधूरा प्रतीत होता है।

लेखकने शैलीविज्ञानको साहित्यिक आलोचनाका सिद्धान्त भी माना है, प्रणाली भी (iii)। यह स्वीकार्य है। परन्तु उसके साथही यहभी आवश्यक है कि साहित्यिक आलोचनाकी विषय-सामग्री—साहित्यिक कृति—को उसकी पूर्णतामें स्वीकार किया जाये, उसकी प्रकृति तथा संरचनासे सम्बन्धित सत्योंको भी स्वीकृति प्रदान की जाये, तथा शैलीविज्ञानकी परिधिके विस्तारमें सबको समेटा जाये। 'कविता भाषाकी ही एक विधा है' एक लाक्षणिक प्रयोग है। इससे कविताके स्तरीकृत नॉर्म-व्यवस्था (stratified system of norms) तथा सौन्दर्यवस्तु (aesthetic object) होनेका निषेध नहीं हो जाता। आलोचनाका भाषावादी दृष्टिकोण साहित्य-सामग्रीकी प्रकृतिगत मूल्य-परक विशेषताओंको नकार नहीं सकता (४)।

वस्तुतः, कविताको एकसाथ दो नॉर्मोंकी समानान्तर भूमिकापर देखना होता है: सामान्य भाषाका नार्म, काव्य-भाषाका नॉर्म। केवल सामान्य भाषाके नार्मपर देखी गयी कविता अपने निजी वैशिष्ट्यको प्रकट नहीं कर सकती। यह बात कविताकी स्वनिष्ठतासे मेल खाती प्रतीत नहीं होती। प्रभाव-संचारके सिद्धान्तके अनुसार कविता एक प्रभाव-संचारी प्रतीक है, जिसका अपना व्याकरण है जो कविताकी भाषा तथा सामान्य भाषा, दोनोंके व्याकरणोंकी भूमिकापर परीक्षाकी अपेक्षा रखता है। सारांश यह है कि कवितामें पायी जानेवाली भाषा उस अनुभूतिसे रंजित हो जाती है जिसकी वह प्रतीक है। कविताकी भाषा परतन्त्र (subordinate) भाषा है। केवल भाषाको अपने अध्ययनका प्रवर्तन-बिन्दु बनाकर हम कविताकी पूरी जानकारी नहीं पा सकेंगे (५६)। वस्तुतः, भाषाके विश्लेषण और उसके साहित्यिक प्रकार्यकी पहचानकर हम अपनी कविता सम्बन्धी समझमें परिष्कार ला सकते हैं, उसमें सम्भावित चूक और आरोप की भूलों (errors of omission and commission) से यथासम्भव बच सकते हैं, उसे और अधिक गहरा तथा मजबूत कर सकते हैं। इस सम्बन्धमें लिओ स्पिट्ज़र (Leo Spitzer) द्वारा प्रतिपादित भाषावृत्त (Philological Circle) का सिद्धान्त—उसका परवर्ती संशोधित संस्करण ही मान्य ठहरता है।

अब नमूनेके अध्ययनको केन्द्र बनाकर विचार किया जाये तो उचित होगा। लेखकके शब्दोंमें "सृजनात्मक प्रक्रियाके सन्दर्भमें 'अनागत' की व्याख्या दूसरे व्याख्यानमें की जा चुकी है। यहाँ बिम्ब-रूपके विश्लेषणके लिए इस कविताके एक अंशकी भाषिक संरचना और इस संरचनाके आधारपर **बिम्बसे उत्पन्न अतिरिक्त अर्थकी विवेचनाको लक्ष्यमें रखा गया है"** (५६)।

उद्धरणसे यह स्पष्ट हो जाता है कि लेखकके अनुसार शैलीविज्ञानका लक्ष्य क्या है। यह मानते हुएभी कि 'शैली-विज्ञानभी कविताको कविताके रूपमें ग्रहण करता है' (५६), वह शैलीविज्ञानको व्याख्यातक ही सीमित रखता है, मूल्यांकनमें उसकी परिणति नहीं करता। इसपर कुछ प्रश्न उठ सकते हैं: क्या यह सम्भव है कि साहित्यिक सामग्रीकी व्याख्या उसकी मूल्यवत्तासे काटकरकी जा सके? क्या इससे कविता हमें कविताके रूपमें गृहीत हो जाती है? क्या कविताकी व्याख्या तथा उसके मूल्यांकनके बीच ऐसी लक्ष्मणरेखा स्वीकार करना कविताकी संश्लिष्ट तथा एकात्मक प्रकृति—लेखक कविताकी इस प्रकृतिको स्वीकार करता है—के विरुद्ध नहीं? लेखकने अपने अध्ययनमें जिस 'अतिरिक्त अर्थ बिम्बकी विवेचनाकी बात की है, क्या वह अतिरिक्त अर्थ बिम्बकी गुणवत्ताका आधार नहीं?

वस्तुतः, समस्या गहरी और मौलिक प्रश्नोंसे जुड़ी हुई है। कविता एक विशिष्ट अनुभूतिकी प्रतीक है। वह एक कल्पना या दृष्टि (Vision) है। समीक्षामें इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्टिका पुनर्निर्माण तथा मूल्यांकन होता है—न कि होते हैं। एकवचन इसलिए कि यह एक काम है। इसके दो अन्तस्सम्बद्ध सोपान तो देखे जा सकते हैं पर वह पूरी चीज़ एक ही है। स्पष्ट है कि ये सोपान अन्योन्याश्रित हैं। दृष्टिका पुनर्निर्माण उसके मूल्यांकनके प्रकाशमें होगा, पुनर्निर्माणकी तर्कसंगत परिणति मूल्यांकनमें होगी। कविताकी पूरी समीक्षा तभी होगी।

अमरीकी नव्य समीक्षकोंने पुनर्निर्माणसे सम्बद्ध व्याख्यात्मक समीक्षा (interpretative criticism) पर बहुत बल दिया जो मूल्यांकनपरक समीक्षा (evaluative criticism) के आग्रही समीक्षकोंकी प्रतिक्रियाके रूपमें था। व्याख्यात्मक समीक्षा बहुत लोकप्रिय है, इसकी अब एक शक्तिशाली परम्परा बन गयी है, इसकी अपनी कई खूबियां हैं। यह कविताको समझनेपर ही बल देती है—बल्कि वहींतक अपनेको सीमित रखती है। कविताके मूल्यको अपनी सीमासे बाहर रखती है। कविके सृजन-उद्देश्य तथा पाठकोंकी प्रतिक्रियाको भी अपने क्षेत्रसे बाहर मानती है (४२)। इस सोपानपर कृतिका भाषामूलक आधार प्रत्यक्ष तथा निकटस्थ होता है।

लेखकका अध्ययन व्याख्यात्मक समीक्षाके सन्दर्भमें समझे तथा प्रस्तुत किये गये शैलीविज्ञानपर आधारित है। इसलिए उसका सैद्धान्तिक प्रतिपादन तथा व्यावहारिक अध्ययन परस्पर संगत है। व्याख्यात्मक समीक्षाकी अपनी प्रकृतिके कारण उसमें भाषा-विश्लेषणकी मात्राका अधिक हो जाना स्वाभाविक है जैसाकि नमूनेके अध्ययनसे स्पष्ट है।

शैलीविज्ञानको केन्द्रबिन्दुमें रखकर यदि हम इस प्रश्नको समझनेकी कोशिश करें तो व्याख्यात्मक तथा मूल्यांकनपरक समीक्षाको क्रमशः भाषाशैलीविज्ञान (Linguistic Stylistics)—प्राग स्कूलकी शब्दावलीमें प्रकार्यात्मक शैलीविज्ञान (Functional Stylistics) तथा साहित्य-शैलीविज्ञान (Literary Stylistics) के समकक्ष माना जा सकता है। भाषाशैलीविज्ञानमें शैलीय-विश्लेषण (Stylistic analysis) होता है जो साहित्य-शैलीविज्ञान में शैलीय निरूपण (Stylistic interpretation) का रूप ग्रहणकर कविताकी मूल्य व्यवस्थाको भी अपने दायरेमें समेट लेता है। शैलीविज्ञानका अन्तिम लक्ष्य यही है।

उपर्युक्त ढांचेमें लेखकका शैलीविज्ञान भाषाशैलीविज्ञान या प्रकार्यात्मक शैलीविज्ञानके सोपानका है। भाषाविज्ञानके उपयोजनसे प्रत्यक्ष तथा निकट रूपमें सम्बद्ध होनेके कारण इसमें भाषा-विश्लेषणकी तकनीकोंके उपयोजन का बहुत अवकाश है। पूर्ण समीक्षाके लिए इस सोपानकी उपादेयताको स्वीकार करना होगा। समीक्षाके शिक्षण-प्रशिक्षणकी आवश्यकताको ध्यानमें रखते हुए इसके महत्त्वके विषयमें दो सम्मतियां नहीं हो सकतीं। मूल्यांकनपरक समीक्षा सीधे नहीं सीखी-सिखायी जा सकती। उसे व्याख्यात्मक समीक्षाके सहारे ही सीखना-सिखाना होगा। इस दृष्टिसे लेखक द्वारा प्रस्तुत शैलीविज्ञानको, जिसमें संस्कृत-समीक्षाके भाषावादी दृष्टिकोणका पुनरुज्जीवन अन्तर्भूत है, वर्तमान तथा आधुनिक सन्दर्भमें आलोचनाकी नयी भूमिका माननेमें कोई आपत्ति प्रतीत नहीं होती। प्रचलित समीक्षा-प्रणालीकी लक्ष्यगत अनिश्चितता, प्रभाववादकी सन्तुलन-हीनता' तथा मूल्यांकनकी शीघ्रता, ये सब बातें समस्यापर नये सिरेसे विचार करनेके लिए हमें बाध्य कर रही हैं। इस सन्दर्भमें यह पुस्तक भाषाविज्ञानियों तथा साहित्य समीक्षकोंमें शैलीविज्ञानकी जिज्ञासाके समाधानके साथ उसमें वृद्धि करेगी और विषयके संवादको प्रोत्साहित करेगी, ऐसी आशा होना उचित ही है।

—डॉ० सुरेशकुमार

सन्दर्भ-ग्रन्थ

1. R. Wellek and A. Warren (3rd ed. 1963) : Theory of Literature : Penguin Books.
2. G. Hough (1966) : An Essay on Criticism.
3. Leo Spitzer (1948) : Linguistics and Literary History : Essays in Stylistics.
4. Joseph Dubsky : 'The Prague Conception of Functional Style' in V. Fried (ed.) (1972) : The Prague School of Linguistics and Language Teaching.
5. Ashok R. Kelkar (1969) : 'The Being of a Poem' Foundations of Language (5) 17-33,
6. William O. Hendrick's review of Mary Catherine Bateson (1970) : Structural Continuity in Poetry : a Linguistic Study in five preislamic Arabic odes.

   Journal of Linguistics 9-1 (1973), 148-156.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक हिन्दी व्याकरण तथा रचना

लेखक : डॉ० कैलाशचन्द्र अग्रवाल; प्रकाशक : रंजन प्रकाशन, बांके विलास, सिटी स्टेशन रोड, आगरा-३। पृष्ठ : २०२; डिमाई, ७१; मूल्य : ४.०० रु०।

हिन्दीके व्याकरणिक विश्लेषणकी परम्पराका श्रीगणेश १८वीं सदीमें यूरोपीयों द्वारा हुआ। १९वीं सदीमें यह परम्परा और आगे बढ़ी तथा उस सदीकी इस क्षेत्रकी मुख्य उपलब्धि केलागका 'हिन्दी व्याकरण' था, जो लगभग एक सदी पुराना होनेपर भी आज महत्त्वपूर्ण है। २०वीं सदीमें हिन्दी व्याकरण-लेखनका कार्य औरभी आगे बढ़ा। कामता प्रसादका 'हिन्दी व्याकरण', किशोरीदास वाजपेयीका हिन्दी शब्दानुशासन तथा आर्येन्द्र शर्माका 'ए बेसिक ग्रामर ऑव माडर्न हिन्दी (नया संस्करण प्रस्तुत पंक्तियोंके लेखक द्वारा संशोधित है), ये तीन ही मुख्य कृतियाँ इस सदीके प्रथम तीन चरणोंमें सामने आयी हैं। यों अन्य सैकड़ों प्रयास हुए हैं किन्तु वे प्रायः पाठ्यक्रमोंके लिए लिखे गये हैं।

स्वतन्त्रताके बाद, हिन्दी भाषाके विश्लेषण-विवेचनमें भारतीय तथा अभारतीय (रूसी, अमरीकी, ब्रिटिश, जर्मन आदि) अनेक विद्वानोंने शोधप्रबन्धों, पुस्तकों तथा लेखोंके रूपमें महत्त्वपूर्ण कार्य किये हैं, किन्तु अभीतक कोई ऐसा बड़ा प्रयास नहीं हुआ है, जिसमें सभी नये कार्योंके आधारपर बहुस्वीकृत बातोंको लेते हुए हिन्दी भाषाको व्याकरणित किया गया हो।

प्रस्तुत पुस्तक 'आधुनिक हिन्दी व्याकरण तथा रचना' मूलतः पाठ्यक्रमके लिए लिखी गयी है, जैसाकि इसके नाममें 'रचना' शब्द तथा पुस्तकमें इससे सम्बद्ध भागसे स्पष्ट है। किन्तु लेखक इसके लिए हिन्दी जगतकी ओरसे बधाईका पात्र है कि उसनें इस पाठ्यक्रमीय पुस्तकको अन्य पाठ्यक्रमीय पुस्तकोंसे अलग रखनेका यत्न किया है तथा इस दिशामें हुए अधुनातन कार्योंका पूरा लाभ उठाया है। उदाहरणके लिए यह बहुत कम लोग जानते हैं कि डॉ०रमानाथ सहायने हिन्दी भाषाके विश्लेषणकी दिशामें टैग्मीमिक दृष्टिसे बहुतही महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। जैसाकि डॉ० अग्रवालने अपनी भूमिकामें स्पष्ट किया है, उन्होंने डॉ० सहायकी 'उपयोगी सामग्री' तथा उनके परामर्शसे अपेक्षित सहायता प्राप्त की है। इसतरह पाठ्यक्रमीय पुस्तक होते हुए भी आधुनिक हिन्दीको आधुनिक दृष्टिसे समझनेकी दृष्टिसे यह व्याकरण बहुत उपयोगी है। इसमें हिन्दी ध्वनियों, शब्दों और पदों तथा उसकी वाक्य-रचनापर संक्षेपमें किन्तु अच्छा विचार किया गया है।

पुस्तकको पढ़नेपर एक कमी लगती है कि लेखकने वैज्ञानिक और व्यावहारिक दृष्टिका समन्वय न करके मिश्रण कर दिया है, जिसके कारण पुस्तककी कुछ ऊँचाइयाँ इतनी ऊँची हैं कि कुछ कमियोंकी नीचाई उनके प्रकाशमें अटपटी लगती है।

कुछ कमियाँ संकेत्य हैं : पृ० ३ पर अनुनासिक स्वर १० दिये गये हैं। परिनिष्ठित हिन्दीमें अनुनासिक स्वर शुद्ध ध्वन्यात्मक स्तरपर ८ ही हैं। एँ-ऐं तथा ओं-औं एकमें मिल गये हैं। पृ० ७ पर क्, ख्, ग्, घ् को कंठ्य कहा गया है। इन्हें कोमल तालव्य कहा जाना चाहिये। उसी पृष्ठपर ट्, ठ्, ड्, ढ् को मूर्धन्य कहा गया है। इनका उच्चारण आजकी हिन्दी में मूर्धन्य नहीं है। वस्तुतः इनके उच्चारणकी विशिष्टता स्थानसे अधिक प्रतिवेष्ठनमें है जिसे यहां दिया जाना चाहिये था। पृष्ठ १० पर 'ड' के आगत शब्दोंमें अपवादतः आनेकी बात कही गयी है। निडर, अडिग जैसे अनागत शब्दोंमें भी यह बात मिलती है। यहाँ 'ढ' की अपवादात्मक स्थिति भी दी जानी चाहिये थी। पृष्ठ १६ पर कन्या, उपन्यास, विद्या आदि लेकर जो बात समझायी गयी है, महाप्राणको लेकर उसकी शेष बातेंभी ली जानी चाहिये। उन्हें छोड़ देनेसे प्रसंग अधूरा रह गया है। कृत् और तद्धित प्रत्ययका भेद वस्तुतः हिन्दीमें अब नहीं रहगया है, अतः यह वर्गीकरण आधुनिक दृष्टिसे बहुत सार्थक नहीं है। पृष्ठ १६ पर ही 'आई' और 'ई' को दोनों वर्गोंका प्रत्यय माना गया है। इससेही इस वर्गीकरणकी निरर्थकता स्पष्ट है। पृष्ठ ४० पर –इ, –ई, –या की बात उठायी गयी है। यदि इसे लेखक '–या' मानता है तो क्या इसमें 'आया' या 'छाया' शब्दको रखा जा सकता है। शायद नहीं। वस्तुतः इसे '-इया' कहना अधिक युक्तियुक्त है। विशेषणके प्रकरणमें तुलनात्मक रूप कदाचित् छूट गये हैं, उन्हें लेना चाहिये था। हिन्दी क्रियामें पक्षका विचार अब प्रायः सर्व-मान्य है। क्रियावाले प्रकरणमें यह बात रह गयी है। पृष्ठ ६५ पर 'वह **खेल** खेलता है', 'तुम **लड़ाई** लड़ते हो', 'तुम भी क्या **हँसी** हँसते हो' में खेल, लड़ाई, हँसीको लक्ष्य-वाची शब्द कहा गया है तथा कहा गया है कि ये कर्म नहीं हैं। ऐसा लगता है कि यह बात पुनर्विचार्य है। वस्तुतः कुछ अकर्मक तथा सकर्मक, दोनों ही प्रकारसे प्रयुक्त होनेवाली भी धातुएँ भी होती हैं। ऐसे शब्दों को शहर (मैं शहर आता हूँ) के साथ नहीं रखा जा सकता। पृष्ठ १२५ पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आग्रहात्मक 'ना' का उल्लेख है। यह हिन्दीमें 'ना' होता है या 'न'?

इस प्रकारकी औरभी अनेक बातें जोड़ी जा सकती हैं।

यों इन कमियोंके बावजूद पुस्तक अच्छी है तथा पुराने व्याकरणोंकी तुलनामें हिन्दीकी प्रकृति जाननेके लिए आशा है यह अधिक उपयोगी सिद्ध होगी।

—डॉ. भोलानाथ तिवारी

शोध-आलोचना

मीराँ और आण्डालका तुलनात्मक अध्ययन

लेखक : डॉ० ना० सुन्दरम् प्रकाशक : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग। पृष्ठ : ३९९; डिमा० ७१; मूल्य : ३०.०० रु०।

समीक्ष्य शोधप्रबन्ध जबलपुर विश्वविद्यालयके तत्त्वावधानमें प्रख्यात भाषाशास्त्री डॉ० उदयनारायण तिवारीके निर्देशनमें तैयार किया गया है, जिसमें दो भक्त कवियित्रियों, आण्डाल और मीराँकी उपलब्धियोंका मूल्यांकन है। यह सच है कि दोनों कृष्णोपासिकाओंमें न केवल भाषाकी दृष्टिसे पर्याप्त अन्तर है अपितु आविर्भाव काल और राजनीतिक-सामाजिक परिवेशकी दृष्टिसे भी। फिरभी दोनोंके भक्त्यात्मक साहित्यमें अति विलक्षण साम्य है। प्रस्तुत प्रबन्धके माध्यमसे विद्वान् ग्रन्थकारने दोनोंके पदोंमें प्राप्त साम्य एवं वैषम्यका अत्यन्त सुव्यवस्थित रीतिसे दिग्दर्शन कराते हुए अपने गम्भीर अध्ययनका परिचय दिया है। जिस उद्देश्यको लेकर लेखक चला है उसकी पूर्तिमें उसे प्रभूत सफलता मिली है।

डॉ० उदयनारायण तिवारीके 'कुछ शब्द' के साथ इस ग्रन्थमें कुल नौ अध्याय हैं। प्रथम अध्यायमें नारदभक्ति सूत्र शाण्डिल्य भक्तिसूत्र, पाँचरात्र संहिताएँ, श्रीमद्भागवत पुराणके आदिके आधारपर भक्तिके बीज-स्रोत, परिभाषा एवं स्वरूपका विवेचन-विश्लेषण है। इस भूमिकाके साथ विशिष्टाद्वैत सिद्धान्तका भी प्रतिपादन किया गया है। इसी अध्यायमें उस मानदण्डको भी प्रस्तुत किया गया है जिसके आलोकमें मीराँ और आण्डालकी रागानुगा भक्तिका परीक्षण हुआ है। यह पूरा अध्याय अत्यन्त लघु होनेपरभी लेखकके विस्तृत गम्भीर अध्ययनका संकेतक है। द्वितीय अध्यायके आरम्भमें आलवारों द्वारा विरचित साहित्य—चार हजार दिव्य प्रबन्धका प्रामाणिक विवरण एवं संक्षिप्त परिचय दिया गया है। इसके साथही बारह आलवारोंका जीवनवृत्त देकर लेखक आण्डालका परिचय प्रस्तुत करनेके लिए अच्छी पृष्ठभूमि तैयारकर लेता है। तत्पश्चात् वह आण्डाल और मीराँके व्यक्तित्व और कृतित्वका संक्षिप्त किन्तु उपयोगी अनुशीलन करता है। इस सन्दर्भमें यह ध्यातव्य है कि ग्रन्थकार श्री मु० राघवय्यगार, और पं० परशुराम चतुर्वेदीके प्रति ऋणी है। तृतीय अध्यायका महत्त्व निहित है मीराँ और आण्डाल दोनोंकी भक्ति-भावना, स्वरूप एवं पद्धति के सविस्तार विवेचनमें। चतुर्थ अध्याय है 'मीराँ और आण्डालकी वियोगानुभूति' का। इसके अन्तर्गत अनेक उद्धरणों द्वारा ग्रन्थकारने यह सिद्ध किया है कि मीराँ और आण्डाल दोनोंके काव्यमें विरहानुभूतिकी चरम पराकाष्ठा व्यंजित हुई है और यहभी कि दोनों भक्त कवियित्रियोंने अपने आराध्यके चरणोंमें 'अपनी समस्त प्राणशक्ति, आत्मा और रागात्मक सम्बन्ध' को अर्पित कर दिया है। पंचम अध्यायमें अप्रस्तुत विधानका विवेचन है जो अत्यन्त सुचिन्तित एवं तर्कसम्मत है। मीराँ और आण्डाल, दोनोंने अपने भावोंकी सफल अभिव्यंजनाके लिए प्रकृतिके विशाल प्रांगणसे उपमानोंका चयन किया है। ग्रन्थकारने काफी गहराईमें जाकर यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि दोनोंमें उपास्य भेद न होनेपरभी, निरीक्षणशक्ति एवं सांस्कृतिक दृष्टिकी भिन्नताके कारण प्रयुक्त अप्रस्तुतोंमें अन्तर है।

षष्ठ अध्यायमें मीराँ और आण्डाल द्वारा प्रयुक्त प्रतीकोंका अध्ययन है। लेखकका यह निष्कर्ष मान्य है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'आण्डाल और मीरांके काव्योंमें प्रतीक निर्मल मुकुरका काम देते हैं और इसीलिए वे आध्यात्मिक अर्थकी प्रतीतिके लिए सबसे उपयुक्त प्रमाणित हुए हैं।' (रेखांकित शब्द प्रेसकी भूलके कारण नहीं छपा है, ऐसा लगता है।) किन्तु उसका यह कहना कि 'मीरांकी अपेक्षा आण्डालकी प्रतीक-योजनाएँ अधिक प्रांजल हैं' (पृ० २१०), संदिग्ध है। अच्छा होता यदि दोनों कवियित्रियोंके प्रिय प्रतीकोंकी एक सूची भी दी जाती। भाषागत विशिष्टताओंका सांगोपांग मूल्यांकन इस शोधप्रबन्धके सप्तम अध्यायमें हुआ है। इसके अन्तर्गत शब्द-समूह, वर्णयोजना, लोकोक्तियों और मुहावरोंपर भी विचार किया गया है। यह अंश ग्रंथकारके परिश्रमका परिचायक है। अष्टम अध्यायमें मीरां और आण्डालके सामाजिक परिवेशका अनुशीलन है जिसका निष्कर्ष यह है 'मीरांके पदोंमें सांस्कृतिक चित्रोंकी स्पष्टता देखनेको नहीं मिलती' (पृष्ठ २७०)। इस कथनको लेखक प्रमाण-पुष्ट नहीं बना पाया है। मेरे विचारसे, यह अध्याय अपने स्थानसे हट गया है। इसे पंचम या नवम रखा जाता तो ज्यादा अच्छा होता।

इस ग्रन्थके नौवें अध्यायमें दोनों कवियित्रियोंकी काव्य-कृतियोंका संगीत एवं छन्दोविधानकी दृष्टिसे तुलनात्मक मूल्यांकन किया गया है। यद्यपि अत्याधुनिक काव्य छन्द एवं संगीतकी जबर्दस्त ताकतको नकारनेका प्रयत्न कर रहा है तथापि प्राचीन और मध्यकालीन काव्य दोनोंके शक्ति-सौंदर्यको आत्मसात करता चलता था। मीरां और आण्डाल के काव्यकी अक्षुण्णता उसकी संगीतात्मकतामें निहित है, इस बातका समर्थन करते हुए ग्रन्थकारने यह प्रमाणित कर दिया है कि दोनों कृष्णोपासिकाओंका काव्य विभिन्न शास्त्रीय राग रागिनियोंमें गेय है यद्यपि मीरां लोक-संगीतकी उपेक्षा नहीं करती। चूंकि छन्द संगीतका आधार स्वीकार करता है इसलिए ग्रन्थकारने इस दृष्टिसे भी दोनोंके काव्योंका अनुशीलन किया है जिसका निष्कर्ष उल्लेख्य है: 'आण्डालके छन्द विधानमें न कहीं मात्राक्रम टूटता है, न कहीं यति-भंग होता है, न कहीं छान्दसिक योजना विकृत हो पाती है। इसके विपरीत मीरांके पदोंमें छान्दसिक विशृंखलताएँ देखनेको मिल जाती हैं।'

समस्त शोधप्रबन्धका सार उपसंहारके अन्तर्गत समेट लिया गया है। इसके अन्तमें चार परिशिष्टियां हैं जिनमें प्रथम दो अतमिलभाषियों, विशेषकर हिन्दी भाषियोंके लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। निरुप्पावैका हिन्दी अनुवाद भक्तिकाव्यके अध्येताओं और अन्वेषकोंके लिए ध्यानाकर्षी एवं महत्त्वपूर्ण है।

ग्रन्थ जितना वैदुष्यपूर्ण एवं गम्भीर है, प्रकाशक जितना प्रख्यात है, मुद्रण उतनाही प्रूफकी भूलोंकी बहुलताके कारण दोषपूर्ण है। इस दृष्टिसे कोईभी पृष्ठ दोषमुक्त नहीं है। एक वाक्य यहाँ द्रष्टव्य है—'आण्डालने अपने पदोंमें शृंगार रासके अनुकूलही रग योजनाकी सृष्टिकी है। कालावधिको यानमें रखकर ही राग विभाजन किया गया है। (पृष्ठ २८८)।' इसीप्रकार पृष्ठ १२०–१२१ पर मुद्रित श्रीमद्भागवतके श्लोक अशुद्ध हो गये हैं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयागके प्रकाशनमें ऐसे मुद्रण-दोष देखकर निराशा होती है।

समग्रतः आलोच्य ग्रन्थ तुलनात्मक अनुसंधानके क्षेत्रमें एक उल्लेख्य उपलब्धि है। आलवार भक्तोंका तमिल-प्रबन्धम और हिन्दी कृष्ण-काव्य (डॉ० मलिक मोहम्मद), तमिल और हिन्दीका भक्तिसाहित्य (डॉ० ए० चन्द्रकान्त) आदि शोधप्रबन्धोंके साथ इस उत्कृष्ट ग्रन्थको मैं भारतीय भक्ति साहित्यके अन्वेषकों और जिज्ञासु अध्येताओंके लिए रेखांकित करता हूँ।

—डॉ० राजनारायण राय

प्रसादके काव्यका शास्त्रीय अध्ययन

लेखक : डॉ. सुरेन्द्रनाथ सिंह; प्रकाशक : राधाकृष्ण प्रकाशन, २ अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : ४०७; डिमाई, ७२; मूल्य : ३२.५० रु०।

स्व० जयशंकर 'प्रसाद' के साहित्यका अनुशीलन-अध्ययन अनेक बार हुआ है। उनके साहित्यकी विविधता और साथही उसकी गम्भीरताने सहजही हिन्दी पाठकोंका समादर प्राप्त किया है। स्वाभाविक ही था कि उनकी रचनाओंका अधिकाधिक अनुशीलन-अनुसन्धान-व्याख्यान हो और उसमें निहित अनेकमुखी छवियोंको प्रकाशित होनेका अवसर मिले। प्रस्तुत पुस्तकभी उसी क्रममें 'प्रसाद' जी के काव्यको काव्यशास्त्रीय दृष्टिसे समझनेका प्रयास है। यह प्रयास इसके पूर्वभी न्यूनाधिक रूपमें शोधार्थियों द्वारा किया गया है, किन्तु प्रस्तुत प्रयास इस दृष्टिसे विशिष्ट है कि इसमें विवेच्य सामग्री जैसी उनके द्वारा लिखित काव्योंसे ग्रहण की गयी है वैसीही उनके नाटकोंसे भी—उनमें लिखे गये गीतोंसे भी। दूसरे, इतने विस्तारसे, काव्यशास्त्रीय समस्त प्रतिमानोंके सहारे, इससे पहले इसप्रकारका अध्ययन नहीं किया गया। इस अध्ययनके फलस्वरूप लेखकको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लखनऊ विश्वविद्यालयकी पी-एच० डी० उपाधि प्राप्त हुई है।

यों भाषिक अभिव्यक्तिकी दृष्टिसे 'शास्त्रीय अध्ययन' अब काव्यशास्त्रीय अध्ययनका पर्याय नहीं रह गया है और उस अर्थमें उसका ग्रहण पुस्तकके नामकरणके प्रति शंका उत्पन्न करता है, परन्तु लेखकका अभिप्राय उसीसे है और इसे उसने अपने प्राक्कथनमें स्पष्ट कर दिया है, अतः उसे स्वीकार कर लेनेमें हर्ज नहीं। फिरभी ऐसे अध्ययनोंकी एक सीमा तो है ही कि उनमें कतिपय चुने हुए स्थलोंके एक-दो उदाहरण ही सामने आते हैं, सम्पूर्णतया इस बातकी छानबीन (पंक्तिशः) नहीं रहती, जिससे कविकृत समस्त प्रयोगोंका अपना वैशिष्ट्य खुल सके अथवा इस बातका ज्ञान हो सके कि उन सभी प्रयोगोंके बीच कवि-विशेषको कौन-से प्रयोग विशेष प्रिय हैं और उनकी अर्थच्छवियाँ कहाँ कितनी भिन्न हैं। दूसरे, इस सीमासे तो स्वयं लेखक भी परिचित है कि जिन विभिन्न भारतीय काव्य सम्प्रदायोंके आधारपर यह विवेचन किया गया है वे परस्पर इतने अन्तर्गुम्फित हैं और उनके विभेद नाम बदल-बदलकर इतनी बार उपस्थित हुए हैं कि एक ही उदाहरण कहीं एक बातके लिए प्रस्तुत किया जा सकता है और कहीं दूसरी बातके लिए। ऐसे विश्लेषणका सहज परिणाम होता है कि पाठककी अबोधता जहांकी तहां रहती है (और स्वयं लेखककी भी)। वह यह नहीं जान पाता कि एकही उदाहरणको नानाविध विशेषताओं और उनके बीच निहित किसी एक सूत्रके साथ कैसे समझा जाये। विश्लेषण संश्लेषणमें परिणत नहीं हो पाता। निस्सन्देह डॉ० सिंहने स्थल-विशेषपर विवेचनकी गहराईमें जानेका बराबर प्रयत्न किया है, और काव्य-सौन्दर्यकी झलकके साथ काव्यशास्त्रीय गरिमाकी पहचानका परिचय भी उन्होंनें दिया है, परन्तु उक्त प्रयत्नका अभाव तो बना ही रहता है।

-

विषय-प्रवेशसे लेकर उपसंहार तकके ८ अध्यायोंमेंसे ६ अध्यायोंमें लेखकने 'प्रसाद' जीके काव्यमें क्रमशः रस, ध्वनि, वक्रोक्ति, अलंकार, बिम्ब, भाषा-शैलीके विधानकी परीक्षा की है। इस विवेचनके लिए प्रत्येक अध्यायमें उसे इन विषयोंसे सम्बन्धित किंचित् शास्त्रीय परिचय भी उपस्थित करना पड़ा है। परिचय मान्य तथ्योंका ही दिया गया है, विवाद्य स्थलोंका त्याग कर दिया गया है, जो शोध-प्रबन्धकी सीमाके अनुरूप ठीक भी है। लेखकका विवेचन पाठकमें रुचि उत्पन्न करता है और 'प्रसाद' जीके काव्य को समझने और उसका आस्वाद करानेमें समर्थ है और साथही सविवेक तथा साधार है। अनावश्यक विस्तारसे बचकर गम्भीरतापूर्वक विचार करनेकी प्रणाली और सुचारु भाषाभिव्यक्तिकी दृष्टिसे यह कार्य प्रशंस्य है, फिरभी 'रस-निबन्धना' विषयक विवेचन अपेक्षित गहराई और विस्तृति दोनोंही दृष्टियोंसे अत्यन्त साधारण है। यहाँतक कि उसमें 'वात्सल्य' तथा 'भक्ति' को स्थायीभावकी संज्ञा दी गयी है। इस वर्णनसे अलग-अलग रसोंके कुछ उदाहरण तो सामने आ जाते हैं, परन्तु उन रसोंकी निष्पत्तिके प्रयोग-कौशल और अनेकानेक स्थानोंपर एकही रसकी विभिन्न स्थितियोंके निदर्शनमें 'प्रसाद' जीकी कुशलताका ज्ञान नहीं हो पाता। 'प्रसाद' की 'कामायनी' के रहते अंगीरसके विचारका अभाव भी खटकता है। इसीप्रकार इन अध्यायोंमें या इसी क्रममें यदि दोष-निरूपण भी हो गया होता तो और अच्छा रहता। गुण और रीतिका व्याख्यान, मेरी दृष्टिमें, उतना आवश्यक नहीं जितना दोष-निरूपण आवश्यक है, क्योंकि वह लेखकको एकांगी दृष्टिका दोषी होनेसे बचाता है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि खोज-खोजकर सदोषता प्रमाणित की जाये, बल्कि यह है कि काव्यगुणोत्कर्षके व्याघातक स्थलोंका ऐसा निर्देश आवश्यक है जो एक समर्थ कविकी कमजोरीको पहचाननेमें सहायक हो सके।

'प्रसाद' के काव्यमें शास्त्रीयताके साथ स्वच्छन्दतावादी वृत्तियोंका ऐसा अन्तर-संगुंफन हुआ है कि दोनोंको अलग-अलग करके देखना काव्य-बोधके लिए अहितकर तो हो ही सकता है, आलोचककी दृष्टिकी सीमा बनकर विवेचन को अधूराभी बना सकता है। सौभाग्यसे डॉ० सिंह अपने विवेचनमें उन सम्मिलित स्थितियोंपर प्रकाश डालते चले हैं, जिससे यह तो स्पष्ट हो जाता है कि उनमें काव्य-बोध-क्षमताके साथ सन्तुलित एवं समन्वित आलोचक-दृष्टि भी है, परन्तु यदि उपसंहारमें उनकी इस विशेषताका विशेषतः उल्लेख हो जाता तो सामान्य पाठकोंको अधिक लाभ होता।

समग्र रूपमें पुस्तक महत्त्वपूर्ण और सुलझी हुई है और लेखकके श्रम तथा विवेकका परिणाम है। 'प्रसाद' के अध्ययनमें इससे आवश्यक सहायता प्राप्त होगी।

——डॉ० आनन्दप्रकाश दीक्षित

अलक्षित निराला

लेखक : डॉ० सूर्यप्रसाद दीक्षित; प्रकाशक : कलमधर प्रकाशन, जोधपुर। पृष्ठ : १३४; डिमाई, ७३; मूल्य : ११.५० रु०।

निरालासे सम्बन्धित कई पुस्तकें इस बीच प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुई हैं और स्फुट निबन्धोंकी तो गिनती ही नहीं। कभी-कभी इस भरमारको देखकर ऊब-सी पैदा होने लगती है। प्रश्न उठता है कि निरालापर अब भी क्या कुछ नया लिखे जानेकी गुंजाइश है? यों निराला साहित्यकी आलोचना पिछले चालीस वर्षोंसे होती आ रही है। किसीने उन्हें 'छायावादी' कविके रूपमें देखा, किसीने 'विद्रोही' या 'प्रगतिवादी' रूपमें परखा और कहीं-कहीं उन्हें 'प्रयोगवाद' अथवा 'नवलेखन' के प्रवर्त्तक रूपमें स्थापित किया गया। वास्तवमें, "समूचे आधुनिक साहित्यमें निरालाही एक ऐसा कृती है जो हर युग-प्रवृत्तिसे सम्बद्ध है" इसीलिए हर युग के विचारकोंने उससे निकटता अनुभव की है, उसका पुनर्पुनर्मूल्यांकन किया है और इसीलिए 'छायावाद', 'प्रगतिवाद' आदिके मिट जानेपर भी निरालाका साहित्य 'आउट डेटेड' नहीं हुआ है। यही कारण है कि निराला साहित्यके नये-नये पक्ष निकलते चले जाते हैं। प्रस्तुत अध्ययनकी यही आधार भूमि है।

'अलक्षित निराला' शीर्षक पहले तो आजके फैशनके अनुसार चौंकानेवाला लगता है, उसीतरह जैसे 'आत्महंता आस्था' पर पुस्तककी भूमिका 'प्राङमुख' की इन पंक्तियों पर विचार करते हुए इसकी सार्थकता समझमें आती है कि "हर प्रतिभाके साथ एक ट्रेजडी होती है—वह अपने समयसे आगे-आगे चलती है, इसलिए युगोंतक अलक्षित पड़ी रहती है, निरालाके साथभी कुछ ऐसाही हुआ है। वे प्रायः कहा करते थे—'मेरे साहित्यको पन्द्रह-बीस वर्ष बाद समझा जायेगा'। शायद वह समय अब आ गया है।"

निस्सन्देह, निरालाके समुचित मूल्यांकनका यही ठीक समय है, इस बीच उनके साहित्य और उनके जीवनको राग-द्वेष रहित होकर शुद्ध समीक्षा तथा शोधकी दृष्टिसे देखनेके कई स्तुत्य प्रयास हुए हैं। यह पुस्तक उसी प्रयासकी एक कड़ी है।

निराला वास्तवमें अलक्षित रहे हैं, जैसाकि लेखकने मुखपृष्ठपर उद्धृत किया है—"मैं अलक्षित हूँ, यही कवि कह गया है, स्नेह निर्झर बह गया है।" इन पंक्तियोंमें उनका दर्द मुखरित हो उठा है। इसके अतिरिक्तभी कई स्थानोंपर उन्होंने यही भाव व्यक्त किया है, जैसे :—

× × × "मैं पढ़ा जा चुका पत्र न्यस्त"

× × × "मेरी कद्र नहीं हुई, मुझे बराबर
पेट के लाले रहे हैं, पर हम
साहित्यके बादशाह हैं, अन्धे क्या
जानें?"

निरालाको इधर भरसक परिलक्षित कराया गया है, पर अब भी बहुत कुछ ऐसा है, जो अनकहा रह गया है। जैसे—अपने साहित्यिक जीवनके आरम्भिक चरणमें और बादमें भी, बहुत कुछ आर्थिक कारणोंसे और कुछ-कुछ सत्साहित्यकी रचनाके उद्देश्यसे निरालाने कई चरितात्मक आख्यान (उदाहरणार्थ :—"भक्त प्रह्लाद," "महाराणा प्रताप", "भीष्म", "भक्त ध्रुव", "रामायण की अन्तःकथाएँ" आदि) लिखे थे। इनके लिखनेके पीछे अर्थ-प्राप्तिका तो उद्देश्य था ही, पर साथही बालकों तथा देवियोंको इन लोकोज्ज्वल चरित्रोंसे परिचित करानेका भी उद्देश्य था। इसीप्रकार जीविकाकी खोजमें और हिन्दी-पत्रकारिताके उत्साहमें निरालाने कई पत्र (जैसे—'समन्वय', 'मतवाला', 'सुधा', 'रंगीला' आदि) सम्पादित किये थे। यही नहीं, उन्होंने हिन्दी खड़ीबोलीके व्याकरण निर्माण और एक परिनिष्ठ भाषा संस्कार हेतु कई व्याकरणिक कृतियाँ प्रस्तुत की थीं और साथही बँगला, हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी जैसी भाषाओंके मर्मज्ञ होनेके कारण लगभग २० ग्रन्थोंका हिन्दीमें गद्य-पद्य रूपान्तर किया था, किन्तु उनकी ये कृतियाँ आज उपेक्षित-सी हो गयी हैं। लेखकने ठीक ही कहा है कि "निरालाके श्रेष्ठ साहित्यके समक्ष, उनकी उच्च उदात्त काव्यश्रीकी चकाचौंधमें यह प्रारम्भिक (मुख्यतः व्यावसायिक) लेखन प्रायः अल्प-ख्यात रह गया है और इसीलिए उनके व्यक्तित्वका एक महत्त्वपूर्ण पक्ष अलक्षित रह गया है।"

वस्तुतः यह साहित्य गौण भले ही हो, उपेक्षणीय नहीं है। निश्चयही, "इसके बिना निरालाके सम्पूर्ण साहित्यिक विकास, उनके अस्तित्व संघर्ष, उनकी अर्थ-शुचिता और उनकी मनोग्रंथियोंको भली-भाँति लक्ष्य नहीं किया जा सकता।" लेखकने निरालाके इस दुर्लभ एवं उपेक्षित साहित्य रूपोंपर पृथक्-पृथक् सारगर्भ लेख लिखकर निराला-साहित्यके अध्येताओंका मार्ग प्रशस्त किया है। समीक्ष्य कृतिकी यह एक सराहनीय उपलब्धि है।

पुस्तकका पहला निबन्ध "निरालाकी कुछ अपूर्ण और दुष्प्राप्य कृतियाँ" अत्यन्त श्रमसाध्य एवं संशोधपूर्ण है। निरालाकी प्रकाशित-अप्रकाशित रचनाओंके सम्बन्धमें कई 'मिथ्स' प्रचलित रहे हैं, उनके मरणोपरांत लेखकों तथा प्रकाशकोंने मनगढ़न्त नाम गिनाकर कई भ्रान्तियाँ फैला दी थीं, जिनका यहाँ निवारण किया गया है और तथ्यातथ्य विमर्श करके निरालाके प्रामाणिक साहित्यका विवरण, उनकी अप्रकाशित कृतियोंका निचोड़ और उनकी दुर्लभ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचनाओंका विश्लेषण किया गया है। निराला साहित्यके शोधार्थी निश्चयही इससे लाभान्वित होंगे, क्योंकि यह विवरण निरालाकी 'साहित्य साधना : डॉ० रामविलास शर्मा' की अपेक्षा कहीं अधिक सूत्रबद्ध तथा निस्संग है।

इस पुस्तकका एक निबन्ध है—"निरालाका आत्म-चरित....."। यह रोचक तो है ही, पर इसकी सबसे बड़ी विशेषता है—'निरालाकी दृष्टिमें निरालाका व्यक्तित्व विश्लेषण'। लेखकने उनके आत्मकथ्योंके आलोकमें उनकी मानसिक भाव-पीठिकाका अध्ययन किया है तथा यह स्थापित किया है कि 'निरालाके इस अन्तस्साक्ष्यका पूर्व-परिचय प्राप्त किये बिना उनके बहुविध व्यक्तित्वको सम्यक् रूपसे नहीं समझा जा सकता। उसके अनुसार इन आत्म-वृतान्तों द्वारा उनकी एक आत्म-कथा सुगठित की जा सकती है और शायद इसी सूत्रसे प्रेरित होकर डॉ० दीक्षितने 'निरालाकी आत्मकथा' पुस्तक प्रस्तुत की है। इसकी पूर्त्ति पुस्तकके अन्य दो निबन्धों—'निरालाके प्राक्कथन और समर्पण' तथा 'निरालाके पत्र : कुछ तथ्य-कथ्य' से भी होती है। ये प्राक्कथन और समर्पण मनोरंजक तो हैं ही, विचारो-त्तेजक भी हैं। पुस्तकमें उनके कई अलभ्य किन्तु अनमोल पत्रोंको उद्धृत करके उनके अनदिखे व्यक्तित्वको उजागर करनेका सत्प्रयास किया गया है।

आलोच्य ग्रन्थका एक निबन्ध 'निरालाके तुक्तक' चौंकानेवाला है। लेखक द्वारा दिये गये प्रमाणोंसे सिद्ध हो जाता है कि निरालाने कुछ तो अपने उत्कर्ष कालमें और अधिकतर परवर्त्ती रचनाओंमें अपनी अर्द्धविक्षिप्त मनोदशाके कारण अथवा शिल्प-प्रमाद, अनवधान-प्रेरित हड़बड़ाहट या व्यंग-विद्रूपके अन्तर्प्रभाव-वश बड़ी अनपढ़ तुकबन्दियाँ की हैं। उनके ये तुक्तक हास्यास्पद हैं, पर साथही "तुक्तक" नामक विधाके प्रवर्त्तक भी हैं। निरालाके प्रति व्यक्ति-पूजा भावना होनेके कारण उनके श्रद्धालु समीक्षकोंने इस पक्षको नजरन्दाज किया था, पर लेखकने "हीरो वर्शिप" से बचकर उनकी गद्य-पद्यात्मक तुकबन्दीपर प्रकाश डाला है। शोध तथा समीक्षा-क्षेत्रमें बरती जानेवाली ईमानदारीका यही तकाजा है। इसके अतिरिक्त लेखकने एक अन्य निबन्ध 'निरालाकी दो अन्तिम काव्य-कृतियाँ' में भी इसी सारस्वत निष्ठाका परिचय दिया है। उसने 'गीत-गुंज' एवं 'सांध्य-काकली' संग्रहोंकी विवेचना करते हुए उनके मानस-बिम्बों अर्थात् उनके मनःक्षेप, उनके मुक्तासंग और उनके विविध मनोविकारों जैसे—अहं, दैन्य, भक्ति, आत्मविसर्जन, मनः-क्लान्ति, मृत्यु, कामना, पश्चात्ताप, पर्यवसित सौंदर्य-बोध आन्तरिक सूक्ष्म विश्लेषण किया है। ये कृतियाँ चूंकि निराला-काव्यके पराभवकी सूचक हैं, इसलिए निराला-भक्तोंसे अनदिखी रह गयी हैं। लेखकने पहलीवार अन्धश्रद्धाके प्रभामण्डलको तोड़कर सत्य और तथ्य उपस्थित करनेका साहस किया है। यद्यपि इन तथ्योंसे निरालाके महा-प्राणत्वपर कोई आघात नहीं पहुँचता, बल्कि उनके कहे बिना उनका सारा निरालापन प्रकट ही नहीं होता।

इस ग्रन्थके सबसे महत्त्वपूर्ण पक्षकी ओर संकेत करना भी उपयुक्त होगा। वह है, लेखकका "अंचल-बोध" पुस्तकके दो निबन्ध (१) 'निरालाके साहित्यमें आंचलिक तत्त्व', और (२) 'निराला अपने प्रकृति-पात्र-परिवेशमें'—इसी उद्देश्यके पूरक हैं। आंचलिक तत्त्वोंका निरूपण करते हुए लेखकने ये घोषणा की है—"बैसवाड़ा अंचलने ही निरालाको निराला बनाया है। वहाँके सामन्तोंसे संघर्ष करते हुए वे युगविद्रोही बने हैं। वहाँकी जातीय वर्जनाओंकी प्रतिक्रिया-वश वे व्यवस्था-विरोधी बने, उनका उपहास करते हुए उन्होंने व्यंग्य-विद्रूपकी सृष्टि की है, उनके कालेकार-नामोंका भण्डाफोड़ करते हुए वे यथार्थवादी बने। उन्होंने लघु-मानवोंका जो प्रयोग किया है, वह इसी अंचलकी देन है, यहींसे उन्होंने जन-जीवनकी अनुभूतियोंका चयन किया है।" निश्चयही निरालाजी 'ठेठ देहाती' संस्कारोंके व्यक्ति रहे हैं, उनके सारे साहित्यपर इसकी गहरी छाप है, विशेषतः उनका आरम्भिक और अन्तिम साहित्य शुद्ध लोकपरक है। लोकसे ही उन्होंने सांस्कृतिक भूमिका प्राप्त की है। निरालाने अपने साहित्यमें लगभग २५० बैसवाड़ी शब्द और मुहावरे प्रयुक्त किये हैं, जिनका लेखकने सर्वेक्षण किया है और उनका उपयुक्त अर्थ बताया है। इस 'अंचल-बोध' से रहित कई आलोचकों तथा कोषकारोंने इन शब्दोंका अनर्थ कर डाला था। बैसवाड़ा क्षेत्रसे सम्बद्ध होनेके कारण डॉ० दीक्षितको यह सुविधा प्राप्त हुई है। उन्होंने बड़ो सतर्कताके साथ निराला साहित्यमें अंकित बैसवाड़ी लोक-प्रथाओं, खान-पान, वेश-भूषा, संस्कार, इतिहास-भूगोल अर्थात् वहाँके जीवन-सर्वस्वका निरूपण किया है और इस प्रकार निरालाका लोक-सांस्कृतिक-अध्ययन कर डाला है।

अन्तिम निबन्धमें निरालाके गाँव 'गढ़ाकोला' और उनके क्षेत्रीय परिपार्श्वकी कमेण्ट्री सी दी गयी है। लेखकने यहाँ निराला-साहित्यमें उल्लिखित व्यक्तियों, स्थानों तथा घटनाओंका साक्षात्कार कराया है। यह निबन्ध अन्य निबन्धोंकी भाँति आलोचनात्मक न होकर ललित निबन्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसा है, किन्तु इन आंखों देखे विवरणोंसे निराला सम्बन्धी कई तथ्य हस्तगत होते हैं।

इसप्रकार कुल मिलाकर यह पुस्तक निरालाके अध्ययन-अनुसन्धान हेतु मार्गदर्शक-सी ज्ञात होती है। मेरा विश्वास है, निराला सम्बन्धी अनेक आलोचना-ग्रन्थोंके बावजूद भी यह कृति अपना विशिष्ट स्थान बनायेगी। हां, एक बात कहे बिना नहीं रहा जाता। पुस्तकको जिस रूपमें प्रकाशित होना चाहिए था, नवसिखिए प्रकाशकके प्रमादवश यह वैसी नहीं छप पायी है। इसका गेटअप बहुत साधारण है और मुद्रण तो सदोष है ही। वर्तनीकी कई अशुद्धियां इसमें दिखाई देती हैं, जिनका 'शुद्धिपत्र' आवश्यक है। विज्ञापनके इस युगमें साज-सज्जाका बड़ा महत्त्व है, पर श्रेष्ठ कृतियां अपने कर्तृत्वके कारण समादृत होती हैं और होंगी भी। इसी आधारपर, मेरा मन कहता है, "अलक्षित निराला" अलक्षित नहीं रह पायेगी।

—नरेन्द्र शर्मा

मध्ययुगीन हिन्दीके सूफी-इतर मुसलमान कवि

लेखक : डॉ० उदयशंकर श्रीवास्तव ; प्रकाशक : जवाहर पुस्तकालय, मथुरा। पृष्ठ : ४५०; डिमा. ७३; मूल्य : ३५.०० रु०।

आलोच्य कृति काशी हिन्दू विश्वविद्यालयकी पी-एचडी० उपाधिके लिए १९६८ में स्वीकृत शोधप्रबन्धका संशोधित परिवर्द्धित रूप है।

सम्पूर्ण प्रबन्ध सात अध्यायोंमें विभक्त है। प्रथम अध्यायमें हर्षके पश्चात् भारतकी स्थितिका चित्रण करते हुए मुसलमानोंके आक्रमणका वर्णन किया गया है। पश्चात् दोनों संस्कृतियोंमें संघर्ष और समायोगकी बात कही गयी है। लेखककी यह मान्यता काफी वजनदार है कि 'पक्के इस्लामधर्मीभी यह तथ्य स्वीकारनेको बाध्य हैं कि हिंसावृत्ति-प्रधान इस्लामपर इस संस्कृतिने अपनी नैसर्गिक विशेषता 'सहिष्णुता' का रंग चढ़ा दिया।' (पृष्ठ २७) और कट्टर इस्लामधर्मियोंने यहांकी (भारतकी) बहुत-सी बातोंको अपनानेके साथ-साथ हिन्दीको भी अपनाया, अपनी रागात्मक अनुभूतियोंकी अभिव्यक्ति हिन्दीमें की।

दूसरा अध्याय सन्तसाहित्यसे सम्बन्धित है जिसमें उस समयकी सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियोंपर विचार करते हुए, सन्त कवियोंके आदर्शोंपर विचार करनेके उपरान्त उनके काव्यमें 'कविता-तत्त्व' पर विचार किया गया है।

तीसरे अध्यायमें कृष्णोपासक कवियोंपर विचार किया गया है। चौथे और पांचवें अध्यायमें रीतिकालीन कवियोंकी काव्य साधनापर प्रकाश डाला गया है। चौथे अध्यायमें उन कवियोंका परिचय है जो राज्याश्रित थे और पांचवें अध्यायमें उनका जो राज्याश्रयसे मुक्त स्वतन्त्र थे।

छठे अध्यायमें वैष्णव और रीतिकवियोंका संश्लिष्ट अनुशीलन है।

निष्पत्ति (सातवां अध्याय) में सम्पूर्ण प्रबन्धका सार न देकर मुसलमानोंसे गृहीत कुछ सांस्कृतिक उपलब्धियोंपर विचार किया गया है। अवशिष्ट एकमें दक्षिणके हिन्दी (मुसलमान) कवियोंका परिचय है और अवशिष्ट दोमें सम्राट् शाह आलम सानीकी स्फुट रचनाएँ दी गयी हैं।

इसप्रकार सम्पूर्ण प्रबन्धमें लगभग २१२ मुसलमान कवियोंकी हिन्दी सेवापर प्रकाश डाला गया है, साथही दक्षिणके ३६ मुसलमान कवियोंकी सूचना दी गयी है। हिन्दीमें सूफी मुसलमान कवियोंपर बहुत कार्य हुआ है परन्तु सूफी इतर मुसलमान कवियोंमें केवल कबीर, रहीम, रसखान, आलम, ताज, रसलीन आदि इने-गिने कविही शोध एवं चर्चाके विषय रहे हैं। आलोच्य ग्रन्थके आधारपर निस्संकोच कहा जा सकता है कि सूफियोंके अतिरिक्त अन्य अनेक (लगभग २१६) मुसलमान कवियोंने हिन्दीकी सेवा की। इस दृष्टिसे प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध एक बहुत बड़े अभावकी पूर्ति है।

विषय प्रतिपादनकी शैली वैज्ञानिक है और मान्यताएं प्रमाणपुष्ट। कहीं-कहीं कुछ बातें ऐसी दी गयी हैं जिनका प्रमाण नहीं दिया गया है। यथा—'सुनते हैं, हिन्दुओं और मुसलमानोंमें समान रूपसे व्यवहृत अचकन तथा पाजामा नूरजहाँने आविष्कृत किया था।' (पृष्ठ ४१६) जो मान्यता पुष्ट प्रमाणोंसे युक्त न हो, उसका उपयोग शोध-प्रबन्धमें नहीं करना चाहिये।

आलोच्य शोध-प्रबन्धमें कुछ कवियोंकी केवल सूचना मात्र दे दी गयी है, उनपर अपेक्षित विचार नहीं हुआ है। यथा—'नूरूद्दीन-सन्त नूरूद्दीन दीनदरवेशके शिष्य थे। इनका उपस्थिति काल सं० १८७५ वि० है। इनकी हिन्दी रचनाओंका गुजरातमें आदर है।' (पृष्ठ १०३)।

फिरभी, कुल मिलाकर प्रस्तुत ग्रन्थ एक स्तरीय शोध-प्रबन्ध है।

—शम्भु शुक्ल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रीतिकाव्य में शृङ्गार-निरूपण

लेखक : सुखस्वरूप श्रीवास्तव; प्रकाशक : प्रगति प्रकाशन, बेंतुल बिल्डिंग, आगरा-३ । पृष्ठ : १४९; डिमाई, १९७२; मूल्य : १२ रुपये ५० पैसे ।

यह स्वतन्त्र कृति न होकर एक उपप्रबन्ध-कृति है, जो जीवाजी विश्वविद्यालयकी स्नातकोत्तर परीक्षाके सन्दर्भमें विशेष पत्रके विकल्पमें प्रस्तुत की गयी थी। हिन्दीमें उपप्रबन्ध-कृतियोंकी भी एक अच्छी परम्परा रही है, जिसको डॉ० नामवरसिंह, डॉ० शिवप्रसाद सिंह, डॉ० राममूर्त्ति त्रिपाठी, डॉ० रामनरेश वर्मा, डॉ० केदारनाथ सिंह, श्री रमेशचन्द्र मेहरा आदिने मानक महत्त्व रखनेवाली अपनी कृतियोंसे समृद्ध किया है। पर 'रीतिकाव्यमें शृंगार-निरूपण' इस परम्परासे सर्वथा विच्छिन्न कृति है।

रीतिकवितामें शृंगारका निरूपण विषयकी दृष्टिसे भी कोई नया और अछूता विषय नहीं है। यह बहुचर्चित एवं बहुविवेचित विषय है। अधिकारी विद्वानोंने इसपर बहुत लिखा है। साहित्येतिहासके ग्रन्थोंसे स्वतन्त्र कृतियों-तकमें इस विषयकी मीमांसा हुई है। ऐसी स्थितिमें रीतिकाव्यके शृंगार-निरूपणपर विचार करनेका दायित्व दोहरा हो जाता है। एक तो पहलेसे उपलब्ध सारे तथ्योंको प्रामाणिक रूपमें प्रस्तुत कर युक्तियुक्तताके साथ उनका खण्डन-मण्डन करते हुए पुनरीक्षण करना; दूसरे, अपनी मौलिकता दर्शाते हुए शृंगार-निरूपणका नयी दृष्टिसे सूक्ष्म विश्लेषण करना। कहना न होगा कि विवेच्य पुस्तकमें इन दोनोंमेंसे किसी एक दायित्वका भी सम्यक् निर्वाह नहीं हुआ है।

उपप्रबन्धका प्रारूपभी पूर्ण उपयुक्त नहीं है। कृतिके अभिधानका एक महत्त्वपूर्ण शब्द 'रीतिकाव्य' है। अतः पुस्तकमें इसपर एक अध्याय होना ही चाहिये था, जिसमें रीतिकाव्यके सीमांकन, उसकी प्रकृति-प्रवृत्ति और प्रमुख कवियों आदिका पुनर्मूल्यांकन होता। यहीं रीतिकाव्यकी प्रमुख प्रवृत्तिके रूपमें शृंगार-निरूपणको अवरेखित किया जाना चाहिये था। अगले अध्याय इन्हींके पल्लवन और विवेचनके स्वरूप उपस्थित होते पर ऐसा नहीं हो सका है।

पुस्तकके पाँचवें अध्यायमें रसखानकी गणना रीति-मुक्त कवियोंकी पंक्तिमें की गयी है। यह सही है कि वे एक 'उन्मुक्त प्रेमोन्मत्त' कवि थे, पर उनका स्थान भक्तिकालमें ही है। प्रस्तुत उपप्रबन्धका आधार आद्यन्त ऐतिहासिक है। फिर रसखानको ऐतिहासिक दृष्टिसे रीतिकाव्यका कवि कैसे माना जा सकता है? आचार्य रामचन्द्र शुक्लके अनुसार रसखानका काल विक्रमकी सत्रहवीं शती है। यदि अन्य प्रवृत्त्यात्मक आधारोंपर उन्हें रीतिकाव्यका कवि मानाभी जाये तो इस स्थापनाके लिए ठोस और युक्तियुक्त तर्क प्रस्तुत करने होंगे। पर ऐसा कोई भी तर्क लेखकने प्रस्तुत नहीं किया है।

पूरे प्रबन्धमें श्री सुखस्वरूप श्रीवास्तवको रीतियुगीन शृंगार-निरूपणपर पूर्ववर्त्ती कवियों और उनके काव्योंका प्रभाव दिखानेमें सफलता प्राप्त हुई है। यह एक व्यवस्थित प्रयास है, जिसके लिए लेखककी प्रशंसा की जानी चाहिये। यहाँ उसकी दृष्टि तटस्थ, निरपेक्ष और वस्तुपरक है।

विवेच्य पुस्तकके सामान्य विहंगावलोकनमें ही एक और खटकनेवाली वस्तु इसकी भाषा है। सही मानीमें यह भाषा लेखकके कच्चे मस्तिष्ककी परिचायिका है। भूमिकाके 'संस्कृत वाङमय विशाल है। संस्कृत काव्यकी दो धाराए प्रमुख थीं'—जैसे एकके बाद दूसरे आनेवाले वाक्योंमें कोई अनुस्यूति नहीं दीख पड़ती है। ये वाक्य उखड़े-से लगते हैं। दूसरे वाक्यमें 'संस्कृत' शब्दकी जगह 'इस' या 'उस' सार्वनामिक विशेषणका प्रयोग होना चाहिये था। तभी वाक्यका अर्थ खुल पाता। 'प्रस्फुट' की जगह 'प्रस्फुटित' (पृष्ठ ११) एवं 'केवल' के साथ 'ही' के प्रयोग (पृष्ठ १०) भाषिक भ्रष्टताके उदाहरण हैं। पुस्तकके पृष्ठ ११ पर 'साहित्य दर्पण' का एक श्लोक उद्धृत किया गया है, जो नितान्त भ्रष्ट है। 'शृंगहिमन्मथोद्मेदस्तदागमन हेतुकः' की जगह 'शृंगहि यान्माथोम्द दरुतदागमन हेतुकः' पाठकको कोई अर्थ नहीं दे पाता है। उद्धरणकी भूलोंके अतिरिक्त मुद्रणकी भी भयंकर भूलें हैं—'श्रृंगार' (१४७), 'प्रवर्तक' (१४७), ऐड़ीं (३७), निस्णात (१२९), अनौखी (१३३), बहिवृत्ति (१२), विद्यापसि (१३) आदि। पुस्तकके मुखपृष्ठपर 'शृंगार' शब्द 'श्रृंगार' लिखा हुआ है। ये ऐसी भूलें हैं जिनपर पाठककी दृष्टि अनायास चली जाती है।

कुल मिलाकर लगता है कि पुस्तक जोड़-तोड़कर लिखी गयी है। इसको पढ़नेपर पाठककी कोई निर्भ्रान्त, निश्चित धारणा नहीं बन पाती है। हाँ, पुस्तकका गेट-अप अच्छा है, जिल्द मजबूत और कागज़ ठीक। छपाई भी देखनेमें साफ़-सुथरी है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि 'प्रगति प्रकाशन' ने कुछ अच्छी और महत्त्वपूर्ण पुस्तकोंका भी प्रकाशन किया है, पर यह पुस्तक उसे यश प्रदान करनेमें पूर्णतः और सर्वतः असमर्थ है, बल्कि ऐसी पुस्तकोंके प्रकाशनसे ऊँचे उठ रहे प्रकाशनोंकी मानहानि ही होती है। यदि इस पुस्तकके दूसरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्करणका अवसर आये तो प्रकाशकको लेखकसे इन सारे दोषोंका परिहार अवश्य करवा लेना चाहिये ।

—डॉ० पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु'

अंग्रेजीकी स्वच्छन्द कविता

लेखक : प्रमोद वर्मा; प्रकाशक : मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ९७ मालवीय नगर, भोपाल-३ । पृष्ठ : १७४; डिमाई, ७१; मूल्य : ७.५० रु० ।

यह एक ऐसी समीक्षात्मक कृति है, जिसमें अंग्रेजीकी स्वच्छन्द काव्य-चेतना तथा स्वच्छन्द कवियोंके काव्यगत आदर्शको इतिहास और संस्कृतिके व्यापक फलकपर संश्लेषित-विश्लेषित किया गया है । कहनेको तो इसमें सैद्धान्तिक और व्यावहारिक—दोनों प्रकारके समीक्षा-रूपकी प्रस्तुति है, फिरभी समग्रात्मक रूपसे व्यावहारिक समीक्षाका प्राधान्य लक्षित होता है ।

समीक्ष्य पुस्तक पाँच छोटे-बड़े अध्यायोंमें विभाजित है । प्रथम अध्यायमें अठारहवीं-उन्नीसवीं शताब्दीके यूरोपके **सामाजिक और सांस्कृतिक जीवनके** इतिवृत्तका प्रस्तुतीकरण किया गया है । इससे स्पष्ट हो जाता है कि समीक्षकका दृष्टिकोण मूलतः ऐतिहासिक चेतनासे आबद्ध हो गया है, साथही ऐसा प्रतीत होता है कि काल और परिवेशके पैमानेपर ही वह साहित्यकी परखका आग्रही है । साहित्यकी अन्त-र्प्रवृत्तियोंके विश्लेषणके लिए यह पैमाना एक हदतक ही सही हो सकता और होता है, किन्तु साहित्यकी सौन्दर्यगत तरलताका संचरण कदाचित् इससे बाधित हो जाता है । अतः इसप्रकारके साहित्यिक प्रतिमानपर आधृत समीक्षासे सर्जनात्मक संवेदनशीलताकी बहुत अपेक्षा नहीं की जा सकती ।

पुस्तकके द्वितीय अध्यायमें समीक्षक श्री वर्माने स्वच्छ-न्दतावादका सामान्य विवेचन प्रस्तुत करते हुए स्वच्छन्द तथा आभिजात्य प्रवृत्तियोंको विश्लेषित करनेका उपक्रम किया है, साथही अंग्रेजीकी स्वच्छन्द काव्य-धाराकी विशि-ष्टताओंको उरेहनेका सद्प्रयास किया है । तृतीय अध्यायमें इन्होंने अंग्रेजीकी स्वच्छन्द काव्य-चेतनाके विविध पक्षोंका आकलन पाश्चात्य जगतके सन्दर्भमें प्रस्तुत किया है । लेखकने चौथे अध्यायमें आंग्ल साहित्यके विशिष्ट स्वच्छन्द-तावादी कवियों—ब्लेक, बर्न्स, वर्ड्सवर्थ, कॉलरिज, बायरन, शेली तथा कीट्स आदिकी काव्यगत उपलब्धियोंका सन्तु-लित सर्वेक्षण प्रस्तुत किया है । अन्तमें, पाँचवें अध्यायमें स्वच्छन्दयुगीन समीक्षा और उसके विविध प्रतिमानको रेखांकित करनेका प्रयास किया गया है ।

स्वच्छन्दतावादके सामान्य विवेचनके क्रममें श्री वर्माने अभिजात्य (क्लेसिकी) तथा स्वच्छन्द (रोमांटिक) काव्य की प्रवृत्तियोंको बड़ेही व्यवस्थित रूपमें विश्लेषित करनेकी चेष्टा की है । इनका एतद् विषयक विश्लेषण सपाट, सीधा और इत्तिवृत्तात्मक ही अधिक है । आभिजात्य साहित्यका सम्बन्ध इन्होंने क्लास—कक्षा और विद्यालयों—अका-दमियोंसे जोड़ा है । यह व्याख्या अभिधात्मक और वर्णना-त्मक ही अधिक है । नव्य क्लेसिकी काव्यके सम्बन्धमें लेखकके इस मन्तव्यके साथ कि 'यह मूलतः एक **शैलीगत आन्दोलन** था'—सहमत होना कठिन है ।

लेखकने स्वच्छन्दतावाद (रोमांटिसिज्म) शब्दकी व्युत्पत्तिका विशद विवेचन प्रस्तुत किया है, जो ऐतिहासिक और तथ्यात्मक है । उनके मतानुसार, "इसका सर्वप्रथम प्रयोग जर्मनीमें हुआ । श्लेज्येलने अभिजात साहित्यकी तुलनामें नये साहित्यको स्वच्छन्दतावादी कहा ।" इसप्रकार के काव्यकी वैयक्तिकता, सौन्दर्य-चेतना तथा विस्मय भावना आदि कई प्रमुख प्रवृत्तियाँ हैं, जो अभिजात्यवादी साहित्यसे पृथक् और भिन्न हैं । ये विशेष प्रकारकी काव्य-रचनाएँ विषयके साथही साथ विधानकी दृष्टिसे भी नयी थीं । इस विवेचनको निष्कर्ष प्रदान करते हुए समीक्षक श्री वर्माने लिखा है : "वस्तुतः स्वच्छन्दतावाद इन्द्रधनुषके समान है, जिसमें सात रंगोंका वैविध्य तथा आनुपातिक योग उसे मनोहरता और विशिष्टता प्रदान करता है" (पृष्ठ ४०) । इस उद्धरणमें चूँकि अतिशय भावुकतासे काम लिया गया है, स्वभावतया इसकी भाषा वस्तुनिष्ठतासे अलग हटकर अलंकारमयी अधिक हो गयी है । आलंकारिक भाषा और भावुक मनोवृत्ति स्वस्थ आलोचनाके लिए उचित नहीं होती—न हो सकती है । लेखकने जहाँ-कहीं तार्किक ढंगसे स्वच्छन्दतावादका विवेचन-विश्लेषण प्रस्तुत किया है, वहाँ उनकी आलोचना वस्तुनिष्ठ होनेके कारण ग्राह्य प्रतीत होती है, किन्तु जहाँ-कहीं भी इन्होंने आसक्तिसे काम लिया है, वहाँ उनकी भाषा आलोचनासे अलग हटकर 'लिजलिजी' बन गयी है ।

स्वच्छन्द काव्यका परीक्षण श्री वर्माने कल्पना, बिम्ब प्रतीक तथा भाषा आदिके विविध संदर्भोंमें विस्तारपूर्वक किया है, जो काफ़ी सन्तुलित, अतः श्लाघनीय है । एतद्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषयक विवेचनमें इन्होंने अपेक्षाकृत अधिक बौद्धिकतासे काम लिया है। स्वभावतः ऐसे स्थलोंपर उनकी आलोचना-लक्ष प्रज्ञा और प्रतिभा अधिक निष्णात होकर प्रत्यक्ष होती है। लगभग ये विशेषताएँ चौथे अध्यायमें भी पुरजोर तौरपर दिखायी पड़ती हैं, जहाँ अंग्रेजीके प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियोंका विशद् विवेचन और अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस अध्यायका मूल्य और महत्त्व दुहरा है : एक ओर तो इन कवियोंकी काव्यगत समीक्षा प्रस्तुत की गयी है और दूसरी ओर ऐसे तथ्योंका आकलन किया गया है, जो कवियोंके अन्तर्व्यक्तित्वको अधिक-से-अधिक उजागर करनेमें सक्षम सिद्ध होते हैं। इन तथ्योंके प्रस्तुतीकरणमें समीक्षक श्री वर्माने शोधकी स्वस्थ मनोवृत्तिसे काम लिया है। अतः इसकी मूल्यवत्ता और महत्ता निर्विवाद है।

पुस्तकके अन्तिम अध्यायमें लेखकने स्वच्छन्द कवियोंके काव्यगत आदर्शके माध्यमसे काव्यमें निहित प्रतिमान विषयक उनकी दृष्टि-चेतनापर विचार किया है। इन कवियोंके काव्यगत आदर्शके सम्बन्धमें श्री वर्माकी यह स्थापना सर्वथा सही प्रतीत होती है कि––"इन काव्य-सिद्धान्तोंके प्रणेताओं की प्रतिभा मूलतः सृजनात्मक थी, विश्लेषणात्मक नहीं। अतएव उनके विवेचनोंमें हमें यहाँ-वहाँ स्पष्टता, सुसम्बद्धता अथवा तर्कमूलताका अभाव दिखायी पड़ सकता है" (पृष्ठ १३५)। इसका अभिप्राय यह नहीं कि इनकी महत्ता पर प्रश्न-चिह्न लगाया जाये। बल्कि सच तो यह है कि "कल्पना, ललित-कल्पना, बिम्ब, भाषा, छन्द, अनुभूति और विचार इत्यादि काव्यके उपकरणोंपर अपने अनुभवके बलपर इन्होंने जो प्रतिपादित किये, उनकी महत्ता निस्संदिग्ध है।"

प्रस्तुत पुस्तकके कृतिकार श्री प्रमोद वर्माने अंग्रेजीकी स्वच्छन्द कवितापर विचार करते हुए अवान्तर रूपसे हिन्दीकी स्वच्छन्द कवितापर भी एक 'टच' दिया है। हिन्दीकी स्वच्छन्द कविताके स्रोत और स्वभावको ठीक-ठीक समझने-बूझनेके लिए यह आवश्यक है कि अंग्रेजीकी उक्त कविता-धाराका विश्लेषण-विवेचन प्रस्तुत किया जाये। इस अनिवार्यताकी सम्पन्नता प्रस्तुत समीक्षात्मक कृतिसे सहजतः और स्वयमेव हो जाती है। इसप्रकार, इसकी उपादेयता, महत्ता और मूल्यवत्ता स्वयंसिद्ध है। पुस्तककी व्याख्यात्मक और विश्लेषणात्मक शैलीसे इसकी साहित्यिकता और भी जानदार बन गयी है। बेहतर होता, अगर सौन्दर्य-शास्त्रीय प्रतिमानोंकी कूचीसे इसे सँवारा गया होता।

—डॉ० नन्दकुमार राय

'कवि प्रसादकी सौन्दर्य-भावना'

लेखक : अविनाश; प्रकाशक : जयभारत प्रकाशन, ६५ कल्याण भवन, अहमदाबाद। पृष्ठ : ११५; डिमाई : ७२; मूल्य : २.५० रु०।

'कवि प्रसादकी सौन्दर्य-भावना' पर विविध माध्यमोंसे बहुत-कुछ कहा-सुना जा चुका है, और अबभी यह क्रम जारी है। कवि प्रसादपर अनेक शोध-कार्य भी सम्पन्न हुए हैं। अनेक शोध-ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं। प्रसाद, साहित्यके सभी पहलुओं 'काव्य, नाटक, निबन्ध एवं कहानी' में अपने कवि हृदय और उससे अभिभूत सौन्दर्य-भावनासे सर्वत्र अतिरंजित करते हैं। अतिरंजना शब्द इसलिए प्रयोग कर रहा हूँ क्योंकि कवि कहींपर भी स्वयंको इस भावनासे विलग नहीं कर पाता है। इस पुस्तकमें पूर्व प्रस्तुत विचारोंकी आवृत्ति ही नज़र आती है।

आलोच्य पुस्तकके लेखक एक आयपदाधिकारीके पद-दायित्व-भारको सँभालते हुए 'कवि प्रसादकी सौन्दर्य-भावना' जैसे गहन विषयपर कलम उठानेका साहस सराहनीय होते हुए भी पिष्टपेषणके रोगसे स्वयं को मुक्त न कर सके। इसका अभिप्राय यह नहीं कि लेखकका अपना कुछ भी नहीं है। वैसे लेखककी सहज, सरस चिन्तन-दृष्टि पाठकको आकर्षित करती है।

लेखकने सौन्दर्य-भावनाके स्पष्टीकरणके लिए विविध दृष्टिकोणोंको अपनाया है। भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टि-कोणोंसे प्रसादकी सौन्दर्य-भावनाका मूल्यांकन 'अपने स्वतन्त्र मतसे' किया है। लेखक सौन्दर्यकी परिभाषाको सहज एवं निश्चित परिधिमें बाँधकर एक वाक्यमें निर्धारित करता हुआ लिखता है––'हमारी आत्माको जो आकर्षक व रुचि-पूर्ण लगता है, वह सुन्दर है।' (पृष्ठ २)। सौन्दर्य-भावनाके स्पष्टीकरणोपरान्त लेखक 'प्रसाद' की सौन्दर्य-भावनाके विकासका कविकी रचनाओंके परिप्रेक्ष्यमें वर्णन करता है। कामायनी कविकी सर्वश्रेष्ठ कृति है जिसमें जीवनकी समरसता एवं मानव-जीवनकी पूर्णता प्रत्यक्ष उजागर होती है। कविकी प्रौढ़ सौन्दर्य-भावनाका विकास इसी कृतिमें हुआ है। वैज्ञानिक-युग 'बीसवीं शताब्दी' की सौन्दर्य-भावनाको लेखकने कितनी ईमानदारीसे व्यक्त किया है––'बीसवीं शताब्दी वैज्ञानिक युग है जिसमें भौतिक सुख ही प्रमुख है। आजका युग आत्मासे अधिक शरीरके प्रति चिन्तित है, भावनासे अधिक बुद्धिको विकसित करनेमें उसका विश्वास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बढ़ता जा रहा है–पृष्ठ ७८ । पुस्तकके अन्तमें लेखकने सौन्दर्यके अंग, कला एवं कविके काव्य-सौष्ठवके माध्यमसे सौन्दर्य-भावनाको व्यक्त किया है जो लेखककी साहित्यिक प्रवृतिकी ओर उन्मुख करता है।

मुद्रणके दोष अनेक स्थानों पर हैं।

—श्यामकिशोर शर्मा

निबंध संकलन

समस्या और समाधान

लेखक : डॉ० नगेन्द्र; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३ दरियागंज, दिल्ली-६ । पृष्ठ : १०१; डिमाई, ७१; मूल्य : ७.०० रु० ।

आलवाल

लेखक : स० ही० वात्स्यायन; प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, फैज बाजार, दिल्ली-६ । पृष्ठ : ११०; डिमाई, ७१; मूल्य : ७.०० रु० ।

दीक्षांत-समारोह जैसे विशिष्ट अवसरोंपर दिये जाने वाले भाषणोंका स्वरूप कैसा होना चाहिये, इसके अवलोकन के लिए डॉ० नगेन्द्रका निवन्ध संकलन 'समस्या और समाधान' द्रष्टव्य है। प्रस्तुत संकलनमें डॉ० नगेन्द्रके बारह निवन्ध संकलित हैं, जो वस्तुतः दीक्षांत-समारोह जैसे विशिष्ट अवसरोंपर विविध शिक्षण-संस्थाओं अथवा गोष्ठियोंमें दिये गये भाषण हैं। इन निबन्धोंमें मूलतः भाषा-साहित्य, शिक्षा-शिक्षण और अनुशासनसे सम्बन्धित विविध ज्वलंत समस्याओंपर विचार करते हुए उनके समाधान प्रस्तुत करने की चेष्टा की गयी है। विवेच्य समस्याओंके कई रूप हैं, जैसे शिक्षाका स्वरूप और प्रयोजन, शिक्षणका माध्यम, शिक्षक, शिक्षण और विद्यार्थीकी समस्या, साहित्य सृजन, आस्वादन, अनुवाद, अनुसंधान, आलोचनाकी समस्या आदि। डॉ० नगेन्द्रकी यह सुचिन्तित मान्यता है कि आजके संघर्षरत, गतिव्यस्त मानव-जीवनमें उठनेवाली इस प्रकारकी (तथा अन्यभी) समस्याओंका निराकरण समन्वयवादी दृष्टि अपनाकर किया जा सकता है। स्थिति-भेदसे समन्वयके अनेक रूप हो सकते हैं, उदाहरणके लिए, सिद्धान्त और व्यवहार, व्यष्टि और समष्टिका समन्वय, अतीत और वर्तमान, इतिहास-बोध और युग-बोध, परम्परा और प्रयोग, नये और पुरानेका समन्वय। परन्तु इन सबकी सिद्धि एक विशिष्ट समन्वयसे हो सकती है, और उस विशिष्ट समन्वयकी सिद्धि शिक्षासे होती है। वह समन्वय, कामायनीकारके साक्ष्यपर, डॉ० नगेन्द्रके अनुसार भाव, ज्ञान और कर्मका समन्वय है। भाव, ज्ञान और कर्मका समन्वय समंजस व्यक्तित्वका निर्माण करता है, और यही शिक्षाका चरम प्रयोजन है। चाहें तो इसे 'आत्म-सिद्धि' कह सकते हैं। इसलिए, वास्तवमें आज शिक्षाके सम्यक् ग्रहणकी आवश्यकता है, सम्यक् रूपमें शिक्षित समाजही लोक-मंगलकी सिद्धि कर सकता है।

डॉ० नगेन्द्रके बहु-अधीत, प्रतिभासम्पन्न आलोचक-व्यक्तित्वसे साहित्य-जगत्का पुराना परिचय है। विवेच्य निबन्धोंमें उनके व्यक्तित्वके एक सर्वथा नये पक्ष, शिक्षा-शास्त्री-पक्ष, का उद्घाटन हुआ है। इन निबन्धोंमें डॉ० नगेन्द्रकी सुपरिचित आलोचनात्मक दृष्टि तथा स्पष्ट, सुग्राह्य, परिष्कृत और तर्कपुष्ट विश्लेषणात्मक किन्तु रसात्मक शैलीका पुनः साक्षात्कार किया जा सकता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उक्त शैली डॉ० नगेन्द्रकी विशिष्ट शैली रही है, और बहुतोंने उससे प्रेरणा भी ग्रहण की है।

× × ×

'आलवाल' सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायनके तेरह निबन्धोंका संकलन है। इन निबन्धोंमें स्वतन्त्र रूपसे लिखे गये निबन्धोंके अतिरिक्त विविध देशी-विदेशी संस्थाओंमें दिये गये भाषण और प्रश्नोत्तरभी समाविष्ट हैं। निबन्धोंमें समसामयिक भाषा-साहित्य,लेखक और लेखनसे सम्बद्ध अनेक समस्याओंपर विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि संकलनके निबन्धोंमें समस्याओंके उठाये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवकोंमें उनके समाधानतक लेखकके वैदग्ध्य और सर्वथा महत्त्वपूर्ण चिन्तनका एक समरस सूत्र अंतर्व्याप्ति मिलता है। अत्यन्त उन्नत और समृद्ध बौद्धिक धरातलसे लेखककी चिन्तन-धारा प्रवाहित हुई है उससे तादात्म्य-स्थापन और उसका समुचित ग्रहण तदुनरूप बौद्धिक धरातलकी माँग करता है। लेखक यह स्वीकार करता है कि भारतमें 'बुद्धिमान' तो बहुत हैं पर 'बौद्धिक' शायद ही कोई हो, उन्होंने यहभी स्वीकार किया है कि अधिकतर लेखक यहभी नहीं जानते कि उनका पाठक कौन है या होगा। तब उक्त संकलनकी सार्थकता क्या है ?

बहरहाल, विवेच्य संकलनके कई निवन्ध अत्यन्त उत्कृष्ट हैं। 'काल का डमरूनाद' शीर्षक निबन्धमें उठायी गयी समस्या और उसके समाधानस्वरूप भारतीय कालबोध की अवधारणाका विवेचन हिन्दी साहित्यमें कदाचित् पहली बार किया जा रहा है। पश्चिमी विद्वानोंके साक्ष्यपर लेखकने यह मान्यता व्यक्त की है कि भारतीय लेखकके पास 'सेंस आफ हिस्टरी' की कमी है, जिसकी क्षतिपूर्ति वह अपने अत्यन्त उन्नत 'स्थिति-बोध' और 'प्रत्युत्पन्नमत्तित्व' से कर लेता है। खैर, स्थिति-बोध रूपी पाथेयसे भी 'ऐतिहासिक चौखटे' की पड़ताल सम्भव है। इस प्रक्रियामें शायद 'बुद्धि-संगत प्रभावके साथ उसकी चरम परिणतितक' पहुँचनेकी सम्भावना निहित है। जिज्ञासा होती है कि तब 'स्थिति बोध' और 'बौद्धिकता' में क्या कोई तारतम्य है ? और फिर, क्या भारतीय लेखकके पास 'इतिहास-बोध' की 'कमी' है या उसकी 'इतिहासि-बोध' की अवधारणा पश्चिमसे भिन्न है ? कवि द्वारा भाषा-प्रयोगकी आदर्श स्थितिके सम्बन्धमें लेखककी मान्यताहै कि 'किसीभी कला-माध्यमका, जितनी उसकी क्षमता है उससे कम कहने के लिए, उपयोग करना उसे घटिया संस्कार देना है, संस्कार भ्रष्ट करना है....। कविका उद्देश्य केवल शब्दकी निहित सत्ताका पूरा उपयोग करना नहीं बल्कि उसकी जानी हुई सम्भावनाओंके परेतक उसका विस्तार करना है। इसी 'परे तक विस्तार' करनेके क्रममें निबन्ध-लेखक शब्दोंके 'अर्थगर्भ मौनका भी उपयोग करता है'। हो सकता है कि 'अर्थगर्भ मौन' की अवधारणा 'ध्वनि' से भिन्न हो, पर वह क्या है, इसपर शायद वात्स्यायन जी फिर कभी प्रकाश डालेंगे।

—प्रेमकान्त टंडन

संस्कृत अध्ययन

संस्कृतमें एकाङ्की रूपक

लेखिका : **डॉ० वीरबाला शर्मा**; प्रकाशक : **मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ९७, मालवीय नगर, भोपाल-३ (म०प्र०)। पृष्ठ : ३८४; डिमा. ७२; मूल्य : १२.५०रु०।**

संस्कृत साहित्य (ऋग्वेद) जिसप्रकार विश्वका प्राचीनतम साहित्य है, संस्कृत रूपक साहित्यकी परम्पराभी उसीप्रकार विश्वकी प्राचीनतम रूपककी परम्परा कही जा सकती है। भारतीय नाट्यशास्त्रकारोंने जिस कालमें रूपकके भेदोंकी चर्चा और उनके स्पष्ट भेद निर्दिष्ट किये थे, विश्वकी अनेक भाषाओंमें उस समय साहित्यका व्यवस्थित आरम्भ न हो सका था। यह दूसरी बात है कि भारतीय नाट्यसाहित्यकी परम्पराका पूर्ण परिचय न होनेके कारण अथवा मुख्यतः पाश्चात्य साहित्यका ही परिचय प्राप्त करके भारतीय साहित्यकी समीक्षामें प्रवृत्त आलोचकोंने जवनिका (अथवा यवनिका) जैसे कुछ शब्दोंका प्रयोग देखकर भ्रमवश भारतीय नाट्य परम्पराको यूनानकी देन कहनेमें भी संकोच नहीं किया। यह प्रसन्नताकी बात है कि अब अधिकांश समीक्षक इस मान्यताको अस्वीकार करने लगे हैं। फिरभी नाट्य साहित्यके एक प्रकार विशेष 'एकांकी रूपक' की परम्पराको यूरोपीय साहित्यकी देन माननेवाले समीक्षकोंकी आजभी कमी नहीं है; यद्यपि संस्कृत साहित्यमें एकांकी रूपकोंकी परम्पराभी उतनीही प्राचीन है, जितनी कि भारतीय नाट्य साहित्य एवं नाट्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शास्त्रकी परम्परा। संस्कृत साहित्यका व्यापक अध्ययन किये बिनाही अलोचनामें प्रवृत्त पडितम्मन्य आलोचकोंके लिए प्रस्तुत रचना आँखे खोलनेवाली है।

डॉ० वीरबाला शर्माका यह शोध प्रबन्ध उनकी सतत साधनाका प्रशस्त फल एवं इस विषयकी अबतक प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ रचना है। संस्कृत साहित्यके सामान्य अध्येता दृश्यकाव्योंमें नाटक, प्रकरण और कुछ प्रसिद्ध नाटिकाओंसे आगे प्रायः नहीं बढ़ पाते। भाण-प्रहसन-व्यायोग आदि रूपक भेदोंका परिचय उन्हें केवल शास्त्रीय ग्रन्थोंसे ही मिल पाता है। इन विधाओंके ग्रन्थोंके दर्शन उन्हें न तो निकटवर्त्ती पुस्तकालयोंमें और नहीं ही अधिकांश संस्कृत पुस्तक विक्रेताओंके यहाँ हो पाते हैं। ऐसी स्थितिमें डॉ० शर्माने ८४ भाणों, ५३ प्रहसनों, २३ व्यायोगों, ३७ अन्यरूपक उपरूपक भेदों तथा ५७ बीसवीं शताब्दीमें विरचित एकांकियोंका विवरण उपस्थित करके एकांकी रूपक साहित्यपर जो प्रकाश डाला है, तदर्थ संस्कृत साहित्यके इतिहासके अध्येता उनके चिरऋणी रहेंगे। डॉ० शर्माका यह ग्रन्थ संस्कृत वाङ्मयका रसास्वादन करनेवाले रसिकोंके लिए भी उतनाही उपादेय है, जितनाकि साहित्यके इतिहासके विद्यार्थियोंके लिए। इसमें इन्होंने अपनी विवेच्य विधाकी विविध रूपक कृतियोंके उदाहरणोंको उपस्थित करते हुए पाठकोंको उस स्थितिमें लाकर खड़ा कर दिया है कि वे उन रचनाओंके अवलोकनके लोभका संवरण नहीं कर सकते।

डॉ० शर्मा जहाँ विवेच्य वस्तुका परिचय उपस्थित करनेमें समर्थ हैं, वहीं आलोचनाके प्रसंगमें भी वे उतनी ही सशक्त हैं। भाण आदि एकाङ्की रूपकोंका विवरण उपस्थित करते हुए उन्होंने उनके स्वरूपका निर्धारण भी अत्यन्त सफलतापूर्वक किया है। उदाहरणार्थ भाणके स्वरूपके सम्बन्धमें उनकी मान्यता है कि :—

(क) यह प्रकृत्या वर्णनात्मक होता है।

(ख) प्रायः इसप्रकारकी रचना आदिसे अन्ततक संस्कृतमय हुआ करती थी।

(ग) स्वरूपमें यह एकपात्रीय रूपक होता था।

(घ) इसकी कथावस्तु कविकल्पित एवं धर्मनिरपेक्ष हुआ करती थी।

विद्वान् समीक्षक द्वारा निरूपित भाणका उपर्युक्त स्वरूप सर्वशः स्वीकार करने योग्य है।

लेखिकाकी विवेचक दृष्टिके समक्ष भास जैसे प्रसिद्धतम रूपककारोंके दोषभी प्रकट हुए बिना नहीं रह सके हैं। उदाहरणार्थ—**कर्णभार** की आलोचना करते साहित्यिक कथन है कि "कहीं-कहीं शब्दोंका परिमित प्रयो· उत्पन्न कर देता है। आकाशभाषितोंके प्रयोगसे ' 'प्रविश्य' जैसे द्रुत नाटकीय निर्देशोंसे तथा असूचित पात्र उपस्थितिसे दर्शकोंके मनमें कृत्रिमताका भान अवश्य होता है। यथा—कर्णभारके प्रारम्भ होते ही कर्ण शल्यसे अर्जुनके समीप ले चलनेको कहता है, फिर कुछ कालतक कर्ण द्वारा अपनी शस्त्र शिक्षाकी प्रासङ्गिक कथा तथा छलसे प्राप्त शस्त्रविद्याकी निष्फलताका शाप आदि घटनाओंको कह चुकनेके उपरान्त रथी एवं सारथि रथाधिरोहण करते हैं। ऐसाही रङ्गमञ्चीय निर्देश इस नाटकमें कमसे कम तीनबार किया गया है।" (पृष्ठ २७२)। इसप्रकारकी सशक्त आलोचना ग्रन्थमें स्थान-स्थानपर विद्यमान है।

संस्कृत एकांकी रूपकोंकी परम्परामें यथासमय होनेवाले परिवर्तनोंके मनोवैज्ञानिक कारणोंकी खोजमें भी लेखिकाको अच्छी सफलता मिली है। लेखिकाके अनुसार मध्यकालीन साहित्यमें नग्न शृंगारका प्रवेश कवियोंकी भोग विलासप्रियताके कारण नहीं अपितु सामाजिक वातावरण अथवा आश्रयदाताओंके परिवेशकी विवशताके कारण हुआ है। उस समय भी कान्तद्रष्टा कवि अपने कर्त्तव्यके प्रति उतना ही सजग रहा है। उसके द्वारा नग्न शृङ्गारका वर्णनभी आश्रयदाताके मनोरञ्जन अथवा तुष्टिके लिए नहीं अपितु उन्हें सन्मार्गपर लानेके लिए ही किया गया है। "....शृङ्गार रसमें पगे भाणोंके दर्शन मात्रसे कामसे घृणा उत्पन्न होती है।....'अस्त्रम् अस्त्रेणैव' 'विषं विषेणैव' अथवा 'कण्टकं कण्टकेनैव' इस नीतिके अनुसार तत्कालीन दूषित समाजपर व्यंग्य करनेके सर्वोत्तम साधन थे भाण एवं प्रहसन।.... भाण और प्रहसन जैसे सामाजिक रूपकोंके द्वारा ही मानव समाजके सदस्योंके हृदय स्थायी रूपसे परिष्कृत हो सकते हैं।" (पृष्ठ ४५)। क्योंकि लेखिकाकी मान्यता है कि "साहित्यकार अपने युगके समाजका मनोवैज्ञानिक चिकित्सक भी होता है। वह जब समाजमें दुराचार और कुरीतियोंकी वृद्धि होते हुए देखता है तब हास्य-चिकित्सा पद्धतिको ही अपनाता है" (पृष्ठ १०८)। वह समाजकी आवश्यकताके अनुरूप विषयवस्तुको ग्रहण करता है। फलतः श्री नारायण शास्त्री कङ्कर आदि के '**स्वातन्त्र्य यज्ञाहुति**' आदि एकाङ्कियोंकी कथावस्तु देशभक्तिपूर्ण होने का कारण लेखिकाके अनुसार है "बीसवीं शताब्दीमें भारतीय स्वातन्त्र्यका प्रश्न बहुत महत्त्वपूर्ण हो गया। भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवकोंमें राष्ट्रीय भावना पुनर्जागरित हुई । देश सेवा महत्त्वपूर्ण कार्य समझा जाने लगा" (पृष्ठ ३३५) ।

आलोचनाके सन्दर्भमें लेखिकामें वैदुष्य और प्रतिभाके साथही आत्मविश्वास भी स्थान-स्थानपर प्रतिबिम्बित दिखायी पड़ता है । भारतमें एकाङ्की साहित्यको नवयुगकी देन माननेवाले आलोचकोंके प्रति लेखिकाके निम्नलिखित वाक्य उदाहरणके रूपमें पर्याप्त हैं—"भूत तथा वर्त्तमान कालीन संस्कृत एकाङ्की लेखनकी अखण्ड परम्पराको देखते हुए भी साहित्यके अधिकांश मर्मज्ञ भारतीय प्रादेशिक भाषाओंके साहित्यके इतिहासमें एकाङ्कीके आगमनको एक अपूर्व घटना समझने लगे हैं । अंग्रेजीके प्रसिद्ध मीमांसक श्री परसिबल वाइल्डके अनुसार नाटक साहित्यके कुटुम्बमें एकांकी नाट्य ८० या १०० वर्षोंसे अधिक पुराना नहीं है । सम्भवतः समस्त भारतीय आलोचकोंने इसीप्रकारके पाश्चात्य विचारोंसे प्रभावित होकर अपनी ऐसी धारणा बनाली है (पृष्ठ ३५८) ।. . . ."भारतकी राजनीतिक सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक परतन्त्रताने ही आधुनिक साहित्यकारोंको इस भ्रमजालमें बाँधा है (पृष्ठ ३५९) ।"

उपर्युक्त अनेकानेक प्रशस्तगुणोंसे सम्पन्न इस ग्रन्थके सम्पादनमें एक बात कष्टकर प्रतीत होती है, और वह है, संस्कृतके गद्यों अथवा पद्योंके मुद्रण अथवा सम्पादनका बहुधा दोषपूर्ण होना, विशेषतः जहाँ एक ही शब्दके दो खण्ड करके उनके मध्य ? ? चिह्न लगाकर अथवा अलग-अलग विभाजित करके मुद्रित किया गया है । उदाहरणार्थ—"अयम-यमुदया-द्रैनीतिदूरे" (पृष्ठ ७०), "कुर्वन्क-रैन्वन्द्र-माः" (पृष्ठ ९१) "आत्मीया स्त्रेणा सुरेण. . . ." (पृष्ठ २२०) इत्यादि ।

इन एकाध त्रुटियोंके होते हुए भी इस ग्रन्थकी उपादेयतामें कोई कमी नहीं आती । यह ग्रन्थ विश्वविद्यालयीन, महाविद्यालयीन अथवा सार्वजनिक पुस्तकालयों एवं विद्वानोंके निजी पुस्तक भण्डारोंमें अवश्य संग्रहणीय है; इससे न केवल छात्रोंको लाभ होगा अपितु सतत अध्ययनरत विद्वानोंके ज्ञानमें भी अवश्य ही वृद्धि होगी । इसके प्रकाशनके लिए मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमोके अधिकारी बधाईके पात्र हैं ।

डॉ० ब्रह्ममित्र अवस्थी

संकलन साहित्य

हमारा साहित्य ७०

सम्पादक : श्यामलाल शर्मा; प्रकाशक : ललित कला, संस्कृति और साहित्य अकादमी, जम्मू (कश्मीर) । पृष्ठ : २५७; डिमाई, ७२; मूल्य : ८.०० रु० ।

भारतके कश्मीर प्रदेशका १९७० ई० का चुना हुआ हिन्दी साहित्य प्रस्तुत पुस्तकमें संगृहीत है । इसमें सम्पादकने साहित्यकी विभिन्न विधाओंकी रचनाओंका चयन किया है—भाषा तथा भाषाविज्ञान; साहित्य चर्चा, कथा साहित्य एवं कविता कुंजके शीर्षकोंके अन्तर्गत विभिन्न रुचिके साहित्यका संकलन है ।

सम्पादकने अपने लेख 'डोगरी में प्रचलित उर्दू शब्दावली' में भाषा वैज्ञानिक दृष्टिसे डोंगरीमें होनेवाले कार्यकी एक झलक प्रस्तुत की है । डॉ० रैनाका 'कश्मीरी भाषाका उद्भव और विकास' अपनेमें एक स्वतन्त्र एवं सार्थक प्रयास है । उनके विस्तृत निष्कर्ष-कथनमें सम्पूर्ण लेखकी आवृत्ति हुई है । इस लेखमें एक नवीन दिशाका उन्मेष हुआ है ।

साहित्यिक विचारविमर्शके अन्तर्गत डॉ० संसारचन्द्रका लेख 'हिन्दी हास्य व्यंग्य' साहित्यके एक अभावकी पूर्ति करता है किन्तु इसे हम कश्मीरका साहित्य नहीं मानते, भलेही लेखक आज वहाँ जीविकोपार्जन हेतु उच्चपदासीन हों । डॉ० निजामुद्दीनने 'नवीनजीकी उर्मिला एवं साकेतकी उर्मिलाका तर्कसम्मत एवं तुलनात्मक विश्लेषण किया है जो उनकी मौलिक उद्भावनाशक्तिका द्योतक है । गम्भीर निबन्धोंके अतिरिक्त ओ० पी० शर्माका 'कहानी और मैं'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक सुन्दर ललित रचना है। इस खण्डके लेखोंमें पर्याप्त विविधता है और नूतन प्रयासोंका प्रारम्भ सराहनीय है।

कथा-साहित्यके अन्तर्गत कहानियोंका संग्रह है। इनमें आधुनिक कहानियोंकी श्रेणीमें एक-दो कहानियाँ आ सकती हैं, शेष लीक पीटनेवाली साधारण कहानियाँ हैं। कविता कुंजमें विविधता है। डॉ० रमेशकुमार शर्माकी 'अहरबलका पत्थर—एक स्वगत कथन' वास्तवमें एक सशक्त प्रयोग है। ऐसा प्रतीत होता है कि कश्मीरमें हिन्दी कविताकी सम्भावनाएँ अधिक हैं।

सम्पूर्ण संकलनमें अधिकाधिक विद्वानोंका सहयोग लिया गया है किन्तु कुछ अभाव खटकनेवालेभी हैं। एकांकी और गद्यकी अद्यतन विधाओंपर रचनाएँ संगृहीत नहीं हैं। संस्मरण, आत्मकथा, रिपोर्ताज, रेडियोरूपक, फीचर आदिके लेखनको प्रोत्साहन मिलना चाहिये।

पुस्तककी छपाई सुन्दर है किन्तु वर्तनीकी अशुद्धियाँ अधिक हैं। आकर्षक सेटिंग भी नहीं है। वाक्यविन्यास एवं व्याकरणकी दृष्टिसे रचनाओंका सशक्त होना अभी अपेक्षित है। फिरभी यह निर्विवाद है कि इस प्रतिनिधि संकलनकी उपदेयता असंदिग्ध है।

—डॉ० रजनीकान्त लहरी

हृषीकेश रचनावली

सम्पादक : सतीशचन्द्र चतुर्वेदी; प्रकाशक : चन्द्रादित्य प्रकाशन, चौबेजीका कटरा, किनारी बाजार, आगरा-३ पृष्ठ : ७५२; डिमाई, ७३; मूल्य : ३५.०० रु०।

स्वर्गीय पं० हृषीकेश चतुर्वेदी अत्यधिक मेधावी थे और संस्कृत, हिन्दी तथा अंग्रेजीके अच्छे विद्वान थे। चतुर्वेदीजीके सम्पूर्ण कृतित्वका प्रस्तुत ग्रन्थमें संकलन किया गया है। हिन्दीमें विलोम काव्यके वे प्रणेता माने जाते हैं और 'श्री रामकृष्ण काव्य' हिन्दी साहित्यको उनकी अनूठी देन है। इस रचनाकी विशेषता यह है कि दोनों ओरसे पढ़ी जाती है। श्रीराम तथा श्रीकृष्णविषयक पंक्तियाँ एक दूसरेके उलटे रूपमें हैं यथा :

श्रीराम-पक्ष : रामा हरैं कष्टइ तीव्रधारा
हैं सोपमी, सत्य निरीह जो हैं
श्रीकृष्णपक्ष : 'राधा-व्रती' इष्ट करैं हमारा
हैं जो हरी, नित्य समीप सो हैं

चतुर्वेदीजी हास्यरसके भी अच्छे कवि थे। उनका खण्डकाव्य 'विजय वाटिका' हास्यरससे ओतप्रोत है। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदीने इसपर सम्मति देते हुए लिखा था :

स्व्या हृषीकेश हृदिस्थितेन
यथा नियोक्तास्मि तथा करोमि

चतुर्वेदीजीकी ब्रजभाषामें भी अनेक रचनाएँ उपलब्ध हैं जो हजारोंकी संख्यामें हैं। तानें, पद, दोहा, कवित्त, सवैया आदि छन्दोंमें शृंगार, हास्य, शान्त आदि रसोंका अच्छा परिपाक हुआ है। डॉ० रामविलास शर्माके मतानुसार तो रत्नाकरके बाद चतुर्वेदीजी जैसी सुन्दर ब्रजभाषा किसीने नहीं लिखी। उदाहरणार्थ उनका एक ब्रजभाषा का छन्द देखें :

पहरें पट-नील विराज रहीं,
जमुना-तट पै वृषभानु लली।
लखि रूप अनूप अपूर्व लला
हुलसे अलि ज्यों लहि कंज कली।
यह नागरि कौन-से देस बसै,
निरखी नहिं आजलों ग्राम गली।
अति रूपवती रति - मूरति-सी
युवती मन भावती भोरी भली।

चतुर्वेदीजी द्वारा रचित 'मेघदूत'तथा श्रीमद्भगवद्गीता-के अनुवाद भी इस संकलनमें सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'गंगालहरी' के कुछ अंश तथा रघुवंशके कुछ अंशोंका अनुवाद भी किया है। उर्दूमें भी उच्चकोटिकी शायरी की है वह भी इसमें संकलित है। उनकी रचनाओंके अध्ययनसे पता चलता है कि चतुर्वेदीजीने अपनेको साहित्य-सृजनके लिए समर्पित कर दिया था।

किसीभी शोध-छात्रके लिए चतुर्वेदीजीका व्यक्तित्व एवं कृतित्व उपयुक्त विषय हो सकता है और तभी चतुर्वेदीजीका सही मूल्यांकन सम्भव होगा।

—डॉ० बरसानेलाल चतुर्वेदी

नवीन प्रकाशनोंके
परिचय, विवेचन,
आलोचना और मूल्यांकन
का मासिक
'प्रकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यशपाल और उनकी दिव्या

लेखक : प्रो० भूषण स्वामी; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य संसार, नयी सड़क, दिल्ली–६ । पृष्ठ : ८०; क्राउन, ७३, मूल्य : २.५० रु० ।

यशपालका 'दिव्या' उपन्यास हिन्दी साहित्यमें अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाये हुए है। यह इतिहास नहीं अपितु ऐतिहासिक कल्पना-मात्र है। इसमें उन सामाजिक परिस्थितियोंका विश्लेषण है जो अब अतीत या इतिहासका रूप धारण कर चुकी हैं। दिव्याके प्रत्येक वाक्यमें परम्पराओं और रूढ़ियोंके प्रति विरोध मिलता है।

प्रस्तुत पुस्तक एम० ए० कक्षाओंके पाठ्यक्रमको ध्यानमें रखकर लिखी गयी है। वास्तवमें यह छात्रोपयोगी पुस्तक है। इसमें लेखकने छात्रोपयोगी ग्यारह प्रश्न दिये हैं जिनमें एक प्रश्न यशपालके व्यक्तित्व एवं कृतित्वसे सम्बन्धित है। शेष दस प्रश्न दिव्या उपन्यासपर दिये गये हैं। अन्तमें कुछ प्रमुख स्थलोंकी व्याख्या की गयी है। 'दिव्या' के अध्ययनको सरल और सुबोध बनानेके लिए ही लेखकने प्रश्नोत्तर शैली अपनायी है। फिरभी यह पुस्तक अपने आप में पूर्ण नहीं है क्योंकि इसमें दिव्याके कुछ उल्लेखनीय पक्षोंपर दृष्टिपात न कर प्रचलित प्रश्नोंके आधार पर ही इसका विवेचन किया गया है। 'दिव्या इतिहास नहीं बल्कि ऐतिहासिक कल्पना है', इसका कोई संकेत नहीं किया गया। दिव्याके जीवनके अनुभवों और दिव्यापर उन अनुभवोंके प्रभावोंका प्रयोजन भी नहीं मिलता। यदि इन विषयोंपर कुछ लिखा गया होता तो यह पुस्तक कुछ और उपयोगी हो सकती थी। हाँ, यह पुस्तक मध्यम श्रेणी के छात्रोंके लिए उपयोगी हो सकती है।

—विमलेश गोस्वामी

प्रियप्रवास-दर्शन

सम्पादक : डॉ० वेदप्रकाश शास्त्री; प्रकाशक : संगम साहित्य प्रकाशन, हैदराबाद-१२। पृष्ठ : ३३०; क्राउन, ७२; मूल्य : ५·०० रु० ।

"प्रियप्रवास-दर्शन" दो खण्डोंमें विभक्त कृति है। प्रथम खण्डमें विभिन्न विद्वानोंके विवेचनप्रधान निबन्धोंका संकलन है, दूसरेमें प्रथम खण्डके संकलनकर्त्ता सम्पादक डॉ० वेदप्रकाश शास्त्रीके अपने दस निबन्ध हैं। इसप्रकार दोनों खण्ड प्रियप्रवासकी आलोचना-प्रक्रियाको एकरूप प्रदान करते हैं।

यह ग्रन्थ इस विषयपर अबतक प्रकाशित ग्रन्थोंमें अपना विशिष्ट स्थान बना लेगा, क्योंकि इसमें हरिऔधजी की काव्यक्षमताके विविध तत्त्वोंको नये आयामके साथ उपस्थित किया गया है और इसप्रकार छात्रोंकेलिए विशेष उपयोगी बन गया है।

आलोच्य ग्रन्थकी एक विशेषता इसका दक्षिणांचल से प्रकाशित होना तथा अधिकांश लेखकोंका दक्षिणांचलीय होना है। अनेक स्थानोंपर भाषामें अटपटापन अवश्य है परन्तु अभिव्यक्तिकी ईमानदारीमें वह खप गया है। सभी लेखकोंके विवेचन इस रचनात्मक प्रयासमें सहभागी, सहयात्री और सहभोक्ता बने हैं।

पुस्तकमें कुल मिलाकर ३० निबन्ध हैं—जिनका उद्देश्य मानसिक धरातलपर प्रिय-प्रवासकी विचार एवं भावभूमिका पक्ष उजागर करना है। प्रथम खण्डके अधिकांश निबन्ध विचारोत्तेजक हैं, परन्तु श्री वीरभद्र शास्त्री का निबन्ध 'प्रिय-प्रवास आधुनिक परिप्रेक्ष्यमें' विशेष उल्लेखनीय है।

द्वितीय खण्डमें डॉ० वेदप्रकाश शास्त्रीके निबन्ध हरिऔध को विविध पक्षोंके साथ उपस्थित करनेकी सराहनीय भूमिकाका वहन कर सके हैं।

—कमलेश भटनागर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपन्यास

एक थी तारा

लेखक : डॉ० रमानाथ त्रिपाठी। प्रकाशक : भारती साहित्य सदन, नयी दिल्ली। पृष्ठ : १२३; क्राउन, ७२ मूल्य : ४.०० रु०।

रमानाथ त्रिपाठीके उपन्यास 'कली और धुआँ' की समीक्षा करते समय मैंने लिखा था—"इस कृतिमें, आदि से अन्ततक, कहींभी उपन्यासकार लेखकीय तटस्थताकी भूमिका अदा करनेमें सफलताका स्पर्श नहीं कर पाया है। वह केवल एक प्रचारक है। उसके लेखक एवं प्रचारकके रूपमें जबरदस्त विरोधाभास है। जिस भारतीय संस्कृति और राष्ट्रीयताकी वकालत वह एक प्रचारक के रूपमें करता है; कथाकारके रूपमें, वासनापरक तथा अवैध यौन सम्बन्धोंकी कथाएँ कहकर उनको नकारता है। सैद्धान्तिक रूपमें, वह आधुनिकता-बोध, अवसरवादिता और संत्रासका विरोध करता है, कथायोजना द्वारा उनका अनुमोदन। इसतरह समस्त रचना अन्तर्विरोधोंका जाल-सा प्रतीत होती है। इस रचनाका उद्देश्य साहित्यिक कम, राजनीतिक अधिक प्रतीत होता है।" (प्रकर, अगस्त १९७०, पृष्ठ १३)।

इस कथनके अपवाद लेखकके दो सद्य-प्रकाशित उपन्यास–'सपनोंके टुकड़े' और 'एक थी तारा' हैं। प्रथम में वह, सामाजिक यथार्थकी विभीषिका, राजनीतिक जीवनके प्रपञ्च, वैयक्तिक जीवनकी वेगमयी अनुभूति और नारी-जीवनकी दृढ़ता, आत्मगौरव एवं आत्म-निर्भरतामूलक विश्वासको वाणी देनेमें सफल हुआ है। यहाँ वह प्रचारक न रहकर कथाकारकी भूमिका अदा करने लगा है। दूसरा उपन्यास आधुनिक जीवनके संत्रास, वैषम्य और अन्तर्विरोधोंके मध्यसे गुजरते नारी के यथार्थ और पुरुषके दर्द तथा उत्कर्षकी सफल व्यंजना करता है। ये दोनों रचनाएँ कथाकारके सामाजिक यथार्थ की गहन अनुभूति और आधुनिक नारी तथा पुरुषके जीवनकी समझदारीके प्रमाण प्रस्तुत करती हैं।

'एक थी तारा' नामक उपन्यास मूलतः चरित्रप्रधान आदर्शोन्मुखी यथार्थवादी रचना है। इसमें दो-स्तरकी नारी तथा पुरुषोंके विश्वास तथा कार्योंके माध्यमसे आधुनिक जीवनके यथार्थको प्रस्तुत किया गया है। इस कृतिमें, एक ओर तो अनेक अभाव, विषमता, कठिनाई, सामाजिक अपमान, हीनभावना, अहंकार, आत्मगौरव की कामना और अपने अल्प वैभवके प्रदर्शनकी इच्छाओं में पला जीवन है और दूसरी ओर साधन-सम्पन्न, सुरुचि, तथा सांस्कृतिक गौरव संयुक्त जीवन है। 'तारा' एवं 'सुशील' पहले वर्गके प्रतीक हैं और 'शन्नो' तथा 'अरिंदम' दूसरे वर्गके। यहाँ दोनों वर्गोंका संघर्ष नहीं, जीवनकी मधुरताका संक्रमण प्रस्तुत है। यहाँ पहले वर्गके जीवन की यथार्थताके साथ-साथ दूसरे वर्गके जीवनगत आदर्श के आवरणमें पनपती कुण्ठा तथा वासनाकी कथा है और फिर मानवीय कमजोरियोंके यथार्थसे वैयक्तिक आदर्शकी स्थितितकके उत्कर्षकी प्रक्रियाका सहज चित्रण है। इस कृतिको एक सफल उपन्यास माना जा सकता है।

इस उपन्यासका प्रमुख नारी पात्र है, 'तारा'। इसको, अपना दैनिक जीवनभी संचाचित करना पड़ता है और अपने नारीत्वका रक्षण भी। प्रथमकी सम्पन्नता तथा सुचारु संचालनहेतु उसे पर-पुरुषको चारा डालना पड़ता है और दूसरेकी सुरक्षा-हेतु विराग-प्रदर्शन। इसी राग-विराग, आकर्षण-अनाकर्षण और प्रलोभन तथा खिंचाव में उसके जीवनकी विषमता अन्तर्निहित है। 'अरिन्दम' ताराके पतिका मित्र है। 'तारा' उसके सामने प्रथम मिलनमें ही चारा फेंकती है—"न न, बधू पधू कुछ नहीं। आप मुझे वही दर्जा दीजिये जो फिरेंडकी वाइफ को दिया जाता है।" 'तारा' उसके सामने ही, स्तन निकाल कर पप्पीको दूध पिलाती है, उसके कोटमें गुलाबका फूल लगाते समय उँगलियोंका स्पर्श करा देती है, उसके सम्मुख निरन्तर मुस्कराकर उसके मनको आन्दोलित करती है, उसको फुलवारी दिखानेका आग्रह करती है, बातें करते समय अपने पैरोंकी उँगलियोंका उसे स्पर्श कराती है, फिर उनको हटा लेती है और इसी प्रक्रियाका आवर्तन करती है, उसके साथ बजाजकी दुकानपर जाती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, उसको अपनी ओर खींचती भी है और उपेक्षाभरे कार्योंसे दूरभी रखती है। उसकी उपेक्षासे वह कहीं विमुख होकर न बैठ जाये, अतः उसके घर जाकर रोती है और अपने मकान-मालिककी ज्यादतियोंका वर्णन करती है। इसतरह समीपभी आती है और दूर हटती भी है। वह अरिंदमको उलझाये रखना चाहती है।

वह, उसके सामने प्रस्ताव रखती है कि वह उससे फुसफुसा करके बातें करे ताकि उसकी मकान-मालिकन उनके पारस्परिक सम्बन्धोंपर संदेह करे और समझे कि इन दोनोंमें यौन-सम्बन्ध हैं। उसका यह कार्य वासना-प्रेरित अथवा काम-अतृप्तिजन्य नहीं, वरन् सामाजिक आवश्यकताप्रेरित है। उस क्षेत्रका दरोगा अरिंदमका मित्र है। 'तारा' मकान-मालिकनकी दृष्टिमें स्वयंको अरिंदमकी प्रेमिका प्रमाणित करके दरोगाका भय दिखाना चाहती है और इसप्रकार मकान-मालिकको भयभीत करके मकान खाली करानेकी सम्भावना तथा उसके द्वारा प्रस्तुत दैनिक परेशानियोंसे मुक्त होना चाहती है। उसके जीवनकी विषमताका यह एक पहलू है।

वह, अपने पतिको किशमिशके समान लुच-पुच और 'अरिंदम' को बादाम जैसा सुडौल और सख्त बताती है। इसप्रकार प्रशंसाके झूलेमें झुलाकर वह 'अरिंदम' को अपनी ओर खींचती है। उसके साथ मकान देखने जाती है, मकान-मालिक द्वारा दोनोंमें साहब-बीबीका रिश्ता स्थापित करनेपर प्रसन्नता एवं खिन्नताकी अनुभूति करती है। मार्गमें उसके समीपभी चलती है और दूर भी हटती है। जीनेपर चढ़ते समय उसे एकांतका अवसर नहीं देती। उसके तुनक जानेपर घर आनेका निमंत्रण देती है। उसके साथ होली खेलती है, होलीमें शरीर-मर्दन कराती है और फिर रूठ जाती है। उससे बोलना बन्द कर देती है, पर पुनः उसको उकसाती है। उसकी विरसता, उदासीनता, खिन्नता और विमुखताका निवारण सहसा राह चलते उसे बुलाकर कर देती है। उसके साथ रुचिपूर्वक बातें करती है; उद्देश्य यह है कि उसे अपने भाईके लिए रुपये भेजने हैं और रुपया वह 'अरिंदम' से उधार लेकर देना चाहती है। वह ऐसाही करती है। यह उसके जीवनकी दूसरी विषमता है, जो उसको पर-पुरुष को आकर्षित करनेके लिए बाध्य करती है।

वह, 'अरिंदम' द्वारा खिचनेपर पहेली भरानेका बहाना लेकर उसके समीप जाती है। उससे अगूंठी बदलने का प्रस्ताव करती है और उसे समीप आता देख फिर उसकी उपस्थितिको टालती है। अपने सारे तनाव, समस्त खिचाव, तमाम दूरी और समस्त भेदको उस समय मिटा देती है, जिस समय पतिकी दुर्घटनाकी सूचना पाकर स्वयंको अरिंदमके कंधोंपर गिरा देती है। यह उसके जीवनकी तीसरी विषमता है। यह केवल 'तारा' के जीवनका वैषम्य ही नहीं, भारतके समस्त नारी-समाजकी विषमता है, जिसका मूल सामाजिक असुरक्षा, आर्थिक अभाव, जीवनयापनके साधनाभाव और नारीकी दुर्बल स्थितिमें वर्तमान है। हिन्दीके सजग पाठकको, ताराके विषम जीवनके प्रति सहानुभूति है। यहाँतक वह उपेक्षा, घृणा और अनादरका पात्र नहीं बनती।

'तारा' के चरित्रमें, थोड़ा-सा हल्कापन भी है। वह, अपने सामान्यसे वैभवका प्रदर्शन करती है। बात-बात में, मोटर साइकिलपर बैठकर आने, पप्पीके नर्सरीमें पढ़ने और अपने पतिके आफिसकी बातें करती है। इससे वह अपने महत्त्वका प्रतिपादन करती है। यह उसका हल्कापन है और है सामन्ती तथा अर्ध-सामन्ती समाजका भद्दा अनुकरण।

'तारा' के चरित्रका दूसरा हल्कापन और भी है। वह अपनी तथा अपने पतिकी लड़ाईकी बातें 'शन्नो' से कहती हैं। पतिके शराब पीने, शराब पीकर उसके साथ झगड़ने, माफी माँगने, प्रेम-प्रदर्शन तथा प्रणय-केलिकी गाथाओंका वर्णन भी करती है। अपने ससुरके अवैध सम्बन्धोंका वर्णन भी करती है। यह उसके जीवनकी चौथी विषमता है, जिसका आधार वर्तमान युवा-संस्कृति है, जिसका अस्तित्व जीवन-दर्शनकी गम्भीरतामें नहीं, छिछलेपनपर टिका हुआ है।

अरिंदमकी दृष्टिमें " 'तारा' सिनेमाकी भ्रष्ट और खोखली संस्कृतिको ग्रहण करनेके लिए आतुर है, किन्तु कुशल गृहिणीके संस्करोंपर ध्यान नहीं देती।" (पृ० १५) एक दूसरे स्थानपर, 'तारा' के विषयमें, उसकी धारणा हैं— "स्तरसे गिरी हुई, बुद्धिहीना, मूर्खा, परायी, सभ्यता की जूठन चाटनेवाली और नक्कालचिन है।" (पृ० १०६) 'तारा' के विषयमें, 'अरिंदम' की यह धारणा अक्षरशः सही है, किन्तु इस सबके लिए 'तारा' नहीं, वरन् उसका वह समस्त समाज तथा जीवनकी व्यवस्था उत्तरदायी है, जिसने 'तारा' को यह सब करनेके लिए बाध्य किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'तारा' जब अपने समाजतथा जीवनकी विषमताको समता में परिणत करनेके लिए 'अरिंदम' तथा 'शन्नो' जैसे साधन-सम्पन्नोंकी ओर देखती है, तब तो ये आभिजात्य संस्कृति के ठेकेदार उससे शरीरका दान और अपनी वासना-तृप्ति की भीख माँगते हैं और जब वह अपने पतिकी बढ़ी हुई आयपर स्वाभिमानपूर्वक रहना चाहती है, तब ये उसको घमण्डी तथा क्षुद्र कहते हैं। यथार्थमें ताराके जीवनको दुखद बनाने का दायित्व इसी वर्गपर है।

उपन्यासकारने बड़ी तत्परता, लगन और गहनानुभूतिके साथ, आजकी इस पूँजीवादी संस्कृतिकी सड़ाँधमें पली एक नारीका यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। इस कृतिकी दूसरी नारी है, 'शन्नो'। यह अरिंदमकी पत्नी है। इसमें आभिजात वर्गकी समस्त विशेषताएँ मिलती हैं।

इस उपन्यासके पुरुष-पात्र दो हैं—'अरिंदम' और 'सुशील'। 'अरिंदम' इस रचनाका प्रमुख पात्र है। यह साधन-सम्पन्न वर्गका प्रतिनिधि है। इसमें अपने वर्गके समस्त गुणावगुण वर्तमान हैं वह 'तारा' की आर्थिक सहायता भी करता है और मकान-मालिककी बदमाशियों से मुक्तिभी दिलाता है। वह 'तारा' की दुर्बलताओंका लाभभी उठाना चाहता है और उसको अपनी वासनाकी आगमें जलानाभी चाहता है। दर्पणमें 'तारा' का प्रतिबिंब देखकर ठंडी सासें भी भरता है और उसकी उदासीनता पर विमुख होकर भी बैठ जाता है। फिर उसका प्रोत्साहन पाकर आतुर हो उठता है। 'तारा' द्वारा प्रतिरोध समाप्त कर देनेपर अपनी उँगलियोंसे उसकी ठुड्डी उपर उठता है। भावनामें तैरती 'तारा' की बन्द आँखोंको देखकर उसके चुम्बन-हेतु अपने होठ आगे बढ़ाता है, किन्तु फिर रुक जाता है। उसकी प्रतिज्ञा है, 'तारा' का मन चाहिये, तन नहीं। यह उसके वर्गकी दुर्बलता है। नारी की भावनाको उत्तेजित करना एक अपराध है और एक नैतिक पाप है। 'अरिंदम' का नैतिक पतन हो जाता है।

यहाँसे, उपन्यासकार उसके चरित्रमें एक नवीन मोड़ देता है। वह सोचता है कि "जीनेका आधार क्या केवल छरहरी युवतियोंका प्रेम ही हो सकता है? एक भरेपूरे परिवारके प्रति दायित्वबोध करनेवाला गृहस्थ क्या अपने आश्रितोंका सुख-विधानकर जीवनका आधार नहीं बन सकता?" (पृ० १२१)। यही विचार उसे गिरने से बचाता है। कुछ समीक्षक, अरिंदमके इस चारित्रिक परिवर्तनको, उसके इस नैतिक उत्कर्ष को, उसकी इस क्षमता-अर्जन को, उपन्यासकारका सृजन नहीं, उसके ऋषिकी रचना मानेंगे; किंतु मैं इसको चरित्रका स्वाभाविक विकास मानता हूँ। व्यक्ति अपनी दुर्बलताओंका शिकार भी होता है और उनसे ऊपरभी उठता है। यह मानवके जीवनका सरल और स्वाभाविक विकास है। यही मानवका पूर्ण रूप है। आधुनिकता-बोधके नामपर, केवल मानवीय दुर्बलताओं और चारित्रिक विश्रृंखलताओंके एकांगी चित्र प्रस्तुत करनेकी जो पद्धति हमारे साहित्यमें चल पड़ी है, वह अपूर्ण एवं सीमित दृष्टिका परिणाम है। यह रचना इसका अपवाद है। यहाँ लेखककी दृष्टि मानव के सम्पूर्ण जीवनपर है। वह उसका पतनभी देखता है और उत्कर्षभी, उसकी दृष्टि मानवकी संकीर्णतापर भी है और उसकी विशाल हृदयतापरभी, उससे उसका न प्रेम छिपा है और न घृणा और अन्ततः वह मानवको उसके समस्त आन्तरिक परिवेशमें देखना चाहता है। यही उसकी शक्ति है।

आजके युगमें प्रकाशित होनेवाला अधिकांश कथा-साहित्य मृत्यु-भय, जीवनसे ऊब, वासनागत अतृप्ति, कामजनित कुण्ठा और सामाजिक तथा राष्ट्रीय अलगाव की भावनासे युक्त चरित्रोंकी जीवन-गाथाके रूपमें प्राप्त होता है। यह उपन्यास, यद्यपि इस कथनका उदाहरण नहीं बन सकता, किन्तु फिरभी आधुनिक समाजके युवक-युवतियोंके चित्रोंके माध्यमसे, नवीन रोमांटिक, एवं वासना प्रधान आधुनिक सभ्यताका चित्र अवश्य प्रस्तुत करता है। पृष्ठ २९ और ३० पर 'शन्नो' अपने पति 'अरिंदम' से, 'तारा' के साथ हुई बातोंका सार बताती है। वह कामक्रीड़ाका वर्णन है। यह, आधुनिक मानवकी नग्न कामुकता और उसकी इस क्षेत्रकी विवशता तथा हीनता का चित्रण है। यह आधुनिक जीवनके यथार्थ-चित्रणका एक अंश है। लेखककी दृष्टि यथार्थके अन्य पक्षोंका भी उद्घाटन करती है। यथा, पति-पत्नीका पारस्परिक कलह, कलहका कारण पतिका शराब पीना, पत्नीका अप्रसन्न होकर पतिकी वासना-तृप्तिकी स्वीकृति न देना, पतिका अनुनय विनय करना, कुछ माता-पिताका बालकोंसे शरीरावयवोंके अंग्रेजी नाम पूछना; छोटे-छोटे बच्चोंकी आदतों और उनसे माँ-बाप की सभ्यता तथा रुचिका अनुमान करना, कुछ नारियोंका स्वयंको सुसज्जित तथा सुश्रृंगारित रखना, किंतु घरोंको नितान्त गन्दा रखना,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलस्य तथा फैशनमें खाना घरपर न बनवाना, वरन् तंदूरपर रोटियाँ बनवाके खाना और खिलाना, जाने-अनजाने गोप्य कामक्रीड़ा प्रसंगोंका विवरण देना, पारस्परिक ईर्ष्या तथा द्वेषसे पीड़ित रहना, किसीकी लौटरी खुल जानेपर अन्योंका जलभुन जाना, दुर्घटनाग्रस्त पतिका परिचर्या करना, निष्कलंक गृहस्थकी भाँति आचरण करना और गृहस्थका स्राव पाकर अभाव पीड़ाजन्य वासनाके मार्गका त्याग कर देना।

इसतरह रचना मानवकी यथार्थ नग्नताका चित्रण भी करती है और नग्न पशुतासे मानवीय आदर्शकी दिशा में उत्कर्षकी कथा भी कहती है। यह मानवके संकीर्ण रूप को भी प्रस्तुत करती है और उसकी उदारताका अंकन भी करती है। यह मनुष्यके अभावोंसे भी पाठकको अवगत कराती है और एक श्रेयस्कर मार्गकी ओर बढ़नेकी आकांक्षाको भी जागरित करती है। यही इस रचनाकी शक्ति है, जिसके लिए कथाकार बधाईका पात्र है।

—डॉ० नत्थनसिंह

ये गलियाँ ये रास्ते

लेखक : द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण' प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली–६। पृष्ठ : १००, क्राउन, ७३. मूल्य ४·०० रु०।

स्वतन्त्र देशमें जो स्वाभिमान और तेजस्विता दिखायी पड़नी चाहिये थी, वह दिखायी नहीं पड़ रही है। स्वार्थपरता अवसरवादिता और भ्रष्टाचारका निरन्तर प्रसार हो रहा है। नेता झूठे नारे लगाकर दोनों हाथों जनता को लूट ही नहीं रहे हैं, उसे अनैतिकता और मूल्यहीनता की ओर बलात् धकेल रहे हैं। आरम्भसे ही कोई बड़ी त्रुटि रह गयी है, जिसकी ओर जनसमाजका ध्यान तो है ही नहीं, समाजके कर्णधारभी उधर भ्रूपात नहीं करना चाहते। सुखका विषय है कि ऐसे आपाधापीके युगमें भी कुछ ऐसे ईमानदार और आस्थावान् लेखक और विचारक हैं, जिनका मन देश और समाजकी दुरवस्थासे अकुला उठता है। निर्गुणजीभी इन गिने-चुने लोगोंमें एक हैं। किस पीड़ासे व्यथित होकर उन्होंने यह उपन्यास लिखा है, उन्हींके एक प्रमुख पुरुषपात्र चक्रधरके कथनसे स्पष्ट है—

'आज हमारे देशकी स्थिति यह है कि आदमीमें जितना कुत्सित है, उभरकर सामने आ गया है। शोभन जाने कहाँ छिप गया है। विश्वविद्यालयका वाइस चांसलर हो या चुँगीका चपरासी, कुल मिलाकर देखो तो आज सब एकही सीढ़ीपर खड़े हैं—घोर स्वार्थीमना धूर्तताकी चालें, धोखेबाजी के फन्दे, पैसा बटोरनेकी अदम्य लालसा, दिनरात झूठा प्रदर्शन और छिपा-छिपा गर्हित जीवन—देखकर अचम्भा लगता है कि पूरा देश चलते-चलते किस पगडण्डीपर आ खड़ा हुआ है।' (पृष्ठ ९६-९७)।

ऐसे युगमें साहित्यकारभी क्या अपना दायित्व निभा पा रहा है? वह स्वयंभी समाजकी सड़ाँधमें रस लेने लगा है। लेखकके शब्दोंमें 'इस प्रबल वात्याचक्रमें साहित्यकी भी जैसे धज्जियाँ उड़ गयी हैं। क्या कविता और क्या कहानी, उपन्यास, नाटक—सभी सुरमें सुर मिलाकर कह रहे हैं—हम सब नंगे हैं, हम सब भूखे हैं, हम सब पशु हैं, सिद्ध करदो इन्सानियत एक धोखा है।' (पृ० ९७)

इस लघु उपन्यासमें लेखक बुद्धिजीवियोंके भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करनेमें अपनेको केन्द्रित और सीमित करनेका प्रयास करता है।

प्रोफेसर कक्षा में पढ़कर नहीं आते, मेधावी छात्रों द्वारा प्रश्न पूछे जानेपर उन्हें इतने कम अंक देते हैं कि वे श्रेणी खो बैठते हैं। विभागाध्यक्ष १८ विश्वविद्यालयों के परीक्षक और पेपरसेटर हैं। शोधछात्रोंकी मजबूरी का लाभ उठाकर उनसे उत्तरपुस्तकें जँचवाते हैं। इतनाभी परिश्रम नहीं करते कि उत्तरपुस्तकोंपर हस्ताक्षर करदें, इसके लिए भी कोई एक शोधछात्र तैयार कर देते हैं। वे हस्ताक्षर करते हैं तो चैकको पीठपर। विभागाध्यक्ष नयी-नयी लौंडियोंकी खोजमें रहते हैं। दार्शनिक विद्वान मंचपर योग्यता झाड़ते और टी० ए० लेते समय बुरी तरह झगड़ते हैं, अध्यक्ष महोदय तो लौंडिया भी साथ लाये हैं, जिसे अपनेही बिस्तरपर सुलाते हैं। वाइस चांसलरको एक मुर्गमुसल्लम, दो बोतल शराब और एक लड़की रोज चाहिये। किसीभी महिला उम्मीदवारकी नियुक्ति रात्रिकालीन इंटरव्यू दिये बिना नहीं हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकती। छात्राएँ चुनाव जीतनेके लिए चुम्बन देती हैं। वे प्रथम स्थान पानेके लिए अपना क्वाँरापन विभागाध्यक्षको बेच देती हैं। अगाध पाण्डित्य रसमयी दृष्टि और नये भावोन्मेषवाले दिवाकर जैसे साहित्यकार भोली कुमारियोंको कामकला-पारंगता बना देते हैं। फिर ऐसी लड़कियोंको सरकारी अफसरोंकी प्रेमिकाओंसे एक्सचेंज करते हैं।

इन बेईमानोंके चक्रव्यूहके मध्य उलझे हुए हैं तिवारी (अध्यापक), चक्रधर और मीरा जैसे सद्पात्र। तिवारी किसीकी बटरिंग नहीं करते, वाइसचांसलरके आगे हें हें नहीं करते, अतः वर्षोंतक परिश्रम करते हुए भी लेक्चरर ही बने रहते हैं; जबकि रीडर बन जाता है वह नालायक जो तीन राज्यपालोंकी संस्तुति और पाँच एम० पी० का टेलीफोन वी० सी० के पास पहुँचा देता है।

कक्षाका कुशाग्र छात्र चक्रधर प्रोफेसरोंके षड्यन्त्र के कारण अपनी श्रेणी खो बैठता है। रिश्वत न दे सकनेके कारण वह ट्रेनिंगके लिए भी स्वीकार नहीं किया जाता। दूसरी ओर शिड्यूल्डकास्टके अयोग्य लड़के आसानीसे चुन लिये जाते हैं।

लेखकने एक और दुस्साहस किया है। उसने तथाकथित खोखले समाजवाद और उधार ली हुई प्रगतिशीलता को लतियाकर एक सत्य बात कह दी—"भाई साहब, मैं उसी जातिमें पैदा हुआ हूँ, जो आज सबसे अधिक घृणित मानी जाती है।"

यह घृणित जाति ब्राह्मण है। उसको न फीस माफ हो सकती है और न उसे छात्रवृत्ति मिल सकती है, उसके लिए स्थानभी सुरक्षित नहीं हैं। आज चारों ओरसे बौछारें उसीपर पड़ रही हैं। वह अपने नामके साथ सुविधाभोगी वर्गकी जाति-उपाधि जोड़नेका प्रयास करे तो दण्डका पात्र हो सकता है, जबकि सुविधा भोगी वर्ग जातिके आधारपर सुविधाएँ भी भोगता है और चाहे तो जाति-उन्नयनके लिए शर्मा आदि उपाधियाँ स्वीकार करनेके लिए भी स्वतन्त्र है।

लेखकने इतना सबकुछ कहा नहीं है, इंगित मात्र कर दिया है। उसकी ईमानदारी कहींभी संदिग्ध नहीं है, जो सत्य है, उसने निर्भीकताके साथ कहा है, तथापि वह ब्राह्मणवादी कदापि नहीं है। उसकी इस कृतिमें नयी 'विप्रावतंस' वी० सी० रुद्राक्षकी माला धारण करता और गीता पढ़ता है, किन्तु चपरासीके साथ अप्राकृतिक व्यभिचार करता है। चक्रधर जैसे ब्राह्मण छात्रका सर्वनाशकर उसे एम० ए० होने पर ७५ रु० मासिककी मुदर्रिसी और पुरोहिती करनेको बाध्य करनेवाले अध्यापक शर्मा और शुक्ला नामधारी ब्राह्मण अध्यापक ही हैं।

सौ पृष्ठोंके इस लघु उपन्यासका तीनचौथाईसे भी अधिक अंश मीरा द्वारा अपनी सखीको लिखे गये अपने पत्रके रूपमें प्रस्तुत किया गया है। उसका सहपाठी चक्रधर उसे प्यार करता है, किन्तु दोनोंही परस्पर आकृष्ट होकर भी एक दूसरेको प्राप्त नहीं कर पाते। जब चक्रधर उसकी ओर उन्मुख होता है, उस समय मीरा साहित्यकारकी प्रणयिनी बननेका सपना देखती रहती है और जब मीरा साहित्यकारके द्वारा शोषित और उपेक्षित होकर चक्रधरके आगे समर्पण करती है तो चक्रधर पलायन कर जाता है; क्योंकि इस मध्य दोनोंके जीवन-स्तरमें बहुत बड़ा अन्तर आ जाता है। इसी मुख्य कथाके मध्य लेखकने अपने कथ्यको गूँथ-बुन दिया है। वस्तुतः यह सब कुछ कहनेके लिए एक बड़े कलेवरके उपन्यासकी आवश्यकता थी, तब लेखकका व्यंग्य औरभी तीखा और तिलमिला देनेवाला होता और उसकी भोगी हुई यंत्रणा औरभी अधिक व्यापक हो सकती।

छोटे-छोटे वाक्य, सरल शब्द और प्रभावमयी शैलीके कारण यह उपन्यास रोचक बन पड़ा है। इस कृतिमें भी अपने ढंगकी आधुनिकता है, जो नकलची साहित्यकारोंकी दृष्टिहीन आधुनिकतासे सर्वथा पृथक् है। छपाई आकर्षक है।

—डॉ० रामनाथ त्रिपाठी

शृङ्खला

लेखक : गदाधर नारायण; प्रकाशक: बिहार ग्रं[थ] कुटीर, पटना—४; पृष्ठ : १२० क्राउन, मूल्य ३.०० रु[०]

शृङ्खला— प्रत्यग्दर्शन प्रणालीपर लिखा गया [लघु] उपन्यास है। जिलाधीश रमेश एक दिन कार्यालयमें बैठ[ा] फाइलोंमें डूबा हुआ था तो एक बुढ़िया शिकायत लेकर उसके पास आयी। यह बुढ़िया उसीके गाँवकी एक निस्सन्तान विधवा थी। दोनोंने एक-दूसरेको पहचाना और बस, सारा अतीत वृत्तचित्रके समान रमेशकी आँखों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामने गतिमान् हो उठा। सचमुच ही इसमें कथासे अधिक चित्र हैं। इसमें स्वयं रमेशके शैशव और छात्र-जीवनका चित्र है जिसमें वह एक मेधावी और आदर्शवादीके रूपमें सामने आया है। इसमें उसकी भाभी नीलिमाका चित्र है जिसके जीवनका चित्रपट बड़ा जल्दी-जल्दी बदल रहा है। नीलिमाको समाज पतिताकी संज्ञा दे सकता है, किंतु लेखकने उसे इसप्रकार चित्रित किया है कि पाठकके मनमें उसके प्रति घृणा उत्पन्न नहीं होती, वरन् वह पाठककी पूर्ण सहानुभूति प्राप्त करती है। इसमें किसी पात्रकी यदि कहानी है तो वह नीलिमाकी है। अन्य पात्रोंके जीवन की कुछ झलकियाँ आ गयी हैं। किन्तु नीलिमाके जीवन की कहानी सुनायी गयी है। नीलिमाकी कहानी सुनानेमें लेखकको पर्याप्त सफलता मिली है। इसप्रकारके चरित्रकी कहानी सुनानेमें लेखक प्रायः निस्संग नहीं हो पाता। गदाधर नारायणने नीलिमाको चित्रित करनेमें अद्भुत निस्संगताका परिचय दिया है। सच तो यह है कि सम्पूर्ण उपन्यासमें निस्संगता व्याप्त है। बड़े निलिप्त भावसे लेखकने सारे चित्र दिखाये हैं। यह तटस्थता मनको मुग्ध करती है। लेखक कहींभी किसी पात्रके विषयमें पाठकको पूर्वाग्रहित नहीं करता, पात्र अपने कार्योंसे ही अपने चरित्रका परिचय देते हैं।

शृङ्खला में ग्रामीण जीवनके अनेक पक्ष सजीवता और यथार्थतासे अंकित हुए हैं। विद्यालयोंमें छात्र किस प्रकार कुचक्र करते हैं, अध्यापक और छात्रका संघर्ष किसप्रकार चलता है, गाँवमें किसप्रकारसे धन जोड़ा जाता है, गाँवमें किसप्रकार कुछ लोग ऐसे होते हैं जो धन जोड़नेको ही अपने जीवनका लक्ष्य समझते हैं और अपनी संतानको पढ़ाना-लिखाना अनावश्यक समझते हैं, बाढ़में किसप्रकार गाँवके लोग तबाह हो जाते हैं, ये सब शृङ्खलामें देखे जा सकते हैं। यहभी इस उपन्यासकी एक विशेषता है। ग्रामीण जीवनके इन पक्षोंपर हिन्दीके उपन्यासकारोंका ध्यान कमही जाता है।

शृङ्खलाके पाठकका ध्यान एक और बातपर जायेगा। यौनाचारके वर्णनमें लेखक प्रवृत्त नहीं हुआ। हिन्दीके उपन्यासकार प्रायः इसमें लिप्त हो जाते हैं और अपनी अस्वस्थ मनोवृत्तिका परिचय देते हैं। शृङ्खलामें भी यौन-समस्या आयी है, परन्तु लेखककी निस्संगता वहाँभी यथावत् बनी हुई है। इसतरह शृङ्खलाकी कथा-योजना स्वस्थ चित्तकी निर्लिप्त अभिव्यक्ति है। शृङ्खलामें भोक्ताकी जीवंतता और द्रष्टाकी निर्लिप्तता, दोनों हैं। इन दोनोंका मणि-कांचन-संयोग शृङ्खलाकी वह विशेषता है जिसके कारण यह समादृत होगा।

जो सादगी और सफाई इसकी कथा-योजनामें है वही इसकी भाषामें भी है। भाषाकी दृष्टिसे भी शृङ्खलाकी विशिष्टतापर पाठकका ध्यान जायेगा। ग्रामीण जीवनकी कथा होनेपर भी लेखकने आंचलिक शब्दोंके प्रति मोह नहीं दिखाया। आंचलिक शब्दोंके प्रति यदि आसक्ति नहीं है, तो विरक्ति भी नहीं देखी जाती। जिस क्षेत्रकी कथा है उस क्षेत्रकी बोली वज्जिकाके अनेक ऐसे शब्द यथा-प्रसंग आये हैं जिनका खड़ीबोलीमें उपयुक्त पर्याय नहीं मिल सकता। पाठककी सुविधाके लिए लेखकने पाद-टिप्पणियोंमें ऐसे शब्दोंका अर्थ भी दे दिया है। इसी प्रकार ग्रामीण जीवनमें प्रचलित भोंड़े, भदेस एवं अपशब्दोंसे भी लेखकने परहेज रखा है। ग्राम्य जीवनकी आकृत्रिमता के समान छोटे-छोटे वाक्योंवाली अनलंकृत भाषा शृङ्खला की अंतिम विशेषता है।

निष्कर्षस्वरूप कहा जा सकता है कि कथा-योजना, चरित्र-सृष्टि और भाषा, तीनोंही दृष्टियोंसे शृङ्खला एका सफल उपन्यास है।

—डॉ० सियाराम तिवारी

कैंजा

लेखिका : शिवानी; प्रकाशक : राजपाल एंड संस, कश्मीरी दरवाज़ा, दिल्ली-६। पृष्ठ: ६७; क्राउन, ७३; मूल्य : ४.०० रु०।

आधुनिक हिन्दी कथा-लेखिकाओंमें 'शिवानी' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रस्तुत कृति "कैंजा" के माध्यमसे लेखिकाने रूप-सौन्दर्यपर आसक्त प्रेमी एवं प्रेमकी मूक-मौन भावनाको हृदयमें संजोकर रखनेवाली प्रेमिकाका मनोवैज्ञानिक चित्र प्रस्तुत किया है।

कुमाऊँके सुरम्य प्राकृतिक वातावरणमें पालित-पोषित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नंदी तिवारी तथा सुरेश भट्ट परस्पर रूप-सौन्दर्यके प्रति आकृष्ट हैं। घोर वैधव्यका योग होनेके कारण नंदीके ज्योतिषी पिता उसे डॉक्टरीकी शिक्षा दिलवाकर स्वावलम्बी बना देते हैं। सुरेश, नंदीकी ओरसे कोईभी स्वीकारात्मक संकेत न पाकर मानसिक सन्तुलन खो बैठता है और एक भयानक "सेक्स मैनियक" बनकर जघन्य अपराधोंमें प्रवृत्त होता है। सुरेश मालहारिनकी पगली लड़कीको गर्भवती करके भाग जाता है। नंदी पगलीके पुत्र रोहितको स्वीकारती है। अन्त में, नन्दी अपनी अतृप्त आकांक्षाओं तथा मानसिक अभावोंकी पूर्तिके लिए रुग्ण एवं मरणासन्न सुरेशसे विवाह कर "कैंजा" विमाताका भार वहन करती है।

विवेच्य रचनामें पात्रोंका सजीव और यथार्थ चरि-निरूपण, लेखिकाका मानवीय संवेदनाओं तथा भावनाओं गहन अनुभूतिका परिचायक है। जीवनके छोटे-छोटे चित्र जिस कुशलतासे अंकित हुए हैं, वे समग्र प्रभावक, प्रतीति कराते हैं। इस रचनाकी वर्णन-शैली इतनी सक्षम है कि वह निरन्तर पाठकको उत्सुकताकी डोरमें बाँधे रखती है। जीवनके यथार्थको अभिव्यंजित करनेके लिए जिस प्रवाह-पूर्ण भाषाकी अपेक्षा होती है, उसका सफल प्रयोग लेखिकाने सहजतासे किया है।

—डॉ० तिलकराज वडेहरा

जब धरती बोली

लेखक : श्रीराम शर्मा 'राम'; प्रकाशक : भारतीय ग्रन्थ निकेतन, १३३ लाजपतराय मार्केट, दिल्ली-६। पृष्ठ : २१६; क्राउन, ७२; मूल्य : ८.०० रु०।

इस उपन्यासमें लेखकने साम्प्रदायिकताके प्रश्नको केन्द्रमें रखकर घटनाओं, परिस्थितियों और चरित्रोंको गढ़ा है। साफ है कि इस उपन्यासकी रचनाके पीछे लेखकका आदर्शवादी नजरिया काम कर रहा है। मानव-चरित्रको आदर्श और यथार्थके कटघरोंमें बाँध उनका चित्रण करना हिन्दी उपन्यासके विकास क्रमका एक भूला-बिसरा प्रसंग है। 'जब धरती बोली' के लेखकने अपने उपन्यासको उसी विगत संवेदनासे जोड़कर सामयिकतासे अलग-थलग पड़ने की नियति स्वीकार कर ली है। 'मौलवी अल्ताफ हुसैन' के चरित्रके रूपमें लेखकने एक चलते-फिरते फरिश्तेकी कल्पना की है। 'प्रदीप-मेनका' व 'संजय-शबनम' के सपाट चरित्रों में भी लेखकका स्थूल-मनोवैज्ञानिक रुख साफ नजर आता है।

हाँ, एक बात जरूर है कि आजकी दूषित राजनीतिका चित्र उभारनेमें लेखकने अपनी पत्रकारी वृत्तिका खूब परिचय दिया है। कुल मिलाकर कलात्मक उपलब्धिके नामपर उपन्यास बहुत पीछे है।

—डॉ० प्रेमप्रकाश भट्ट

कहानी संग्रह

आदम और हव्वा

लेखिका : मेहरुन्निसा परवेज; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज दिल्ली-६। पृष्ठ : १७५; क्राउन, ७२; मूल्य : ६.५० रु०।

मेहरुन्निसा परवेज सातवें दशककी एक ऐसी सुपरिचित कथा-लेखिका हैं जिनकी कहानियोंकी ताजगी एवं सहजतासे हिन्दी कहानीका पाठक समुदाय अच्छीतरह परिचित है। जिन्दगीके बीचसे एक-एक क्षणोंको पकड़ कर उनमें पूरीतरह खो जानेवाली एवं सीधी-सादी भाषामें उन तमाम क्षणोंको अपनी कहानियोंमें टाँक देनेवाली यह युवती-कथा-लेखिका अपनी उम्रके अनुसार ही हर स्थितियों एवं घटनाओंमें बहुत गहरे पैठकर अत्यन्त सूक्ष्मता एवं बारीकीके साथ उनका उद्घाटन करती हैं। 'त्यौहार' ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या 'शिनाख्त'; 'उसका घर' हो या 'आदम और हव्वा',— प्रत्येक कहानीमें भोगे हुए क्षणोंकी यही ताजगी और अनुभवकी हुई अनुभूतिकी यही सूक्ष्मता व्यक्त हुई है।

मेहरुन्निसा परवेजके इस संग्रहकी प्रायः सभी कहानियाँ वर्तमान जिन्दगीकी आर्थिक जटिलता एवं टूटनसे सम्बन्धित हैं और अर्थाभावकी इस भयंकर आँधीमें पारिवारिक जीवनके टूटते जाने एवं परम्परित रिश्ते-नातोंके शिथिल पड़ते जाने तथा बदलते जानेकी बात करती हैं—

"पहचान लिया ?"

"नहीं, यह मेरा आदमी नहीं है, इसे नहीं पहचानती।"

—"पुलिसवालेके धमकानेपर भी माँने यही कहा। बती माँके इस रूपको देख सहम गयी। × × × दोनों चुपचाप घर आ गयीं। उसके बाद माँने कभी उस बातकी चर्चा भी नहीं की। नही उसके लिए कोई मातम मनाया, न और कुछ किया। कई स्थितियाँ जुड़ती गयीं। और बती गरीबीका नंगा रूप देखती रही। यही गरीबी थी शायद, जब भूखे पेटसे होकर शराब आँखोंमें उतरती थी, तो पत्नी और बेटीमें अन्तर नहीं दिखता था।" (शनाख्त) × × × "अतुल तुम नहीं समझ सकोगे कि हम कितनी परेशानियोंमें जी रहे हैं। नर्मदाके किनारेवाली डामर रोड पर तेजीसे जीप चलानेवाली सुमीको भूल जाओ। अबतो मैं हर सुबह जब उठती हूँ तो डर लगता है कि कहीं माँने आत्महत्या न कर ली हो। जाने क्यों, बप्पा ऐसे हो गये हैं। सारे घरमें उनका आतंक छाया रहता है। और अतुल तुम कल्पना नहीं कर सकते कि वे कितने भद्दे ढंगसे चीख-चीखकर गालियाँ देते हैं। × × × जीवन इतना नीरस हो गया है कि लगता है, एक घरमें रहनेवाले, एक परिवार कहलानेवाले हम लोगोंकी अलग-अलग दिशाएँ हैं।" (सिर्फ एक आदमी)। स्पष्ट है कि आजका पारिवारिक जीवन बुरी तरह बिखरता जा रहा है और उसकी परम्परित व्यवस्था चरमराकर टूटती जा रही है। सम्बन्धोंके इस विखण्डनके धरातलपर ये कहानियाँ कहीं पति-पत्नी-सम्बन्धकी शिथिलता व्यक्त करती हैं (अपने-अपने दायरेमें) तो कहीं पिता-पुत्री-सम्बन्ध की; और कहीं प्रेमी-प्रेमिकाको एक-दूसरेके लिए अजनबी बनाकर पेश किया गया है (तीसरा पेंच) तो कहीं माँ-बेटी को (त्योहार)।

और सम्बन्धोंकी इस शिथिलताका कारण किसी-न-किसी रूपमें आर्थिक है और उसीके कारण ये सम्बन्ध बेजान पड़ते जारहे हैं। मेहरुन्निसाने आजकी इस आर्थिक विवशताका जितना करुण चित्र इन कहानियोंमें खींचा है, वह अन्यत्र शायदही कहीं देखनेको मिले। यह चित्र सचमुच रोमांचकारी एवं हृदय-विदारक है जब आर्थिक विवशताके वशीभूत हो पत्नी अपने पतिकी लाश पहचाननेतक से भी इनकार कर देती है और अपनी बेटियोंको बेटियाँ नहीं समझती। इस आर्थिक विवशतामें ही बूढ़े बच्चोंकी तरह चटोरपन दिखाने लगते हैं और बच्चे समझदार तथा उत्तरदायी बन जाते हैं। यहाँ तक कि इस आर्थिक विवशताके कारण लोग अपने धार्मिक पर्वों एवं त्यौहारोंको भी नहीं मना पाते और उनमें उनका उत्साह समाप्त हो जाता है—"अम्मा अब तीज-त्यौहारोंसे चिढ़-सी गयी थीं। उनका कहना था, ये त्यौहार हमें दूसरोंके सामने नंगा करने चले आते हैं। × × × रमजानीका जिक्र आते ही जाने क्यों अम्मा चिढ़ जाती हैं। अम्मा कहती हैं— कयामतके आसार हैं, कुरानमें लिखा है छोटे लोग बड़े-बड़े पक्के मकान बनायेंगे, पैसेवाले हो जायेंगे; और बड़े लोग, खानदानी लोग ग़रीब हो जायेंगे।" (त्योहार)

जाहिर है कि आजकी यह गरीबी और महँगाई हमारी जिन्दगीके लिए एक अभिशाप सिद्ध हो रही है जो हमारे रहन-सहनके तौर-तरीकोंमें ही नहीं बल्कि हमारे सोचने समझनेके दायरोंमें भी आश्चर्यजनक रूपसे परिवर्तन उपस्थित कर रही है और जिन्दगीके बारेमें हमारी सोच एवं मानसिकताको भी प्रभावित कर रही है। समाजका गरीब एवं लाचार तबका, विशेषकर मुस्लिम समाज; आज जैसी गलीज जिन्दगी बिता रहा है उसका जीता-जागता चित्र इन कहानियोंकी अन्यतम उपलब्धियाँ हैं। निश्चयही इस तबकेके लिए प्यार, मुहब्बत, सम्मान, प्रतिष्ठा आदिकी परम्परित परिभाषाएँ निरर्थक पड़ गयी हैं और वे इन्हें अपनी सुविधाके अनुसार ही परिभाषित करनेको मजबूर हैं। मेहरुन्निसाने इन्हें इसी धरातलपर परिभाषित करने की दिशामें एक महत्त्वपूर्ण पहल की है जो उनकी मजबूरियोंको यथार्थमें उद्घाटित करनेकी दृष्टिसे सार्थक कही जा सकती है।

मेहरुन्निसा परवेजकी कहानियोंका शिल्पभी कथ्यकी ही भाँति साफ-सुथरा और सहज है जिसमें कहींभी कोई दुरूहता एवं उलझाव नहीं है। इसका कारण शायद यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो कि उन्होंने बिम्बों तथा प्रतीकोंका बहुत अधिक प्रयोग नहीं किया है जो रचनाको अमूर्तनकी ओर ले जाते हैं, बल्कि वे बातको बस बातकी तरहसे पेश कर देनेकी कला में पारंगत हैं और इसीलिए ये कहानियां सहज बन पड़ी हैं, यद्यपि इनकी यह सहजता सरलताकी कोटिमें नहीं रखी जा सकती। इनमें विषयकी पर्याप्त गम्भीरताभी मौजूद है।

—डॉ० रमेश तिवारी

दो कथाएँ : दो दिशाएँ

लेखक : हरिकृष्ण श्रीवास्तव 'रसिक'; प्रकाशक : साहित्य प्रेस, साठिया कुआँ, जबलपुर। पृष्ठ : ६४; क्राउन, ७२; मूल्य : २.०० रु०।

"दो कथाएँ : दो दिशाएँ" संकलनमें कथाओंको एक सूत्रमें बांधा गया है—"संस्कार और प्रत्युपकार।" संस्कारमें समाजपर पड़नेवाले संस्कारोंके प्रभावकी चर्चा है और प्रत्युपकारमें एक मुस्लिम युवती द्वारा हिन्दू युवक सुरेशकी बीमारीमें तीमारदारीकी कथा है और हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिक दंगेमें अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर इस युवक द्वारा मुस्लिम युवतीके परिवारकी रक्षाकी कहानी है।

—डॉ० रामाभिलाष त्रिपाठी

काव्य संकलन

'सींगपर उगी हुई लाश'

कवि : अराज; प्रकाशक : सूर्य प्रकाशन, नयी सड़क, दिल्ली। मूल्य : १·०० रु०।

परिवेशकी समग्र भयावहता और उसमें तैरती असम्पृक्त अजनबी आकृतियोंमें खोयी मानवकी अस्मिताकी खोज आजकी कविताके संदर्भमें एक दुर्वार प्रत्याशा जगाती है। 'अराज' की लम्बी कविता 'सींगपर उगी हुई लाश' इस प्रत्याशाके तनावको पूरी वास्तविकतासे उजागर करती है; और यह आकस्मिक नहीं कि तनावकी इस पूरी मानसिक प्रक्रियासे गुजरनेके बाद वह जिस दृष्टिबिन्दुपर ठहरती है, पौरस्त्य और पाश्चात्य चिन्तन-विकासका क्रम अभी उससे आगे नहीं बढ़ पाया है। भौतिक यांत्रिक सभ्यताके चरम उत्कर्षको आजकी महानगरीय संचेतना एक अनिवार्य नियति और अभिशापके रूपमें भोग-झेल रही है। उसके ममत्व और अहन्ताप्रधान स्वरूपने जिन विसंगतियों, विकृतियों और विषमयी ग्रन्थियोंको जन्म दिया है, एक अनिवार्य दुर्वह लाशकी तरह उन्हें ढोना उसकी अभिशप्त नियति है। गीतामें 'आढ्यो अभिजनवानस्मि कोऽन्यो सदृशो मया' में जिस अहन्ताप्रधान संस्कृतिकी ओर इशारा है वह आनुषंगिक धर्म नहीं युगधर्म बन चुका है। 'अराज' की कविता इसके कारण और निदानकी सीमारेखासे आगे बढ़कर उस उपचार बिन्दुतक पहुंच जाती है जो निश्चय अस्तित्ववादी अनास्थाके दौरमें आस्थाके व्यक्तित्वकी तलाशका पर्याय है। प्रश्न यह उठ सकता है कि शाश्वत मूल्यकी यह तलाश क्या एक रूढ़ जीवन-दर्शनको दुहराना भर नहीं है? किन्तु उत्तरके लिए दूर जाना नहीं है। कविता मूलतः खुदको तलाशते जानेकी प्रक्रिया है और यह कविता उस प्रक्रियाको क्षणोंकी पूरी घनभूततासे उकेरती है, किसी बँधे बँधाये नुस्खेमें मानवीय संकटकी व्याख्या यहां नहीं है। प्रकृतिके निसर्ग-केन्द्रित मूल्योंके टूटनेको पूरे अवसाद अनिश्चय और दिग्भ्रमकी मनःस्थितिमें वह पारिभाषित करती है। सारी विसंगतियों, वर्जनाओं, निषेधों और कुण्ठाओंके दलदलको पारकर वह जिस निष्कर्ष बिन्दुपर पहुंचती है वह मात्र बोधका नहीं, अनुभूतिका धरातल है जो किसीभी शाश्वत मूल्यके आख्यानको विशिष्ट बना देता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युग परिवेशके गहराते संत्रासके बिम्ब, हो सकता है कि किसी फैशन या वादके बहावमें तैर आये हों—कैक्टस या गणितीय बिम्बोंके संदर्भमें यह कहा जा सकता है; किन्तु जहां वे आये हैं फैशनकी प्रतिबद्धताको दबाकर, कथ्यका कोई-न-कोई कोण उभर आता है :

जननीको लटका तिकानी खूनी तख्तीपर
सर्पकी बांबीका उसको कर्तव्य दें
अपना ही हर एक भ्रूण काट खानेको

संतति नियमनपर यह व्यंग्य नहीं अपितु उस मूल्य-बोधकी विद्रूपतासे यह उभरता है जहां परिवेशकी उच्छृ-ङ्खलतामें व्यक्तिकी निजता गुम हो गयी है। इस दिग्भ्रान्त रुग्ण मानसिकताकी भोक्ता है आजकी दिशाहीन पीढ़ी। एक अपरिभाषित सम्मोहनमें बँधी वह जिन आत्मघाती क्षणोंका साक्षात्कार कर रही है उनके अन्वेषणमें कविकी दृष्टि निभ्रन्ति है। परिवेशकी विकृति बुद्धिवादी रुग्णताके अतिरेकका परिणाम है। किसी बाहरी साधनसे इस रुग्णताका उपचार नहीं हो सकता, इसके समाधानके तन्तु बुद्धिके अन्तःसंघर्षसे ही फूटेंगे। कथ्यका यह कोण एक प्रबन्धात्मक द्विस्तरीय काव्य प्रक्रियासे उभरा है। यहां यह शंका हो सकती है कि कथाकी यह द्विस्तरीय संवेदना कविकी मानसिकताकी अविकल संश्लिष्टतासे उद्भूत है या किसी आरोपित सायास बुनावटका परिणाम है क्योंकि यथार्थके बाहरी स्तरको, किसी ऐतिहासिक या स्वानुभूत सत्यसे जोड़कर संवेदनाके दुहरे धरातलपर गतिशील रखना एक लम्बी सायास प्रक्रिया है। प्रक्रियामें इसलिए कह रहा हूं कि पाठकके लिए सर्जककी मानसिकताको सहज और स्थापित क्षणोंको अलग-अलग झेलकर उस पूरी मानसिकतासे गुजरता स्वयं दुहरे स्तर पर जीनेकी प्रक्रिया है। पर ऊपर शाश्वत मूल्योंके पुनराख्यानके संदर्भमें जो कहा गया है, शिल्प प्रयोगके बारेमें भी वह उतना ही प्रासंगिक है। यह कविता प्राचीन अन्योक्तिके समान प्रस्तुत और अप्रस्तुतकी सीधी सतही रेखाओंमें विभक्त नहीं है कि अप्रस्तुतकी गर्द झाड़कर प्रस्तुत अर्थको उठा लिया जाये। यह द्विस्तरीय संवेदना जटिलतर स्थितियों और आवर्तोंके कारण पुराने अन्योक्ति प्रतिमानसे भिन्न है। अन्योक्ति कहना सरलीकरण का बेजा आश्रय लेना है। वस्तुतः इस कविताका शिल्प प्रयोग उसके कथ्यके बोधका ही रूपान्तरण है और इसी बिन्दुपर दोनोंका विश्लेषण अपेक्षित है। कथ्य और शिल्प के प्रयोग समयांकित होकर भी कविके आत्मासे जुड़कर नया आकार ग्रहण करते हैं और यह कविता उसका समयांकित प्रमाण हैं।

—सुलेख शर्मा,

राष्ट्रमंगल

कवि : डॉ० इंदरराज बैद 'अधीर'; प्रकाशक : राज प्रकाशन, १ बी, बड़िबेलपुरम्, मद्रास-२३, पृष्ठ : ७२; डिमाई, ७२; मूल्य : ५.०० रु०।

प्रस्तुत संग्रहकी सभी कविताएँ राष्ट्रभक्तिकी पावन भावनाको अर्पित हैं। इसमें कविने अपनी सन् १९६३ से १९७२ तककी चुनी हुई राष्ट्रीय कविताओंका क्रमवार संकलन किया है।

हिन्दी-साहित्यके क्षेत्रमें बार-बार अनेक भाव-धाराओंने उमड़कर रसज्ञ पाठकोंको अनेक प्रकारसे अवगाहन कराया है परन्तु उनमें अनेक समकालीन अनुभूतियोंको संजोया गया था इसलिए उनका प्रवाह अक्षुण्ण न रह सका। परन्तु राष्ट्रीयताकी भाव-धारा कितनेही ऊबड़-खाबड़ काल-खण्डोंको पारकर निरन्तर किसी-न-किसी रूपमें जन-मानसमें विद्यमान रही है और समय आनेपर उसने अपना पूर्ण प्रभाव प्रकट किया है। प्रस्तुत संकलन उसी प्रभावकी अभिव्यक्ति है।

'राष्ट्रमंगल' की अनेक कविताएँ जहां हृदयको छू जाती हैं, वहाँ कुछ एकदम साधारण हैं। कुछ हमारे अतीत इतिहासके गौरवपूर्ण पृष्ठोंको खोलकर सामने रख देती हैं तो कुछ एकदम सामयिक पृष्ठभूमिपर आधारित हैं। कई कविताएँ अपने वर्तमान युगके राष्ट्रनेताओंके प्रति श्रद्धां-जलि अर्पित करनेके उद्देश्यसे लिखी गयी हैं।

'खेलो खूनी फाग साथियों' (पृष्ठ ३७), 'बाँका राजस्थान' (पृष्ठ ४४), 'यह ऋण चुकानेका समय है' (पृष्ठ ४६), 'शंखनाद हो' (पृष्ठ ५४), इस संकलनकी अच्छी रचनाएं हैं। राजेन्द्र कहाँसे पाएगी (पृष्ठ १२), युग युगांततक याद रखेगा (पृष्ठ १६), तुम स्वर्णिम हस्ताक्षर हो (पृष्ठ २२), भावांजलि (पृष्ठ ५७), क्रमशः बाबू राजेन्द्रप्रसाद, श्री जवाहरलाल नेहरू, श्री लालबहादुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शास्त्री तथा डॉ० जाकिर हुसैनकी मृत्युपर उनको श्रद्धांजलि प्रदान करनेके उद्देश्यसे लिखी गयी हैं।

प्रस्तुत संग्रहको हम जहाँ राष्ट्र-भावनाके प्रसारके लिए स्वीकार कर रहे हैं वहाँ इसमें प्रायः काव्यके अनेक दोष पर्याप्त अखेरनेवाले हैं। मात्रा सम्बन्धी दोष तो पुस्तकको कितनीही रचनाओंमें हैं। किसी पंक्तिमें अधिक और किसीमें कम मात्राएँ रचनाओंकी लयात्मकताको भंग करनेवाली हैं। इतने सुन्दर गेटअपके साथ प्रस्तुत इस संग्रहको प्रकाशित करते समय डॉ० बैदको उसकी छन्द दृष्टिको पूरी तरह परख लेना चाहिये था।

—**डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल**

बाँगलोदय

कवि : 'नीरस'; प्रकाशक : मार्तण्ड प्रकाशन, १४५ कृष्णपुरी, अलीगढ़; पृष्ठ : ८८; मूल्य : ४.०० रु०।

समसामयिक विश्व-इतिहासकी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं अविस्मरणीय घटना है बाँगला देशका जन्म। युगीन परिवेशसे जुड़ा कोई भी कवि ऐसी घटनासे असंपृक्त और अनासंग रहे, यह संभव नहीं। पाकिस्तानी शासकोंके नृशंस अत्याचारोंसे पीड़ित पूर्वी पाकिस्तानके बंगालियोंकी मर्म-गाथाने शायद ही किसी संवेदनशील कविको न झकझोरा हो—परिणामतः पाकिस्तानियोंकी बर्बरता और बंगालियोंके मुक्ति-संग्रामके प्रयत्नोंको फुटकर कविताओंमें उकेरनेका प्रयत्न अनेक कवियोंने किया, किन्तु ऐसे प्रयत्न कम ही हुए हैं जिनमें 'बाँगलोदय' को पूरे ऐतिहासिक परिवेशके साथ उपस्थित किया गया हो। इस दृष्टिसे 'बाँगलोदय' का महत्त्व असंदिग्ध है।

अंग्रेजोंकी कूटनीतिसे भारतका जो विभाजन हुआ उसका परिणाम था पाकिस्तान—किन्तु 'बाँगला देश' के जन्मने यह सिद्ध कर दिया कि धर्म या मजहब राष्ट्रोंके विभाजनका आधार नहीं हो सकता। इस शिशु-राष्ट्रके जन्मके लिए जो परिस्थितियाँ उत्तरदायी हैं और जिन संदर्भोंने इस नव-निर्माणको आकार दिया है, वे सारी परिस्थितियाँ और वे सभी संदर्भ कविके कल्पना-चक्षुओंमें रूपायित हुए हैं। 'विभाजन' से 'हार-जीत' तक १६ शीर्षकोंमें विभक्त प्रस्तुत काव्य-कृति श्री चरणलाल शर्मा 'नीरस' के न केवल कवि-व्यक्तित्वका परिचय देती है अपितु उसकी इतिहास-दृष्टिको भी उजागर करती है। 'नीरस' ने कहीं-कहीं ऐतिहासिक संदर्भोंकी अभिव्यक्ति नाम-परिगण-नप्रणालीसे की है, अतः उन स्थलोंपर कविका चिन्तन गहरा नहीं उतर सका है और काव्यात्मकताको भी क्षति पहुँची है, किन्तु अधिकांशतः रागात्मक आवेगसे युक्त इस कृतिमें अबाध काव्यत्व है। अतुकांत पंक्तियोंमें ही नहीं, तुकांत पंक्तियोंमेंभी कविकी सूक्ष्म-मर्मभेदनी दृष्टि को देखा जा सकता है :

प्रक्षुब्ध रक्त फेनिल प्रवाह,
हो रहा तरंगित सभी ओर,
धू-धू जलता नरमेध यज्ञ,
उत्पीड़नकी झंझा झकोर।

संवेदनाके धरातलपर तो इस वृत्तिका महत्त्व है ही, अभिव्यंजनाकी दृष्टिसे भी है। इस दृष्टिसे इसे एक अभिनव प्रयोग कहा जा सकता है—कविकी शैलीमें यदि कहीं अनगढ़पन और अपरिपक्वता है तो कहीं अपूर्व प्रौढ़ता, कहीं बिम्बोंके सुन्दर प्रयोग हैं तो कहीं नाम गिनानेकी असीम ललक, कहीं संस्कृतनिष्ठ शब्दावलीका वलय है तो कहीं बोलचालकी आम भाषाका प्रयोग; किन्तु ऐसे स्थल विरल ही हैं जहाँ 'नीरस' के कवि-व्यक्तित्वके प्रति समाश्वस्त न हुआ जा सके। कुल मिलाकर पाकिस्तानी दरिंदों द्वारा बंगालियोंपर किये गये अत्याचारोंकी करुण गाथाको रेखांकित करनेमें कविको अद्भुत सफलता मिली है।

—**सुन्दरलाल कथूरिया**

निरगन्धा

लेखक : हरिकृष्ण श्रीवास्तव 'रसिक'; प्रकाशक साहित्यप्रेस, साठियाकुआँ, जबलपुर। पृष्ठ : १७; क्राउन, ७२; मूल्य : १.०० रु०।

'रसिक' जीने अपनी 'निरगन्धा' को नामके विपरीत सरस रचनासे सगन्धा बना दिया है। कविने 'सरस्वती-वंदन' से आरम्भकर 'ग्रामीण नारी, याद, प्रणयगीत, कजरारे नयनमें मानव प्रेम तथा आशाकिरण, काश्मीर, भारत वैभवमें राष्ट्र प्रेमसे ओतप्रोत रचनाएँ संकलित की हैं। 'चलो देख आवें भोपाल' में बालगीत, हास्यव्यंग्यके रूपमें तीन छक्के, चेलेका चमत्कार, मम्मीकी पुचकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलकर मनोरंजक भी बना दिया है। साथही परिवार नियोजन, नींद उचट जाती है, एवं समयका कुछ समाज-वादी पथ तथा अस्थिरतामें विविध भावनाओंका समावेश किया है। कुछ अंश सुन्दर वनपड़े हैं।

भाषा सरस, मधुर और भावानुगामिनी है।

—डॉ० रामाभिलाष त्रिपाठी

उर्दू शायरी

उर्दूकी नई शायरी

सम्पादक : इन्द्रकुमार पुरोहित; प्रकाशक : हिन्दी पाकेट बुक्स, कृष्ण नगर, दिल्ली ५१। मूल्य : २.०० रु०

देवनागरी लिपिमें अबतक उर्दू शायरीकी कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इन पुस्तकोंमें अकसर उर्दूके ऐसे शेर या कविताएँ संकलित होती हैं जिनका सम्बन्ध किसी खास साहित्यिक दृष्टिकोणसे होता है। लेकिन श्री नवाबने शायद पहली बार गम्भीरताके साथ उर्दू शायरीके उन हिस्सोंको पेश करनेका प्रयत्न किया है जो बड़ी हदतक आजकी अच्छी शायरीके नमूने हैं; हालाँकि उन्होंने नयी शायरीका नाम देकर जिसप्रकार चौंकाया है वह बात पूरी तरह इस पुस्तकमें नजर नहीं आती। क्योंकि इसमें शामिल बहुतसे ऐसे शायर भी हैं जिन्हें आजका नया तरीन शायर नहीं कहा जा सकता, जैसे—एहसान दानिश, राही मासूम रजा, अजीज इन्दौरी, कैफ़ एहमद सिद्दीक़ी, वहीद परवाज, अख्तर नज्मी, असरार अकबर आबादी और नाजिर खिलजीकी कविताओं (और गजलों) को आजकी नवीन शायरी कहते हुए कुछ सोचना पड़ता है। इसलिए कि इन शायरोंका सम्बन्ध उस शायरीसे कभी नहीं रहा जो इसी पुस्तकमें संकलित शायर अमीक हनफी, मोहम्मद अलवी, कुमार पाशी, बलराज कोपल फजल ताबिश प्रकाश फिक्री, काजी सलीम अतिकुल्ला राज नारायण राज, वजीर आगा आदिकी शैली है। इन शायरोंकी शायरीमें नयी तरकीबोंको नये ढंगसे पेश करते समय कभी-कभी बातको इतना उलझा दिया गया कि उसकी तहतक पहुँचना भी कठिन हो गया।

हाँ! इस पुस्तकमें कुछ ऐसे शायरोंके नामभी नजर आते हैं जिनकी शायरीमें नये तकाजे कुछ साफ और अधिक सुलझे हुए अन्दाजमें हैं, जैसे—अख्तरुलइमान, शाद तमकेत, शमीम, हनफी, खलीलुर्रेहमान आज्मी, निदा फाजली, अजीज कैसी, नासिर काजमी, बशर नवाज मुमताज राशिद, साकी फारूकी और मखमूर सईदी आदि।

पहले और अन्तिम वर्गके शायरोंकी रचनाओंसे मुराद ऐसी नयी शायरीसे ली जा सकती है जो समयके नये विचारोंके साथ शायरीकी उचित पाबंदियोंको पूर्ण करती है जबकि दूसरे वर्गके शायरोंकी गजलें और नज्में समयके एकदम नये तकाजोंका पूर्ण चित्र हैं।

इसप्रकार सम्पादकने नयी शायरीके अर्थको पूरीतरह समझे बिना भिन्न-भिन्न प्रकारके फूलोंका एक गुलदस्ता सजाकर अलग-अलग प्रकारके दिमागोंको खुश करना चाहा है। वे अपनी इस कोशिशमें और भी सफल होते यदि वे शायरोंकी कविताओंके चयनमें अधिक विवेक बरतते और इसप्रकार उर्दूकी बिल्कुल नयी शायरी एक साथ पढ़नेको मिल जाती!

पुस्तकमें कई शब्द गलत छपे हैं। इस ओर ध्यान दिया जाना आवश्यक था। वैसे पुस्तकमें कुछ कविताएँ ऐसी जरूर हैं जो पढ़नेवालेका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती हैं!

—अजीज इन्दौरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हास्य-व्यंग्य

तिलस्म

लेखक : शरद जोशी; प्रकाशक: राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली–६ । पृष्ठ: १५२; क्राउन, मूल्य: ६.००रु० ।

हिन्दीमें कायदेके हास्य-व्यंग्य-लेखनका अत्यन्त अभाव है—गंभीर तथा शिष्ट हास्य एवं तेज व्यंग्यका तो और भी; और ले-देकर कभी हरिशंकर परशाईका नाम लिया जाता है तो कभी शरद जोशीका । वैसे रवीन्द्रनाथ त्यागीने भी इधर कुछ महत्वपूर्ण चीजें दी हैं फिरभी इस क्षेत्रमें अभी दूर-दूर तक रेगिस्तान ही दिखायी देता है । कहनेकी आवश्यकता नहीं की स्तरीय हास्य-व्यंग्य-लेखन आजभी हिन्दी साहित्यके लिए दूरकी वस्तु हैं ।

फिरभी हरिशंकर परसाई और शरद जोशीका हास्य जी० पी० श्रीवास्तवका हास्य नहीं है और उसमें हास्य-व्यंग्यके साथ-साथ बहुत कुछ तथ्यपरक बातें एवं अनेकानेक सामयिक समस्याओंपर दो-टूक विचार भी सन्निहित हैं जिन्हें पढ़कर न केवल आनंदित हुआ जा सकता है, बल्कि अपनी जानकारियोंमें वृद्धिभी लायी जा सकती है और इसप्रकार अपनी समझ तथा रुचिको परिष्कृत एवं संमृद्धभी बनाया जा सकता है ।

'तिलस्म शरदके हास्य-व्यंग्य-लेखकोंका एक ऐसाही संग्रह है, जो न केवल अपनी रोचकताकी दृष्टिसेही, वरन् ज्ञानकी दृष्टिसे भी उल्लेखनीय है । अपने इन हास्य-लेखोंमें शरदने समाज, शासन, देश, धर्म, राजनीति आदिसे सम्बन्धित अनेकानेक व्यंग्यात्मक टिप्पणियां दी हैं जो उनकी विलक्षण प्रतिभा एवं मौलिक सूझ-बूझकी परिचायक हैं । शरदने कई ऐसे चुभते हुए व्यंग्य लिखे हैं जो अत्यन्त गंभीर एवं बुद्धिमत्तापूर्ण हैं जिससे एक तरफ वस्तुस्थितिका उद्घाटन होता है तो दूसरी तरफ उन स्थितियोंमें मौजूद तमाम तरहकी विसंगतियोंसे भी हम परिचित होते हैं । उदाहरणके लिए कम्युनिस्ट चीनमें व्यक्ति-पूजाकी जो स्थिति है उसका रहस्योद्घाटन 'भगवान बुद्धिके दांत' नामक लेखमें बड़ा रोचक एवं तथ्यपरक हुआ है । इसीप्रकार मध्यावधि चुनावमें सत्ता कांग्रेसकी भारी विजयको लेकर लिखा गया व्यंग्य-लेख 'कैसा जादू डाला रे' अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्ण बन पड़ा है जो प्रतिपक्षी नेताओंकी ईर्ष्याको उजागर करता है ।

इसके अतिरिक्त अन्य लेखोंमें भी इसीप्रकार समाज, धर्म, राजनीति आदिसे संबंधित विभिन्न अंतर्विरोधोंको लक्ष्यकरके शरदने बड़े ही तीखे व्यंग्यकी सृष्टि की है । अतृप्त आत्माओंकी रेलयात्रा में धार्मिक अन्तर्विरोधोंका सशक्त चित्रण है तो 'यमदूत और नर्स' में नर्सोंकी जिंदगी एवं पिता-पुत्रके बीच व्याप्त अन्तर्विरोधोंका; हिटलर और आंचू तम्बाखूवाला" में छद्म क्रांतिकारिता एवं झूठे विद्रोहका चित्रण है तो 'भगवान और मुर्गा' में परिवार नियोजनसे संबंधित हमारी पुरानी सोच एवं अमूर्त-विद्रोहकी हास्यास्पदताका । 'सारी बहससे गुजरकर' में सरकारी क्लर्कोंकी धांधली, बकवास एवं घूसखोरीका बड़ाही रोचक वर्णन मिलता है जब एक परिचित आदमी को पहचाननेकी फीस सरकारी क्लर्क पांच रुपये बताता है और आगे यह सम्भावनाभी व्यक्त करता है कि फीसकी यह रकम दिनोंदिन बढ़ती ही जायेगी जैसेकि चीजोंके दाम । इसीप्रकार 'एक बैलेकी तैयारी' में हमारे सांस्कृतिक आयोजनोंको अच्छी धत्ता बतायी गयी है और इस संबंधमें सरकारी अफसरोंकी भोंड़ी रुचियोंपरभी चोटकी गयी है जो हर सस्ते कार्यक्रमोंके लिए सरकारी अनुदानोंकी स्वीकृतिप्रदान कर देते हैं । और 'चाँदपर' नामक रचनामें तो भारतीय जनतंत्रके नेताओंकी महत्त्वाकांक्षा टॉपपर पहुँची हुई दिखायी पड़ती है जब अन्तरिक्षयानमें एक ऊंचे ओहदेके नेताके लिए भी सीटकी व्यवस्था करनी पड़ती है । साथही इसमें सरकारी पैसेके दुरुपयोग एवं अयोग्य व्यक्तियों तथा सरकारी पिठ्ठुओंपर व्यर्थमें सरकारी धन बर्बाद करनेकी भी आलोचनाकी गयी हैं ।

शरदके ये लेख अपने कथ्यमें ही नये नहीं हैं, अपने रचना-कौशलमें भी नये तथा मंजे हुए हैं और इनका रचना-तंत्र सुसंगठित एवं परिष्कृत है जिसमें सहज बोधगम्यताके साथ-ही-साथ एकतरहकी ताजगीभी मौजूद है ।

—डॉ० रमेश तिवारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टालू मिक्सचर

लेखक : श्यामनारायण बैजल; प्रकाशक : पार्वती प्रकाशन, मदारी गेट, बरेली। पृष्ठ : ११२; क्राउन ७३; मूल्य : ५.०० रु०।

इस पुस्तकमें कुल चौदह व्यंग्यपूर्ण रचनाएँ हैं। इसमें कुछ कहानियाँ हैं लेकिन अनेक रचनाएँ कहानी न होकर 'व्यंग्य लेख' हैं। सभी रचनाओंमें समाजके अहं, दम्भ और कृत्रिमतापर करारी चोट की गयी है। उन्हें अप्रत्यक्ष रूपसे लताड़ा गया है जो आजभी काहिल और लकीर के फकीर हैं।

नौकर और 'बचत योजना' में मध्यम वर्गको ऐसी कमानके रूपमें दिखाया गया है जिसे तनिकभी और झुका दिया जाये तो वह टूट जायेगी किन्तु इसके बावजूद बाहरी टीपटापको बनाये रखनेके लिए यह वर्ग प्रयत्न करता है। इसी हास्यास्पद स्थितिको चित्रित किया गया है। 'टालू मिक्सचर' में 'टरकाउलॉजी' का जो वर्णन किया गया है वह भी यथार्थ-दर्शन ही है। 'चर्चा' व्यंग्य लेख है पर वह पहली दो तीन रचनाओंके मुकाबले कुछ ढीला है। 'मैं कौन हूं' में भ्रष्टाचारके घट-घट व्यापी रूपका चित्रण अत्यन्त रोचक ढङ्गसे किया गया है, कटुता से दूर रहकर।

लेखकने मुहावरों और उपमाओंको उपयुक्त ढङ्गसे प्रयुक्त किया है। कुछ नये मुहावरोंका प्रयोग किया है जो लेखककृत ही लगते हैं पर वे बिल्कुल सटीक और ग्राह्य हैं। यथा नौकर ढूँढनेके लिए मालिक "स्वयं कोलम्बस बने घूमते हैं।" "उनकी नाक-भौं अर्जुनका गाण्डीव बनी हुई थी।" बचत योजनामें एक उपमा बहुत ही फबती है—फैशन की "फिकर तो ढलती उमरवाली जवानियोंको होती है, प्लास्टरकी आवश्यकता गिरती दीवारोंको है।"

कहीं-कहीं लेखकसे चूक हो गयी है और शब्द बदल गये हैं जिससे वाक्योंका रूप बिगड़ गया है। मरदूदकी जगह मर्दुए लिख दिया गया है। "मरदुए वहाँ बैठे-बैठे कलम घिसते रहते हैं।" (पृष्ठ१५)। पृष्ठ१६ पर "खुटठल न होनेवाली कैंची" के बजाय गुठ्ठल न होनेवाली कैंची छप गया है।

कुल मिलाकर पुस्तक रोचक और पठनीय है। लेखकने केवल हवाई सैर नहीं की है, धरातलपर रहकर लिखा है। इससे भी बड़ी बात यह है कि लेखकके मनमें किसी वर्गके प्रति पूर्वाग्रह नहीं है। उसने किसीके साथ रियायत नहीं की है और नही किसीपर अनावश्यक कटाक्ष किया है।

—सीताराम खोड़ावाल

राजनीति विज्ञान

सामाजिक तथा राजनैतिक शास्त्रके सिद्धान्त

लेखक : अर्नेस्ट बार्कर; अनुवादक : बोधराज शर्मा; प्रकाशक : हरियाणा हिन्दी ग्रंथ अकादमी, ३०२६/१९ डी, चण्डीगढ़-१६००१९। एकाधिकृत विक्रेता : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : ३४८; डिमाई, ७२; मूल्य : १५ ०० रु०।

हिन्दीमें उच्च स्तरकी पुस्तकें उपलब्ध करानेका जो प्रयास चल रहा है, प्रस्तुत पुस्तक उसी अभियानका अंग है। आलोच्य पुस्तक राजनीतिशास्त्रके प्रसिद्ध विद्वान् प्रो० अर्नेस्ट बार्करकी मूल पुस्तक 'प्रिंसिपल्ज ऑफ सोशल एण्ड पोलिटिकल थ्योरी' का हिन्दी अनुवाद है। प्रो० बार्कर स्वयं और उनकी पुस्तकें राजनीति-विज्ञानके क्षेत्रमें सदा चर्चाके विषय रहे हैं।

आलोच्य पुस्तक छः खण्डोंमें विभक्त है। प्रत्येक खण्ड में राज्य और उसके अन्तर्सम्बन्धोंकी व्याख्याकी गयी है। प्रथम खण्डमें राज्य तथा समाजको ऐतिहासिक दृष्टिकोण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर व्याख्यायित किया गया है, राज्य सम्बन्धी वर्तमान विचारधारा—'जिसका मुख्य उद्देश्य कानूनी ढंगकी अनिवार्य व्यवस्था बनाये रखना है और यह कार्य संघ कानून द्वारा सम्पादन करता है तथा उन कानूनोंका ही निर्धारित तथा निश्चित शक्ति द्वारा प्रवर्त्तन करता है।' 'समाज' को स्पष्ट करते हुए प्रो० बार्कर लिखते हैं— 'समाजसे हमारा अभिप्राय उन सभी स्वैच्छिक संस्थाओं से है जो राष्ट्रमें समाविष्ट हैं, यही नहीं बल्कि जो दूसरे राष्ट्रोंमें स्थित अपने जैसे संघोंसे सम्बन्ध स्थापित करके राष्ट्रसे बाहरभी फैले हुए हैं, (पृ० ३)। इसीप्रकार यूनानी नगर राज्योंसे लेकर ईसाई धर्मका प्रभाव राज्य संबंधी अवधारणा पर क्या पड़ा—इसका पुस्तकमें विशद विवेचन किया गया है। फ्रांसकी क्रान्तिका उल्लेख करते हुए लेखक कहता है—'कि वह इस लोकतन्त्रीय सिद्धान्त पर आधारित थी कि राष्ट्र अपना प्रतिनिधित्व करने वाले शासनका स्वयं निर्माण करे या कमसे कम उसका अनुमोदन तो अवश्य करे' (पृ० २२)। जर्मनीके स्वच्छन्दतावाद तथा आदर्शवादको प्रो० बार्कर फ्रांसके क्रान्तिवादी सिद्धान्तसे भिन्न होते हुए भी कुछ मुख्य विषयोंमें समरूप मानते हैं। (पृ० २३)। लेखक इसी अध्यायमें राज्यके अस्तित्व तथा कार्यके साथ समरूपताको समझने के लिए पाठकको 'हीगल' के विचारक्रमकी ओर प्रेरित करता है। राज्यका पूर्वपक्ष (थीसिस) अपने बनाये कानूनोंसे स्वयंको नियन्त्रित करता है। इसका विपक्ष नैतिकता अथवा अधिकारकी अन्तःस्थ प्राप्ति है। हीगलके समाजवादका अध्ययन एवं उसकी विकास यात्राके दो छोर मार्क्स और लेनिनभी राज्यकी ऐतिहासिक दृष्टिके साथ पुस्तकमें समाविष्ट हैं। प्रथम अध्यायकी यह यात्रा फ्रांसके श्रम संघवादपर आकर समाप्त होती है। श्रम संघवादी 'प्राउदान' आर्थिक व्यवस्थाको राजनीतिक व्यवस्थासे पूर्वकालीन मानते हैं; आर्थिक व्यवस्थाका मूल तत्त्व 'संघ' है तथा व्यावसायिक वर्ग मिलकर इस व्यवस्थाका निर्माण करते हैं, एवं पारस्परिक सेवा व लाभके लिए स्वेच्छासे संयुक्त हैं।

द्वितीय अध्याय राज्य तथा समाजके सम्बन्धोंपर सामान्य दृष्टिकोणसे विचार करता है। यहाँ लेखक राज्य व समाजमें स्पष्ट विभेद करता है। जहाँ राज्य अपनी समग्रतामें कानूनी व संवैधानिक स्तरपर क्रियाशील है, वहाँ समाज संघोंके रूपमें अनेकता लिए हुए है। यों व्यक्तिगत गठनमें प्रो० बार्कर समाज व राज्यको एक ही दर्जा देते हैं। इसमें राष्ट्रीय समाज तथा राष्ट्रीय राज्य, सामाजिक क्षेत्र तथा वर्गोंकी प्रकृतिपर प्रकाश डाला गया है। तृतीय अध्यायमें राज्यका उद्देश्य तथा न्यायका स्वरूप वर्णित है। राज्य तथा कानूनकी व्युत्पत्ति संबंधी विचारधाराकी ऐतिहासिकता व उसके मूल भाव तथा उन अभिधार्थों तथा संसर्गोंका अनुरेखण किया गया है, जो कालकी गतिके साथ उन्होंने धीरे-धीरे अभिग्रहण किये हैं। न्याय व्यस्थाको विभिन्न रूपोंके साथ प्रस्तुत किया गया है। चौथा अध्याय राज्य द्वारा प्रतिभूत अधिकारोंसे प्रारम्भ होता है। अधिकारोंकी प्रकृति तथा व्यक्तियोंमें उनके विभाजनके सिद्धान्तोंकी विवेचना विस्तृत रूपमें की गयी है। जहाँ तृतीय अध्यायमें राज्यके अंतिम उद्देश्यकी चर्चा निष्कर्षात्मक रूपमें निहित है, वहाँ चतुर्थ अध्याय अधिकारोंकी सामान्य प्रकृति तथा अधिकारदाताओं एवं अधिकारप्राप्तकर्त्ताओंके सम्बन्ध निर्माणकी व्याख्याकरता है। कानून और स्वतन्त्रताको स्पष्ट करते हुए लेखक कहता है—"यदि न्याय यह आवश्यक समझता है कि स्वतन्त्रता एक ऐसा सिद्धान्त अथवा कार्यविधिक नियम है, जिसके अनुसार कानूनको अधिकारोंका वितरण करना चाहिये तो उस अवस्थामें स्वतन्त्रता भी कानून है अथवा कमसे कम कानूनका भाग है" (पृ० १७१)। स्वतन्त्रताके विभिन्न आयामोंपर पुस्तक पर्याप्त प्रकाश डालती है। समानता राज्यका एक ऐसा गुण है—जो परिस्थितियाँ एकके लिए प्रत्याभूत है वही उसी मात्रामें दूसरोंके लिए भी प्रत्याभूत की जायें, अतः समानता आरम्भ है, अन्त नहीं। समानताकी यह विचारधारा न्यायके लिए गन्तव्य है, अतः अपने गन्तव्यतक पहुँचनेके लिए 'न्याय' को विभिन्न प्रक्रियाओंसे गुजरना पड़ता है। इसी प्रक्रियाकी अगली परिणति न्यायका कानूनमें रूपान्तरण है। कानूनको विधिमान्य होनेके लिए राज्यके न्यायिक अंगों द्वारा घोषित होना पड़ता है। मूल्यविहीन होकर विधिमान्य कानून विधिमान्यताको भी खो देता है' (पृ० २०७)। कानून अपने प्रवर्त्तनके लिए दंडकी प्रयोजनासे सम्बद्ध है। यों यह विवादास्पद विषय है कि राज्यका उद्गम ही हिंसात्मक चेष्टाको निष्फल करनेके लिए संगठित है। प्रो० बार्कर कानूनको स्वयंमें सत्ताविहीन मानते हैं। उनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहना है कि कानूनकी सृष्टिके लिए अस्तित्त्वकी परिकल्पना की जाती है, और शाश्वत कानूनके लिए आवश्यक है—हमेशा अस्तित्त्वकी इच्छा की जाये एवं इसी इच्छाके लिए यहभी आवश्यक है—उसके उल्लंघन व अवरोध निरन्तर विद्यमान न हों। अब प्रश्न उठता है कि राजनीतिक आधार तथा सीमाएँ क्या हों। शासनके प्रति व्यक्तिके कर्त्तव्य निर्धारित करनेके लिए दैवी सिद्धान्तकी सृजना हुई है—"मैं शासी प्राधिकारकी आज्ञा-पालनके लिए बाध्य हूँ, क्योंकि मैं परमात्माकी आज्ञा पालन करनेके लिए बाध्य हूँ' (पृ० २१७)। मध्ययुगीन विचारक संट टामस इस धारणाको पुष्ट करते हैं—राजाको राज्यके प्रमुखके रूपमें प्रत्येक नागरिककी आज्ञाकारितापर इसलिए अधिकार है कि उसका प्राधिकार उसे परमात्मासे प्राप्त हुआ है।

शासनके कार्य क्या हों तथा व्यक्तियोंके अधिकारोंके साथ क्या सम्बन्ध हों—यह इसपर निर्भर करता है कि दोनों अपने सम्बन्धोंको किस भूमिकापर बाँधते हैं। छठे अध्यायका वर्ण्य विषय यही है। राजनीतिक स्वतन्त्रताके अधिकार तथा शासनकी संरचनाका सम्बन्ध अन्योन्याश्रित हैं। एक संगठित समुदायके जीवनके लिए विचार-विमर्शमें योगदान करनेका अधिकार, शासनमें भाग लेनेके अधिकारके तुल्य है। शासन अपने कार्योंके विस्तारको देखते हुए स्वयंको विभिन्न अंगोंमें विभाजित करता है और उसके अनुसारही कार्योंका वर्गीकरण होता है। इसके ये अंग प्रायः विधान मंडल, न्यायपालिका व कार्यपालिकाके रूपमें कार्यरत हैं। कानूनकी जटिलतापर शायद प्रो० बार्कर चिन्तित प्रतीत होते हैं। इसीलिए पुस्तकका समापन इन शब्दोंमें करते हैं—'हम प्रार्थी हैं कि ऐसा समय कभी न आये जब हमारा समस्त जीवन कानूनी नियन्त्रणकी परिक्रामी गतिपर आश्रित हो।'

पुस्तक हिन्दी भाषाकी एक आवश्यकताको पूरा करती है, अतः अनुवादक जो राजनीतिशास्त्रके प्राध्यापक हैं, बधाईके पात्र हैं कि भाषाको संयत बनानेमें सफल रहे हैं।

—दिनेश भट्ट

अर्थशास्त्र

जीवइ-सिद्धान्त

लेखक : पुरुषोत्तम सर्राफ; प्रकाशक : महावीरप्रसाद सर्राफ, २०।१ महर्षि देवेन्द्रनाथ रोड, कलकत्ता–७। पृष्ठ ११२; क्राउन, ७१ (पाँचवाँ संस्करण); मूल्य : ३.०० रु०।

मौजूदा आर्थिक परिस्थितियोंमें 'विश्व-मुद्रा-संकट' एक ऐसी समस्या है जिसके कारण विश्वके अनेक देशों को आर्थिक संकटोंमें घिरा रहना पड़ा। अमरीकाकी शक्तिशाली मुद्रा 'माइटी डॉलर' के अवमूल्यनसे तो न केवल अमरीकाको ही एक जटिल परिस्थितिका सामना करना पड़ा है, बल्कि अमरीकी मुद्राकी साखपर भरोसा करनेवाले बहुतसे राष्ट्रोंको जो डॉलरको सोनेका स्थानापन्न समझा करते थे, इस अर्थ-संकटसे जूझना पड़ रहा है। पिछले दशाब्दमें देखते-देखते विश्वकी कई मुद्राओंको अवमूल्यनके लिए लाचार होना पड़ा—फलस्वरूप गम्भीर आर्थिक झटकोंमें विभिन्न राष्ट्रोंको घिरा रहना पड़ा। मुद्रा-संकटकी इस अस्थिर दशामें आर्थिक उतार-चढ़ाव न केवल प्रत्यक्ष रूपमें राष्ट्रोंके जीवनकी चूल ही हिला देते हैं, वरन् अप्रत्यक्ष में रूप व्यक्ति, समाज व विविध उद्योगों को भी गम्भीर खतरोंमें डाल देते हैं। मुद्रा संकटकी इस पेचीदी परिस्थितिमें श्री पुरुषोत्तम सर्राफकी पुस्तिका 'जीवइ-सिद्धान्त' नयी दिशामें सोचनेका एक अभिनव प्रयास है।

श्री सर्राफने अपनी इस पुस्तिकामें भारतमें बढ़ती हुई महँगाईका आलोचनापरक सर्वेक्षण करते हुए सिक्केके मूल्यमें आयी गिरावटसे उसे जोड़ा है। लेखकका यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निष्कर्ष बहुत उपयोगी और सारगर्भित है कि वस्तु और श्रमके सस्ते होनेकी दशामें मूल स्थितिमें कोई फर्क नहीं पड़ता—सिवाय इसके कि सिक्केकी क्रयशक्ति बढ़ जाती है।

जीवइ (जीवन उपयोगी वस्तु इकाई) सिद्धान्तकी धारणा लेखककी सदाशयताका प्रतीक हो सकती है, उसके स्पष्ट व स्वच्छ चिन्तनका परिचय देनेवाली कही जा सकती है। किन्तु अनेक जटिल आर्थिक स्थितियोंमें चल रही वर्तमान मुद्राकी वह स्थानापन्न बन सकेगी, व्यावहारिक दृष्टिसे यह चिन्तनीय है। आजका मनुष्य उस सरल जीवनको बहुत दूर छोड़ आया है जबकि जीवनोपयोगी वस्तुओंतक ही उसकी आर्थिक प्रवृत्तियां सीमित हो जाती थीं, तबभी श्री सर्राफकी यह पुस्तिका इस कठिन समस्यापर सोचनेका एक प्रशंसनीय प्रयास है। लेखककी अभिव्यक्ति तथा प्रश्नोत्तर शैली बहुत स्वच्छ व प्रवाहपूर्ण है।

—डॉ० प्रेमप्रकाश भट्ट

वैदिक साहित्य

वेदार्थ विज्ञान

लेखक : रामशरण वशिष्ठ; प्रकाशक : गोविन्दराम हासानन्द; नयी सड़क, दिल्ली—६ । पृष्ठ : ६३; क्राउन, ७२; मूल्य : १.०० रु० ।

यह ग्रन्थ 'वेद प्रकाश' मासिकके विशेषांकके रूपमें प्रकाशित हुआ है। इस ग्रन्थका नाम जितना आकर्षक है एवं ग्रन्थके गौरवको प्रकट करता है, ग्रन्थकारको सम्भवतः उतनी सफलता नहीं मिली है। ग्रन्थके प्रारम्भमें भी स्थापित मान्यताका समस्त ग्रन्थमें और अनेक बार लेखक की निज शब्दावलीमें भी विरोध प्रकट होता है। उदाहरणार्थ—ग्रन्थकी प्रस्तावनामेंही लेखक कहता है कि "अर्थ करनेसे पूर्व इसबातका ध्यान रखना अति आवश्यक है कि **वेदमें शब्द प्रायः रूढ़ि अर्थ देते हैं**" (पृ० ५), जबकि वह अन्यत्र कहता है कि "निरुक्तकी शैली जो धात्त्विक अर्थोंकी शैली है, सर्वोत्तम है" (पृ० ६), "वेदमें शब्द यौगिक अर्थवाले होते हैं" (पृ० २३), "वेदमें शब्दोंके अर्थ धातुके अनुसार होते हैं" (पृ० २६), इत्यादि।

प्रस्तुत ग्रन्थके नामसे भ्रम होता है कि इस ग्रन्थमें वेदार्थ करनेकी विधिपर विशिष्ट चर्चा की गयी होगी, किन्तु ग्रन्थके देखनेपर पाठकको निराश होना पड़ता है। क्योंकि समस्त ग्रन्थमें लेखकने अग्नि आदि कुछ चुने हुए शब्दोंके विविध अर्थ बतानेका ही प्रयास किया है, यह नहीं कि यह अर्थ क्यों होना चाहिये। लेखकके अनुसार अग्नि आदि शब्द विविध अर्थोंमें प्रयुक्त हैं, उदाहरणार्थ अग्नि शब्द भौतिक अग्निके साथही ईश्वर और सूर्य आदिकाभी वाचक है। इसीप्रकार सूर्य पद कभी सूर्य अर्थका वाचक है तो कभी परमेश्वर अर्थका और कभी विद्वान् अर्थका। किन्तु लेखकने यह स्पष्ट करनेका कहीं भी प्रयत्न नहीं किया कि एक ईश्वरके लिए अग्नि सूर्य आदि विविध पदोंके प्रयोगोंका क्या कारण है? सूर्य अर्थ के लिए यदि सूर्य पदका प्रयोग हो रहा है तो अन्यत्र उसी अर्थके लिए अग्नि पदका प्रयोग क्यों किया गया है। ऐसे स्थलोंपर लेखक यदि प्रत्येक शब्दके अभिव्यक्ति-भेद को प्रकट कर सकता तो ग्रन्थ उत्तम बन सकता था। मन्त्रोंका अर्थ करते हुए अनेक स्थलोंपर लेखक मूल शब्दको पहचाननेमें भी भ्रम कर बैठा है। उदाहरणार्थ—'तद् विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः' (ऋ० १.२२,२०) में 'सूरय' शब्दको लेखक सूर्य पदसे अभिन्न समझता है, जबकि वस्तुतः यहां 'सूरि' पद बहुवचनमें प्रयुक्त है जिसका लौकिक साहित्यमें भी विद्वान् अर्थमें व्यापक प्रयोग मिलता है। अनेक स्थलोंपर वह मेकडानलकृत वैदिक देवतावाद (Vedic Mythology) से प्रभावित प्रतीत होता है (पृ० १३,२५) जो कि उसके मन्तव्यके प्रतिकूल है।

भाषाकी दृष्टिसे भी लेखकने उचित सावधानी नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरती है, इसीकारण अनेक बार कोष्ठान्तर्गत अंग्रेजी पदों को वाक्यमें सम्मिलित किये बिना अर्थ पूर्ण नहीं हो पाता। उदाहरणार्थ पृ० ४४, ४५ द्रष्टव्य हैं। एकाध स्थलोंपर वह अपनी भाषामें मन्त्रार्थ देनेको प्रवृत्त होकर अंग्रेजीमें अनुवाद उद्धृतकर सन्तुष्ट हो जाता है (पृ० १०)। "रुद्र शब्द 'रुदिर' धातुसे बनता है। वहाँपर उसका अर्थ लाल है" (पृ० ३७) [संस्कृति धातु पाठके अनुसार 'रुदिर' का अर्थ रोना है लाल नहीं] इत्यादि कुछ स्थल तथा केनोपनिषद्की अविकल कहानीका 'प्राणकी महानताका वर्णन करते हुए एक वार्त्ता है' इस भूमिकाके साथ उद्धरण उसके स्वाध्यायमें कमीकी ही सूचना देते हैं।

इतना सब होते हुए भी यह लघुग्रन्थ वेदके स्वाध्याय में प्रवृत्त होनेवाले धार्मिक पाठकोंको मन्त्रोंमें विविध पदों के प्रचलित रूढ़ि अर्थोंसे आगे बढ़कर अन्य अर्थोंकी खोज में प्रदीपका कार्य करेगा, इसमें सन्देह नहीं। धार्मिक भावनासे वेदोंके स्वाध्यायमें प्रवृत्त होनेवाले निरुक्त और ब्राह्मण ग्रन्थ आदिसे अपरिचित जनोंके लिए यह पुस्तक बहुत लाभदायक सिद्ध हो सकती है, ऐसा मेरा विश्वास है।

---डॉ० ब्रह्ममित्र अवस्थी

वैदिक सम्पदा

लेखक : पंडित वीरसेन वेदश्रमी; प्रकाशक : गोविन्द राम हासानन्द, ४४०८, नयी सड़क, दिल्ली-६ पृष्ठ : ४८८, क्राउन दुगना, ७३; मूल्य : १५.०० रु०।

वेद और वैदिक साहित्यके सम्बन्धमें जो परम्परागत मान्यताएँ हैं उनके अनुसार वेदोंमें अनेक विषयोंका समावेश है। वेदोंके प्रकाण्ड विद्वान् महर्षि दयानन्द सरस्वतीने आजसे एक सौ वर्ष पूर्व घोषणा की थी कि "वेद सब सत्य विद्याओंका पुस्तक है।" महर्षिकी इस घोषणाका समर्थन आधुनिक युगके चिन्तक-शिरोमणि योगराज श्री अरविन्द सरीखे विद्वानोंने भी किया है।

जिसप्रकार किसी प्राकृतिक वनका अपनाही अनुपम सौन्दर्य होता है और उसमें नानाविध वृक्ष, लताएँ, वनस्पतियाँ और औषधियाँ, जहाँ-तहाँ बिना किसी क्रममें लहराती हैं उसीप्रकार वेदोंमें अनेक एवं नानाविधि विषय समाविष्ट हैं। विशाल वनकी भाँति वेदोंमें निहित ज्ञान पर्याप्त विस्तृत है। इसी ज्ञानके किसी अंशको क्रमबद्ध रूपमें वनमाली द्वारा उपवन सजानेकी भाँति विद्वानोंने प्रस्तुतकर अनेक शास्त्रोंकी रचना की। वाटिकाकी भाँति इन शास्त्रोंकी अपनी उपयोगिता और सौन्दर्य है। प्रस्तुत ग्रन्थभी इसी दिशामें किया गया एक प्रयत्न है। इसमें वेदोंमें वर्णित अनेक विषयोंका संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

आध्यात्मिक, सामाजिक और पारिवारिक जीवन, कृषि, पशुपालन, उद्योग, सिंचाई, यातायात, अर्थशास्त्र, राजनीति, सुरक्षा, शिक्षा एवं विज्ञान आदिसे सम्बद्ध वेद मन्त्रों या उनके अंशों द्वारा लेखकने इन विषयोंका प्रतिपादन तथा इनसे सम्बद्ध समस्याओंका वैदिक समाधान भी प्रस्तुत किया है। उनका यह प्रयत्न सफल रहा है और हमें आशा करनी चाहिये कि वे भविष्यमें जनताके हितार्थ वेदकी विचारधाराको विस्तृत रूपमें राष्ट्रभाषाके माध्यमसे प्रस्तुत करेंगे, क्योंकि वेदोंसे जनताके पराङ्मुख होनेके अनेक राजनीतिक कारणोंके अतिरिक्त एक प्रमुख कारण यह भी है कि संस्कृतसे और विशेषकर वैदिक संस्कृतसे लोग आज सर्वथा अपरिचित हो गये हैं।

"वैदिक सम्पदा" के द्वारा लेखकने अन्य वैदिक विद्वानोंका पथप्रदर्शन किया है और हमें आशा है कि इस दिशामें अन्य वैदिक विद्वान् भी अग्रसर होंगे ताकि वैदिक विचारधाराका प्रचार और प्रसार हो।

—सुभाष विद्यालंकार

दो रास्ते

लेखक : महात्मा आनन्द स्वामी; प्रकाशक : गोविन्द-राम हासानन्द, दिल्ली-६। पृष्ठ: १७०; क्राउन, ७२; मूल्य : ३.०० रु०।

प्रस्तुत उपदेशामृत स्वामीजीके दिल्लीमें दिये गये छह प्रवचनोंका संग्रह है। इन प्रवचनोंमें धर्म, नैतिकता, सदाचार, सच्चाई आदिकी बड़ी ही स्पष्ट अभिव्यक्ति मिलती है। इन्हें पढ़कर आचार्य रजनीशके प्रवचनोंकी याद आ जाती है। स्वामीजीने इनमें वेदों और उपनिषदोंके उद्धरणों द्वारा तथा कथाओं और दृष्टान्तों द्वारा उपस्थित जनताको अपने हृदयकी बात सुनाकर अभिभूत कर दिया है। महात्मा मनसा-वाचा-कर्मणा एक हैं, उन्होंने हिन्दी, संस्कृत एवं उर्दूके पदोंद्वारा अपने भावोंको स्पष्ट किया है। इन प्रवचनोंमें मानव देह धारण करनेकी उपयुक्तता तथा उसे सबल और स्वस्थ बनानेपरभी महात्माजीने जोर दिया है। मनुष्यको कैसा बनना चाहिये इसके उत्तरमें सामवेदके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८१वें मन्त्रकी व्याख्याको तीन प्रवचनोंमें पूरा किया गया है। महात्माजीने प्रत्येक शब्दपर बारीकीसे विचार किया है।

इस पुस्तकमें कुछ ऐसी बातोंकी जानकारी मिलती है जिससे कि पाठक चौंक जाता है। इसमें धनी अमरीकाकी दयनीय स्थिति एवं स्वामी विरजानन्दके अभूतपूर्व त्यागकी जानकारी भी मिलती है। अमरीकावासी भलेही धनीमाने हों परन्तु सुखी नहीं हैं। कारण कि उनके पास सन्तोष नाम की कोई वस्तु नहीं है। स्वामी विरजानन्दने प्रथम स्वतंत्रता-संग्राममें कैसी भूमिका निभायी– इसकी जानकारी भी कम रोचक नहीं है। स्वामीजीने विदेशोंमें हिन्दू धर्मके प्रति आदरकी भावनाका बखान किया है पर अपने ही देशमें इसकी दुर्दशाका भी उल्लेख किया है। महात्माजी का कहना है कि इस दुःखी संसारमें ईश्वरीय न्यायमें विश्वास कर ही मनुष्य सफलीभूत हो सकता है। इसीसे उसका दुःख-दर्द कम हो सकता है। भाषणके अन्तमें दुःख-दर्दको दानकर देनेके लिए महात्माजी जब अपनी झोली फैला देते हैं तो सारा श्रोता-समाज अश्रु विगलित हो उठता है। ऐसी उपदेश मालाओंकी वर्तमान सन्दर्भमें बड़ीही आवश्यकता है। इस पुस्तकसे सभी लाभ उठायेंगे चाहे वे किसी देश व धर्मके हों।

—वैद्यनाथ शर्मा

ओङ्कारोपासना

लेखक : डॉ० रामनरेश मिश्र 'हंस'; प्रकाशक : परमानन्द साहित्य सदन, मखदुमपुर, गया पृष्ठ : १४४; क्राउन; मूल्य : ५.०० रु०।

सरल और सुबोध हिन्दीमें लिखी इस पुस्तकमें सभी धार्मिक सम्प्रदायों और उनकी विविध शाखा प्रशाखाओंकी उपासना-विधि, प्रार्थना मन्त्रों और मुख्यतम सिद्धान्तोंको स्पष्ट करके बताया गया है कि सभीका वक्तव्य परस्पर अभिन्न है, यदि उनमें कोई भेद है तो केवल भाषाका। एक उसे 'ओम्' कहता है तो दूसरा 'ओ' तीसरा अल्ला चौथा अहुर पाँचवाँ अर्हत्। इस भाषा-भेदमें भी एक विशिष्ट एकता है जो उनके मूलमें एकताको सूचित करता है। लेखककी मान्यता है कि सभी धर्मोंमें व्रत उपवास और उपासना आदिका समान रूपसे आदर है। इसलिए साधक किसीभी देशका हो उसकी भाषा कोई भी क्यों न हो, और उसकी किसीभी धर्ममें क्यों न आस्था हो, वह किसीभी धर्म ग्रन्थपर क्यों न विश्वास रखता हो, सर्वत्र उसे जो मूल उपदेश मिलता है वह एक ही है कि (१) 'ईश्वर सर्वत्र व्यापक है, वह सबका पिता है, सब संसार उसकी प्रजा है, सन्तान है, इसलिए उसके साथ मैत्रीका भाव रखो। (२) उसकी अपार करुणाकी वर्षा सब प्राणियोंपर समान रूपसे हो रही है। (३) वह आनन्दका सागर है उसके सामीप्यसे सर्वत्र आनन्द ही आनन्द दिखायी पड़ता है। (४) अतः शेष समग्र भौतिक पदार्थोंके प्रति आनास्थाका अनासक्तिका भाव रखो।" इसे ही बौद्ध धर्ममें योग दर्शनमें तथा अन्यत्र अनेक ग्रन्थोंमें 'मैत्री, करुणा मुदिता और उपेक्षा' इन चार शब्दों द्वारा प्रकट किया गया है। तथा उपर्युक्त चारों सूत्रोंकी प्राप्ति ओङ्कारकी उपासनासे 'ओम्' इस महामन्त्र के अथवा इसके समान अन्य द्वयक्षर नामोंके जापसे 'अजपा जाप' से ही हो सकती है।

ओङ्कारकी उपासना न केवल आध्यात्मिक शान्तिको ही देनेवाली है अपितु हर प्रकारके शारीरिक एवं मानसिक असाध्य रोगोंकी औषधि भी है। लेखकने इस विषयमें अपनी रामकहानी भी संकलित की है, जो निस्सन्देह प्रेरणा का स्रोत है।

—ब्रह्ममित्र अवस्थी

पत्र-पत्रिकाएँ

कङ्क (कथा अंक)

सम्पादक : निमल शर्मा; दयानन्द मार्ग, धानमंडी, रतलाम। पृष्ठ : १२७; डिमाई, ७३, (जनवरी-फरवरी ७३ अंक); मूल्य : २.५० रु०।

सप्तांशु (साम्प्रतिक हिन्दी कहानी विशेषांक)

सम्पादक : परमानन्द गुप्त, ६ मीनाक्षी कोईल स्ट्रीट क्रास, बंगलौर-५१। पृष्ठ : २५१; डिमाई, ७३; मूल्य : ८.०० रु०।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कङ्क' के सम्पादकका विचार है कि 'आज आम आदमी तमाम घोषित नीतियों व सुविधाओंके बावजूद एक 'नारकीय' से अधिक कुछ नहीं रह गया है, (पृष्ठ १३); आवश्यकता है कहानियोंके माध्यमसे इस आदर्श (मिरर) को तोड़नेकी। मिरर आदर्शका प्रतीक है अथवा यथार्थका, यह अलग बात है—पर प्रस्तुत संग्रहकी कहानियाँ आम आदमियोंकी कहानियाँ अवश्य कही जा सकती हैं।

कहानी जीवनकी अभिव्यंजना और आलोचना करने की सही और ठोस विद्या है – जीवनके अँधेरे-उजाले सही परिप्रेक्ष्यमें इसी (कहानी) के द्वारा रूपायित भी होते हैं। जिन्दगीके तक़से निकाली कहानी यदि समुचित शिल्पके साथ जुड़ी है तो उसका मूल्य भी बढ़ जाता है। इस विशेषांककी (लघुकथाओं सहित) १५ कहानियाँ सामाजिक-राजनीतिक जीवनके विविध पहलुओंको उजागर करती हैं।

'अपना अँधेरा' (लीला श्रीवास्तव) जिन्दगीसे उठायी गयी है, जिसमें नौकरी-पेशावाली प्रौढ़ा किन्तु अविवाहिता सुमाके रिक्त जीवनकी गाथा है। आज ऐसी अनेक सुमा दफ्तरकी जिन्दगीके अँधेरेमें गुम होकर रह जाती हैं और स्वयंको भी खोज नहीं पातीं। दफ्तरकी जिन्दगीपर आधारित 'कठपुतला' (अजित पुष्कल) बड़े बाबूकी मनोवृत्तियोंको दर्शाती है। ऐसे लोग विभिन्न मुखौटे लगाकर शोषकोंका हित साधते हैं और आदमीको मशीन बनानेमें सहायक बनते हैं।

वस्तुतः आजका आदमी तन-मन-धन सभी ओरसे पीड़ित व अभावग्रस्त है और भीतरही भीतर कुछ गिरने की प्रक्रियाको बड़े निराशावादी ढंगसे देख-समझ रहा है। श्री विमलके शब्दोंमें—'कहानी अगर व्यवस्था, सत्ता, सहन, समझौता, पूँजीवादी षड्यंत्र और प्रतिगामी ताकतों के खिलाफ लड़ाकू मुद्रा अख्तियारकर नफरत जगा सकती है तो वह सही चीज है।' (पृष्ठ ३२)। 'इधर उधर' (गंगाप्रसाद विमल) उस आदमीकी हिंसावृत्तिकी तस्वीर है, जो ख्यालोंमें ही बहादुर है।

नये लेखकोंकी स्पष्ट धारणा है कि 'आजकी पीढ़ी

दिल्ली—उज्ज्वल भविष्यकी ओर

जन-जनके लिए शिक्षा

शिक्षा की नगरी—शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में 5 लाख बच्चे 536 उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में शिक्षा पा रहे हैं।

विज्ञान की शिक्षा—दिल्ली प्रशासन ने रोजगार के अवसर बढ़ाने तथा तकनीकी प्रगति का आधार तैयार करने के उद्देश्य से विज्ञान-शिक्षा को सबसे अधिक प्राथमिकता दी है।

इस वर्ष विज्ञान केन्द्रों एवं कर्मशालाओं, विज्ञान परियोजनाओं और प्रशिक्षण को सुचारू रूप से चलाने के लिए 20 लाख रु० की धनराशि खर्च की जायेगी।

व्यावसायिक मार्ग-दर्शन : कार्य अनुभव पाठ्यक्रम 90 स्कूलों में चालू किये जा चुके हैं और व्यावसायिक मार्ग-दर्शन की सेवाएँ भी 15 और स्कूलों में लागू की गई हैं। इस पर इस वर्ष 3·15 लाख रु० खर्च किया जायेगा।

वित्तीय सहायता : जरूरतमंद छात्रों को शिक्षा सुविधाएँ देने के लिए इस वर्ष 22 लाख रु० खर्च किये जायेंगे। इन सुविधाओं में कमजोर छात्रों के लिए विशेष शिक्षण, अध्ययन केन्द्रों की स्थापना, पुस्तक बैंक, मुफ्त परिवहन और शिक्षाप्रद यात्राएँ शामिल हैं।

वयस्क शिक्षा : इस क्षेत्रमें, 64 महिला समाज शिक्षा केन्द्र और 57 किसानों के लिए व्यावहारिक साक्षरता केन्द्र चल रहे हैं। रोजी कमाने वाले लोगों को शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए संध्याकालीन तथा पत्राचार विद्यालय चलाये जा रहे हैं।

शिक्षा का प्रसार : शिक्षा के विस्तार के लिए और अधिक स्कूलों व कालेजों की स्थापना की जा रही है।

समाज के तमाम वर्गों, विशेषकर कमजोर वर्गों के हित के लिए उच्च स्तर की शिक्षा की व्यवस्था है।

दिल्ली के अपने निवासियों के लिए एक योजना है जिसमें शिक्षा, औद्योगिक विकास, ग्रामीण विकास और समाज कल्याण के सभी पहलुओं को शामिल किया गया है। इसे लागू करने में आपका सहयोग सबसे महत्त्वपूर्ण है।

दिल्ली की प्रगति में सहयोग दें।

सूचना एवं प्रचार निदेशालय, दिल्ली प्रशासन द्वारा प्रसारित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शून्यकी खोहमें भटकनेको बाध्यकर दी गयी है–करें तो क्या करें ?......वर्तमानको जीनेकी ललक ही शेष रह गयी है, न अतीतका वैभव याद आता है न भविष्यके मुगालते' पृष्ठ ५०)। आजकी 'मूल्यहीनता और एब्स-र्डिटीकी स्थितिको प्रस्तुत करनेवाली कहानियां हैं—**'उनके बीच'** (सिद्धेश) और **'एक और बेकार दिन'** (शरण बन्धु)। कहीं-कहीं इन लेखकोंने व्यंग्यका सहारा लिया है। चाहे यह व्यंग्य 'राग दरबारी' जैसा पैना न हो, पर कहीं-कहीं कचोटता अवश्य है। **'समाजवादी सुबहमें एक दिन'** (विवेकीराय) ऐसी रचना है।

लघुकथाओंमें 'फैसला' (अन्सार) विशेष महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह कहानी आजके अवसरवादी आदमीकी पोल भली भाँति खोलती है।

कहानीकारों द्वारा दिये गये वक्तव्य समकालीन कहानी के कथ्य रूपको अच्छी तरहसे उजागर करती है—यद्यपि कहीं-कहीं कथनी और करनीमें भारी अन्तर नजर आता है।

× × × ×

'विशेष खेमों, गुटों और समूहोंमें बँटे रचनाकारों द्वारा रचनाएँ न पानेपर भी 'सप्तांशु' ने कहानी विशेषांक प्रस्तुत किया है, जिसमें २२ कहानियाँ हैं, दो लेख हैं और परिचर्चा व वक्तव्य भी है, मतलब कि विशेषांकके अनुरूप सम्पूर्ण सामग्री है।

मूल्योंके विघटनकी बात सही और तीखी है। कहानी जिन्दगीकी उन तल्खियोंकी सही बयानी बन गयी है, जिन्हें भोगनेको आजका इन्सान मजबूर है। छोटी-से-छोटी घटना जीवनको कैसे कुतर जाती है, इस ओर कहानीका ध्यान गया है और सही ढंगसे उसकी अभिव्यक्ति भी हुई है।'' 'मिट्टीकी गन्ध' (मार्कण्डेयसिंह) आजके युवा-आक्रोशको भाषा देती है तो **'रातका भय'** (अजित सिन्हा) उसके खोखलेपनको उजागर करता है।

महानगरके जीवनपर बहुत कुछ लिखा गया है और अब लगता है जैसे उसका कथ्य चुक गया है—वही संत्रास, कुण्ठा, पीड़ा आदि रटेरटाये शब्द..पैसेके लिए देह बेचनेको व्याकुल नारियां और उनका सौदा करनेवाले उनके सम्बन्धी—यह कथ्य भी पुराना ही है, पर **'नेपथ्य'** (ललित शुक्ल) की कहानीमें ताजगी है।

नयी-पुरानी पीढ़ीका संघर्ष आज अधिक उभर आया है—सवाल मूल्योंका ही है। नये लोग, पुराने लोगोंकी मान्यताओंको खोखला मानते हैं और पुराने नये लोगोंकी मान्यताओंका और अंजाम है दोनोंके बीच बढ़ती खाई, जो वस्तुतः समाज और फिर राष्ट्रको ही खोखला किये जा रही है। **'नेतृत्व'** (दिनेश पालीवाल) में इसी संघर्षको सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया गया है। संस्कार और वंश-परम्परामेंसे किसे सही कहा जाये? यहभी एक समस्या है। नेतृत्वकी समस्या इसलिए भी बढ़ गयी है कि रिक्त नारेबाजीसे जनता ऊब चुकी है—'गरीबी हटाओ' के नाम पर बड़े लोग अपनी गरीबी हटा रहे हैं और तथाकथित सेवाका 'फल' पा रहे हैं। इन सबका सामना कौन करे और कैसे करे? **'आवाजें'** (श्रवनकुमार) कहानी इन आवाज को अपने नगे रूपमें उजागर करती है।

अदने आदमीके सामने परेशानियां ही परेशानियां हैं। अपनी सफेदपोशीमें अपनी विवशताको छुपाए जिन्दगीसे मुंह चुराता फिरता है और इसके समर्थ लोग उनकी मज-बूरियोंका पूरा लाभ उठाते हैं—'मगरमच्छ' (प्रेमस्वरूप श्रीवास्तव) कहानी ऐसे मजबूर इन्सानको बड़ी सफाईसे पेश करती है, जो रेडियो-टॉकके साथ पटना जानेका इच्छुक है ताकि दो दिनके भत्तेसे पत्नीके लिए एक हल्की साड़ी खरीद सके पर उसका अफसर खुदही चला जाता है.... 'सहारा' (सुरेश पाण्डेय) कहानीमें पिता-पुत्रके सम्बन्धोंको यथार्थ दृष्टिसे परखा गया है। 'फिर-फिर' (राम सुरेश) में लेक्चरर-इक्जामिनरके सम्बन्धोंपर सही ढंगसे प्रकाश डाला गया है—एक्टर्नल परीक्षककी खुशामदी और आवभगतमें इण्टर्नलकी क्या गत बनती है, उसे बड़े अच्छे ढंगसे प्रस्तुत किया गया है। इस शक्तिशाली कहानीके साथ 'समर्पण' (सलाम विनरजाक) कहानीकी चर्चा भी अवश्य होनी चाहिये। 'समर्पण' विशेषांककी एक उप-लब्धि है, जिसमें कस्बेकी आतंकभरी, गलीज और कालि-लाना जिन्दगीको, जिस सशक्त रूपमें रखा गया है, इसके लिए लेखक निश्चित रूपसे बधाईका पात्र है। गुण्डागर्दी आज इतनी अधिक बढ़ गयी है कि पुलिस भी अपराधीको दण्ड देनेमें कतराने लगी है और शिकायत होनेपर वह उल्टे शिकायत करनेवालेको समझाती है कि वह इस चक्करमें न पड़े अन्यथा उसे जीवनसे हाथही धोना पड़ेगा। यह है स्वतंत्र देशके नागरिकोंकी सुरक्षा-व्यवस्था।

इन कहानियोंके अतिरिक्त शेष कहानियां सेकेण्ड रेट हैं।

'वैचारिकी' के अन्तर्गत दो लेख हैं। डॉ० हरदयालका लेख 'समालीन हिन्दी कहानीमें सृजनावरोध' एकदम लचर, अधकचरा और आफ द प्वांइट है, जिसमें बचकाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरीकेसे घिसीपिटी बातोंको दोहराया गया है। 'परिचर्चा' में मृदुला गर्गने अधिकसे अधिक पब्लिसिटी लेनेकी अखरने वाली कोशिश की है। इस कमजोर विशेषांकमें ये दोनों स्तम्भ उसके स्तरसे भी नीचे हैं।

—मदन केवलिया

नये विज्ञापन : परदेसी विशेषांक

सम्पादक : रावी, नरेश भदौरिया, सुमनलता रायजादा; प्रकाशक : नये विज्ञापन, पो० कैलास, आगरा-२८२००७। पृष्ठ : ११६; क्राउन बुगना, जून ७३; मूल्य : २.५० रु०।

श्री रामगोपाल परदेसीने आगराके काव्य-प्रेमियोंमें अपना विशिष्ट स्थान बना लिया है। उन्हींकी काव्य-कृतियोंको उजागर करनेवाले अनेक लेख उनके प्रेमियों और मित्रोंने इस अंकमें प्रस्तुत किये हैं। श्री परदेसीके काव्यकी विशेषताएँ और उनकी इस क्षेत्रकी उपलब्धियों को समझनेके लिए यह विशेषांक बहुत सहायक है।

श्री परदेसीके काव्यके व्याख्याता अधिकांशतः विभिन्न महाविद्यालयोंके हिन्दी विभागाध्यक्ष हैं और प्रत्येकने उनके काव्यके विभिन्न पहलुओंपर विस्तारसे चर्चा की है। इन चर्चाओंसे श्री परदेसीका कविके रूपमें जो चित्र उभरता है, वह उन्हें हिन्दीके श्रेष्ठ कवियोंकी पंक्तिमें ला खड़ा कर देता है। इस सोद्देश्यकी श्रमकी सराहना किये बिना नहीं रहा जा सकता।

इस श्रम-साध्य उपलब्धिके लिए श्री परदेसी और उनके मित्रोंको बधाई।

—विनोद अग्रवाल

किशोर-बाल साहित्य

समीक्षक : हरिकृष्ण देवसरे

स्वर्ण चम्पा

लेखक : कणासेन; अनुवादक : ब्रजगोपालदास अग्रवाल; प्रकाशक : राधाकृष्ण प्रकाशन, २ अंसारी रोड, दिल्ली ६। पृष्ठ : १०८; क्राउन, ७२, मूल्य : ४.०० रु०।

आज जब, विशाल अजगर द्वारा राजकुमारको पीठपर बिठाकर पातालपुरी ले जानेकी बात कही जाती है, या दूधसे भरे समुद्रकी यात्राका वृतान्त सुनाया जाता है तो बच्चे भय और आश्चर्यसे अवश्य देखते हैं, पर उनके पल्ले कुछ नहीं पड़ता—क्योंकि अनेक तर्कोंके बादवे अन्तमें यह सोचकर संतोष करनेके लिए विवश हो जाते हैं कि ये तो कहानियोंकी बातें हैं। राक्षसों, डायनों आदिकी कहानियाँ सुनकर भी वे यही सोचते हैं। तब यह सोचकर हैरानी होती है कि आजभी बालसाहित्यके लेखक ऐसी चमत्कारी कहानियोंके प्रकाशनमें रुचि क्यों लेते हैं? क्या आज काला-बाजारी करनेवाले, देशद्रोही राक्षसोंकी हमारे यहाँ कमी है—आखिर हम उन प्राचीन कहानियोंके प्रतीकों तथा उपमानके मर्मको समझकर कुछ नया क्यों नहीं लिखना चाहते? क्या आजके जीवनमें बच्चोंको स्नेहसिक्त करने वाली आण्टियाँ या स्कूलोंकी अध्यापिकाएँ नहीं हैं जो उनकी कल्पनामें परियोंके समान ही चमत्कारी और अनोखे कार्य करनेवाली हैं? कणा सेनकी मूल बँगला पुस्तकके हिन्दी अनुवाद 'स्वर्णचंपा' को पढ़कर येही कुछ प्रश्न विचार करनेके लिए विवश करते हैं और तब पुस्तककी उपयोगिता के बारेमें मन संदिग्ध हो उठता है। पुस्तकमें पाँच कहानियाँ हैं—एकसे एक विचित्र, डरावनी और आश्चर्य उत्पन्न करनेवाली। चित्र ऐसे हैं कि बड़े भी उन्हें देखकर यदि रातमें सोयें तो सपनेमें भयभीत हुए बिना नहीं रह सकते—फिर भोले बालमनकी बात सोचिये जिसे हम दर्पण जैसा निर्मल मानते हैं। परी-कथाओंके परिवेशमें परिवर्तन—युग की माँग है। आखिर परीदेशका ऐसा क्या है जो आजके वास्तविक जगतमें नहीं है? क्या उसमें वह रहस्य-रोमांच और आश्चर्य नहीं है? रेतीली आँधीवाले इलाके, बर्फीले तूफानके प्रदेश, वहाँ अजीब पोशाक और खान-पानवाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोग—उनके विचित्र रीतिरिवाज आदिभी आधुनिक परी-कथाओंके अत्यन्त सशक्त और जीवन्त विषय हैं। परी-कथाके प्राचीन प्रतिमानोंको परिवर्तित करना एक अनिवार्यता है और उसे लेखकोंको स्वीकार करना ही होगा।

× × ×

बेताल कथाएँ

रूपान्तर : वीरेश्वर भट्टाचार्य; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ८८; रायल ७१; मूल्य : २.६० रु०।

हमारे यहाँ बेताल कथाएँ आजकल बहुत प्रचलित हो रही हैं। इसका एक कारण यह है कि हमारे बालसाहित्य में अभीतक, अंग्रेजीके कार्टून-चित्रोंके चरित्र 'फैन्टम' जैसा कोई चरित्र नहीं स्थापित किया जा सका। केवल बेताल ही ऐसा लगा जिसे कुछ भयानक और रहस्यपूर्ण कार्योंके लिए स्थापित किया जा सकता था। बेताल-चरित्र कार्टूनों के माध्यमसे लोकप्रिय होने लगा। दूसरी ओर 'बैताल पच्चीसी' की रहस्यमयी और चमत्कारी कहानियाँ भी बच्चोंमें प्रचलित हुई तो लोग बेतालकी कल्पित कथाएँ लिखने लगे। बच्चोंकी प्रसिद्ध पत्रिका 'चन्दामामा' में तो 'बेतालकथा' का एक स्तम्भ ही है। अब स्थिति यह है कि मूल 'बैताल-पच्चीसी' की कथाएँ गायब हो गयीं और काल्पनिक कथाएँ अधिक प्रभावशाली बन गयीं। वैसे भी 'बैताल-पच्चीसी' की कथाओंकी प्रामाणिकता संदिग्ध थी और इस सन्देहका लाभ उठाकर ही आधुनिक बेताल-कथाओं ने जन्म ले लिया।

बैताल-पच्चीसीकी कथाओंमें रहस्य-रोमांच, छल-कपट सभी कुछ है। इसलिए उन्हें मूलरूपमें बच्चोंको देना—विषैला प्रभाव डालनेवाला काम होता और उन्हें परिष्कृत रूपमें प्रस्तुत करना उपयुक्त होता। प्रकाशन विभाग, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित तथा श्री वीरेश्वर भट्टाचार्य द्वारा रूपान्तरित पुस्तक 'बेताल कथाएँ' ऐसी ही है। इसमें कुल सत्रह कहानियाँ ही दी गयी हैं। सभी कहानियाँ रोचक और बच्चों के मनको भानेवाली हैं। पुस्तककी कहानियोंको सुन्दर चित्रों से सजाया गया है जो उसके मूल भावको स्पष्ट करनेमें सक्षम हैं। प्रायः देखा यह गया है कि ऐसी कथाओंमें जितना भय और रहस्य उत्पन्न किया जाता है, उतनाही गहरा प्रभाव डालनेवाले चित्र भी बनाये जाते हैं। लेकिन इससे बाल-मनपर भयका प्रभाव दुगना हो जाता है और वह कहानी का आनन्द लेनेकी बजाय, कहानीके भयात्मक प्रभावसे ग्रसित हो जाता है। उसे सपनेतकमें वे ही पात्र दिखायी देते हैं। जबकि वस्तुस्थिति यह है कि इन कहानियोंका उद्देश्य केवल यह होता है कि वह बालकके कल्पनाशील मन को कुछ देरतक रहस्य-रोमांचकी दुनियाँमें सैर कराकर यथास्थान छोड़ दे। प्रसन्नताकी बात है कि आलोच्य पुस्तक इस दोषसे मुक्त है और पुस्तकके प्रस्तुतीकरणमें सूझबूझसे काम लिया गया है।

× × ×

चित्तौड़गढ़की कहानी

लेखक : प्राणनाथ वानप्रस्थी; प्रकाशक : राजपाल एंड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : ६४; क्राउन, ७३; मूल्य : २.०० रु०

चित्तौड़—भारतीय इतिहासका गौरव, वीरताका स्तम्भ और अनगिनत वीरोंका स्मारक है। इसके गर्भमें कितने ही योद्धाओं, वीरांगनाओंकी गाथा छिपी है। राजपूती शौर्यकी अथक-कथा कहनेवाले चित्तौड़गढ़पर लिखी पुस्तक, आजके सन्दर्भमें प्रेरणा और साहसका संचार करनेवाली है—विशेषकर तब जबकि भारतीय वीरोंने एक बार पुनः पड़ोसी देशके आक्रमणका मुँहतोड़ जवाब दिया हो और भारतीय वीरताका महान् आदर्श स्थापित किया हो।

चित्तौड़के वीरोंमें एक ओर जहाँ शब्दभेदी बाण चलानेवाले पृथ्वीराज चौहान जैसे योद्धा थे, वहीं अपनी आन-बान और स्वतन्त्रताके लिए मर मिटनेवाले महाराणा प्रताप, अमरसिंह भी थे। 'हमीर हठ' की कहावतको जन्म देनेवाले महाराणा हमीरसिंह भी थे और राणा साँगा तथा महाराणा कुम्भा जैसे पराक्रमी वीर भी। वीरांगनाओं में पद्मिनी और हाड़ी रानीने उत्सर्गका अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया तो पन्ना धायने बलिदानका आदर्श स्थापित किया और मीरांने अमर-प्रेम तथा भक्तिकी धारा प्रवाहित की।

इतने विविध चरित्रोंकी गौरवगाथाकी भूमि मेवाड़ और वहाँ स्थित चित्तौड़गढ़के बारेमें बच्चोंके लिए लिखी यह पुस्तक उपयोगी प्रकाशन है। ऐसी पुस्तकें जहाँ बच्चों को भारतीय वीरता और साहसके आदर्शोंसे परिचित कराती हैं, वहीं उन्हें इतिहासकी पूर्व भूमिका तैयार करने में भी सहायक होती हैं और इसप्रकार बालकोंकी विषय विशेषके प्रति रुचिनिर्माणमें मार्गदर्शकका कार्य करती हैं।

लेखकने चरित्रोंके चयन और उनके प्रस्तुतीकरणमें बच्चोंकी रुचि और उनके मनोविज्ञानका पर्याप्त ध्यान रखा है। आत्मकथात्मक शैलीमें लिखी गयी इस पुस्तक को यथास्थान चित्रों द्वारा सुसज्जित भी किया गया है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी उपादेयताको बढ़ाया गया है। विषयवस्तुको आधुनिक जीवनसे जोड़नेके लिए अन्तिम दो अध्यायोंमें वर्तमान इतिहासकी कथाएँ दी हैं। बच्चोंके लिए ऐसे प्रकाशनोंका सदैव स्वागत रहा है, क्योंकि इनमें कथा, इतिहास, साहस-रोमांच और गौरव-गाथाओंका सुन्दर सम्मिश्रण होता है।

× × ×

राजा राममोहन राय

लेखिका : सीमा; प्रकाशक : राजपाल एंड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : ४७; क्राउन, ७३; मूल्य : १.०० रु०।

आजके बच्चे उपदेशसे दूर भागते हैं। 'यह करो', 'यह न करो', 'वह ऐसा था, इसलिए तुम भी ऐसे बनो' जैसे वाक्य उन्हें वह प्रेरणा नहीं दे पाते, जितना मनोविज्ञान-सम्मत शैलीमें कही गयी बातें। यही कारण है कि अब शुष्क जीवनियोंका बालसहित्यमें महत्त्व नहीं रह गया। आज जो जीवनी-पुस्तकें लिखी जा रही हैं, उनमें प्रयत्न यह किया जाता है कि घटनाओं और प्रमुख-चारित्रिक विशेषताओंको अत्यन्त प्रभावोत्पादक रीतिसे प्रस्तुत किया जाय। राजा राममोहनराय भी देशकी उन महान् विभूतियोंमेंसे थे जिनका जीवन सामाजिक कुरीतियों, धर्माडंबरों और पुरातनवादी विचारधाराको उखाड़ फेंकनेमें बीता। उन्होंने सभी वर्गोंको एक नयी चेतना, नयी दिशा और नयी विचारधारा दी थी।

राजा राममोहनरायने अपने जीवनके लिए जो कर्मक्षेत्र चुना था, उसकी पृष्ठभूमि बचपनमें ही निर्मित हो चुकी थी। बड़े होकर उन्होंने सबसे पहले विभिन्न धर्मोंका आलोचनात्मक अध्ययन किया। उनकी बुराइयोंसे दूर, नये आदर्श और सभी धर्मोंके गुणोंसे युक्त एक नये धर्मकी स्थापना की जिसे 'ब्रह्मसमाज' नाम दिया गया। उससमय प्रचलित सती-प्रथा, नारीसमाजके साथ कितने घोर अन्यायके रूपमें थी। ढोल-नगाड़ोंके भीषण स्वरमें, चीखती-चिल्लाती विधवाको जिन्दा जला देना—कितना बड़ा पाखंड था। राजा राममोहनरायने इसका जमकर विरोध किया और इसे जड़से उखाड़-फेंककर ही उन्होंने दम लिया।

वे जिस नये समाज, नये धर्म और नये भारतकी कल्पना कर रहे थे, वह एकदमसे प्राप्त होना सम्भव न था। उन्होंने देशकी भावी पीढ़ीकी ओर निहारा जो तत्कालीन शासन-तन्त्र, समाज और धर्मके ठेकेदारोंकी अन्धविश्वासी और पाखण्डी विचारधारारूपी चट्टानके नीचे दबे-सुबक रहे थे। राजा राममोहन रायने मातृ-भाषामें शिक्षा देने, बच्चोंको अन्य विषयोंके साथ आधुनिकतासे परिचित कराने और बच्चोंके समुचित विकासके लिए आन्दोलन किया, स्कूल की स्थापना की और बच्चोंके लिए एक नये भविष्यका निर्माण किया।

इतनाही नहीं, गरीबोंके शोषण, उनपर हो रहे अन्याय, अत्याचारके खिलाफ भी उन्होंने आवाज उठायी थी। ऐसे महान् व्यक्तिकी जीवनीको सरल, रोचक और सुबोध शैली में प्रस्तुत करनेका यह प्रयास सफल रहा है। जहाँ-तहाँ चित्र भी दिये गये हैं और पुस्तकको बड़े और मोटे अक्षरों में छापा गया है। पुस्तकका मूल्य भी ऐसा है कि सामान्य बाल-पाठक भी लाभान्वित हो सकता है।

जेबी पुस्तकें

समीक्षक : जीवन

वार्षिकी

भारत ज्ञान कोश वार्षिकी १९७३-७४

सम्पादक : योगराज थानी; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली-३२। पृष्ठ : २५६; क्राउन ७३; मूल्य : ३.०० रु०

हिन्द पाकेट बुक्सकी जेबी वार्षिकीने हिन्दीमें अपना स्थान बना लिया है। १९७२ में इसके सम्पादक अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकारके सहयोगीके रूपमें आये योगराज थानी ने ७३ में सम्पादन किया है। ७२ की वार्षिकीमें २७२ पृष्ठ थे ७३ में १६ पृष्ठ कम हो गये, यह क्यों? लगभग वही विषय इसमेंभी हैं जो विगत वर्षोंमें थे किन्तु अधिकांश विषयों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का क्रम बदल गया है और एक-दो विषयोंको विभाजित कर दिया गया है। शासन, कृषि, शिक्षा, खेलकूद, औद्योगिक वैज्ञानिक प्रगति, वार्षिक बजट, विदेश नीति, विदेशोंकी जानकारी, महत्त्वपूर्ण घटनाओंका ऐतिहासिक क्रम आदि संक्षिप्त सारपूर्ण सूचनाएँ पुस्तककी उपयोगिताको सिद्ध करती हैं। अंग्रेजी सन्दर्भ-ग्रन्थोंका ही .धार होनेके कारण अधिक मौलिकताकी अपेक्षा नहीं होती और आकारके लाघव के कारण अपेक्षित सभी बातेंभी नहीं हो सकतीं। संख्याएँ इसबार भी तथाकथित अन्तर्राष्ट्रीय (रोमन) अंकोंमें हैं। ७२ में प्रमुख भारतीय ६६ थे, इस वर्ष केवल ४४ ही रह गये हैं। नामोंका संकलनभी किसी आधारपर नहीं है। कुछ मुख्यमंत्री हैं कुछ नहीं। केन्द्रीय मंत्री भी सब नहीं हैं और अन्य क्षेत्रोंका प्रतिनिधित्व नगण्य हैं। दर्शनीय स्कूलों में पर्वतीय स्कूलों का नाम नहीं। दार्जिलिंग और नैनीताल तकका नहीं। देशका छोटा मानचित्र दे दिया जाता तो महत्त्व बढ़ता। फिरभी सामान्य ज्ञानके लिए हिन्दीमें और इस मूल्यमें यह सबसे अच्छा सौदा है।

उपन्यास

असली नकली चेहरे

लेखक : दयानन्द वर्मा, प्रकाशक : स्टार पाकेट बुक्स, आसफअली रोड, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : १२२; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

अजीब आदमी

लेखिका : इस्मत चुगताई, प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली; पृष्ठ : १२८;७३; मूल्य : २.०० रु०।

शरीफोंका कटरा

लेखक : मन्मथनाथ गुप्त; प्रकाशक : उपर्युक्त; पृष्ठ : १२८, ७३, मूल्य : २.०० रु०।

आधा रास्ता

लेखक : कृष्णचन्द्र; प्रकाशक : वही ; पृष्ठ : १२७; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

दयानन्द वर्माने एक ऐसे व्यक्तिके असली नकली चेहरे चित्रित किये हैं, जो अपनी नपुंसकतासे बचनेके लिए पहले तो विवाहसे बचनेकी कोशिश करता है, फिर पत्नीसे भाग कर आत्महत्या करनेके चक्करमें भूख हड़ताल कर नेता बन जाता है। पुनः भागनेके लिए सेनामें भरती होता है और मरनेकी इच्छासे प्रेषित होते हुए परिस्थितिवश शहीद माना जाकर जनतामें प्रशंसित होता है। किन्तु जिन्दा रह जाता है और वेश बदलकर रहता है। अन्तमें खोज लिये जानेपर वह वास्तविक स्थिति बताकर अपनी पत्नीको पुनः विवाह करनेकी सलाह देता है। उपन्यासके घटना-क्रममें कृत्रिमता है और पात्र मोहरे।

'अजीब आदमी' उर्दू कथा-लेखिका इस्मत चुगताईके गत वर्ष प्रकाशित यथार्थवादी उपन्यासका जेबी संस्करण है। बम्बईके फिल्म जगतका रोचक और प्रभावशाली वर्णन इसमें प्रतिभाशाली फिल्म अभिनेता, निर्माता-निर्देशक धर्मदेवके चारों ओर किया गया है। धर्मदेव अपने उच्चादर्शोंका फिल्मी दुनियांके व्यावसायिक मानदण्डोंके अनुसार लानेके लिए कैसे विवश होता है यह इसमें दिखाया गया है। काल्पनिक नामोंके पीछे गुरुदत्त, गीतादत्त, वहीदा रहमानका चरित्र झलकता है। चटपटी भाषा और उर्दूकी खानीका सिद्धहस्त लेखिकाने मनोहर प्रयोग किया है। फिल्मी दुनियाकी यह कहानी फिल्मोंसे अधिक मनोरंजक तथा यथार्थवादी है। उर्दूसे हिन्दी रूपान्तर करनेवाले व्यक्तिका नाम नहीं दिया गया है।

मन्मथनाथ गुप्तके उपन्यास 'शरीफोंका कटरा' में कुप्रिनके 'यामा' गाड़ीवानोंके कटरेकी ध्वनि मिलती है। आजकी खोखली सभ्यताका मजाक इसमें उड़ाया गया है। सभ्य कहलानेवाले ये लोग तनके जितने उजले हैं, मनके उतनेही काले हैं। नारी तो इनके बीच एक खिलौना ही बन गयी है। विलासिताका एकमात्र साधन। शराफतका मुखौटा लगाये ये लोग असलका भ्रम पैदा कर उठते-बैठते चलते-फिरते हैं। शराफतकी चकाचौंधके पीछे एक बड़ाही बीभत्स और घिनौना व्यापार चलता है जिसकी बदबूको ये लोग आदर्शकी नकली सुगन्धिसे दबाने की चेष्टा करते हैं। प्रोफेसर माथुर शरीफ हैं जो अपनी पत्नीको छोड़कर अपनी शिष्या नीराके साथ नया घर बसा लेते हैं। सुहासिनी छोटी जातकी है वह ऊपर बढ़नेके लिए जगन्नाथका हाथ मांगती है पर अन्तमें बच्चे उत्पन्न करके भी उसे पत्नीका स्थान नहीं मिलता, रखैल ही रह पाती है। मन्मथनाथकी अन्य कृतियोंकी भाँति पुस्तक पठनीय है, यथार्थवादी है, किन्तु कोई उपलब्धि है, ऐसा नहीं कहा जा सकता।

कृश्नचन्दरने नैनीतालके पहाड़ी जीवनके परिप्रेक्ष्यमें 'आधा रास्ता' तय किया है। धनीमानी लोगोंकी विला-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिंसा और अनाचारकी कहानी कही है, राजनीतिपर व्यंग्य किया है। उपन्यास कृश्नचन्दरके चुटीले संवादों और टिप्पणियोंसे भरा है। डॉक्टर कमलको जूलीने प्यार किया, 'शायस्ताने किया, किन्तु राह अधूरी रही। अन्त में दोनोंको छोड़ वह ताराको लेकर आधा रास्ता तय करना चाहता है, एक अस्पताल खोलकर क्योंकि केवल तारा बीमार नहीं है, पूरा समाज रोगी है, सारे समाज को प्लास्टिक सर्जरीकी आवश्यकता है। प्रेम समाप्त है मगर कर्त्तव्य बाकी है।" क्लबकी नशीली नजर और वासनाकी दृष्टिसे नोटोंकी गरमी लिये हुए मुट्ठीभर लोगोंकी जिन्दगी इसमें स्पष्ट होती है। किन्तु खुदाके लिए कृश्नचन्दरने पहाड़ी लोगोंको छोड़ दिया होता, उन्हें गलत परिप्रेक्ष्यमें पेश न किया होता। पहाड़ी केवल दयाके पात्र नहीं, वे अय्याशीके साधनमात्र नहीं। उर्दू से रूपान्तरकारका नाम नहीं, पर मल्लीताल तल्लीतालको 'मिल्लीताल तिल्लीताल', रामगढ़को 'रामघर' लिप्यन्तरका दोष है।

रूमानी उपन्यास

शिकायत

लेखक : शेखर ; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

सूना दर्पण

लेखक : लोकदर्शी; प्रकाशक : स्टार पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १४४; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

शेखरने 'शिकायत' में शिकायत न करनेवाली सरमा की कहानी कही है जो बेचारी अपने प्रेमी आलोकका पूरा नामभी नहीं जानती थी, केवल 'ए' पहचानती थी। उनका प्रेमपत्रों द्वारा परवान चढ़ता है और पत्र लेखक होता है आलोकका मित्र अनुराग जिसका बिवाह सरमाकी सहेली अचलासे हो जाता है। अचला समझती है कि अनुराग उसे और उसकी सहेली सरमाको धोखा दे रहा है और वह शिकायत कर देती है। अविश्वास अन्तमें सरमाकी जान ले लेता है। लेखकने रोमांटिक कथोपकथन और घटनाचक्र के द्वारा अस्वाभाविक कहानीको स्वाभाविक बनानेका अच्छा प्रयास किया है। पत्र लिखकर प्यार करनेवाली युवतियोंके लिए चेतावनी देनेवाला उपन्यास शेखरके प्रेमी पाठक पसन्द करेंगे।

'लोकदर्शी' के उपन्यासमें उसकी (?) कृतियोंकी भाँति हिन्दी फिल्मोंका फार्मूला बरकरार है। कुरूप हाथोंवाली अन्यथा सुन्दर लड़की पूनम अपने चित्रकार पति अरुण से, जो उसके कुरूप हाथ देखकर ही उससे विरक्त हो गया था, बदला लेती है। प्लास्टिक सर्जरीसे हाथ ठीक कराकर वह सोनिया बन अरुणको अपने प्रेमजालमें फाँसती है। और इन सबके बीच अमीर-गरीबका द्वन्द्व, हत्या, जालसाजी, अदालत, गलतफहमियाँ सभी कुछ है।

जासूसी उपन्यास

मौतके फन्दे

लेखक : कर्नल रंजीत; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

खूनकी होली

लेखक : गुप्तदूत; प्रकाशक : स्टार पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ १२४; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

कर्नल रंजीतके इस उपन्यासमें लोबान और कपूरका धुंवाचील' गंडे लगी डोरियाँ, मरे हुए तोते, बटेर आदि पक्षी मारे गये व्यक्तिके पास मिलते हैं और सभी हत्याओंमें मृत व्यक्तिकी गरदनसे प्रकाश निकलता है। अन्ततः जासूस मेजर बलवन्त इनका रहस्य खोज निकालता है जो शताब्दी पूर्व की एक जादूगरनी द्वारा एकत्र अजायबघरकी वस्तुओंको पुनः एकत्र करनेमें किये गये घृणित तान्त्रिक प्रयास सिद्ध होते हैं। कथाका तानाबाना बहुत सुन्दर बुना गया है और पाठकको उत्सुकता निरन्तर बनी रहती है।

गुप्तदूतकी 'खूनकी होली' भी जादू-टोनेके आवरणमें अखरोटकी छड़ी और बिल्लौरका ग्लोब आदिके द्वारा तांत्रिक श्वेत जादूगरीकी हत्याओंकी कहानी है जिससे ऐसा लगता है कि हिन्दी जासूसी उपन्यासकार सब एक सा ही सोचने लगे हैं और जादूके रहस्यके द्वारा तिलिस्मी अय्यारी उपन्यासोंके युगमें फिर लौट रहे हैं।

फिल्मी पटकथा

फागुन

लेखक : राजेन्द्रसिंह बेदी; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १२८ (८ फोटो पृष्ठ); ७३; मूल्य : २.०० रु०।

प्रसिद्ध कहानीकार तथा फिल्म निर्देशक राजेन्द्रसिंह बेदीके 'फागुन' फिल्मका स्क्रिप्ट एक ऐसी महिलाकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी प्रस्तुत करता है जिसका पति एक लेखक है और गरीबीके प्रति अपनी अमीर पत्नीके व्यंग्यको सहन न कर भाग जाता है। महिला अपनी लड़कीके जवान होनेपर उसके विवाहके बाद अपने दामादको सभी सुख देना चाहती है पर दामाद सासके अतिशय सत्कारको हस्तक्षेप अनुभव करता है और कलह उत्पन्न होता है। अन्तमें भागा हुआ लेखक अमीर होकर लौट आता है। सिद्धहस्त लेखकने कहानीको खूब निबाहा है।

विविध

महारानी

लेखक : दीवान जरमनीदास तथा राकेश मोहनदास; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १९२; ७३; मूल्य : ३.०० रु०।

दीवान जरमनीदासकी 'महाराजा' पुस्तक काफी चर्चित रही। उनकी ही अंग्रेजी पुस्तक 'महारानी' का यह हिन्दी रूपान्तर सुदर्शन चोपड़ाने प्रस्तुत किया है। दीवान जरमनीदासकी मृत्युके बाद उनके पुत्र राकेशने पुस्तकको पूरा किया। पुस्तकमें दो भाग हैं। प्रथम भागमें ४७ अध्याय और दूसरेमें तीन अध्याय हैं।

वस्तुतः पुस्तकका हर अध्याय अपने आपमें पूर्ण और अलग-अलग लिखा हुआ है। कई आधुनिक भारतीय महारानियों के अतिरिक्त सीता, नूरजहाँ, मुमताज, झाँसीकी रानी, ऐनीबोलीन, मेरी एन्टोनेट आदि प्राचीन भारतीय तथा विभिन्न युगोंकी विदेशी महारानियोंके विवरण दिये गये हैं। इसके अतिरिक्त स्वीडन, नीदरलैण्ड, फ्रान्सके मुक्त सेक्सपर लेख हैं, जौहरपर भी। भाग दो में 'आदिम जातियाँ', 'सभ्यताकी ओर' और 'वेश्यावृत्ति' पर विचार प्रकट किये गये हैं।

दीवान जरमनीदासने अपने अनुभवसे जो संस्मरणात्मक कहानियाँ महाराज कपूरथलाके परिवार, त्रावनकोर, इडा आदिके परिवारोंकी कामुकताकी लिखी हैं वे उनके 'महाराजा' के संस्मरणोंकी भाँति भारतीय राजपरिवारों के अनैतिक, कामुक, पतित, घृणित जीवनका चित्रण करती हैं जिनसे स्पष्ट हो जाता है कि लोकतंत्रीय भारतमें इनका समाप्त होना कितना अनिवार्य था। इनके अतिरिक्त पुस्तकमें जो लिखा गया है वह कलेवर बढ़ानेके लिए ही है; न तो 'महारानी' से सम्बद्ध है और न समाज-शास्त्रीय दृष्टिसे गहन अध्ययनका परिणामही। अनुवाद अच्छा है।

भविष्यवाणियाँ जो सच निकलीं

लेखक : हरिमोहन शर्मा; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली। पृष्ठ : १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

ज्योतिष ऐसा विषय है जो भावीके पर्देके भीतर झाँकनेकी जिज्ञासाको शान्त करता है। भलेही हम विश्वास करें न करें, अनेक व्यक्ति सदैव अपना कार्य ज्योतिषके अनुसार करते हैं। इस पुस्तकमें संसारके गिने-चुने भविष्य वक्ताओंकी मनोरंजक कहानियाँ हैं। पहले अध्यायमें चीरो, हरकौस, कीतिधरण आदिकी दुनियाँ की नई पुरानी भविष्यवाणियाँ दी गयी हैं। दूसरेमें भविष्यका आभास देनेवाले सपने दिये गये हैं, टीपू सुलतान, सन्त त्यागराज, स्टींगल आदिके। तीसरेमें युद्धकालकी भविष्यवाणियोंमें हिटलर, चर्चिल, किचनर आदिका ज्योतिषसे सम्बन्ध दिखाया गया है। चौथे अध्यायमें ताशके पत्ते, जूतके पंजे, सिक्के आदिके द्वारा कुछ विचित्र ढंगकी भविष्यवाणियों की कहानी हैं। अन्तमें कुछ भविष्यवाणियोंके रहस्य बताये गये हैं जो उन लोगों द्वारा की गयीं जिन्हें भविष्य-वक्ता नहीं कहा जा सकता।

ये सत्य कथाएँ (?) कमसे कम एक आश्चर्यकारी मसौदेके रूपमें पढ़कर मनोरंजन तो अवश्यही करेंगी। ऐसे संकलनके श्रमके लिए दो रुपये पाठक सहर्ष खर्च करेंगे।

शिक्षण-संस्थाओं, पुस्तकालयों
और
बुद्धिजीवियोंके लिए
उपयोगी और अनिवार्य
'प्रकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्ति सूचना

[निम्न पुस्तकें समीक्षार्थ प्राप्त हुई हैं, आगामी अंकोंमें इनकी समीक्षा अथवा परिचय प्रस्तुत किया जायेगा। समीक्षार्थ पुस्तककी दो प्रतियाँ आनी चाहिये, एक प्रतिकी समीक्षा अथवा परिचयका दायित्व स्वीकार नहीं किया जाता।]

शोध-आलोचना

आधुनिक हिन्दीकाव्यमें व्यंग्य; लेखक : डॉ० बरसानेलाल चतुर्वेदी; प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन, २०५, चावड़ी बाजार, दिल्ली-६। पृष्ठ : १८१; डिमाई, ७३; मूल्य : १५.०० रु०।

छायावादी काव्यमें राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना; लेखक : रवीन्द्र नाथ दरगन; प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, ६१ एफ, कमलानगर, दिल्ली-७। पृष्ठ : १५८; डिमाई, ७३; मूल्य : १२.५० रु०।

भारतेन्दु युगका नाट्य साहित्य और रंगमंच; लेखक : डॉ० वासुदेवनन्दन प्रसाद; प्रकाशक : भारती भवन, एक्जिबीशन रोड, पटना। पृष्ठ : २९६; डिमाई, ७३; मूल्य : १८.०० रु०।

माधव ग्रन्थावली (आलोचनात्मक अध्ययन); सम्पादक एवं टीकाकार : डॉ० भवानीलाल भारतीय, कु० इन्द्रा सक्सेना; प्रकाशक : लोक-सम्पर्क प्रकाशन, १६५ गांधीनगर, जयपुर। पृष्ठ : १६२ (आलोचना) + ६८ (टीका सहित मूल); डिमाई, ७३; मूल्य : ५.०० रु०।

मानसमें रीति तत्त्व; लेखक : वैद्यनाथसिंह; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग। पृष्ठ : २६४; रायल, ७३; मूल्य: २५.०० रु०।

मुक्तिबोध : एक साहित्यिक इकाई; लेखक : डॉ० जगदीश शर्मा; प्रकाशक : किताब महल, इलाहाबाद। पृष्ठ : १०९; डिमाई, ७२; मूल्यका उल्लेख नहीं।

उपन्यास

बीमार शहर; लेखक : राजेन्द्र अवस्थी; प्रकाशक : राजपाल एंड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : १८९; क्राउन, ७३; मूल्य : ८.०० रु०।

मरीचिका; लेखक : गंगाप्रसाद विमल; प्रकाशक : राजपाल एंड संस, दिल्ली। पृष्ठ : १४८; क्राउन, ७३; मूल्य : ७.०० रु०।

सोना; लेखक : भवानी भट्टाचार्य; अनुवादक : श्रवणकुमार; प्रकाशक : राजपाल एंड संस, दिल्ली। पृष्ठ : १८० क्राउन, ७३; मूल्य : ७.०० रु०।

काव्य

आखिर कबतक; कवि : कमर मेवाड़ी; प्रकाशक : सम्बोधन प्रकाशन, कांकरोली (राजस्थान)। पृष्ठ : १६; डिमाई, ७३; मूल्य : १ ०० रु०।

राजनीति

जेलमें बीता बचपन ; लेखक : प्योत्र याकिर ; अनुवादिका : विजयश्री भारद्वाज; प्रकाशक : नेशनल अकादमी, ९ अंसारी मार्केट, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : १६०; क्राउन, ७३; मूल्य : २.०० रु०।

लेनिन; लेखक : राबर्ट कांक्वेस्ट; अनुवादक : ओ० पी० दीपक; प्रकाशक : पी० के० पब्लिकेशन, ३०७२, प्रताप स्ट्रीट, गोला मार्केट, दिल्ली-६। पृष्ठ : १२८; क्राउन, ७३; मूल्य २.०० रु०।

धर्म-दर्शन

श्री गीता : श्री ज्ञानेश्वरी सुबोधिनी (तृतीय और चतुर्थ अध्याय); लेखक : डॉ० गो० रा० उपलाईकर, अनुवादक म० दा० बरसादडे; प्रकाशक : डॉ० गो० रा० उपलाईकर, फलटण (सातारा), महाराष्ट्र। तृतीय अध्याय : पृष्ठ : २७५ ; क्राउन, ६९; चतुर्थ अध्याय : पृष्ठ : ४१२; क्राउन, ७३; मूल्यका उल्लेख नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गृह-विज्ञान

स्वादिष्ट भोजन कला; लेखिका : अरुणा शेठ ; प्रकाशक : राजपाल एंड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : १३६; क्राउन, ७३; मूल्य : ५.७५ रु०।

बाल-साहित्य

राष्ट्रीय अंत्याक्षरी; लेखक : श्री कृष्णकुमार त्रिवेदी; प्रकाशक : तरुण सांस्कृतिक मण्डल, अनामिका, मुराई टोला, फतेहपुर (उ० प्र०)। पृष्ठ : ४५; क्राउन, ७३; मूल्य : ०.८५ रु०।

जेबी-साहित्य

अग्नि-परीक्षा (उपन्यास); लेखक : गुरुदत्त; प्रकाशक : स्टार पाकेट बुक्स, आशफअली रोड, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : २१६; ७३; मूल्य : ३.०० रु०।

अचला (उप०); लेखक: सेठ गोविन्ददास; प्रकाशक : स्टार पाकेट बुक्स। पृष्ठ : १२६; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

आपकी पत्नी; लेखक : डॉ० लक्ष्मीनारायण शर्मा; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स, जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली-३२। पृष्ठ : १२६; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

आवारागर्द (कहानी-संग्रह); लेखक : आचार्य चतुरसेन; प्रका० : हिन्द पाकेट बुक्स। पृष्ठ : १६१; ७३; मूल्य : ३.०० रु०।

कायर (उप०); लेखक : शेखर; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स। पृष्ठ : १२३; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

क्यों फँसे (उप०); लेखक; यशपाल; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स। पृष्ठ : १२४; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

खूनी संगीत (जा० उप०); लेखक : कर्नल रंजीत; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स। पृष्ठ : १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

जीनेकी कला; लेखक : राजेन्द्र शर्मा; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स। पृष्ठ: १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

टूटा दर्पण (उप०); लेखक : दत्त भारती; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स। पृष्ठ : १९२; ७३; मूल्य : ३.०० रु०।

दामन और आग (उप०); लेखक: राजवंश; प्रका० : स्टार पाकेट बुक्स। पृष्ठ : १४०; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

धुएँकी लकीर (फिल्मी पटकथा); लेखक : किशोरसाहू प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स। पृष्ठ : १२७; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

प्रसिद्ध व्यक्तियोंकी प्रेमकथाएँ; लेखक : रामकुमार भ्रमर; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स। पृष्ठ १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

रोगोंकी सरल चिकित्सा; लेखक : विट्ठलदास मोदी; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स; पृष्ठ : १२७; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

समाजवादसे सावधान (राजनीति); लेखक : भगवान रजनीश; प्रकाशक : स्टारपाकेट बुक्स। पृष्ठ : १३६; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

सुलगती रात (उप०); लेखक; लोकदर्शी; प्रका० : स्टार पाकेट बुक्स। पृष्ठ : १२८; ७३; मूल्य : २.०० रु०।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महत्वपूर्ण आलोचना-ग्रन्थ

छायावाद : नया मूल्यांकन

लेखक : प्रो. नित्यानन्द पटेल

छायावादसम्बन्धी इस नये अध्ययनमें लेखकने अबतककी सभी विचारधाराओंको सम्मुख रखकर समीक्षात्मक ढंगसे उनकी विवेचना की है। लेखककी मान्यता है कि छायावादी काव्यका मूलाधार प्रगाढ़ प्रकृति-प्रेम है और उसने पूर्ण विद्वत्ताके साथ तर्कपूर्ण शैलीमें सप्रमाण यह पक्ष प्रस्तुत किया है।

शोधार्थियों और विद्यार्थियोंके लिए सन्दर्भ-ग्रन्थ

कुछ उल्लेखनीय सम्मतियाँ

यह अभिनव कृति छायावादके स्वरूपको यथावत् समझने-परखनेका प्रमाण प्रस्तुत करती है। विद्वान् लेखकने प्रचलित मन्तव्योंका विश्लेषण कर स्वच्छ शैलीमें अपने मतकी स्थापना की है। उनकी विचार-पद्धति सुलझी हुई और निष्कर्ष तर्कपुष्ट हैं। **—डॉ० नगेन्द्र, दिल्ली विश्वविद्यालय**

इस ग्रन्थमें छायावाद-आन्दोलनको सही परिप्रेक्ष्यमें सहज-सुबोध रीतिसे प्रस्तुत किया गया है। लेखकने छायावादके विविध पक्षोंपर जागरूक भावसे तथा गहराईके साथ मनन किया है और उनके विवेचनमें पैनापन तथा विचारोत्तेजकता है। **—डॉ. सावित्री सिन्हा, दिल्ली विश्वविद्यालय**

लेखककी स्थापनाओंके पीछे चिन्तन-मननके साथ जो तर्क-प्रमाणका बल है, वह पाठकोंको इस काव्यका पुनः एक बार गम्भीरताके साथ अनुशीलन करनेको विवश करता है।

—डॉ॰ विजयेन्द्र स्नातक, दिल्ली विश्वविद्यालय

सजिल्द मूल्य : ७.५० रु. छात्र-संस्करण : ६.०० रु.

नवभारती सहकार प्रकाशन

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

संस्थाके प्रकाशन

आलोचना

छायावाद : नया मूल्यांकन—प्रो. नित्यानन्द पटेल	७.५०
स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी साहित्य—डॉ. महेन्द्र भटनागर	८.००
रूसी भाषा और संस्कृतमें आन्तरिक समानता—श्रीमती इन्दुलेखा	१.२५
अन्धायुग : एक विवेचन—डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा	१०.००

उपन्यास

अपराधी वैज्ञानिक—यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक'	८.००
ये पहाड़ी लोग— ,, ,,	४.५०
सुधा—टी. एन. गोपीनाथ नायर	३.५०
शकुन्तला—विराज	४.५०
प्रवासी—श्यामाचरण मिश्र	५.००

नाटक

देवयानी—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन् नायर	३.५०
श्रेष्ठ एकांकी—डॉ. वासुदेवनन्दन प्रसाद	३.५०

जीवन और दर्शन

शंकराचार्य : जीवन और दर्शन – वैद्य नारायणदत्त	२.५०
महर्षि दयानन्द : जीवन और दर्शन— ,,	५.००
गुरु नानक : जीवन और दर्शन— ,,	५.५०
श्री अरविन्द : जीवन और दर्शन—रवीन्द्र	३.००

अन्य प्रकाशन

रुपयेका अवमूल्यन और उसका प्रभाव	८.००
समाजवादी वर्मा –श्यामाचरण मिश्र	४.००
विस्तारवादी चीन—जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी	१.२५
कच्छ –श्रीमती पद्मा अग्रवाल	२.२५
अफ्रीकाके राष्ट्रीय नेता—जगमोहनलाल माथुर	२.५०
एवरेस्ट अभियान—डॉ. हरिदत्त भट्ट 'शैलेश'	२.२५

प्रचारित साहित्य

शोध प्रबन्ध

संस्कृत कवितामें रोमाण्टिक प्रवृत्तियाँ—डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा	२०.००
सन्त काव्यका दार्शनिक विश्लेषण—डॉ. मनमोहन सहगल	१५.००
पं. अम्बिकादत्त व्यास : एक अध्ययन—डॉ. कृष्णकुमार	२५.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलोचना

आधुनिकता और राष्ट्रीयता—डॉ. राजमल बोरा	६.५०
सूरके कृष्ण : एक अनुशीलन—शशि तिवारी	१०.००
कामायनी : इतिहास और रूपक—सुशीला भारती	१०.००
नयी कविताके सात अध्याय—डॉ. देवेश ठाकुर	१२.००
जनकवि दिनकर—डॉ. सत्यकाम वर्मा	५.००
महाकवि प्रसाद— ,,	४.००
महाकवि पन्त— ,,	४.००

भाषा-विज्ञान

भाषा तत्व और वाक्यपदीय—डॉ. सत्यकाम वर्मा	२०.००
भारतीय भाषा विज्ञानकी भूमिका—डॉ. भोलानाथ तिवारी	३२.००

उपन्यास

आचार्य चाणक्य—डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार	६.००
राजुली मालूसाही—यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक'	८.००

कहानी-संग्रह

प्राचीन कथाएँ—डॉ. कृष्णकुमार	५.००
अप्सराका सम्मोहन तथा अन्य कहानियाँ—यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक'	५.००
खोये हुए लोग—ओम्प्रकाश निर्मल	५.००

कविता

फार्टी पोइम्स ऑफ डॉ० महेन्द्र भटनागर	१०.००

नाटक

श्री चन्द्रावली नाटिका (भारतेन्दु)—सं. डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा	३.००
मन्दिरकी जोत—चिरंजीत	३.५०
पाँच प्रहसन— ,,	४.००
घेराव— ,,	४.००

अन्य प्रकाशन

अजन्ताकी गुफाएँ—धीरेन्द्रनाथ वर्मा	१२.००
बर्माका इतिहास—श्यामाचरण मिश्र	६.००
हिमगिरि विहार—स्वामी तपोवनम्जी	१०.००

बाल-किशोर साहित्य

होलीका हौवा—हरिकृष्ण तैलंग	१.००
जूता चर्चा ,,	१.००
चुन्नू-मुन्नू-पुष्पा (बच्चोंके पाँच नाटक)—चिरंजीत	३.५०

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देशके वित्तमन्त्रने घोषणा की है :

इस समय रुपयेका मूल्य केवल ४२.४ पैसे है

- ० रुपयेका यह अवमूल्यन क्यों ?
- ० इस अवमूल्यनका हमारी अर्थव्यवस्थापर क्या प्रभाव है ?

इन प्रश्नों तथा अन्य सम्बद्ध समस्याओंका उत्तर पानेके लिए पढ़ें :

रुपयेका अवमूल्यन और उसका प्रभाव

इस महत्वपूर्ण पुस्तकमें मुद्राके अवमूल्यनकी आवश्यकता और देशकी अर्थव्यवस्थापर उसके प्रभावकी अधिकारी विद्वानोंद्वारा विवेचना की गयी है।

लेखक

०पी. सी. भट्टाचार्य (भू. पू. गवर्नर रिजर्व बैंक), ०एच. वी. आर. अयंगार(भू. पू. गवर्नर रिजर्व बैंक), ०डॉ. वी. के. आर. वी. राव (भू. पू. शिक्षामंत्री), ०एम. आर. मसानी, ०रमणभाई बी. अमीन, ०बाबूभाई एम. चिनाई, ०सी. सी. देसाई, ०वी. एम. दांडेकर ०डॉ. सैम्युअल पाल, ०डॉ. ज्ञानचन्द, ०एस. आर. महनीत, ०रामनाथ ए. पोद्दार, ०जी.डी. सोमाणी, ०डी.के. रांगणेकर, ०क. रंगाचारी, ०वीरेन्द्र अग्रवाल।

मूल्य : आठ रुपये

नवभारती सहकार प्रकाशन

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

किशोर-बाल साहित्य

साहस और यात्रा

एवरेस्ट अभियान

डॉ. हरिदत्त भट्ट 'शैलेश' की इस पुस्तकमें विश्वकी सबसे ऊँची चोटीपर हुए अबतकके सभी अभियानोंका पूरा इतिहास और विवरण है।

जेबी आकार : मूल्य : २.२५ रु.

जीवनियाँ

इस पुस्तकमालाके सभी ग्रन्थोंमें महापुरुषों का जीवन और उनके विचारों, उपदेशों, चिन्तनों का विवरण अलग-अलग खण्डों में है :

श्री अरविन्द : जीवन और दर्शन
लेखक : रवीन्द्र (पाण्डिचेरी)
मूल्य : ३.०० रु.

श्री शंकराचार्य : जीवन और दर्शन
लेखक : नारायणदत्त वैद्य
मूल्य : २.५० रु.

महर्षि दयानन्द : जीवन और दर्शन
लेखक : नारायणदत्त वैद्य
मूल्य : ५.०० रु.

गुरु नानक : जीवन और दर्शन
लेखक : नारायणदत्त वैद्य
मूल्य : ५.५० रु.

बाल-साहित्य

होलीका होवा
लेखक : हरिकृष्ण तैलंग
मूल्य : १.०० रु.

जूता चर्चा
लेखक : हरिकृष्ण तैलंग
मूल्य : १.०० रु.

नवभारती सहकार प्रकाशन

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश-विदेशकी राजनीतिक परिस्थितियोंमें
निरन्तर परिवर्तनोंकी पृष्ठभूमि प्रदान करनेवाली पुस्तकें

विस्तारवादी चीन

यह पुस्तक चीनकी साम्राज्य-विस्तारकी महत्वाकांक्षाकी कहानी है। इसमें चीनकी साम्राज्यवादी भूखके शिकार तिब्बत, सिक्यांग, भीतरी मंगोलिया और मंचूरियाके पतनका इतिहास है और दक्षिण-पूर्व एशियामें चीनद्वारा भारतीय सभ्यता, धर्म और कलाको नष्ट करनेके प्रयत्नोंकी कहानी है। लेखक हैं : जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी।

उत्तर-प्रदेश सरकारद्वारा पुरस्कृत। (जेबी आकार) मूल्य : १.२५ रु.

कच्छ

इस पुस्तकमें कच्छपर पाकिस्तानी आक्रमण, कच्छसम्बन्धी समझौते और वहांका पूर्ण परिचय है। लेखिका हैं : पद्मा अग्रवाल।

उ. प्र. सरकारद्वारा पुरस्कृत। (जेबी आकार) मूल्य : २.२५ रु.

अफ्रीकाके राष्ट्रीय नेता

अफ्रीकामें निरन्तर संघर्ष होते रहते हैं। सैनिक विद्रोह वहांकी नियति है। अफ्रीकाकी घटनाओंके संचालकों और राजनीतिज्ञोंके साथ अफ्रीकाके प्रत्येक देशका इसमें परिचय है। लेखक हैं : जगमोहनलाल माथुर।

(जेबी आकार) मूल्य : २.५० रु.

समाजवादी बर्मा

बर्मामें सैनिक समाजवादका उदय वहांके वर्तमान राष्ट्रपति नेविनके नेतृत्वमें हुआ। इसका कारण वहांकी पूर्व सरकारके कालमें व्याप्त व्यापक भ्रष्टाचार था। इस परिवर्तनका वहां बसे भारतीयोंपर प्रबल कुप्रभाव हुआ। इसके लेखक हैं बर्मावासी श्यामाचरण मिश्र।

(क्राउन आकार) मूल्य : ४.०० रु.

चारों पुस्तकें एकसाथ मँगानेपर डाक-व्ययकी छूट

नवभारती सहकार प्रकाशन

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्रकर' का आगामो महत्त्वपूर्ण विशेषांक

१९७२ के उल्लेखनीय प्रकाशन

●

इस विशेषांक में सभी भारतीय भाषाओंके १९७२ के महत्त्वपूर्ण, विशिष्ट और उल्लेखनीय प्रकाशनोंपर समीक्षात्मक लेख होंगे ।

●

हिन्दीकी सभी प्रमुख विधाओंके १९७२ के विशिष्ट प्रकाशनोंपर अलग-अलग लेख होंगे ।

●

सभी लेखक अपने क्षेत्रके अधिकारी विद्वान् हैं ।

●

'प्रकर' के स्थायी ग्राहकोंको यह विशेषांक ९.०० रु० के वार्षिक शुल्कमें प्राप्त होगा । जनवरी ७४ से 'प्रकर' का वार्षिक शुल्क १२ रु० हो जायेगा । इसलिए अभी से ९.०० रु० वार्षिक शुल्क भेजकर यह लाभ उठा सकते हैं ।

पृष्ठ संख्यां : लगभग २०० **मूल्य : छः रुपये**

पूर्व प्रकाशित विशेषांक

१९६९ के उल्लेखनीय प्रकाशन	१.०० रु०
१९७० ,, ,,	४.०० रु०
१९७१ ,, ,,	६.०० रु०
भारतीय साहित्य : २५ वर्ष	६.०० रु०
अहिन्दो भाषियका हिन्दी साहित्य	४.०० रु०

'प्रकर', ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली ११०००७

'नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)' के लिए विद्यासागर विद्यालंकारद्वारा सम्पादित, प्रताप मुद्रणालय, दिल्ली-७ के लिए दी एज्युकेशनल प्रेस, सिटी स्टेशन मार्ग, आगरा-३ में मुद्रित, ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७ [टेलीफून नम्बर : २२३८६३] से प्रकाशित ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

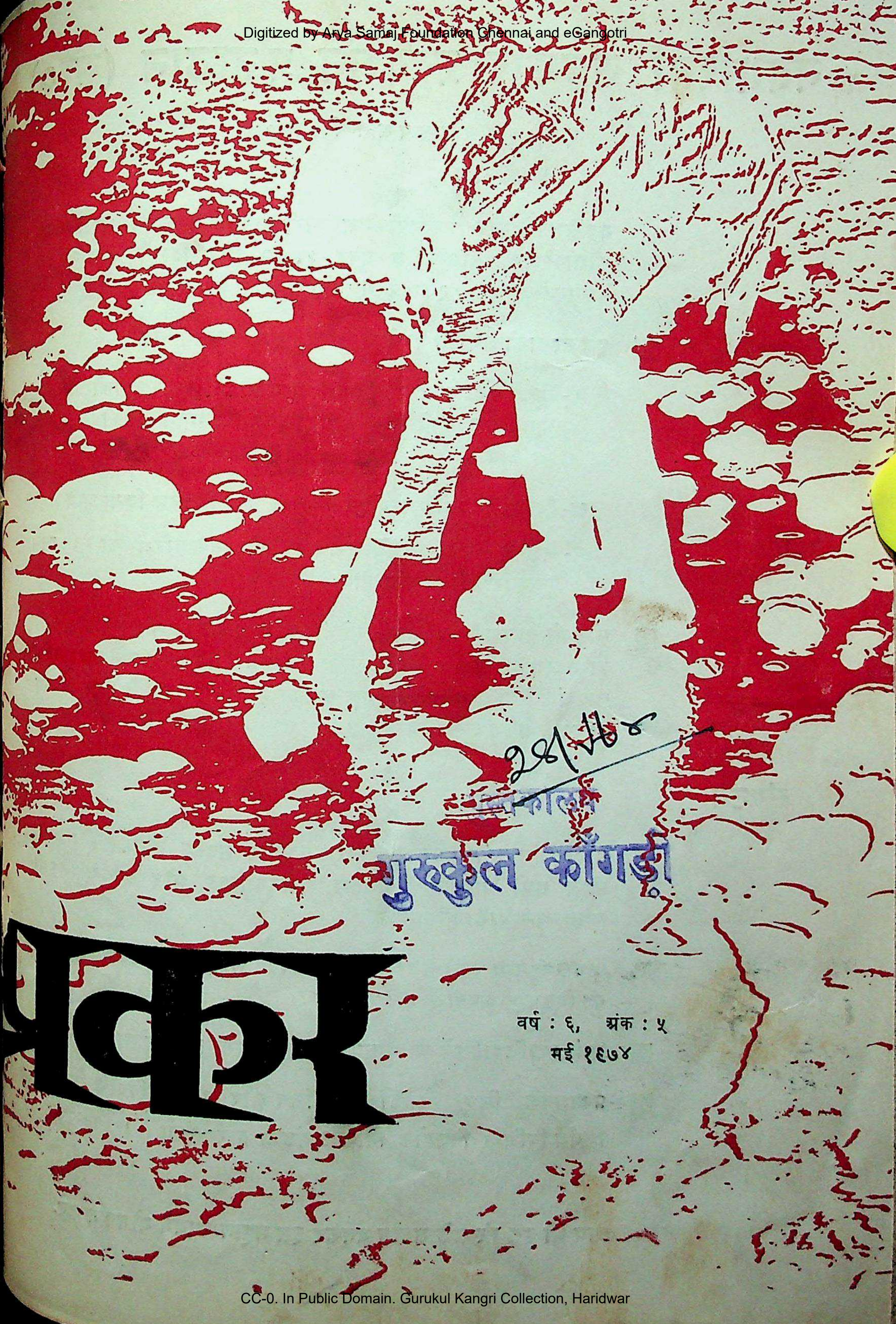

कर

वर्ष : ६, अंक : ५
मई १९७४

२८१५८४
पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)

ए ८/४२ राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

यह लेखकों और पत्रकारोंकी सहकारी संस्था है और यह मल्टी यूनिट कोआपरेटिव सोसायटीज एक्ट १९४२ और दिल्ली कोआपरेटिव सोसायटीज एक्ट १९७२ के अन्तर्गत पंजीकृत है।

❋ इस संस्थाको सगठित करनेका मुख्य प्रयोजन रहा है कि :

क- हिन्दी तथा अन्य प्रादेशिक भाषाओंमें साहित्य रचनाको प्रोत्साहित किया जाये और अन्तर्राज्योय आदान-प्रदानकी व्यवस्था की जाये।

ख- विविध विषयोंके ग्रन्थोंका प्रकाशन और वितरण किया जाये।

ग- लेखकों, साहित्यिकों और सपादकोंको उनके परिश्रमका अधिकतम पुरस्कार प्रदान किया जाये।

❋ कोई भी वयस्क लेखक, साहित्यसेवी, पत्रकार और कलाकार इस संगठन का सदस्य बन सकता है। सदस्यता-प्राप्तिके लिए प्रतिष्ठानका न्यूनतम एक अंश लेना अनिवार्य है। एक अंशका मूल्य सौ रुपया है। इसके साथ दो रुपया प्रवेश शुल्क देना होगा।

संगठन

❋ प्रत्येक अंशधारी सदस्य साधारण-सभाका सदस्य होता है। संस्थासे संबद्ध सभी मामलोंका अन्तिम उत्तरदायित्व और अधिकार इसी साधारण-सभाका होता है।

❋ साधारण सभा कार्य संचालनके लिए पंद्रह सदस्योंकी व्यवस्था समिति का निर्वाचन करती है।

❋ सभी पदाधिकारियों का चुनाव साधारण सभा द्वारा होता है।

❋ प्रकाशनके लिए पुस्तकोंका निर्वाचन और पाण्डुलिपियोंके सम्बन्धमें निर्णय विभिन्न विषयोंके विशिष्ट मंडलों द्वारा होता है।

आप भी इस संस्थाके सदस्य बनकर इस महान कार्यमें योगदान करें.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गत पच्चीस वर्षोंका

हिन्दी-साहित्यका सर्वेक्षण

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी साहित्य

[सम्पादक : डॉ महेन्द्र भटनागर]

* प्रधान साहित्य-रूपोंकी प्रमुख प्रवृत्तियों एवं उपलब्धियोंका प्रमुख समीक्षकों द्वारा उच्चस्तरीय आकलन एव तटस्थ विश्लेषण

* हिंदी साहित्यके अध्येतओंके लिए एक अपरिहार्य आलोचन कृति

* अनेक विश्वविद्यालयोंमें स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमोंके अन्तर्गत सहायक ग्रन्थके रूपमें स्वीकृत

छात्र संस्करण ७.५० रु. सजिल्द १०-०० रु०

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

प्रकर,...मई...७४......१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया प्रकाशन

छायावाद : नया मूल्यांकन

लेखक : प्रो० नित्यानन्द पटेल

छायावाद संबंधी इस नये अध्ययनमें लेखकने अबतककी सभी विचारधाराओं को सम्मुख रखकर समीक्षात्मक ढंगसे उनकी विवेचना की है। लेखककी मान्यता है कि छायावादी काव्यका मूलाधार प्रगाढ़ प्रकृति-प्रेम है और उसने पूर्ण विद्वत्ता के साथ तर्कपूर्ण शैलीसे प्रमाणों सहित यह पक्ष प्रस्तुत किया है।

पृष्ठ संख्या २६७ मूल्य : ७.५० रु०

महत्वपूर्ण सामयिक प्रकाशन

मंहगाई बढ़ती हैं तो रुपयेकी कीमत गिरती है
इसीको रुपयेका अवमूल्यन कहते हैं
अवमूल्यनका देशकी अर्थव्यवस्थापर क्या
प्रभाव होता है ?

इसे विस्तारसे जाननेके लिए पढ़ें :

रुपयेका अवमूल्यन और उसका प्रभाव

यह पुस्तक देशके चोटीके अर्थशास्त्रियों द्वारा लिखी गयी है
भाषा सरल है और सभी लोग समझ सकते हैं।

मूल्य आठ रुपये

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी.)

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष : ६
अंक : ५
अप्रैल १९७४

प्रकर

सम्पादक : विद्यासागर विद्यालंकार
सम्पर्क : ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७
सम्पादक-मण्डल : मुकुटबिहारी वर्मा (अध्यक्ष); डॉ. भोलानाथ तिवारी, डॉ. जयचन्द्र राय, (उपाध्यक्ष); हरिकृष्ण त्रिवेदी, क्षितीश कुमार (सदस्य) सुभाषचन्द्र विद्यालंकार, (सदस्य)

वार्षिक मूल्य : बारह रुपये
सामान्य अंक : एक रुपया पच्चीस पैसा

समीक्षित पुस्तक	पृष्ठ संख्या	समीक्षक
१. शोध आलोचना		
कम्ब रामायण और रामचरित मानस — डॉ. रामेश्वरदयालु अग्रवाल	५	डॉ. रमानाथ त्रिपाठी
मानसमें रीतितत्त्व — वैद्यनाथसिंह	६	डॉ. राजमल बोरा
स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविताओंमें व्यंग्य — डॉ. शेरजंग गर्ग	७	डॉ. नन्दकुमार राय
भारतेन्दु युगका नाट्य साहित्य और रंगमंच — डॉ. वासुदेवनन्दनप्रसाद	९	जीवनसिंह मानवी
उड़िया रंगमंच और नाटक — नीलमणि मिश्र	११	डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
प्रसाद साहित्यकी अन्तश्चेतना — डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित		नरेन्द्र शर्मा
२. भाषा-विज्ञान		
मालवीकी उत्पत्ति और विकास — डॉ. बंसीधर	१३	डॉ. महेन्द्र
३. उपन्यास		
मरीचिका — गंगाप्रसाद विमल	१४	नवलकिशोर
प्रेत — श्रवणकुमार	१५	शिवशंकर पाण्डेय
बीमार शहर — राजेन्द्र अवस्थी	१६	राजनारायण राय
कन्धेसे टंगी बगावत — अजित पुष्कल	१७	डॉ. विपिनबिहारी ठाकुर
अवहेलना — राजेन्द्र जगोत्ता	१९	प्रेमचन्द जैन
उदय रवि — बी. पुट्ट स्वामैया	२०	डॉ. सुधेश
चौदह दिन — सुजाता	२०	प्रेमचन्द जैन
४. कहानी-संग्रह		
अतीतमें कुछ — गंगाप्रसाद विमल	२१	नवलकिशोर
मेरी प्रिय कहानियां — महीपसिंह	२२	प्रसन्नकुमार ओझा
५. नाटक : एकांकी		
अब्दुल्ला दीवना — लक्ष्मीनारायणलाल	२३	महेश आनन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णमंदिर— एन. डी. कृष्णमूर्ति	२५	डॉ. सुधेश
रेजगारीका रोजगार—संपा. शिवरतन थानवी, पुरुषोत्तमलाल तिवारी	२६	डॉ. यदुवीरप्रसाद भटनागर
६. काव्य संकलन		
एकान्त—नेमिचन्द्र जैन	२७	डॉ॰ दुर्गाप्रसाद झाला
चांदके दाग—कमर मेवाड़ी	२९	स्वर्णकिरण
मुक्तिगंधा—सोहनलाल द्विवेदी	३०	डॉ. महेन्द्र भटनागर
गीत सौरभ—संपा. ठाकुर भूपतिसिंह	३१	स्वर्णकिरण
बिरवाके पात—ध्रुव मिश्र	३१	,,
शाहिका – अखिलेशकुमार शाही	३२	श्रीमती कमलेश
कुछ कविताएं : कुछ कहानियां—प्रेमप्रकाश गौतम	३२	,,
७. हास्य-व्यंग्य		
दन्तकथा—शान्ति मेहरोत्रा	३२	डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल
८. दर्शनशास्त्र		
तर्करेखा—सुरेन्द्र बारलिंगे	३४	गोवर्द्धन भट्ट
प्रतीकात्मक तर्कशास्त्र—राजनारायण	३४	,,
पथका प्रभाव—लाओत्से	३५	मदनलाल श्रीवास्तव
९. विज्ञान : भौतिकी		
प्रारम्भिक ऊष्मागतिकी, गैसोंका अणुगति सिद्धान्त और सांख्यिकीय यांत्रिकी—फ्रांसिस वेस्टन सियर्स	३६	डॉ. यदनमोहन बजाज
समस्थानिक—डॉ. सत्यनारायण माथुर	३६	,,
१०. संगीत : संस्कृति		
भारतीय संगीत वाद्य—डॉ. लालमणि मिश्र	३७	शम्भुनाथ मिश्र
भारतीय संगीत—आ. उत्तमराम शुक्ल	३९	
हमारी संस्कृति—डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्	४०	डॉ. विष्णुशरण 'इन्दु'
११. गांधी वाङ्मय		
सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (खण्ड ४७, ४८)	४०	मुकुटविहारी वर्मा
१२. जेबी पुस्तकें	४२	जीवन
१३. प्राप्ति सूचना	४४	—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोध आलोचना

कम्ब-रामायण और रामचरित मानस

लेखक : डा. रामेश्वरदयालु अग्रवाल; प्रकाशक: कल्पना-प्रकाशन, ७ कबाड़ी बाजार, मेरठ छावनी। पृ. ४३८, डिमा., ७३ ; मूल्य : ४०.०० रु.।

भारत रामकथाका देश है, यहां असंख्य रामकाव्य लिखे गये, किन्तु रामकथाके आदि ग्रंथ वाल्मीकि-रामायण के पश्चात् उत्तरमें रामचरित-मानस और दक्षिणमें कम्बन् की कम्ब-रामायण (तमिल) को ही विशेष ख्याति मिली। उत्तर-दक्षिणके मध्य रामसेतु स्थापित करने एवं साहित्यिक-स्तरपर भावात्मक ऐक्यका सन्धान देनेकी दृष्टिसे डॉ. रामेश्वरदयालु अग्रवालने स्तुत्य प्रयास किया है। इस प्रकारके तुलनात्मक अध्ययनके क्षेत्रमें अनेक कठिनाइयां आती हैं। भाषाओंपर अधिकार तथा भाषा विशेषके क्षेत्रके सांस्कृतिक-सामाजिक वैशिष्ट्यके गंभीर ज्ञानके बिना यह अध्ययन सम्भव नहीं होता। उत्तर भारतीयोंके लिए दक्षिण भाषाओं (विशेषत: तमिल) पर अधिकार करना अत्यन्त कठिन है। डॉ. अग्रवाल को तमिल भाषा सीखने एवं पुरानी तमिलके साहित्यिक मर्मको समझनेमें घोर श्रम करना पड़ा होगा।

ग्रंथके प्रथम अध्याय (तत्कालीन परिस्थिति) के अन्तर्गत विद्वान् लेखकने दोनों आलोच्य कृतियोंकी राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक परिस्थितियोंका रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक वर्णन किया है। मानसकी रचनाके समय उत्तर भारत विदेशी शासनतंत्र द्वारा शोषित था, जबकि कम्ब-रामायणकी रचनाके समय दक्षिण भारतपर वेदाभिमानी हिन्दुओंका शासन था।

द्वितीय अध्याय (कम्बन् और तुलसीका व्यक्तित्व) में लेखकने दोनों कवियोंके जीवन और व्यक्तित्वका परिचय देते हुए कहा है—तुंलसी जीवनभर समाजके लिए जिये, कम्बन् व्यक्तिके आत्म-सम्मानकी रक्षाके लिए। तुलसीका अध्ययन, मनन, देशाटन-जन्य अनुभव एवं व्यक्तिगत तपत्याग अप्रतिम थे। दूसरी ओर कम्बन् भी बहुश्रुत और बहु-अधीत थे। (पृ. ११६)।

तृतीय अध्याय (धुर्गान संस्कृतिका चित्रण) में सामाजिक आचार-व्यवहार, संस्कार, लोकजीवन, मनोरंजन, चित्रकला एवं वस्तुकला और प्रसाधनकी दृष्टिसे दोनों ग्रंथोंका अध्ययन प्रस्तुत किया गया है और दिखाया गया है कि किसप्रकार दोनों लेखकोंने अपने काव्योंमें भारतीय संस्कृतिकी पृष्ठभूमिमें अपनी प्रादेशिक संस्कृतिकी विशेषताओंको उभारा है।

'कथावस्तु' नामक चौथे अध्यायमें मुख्य कथा प्रसंगोंके परस्पर साम्य-वैषम्य, कथाओंके विभिन्न स्रोत, नयी उद्भावना आदिकी दृष्टिसे अध्ययन किया गया है। कम्बन्की प्रवृत्ति विस्तारकी ओर है और तुलसीकी संक्षेप की ओर। वस्तु संघटन एवं चरित्र-चित्रणकी दृष्टिसे तुलसीमें कम्बन्की अपेक्षा अधिक कलात्मक संयम एवं कौशल दीख पड़ता है। दोनोंके दृष्टिकोणोंके मध्य अंतर स्पष्ट करनेके लिए इसीप्रकारके चुटीले वाक्य प्रयुक्त किये गये हैं यद्यपि कम्बन्ने भी राम, सीताके प्रेमके विषयमें 'पुरातन प्रीति' का उल्लेख किया है। ·· किन्तु उनका यह सारा वर्णन इतना वासना-पंकिल हो उठा है कि उस में 'पुनीति प्रीति' को ढूंढ निकालना संभव नहीं। दूसरी ओर तुलसीका वर्णन मर्यादित संयोग श्रृंगारका उत्कृष्ट उदाहरण बन गया है। (पृ. २००)।

पांचवें अध्याय (दर्शन और भक्ति) में शैव-वैष्णव विवाद, दार्शनिक विचार - जीव, प्रकृति, भक्ति आदिपर सारगर्भित शैलीमें विचार किया गया है। छठे अध्याय (लोक संग्रह) के अन्तर्गत लेखकने सिद्ध किया है कि तुलसीकी काव्य-रचनाका उद्देश्य लोक-कल्याण था, अत: उनके काव्यमें लोकसंग्रहके तत्त्व अधिक हैं। कम्बन् तुलसी के समान सर्वांगीण सर्वक्षेत्रीय आदर्शकी सृष्टि नहीं कर सके। तुलसी जहां रमणियोंके सौन्दर्य-चित्रणसे अपनेको बचाते रहे, वहां कम्बन्ने सीताके भी मांसल सौन्दर्यका जमकर वर्णन किया है। नारीका नाम आते ही 'बिना स्तनोंका उल्लेख किये कवि एक पग आगे नहीं बढ़ता।' (पृ. २९९)। स्तनोंका ही नहीं नितम्बोंकी भी विभिन्न स्थितियोंका प्राय: वर्णन मिलेगा।

सातवां अध्याय काव्य-सौष्ठवपर है। कम्बन्ने उत्तान श्रृंगारका वर्णन किया है, तुलसीने मर्यादित श्रृंगारका। कम्बन्का विरह वर्णन बीभत्स हो गया है। डॉ. अग्रवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने रस, कल्पना-वैभव, भाव-व्यंजना, अभिव्यंजना-कौशल आदिकी दृष्टिसे विचार किया है।

आठवें अध्यायमें परवर्ती समाज और साहित्यपर दोनोंका प्रभाव दिखाकर नवें अध्यायमें विचार किया है कि क्या तुलसी कम्बनूसे प्रभावित हुए थे। यह संक्षिप्त अध्याय महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि कई विद्वानोंने यह सिद्ध करनेकी चेष्टा की है कि तुलसी कम्ब रामायणसे प्रभावित थे। डॉ. अग्रवालने तर्क-सहित सिद्ध किया है कि ऐसा नहीं था। उपसंहारके पश्चात् परिशिष्टमें लेखकने कम्ब-रामायण-विषयक कुछ महत्त्वपूर्ण सामग्री जोड़ दी है।

वास्तवमें कम्ब-रामायण तमिल-संस्कृतिका कोश है, इसमें दक्षिणी हिन्दू-संस्कृतिके अनेक ऐतिहासिक रूपोंके दर्शन होते हैं।

हिन्दीके अनुसन्धाताओंने अन्य भाषाओंके प्राचीन साहित्यपर जैसा कार्य कर दिया है, वैसा संभवतः उन भाषाओंके विद्वानोंने भी नहीं किया था, ऐसा वे लोग स्वयं स्वीकार करते हैं। हर्षका विषय है कि हिन्दीके इसप्रकार तुलनात्मक शोधसे हिन्दीतर शोध-विद्वान् भी आकृष्ट होकर सचेष्ट हुए हैं।

— डॉ. रमानाथ त्रिपाठी

मानसमें रीति तत्त्व

लेखक : वैद्यनाथसिंह; प्रका. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग। पृष्ठ : २६४; रायल, ७३; मूल्य : २५.०० रु.।

इस शोध प्रबन्धको हिन्दी साहित्य सम्मेलनने साहित्य महोपाध्याय' उपाधिके लिए स्वीकार किया है। यही नहीं इसका प्रकाशन भी हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयागने किया है। इससे इस प्रबन्धकी उपादेयताका अनुमान किया जा सकता है। श्री वैद्यनाथसिंहकी मृत्यु १६ अगस्त सन् १९६५ ई० को हुई, यह ग्रंथ उनकी मृत्युके लगभग ८ वर्ष बाद सन् १९७३ में प्रकाशित हुआ है। प्रकाशकीय वक्तव्यमें कहा गया है "मानस चतुःशती समारोहकी भूमिकामें सम्मेलनका यह प्रथम पत्र-पुष्प गोस्वामी तुलसीदास और उनके रामचरितमानसकी संवर्द्धनाका उपायन है।" (प्रकाशकीय, श्री सुधाकर पाण्डेय)। लेखकका परिचय श्री सीताराम चतुर्वेदीने दिया है। ग्रंथ का प्राक्कथन स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वतीने लिखा है। प्राक्कथनमें स्वामीजी लिखते हैं "इसमें सन्देह नहीं कि मानसकी काव्यगत विशेषताओंका उद्घाटन और पर्यालोचन इतनी सूक्ष्मता, मार्मिकता और समारोहके साथ यह पहलीही बार हो रहा है .... । इसका अध्ययन करनेसे पता चलता है कि मानसमें कैसे-कैसे बहुमूल्य रत्न भरे पड़े हैं, जिनका अन्वेषण और मूल्यांकन विद्वान् लेखकने प्रस्तुत प्रबन्धमें किया है।" (प्राक्कथन)।

शोध-प्रबन्ध सात अध्यायोंमें विभक्त है। प्रथम अध्यायमें 'मानस संज्ञा' पर विचार हुआ है। विशेष रूपसे रीति-तत्त्वपर विचार करते हुए मानसमें रीति-तत्त्वके निरूपणके आधार बतलाये गये हैं। रीतितत्त्वका अर्थ हिन्दीमें प्रयुक्त 'काव्यरीति' के अर्थमें लिया गया है। कहा है "यहां उनके (हिन्दी रीति ग्रंथकारोंके) 'काव्य-रीति' के अर्थमें प्रयुक्त 'रीति' शब्दको तो ले लिया गया है पर काव्यतत्त्वकी व्यापक दृष्टि संस्कृत आचार्योंसे ग्रहण की गयी है। मेरा विचार है कि हिन्दी रीति ग्रंथकार आचार्योंके निकषपर तुलसीकी सांगोपांग परख हो नहीं सकती।" (पृ. ३०)। द्वितीय अध्यायमें काव्यके स्वरूप पर विचार किया गया है। इसके अन्तर्गत विशेष रूपसे काव्यका प्रयोजन, काव्यके प्रभेद, अर्थ-चित्र, बंधकी दृष्टि से काव्यके भेद, नायक-विचार, संधि-पंचक, मंगलाचरण, खल वन्दना, सन्त-वन्दना, छंदोव्यवस्था, प्रकृति वर्णन, नायकका अनुसंधान, सम्बन्ध निर्वाह, मार्मिक स्थलोंकी पहचान, बाह्य दृश्य चित्रण, रूप प्रत्यक्षीकरण और काव्य के हेतु उपशीर्षकोंपर विचार किया गया है। यह अध्याय एक प्रकारसे शास्त्रीय अध्याय हो गया है। शास्त्रीय मानदण्डोंमें जहां मानस नहीं बैठता वहां उसका उल्लेख हुआ है। ऐसे स्थलोंपर सामयिक काव्य परिपाटीका प्रभाव मानसपर दिखलाया गया है। तृतीय अध्याय भावपक्षसे सम्बन्धित है। विशेष रूपसे इस अध्यायमें रसका विवेचन है। रसके शास्त्रीय स्वरूपकी चर्चा की गयी है। मानसमें 'भक्ति' प्रमुख रूपसे है। अतः शास्त्रीय संदर्भमें भक्तिका विवेचन रस रूपमें किया गया है। चतुर्थ अध्याय विशेष रूपसे कला-पक्षसे सम्बन्धित है। इसके अन्तर्गत शब्द, भाषा, व्याकरण, अर्थ-भेद, शब्द-शक्तियां, व्यंजना, ध्वनि आदिका विवेचन है। पंचम अध्याय काव्यशास्त्रके विभिन्न सम्प्रदायोंके ऐतिहासिक विकास क्रमको ध्यानमें रखते हुए लिखा गया है। षष्ठ अध्याय काव्यदोषोंसे सम्बन्धित है। सप्तम अध्यायमें अधीत सामग्रीमें परम्परा व्यायोग, कथा-वस्तुके उपजीव्य, भाषामें काव्यरचनाकी प्रेरणा आदिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवेचन करते हुए तुलसीके योगदानको स्पष्ट किया गया है। शास्त्रीय रूपमें मानसका विवेचन करनेमें जिन शीर्षकों को स्थान नहीं दिया जा सका, उन्हें लेखकने परिशिष्टमें रखा है। इसप्रकारके शीर्षक ये हैं : समाजका स्वरूप : वर्णाश्रम व्यवस्था, राजा या लोकनायकके आदर्श, नारी, आदर्श वधू, समाजमें कन्याका स्थान, यति, सांस्कृतिक झलकियां, मुहूर्तकी महिमा, वशीकरण। अन्तमें सहायक ग्रंथोंकी सूची दी गयी है।

कुल मिलाकर यह शोधप्रबन्ध मानसका शास्त्रीय अध्ययन प्रस्तुत करनेवाला ग्रंथ है। शास्त्रको प्रमुख मानकर ग्रंथके गुणदोषोंपर विचार हुआ है। मानसमें साहित्यके शास्त्रीय तत्त्वोंका समावेश सहज रूपमें हुआ है। सच पूछिये तो मानस हिन्दीका आकर ग्रंथ है। इस आधारपर शास्त्रीय मानदण्ड बनने चाहियें। अन्य मानदण्डोंके आधारपर परखते हुए मानसके स्वतंत्र मार्गका निरूपण हो और मानसकी काव्यसरणियोंका प्रभाव दिखलाया जाये। प्रबन्ध-लेखकने विश्लेषण करते समय मानसके वैशिष्ट्यको स्थान-स्थानपर स्पष्ट किया है। आगे यदि हिन्दी काव्य ग्रंथोंके आधारपर काव्य-शास्त्रपर विचार किया जायेगा तो उसमें यह ग्रंथ निस्संदेह उपादेय होगा।

—डॉ. राजमल बोरा

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कवितामें व्यंग्य

लेखक : डॉ. शेरजंग गर्ग; प्रकाशक : साहित्य भारती, के ७१, कृष्णनगर, दिल्ली-५१। पृष्ठ : ४३२; डिमा. ७३; मूल्य : ४०.०० रु.।

डॉक्टर शेरजंग गर्ग उन विरल और विशिष्ट समीक्षकोंमें हैं, जो साहित्य-सिद्धांतों व कृतियोंको खुले दिमाग तथा सापेक्ष सहानुभूतिसे समझने-बूझनेका प्रयत्न करते हैं। समीक्ष्य शोध-प्रबन्ध **'स्वातत्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य'** उनकी दृष्टिके खुलेपनकी गवाहीका अच्छा-खासा सबूत है।

'व्यंग्य' काव्यका एक विशिष्ट और अनिवार्य तत्त्व है। काव्यके अन्त: सौन्दर्यकी छविको उरेहकर, अर्थकी आवृत्त भंगिमाको अनावृत्त और अनाविलकर, उसकी प्रतीति करना—'व्यंजना' (और व्यंग्य) का कार्य है। 'व्यंग्य' वस्तुत: एक परतदार पद है, जो एक ओर तो 'व्यंजना' का उपवाच्य है और दूसरी ओर आधुनिक साहित्यके परिवेशमें प्रयुक्त अंग्रेजीके 'सेटायर' अथवा लोक-प्रचलित 'ताने' 'उपहास' या 'चुटकी लेने' आदिका भी पर्याप्त वन गया है। व्यंजना जहां काव्यका लक्ष्य है, वहां 'व्यंग्य' कविका एक तीक्ष्ण अस्त्र सिद्ध होता है। आधुनिक युगमें टी० एस० इलियटने इसे काव्यके विशिष्ट प्रतिमानके रूपमें स्वीकृत और प्रस्तुत किया है। हिन्दी-काव्य-साहित्यमें, अबतक व्यंग्यका प्रयोग एक सीमित, संकीर्ण और सतही अर्थमें ही किया जाता रहा है। वास्तवमें 'हास्य' से अलगाकर देखने-परखनेकी प्रवृत्तिका प्राय: अभाव रहा। 'व्यंग्य' को इन्होंने 'हास्य' से अलगाकर विवेचित विश्लेषित ही नहीं किया है, प्रत्युत टी. एस. इलियटकी भांति इसे काव्यके विशिष्ट प्रतिमानके रूपमें भी प्रतिष्ठापित करनेका उपक्रम किया है।

डॉ. शेरजग गर्ग व्यंग्यकार/व्यंग्य-कवि भी हैं। उनके पहले काव्य-संग्रह-'ताजा गुलाब तेरे नाम' में व्यंग्यकी पैनी धारकी तीक्ष्णता तथा प्रभावकी तीव्रता अनायास ही उभरती हुई अनुभूत होती है। एक मौलिक व्यंग्य-कविकी समीक्षा-कृति होनेके कारण प्रस्तुत ग्रंथ रचना-प्रक्रियाके दौरसे गुजरता हुआ दिखायी पड़ता है। लेखकका अभीष्ट व्यंग्यके व्यापक संदर्भमें स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी-कविताका परीक्षण करना है। इसके लिए इन्होंने व्यंग्यका सैद्धान्तिक विवेचन-विश्लेषण करते हुए उक्त कविता-धाराकी मीमाँसा प्रस्तुत करनेकी चेष्टा की है।

प्रस्तुत प्रबन्ध आठ छोटे-बड़े अध्यायोंमें विभक्त और आयत्त है। पहले अध्यायमें व्यापक फ़लकपर जीवन और साहित्यमें व्यंग्यकी महत्ताको प्रतिपादित करते हुए उसके अर्थ, परिभाषा तथा व्यंग्यमें निहितार्थको विवेचित किया गया है। दूसरे अध्यायमें विभिन्न प्रवृत्तियोंके परिप्रेक्ष्यमें व्यंग्यकी प्रवृत्तियां रेखांकित हैं तथा तीसरे अध्याय में विषयगत तथा शिल्प अध्ययनका प्रस्तुतीकरण है। चौथे अध्यायमें स्वातंत्र्यपूर्व हिन्दी कविताके विभिन्न रूपोंमें व्यंग्यको विन्यस्त किया गया है तो पांचवें अध्याय में स्वतंत्रता पूर्व कवियोंकी कृतियोंका अध्ययन प्रस्तुत करते हुए, इस युगके प्रमुख कवियोंको भी विवेचित करने का प्रयास है। छठे अध्यायमें स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी-काव्य की विभिन्न धाराओंमें विकसित होनेवाले व्यंग्यको परीक्षित किया गया है। अन्तिम अध्यायमें लेखकने साठोत्तरी पीढ़ीकी मन:स्थितिको संश्लेषित-विश्लेषित करते हुए इनकी काव्य-कृतियोंमें निहित और प्रयुक्त व्यंग्यको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनावृत्त कर रेखांकित करनेका प्रयास किया है। और अन्तमें, उपसंहारके माध्यमसे डॉ. गर्गने अध्ययन और चिन्तन-मननके व्यापक फलकपर स्वातंत्र्योत्तर काव्यकी इयत्ताको प्रस्तुतकर इनकी संभावनाओंको स्पर्शित तथा अनुमानित किया है।

व्यंग्यके संश्लेषण-विश्लेषणके क्रममें लेखकने कई नयी उपपत्तियोंको भी स्थापित करनेका स्तुत्य प्रयास किया है। उनकी एतद्-सम्बन्धी निम्न स्थापनाएं अपने-आपमें बड़ी ही महत्वपूर्ण प्रतीत होती है।

१ जीवन और साहित्य दोनोंमें ही व्यंग्य महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

२ व्यंग्य अपने अन्य समान-से लगनेवाले शब्दोंसे अर्थ में पर्याप्त भिन्न होता है।

३ व्यंग्यमें ट्रेजेडी और कॉमेडीका योग हो सकता है।

४ रसकी दृष्टिसे व्यंग्यमें हास्य रसकी उपस्थिति अनिवार्य नहीं है।

५ व्यंग्यका साधारणीकरण होना अनिवार्य नहीं है।

६ कविता ज्यों-ज्यों जीवनके अधिक समीप आती गयी, भाषा सादी, सरल और व्यंग्ययुक्त बनती चली गयी।

७ रचनाकार अथवा व्यंग्यास्पदके व्यक्तित्वका प्रक्षेपण व्यंग्यको गांभीर्य, सार्थकता, सच्चाई, मार्मिकता आदि गुणोंसे सम्पन्न बनाता है।

८ शिल्पकी दृष्टिसे व्यंग्यमें भाषाके सर्वथा विस्फोटक उपयोग, छंदोंके निर्वाहके स्थानपर तुकोंकी तोड़-मरोड़, लौकधुनोंकी स्वीकृति, अलंकारों, प्रतीकों और बिम्बोंके साथ-साथ सपाटबयानी, व्यंग्यके संप्रेषणके लिए नाटकीयता एवं फैन्टेसीके प्रयोग को भी अपनाया गया।

९. व्यंग्य-रचनाके लिए जीवनके छोटे-से-छोटे पक्ष को लिया जा सकता है।

१०. मानवीय और युगीन विसंगतियोंपर प्रहारके बावजूद व्यंग्य मानव-मूल्योंकी स्थापनाके लिए भी सर्वाधिक प्रयत्नशील रहता है।

व्यंग्यमें व्यंजनाके प्राधान्य और प्रामुख्य के कारण क्षिप्रता और तीव्रता होती है। व्यंग्यकारका अभीष्ट व्यंग्यके माध्यमसे एक विशेष प्रकारकी केन्द्रीय भाव-भूमि का प्रस्तुतीकरण करना होता है। अतः इसकी सोद्देश्यता निर्विवाद है। इसी विशिष्ट बिन्दुपर व्यंग्य हास्यसे किंचित परे और शीर्षस्थ हो जाता है। डॉ. गर्गने इसपर बहुविध विचार करते हुए लिखा है : "व्यंग्य मुख्यतः तीन कार्य करता है, यथा, आलोचना करता है, मानवीय करुणाओंको उभारता है एवं उपहास करता है; किन्तु उसके मूलमें आक्रमणका भाव निश्चित रूपसे विद्यमान रहता है।"

व्यंग्यके विभाजनमें काफी हदतक सावधानी बरतनेके बावजूद लेखकने किंचित् लिजलिजेपनसे काम लिया है। प्रभावको आधार मानकर इन्होंने व्यंग्यको जहाँ हास्ययुक्त माना है, वहाँ व्यंग्य अपने असली रूपको छोड़कर हास्यके साथ एक रूप हो जाता है। अतः इसकी वैज्ञानिकता तभी सुरक्षित रह पाती, जब उसे शुद्ध व्यंग्य ही रहने दिया गया होता।

प्रस्तुत प्रबन्धकी सबसे बड़ी विशेषता है : संतुलन, संश्लिष्टता और कसावट! किन्तु, कहीं-कहीं अनावश्यक विस्तारने उसके आगे प्रश्न-चिन्ह भी लगाया है। सौ पृष्ठोंमें प्रस्तुत क्रमशः 'व्यंग्यके अध्ययनके विविध क्षेत्र' (पृ १३०-१६६) तथा 'स्वातंत्र्यपूर्व आधुनिक कविताके विभिन्न काव्यरूपोंमें व्यंग्य' (पृ. १६७-२३०) मेरे इस कथनको प्रमाणित करनेके लिए काफी हैं। इसका कारण विश्वविद्यालीय व्यवस्था (?) चाहे भले हो; पर इसका अपाकरण प्रकाशनमें किया जा सकता था।

समीक्ष्य शोध-प्रबन्धमें एक-दो बातें ऐसी हैं, जो विवेकको अधिक अखरनेवाली हैं। पहली बात तो यह है कि इसकी व्यवहारिक आलोचनामें लेखकका व्यक्तित्व खुलकर सामने नहीं आता। ऐसा लगता है, जसे वे दबी जबानसे ही ज़्यादा कुछ कह रहे हों। दूसरी बात यह कि इसमें उन्होंने कवियोंकी आशंसा ही अधिक की है। तीसरी बात यह है कि कवियोंके चयन और नामोल्लेखके क्रममें डॉ. गर्गने कुछेक श्वेत खूबसूरत पत्थरोंको भी अहल्याके भ्रममें गृहीत कर लिया है, जिससे शोधका गांभीर्य और संतुलन बिगड़-सा गया है। साठोत्तर काव्य और कवियोंके अध्ययनमें काफी बारीकीसे काम लिया गया है। इस अध्यायके अध्ययनसे ग्रंथकी सृजनात्मकता, अतः महत्ता और भी अधिक बढ़ गयी है।

कुल मिलाकर, इतना तो बिना किसी दुविधा और संकोचके कहा जा सकता है कि प्रस्तुत ग्रंथ हिन्दीमें व्यंग्यको गंभीरतापूर्वक समझने-बूझनेका प्रथम श्लाघनीय प्रयास है। अतः इस ग्रंथके परिशीलनकी उपयोगिता और महार्घता स्वयंसिद्ध है।

डॉ. नन्दकुमार राय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतेन्दु युगका नाट्य साहित्य और रंगमंच

लेखक : डॉ. वासुदेवनन्दनप्रसाद; प्रकाशक : भारती भवन, गोविन्दमित्र रोड, पटना-४। पृष्ठ : ३१४; डिमाई ७३; मूल्य : १८.०० रु.।

आजकी भाषामें भारतेन्दुयुगीन साहित्यके महत्त्वको इसप्रकार निरूपित किया जा सकता है यह युग भारतीय समाजकी राष्ट्रीय एवं जनवादी प्रतिबद्धताका युग है। इस साहित्यकारको एक ऐसे समाजके उत्तरदायित्वोंका निर्वाह करना था, जो समाज विदेशी प्रशासनके अनुरूप जीवित था। अतः विदेशी शक्ति-तन्त्रके अन्तर्गत अनुभूति को प्रामाणिक बनाये रखने जैसी प्रबल समस्या इस साहित्यकारके समक्ष रही, जिसे प्रस्तुत शोध-प्रबंधके लेखक डॉ. वासुदेवनन्दनप्रसादने 'हिन्दी नाटककारोंकी राजभक्तिके प्रश्न' (पृ. ७४) में उठाया है और इस युग के साहित्यकारकी राजभक्तिको 'राजनीतिका कलंक नहीं वरन् उनकी दूरदर्शिताकी एक सुचिंतित योजना' (पृ. ७५) माना है। डॉ. प्रसादने शोधके लिए जिस विषयका चयन किया है, उसका महत्त्व डॉ. रामविलास शर्माके इस कथन से औरभी सिद्ध हो जाता है कि "भारतेन्दु-युगका साहित्य हिन्दीभाषी जनताका जातीय साहित्य है, वह हमारे जातीय जागरणका साहित्य है — उसकी अपनी विरासत है इस विरासतके लिए अभी संघर्ष समाप्त नहीं हुआ है हिन्दी साहित्य जितनाही प्रगति करेगा, उतनाही भारतेन्दु युगका महत्त्व औरभी निखरकर सामने आयेगा।" इस शोध-प्रबन्धसे भारतेन्दु-युगका महत्त्व और भी निखरकर सामने आयेगा।" इस शोध-प्रबन्धसे भारतेन्दु-युगका महत्त्वही स्पष्ट नहीं हुआ है अपितु हिन्दी-नाट्य-समीक्षाको गहराई एवं विस्तारभी मिला है।

आलोच्य प्रबंध चार खण्डोंमें विभक्त है। 'पहला खण्ड' 'पृष्ठभूमि' संज्ञक है, जिसमें ६७ पृष्ठका कलेवर चार अध्यायोंमें प्राचीन भारतकी नाट्य परम्पराएं, संस्कृत नाट्य-साहित्यका पतन, मध्ययुगमें धार्मिक नाटकों का उद्भव और विकास, रीतिकालीन हिन्दी-नाटक — वर्णित है। 'प्राचीन भारतकी नाट्य परम्पराएं' नामक पहले अध्यायमें नाटकका स्वरूप, प्राचीन भारतके लोक-नाट्य तथा प्राचीन भारतके नाट्य-साहित्यका सुष्ठु निरूपण किया गया है। लेखककी दृष्टि अभिजात नाट्यसाहित्यके साथ लोकनाट्यकी सहवर्तिनी रही है; जिससे आगे चलकर अनुसंधानकारने यह स्थापित किया है कि भारतेन्दुयुगीन नाट्य-साहित्य किसी एक नाट्य परम्पराका विकास नहीं बल्कि अनेक समन्वित नाट्य-परम्पराओंका अगला कदम है। निष्कर्ष रूपमें डॉ. प्रसाद ने यह दिखलानेका प्रयत्न किया है कि "वैदिक युगसे लेकर भवभूतिके समयतक नाटक लोकजीवन और आभि-जात्य वर्ग दोनोंको स्पर्श करता हुआ विकसित हुआ। अतः एक ओर लोकनाटकोंकी परम्परा चलती रही और दूसरी ओर साहित्यिक नाटकोंकी रचना होती रही।" (पृ. १६)। दूसरे अध्यायमें उन कारणोंका उल्लेख किया गया है, जिनसे संस्कृत नाट्य साहित्यका पतन हुआ। राजाश्रयका अभाव, अतिशय काव्यानुराग, अद्वैत दर्शनका प्रभाव, लोकजीवनकी उपेक्षा, लोकभाषाकी उपेक्षा तथा सामाजिक दुरवस्था जैसे पतनके कारणोंका विवेचनकर इस भ्रान्तिका निराकरण करनेका प्रयत्न किया है कि — मध्ययुगमें नाटकके पतनमें मुस्लिम शासकोंका ही हाथ था। इस समयमें सामाजिक एवं धार्मिक लोकनाटकोंकी परम्परा चल रही थी। मध्ययुगके सामाजिक लोक-नाटकोंमें स्वांग, नौटंकीके तात्त्विक विवेचन तथा रंगमंच पर भी लेखकने प्रकाश डाला है। तीसरे अध्यायमें मध्ययुगके धार्मिक नाटकोंके उद्भव और विकासका शोधन किया गया है। डॉ. प्रसादका कथन है कि '१४वीं शताब्दीसे १६वीं शताब्दीतक सारे उत्तर भारतमें धार्मिक नाटकोंकी बाढ-सी आ गयी।' अपने इस विवेचनमें अनुसंधानकार हिन्दी नाटकके उद्भवको मध्ययुगके इन धार्मिक तथा सामाजिक लोकनाटकोंतक खींच ले गये हैं जिन्होंने भारतीय जनमानसको मनोरंजन प्रदान करनेके साथ पुनरुज्जीवित भी किया। इस सन्दर्भमें डॉ. प्रसाद ने डा. सोमनाथके उस मतका खण्डन किया है, जिससे वे मध्ययुगमें नाटकोंके अभावका कारण 'अनुपयुक्त वाता-वरण' मानते हैं। इसके विपरीत डॉ. प्रसादका अभिमत है कि "मध्ययुगका वातावरण नाट्य रचनाके लिए सर्वथा उपयुक्त था, क्योंकि कवियोंके दृष्टिकोण बहिर्मुखी और अन्तर्मुखी दोनों थे" (पृ. ३५)। अपने इस अभिमतके प्रमाणस्वरूप तत्कालीन, हिन्दी-प्रदेशकी विभिन्न नाट्य-परम्पराओंका आलोचन प्रस्तुत किया है। इन नाट्य-परम्पराओंके अन्तर्गत 'राजस्थानी नाट्य परम्परा, वैष्णव नाट्य परम्परा – रासलीला, रामलीला, मैथिली नाटक, कीर्तनिया नाटक तथा असमके अंकिया नाटके विभिन्न तत्त्वों एवं रंगमंचका नाटकीय आवश्यकताओंके अनुरूप अध्ययन प्रस्तुत किया है। निष्कर्ष रूपमें यह स्पष्ट कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया है कि इन मध्ययुगीन धार्मिक नाटकोंने हिन्दी-नाटकके अभावकी पूर्ति, संस्कृत नाट्य साहित्य तथा परम्परित लोक-नाट्यका समन्वित रूप प्रस्तुतकर नवीन नाट्य-परम्परा स्थापितकर की है। चौथे अध्यायमें रीति-कालीन हिन्दी नाटकका भारतेन्दुयुगीन नाटकको पृष्ठ-भूमिके रूपमें रेखांकन किया है। अनुसंधानकारने रीति-कालीन पद्यात्मक नाटकोंको उस समयकी एक आवश्कता माना है तथा अंग्रेजी साहित्यके आलोचकों एवं कवियों — डाइट्रेन तथा टी. एस. एलियर आदिके मत उद्धृतकर तत्कालीन पद्यात्मक नाटकको युगीन नाट्यादर्शोंके अनुसार परखा है। डॉ. प्रसादने रीतिकालके ३८ नाटककारों के ५१ नाटकोंका नामोल्लेख भी किया है। और इस युग के चार नाटकोंके नाट्यशिल्पका परवर्ती नाट्य साहित्य पर प्रभाव माना है।

शोधप्रबन्धका दूसरा खण्ड भारतेन्दुयुगीन नाट्य-साहित्यसे सम्बन्धित है। १५७ पृष्ठोंमें लिखित इस खण्ड में 'भारतेन्दुकालीन भारत, भारतेन्दु युगमें हिन्दी नाटकों का पुनरुत्थान, भारतेन्दु और उनके नाटक, भारतेन्दु युग के प्रमुख नाटककार, भारतेन्दुयुगीन नाटकोंका शिल्प-विधान नामक ६ अध्याय हैं। अनुसंधानकने उक्त अध्यायों में शोध्य नाट्य-साहित्यका साहित्यिक, समाजशास्त्रीय एवं ऐतिहासिक आलोचन प्रस्तुत किया है। साहित्य जितनी सच्चाईसे युगचेतनाको अभिव्यक्त करता है, कला व शास्त्रोंका अन्य कोई रूप नहीं। इस दृष्टिसे डॉ. प्रसाद ने शोध्य युगकी नाटय-कृतियोंमें तत्कालीन भारतकी राजनीतिक, प्रशासनिक तथा सामाजिक अवस्थाओंको खोजकर यह निचोड़ प्रस्तुत किया है कि 'भारतेन्दु-युग संक्रान्तिकाल था।......हिन्दी साहित्यमें समाजके यथार्थ को इतने नजदीकसे देखनेका यह प्रथम अवसर था।' भारतेन्दु युगसे पूर्वतक हिन्दी-नाटकका कोई निश्चित स्वरूप नहीं बन सका था।इसलिए इस युगको नाटकोंके पुनरुत्थानका युग माना है। समाजसुधार तथा स्वाधीनता के उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए इस साहित्यकारने नाटकको ही प्रभावशाली माध्यम समझकर नाट्यसाहित्यका पुनरुत्थान किया। 'भारतेन्दु और उनके नाटक' शीर्षक अध्यायमें भारतेन्दुका व्यक्तित्व, प्रगतिशील विचारधारा, नाट्यादर्श, नाट्यकृतियां मौलिक उद्भावनाएं आदि अनुच्छेदोंमें भारतेन्दुकी नाट्यकृतियोंका व्यवस्थित और विवेकपूर्ण ढंगसे विवेचन किया गया है। अनुसंधानकने निष्कर्ष रूपमें यहभी स्पष्ट कर दिया है कि 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ही उस समय एकमात्र ऐसे प्रकाशस्तम्भ थे जिन्होंने हिन्दी-जगतमें घूमघूमकर मुर्दोंमें जान फूंकी और उन्हें उठाकर खड़ा किया।' 'भारतेन्दुयुगके प्रमुख नाटककार' अध्यायमें कुल १६ नाटककारोंकी नाट्य-कृतियोंका परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत हुआ है और यहभी स्पष्ट किया गया है कि किस सीमातक इन नाटककारोंने अपने नाटयनेताका अनुसरण किया और कहां स्वच्छन्दतासे काम लिया? अनुसंधानकने अध्ययनकी सुविधा तथा भारतेन्दुके पश्चात् नाटकका विकास दिखलानेकी दृष्टिसे भारतेन्दु युग (१८६८ से १९१० ई.) को तीन कालोंमें उपविभक्त किया है; यद्यपि डा. प्रसाद इस विभाजनकी प्रामाणिकताके प्रति संदिग्ध हैं। इस अध्यायमें अज्ञात नाटककारोंसे भी परिचय कराया गया है। इस युगके नाटकोंको सामाजिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, प्रेमाख्यानक, पौराणिक और दुखान्त वर्गोंमें वर्गीकृतकर प्रत्येक वर्गका संक्षिप्त अध्ययन भी 'वर्गीकरण' नामक अध्यायमें प्रस्तुत हुआ है। शिल्पविधानके अन्तर्गत नाट्य रूढ़ियां, कथावस्तु और संवादको नाट्य-तत्त्व मानते हुए भारतेन्दु युगीन नाट्यशिल्पको परखा गया है।

तीसरा खण्ड भारतेन्दुयुगीन हिन्दीके व्यावसायिक और अव्यावसायिक रंगमंच तथा अभिनयपर प्रकाश डालता है। चूंकि नाटक दृश्य-साहित्यका एक रूप है अतः रंगमंचका स्वतंत्र विवेचनही उसके अध्ययनको पूर्णता प्रदान करता है। भारतेन्दु युग जिसतरह नाटककी शुरुआत है उसीतरह हिन्दी रंगमचका भी। अतः इस प्रबन्धकी प्रमुख विशेषता 'तत्कालीन रंगमचकी रूपविधि और अभिनय कलाका प्रकाशन' मानी जा सकती है। अनुसंधानकने तत्कालीन पारसी रंगमंच तथा रामलीला रंगमंचका विवरण प्रस्तुत कर उनकी विकृतियोंकी ओर तो ध्यान आकर्षित किया ही है प्रत्युत यहभी सिद्ध कर दिया है कि इन्हीं रंगमंचोंमे हिन्दी-नाटक और रंगमंचको नाट्य-धरातल मिला। उस समय हिन्दी-प्रदेशके विभिन्न हिन्दी-रंगमंच केन्द्रोंका भी पूरे अध्यायमें उल्लेख किया गया है।

'उपसंहार' खण्डमें शोधकने अपनी स्थापनाओं एवं उपलब्धियोंका विवरण प्रस्तुतकर प्रबंधौचित्यकी ओर संकेत किया है।

कुल मिलाकर शोध प्रबंधमें डॉ. वासुदेवनन्दनप्रसाद की योग्यता एवं परिश्रम प्रभावित करते हैं। कुछ मायनों में अनुसंधानकने शोध-लेखनकी अतिप्रचलित रचना-प्रक्रिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से हटकर वही अध्ययन प्रस्तुत किया है, जिसकी पूर्तिके लिए शोध्य नाट्य-साहित्यकी रचना हुई थी। शोधप्रबंध साहित्यिक है लेकिन लेखककी दृष्टि समाजशास्त्रीय। जो पूरे प्रबंधमें लिंक स्थापित करती है।

कुछ चिंत्य बातें भी हैं जैसे यत्र-तत्र मुद्रण सम्बन्धी भूलें। यद्यपि ये नगण्य हैं, लेकिन दुनियांके अन्य साहित्योंके सन्दर्भमें हमारी एक गलती (मुद्रण सम्बन्धी) भी शोचनीय हो सकती है एकाध वाक्य भी ऐसे हैं जिनमें शब्दोंके चिन्त्य-प्रयोग हैं जैसे – 'विकासके चरम उत्कर्षके बादही पतनकी पताका फहरती है' पृ.१८)। उत्थान, उत्कर्ष, विजयकी पत'काग्रोंको फहरते हुए तो हमने भी सुना है, देखा है, लेकिन पतनमें भी पताका फहर सकती है, यह न तो सुना है और न देखा है। इसी तरह 'भारतेन्दुके और उनके युगीन नाटकोंमें इनके उदाहरण मिलते हैं' (पृ. २२१)। यहां 'के' सम्बन्ध कारक का व्यर्थ प्रयोग है।

भारतेन्दुयुगके नाटकोंका वर्गीकरण करते समय अनुसंधानकने वैज्ञानिकताकी अवहेलना की है, जो किसी भी रूपमें क्षम्य नहीं। यद्यपि इन नाटकोंके वर्गीकरणको वे कठिन कार्य मानते हैं, लेकिन जिसतरह उन्होंने इस युगका एक नाटक-वर्ग दुखान्त माना है, उसीतरह दूसरे सभी नाटक सुखान्त या प्रसादान्तकी कोटिमें आसानीसे रखे जा सकते थे, लेकिन ऐसा उन्होंने क्यों नहीं किया, यह समझमें नहीं आता।

ग्रन्थ-रूप, कागज, जिल्द और मुद्रण भी अच्छा बन पड़ा है।

— जीवनसिंह मानवी

उड़िया रंगमंच और नाटक

ले. नीलमणि मिश्र; प्रका. अभिनव भारती, ४२ सम्मेलन मार्ग; इलाहबाद-३। पृष्ठ : १५६; डिमा. ७२; मू. २१.०० रु.।

समीक्ष्य ग्रन्थ 'श्रीरंगम् ग्रन्थमाला' का प्रथम पुष्प है। इस प्रकाशन-योजनाके अन्तर्गत विभिन्न राष्ट्रीय रंग-परम्पराओंका व्यवस्थित अनुशीलन करनेका संकल्प किया गया है, जो स्वयंमें एक सद्प्रयत्न है। इस प्रकारके विवेचनों द्वारा समग्र भारतीय रंगमंचका स्वरूप-निर्धारण किया जा सकता है और उनके सनातन साम्यका निर्देश भी। इस दृष्टिसे यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है।

जैसाकि 'पूर्वरंग' से स्पष्ट है, लेखकने उत्कल प्रदेश में प्रचलित नाटक एवं रंगमंचका हिन्दी माध्यमसे परिचय देकर जो 'चाक्षुषयज्ञ' सम्पन्न किया है, वह सर्वथा श्रेयस्कर है।

लेखकने इस पुस्तकको ११ अध्यायों और १ परिशिष्टमें विभक्त किया है। पहले उसने उड़ीसाकी संस्कृत नाट्यपरम्पराका सर्वेक्षण किया है, जो पर्याप्त गवेषणात्मक है, फिर दूसरे अध्यायमें उड़ियाके पद्यमय लोक-नाट्यों, विशेषतः 'लीला' मंचका इतिहास निरुपित किया है। उसी क्रममें उसने आधुनिक नाटकोंके उद्भव तथा विकाससम्बन्धी सूत्र इंगित किये हैं। इसके अतिरिक्त लेखकने अनेक नाट्यकारों, रंगकर्मियों और विभिन्न शिल्पियोंके जीवनवृत्त, कर्तृत्व आदिका विवरण देकर इस अध्ययनको विशेषोपयोगी बनाया है। उसने परिशिष्टमें लगभग ४०० मंचित उड़ीसा नाटकोंकी सूची प्रस्तुत कर इसे और प्रामाणिक बना दिया है। हाँ, यदि इन नाटकों को मंचित करनेवाली संस्थाओं, रंगकर्मियों और सम्बद्ध तिथियोंका उल्लेख कर दिया जाता तो यह अध्ययन और उपादेय सिद्ध होता।

मिश्रजीने उड़ीसाके 'नवनाट्य आन्दोलन' मुख्यतः समस्यानाटक फिर एकांकी, नृत्यनाटिका, ओडिशी संगीत परम्परा, बेतारनाटिका (ध्वनिरूपक) और 'एकक नाटिका' (एकालाप) से सम्बन्धित नाटकों और नाटककारोंका तो विस्तृत विश्लेषण (मुख्यतः तथ्य संकलन) किया है, पर उक्त नाट्यप्रवृत्तियोंका समुचित तत्त्वोद्घाटन नहीं किया। उड़िया रंगमंचका परिचय अपेक्षाकृत बहुत कम (मात्र ८ पृष्ठका) है। यों, सचित्र वृत्तों द्वारा प्रारम्भिक जानकारी अवश्य मिल जाती है।

प्रस्तुत कृतिकी एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि यह एक अहिन्दी भाषाभाषी लेखक द्वारा लिखी गयी है। उड़ियाभाषी श्री नीलमणिकी यह स्वच्छ, प्रांजल और परिप्रौढ़ हिन्दी पढ़कर वस्तुतः बड़ा सुख-संतोष अनुभव होता है। इससे लेखककी हिन्दी-निष्ठा और राष्ट्रभाषा विषयक उदारताका प्रमाण मिलता है। पुस्तकमें भाषा-व्याकरण सम्बन्धी कई त्रुटियां हैं, जो लेखकके लिए तो कम, पर प्रकाशकके लिए अधिक आपत्तिमूलक हैं। समग्रतः हिन्दी माध्यमसे दी गयी उड़िया नाटककी यह सामग्री स्वागत योग्य है।

— डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसाद साहित्यकी अन्तश्चेतना

ले. डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित; प्रकाशक : कलमघर, पोकरण हाऊस, जोधपुर। मूल्य : १५.०० रु.।

'प्रसाद' मूलतः प्रेम, सौन्दर्य और आनंदके कवि हैं। उनका समस्त कर्तृत्व और उससे संबंधित सारी विचार-धाराएं अन्ततः इसी त्रिवेणीसे जुड़ गयीं हैं। इसलिए इसे प्रसाद साहित्यकी अन्तश्चेतना' कहा जा सकता है। लेखकने इस दृष्टिसे प्रस्तुत अध्ययनको तीन स्तंभोंमें विभाजित किया है - १. प्रसादकी प्रेम-भावना २. प्रसाद की सौन्दर्य-संचेतना और ३. प्रसादकी आनंद-साधना।

यहाँ "भावना" से "संचेतना" और 'संचेतना' से 'साधना' का जो क्रम निरूपित किया है, वह कविकी "अन्तश्चेतना" का एक सहज विकासक्रम है। प्रसाद-साहित्यपर समग्र रूपसे दृष्टिपात करनेसे यह स्वतः सिद्ध हो जाता है कि शृंगार, प्रेम और रोमांस प्रसाद-साहित्य का आदि बिन्दु है। रूप-सौंदर्य उसका मध्य बिन्दु है और आनंद कामाध्यात्म उसका चरम बिन्दु है। लेखकने ठीकही कहा है "इन तीनों तत्त्वोंमें पूर्वापर क्रम है और यहभी, कि प्रसादकी इस अन्तश्चेतनाका विकास वर्तुल-गतिसे होता रहा है।" (पुरोवाक्)। वस्तुतः प्रसादकी प्रारंभिक कृतियोंमें प्रेम, शृंगार, बनारसी मस्ती, इश्क-मिजाजी, दर्देदिल और यौवनानुभूतिकी जो मनोवृत्ति दिखायी देती है, वह उत्तरवर्त्ती कृतियोंमें उदात्त सौंदर्यका रूप धारण कर लेती है। उनके आरंभिक साहित्यमें नियति और करुणाका जो उद्रेक हुआ है, वह अनंतर रहस्य दर्शनमें परिणत होता दिखायी देता है। अपने सहज विकास-क्रममें ये सारी प्रवृतियां आनंदानुभूति और कामाध्यात्मका रूप धारण कर लेती हैं अर्थात उनकी रूपासक्ति भूमाके विराट सौन्दर्यमें, उनकी रूमानी वृत्ति, यौवनानुभूति, मनोवेदना और मस्ती सामरस्य-साधनामें, उनकी प्रकृति महाचितिके रहस्य-दर्शनमें तथा उनकी समग्र अन्तश्चेतना कामाध्यात्ममे पर्यवसित हो जाती है। उदात्तीकरणकी यह प्रक्रिया प्रसाद-साहित्यकी सबसे बड़ी विशेषता है, इसलिए एक स्वत्रंत ग्रन्थ द्वारा इसके सांगो-पांग विवेचनका जो प्रयत्न लेखकने किया है, वह सराहना के योग्य है।

उक्त स्तंभोंमें प्रवेश करनेसे पूर्व 'पूर्व-पीठिका' के अन्तर्गत लेखकने 'प्रसाद' के उस "कृतिमय व्यक्तित्व और जीवन दर्शन" का दिग्दर्शन कराया है, जो बाहरी तथ्यों पर आधारित न होकर स्वयं उनके साहित्यके भीतरसे झलकता हुआ दिखायी देता है। जीवनी-लेखनका यह एक नया प्रयोग है।

'प्रसाद' की प्रेम-भावनाका विवेचन करते हुए लेखक ने पहले तो 'प्रेम तत्त्व' की शास्त्रोचित व्याख्या की है और फिर 'प्रसाद'—साहित्यमें चित्रित प्रेमके विविध पक्षोंका वर्गीकरण किया है। इनके मुख्य दो भेद प्राप्त होते हैं -१. व्यष्टिगत प्रेम २. समष्टिगत प्रेम।

व्यष्टिगत प्रेममें दाम्पत्य, वात्सल्य, भ्रातृत्व, सख्य, दास्य आदिका विश्लेषण करते हुए विभिन्न मानवीय प्रेम, सम्बन्धोंका मूल्यांकन हुआ है और समष्टिगत प्रेम-अन्तर्गत 'प्रसाद' के राष्ट्रप्रेम, विश्वप्रेम, भगवत्प्रेम, प्रकृति-प्रेम आदिका निरूपण किया गया है। इसी क्रममें 'प्रसाद' के 'प्रेम-दर्शन' या 'प्रेमादर्श' की स्थापना की गयी है। इस अध्यतनसे अतत: 'प्रसाद' के इसी कथनकी पुष्टि होती है "मानवीय चेतनाका मूल है प्रेम"। 'प्रसाद' की प्रेम-भावनाका इतना विस्तृत विवेचन अन्यत्र प्राप्य नहीं है।

द्वितीय स्तंभमें 'प्रसाद' को एक सौन्दर्यचेता कवि रूपमें परखा गया है। इसमें भी पहले सौन्दर्यका स्वरूप-विश्लेषण, "प्रसाद' के रूपबोध तथा सौन्दर्य-चिन्तनका अनुचिन्तन है और उसके बाद "प्रसाद-साहित्यमें प्राप्य रूप-सौन्दर्यके विभिन्न मूलाधारों, अंग-प्रत्यंग सम्बन्धी सौन्दर्य विधानों, विविध सौन्दर्य-प्रसाधनों आदिका सर्वेक्षण तथा विश्लेषण किया गया है। यह एक प्रकारका सांस्कृतिक अध्ययन है, जो लेखकके अन्तर्मंथनका प्रमाण देता है।

तीसरे और अंतिम स्तंभमें 'प्रसाद' के कामाध्यात्म एवं आनंदवादका अनुशीलन किया गया है। लेखकने यहां शास्त्रीय जटिलता एवं वैदुष्य-प्रदर्शन का लोभ-संवरण करके 'प्रसाद' के आनंद-दर्शनका व्यावहारिक प्रतिपादन किया है। यह अध्याय अपेक्षाकृत काफी संक्षिप्त है। हाँ, सारभूत अवश्य है।

'समापन' के अन्तर्गत् उपर्युक्त तीनों तत्त्वोंका समाहार किया गया है। लेखकका निष्कर्ष है कि 'प्रसाद न मूलतः आध्यात्मिक हैं, न पूर्णतः शृंगारी; न उनमें सिद्ध-साधकों की ऊर्ध्वदृष्टि है और न देहवादियोंका अध:प्रेक्षण। वे योग भोगकी सीमापर खड़े हैं। उनकी रागात्मिका वृत्ति सर्वग्रासी है।' (द्रष्टव्य-पृष्ठ १४७) इसप्रकार "प्रसाद

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यके एक महत् पक्षके तथ्यातथ्य विमर्शका यह एक शुभ प्रयास है।" भूमिकासे ज्ञात होता है कि यह लेखक का पहला प्रबन्ध है। यों, प्रकाशनके क्रममें यह उसकी आठवीं कृति है। स्पष्ट है कि पिछले 'बारह वर्षों' (द्रष्टव्य-पुरोवाक्) में इसमें बहुत परिमार्जन हुआ है। यह भी दिखता है कि लेखकने 'प्रसाद' को आलोच्य और अध्येय कविको अपेक्षा एक 'आराध्य' कवि रूपमें ग्रहण किया है, जो कुछ चिन्त्य है। पुस्तकमें मुद्रणकी भूलें अपनी अति पर हैं। शुद्धि-पत्रभी शुद्ध नहीं छपा है। कहीं-कहीं 'प्रसाद' तक को 'प्रमाद' रूपमें छापा गया है। इस प्रकाशकीय प्रमादकी जितनी भर्त्सना की जाये, कम है।

—नरेन्द्र शर्मा

भाषा विज्ञान

मालवीकी उत्पत्ति और विकास

लेखक : डॉ. बंसीधर; प्रकाशक : रामनारायणलाल बेनीप्रसाद, कटरा, इलाहबाद-२११००२। पृष्ठ : २६६; डिमा. ७३; मूल्य : २०.०० रु.।

प्रस्तुत ग्रन्थ विक्रम विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच.डी. की उपाधिके लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्धका मुद्रित रूपान्तर है। पुस्तक कुल नौ प्रकरणोंमें विभक्त है जिन्हें दो खण्डों में रखा गया है। मालवीभाषी प्रदेश, प्राचीन भारतीय आर्य-भाषाएं एवं मालवी, मालवीका ऐतिहासिक स्वरूप और उसकी उपबोलियाँ, मालवी और उसकी सीमावर्ती भाषाएं प्रथम खण्डमें तथा मालवी ध्वनि-विचार, प्राचीन तथा मध्य भारतीय आर्य भाषाकी ध्वनियोंका मालवीमें विकास, रूप तत्त्व (विकारी शब्द, अविकारी शब्द) द्वितीय खण्डमें हैं। नवें प्रकरणमें उपसंहार तथा मालवी साहित्यका सामान्य परिचय दिया गया है। ग्रन्थमें मालवी-भाषी प्रदेश तथा उसकी उपबोलियोंके दो पृथक मान-चित्र भी हैं जो उपयोगी हैं। प्राचीनकालमें 'अवन्ती जनपद' नामसे विख्यात मालव प्रदेशकी मिट्टीसे गहरी निकटता होनेके कारण लेखकके लिए वहांकी बोलियोंका विश्लेषण अपेक्षाकृत अधिक सुकर हो गया है।

शौरसेनी प्राकृतके शौरसेनी अपभ्रंश भेदसे विकसित नागर अपभ्रंशसे 'मालवी' भाषाकी उत्पत्ति मानी जा सकती है। इस भाषाके प्राचीन रूप ११-१२ शताब्दीके ग्रन्थ 'पाहुडदोहा', 'राउलवेल', 'प्राकृत व्याकरण', 'संदेश रासक' आदिमें देखे जा सकते हैं। प्रसिद्ध भाषाविद् डॉ. ग्रियर्सनने 'मालवी' को राजस्थानकी एक उपबोली माना था। किन्तु परवर्ती विद्वान डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डॉ. टेसीटरी आदिने इसे राजस्थानीसे पृथक् मध्यप्रदेशकी शाखासे सम्बद्ध कहा है। सत्य भी यही है। मालवी भाषा राजस्थानीकी अपेक्षा पश्चिमी हिन्दीके अधिक निकट है। प्रसन्नताकी बात है कि प्रस्तुत ग्रन्थके लेखकने इसी मान्यताको स्वीकार किया है।

इस पुस्तकमें भाषाविज्ञानके वर्णनात्मक, ऐतिहासिक और तुलनात्मक – इन तीन अध्ययन-आधारोंका सहारा लिया गया है। इसका परिणाम यह हुआ है कि किसी भी एक प्रकारका विश्लेषण अपने आपमें स्पष्ट पूर्ण तथा वैज्ञानिक नहीं हो पाया है। उपलब्ध सामग्री यथा-स्थान अवश्य प्रस्तुत की गयी है। यहां विश्लेषण सम्बन्धी कुछ अशुद्धियोंका उल्लेख करना अनावश्यक न होगा। ध्वनि-विचारके अन्तर्गत लेखकने दो स्वरोंके संयोगमें 'इऐ' में 'पिएल' और 'इकेज', 'इमेज' शब्द दिये हैं। पहले शब्दमें 'इए' स्वर-संयोग है 'इऐ' नहीं तथा दूसरे और तीसरे शब्दोंमें स्वर-संयोग है ही नहीं। इसीप्रकार 'उआ' में 'रुपारी', 'रूवाँरी'; 'उए' में 'उगेरना', 'उछेरना', 'ईई' में करीरी', 'मरीरी' तथा 'अओ' में 'असोज' शब्द दिये गये हैं। वस्तुतः इनमेंसे किसी शब्दमें भी स्वर-संयोग नहीं है। इसीप्रकारकी अशुद्धि 'तीन स्वरोंके संयोग' में भी है। इनमें कुछ शब्द तो छपाईकी अशुद्धि कहकर छोड़े जा सकते हैं जैसे 'पिएल', किन्तु अन्य शब्द लेखककी स्वर-संयोगकी परिकल्पना स्पष्ट न होने का ही परिचय देते हैं। यही बात 'अंत-व्यंजन-गुच्छ' के अन्तर्गत दिये गये उदाहरणोंके विषयमें भी सही है। 'रूप तत्त्व' प्रकरणमें व्याकरणिक रूपोंके अध्ययनका गलत-सही प्रयास किया गया है। 'रूप तत्त्व' के सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों ही पक्ष इतने दुर्बल हैं कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगता है लेखकने ऊपर-ऊपरसे दिखनेवाली बातोंको ही एकत्रै कर दिया है। रूप-संरचनाकी प्रक्रियाको गहराईसे देखनेका यत्न ही नहीं किया है। यही नहीं ग्रन्थमें भाषाके महत्त्वपूर्ण पक्ष वाक्य और अर्थका अध्ययन ही नहीं किया गया है।

हिन्दीकी किसी बोलीके अध्ययनकी परम्पराका विकास डॉ. धीरेन्द्र वर्मा तथा डॉ. बाबूराम सक्सेना जैसे भाषाविदों द्वारा किया गया था। इधर लगभग ३० वर्ष व्यतीत हो जानेके पश्चात् भी विद्वान उसी पद्धतिका गलत-सही अनुकरण करते चले जा रहे हैं। भाषा-भूगोल, बोली भूगोल तथा क्षेत्र पद्धतिसे सम्बन्धित हिन्दी और अंग्रेजीकी अनेक पुस्तकोंके प्रकाशनके पश्चात भी व्यवस्थित वैज्ञानिक ढंगपर बोलियोंका अध्ययन किया जाना अभी हिन्दीमें शेष है। किसी वैज्ञानिक ग्रन्थका मुद्रण अपने आपमें दुष्कर कार्य है। सन्तोष है कि इस दृष्टिसे ग्रन्थमें कम ही त्रुटियां हैं।

— डॉ. महेन्द्र

उपन्यास

मरीचिका

ले. गंगाप्रसाद विमल; प्रकाशक : राजपाल एंड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : १४८; क्रा. ७३; मू. ७.०० रु.।

श्री गंगाप्रसाद विमलका यह उपन्यास एक जाने-पहचाने नये नामके धुंधला जानेकी 'शुरुआत' भी बन सकता है, अगर वह इसीप्रकार एक विश्वसनीय रचना-संसारके स्थानपर 'मरीचिकाएं' खड़ा करता रहा।

लेखक 'मरीचिका' में विश्वासकी तरह लोगों द्वारा पाले जानेवाले एक भ्रमको तोड़ना चाहता है। उपन्यास के आरम्भमें ही बजरिये कथावक्ताके वह अपना रचनात्मक लक्ष्य स्पष्ट कर देता है : 'जिस कहानीकी बात मैं आपसे कह रहा हूँ, बहुत मुमकिन है वह कोई कहानीही न हो। सिर्फ मेरा वहम हो। ठीक वैसाही वहम जैसा हम खुदके होनेका पाले हुए हैं। वह एक ऐसी चीज़ है जिसे हममेंसे किसीने भी नहीं देखा है लेकिन हम उसे मानते हैं वह है। वह अब हमारीही तरह हमारे बीच एक चलती-फिरती चीज बन गयी है। वह हमारे लिए एक विश्वास - हमारी रक्षाका विश्वास बन जाती है। कैसी अजीब बात है, जो चीज़ है ही नहीं हो ही नहीं सकती - वह एक परिपक्व विश्वासकी शक्ल लिये हमारे बीच घूमती है। और अब उसे तोड़ना, उसे तोड़नेकी बातें करना भी कितना मुश्किल काम है। उसे तोड़नेका मतलब है शताब्दियोंसे चले आ रहे जनसमूहका विश्वास तोड़ना।" भाषाके इस रचावमें जो विचार रखा गया है, वह बड़ी आपेक्षाएं जगाता है। लेकिन उपन्यास खुद लेखकके वहमकी रचना हो जाता है— वह जिस कथाको तैयार करता है उसमें अनुभवोंसे गुजरनेकी प्रक्रिया नहीं है, बड़े चलते ब्यौरोंसे वह प्रभाव पैदा करनेमें अपने कौशलकी इतिश्री कर देता है। एक पागलके चमत्कारी पुरुष मान लिये जानेकी वह एक समानान्तर कथा बुनता है। इस पागलकी कथाके बीच वह यौन-उत्तेजनाके एक ब्यौरेकी चिप्पी भी चिपका देता है "मुझे नहीं मालूम, कब मेरे हाथ उसके सीनेसे जा लगे। अचानक उन दो छोटी गोल चीजोंको बार-बार छूनेकी मेरी इच्छा होने लगी... फिर न जाने कौन-सी उत्तेजनामें मैंने उसके ब्लाउजके बटन खोल दिये। उसके जिस्मका सबसे कोमल रहस्यपूर्ण हिस्सा मेरे एकदम करीब था ....।" यौवनके इस पहले रहस्यका साक्षात्कार औपन्यासिक वस्तुसे किसी अन्तरंग सम्बन्धमें नहीं जुड़ा है। इसके अतिरिक्तभी चमत्कारिक प्रसंग हैं। कथाके वक्ताकी मुलाकात बूढ़ी भिखारिनके वेशमें एक धनी-मानी विधवासे होती है, जो उसकी स्वीकृति-अस्वीकृतिका इन्तजार किये बिना उसे जिस्मके आदिम खेलमें प्रवृत्त करती है। इस यौन-अनावरणके साथ क्रान्तिका भी लेखकीय अनावरण है, जोशीले तर्क और किताबी बातें करनेवाले क्रान्तिकारी बस आपस में मारपीट करते हैं। क्रान्तिको लेकर भी इसतरह वह एक चलती भौंडी चिप्पी जड़ देता है। इस तरहकी और कई चिप्पियां हैं। फिर वह मूल किस्सेको लेता है कि सन्त भजनसिंहकी अवास्तविक हस्तीका आशीर्वाद पाये नेता-अफ़सर-व्यापारी कैसेफ लफूल रहे हैं। इनके बारेमें लेखक बेहद चालू टिप्पणियाँ देता चला है। और अन्तमें कथा-वक्ताके मित्रकी पत्रके रूपमें आत्मस्वीकृतिमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपन्यास समाप्त कर दिया गया है कि किसप्रकार ईश्वर के प्रति विश्वासकी एक महान् गप्पकी तरह सन्त भजनसिंहका अस्तित्व भी मिथ्या है। उपन्यासमें जो संसार है वह घटित अनुभवोंसे शून्य कथाका और बेतरतीब ब्यौरों के सिलसिलेका है। खेद इस बातका है कि भाषाका आकर्षक उपयोग करनेकी लेखककी सामर्थ्य निरर्थकतामें व्यायाम बन गयी है। "उस गप्प (ईश्वरका विश्वास) के चारों ओर डर और दूसरी चीजोंका ऐसा प्रभामण्डल बन गया था कि उससे विरोध करने, उससे लड़नेकी हिम्मत किसीमें नहीं थी। उस गप्पकी व्यवस्था इतनी तेजीसे फैली कि वेदोंसे लेकर धर्म-ग्रन्थों, मन्दिरों-गिरजाघरों-मस्जिदों-गुरुद्वारोंसे लेकर दूसरी सामाजिक संस्थाओं को भी उसीके नियमोंमें बंधना पड़ा। अब मनुष्यकी स्थिति ऐसी है कि वह उससे लड़ नहीं सकता" इन पंक्तियोंके वैचारिक हल्केपन और तार्किक असंगतिपर ध्यान न दें तो भाषाके इस कुशल विनियोगसे हम चमत्कृत हो सकते हैं। लेकिन लेखकका सारा कौशल एक आयास-सिद्ध दक्षतासे अधिक इसलिए नहीं होता कि वह उसे सर्जनात्मक उपलब्धिकी दिशा नहीं देता। विमल एकके बाद दूसरा उपन्यास बड़ी त्वरा से लिख रहे हैं, लेकिन यह त्वरा रचनात्मक आकांक्षासे नहीं जुड़ी है और इसलिए लगता है कि लेखक अपने रचनाकारको व्यावसायिक लक्ष्यमें खो रहा है। हमारे आजके माहौलमें चमत्कारी सन्तोंके प्रति बढ़ती मरीचिकाको तोड़नेके जिस उद्देश्यसे वह प्रेरित है, उसके लिए एक प्रभावशाली कथा सी वह नहीं काढ़ पाया है।

— **नवलकिशोर**

प्रेत

लेखक : **श्रवणकुमार; प्रका. राजपाल एंड संस, दिल्ली-६। पृ. ७०; क्रा. ७३; मूल्य : ४.०० रु.।**

आजकी जिंदगी बहुरंगी है। वह इतनी सपाट नहीं है कि उसे किसी एक खास बंधे-बंधाये नजरिएसे उरेहा जा सके। फलतः उसकी सच्ची अभिव्यक्तिके लिए साहित्यकारको कई सरहदोंपर अपने तईं जूझना पड़ रहा है। जिसके कारण तेजीसे बदलते जीवनके यथार्थ क्षणों की पकड़ आज अच्छेसे अच्छे साहित्यकारोंके लिए एक समस्या बन गयी है। जिंदगीपरसे कइयोंकी पकड ढीली पड़ती जा रही है – उसकी सही पहचान उनसे दूर छूट गयी है। उनके अपने अमोघ अस्त्र – घिसे-पिटे साहित्यिक लटके — आजके संदर्भोंमें कुंठित हो चले हैं; फिरभी वे हैं कि चमगादड़ोंकी भाँति सृजनकी शाखसे आखिरी दम तक चिपके रहना चाहते हैं। प्रसिद्ध उपन्यासकार ई. एम्. फार्स्टरकी तरह लेखनसे संन्यास लेनेकी 'बोल्डनेस' उनमें नहीं है। वास्तवमें वर्तमान जीवनकी संश्लिष्ट अभिव्यक्ति के लिए एक नये ही प्रकारके शिल्पकी दरकार है जिसके अभावमें आजका अधिकांश लेखन बासी, घटिया, बेमानी और फिजूल (अलजलूल-एब्सर्ड-नहीं;) बनता जा रहा है; क्योंकि अपने आपको दुहराते जाना वास्तविक लेखन नहीं और ऐसे साहित्यिक माहौलमें जबकि अधिकतर लेखनपर इस बीमारीके कीटाणु जमे हुए हों, श्रवणकुमारका 'प्रेत' उपन्यास कथ्य एवं शिल्प – दोनों भूमियोंपर – एक ताजगीकी मिसाल पेश करता है। यदि इसका कथ्य आम आदमीकी 'जेन्युइन' परेशानियों – समस्याओं – की उपज है को इसका शिल्प टटकी अनुभूतियोंके बेलाग संप्रेषणकी।

'प्रेत' उपन्यासमें प्रतीकात्मकता है। 'प्रेत' उन सभी वर्जनाओं-निषेधों एवं ह्रासशील तत्त्वोंके लिए प्रयुक्त हुआ है जो इन्सानके सहज विकासमें बाधक हैं, जो उसके अस्तित्वपर काले नागकी भांति कुंडली मारकर बैठे हैं और उसे समूचा निगल जाना चाहते हैं।

इस उपन्यासके कथ्यको संजोनेमें लेखकको कई स्तरों पर जिंदगीके उन तमाम रूपोंसे सीधी टक्कर लेनी पड़ी है जिनमें कहीं धुंध ही धुंध है तो कहीं कब्रोंमें करवट लेते बेशुमार प्रेत हैं।

प्रस्तुत आलोच्य कृतिके सभी चित्र आर्थिक कैनवस पर उरेहे गये हैं। कर्जसे दबा आदमी अपने आपको सहस्रपगी जीवकी पकड़में आया हुआ महसूसता है। पिता की मृत्युसे उपन्यासके 'मैं' (नायक नवीन) के मनमें उठी अनेकानेक प्रतिक्रियाओंके ताने-बानेसे इसकी कथावस्तु बुनी गयी है। इसके नायकके सामने एक ललकभरा अतीत और बौना वर्तमान है। उसके लिए भविष्यभी अस्पष्ट एवं धुंधला है। उसके अनुसार दुनियांमें ईमानदारी नहीं बची है, वह तो 'अपनी मौत पहलेही मर चुकी है'। वास्तवमें जिसे भरा रहना चाहिये वह रिक्त है; जिसे रिक्त होना चाहिये वह भरा-पूरा है। इसके अलावा नायकके माँ-बापकी एक अलग ही स्थिति है। जिस्म बेचकर पेट भरनेवाली औरतोंकी जिंदगीभी कम दिलचस्प नहीं ..... । 'सेक्स' को भी एक कोण विशेषसे उभारा गया है, किंतु नायकके 'सेक्स' सबंधी अनुभवकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुरुआत जिस विश्वसनीय ढंगसे की गयी है अंत उतनाही अविश्वसनीय हो गया हैं। नंगी औरतोंको देखकर नायक के 'शरीरका पोर-पोर गुंजार' कर उठता था —....किंतु 'सेक्स' संबंधी विवरणोंकीता जगीके बावजूद उसके प्रति नायककी तटस्थता कुछ विचित्रही प्रभाव डालती है। लगता है, उसपर जैनेन्द्रीय अहिंसावाद हावी है, सारे 'वोल्टेज' और 'वॉटेज' के रहते हुए भी औरत वहभी सामने लेटी हुई नंगी, समूची औरत को 'फेस' न कर पाना अपने आपमें एक अहम् सवाल है। 'प्रेत' के कथ्यमें सरकारी जादूभी है परिवार-नियोजनका इश्तहार है और है कल्याणकारी राज्य और मार्क्सवादी राज्यका अन्तर ठीक गाय और रीछ जैसा। इसमें स्वतंत्रताके बादकी भारतीय जिंदगी और उसे निर्देशितकरने वाली नौकरशाही तथा नेताओंके साथ उसके साठ-गाँठका रहस्य निरूपित हुआ है। बढ़ती महंगाई और घटती आमदनीके चक्करमें फंसा मध्यवर्गीय व्यक्ति है जिसकी समस्याओंका न और है न छोर। परंपराओंकी अक्षुण्णता बनाये रखने में ही जिसकी सारी शक्ति छीज रही है।

इस उपन्यासके केनवस पर ऑफिसोंमें काम करने वाले बॉस तथा मातहतोंके आपसी संबंधोंको चित्रित किया गया है। अफसर भी ऐसे जिन्हें ऊंची कुर्सी चाहिये — बदलेमें वे कुछ भी दे सकते है ह्विस्कीकी बोतल और अपनी इज्जत भी —...।

वैविध्यपूर्ण कथ्यकी अभिव्यक्तिके दबावका ही परिणाम है कि इस उपन्यासका शिल्प विविधतासे भरा है; किन्तु वह आदिसे अंततक सहज ही है, सायास या ऊबड़-खाबड़, शैथिल्यपूर्ण नहीं। 'मैं' शैलीमें लिखे गये इस उपन्यासका नायक 'साइकोन्युरोसिस' का शिकार है। उसे आजके हर भारतीय युवा वर्गकी अभिशप्त नियति भोगता दिखाया गया है जिसके सामने प्रतिभा बौनी होती जा रही है, श्रम बेभाव बिक रहा है और ईमानदारी 'बराए नाम' रह गयी है। घूसखोरी, कालाबाजारी और मिलावटके जमानेमें न्याय, सचाईका जनाजा उठता देख किसीके हृदयमें बौखलाहटका होना स्वाभाविक है। 'प्रेत' उपन्यास में सर्वथा नयी एवं तीखी अनुभूतियोंको व्यक्त करनेके लिए सशक्त भाषाका प्रयोग हुआ है। प्रभावात्मकताके लिए शब्दचित्रों — बिंबोंसे मदद ली गयी है। वर्णनकी जीवंतता 'रनिंग कमेन्ट्री' का जायका देती है। जैसे — "—....फिर मुझे उस औरतकी याद आती है जो मेरे सामने अपने शरीरके हर अंगका प्रदर्शन किये जा रही थी। उसके शरीरकी लोच, उसकी कमनीयता अभीतक मेरे मनमें बसी हुई है। वह मेरे सामने एक खजुराहो प्रेयसीकी तरह खडी थी। उसका वक्षस्थल भरा हुआ था, नितंब भारी थे और जांघें भरपूर थीं, उसका पेडू एक चमक-सी लिये हुए था और उसकी आँखोमें तीखापन था ...।" यद्यपि वेश्यालयके वर्णनमें बड़ी सफाईसे काम लिया गया है फिरभी विश्वसनीयताकी दृष्टिसे प्रस्तुत उपन्यासकी भाषा 'मांसका दरिया' (कमलेश्वर) कहानीकी सतह तक भी नहीं छू पाती। इसीप्रकार कलारी (ठर्रेकी दूकान) का वर्णन 'कफन' (प्रेमचंद) कहानीमें वर्णित शराबखानेकी याद ताजा करता है पर उसके सामने पासंग लगता है। फिरभी आजकी जिंदगीको रू-ब-रू चित्रित करनेमें कहीं-कहीं भाषाको कमाल भी हासिल है। वह संघर्षशील जिंदगीके कटु-मधुर अनुभवोंका सीधा साक्षात्कार करने वाली भाषा है — सहज, प्रवाहयुक्त, संप्रेषणीयताकी दृष्टि से भरी-पुरी। अन्य विदेशी भाषाके शब्दोंके साथहीअंग्रेजीके शब्दोंका प्रयोग किया गया है।

संक्षेपमें, श्रवणकुमारके 'प्रेत' उपन्यासमें लघु-उपन्यासकी सारी विशिष्टताएं मौजूद हैं। इसमें कथ्य एवं शिल्प – दोनों बिंदुओंपर एक नये तथा अछूते धरातल का निर्माण हुआ है।

—शिवशंकर पाण्डेय

बीमार शहर

लेखक : राजेन्द्र अवस्थी; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संज, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६। पृष्ठ : १८६; क्राउन, ७३; मूल्य : ८.०० रु.।

प्रस्तुत पुस्तक हिन्दीके यशस्वी कथाकार राजेन्द्र अवस्थीकी एक नवीनतम औपन्यासिक कृति है जिसे पढ़ने पर ऐसा लगता है कि रचनाकार अब महानगरीय बोधको नाभिकेन्द्रमें रखकर उपन्यास सृजन करने लगा है और उस आंचलिकताके अंचलको छोड़ चुका है जिसका सौंदर्य 'जंगलके फूल' या 'जाने कितनी आंखें' में लक्षित होता है।

सर्वप्रथम इस उपन्यासका कथ्य हमें आकृष्ट करता है क्योंकि यह अत्याधुनिक है—और यह सर्वस्वीकृत तथ्य है कि आधुनिकता या नवीनता नगर बोधसे ही उत्पन्न होती है जिसका प्रथम लक्ष्य है सामाजिक ढांचे या व्यवस्थामें आमूलचूल परिवर्तन। लेखकका कहना है कि 'मनका संतोषही जिन्दगीकी उपलब्धि है।" और इसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

लिए परिवर्तित मूल्योंके ग्रनुसार 'नये समाज' ग्रौर नयी परम्पराग्रोंकी ग्रावश्यकता है। इस उपन्यासमें लेखककी यह मान्यता है कि नर-नारीको वास्तविक सुख मित्र रूप में निर्बंध रहनेपर ही मिल सकता है, विवाहके कीचड़में फंसनेपर नहीं। कथाकारका मनःपूत शेखर कहता है 'मैं विवाहको एक कान्ट्रेक्ट मान सकता हूँ। सभी ग्रन्य कान्ट्रेक्टकी तरह वह भी तोड़ा या जोड़ा जा सकता है।' (पृ. १५२)। मिस गोरावाला ग्रौर ठाकुर निरंजनसिंह, मंजरी ग्रादि पात्रभी विवाहकी निरर्थकता पूरी ताकतसे सिद्ध करते हैं। ठाकुर निरंजनसिंहका कहना है कि 'विवाहकर किसी स्त्रीको पत्नी बनाना ग्रौर फिर उसे एक गोदाममें बंद कर देना एक तरहकी होर्डिंग है।' (पृ. १७४)। इन पात्रोंने उन रिश्तोंको भी बेमानी ग्रौर फिजूल बताया है जिनका ग्राधार रक्त है। समाजस्वीकृत मान्यताग्रों ग्रौर पुरानी रूढ़ियोंका पोषण धर्म करता है ग्रतः उसकीभी व्यर्थता संकेतित है: 'वह धर्म कैसा जो लिखा एक तरहसे गया हो ग्रौर माना दूसरी तरहसे जाता हो। जिस ग्रादमीकी करनी ग्रौर कथनीमें भेद होता है वह दोगला कहा जाता है। जिस धर्ममें ऐसा भेद हो, वह?— ग्रच्छा हो दुनियांसे धर्मका भेद ही उठ जाये। सब एक धर्मके हों या किसीका कोई धर्म न हो।' (पृ. ६३)। इससे भी ग्रधिक जोरदार शब्द हैं ठाकुर निरंजनसिंह के: "धर्म कोई भी हो, कैसा भी हो, उलझा हुग्रा होता है। वह एक भ्रष्ट सस्थाके कुछ मठाधीशोंका षडयंत्र है दुनियांभरके धर्ममात्र एक भटकनमें पड़े हुए उलझे तार हैं जिनसे ग्रादमीका हाथ कटता है। (पृ. ८१)। लेखक राजनीतिको 'निहायय खोखली चीज' मानता है क्योंकि वह 'ग्रादमीकी सहजता' नष्टकर उसे ढोंगी बना देती है। इसीतरह ईश्वर, पाप-पुण्य, काम प्रेम ग्रादिके संबंधमें भी कथाकारके ग्रनुचिंतन बिखरे पड़े हैं जो कहीं-कहीं पात्रोंके मानसिक स्तरके ग्रनुकूल नहीं प्रतीत होते।

इस उपन्यासके प्रमुख पुरुष पात्र हैं: शेखर, ठाकुर निरंजनसिंह ग्रौर प्रोफेसर ग्राचार्य। इन तीनोंमें सबल व्यक्तित्व है शेखरका। नारी पात्रोंमें यद्यपि उल्लेख ग्रनेकों का मिलता है पर महत्त्वपूर्ण हैं शोभना, मंजरी ग्रौर मिस गोरावाला। सभी पात्र किसी न किसी कारणसे वर्तमान समाजसे ग्रसंतुष्ट या पीड़ित हैं। मंजरी ब्राह्मणी होकर भी, ग्रपनी प्रतिकूल परिस्थितिमें ग्रनेकानेक पुरुषों की उपभोग्या बनती जाती है ग्रौर ग्रंतमें बम्बईके बूची टेरेसमें ग्राश्रय पाती है जहां मिस गोरावाला, कमला ग्रग्रवाल, शोभना ग्रादि स्वच्छंद भावसे मित्र रूपमें रहते हैं तथा जिसका द्वार ग्रविवाहित मर्द ग्रौर ग्रौरतके लिए हमेशा खुला रहता है। इस कृतिके ग्रधिकांश पात्र विवाह-संतप्त, समाजके हिंसक पशुग्रों द्वारा उत्पीड़ित ग्रौर ग्रसफल मनोरथ हैं। यह ख्यातव्य है कि मानसिक दृष्टिसे इन पात्रोंमें कोई उल्लेख्य ग्रंतर नहीं है।

जहांतक शिल्पका प्रश्न है कथाकारने सर्वथा नवीन प्रयोग किया है। इसमें प्रमुख पात्र ग्रात्मकथा कहते हैं — मैथिलीशरण गुप्तके 'द्वापर' के समान। सबकी ग्रात्मकथाएं ग्रलग-ग्रलग होकर भी सुग्रथित ग्रतः ग्रविच्छिन्न हैं। कहीं-कहीं डायरी शैली भी ग्रपनायी गयी है। इस प्रकार इसकी शिल्पगत रोचकता निहित है उत्तमपुरुषात्मक, डायरी तथा पत्रात्मक शैलीके सम्यक् समन्वयमें, इस कृतिकी भाषा सरल ग्रौर कथ्यके ग्रनुकूल है। कहीं-कहीं काव्यात्मक वाक्य मिलते हैं; ग्रावश्यकतानुसार ग्रंग्रेजी वाक्यभी प्रयुक्त हैं। इसमें एक ग्रोर जर्मनके सुप्रतिष्ठित कवि रिल्केकी काव्य पंक्तियां उद्धृत हैं दूसरी ग्रोर महाकवि तुलसीदास ग्रौर 'ग्रज्ञेय' की भी। एकाध स्थलपर स्वरचित कविता ग्रौर शेर भी दिखते हैं। इससे उपन्यास के ग्राकर्षणमें ग्रभिवृद्धि हुई है।

निष्कर्षतः यह उपन्यास ताजा, रोचक ग्रौर विचारोत्तेजक है। इसे कथ्य ग्रौर शिल्पकी दृष्टिसे १९७३ में प्रकाशित कथाकृतियोंमें उल्लेख्य मानना उचित है।

— राजनारायण राय

कन्धेसे टंगी बगावत

लेखक : ग्रजित पुष्कल; प्रकाशक : स्मृति प्रकाशन, ६१ महाजनी टोला, इलाहबाद। पृष्ठ : ३५४; क्रा. ७३; मू. ११.०० रु.।

'कन्धेसे टंगी बगावत' का शीर्षक ग्रपनी प्रतीकात्मकतामें इसकी विषय-वस्तुको संकेतित करता है। वस्तुतः ग्रजित पुष्कलने प्रस्तुत उपन्यासमें बुन्देलखण्ड ग्रामांचलके उन नवयुवकोंके जीवनको चित्रित करना चाहा है जो दुर्नीतिसे उत्पन्न सामाजिक विकृतिके परिणामस्वरूप बगावतकी राहपर बढ़ ग्राये हैं। उपन्यासका नायक दिल्लीपत बुन्देलखण्ड ग्रामंचलके बागी कहलानेवाले नौजवानोंका नेता है। स्वयं उसके बागी बननेका इतिहास भी सामाजिक जीवनमें व्याप्त ग्रन्याय, शोषण ग्रौर दमन की परम्परा तथा उसके प्रतिकारके लिए उठाये गये प्रतिशोधात्मक कदमोंका इतिहास है। दिल्लीपत ग्रपने पिता

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंडित रामपतके शोषण और [illegible] रहे अपमानपूर्ण व्यवहारोंके प्रति प्रतिशोधकी भावना उसके बागी जीवनको प्रखरता, उग्रता और बहुत दूरतक साहसिकताभी प्रदान करती है। उसके नये-पुराने साथियों द्वारा बागी जीवन अपनानेके पीछेभी कुछ न कुछ अन्याय-मूलक एवं शोषणयुक्त घटनाएं ही अवस्थित रही हैं। उपन्यासकारने इन बागियोंके समाजसे कटे हुए दिशाहीन जीवन-क्रमपर प्रकाश डालनेके साथही उन परिस्थितियोंका भी सम्यक् चित्रण किया है जिनके बहावमें पड़कर ये नागरिक-जीवनको छोड़कर डाकुओंकी कंटीली जिन्दगीमें उतरनेको बाध्य हुए हैं। दूसरे शब्दोंमें उपन्यासकारने बुन्देलखण्ड ग्रामांचलके इन नौजवानोंके बागी बननेके कारणोंका सामाजिक और मनोवैज्ञानिक सन्दर्भोंमें बड़ी सहजताके साथ चित्रण किया है।

जहाँ उपन्यासकारने प्रस्तुत रचनामें दिशाहीन नौजवानोंके बागी जीवनकी अन्तरंगताको मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मताके साथ उठाया है, वहीं उसने प्रेम, वासना, ईर्ष्या, प्रतिशोध आदि मानवीय भावनाओंको एक ठोस कथाके माध्यमसे विश्लेषित करनेका भी प्रयास किया है। कथा-नायक पुरोहित पुत्र दिल्लीपत अपने जीवनको ब्राह्मणोचित आदर्शोंसे हटाकर सर्वथा स्वच्छन्दतावादी उग्रताकी लीक पर उतार देता है। उसके जीवनमें संघर्षके साथ प्रेम और वासनाका अस्तित्व भी व्याप्त है। जहां उसका संघर्ष बड़े भैया जैसे शोषकोंके लिए है तो वहीं उसका प्रेम और वासना श्यामली और चन्दा जैसी युवतियोंके लिए। यह उसके चरित्रकी उच्छृंखल और विलासपूर्ण प्रवृत्तिको प्रकाशित करता है। लेकिन इस उद्दाम भोगवादी प्रवृत्ति के बावजूद उसके चरित्रमें एक प्रेमीकी आकुलता निश्चय ही परिलक्षित होती है।

विवाहिता श्यामली दिल्लीपतसे प्रेम करती है और प्रेमके सन्दर्भमें उसपर अपना एकाधिपत्य बनाये रखना चाहती है। इसीलिए जब चन्दाके कारण उसका प्रणय-भाव आहत होता है, तो वह असन्तोषसे भर उठती है। उसका यह असन्तोष प्रतिशोधमें परिणत होता है और वह शिरोमनके सम्पर्कमें आकर दिल्लीपतको चोट पहुँचाने के लिए षडयन्त्रोंका जाल बुन लेती है। वस्तुतः ये षडयंत्र उसके व्यक्तित्वके प्रतिशोधात्मक आवेशकी मिली-जुली परिणति मात्र हैं। बादमें दिल्लीपतके लिए उसके मनमें प्रतिशोधकी जगह ममत्व और अपनत्वकी भावनाएं उदित हो जाती हैं और वह दिल्लीपतके लिए एक आवेगजनित [illegible]से भर जाती है। वस्तुतः श्यामलीके व्यक्तित्वमें एक वैसी प्रेमिका अवस्थित है जो अपने प्रेमास्पदके प्रति प्रतिशोध और प्रणय दोनोंही भावनाओं से आबद्ध रहती है। शायद यह उपन्यासकारकी रचना-शक्तिकी ही एक सीमा है जिसके कारण श्यामलीके व्यक्तित्वमें न तो प्रतिशोधकी हिंसक उग्रताही प्रखर हो पायी है और न ही प्रेमकी रागात्मक मधुरिमा ही अपनी स्वाभाविक कोमलतामें व्याप सकी है।

शिरोमन अपनी जातिगत विकृतिके कारण सामाजिक जीवनमें अनादरका पात्र बन गया है। प्यारकी प्यास उसे पागल बनाये रहती है और इसी क्रममें वह श्यामलीसे अपना सम्पर्क बढ़ाता है। वह श्यामलीको अपनाना चाहता है, लेकिन श्यामलीका व्यक्तित्व अन्ततक उसे मृगतृष्णाकी विफल व्याकुलता ही प्रदान कर पाता है। यह विफलता उसके मनमें दिल्लीपतके प्रति प्रतिशोधकी उग्र भावना भी पैदा कर देती है जिसके परिणामस्वरूप उसकी भूमिका खलनायक जैसी हो जाती है। प्रेमकी दौड़में थककर वह चन्दाको अपनी पत्नी तो बना लेता है, किन्तु अपनी निराश मनःस्थितिमें वह गार्हस्थ्य जीवनमें भी वैराग्यकी धूमिलताका निर्माण कर लेता है। जातिगत विकृतिकी विरासत, यौन-अतृप्तिकी आकुलता और फिर एक रंडीसे विवाह ये सारी स्थितियाँ उसे सामाजिक उपेक्षा और अनादरका निरीह पात्र ही बना देती हैं।

अजित पुष्कलकी प्रस्तुत औपन्यासिक कृति इस दृष्टि से प्रशंसनीय मानी जा सकती है कि इसमें ग्रामांचलकी पृष्ठभूमिमें एक वैसे कथा-लोककी रचना की गयी है जिसके चरित्र सामाजिक जीवनमें किसी न किसी प्रकार की दुर्नीतिजनित विकृतिसे पीड़ित हैं और वे राग-द्वेषसे परिचालित होकर एक दूसरेपर घात-प्रतिघात करते हैं। ये चित्र उपन्यासकारकी सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति रचनात्मक अनुभूति और प्रभावी अभिव्यंजना-शिल्पकी छाप अवश्य ही छोड़ जाती है। कथाकारकी भाषागत सशक्तता इस सम्भावनाको प्रस्तुत करती है कि वह भविष्यमें और भी महत्त्वपूर्ण कथाकृतियोंकी रचना कर सकेगा।

— डॉ, विपिनबिहारी ठाकुर

विज्ञापन का श्रेष्ठ साधन
'प्रकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवहेलना

लेखक : राजेन्द्र जगोत्ता; प्रकाशक : यूनिको पब्लिकेशंस, घटिया आज़मखां, आगरा-३ । पृष्ठ : १३२; क्रा. ७३; मूल्य : ५.०० रु. ।

इंग्लैण्डके पारिवारिक व सामाजिक वातावरणकी पृष्ठभूमिपर लिखे गये इस उपन्यासमें पश्चिमी समाजगत दाम्पत्य सम्बंधोंका चित्रण किया गया है। स्मिथ एक सुदक्ष और सुविख्यात फोटोग्राफर है जिसे 'न्यूड फोटोग्राफी' के लिए कई पुरस्कार मिले हैं। उसकी पत्नी जैनी अपूर्व सुंदरी है जिसका अंग-सौष्ठव व फोटो-कलाकी दृष्टिसे सर्वथा उपयुक्त होनेपर भी फोटोग्राफर पतिके द्वारा उपेक्षित रहा है। पति अन्य मॉडलोंके माध्यमसे नग्न फोटो कलाके उत्कृष्ट नमूने प्रस्तुत करता है। यह अवहेलना पत्नीके मनमें एक ग्रंथिको जन्म देती है। अपनी मोहक-देहके नग्न चित्र उतरवानेकी उसमें प्रबल आकांक्षा है, रूप-प्रदर्शनके लिए नहीं, अपितु आत्म-तुष्टिके लिए, कला-प्रदर्शनियोंद्वारा अपना विज्ञापन करानेके उद्देश्यसे नहीं, मात्र यह देखनेके लिए कि अन्य सुदंरियोंके शरीरकी तुलनामें उसका मांसल-सौंदर्य कितना श्रेष्ठ है। पत्नीकी इस प्रबल इच्छाकी पूर्ति चूंकि अपने कलाकार पतिके द्वारा नहीं हो पाती अत: वह एक विदेशी फोटोग्राफरको अपना माध्यम बनाती है। प्यारका भुलावा देकर वह उसे एक सुरम्य निर्जन स्थानपर ले जाती है जहां वह विदेशी विभिन्न कोणोंसे उसके बारह नग्न-चित्र लेता है। चलने के पूर्व वह चुपकेसे रीलको कैमरेमेंसे निकाल लेती है और घर जाकर स्वयं उसे 'डैवेलेप' करती है। प्रकृतिकी मनोरम पृष्ठभूमिमें लिये गये सभी चित्र एकसे एक बढ़कर आये हैं, कला और सौंदर्य दोनोंही दृष्टियोंसे। पर जब वे चित्र पतिके हाथोंमें पड़ते हैं तो वह उत्तेजित होकर उन्हें फाड़ डालता है और पर-पुरुषके द्वारा नग्नचित्र उतरवाने के कारण पत्नीपर चरित्रहीनताका लांच्छन लगाता है। यहींसे दोनोंके सम्बंधोंमें अवरोधका जन्म होता है जिसके कारण कईबार आपसमें मारपीट भी हो जाती है। मानसिक तनावकी इसी स्थितिमें पत्नीको उस विदेशी फोटोग्राफरसे सहानुभूति मिलती है और उसके हृदयमें विदेशीके प्रति प्रेमके अंकुर फूटते हैं। उधर स्मिथके वासनायुक्त व्यवहारके कारण उसकी सुन्दरी माडल उसे छोड़कर चली जाती है जिससे आगामी कला-प्रतियोगितामें पुरस्कार पानेकी आशा उसे सन्दिग्ध प्रतीत होती है। अब पत्नीके प्रति वह इसलिए सदय हो उठता है कि वह उसके लिए मॉडलिंग करे। पर जब जैनीको यह पता लगता है कि उसके पतिका प्रस्ताव उसके कलात्मक-सौंदर्यकी स्वीकृति के कारण नहीं, शुद्ध व्यावसायिकताके आधारपर है तो उसका मन वितृष्णासे भर उठता है और वह पतिको उसके कार्यमें सहयोग देनेके लिए दृढ़ता-पूर्वक इंकार कर देती है। विरोध पाकर पति क्षुब्ध हो उठता है और घर छोड़कर जानेकी तैयारी करती हुई पत्नीके हाथसे उन बारह चित्रोंकी दुबारा बनायी गयी प्रतिलिपियां छीन लेता है। पत्नी अपने विदेशी-प्रेमीके पास रहने चली जाती है और अपनी सखीकी सहायतासे एक आधुनिक सज्जापूर्ण स्टूडियोका प्रबंध करके विदेशी फोटोग्राफरको इस बातके लिए सहमत करती है कि आगामी चित्रकला प्रतियोगिता में वह अपने चित्र भेजकर उसके पतिको परास्त करे। वह सुंदरी मॉडल भी विदेशी फोटोग्राफरको अपना पूर्ण सहयोग देती है जो स्मिथका काम छोड़कर चली गयी थी। विदेशी फोटोग्राफरने बड़ी लगन और परिश्रमसे उत्कृष्ट कला-कृतियां तैयार करके प्रतियोगितामें भेजी; पर कला-प्रेमियोंकी भरपूर प्रशंसा पानेके बावजूद भी उसे द्वितीय पुरस्कार ही मिल पाया। प्रथम पुरस्कार मिला स्मिथको उन बारह चित्रोंके लिए जिन्हें उसने अपने नाम से प्रतियोगितामें भेज दिया था।

यूं उपन्यास अंग्रेजी समाजके परिप्रेक्ष्यमें लिखा गया है पर उसमें चित्रित मनोवैज्ञानिक द्वन्द्व किसीभी देशकी सामाजिक परिस्थितियोंमें उतनाही सही हो सकता है। अत: इस आधारपर अंग्रेज एवं भारतीय नारियोंकी तुलना करना विशेष संगत प्रतीत नहीं होता जैसाकि लेखकीय भूमिकामें कहा गया है। वस्तुत: उपन्यासका कथानक किसी विशेष समाजकी नारीका चित्र न होकर सामान्य नारीके उस अन्तर्द्वन्द्वका परिचायक है जो अपने जीवन साथीकी सहानुभूतिहीनता एवं उसके सर्वथा व्यावसायिक जीवन-मूल्योंके कारण अपनेको नितांत अवहेलित एवं तिरस्कृत अनुभव करती है तथा पुराने दमघोंटू वातावरण से निकलकर अपने लिए जीवनका नवीन पथ चुन लेती है। स्वाभिमानकी रक्षाका यह क्रियात्मक पहलूही शायद अंग्रेज-रमणीको परम्परागत भारतीय नारीसे अलग करता है।

— प्रेमचन्द्र जैन

पुस्तकों के परिचय के लिए पढ़ें
'प्रकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूल कन्नड़ लेखक : बी. पुट्टस्वामैया; अनुवादक : एन. डी. कृष्णमूर्ति; प्रकाशक : भारतीय साहित्य मन्दिर, धारवाड़-१४ (कर्नाटक)। पृष्ठ : २२०, मू. ६.०० रु.।

'उदय रवि' कन्नड़के प्रसिद्ध नाटककार एवं उपन्यासकार बी. पुट्टस्वामैयाका एक ऐतिहासिक उपन्यास है, जो कन्नड़में छः भागोंमें छपा है। साहित्य अकादमी, दिल्ली द्वारा इसे पुरस्कृत भी किया जा चुका है। एन. डी. कृष्णमूर्तिने, जो स्वयं कन्नड़ तथा हिन्दी दोनोंके लेखक हैं 'उदयरवि' के प्रथम भागका अनुवाद करके एक प्रशंसनीय कार्य किया है। यदि वे इस उपन्यासके शेष पांच भागोंका भी हिन्दी रूपान्तर प्रकाशित करायें तो हिन्दीके उपन्यास-साहित्यकी महती सेवा होगी।

कर्नाटकके महान सन्त एवं समाज सुधारक बसवेश्वर की जीवनीपर आधारित यह ऐतिहासिक उपन्यास दक्षिण भारतकी ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक झाँकी भी प्रस्तुत करता है। इसके एक भागसे सम्पूर्ण उपन्यासकी साहित्यक महत्ताका मूल्यांकन करना कठिन है, तथापि बी. पुट्टस्वामैयाकी औपन्यासिक प्रतिभाका प्रकाश इसमें भी देखा जा सकता है। उपन्यासकारने प्राचीन इतिहास का सूक्ष्म अध्ययन करके उसे कल्पनाके ताने-बानेसे इस प्रकार बुना है कि उसमें ऐतिहासिक सत्यकी रक्षाके साथ आधुनिक जीवनकी अनेक आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक समस्याओं और उनके निदानके प्रति भी संकेत किया है। बसवेशको एक परित्यक्त उपेक्षित बालकके रूपमें दिखाकर उसे अपने गुणोंके बलपर मन्त्रीपदपर प्रतिष्ठित होते हुए चित्रित करनेमें लेखक आधुनिक युग की जनतान्त्रिक भावनाको साकार करना चाहता है, जिस की प्रेरणासे चिरउपेक्षित जातियोंको भी आज चतुर्मुखी विकासका अवसर मिला है। चालुक्यवंशीय राजा तैलप की कामुकता एवं अर्थलिप्सा, मन्त्री बिज्जलराय और मंचरण नायककी दुरभिसन्धियोंके वास्तविक चित्रणमें लेखकने राजतन्त्रकी जर्जर प्रणालीकी व्यर्थता ऐतिहासिक संदर्भके साथ प्रस्तुत की है। तात्पर्य यह कि श्री पुट्टस्वामैयाकी दृष्टि अतीत एवं वर्तमानपर एक साथ रही है।

'उदयरवि' के छः भागोंसे उपन्यासके वृहदाकारका सहजंही अनुमान किया जा सकता है। एक विशाल चित्रफलकपर पूरे युगकी विविध घटनाओं, अनेक पात्रोंकी चारित्रिक विचित्रताओं, उनके बाह्य तथा आन्तरिक द्वन्द्वों और उस युगके सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिवेशको चित्रित करना एक युगद्रष्टा उपन्यासकारका ही काम है। इतने बड़े कथानकको बड़ी कुशलतासे संयोजित किया गया हैं। इस कौशलका परिचय वहां भी मिलता है जहा नागलांबाके विगत अठारह वर्षोंके जीवनको 'फ्लैश बैंक' के माध्यमसे संकेतित किया गया है। किस घटनाका विस्तारसे वर्णन किया जाये और किसे संकेतित किया जाये, इसका ज्ञान कुशल उपन्यासकारसे अपेक्षित है।

बसवेशके चरित्रचित्रणमें मानवीयपक्षको प्रधानता मिली है। उसमें जतिरिक्त श्रद्धाके कारण अलौकिक तत्त्वोंका समावेश नहीं किया गया है। बसवेशके गुणोंका विकास परिस्थितियोंकी भित्तिपर किया गया है। नायक को देवता बनानेकी प्रवृत्ति उपन्यासमें नही मिलती। जीवनी मूलक उपन्यासोंमें इस प्रकारका खतरा अधिक रहता है।

'उदयरवि' के इस अनुवादमें भाषाके प्रवाहकी सर्वत्र रक्षा नहीं हो सकी है। वाक्य-रचना कहीं तो प्रचलित व्यवहारके अनुकूल नहीं है और कहीं व्याकरण सम्मत नहीं है। फिरभी श्री एन. डी. कृष्णमूर्तिने मूल भाषाके सौन्दर्यकी रक्षा करनेका प्रयास किया है क्योंकि कन्नड़ उनकी मातृभाषा है। पुस्तकके अन्तमें चार पृष्ठोंमें अशुद्धियोंकी सूची दी गयी है, जो कम नहीं है। इनके अतिरिक्त भी छपाईकी अनेक अशुद्धियाँ विद्यमान हैं, जैसे 'ड़' को प्राय: 'ड' ही छापा गया है। आशा है, अगले संस्करण में इनका परिमार्जन कर लिया जायेगा।

— डॉ. सुधेश

चौदह दिन

लेखक : 'सुजाता'; अनुवादक : शौरिराजन; प्रका.: कृष्णा ब्रदर्स, कचहरी रोड, अजमेर। पृ. १०६; क्रा. ७२; मूल्य : ४.०० रु.।

बगला देशके मुक्ति संग्रामकी पृष्ठभूमिको लेकर लिखा गया यह उपन्यास मूल तमिलकृतिका हिंदी अनुवाद है। अन्यायके विरुद्ध संघर्षरत पूर्वी पाकिस्तानकी जनता के प्रति भारतीय सहयोगकी अपूर्व भूमिका युगोंतक साहित्यको प्रेरणा प्रदान करती रहेगी। विभिन्न भारतीय भाषाओंमें यह कहानी विविध माध्यमोंसे कही गयी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रस्तुत उपन्यासमें भारतीय वायुसेनाके एक नवयुवक कुमारकी कहानी है जो युद्धमें महत्वपूर्ण कार्य करनेके बाद पाकिस्तानी सेनाके हाथों बंदी हो जाता है। पाकिस्तानी अफ़सरोंके द्वारा उसे अपने पदके अनुसार सुविधाएं देनेकी बात तो अलग रही, भारतीय बन्दी अफ़सरको अमानुषिक यातनाएं दी जाती हैं। पाकिस्तानी सेना कुमारको पकड़नेकी चेष्टामें थी क्योंकि उसे पैराशूट से उतरते हुए देख लिया गया था। जब कुमार मुक्ति-वाहिनीके दो स्वयसेवकों, कासिम और सिराजके साथ सुरक्षित स्थानकी ओर जा रहा था तो पाकिस्तानी टुकड़ी कासिमको पकड़ लेती है। कुमार और सिराज बांसोंके झुरमुटमें छिप जाते हैं। कुमारका पता पूछने के लिए पाकिस्तानी सैनिक कासिमपर पाशविक अत्याचार करते हैं। जिसे देखकर कुमार सिहर जाता है। उसे इस बातसे अत्यंत कष्ट होता है कि कोई अन्य व्यक्ति उसकी सुरक्षा के लिए भयंकर शारीरिक यातनाएं सहे। अतः वह सिराज के रोकनेपर भी कासिमकी मुक्तिके उद्देश्यसे यह सोचकर आत्मसमर्पण कर देता है कि उच्च भारतीय अफ़सर होने के नाते अवश्यही उसे आवश्यक सुविधाएं प्रदान की जायेंगी। पर पाकिस्तानी सेनाके हाथों बंदी होनेके बाद उसके साथ नितांत अभद्र और नृशंस व्यवहार किया गया। इधर भारतीय सेना घनघोर आक्रमण करके पाकिस्तानी ठिकानोंको ध्वस्त कर देती है और पाकिस्तानी सेनाका कमाण्डर बाध्य होकर आत्मसमर्पण कर देता है। कुमारकी खोजकी जानेपर वह उस स्थानपर नहीं मिलता जहां उसे बन्दी बनाकर रखा गया था क्योंकि पाकिस्तानी कैप्टेन सुल्तान, जिसके मनमें भारत और भारतीयोंके प्रति घोर विद्वेष है, कुमारको खींचकर नदी किनारे ले जाता है और उसे गोली मारकर नदीमें फेंक देता है। भारतीय सेनाके जवान घायल कुमारको उपचारके लिए सैनिक अस्पताल ले जाते हैं। कैप्टेन सुल्तानके जघन्य कृत्यकी भर्त्सना करता है उसीके साथका फौजी कमाण्डर आसिफ। सुल्तानको भय होता है कि आसिफके द्वारा उसके कुकृत्योंकी कहानी भारतीय सेना तक पहुँच जायेगी अतः वह घायल अवस्थामें ही भारतीय सैनिक अस्पतालसे निकल भागनेकी चेष्टा करता है और प्रहरियोंकी गोलीका निशाना बनता है।

लेखकके द्वारा वर्णित घटनाएं सजीव होकर उभरी हैं। आश्चर्य नहीं कि मूल उपन्यासको पाठकोंका यथेष्ट आदर मिला, पर इसके हिंदी-अनुवादके सम्बंधमें कुछ बातें उल्लेखनीय हैं। तमिलभाषी हिंदी-प्रेमी अनुवादकका उत्साह प्रशंसनीय होते हुए भी उनकी भाषाका स्तर अपेक्षित नहीं कहा जा सकता। 'काया फुर फुरानी है' 'पैरोंपर बोसा लगाया करते थे', 'बोसा लगाकर ही छोड़ेंगे', 'चख चखाके ही छोड़ना', 'इंजनका जोश बढ़ाकर गरजवाया', 'भरी नींद सोई न होगी', 'तोपखाना धमाका खाकर भुन गयी', 'गहरा रंग पुना गया है,' हृदय धड़क-धधक रहा था', 'तनमन में बलखाती तबदीली' 'चुटकी भर आदेश दिया', 'मंजू मलोलती रही' आदि अनेक अटपटे प्रयोग मूलभाषाके स्वाभाविक प्रभाव नहीं वरन् अनुवाद भाषाके सम्बंधमें अज्ञानके परिचायक हैं। वर्तनी की भूलें भी यत्र तत्र सर्वत्र हैं।

—प्रेमचन्द्र जैन

कहानी-संग्रह

अतीतमें कुछ

लेखक : गंगाप्रसाद विमल; प्रका. भारतीय ज्ञानपीठ, बी/४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१। पृ. १५६; का ७२; मू. ७.०० रु.।

विमलने नयी पीढ़ीके एक अग्रणी कहानीकारके रूपमें ख्याति पायी थी। लेकिन इसमें सन्देह है कि 'अतीतमें कुछ' की कहानियां उसकी प्रतिष्ठाको बढानेके लिए कोई ठोस आधार देती हैं। संकलनकी पहली कहानी 'अतीतमें कुछ' की तुलना 'मरीचिका' से करें तो पता चलता है कि उपन्यासमें कथा-विन्यासमें जहां वह विफल है, कहानीमें उस बारेमें उसका पूरा नियन्त्रण है। वह कुशलतासे एक रहस्यको बुनता है और अन्ततक पाठकको बाँधे रहता है। यह अलग बात है कि कहानीमें प्रदर्शित मानवीय दुर्भाग्यको वह ठोस आधार नहीं देता। बीच-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीचमें छोटी-छोटी विसंगतियां भरी पड़ी हैं। 'मैं' के पिताके शत्रु गोरेको आयरिश क्यों कहा गया है ? अगर वह आयरिश है तो गुलाम देशके प्रति उपनिवेशवादी आम अंग्रेज जैसा ही उसका रवैया क्यों है ? कुछ नहीं, बस, लेखक योंही उसे आयरिश कह गया हैं। "मैं" की बूढ़ी बुआको फूफाकी पत्नी होनेसे ही देशनिकाला क्यों मिलता है ? देशी रियासतोंके निरंकुश विधानमें क्या घरेलू औरतों को (उनके पतियोंके राजनीतिक जुर्मोंके लिए) दण्डित किये जानेकी भी प्रथा थी ? इन छोटी बातोंपर ध्यान नहीं जाता अगर अन्तमें 'अप्पा' को रियासत छोड़नेके हुक्मका कारण लेखक 'अपारदर्शी धुन्ध' में न रहने देता। तब यह कहानी अत्याचारके एक अतीत युगका एक साक्षात्कार बनती।

किसी तानाशाही व्यवस्थाके अनाम आतंकको चित्रित करनेकी जिस प्रक्रियाको विदेशी कहानियोंके प्रभावमें लेखकने अपनाया है, उनमें आतंककी पहचान स्वतंत्रताके बुनियादी सवालसे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्षतः जुड़ी होती है। इस कहानीमें 'अप्पा' के खिलाफ 'रियासतमें क्रान्तिकारियोंकी मददसे लेकर सरकारके खिलाफ षड्यन्त्रतक के जुर्म' का जो संकेत दिया गया है, उससे किसीभी तरह का सही-गलत सम्बन्ध 'अप्पा' का नहीं बताया गया है। और न यह रियासती षड्यन्त्रोंको बतानेवाली कहानी बनी है क्योंकि किसी कुचक्रके व्यूहको भेदनेकी लेखकीय चेष्टा नहीं है। जैसे दैवी-सा रोग कहानीमें परिवारकी 'बच्ची' को ग्रसे हुए है और जो उसे समाप्त कर देता है वैसेही एक रहस्य दैवी-से कोपको इस परिवारके त्रासका कारण बना दिया गया है। इसलिए कहानी एक धुंधला प्रभाव भर छोड़ती है— किसी प्रखर अनुभवका ताप नहीं देती। एक बहुत सूक्ष्म कथा-विन्यास (जिसमें 'बीमार बच्ची' प्रतीक और भावुकता दोनोंका काम करती है) के बावजूद वास्तविकताका कोई तीखा अहसास नहीं देती।

संग्रहकी ग्यारह कहानियाँ एक दक्ष कथाकारसे जरूर मिलाती हैं। उस दक्षता और वैशिष्ट्यका उद्घाटन इस लघु समीक्षामें सम्भव नहीं है। बुनियादी कमजोरी लेकिन काबिले गौर है। 'वास्तविकता' स्वयंमें एक अर्थहीन सूत्र है, लेकिन जब कहानीकारका लक्ष्य वास्तविकताके उपकरणोंको लेकरही रचना करना है तो अनुभवोंकी जीवन्तताका अभाव उसके रचना-संसारको अविश्वसनीय बना देता है। विमलकी कहानियाँ कमोबेश अविश्वसनीयता की परिधिमें चली जाती हैं क्योंकि कहानीके लिए ठोस जमीन तलाशनेकी उसे फिक्र नहीं होती, एक खयाल उसे आता है और अभ्यस्त मैनरिज्मसे वह कहानी गढ़ लेता है; जैसेकि 'इन्ता फन्ता' में शहरके बीच उजड़ते पुराने शहर और बस्तीके बारेमें 'कुछ' बताना चाहता है, पर उस 'कुछ' को एक विशिष्ट अनुभवमें रूपायित करनेका सब्र उसमें नहीं है बस जल्दीसे 'मैं' को घुमा लाता है। बीचमें दूधका गिलास पीनेके कष्टको कामरेड माओकी लम्बी यात्रासे तुलनाका भोंडापन यों ही चलती छींटाकशी नहीं है, चौंकानेके लिए या उपहासके लिए भोंडेपनकी गोदमें जाना विमलकी आदत हो गयी लगती है। कहानीकार घुमा फिराकर अपने व्यक्तिको ही केन्द्रमें रखता है और चूंकि उसके पास अनुभव बहुत सीमित हैं, कोई एक बड़ा अनुभव भी नहीं है, इसलिए कहनेके लिए बस कुछ खयाल हैं, कुछ फिकरे हैं और सधी भाषा है।

'मरीचिका' और 'अतीतमें कुछ' विमलमें ठहरावके सूचक हैं और चूंकि विमलकी रचनात्मक दक्षता अपना प्रमाण इनमें बराबर देती है, इसलिए इस ठहरावको तोड़कर सर्जनात्मक क्षमताका नया परिचयभी वह बखूबी दे सकता है।

– नवलकिशोर

मेरी प्रिय कहानियां

ले. महीपसिंह; प्रका. राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६। पृष्ठ : १४६; क्राउन ७३; मूल्य : ५.०० रु.।

महीपसिंहकी इन कहानियोंमें वर्णित परिवेश, आदमी और उसकी जिन्दगीको देखकर यह कहा जा सकता है ये स्थूल और सतही दृष्टिका परिणाम हैं। उनकी संवेदना चीजोंकी जटिलतासे कहीं उलझती नहीं है। लगता है परिवेशकी मर्महीनता, आदमीके विक्षोभ और यातनाके बुनियादी कारणों और क्रूरतापूर्ण स्थितियोंसे लेखक सीधे-सीधे दो-चार नहीं हो सका है। मुठभेड़के इस अभाव की वजहसे इन कहानियोंमें चित्रित स्थितियाँ और आदमी की तकलीफ हमें कहीं भी विचलित नहीं कर पाती।

'उलझन' में दाम्पत्य-सन्दर्भोंके बीच स्त्री-पुरुषकी साधारण उलझनों और विसंगतियोंको विषय बनाया है। 'उजालेके उल्लू' में रुमानी प्रेमकी स्थिति है। कुलदीप और तोषके मध्य आपसी दुराव-छिपाव और गलतफहमियों के प्रसंग हैं। हल्की-फुल्की रुमानियत और पारस्परिक सन्देहके सूत्रोंको गूंथनेवाली भाषा बेहद सपाट है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'स्वराघात' में विषयकी संवेदनापर [illegible] सका है किंतु प्रस्तुत प्रसंग और तमाम ब्यौरोंके बीच उभरता व्यंग्य पर्याप्त नुकीला नहीं है। 'कछुए' में मनजीत के व्यक्तित्वका वह अध्ययन है जहाँ प्रत्यक्षतः वह स्वार्थी नजर आता है किंतु उसके मनमें अपने मित्रके लिए सच्चे स्नेहकी ऊष्मा है।

'कील' एक ऐसी कहानी है जिसमें एक रिटायर्ड पिता अपनी युवा-पुत्रीको गैर मामूली बताकर और 'बना' कर उसका विवाह सिर्फ इसलिए टालता है कि वह उसके बुढ़ापेके लिए एक सहारा है। इस यातनासे जूझती हुई लड़की अंतमें अपना स्वतंत्र निर्णय ले लेती है। 'ठंडक' में शहरके भागदौड़से भरे जीवनके बीच लेखकने कस्बेकी [illegible] के माध्यमसे मानवीय संवेदना और सहानुभूतिकी जीवंतताको रेखांकित करनेकी कोशिश की है।

दाम्पत्यकी उलझनों, पारस्परिक रिश्तोंमें व्याप्त सन्देह, प्रेमका आत्महंता आदर्श, व्यक्तिकी आत्महीनता, स्वभावकी जटिलता और शहरी आपाधापीकी मामूली स्थितियोंसे महीपसिंहकी कहानियोंकी दुनियां निर्मित हुई है। किंतु अपने विषयकी शिथिल पकड़, सपाट भाषा और अधूरेपनके कारण ये कहानियाँ बुनियादी उद्वेग और प्रखरतासे वंचित हैं।

— प्रसन्नकुमार ओझा

नाटक-एकाँकी

अब्दुल्ला दीवाना

लेखक : लक्ष्मीनारायण लाल; प्रकाशक : राजपाल एंड संज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली। पृष्ठ : ११३; क्राउन ७३; मूल्य : ६.०० रु.।

आजका हिन्दी नाटक पढ़कर इतनी आसानीसे नहीं समझा जा सकता जितना कि उसे देखकर समझा जा सकता है। 'अब्दुल्ला दीवाना' नाटक भी ऐसा ही है जिसकी सफलता-असफलताके संबंधमें कुछ कहना इसके प्रदर्शनको देखे बिना संभव नहीं है। इसीलिए नाटककार ने नाटकके प्रारंभमें निर्देशक और एक प्रबुद्ध दर्शककी टिप्पणियाँ प्रस्तुत की हैं।

इसका प्रदर्शन दिल्ली रंगमंचपर काफी चर्चित रहा क्योंकि दिल्ली प्रशासनने इसके कुछ प्रसंगोंपर आपत्ति की और मनोरंजनकरसे मुक्त करने से इंकार कर दिया।

'काफीहाउस में इंतजार' और 'दूसरा दरवाजा' जैसे सफल व्यंग्य एकांकियोंसे लेकर 'अब्दुल्ला दीवाना' तक नाटककार लालका व्यंग्य तीखा होता गया। लेखक के दिलमें छिपा आक्रोश सहसा बाहर निकल पड़ा। इस नाटकमें लालने किसी समस्याको न तो पेश किया है और न ही किसी समाधानको खोजनेका प्रयास किया है बल्कि निर्भीकताके साथ समाज और व्यवस्थासे जुड़े कुछ प्रश्नों के साथ खुलकर जूझनेका प्रयास किया है। नाटककार इस प्रयासमें कितना सफल है? यह प्रश्न दूसरा है। लेकिन इस प्रकारका प्रयास हिन्दी नाट्य साहित्यमें इससे पहले नहीं हुआ।

'अब्दुल्ला' हमारी नैतिकता, हमारे जीवन मूल्योंका प्रतीक है और व्यापक रूपसे यह हमारे देशकी चेतनाका प्रतीक है। इस नैतिकता और चेतनाको हमने महत्त्वाकांक्षाओंकी पूर्तिके लिए किये गये गलत कार्योंके दौरान बार-बार कुचला। स्वतंत्रताके बाद तो उसे कुचलकर रख दिया। साथही हम अनजान बने रहे कि हमने ऐसा नहीं किया हम तो पहलेसे भी अधिक ईमानदार, त्यागी और विश्व-शान्तिकी सेवा कर रहे हैं। वास्तवमें यह नाटक इसी वर्गका (बगुला भगतकी तरह) पोस्टमार्टम करता है जिसने अब्दुल्लाकी हत्याकर स्वयंको सत्यवादी हरिश्चन्द्र मान लिया है। नाटककारने भी एक-एक करके सभी पात्रोंके पाखंडका नंगा चित्र प्रस्तुत किया है जो झूठ, हत्या, चोरी, ढोंग और बलात्कार आदिके चमकीले रंगोंसे चमक रहा है। इस नाटकको देखकर (पढ़कर) ऐसा लगता है कि नाटककार (और कुशल निर्देशकने भी) ने ऐसे लोगोंके चेहरोंसे मुखौटे उतारकर उनके घिनौने चेहरे जनताको ही नहीं दिखा दिये बल्कि उन्हें भी दर्पणके सामने कर दिया।

आजका तथाकथित उच्च वर्ग मानता है कि अगर उसने तरक्की करनी है तो उसे तेजीसे भागकर 'अब्दुल्ला'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को 'जानबूझकर कुचलना' होगा। लेकिन फिरभी इसी वर्गको माना जाता है कि यह वर्ग 'हमारे समाजकी शोभा हैं..ये लोग न होते तो छब्बीस जनवरी, पन्द्रह अगस्त, 'न्यू इयर्स डे' सूना-सूना लगता'। और यह वर्ग 'अपने आराम, ऐय्याशी, लक्ज़री और फ्रीडमके नशेमें धुत्त' अब्दुल्लाकी हत्या करता है और दूसरोंको ऐसा करनेमें मदद करता है। फिरभी न्यायालयसे बिना किसी दागके छूट जाता है। क्योंकि हर एलेक्शनमें हर पार्टी, इनसे रुपये लेती है और इनकी 'गाड़ियां दौड़ायी जाती है।' इसीलिए इस वर्गके चारों ओर किसी मिनिस्टर या एम. पी. का कांटेदार जंगला लगा होता है और कोई भी आक्रमण इनपर नहीं किया जा सकता।

यह वर्ग शादीको एक 'ड्रामा' समझता है। 'पुरुष' कई सालोंसे 'स्त्री' से प्यार करके और उसे मां बननेकी हालत तक पहुँचाकर भी उससे शादी नहीं करता क्योंकि 'औरतेंसे वह ऊब चुका है'। अगर ऐसा वर्ग शादी करता भी है तो एक 'सर्टिफिकेट' को पानेकी तरह जिसे वक्त-बेवक्त पेश किया जा सके। वैदिक रीतिका विवाह तो अब एक ऐसा फ़िल्मी दृश्य बन गया है जहाँ नायिका शादीसे पहलेही मां बन चुकी होती है। 'डाइरेक्टर' और 'स्त्री' के संवादोंसे इसका स्पष्टीकरण होता है। सैक्सके मामले में यह वर्ग एक दम स्वच्छंद है। यहाँतक कि 'पुरुष' अपने बेटे 'युवक' की होनेवाली पत्नी 'युवती' से भी संभोग करनेमें संकोच नहीं करता। हाँ बादमें गीता अवश्य पढ़ लेता है ताकि प्रायश्चित भी हो जाये।

इस वर्गने व्यवस्थाको ऐसा बना दिया है कि कुछ वर्ग तेजीसे अमीर हो रहा है और कुछ वर्ग तेज़ीसे ग़रीब हो रहा है। क्योंकि अमीर होता हुआ वर्ग मानता है 'छोटी मछलियाँ बड़ी मछलियोंकी खुराक है।' इस व्यवस्थामें न्याय नहीं होता बल्कि 'नाटक किया जाता है। वही गोली चलाता है .....फिर वही जांच करता है।' और यह नाटक आम जनताको उल्लू' बनानेके लिए किया जाता है। इसीलिए नाटककार कहता है कि लोकसभा हो या राजनीतिक पार्टियाँ या राष्ट्रके नाम संदेश -- ये सब पौराणिक कथाओंके संवादोंकी तरह ही संवाद मात्र हैं। चपरासी, जो उच्च वर्गका एक राजदार भी है, उसके अनुसार पांच-पाँच रुपयोंमें गवाह मिलते हैं, और जज 'नौंटंकी करके मुल्जिमोंको फांसता है।'' इतना ही नहीं वह 'रूलिंग पार्टी' की दी हुई पट्टी बांधकर 'कमिटेज जज' बनकर उन्हींके आदेशोंसे न्याय करता है।

आजका युवा वर्ग भी अब्दुल्लाका हत्यारा है। इनका शादीसे पहले ही 'सब कुछ हो चुका' होता है और एल. एल. डी. का नशा इनसे सब कुछ करा देता है। आजके युवककी क्रांति 'गर्ल फ्रेन्ड्स, .., होटल बिस्तर... सिगरेट . ड्रिंक्स . फिल्म्स . सेक्स डाक्टर . दीवारें .. दवाइयाँ डैडी कज़िन ..आंट्स...नीस जोक्स' तक ही सीमित है। इससे आगे वह विद्रोह नहीं कर सकता। आजकी युवती पहलेकी 'सीता' या 'सावित्री' नहीं जो जो राम या सत्यवानको चाहेगी। उसे तो एक बर्बर 'जानवर' चाहिये जो उसे मारे-पीटे और झंझोड़ कर रख दे। यह वर्ग शादीको एक प्रयोग मानकर 'वल्गैरिटी' को ही अपनी मर्यादा समझता है।

इस समाज और व्यवस्थामें एक आम आदमी कुत्तोकी तरह भौंकही सकता है। लेकिन उसके भौंकनेको भी चुप करा दिया जाता है कभी लाठी मारकर और कभी बच्चोंकी तरह मिठाईका लालच देकर। और नहीं तो 'लिच्चर' (लेक्चर) रूपी शराब पिलाकर 'सपनोंकी दुनिया' में छोड़ दिया जाता है। आम आदमीके लिए 'गरीबी हटाओ' 'समाजवाद लाओ' का नारा ठीक 'लूप लगाओ' की तरह है। मानो गरीबी एक बच्चा है जो इन नारों रूपी निरोधसे पैदा नहीं होगा। आम आदमीका मतलब है एक वोटर 'जिसे रोज़ी-रोटीकी बात करनेकी आज़ादी है खानेकी नहीं। वह उस 'भयानक रेगिस्तान' में रह रहा है जहां प्यास है लेकिन पानी नहीं हाँ पानीका भ्रम अवश्य है।

इससे लगता है कि नाटककारने अपने देशकी आर्थिक, राजनीतिक अवस्थाको बहुतही सूक्ष्मतासे समझा और महसूस किया है। आज देशकी हालतको देखकर इससे अधिक सटीक व्यंग्य नहीं किया जा सकता : 'उस भयानक रेगिस्तानको पार करना जहाँ सिर्फ प्यास हो, पानी न हो, वहाँ पानीका भ्रम कितना पागल बना देता है, इसीलिए हम प्यासे भी हैं और पागल भी।'

इस नाटकके पात्र 'अब्दुल्ला' की हत्या होते हुए देखनेवाले गवाह भी हैं और स्वयं उसकी हत्या करनेमें मदद करनेवाले अभियुक्त भी। प्रत्येक व्यक्ति कहीं-न-कहीं स्वीकार करता है कि वह अब्दुल्लाके संपर्कमें आया है लेकिन उसने उसे मारकर एक नयेअ ब्दुल्लाकी स्थापना करने की कोशिश की— 'दुनियाँ हमें बेवकूफ बनाती है, हम उसे बेवकूफ बनायें — इसीका नाम नया अब्दुल्ला है।'' वास्तव में सभी पात्र नाटकमें एक न्यायका नाटक करते हैं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धीरे-धीरे वे स्वयं ही गवाह बन जाते हैं और तटस्थ होकर दर्शकोंकी स्थितिपर पहुँचकर आलोचकभी। इसी-लिए कोईभी पात्र अपने व्यक्तित्वको अन्य पात्रोंसे अलग नहीं कर पाता सभी एक दूसरेमें घुल-मिल जाते हैं। यही कारण है कि किसी पात्रका कोई नाम नहीं रखा गया। क्योंकि वह कोईभी हो सकता है।

इनसे लगता है कि नाटककारने आजके समाज और व्यवस्थाको लेकर काफी कुछ एकसाथ समेटना चाहा है लेकिन भाषाके फालतूपन और शिल्पकी शिथिलताके कारण बहुत कुछ इधर-उधर बिखर कर प्रभावहीन हो गया। कई संवाद तो केवल मीठी चुटकियाँ या फतवेबाजी तक ही सीमित रह गये जैसे "सीधे जाकर धीरे · जिधर से तेज़ खुशबू आने लगे, उसी ओर बढ़ जाइये———। (पृ. २९)। भोगमें वैराग्य; देखो मुझे नज़ला हो गया ना। (पृ. ३४)। बिना मुंहमें सिगार लगाये मुझे ऐसा लगता है जैसे मेरा 'जेन्डर' ही बदल गया'। (पृ. २९)। यह बदबू कहांसे आयी? किसे है गैस्ट्रिक ट्रबल? दरअसल कई हज़ारों वर्षोंसे इस मुल्ककापेट खराब है। (पृ. ३५)।" ऐसे स्थलोंका हास्य आरोपित लगता है और व्यंग्य बेअसर।

नाटकमें एक-एक शब्दका अपना अर्थ होता है। व्यंग्यका वाग्जाल भले ही क्षणिक हास्य या व्यंगकी सृष्टि करदे लेकिन उससे गहराई या स्थायी प्रभाव नहीं पैदा हो सकता। 'अब्दुल्ला दीवाना, नाटककी भाषा इन्हीं कारणोंसे नाटककी श्रेष्ठतापर प्रश्नचिन्ह लगा देती है। इसीकारण कई प्रसंगोंमें पात्रोंके वाद-विवाद कोई गहरा अर्थ व्यंजित नहीं करते। 'पुरुष' का आत्म-विश्लेषण (पृ ४१)सरकारी वकीलका अब्दुल्लाकी व्याख्या करना(४२) 'पुरुष' का पौराणिक पात्रोंको लेकर उनका मज़ाक उड़ाना (पृ. ६०) इस नाटकके साथ गहरे रूपसे जुड़े हुए नहीं जान पड़ते।

दूसरी ओर लेखक 'अब्दुल्ला'के अमूर्त्त रूपको कहीं भी ऐसे प्रसंगोंसे स्पष्ट करनेमें असमर्थ रहा है जिससे दर्शक (या पाठक) तीव्रतासे उसे अनुभव कर सके। साफ़-साफ़ कहा जाये तो लेखकने जिस व्यापक कथ्यको लिया है, उसीतरह उदात्त प्रसंगोंकी परिकल्पना नहीं कर सका। केवल छोटे-छोटे प्रसंगों - मृत लँगूरोंकी लाशपर झुककर उसे निहारते हुए (पृ. ४१) मूंगफलीकी दुकानपर देख कर (पृ. ४०) तंग ब्लाउज सिलवाती औरतको मना करता हुआ (पृ. ५८) उनके माध्यमसे अब्दुल्लाका रूप स्पष्ट नहीं हो सका। यहाँ असफल होकर लेखक सरकारी वकीलके द्वारा इसकी व्याख्याकर इसका सरलीकरण कर देता है। लेकिन यह सरलींकरण नाटकको प्रभावपूर्ण नहीं बना पाता।

इसीप्रकार स्थान-स्थानपर विविध भारती, एल. एस. डी, पी. एल. फोर्टी, फंडामेंटल राइट, अरबन सीलिंग आदिको 'नावकके तीर' कहकर पेश किया है लेकिन ये नाटकके साथ सहज रूपसे न जुड़े होनेके कारण अपनी वास्तविकता खो बैठते हैं। अतः दर्शकोंको 'गंभीर घाव' करनेका तो प्रश्न ही नहीं उठता।

सारा नाटक एक दृश्यपर आधारित है 'जजकी मेज-कुर्सी। उसके पीछे जूरीकी छः खाली कुर्सियाँ। सामने खुले मंचपर लकड़ीके कुछ आसन इधर-उधर रखे हैं।' यहाँ केवल प्रकाश-अंधकारके माध्यमसे दृश्योंमें परिवर्तन दिखाया गया है प्रदर्शनके समय अभिनेताओंकी भाव-भंगिमाओंके द्वारा स्थानबोध कराया गया है। सारा नाटक प्रतीकात्मक ढंगसे चलता हुआ आजके यथार्थको उद्घाटित करता है। इसके लिए नाटककारने तरह-तरहकी रंग-युक्तियोंका सहारा लिया है जैसे अदृश्य जूरीसे सलाह लेना, अदृश्य कुत्तोंको फटकारना, विवाहके समय परेड करना, अदृश्य बारातियोंका स्वागत, पुरुषका निःशब्द गीता प्रवचन और अंतमें सभी पात्रोंका जजकी कुर्सीके चारों ओर घूमना · इनका कुशलतासे प्रयोगकर लेखक अई जालिताओंसे ही नहीं बच गया बल्कि इनसे नाटकके कई प्रसंग अत्यंत महत्त्वपूर्ण बन गये हैं। यहां एक बात और कह देना असंगत न होगाकि यह नाटक कुछ इस प्रकार अनियंत्रित है कि अगर इसे कुशल निर्देशक न मिले तो बड़ा हास्यास्पद भी बन सकता है। और ठीक जगहपर पकड़कर इसकी संभावनाओंको उभारकर इसके व्यंग्यको तीखा भी बनाया जा सकता है। जिससे इस नाटककी शिल्प संबंधी कई कमज़ोरियाँ छिप सकती हैं।

— महेश आनन्द

कृष्ण मन्दिर

लेखक : एन. डी. कृष्णमूर्त्ति; प्रकाशक : भारतीय साहित्य मन्दिर, नाना दीक्षित वाड़ा, लैन बाज़ार, धारवाड़—१ (कर्नाटक)। पृष्ठ : ८३; मूल्य : २.०० रु.।

'कृष्णमन्दिर' तीन अंकोंका एक छोटा नाटक है, जिसके रचनाकार एन. डी. कृष्णमूर्त्तिकी मातृभाषा कन्नड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। अहिन्दीभाषी प्रदेशोंमें भी अनेक लेखकहिन्दी के सर्जनात्मक साहित्यके लेखनमें लगे हैं, यह प्रसन्नताकी बात है। प्रस्तुत नाटकमें नाट्यकलाका कोई नवीन प्रयोग तो नहीं है, पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह रंगमंचके लिए सर्वथा उपयुक्त नाटक है।

इसकी कथावस्तु सामाजिक है। सेतुराव नामक एक धर्मात्मा व्यक्ति अपनी स्वर्गीया पत्नीकी स्मृतिमें एक कृष्ण-मन्दिर बनवाते हैं। मन्दिरका खर्च चलानेके लिए उसके साथ लगी दुकानोंको किरायेपर दे दिया जाता है, जिनमें मणिलाल जैसे व्यापारी जुआ और सट्टा-व्यापार चलाते हैं। भीमराव और मणिलाल जैसे समाजके सम्भ्रान्त व्यक्ति, रामदास और नारायण अय्यंगार जैसे ठग साधु और मन्दिरके पुजारीके वेषमें जिसप्रकार भोले नागरिकोंको ठगते हैं और अपनी जेबें गर्म करते हैं, उसका रोचक अंकन 'कृष्ण मन्दिर' में हुआ है। युवक रामराव तथा सेतुरावकी पुत्री लीला समाज-सुधार का बीड़ा उठाते हैं तो रामरावकी हत्याका षड़यन्त्र रचा जाता है, जो नगर निवासियोंकी जागरूकताके कारण सफल नहीं हो पाता। कथावस्तुके विकासमें नाटकीयता, उत्सुकता, घटना प्रवाहकी निरन्तरता तथा यथार्थका आग्रह विद्यमान है। नाटकका अन्त बड़ा कलात्मक है। वहीं नाटकके उद्देश्यकी पूर्ति भी हो जाती है। धर्मकी आड़ लेकर जो लोग स्वार्थ-साधनामें व्यस्त हैं, उनपर कटु व्यंग्य करके नाटककारने समाजमें एक नवीन बौद्धिक चेतनाके प्रसारकी आवश्यकतापर बल दिया है।

'कृष्णमन्दिरका' नाट्य शिल्प परम्परावादी है। यदि इसे एकांकीके रूपमें लिखा जाता तो कथावस्तुके संकोच एवं नाटकीय तत्वोंके समावेशसे अधिक सफल होता। शीला एवं लीलाके अनावश्यक संवादोंको हटाया जा सकता था। यदि इसे स्वतन्त्र पूरा नाटक ही रखना था तो इसमें एक या दो अंक जोड़कर रामरावकी सुधार योजनाको अधिक स्पष्ट रूप दिया जा सकता था और देशकी अनेक सामाजिक, राजनीतिक समस्याओंका समावेशकर इसके चित्रफलकको व्यापक बनाया जा सकता था। तब नाटकका प्रभाव अधिक स्थायी होता।

वर्तनीकी कुछ अशुद्धियां नाटकमें अवश्य रह गयी हैं। सेतुरावको सर्वत्र सेतूराव लिखा गया है पर इस नाटकके गुणोंके आगे ये अभाव नगण्य हैं। प्रसन्नताकी बात है कि 'कृष्णमन्दिर' का प्रकाशन कन्नड़में भी होने जा रहा है।

—डॉ. सुधेश

रेजगारी का रोजगार

सम्पादक : श्री शिवरतन थानवी एवं पुरुषोत्तमलाल तिवारी; प्रकाशक : राजस्थान प्रकाशन, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर-२। पृष्ठ : १६६; डिमाई, ७३; मू. ६-०० रु.।

गतवर्ष १९७३ के शिक्षक दिवसपर शासन द्वारा 'रेज़गारीका रोज़गार' शीर्षकसे बीस रचनाकारोंके बाईस एकांकियोंका संग्रह प्रकाशित किया गया। इन एकांकियों के निर्माणमें एकही अभिप्रेरणा मूल रूपसे कार्य कर रही है — विद्यालयोंमें विभिन्न अवसरोंपर होनेवाले सांस्कृतिक और साहित्यिक कार्यक्रमोंके समय सरलतासे इन्हें मंचित किया जा सके। उपयोगितामूलक दृष्टिकी प्रधानता होने के कारण ही सभी एकांकी अपनी रचनाधर्मितामें सोद्देश्यपरक है और शिल्पमें भी अत्यंत सरल, स्पष्ट एवं अभिनय-सापेक्ष। प्रचारात्मक तीव्रताके कारण शिल्पका स्तर क्षतिग्रस्त अवश्य हुआ है।

बाईस एकांकियोंके इस संग्रहमें 'रेज़गारीका रोज़गार' (श्री त्रिलोक गोयल), 'अधूरी गजल' (कुन्दनसिंह सजल) पड़ोसी या मुसीबत' (सुश्री सत्यप्रभा गोस्वामी), 'आज की कक्षा' (कुमारी रमा जैन) और 'समझौता' (सुश्री हेमप्रभा जोशी) ये पांच प्रहसन हैं, जिनमें हल्के-फुल्के परिहासमय वातावरणके अन्तर्गत जीवनके अनेक छोटे बड़े चित्र, परिस्थितियां और समस्याओंको प्रस्तुत किया गया है। 'खुल्ले पैसे दीजिए' अथवा 'रेजगारी नहीं है', सौदा लेते समय यह वाक्य सुनकर रेजगारीके कृत्रिम संकटकी ओर हो जाता है, परन्तु इसके साथ ही सरकार की दायित्वहीनता भी उभरकर सामने आती है। पर एकांकीमें केवल चुनाओंकी दुधारू गाय व्यापारी पर ही चोट है। घनियामल' को दंडित करके लेखक ने इस प्रकार का अनैतिक व्यापार और समाज विरोधी कृत्य करने वालों के प्रति उचित व्यवस्था का विधान संकेतित किया है। 'अधूरी गजल' में एक कल्पनाशील कवि की गृहस्थी के अभावमय जीवन का यथार्थ चित्र है। 'पड़ोसी या मुसीबत' आजकी अभावग्रस्त जिन्दगीका खाका भी है और मध्यवर्गीय घरोंमें तीव्रतासे पनपनेवाली प्रदर्शनप्रियता अथवा जाहिरदारीको ध्वनित भी करता है। 'आजकी कक्षा' शैक्षिक वातावरणका बड़ाही जीवन्त और यथार्थ चित्र प्रस्तुत है। न तो छात्रमें ही पढ़नेकी अभिरुचि है और न ही अध्यापक पढ़ानेको इच्छुक। 'समझौता' में पति और पत्नीके बीच विभिन्न खिचावोंके मध्य दाम्पत्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दाम्पत्य सम्बन्धोंके नवीनीकरणकी आवश्यकताको प्रतिपादित किया गया है । टूटते-बनते सम्बन्धोंके बीच समझौतावादी दृष्टि अपनाकर —विघटनसे बचनेका प्रयास किया गया है ।

संकलनके शेष एकांकियोंको विचारधाराके आधार पर सामाजिक, राष्ट्रीय और पौराणिक वर्गोंके अंतर्गत परिबद्ध किया जा सकता है । सामाजिक विचारधारा-प्रधान एकांकियोंके अंतर्गत 'गांवसे दूर' (श्रीमती वीणा गुप्ता) 'और तूफान थम गया' (श्री नरेन्द्र चतुर्वेदी), 'दहेज' (श्री कुन्दनसिंह सजल), 'सुबहका भूला' (श्रीमती कमला भार्गव), 'जनता पुलिस एकता जिन्दाबाद' 'बड़ा कौन' (श्री गणपतलाल शर्मा), 'तार' (श्री दीनदयाल गोयल) को लिया जा सकता है ।

'गांवसे दूर' में आजकी बढ़ती हुई बेरोजगारीकी समस्या और उसके निदान (?) को प्रस्तुत किया गया है । 'और तूफान थम गया' में अभिजातवर्गीय वंशगत कुलीनता और उच्चताकी भ्रांत मानसिकताको खडित होते हुए दिखाया है । 'दहेज' में प्रतिपादित किया गया है कि युवा पीढ़ीको अपने अभिभावकोंकी लोभवृत्तिका दृढ़तापूर्वक विरोध करना चाहिये । 'सुबहका भूला' अभिजातवर्गीय जीवन पद्धतिपर गहरा व्यंग है । 'जनता-पुलिस एकता जिन्दाबाद' में पुलिस और जनताके मध्य आतंक और अविश्वासके स्थानपर विश्वास और सहयोगकी भावनाका प्रतिपादन किया गया है । 'बड़ा कौन' में आजके वृक्ष, लेटर बाक्स और प्रकाश स्तभकी नवीन प्रतीक व्यंजना द्वारा बडप्पन अथवा महानताको परिभाषित किया गया है । 'तार' में अशिक्षाके कुपरिणाम का निदर्शन है ।

राष्ट्रीय विचारधारा-प्रधान एकांकियोंके अन्तर्गत 'विकासके पथपर' (श्री चन्द्रमोहन हिमकर), 'जलता चिराग' (अमोलकचन्द जांगिड), 'जय यात्रा' (राधामोहन जोशी), 'चुनौती' (नाथूलाल चोरडिया), 'देशका मोह' (मंडलदत्त व्यास), 'हड़ताल' (रमेश भारद्वाज), 'सेना और साहस' (सुरेन्द्र आंचल), 'अंतिम बलिदान' (देवप्रकाश कौशिक)' और 'हम सब एक हैं' (गणपतलाल शर्मा) को अधिगृहीत किया जा सकता है । 'विकासके पथपर' राष्ट्र तभी त्वरित गति से अग्रसर हो सकता है, जब सभी राजनीतिक दल, शासकीय कर्मचारी और जनताके सभी अन्य वर्ग अपनी समस्त संकीर्णताओंको भुला एकजुट होकर राष्ट्र-निर्माणकी प्रतिज्ञा करें । 'जलता चिराग' और 'सेना और साहस' ऐतिहासिक कलेवरमें राष्ट्रीय स्वाभिमान, गौरव और साहसको प्रतिष्ठित करते हैं । 'जययात्रा' और 'चुनौती' में राष्ट्रीय संकटकी घड़ियोंमें जमाखोरों, मुनाफाखोरों और मिलावटियोंके काले कारनामोंका भंडाफोड किया गया है । 'हडताल' में आये दिनकी हडतालोंकी अव्यावहारिकता और अवांछनीयता प्रतिपादित करते हुए स्पष्ट किया गया है कि राष्ट्रीय संपत्तिकी हानि हमारी अपनी व्यक्तिगत हानि है । 'अंतिम बलिदान' में मृत्योपरांत नेत्रोंके दानकी उत्कट भावनाको अभिव्यंजित करते हुए आह्वान किया गया है । 'देशका मोह' भी इसी मान्यताका प्रतिपादन करते हुए सांप्रदायिक सौमनस्यकी भावना परिपुष्ट करता है । 'हम सब एक हैं' में शरीरके विभिन्न अवयवोंके माध्यमसे यह प्रतिपादित किया गया है कि जिसप्रकार शारीरिक सौष्ठव विभिन्न अवयवोंके उचित समायोजन और सहयोगपर निर्भर है, उसीप्रकार राष्ट्रके समुन्नयनमें राष्ट्रके प्रत्येक जनका सहयोग परमावश्यक है । इस एकांकी-संग्रहमें 'जैसा करोगे वैसा भरोगे' एकमात्र ऐसा एकांकी है जिसमें पौराणिक नीति-सिद्धांत का प्रतिपादन किया गया है कि पापका फल बुरा और पुण्यका फल अच्छा होता है । छापेखानेकी कुछ अशुद्धियां रह गयी हैं ।

—डॉ. यदुवीरप्रसाद भटनागर

काव्य-संकलन

एकान्त

कवि : नेमिचंद्र जैन; प्रका. भारतीय ज्ञानपीठ, बी/४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१ । पृ. १२६; डिमा. ७३; मू. १०.०० रु. ।

तार-सप्तकके एक प्रसिद्ध कवि श्री नेमिचंद्र जैनके इस काव्य-संकलन 'एकान्त' की सार्थकताको रेखांकित करते हुए पुस्तकके आवरण-पृष्ठपर मुद्रित वक्तव्यमें कहा गया है : "प्रस्तुत संग्रहमें १९३७ से लेकर १९६७ तकके तीन दशकोंके बीच लिखी गयी कुछ चुनी हुई कविताएं एकत्र है । इन दशकोंमें हिन्दीके कविको जिन तनावपूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिस्थितियोंसे दो-चार होना पड़ा है, और हिन्दी कविता के मिज़ाज और तेवरमें जो क्रमिक अन्तर आया है, उसका अत्यंत सबल और दिलचस्प प्रतिबिम्ब नेमिजीकी कविताओंमें मिलता है। इस रूपमें 'एकान्त' एक पूरे युगका अत्यत मूल्यवान् और प्रामाणिक दस्तावेज़ है।"

इस वक्तव्यका अनुसरण करते हुए मैं यह तो नहीं कहूँगा कि नेमिजीकी इन कविताओंमें हिन्दी कविताके पिछले तीन दशकोंमें आये प्रत्येक मिज़ाज और तेवरका प्रतिबिम्ब मिलता है; –क्योंकि तब यह मानना होगा कि उनकी कविताओंका अपना कोई एक खास मिज़ाज और तेवर नहीं है, जिसके आधारपर भीड़से अलग उनके पृथक् अस्तित्वको पहचाना जा सके। दरअसल, नेमिजीको कुछ उन कवियोंकी पंक्तिमें शामिल नहीं किया जा सकता जो हर नये काव्य-आन्दोलनसे अपनेको जोडकर हर नये प्रवाहमें बहकर हर फैशनकी कविताएं लिखकर हर युग में पाँचवें सवारके रूपमें अपना नाम लिखानेको उत्सुक रहते हैं। यदि ऐसी स्थिति न होती तो अबतक उनके न जाने कितने काव्य-संकलन प्रकाशित हो गये होते। वस्तुत: ऐसा लगता है कि पर्याप्त सर्जनात्मक दबाव होनेपर ही नेमिजीने अपनी अनुभूतियोंको कविताका रूप दिया है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि नेमिजीकी इन कविताओंमें न तो असंयत भावोच्छ्वास कहीं दिखायी देता है और न छद्म आक्रोशकी वे मुद्राएं कहीं नज़र आती हैं जिनकी परिणति बनावटी बड़बोलेपनमें होती है। परिणामत: उनकी भाषा सधी और सन्तुलित है, जो मन्थर गतिसे एक सावधान विश्लेषककी भाँति आगे बढ़ती है।

सुनो
तुम आँख मत मूंदो
अपने ही प्राणोंके जलते उस सत्यसे
भागो मत
आजभी बेकल हो तुम
उसी प्रीतिसे
कवच यह तुम्हारा सब झूठा है
शान्ति सन्तोष सब आड़ है, दिखावा है
मिथ्या हैं तुम्हारे सब माया-मन्त्र
और सब प्यारभी छल है, बहलावा है।

इस उद्धरणसे जहाँ एक ओर कविकी सधी-संतुलित विचार-मन्थर भाषाका बोध होता है, वहाँ दूसरी ओर इस बातकाभी कि वह सत्यके नंगे रूपका साक्षात्कार करने को प्रतिबद्ध है। नेमिजी भाषाके माध्यमसे न तो अपनेको छलना चाहते हैं और न दूसरोंको। उनके लिए तो भाषा एक ऐसा साधन है, जिसका इस्तेमाल करके सत्यको उजागर किया जा सकता है।

सत्यको उजागर करनेके सिलसिलेमें कविकी खोज-यात्रा मनके एकान्त अंधेरे कोनेसे लेकर परिवेशके बाह्य विस्तारतक बराबर जारी रही है। इस यात्रामें कविको प्राय: टकराना पड़ा है – कहीं अपनेही अन्त:स्थित संस्कारों से और कहीं परिवेशकी बाहरी काली-कठोर दीवारोंसे। कहीं-कहीं तो ऐसा लगता है कि इस यात्रामें मंजिलको खोजते-खोजते कवि खुद भटक गया है और भयावह अकेलेपनने उसे चारों ओरसे जकड़ लिया है :

कहो मत कि तुम स्वप्न ही हो
अचेतन
जिसे खोजता-खोजता मैं स्वयं
खो गया हूँ
सुलगते हुए बाँसके जंगलोंमें
मृगी प्राणकी
घिर गयी है अकेली
सुरभिमत्त हो
किस तृषासे तृषित
किस व्यथासे तृषित
जो भटकती रही जो भटकती रही—

इस अकेलेपन और भटकनकी व्यथाके बावजूद, नेमिजीकी कविताओंमें संघर्ष चेतना आद्यंत विद्यमान है। वे अपनी पलायन चेतनासे भी जूझते हैं [द्रष्टव्य – 'आगे गहन अंधेरा है'], और उस शोषक वर्गको भी ललकारते हैं, जो सामाजिक विषमताका मूल कारण है [द्रष्टव्य : 'हम न सुनेंगे गीत तुम्हारे'], कविका यह दृढ़ विश्वास है कि कठोर संघर्षके बिना इस निर्मम सामाजिक व्यवस्था के चक्रव्यूहको तोड़ा नहीं जा सकता :

पर क्या सचमुच भाग सकोगे ?
बिना लड़े क्या तोड़ सकोगे
चक्रव्यूह यह
ये प्राचीरें ?
आज जूझना ही होगा
चाहे अनचाहे,——

नेमिजी मूलत: अन्तर्द्वन्द्वके कवि हैं। उन्होंने ईमान-दारीसे आत्म-विश्लेषण किया है और उसीको कविताका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जामा पहना दिया है। इसलिए इन कविताओंको आत्मा-न्वेषणकी कविताओंकी संज्ञाभी दी जा सकती है। जरूर, 'आत्मान्वेषण' से यहाँ यह मतलब नहीं निकाला जाना चाहिये कि कविने आत्मेतर दुनियांका बहिष्कार किया है। सही बात तो यह है कि नेमिजीने इस आत्मेतर दुनियां को अपने आत्मकाअंग बनानेके बाद ही अपनी कविताओंमें प्रस्तुत किया है। नेमिजी तो यह मानते हैं और ठीकही मानते हैं कि 'केवल अपने प्रति सच्चा रहकर ही सम्भव है कि किसी क्षणमेंवह किसी वृहत्तर सत्यसे साक्षात्कार करके उसका प्रवक्ताभी बन सके।"

बातको अधिक विस्तार न देते हुए, अंतमें यही कहना मुनासिब होगा कि इन कविताओंमें कविके विशिष्ट चेहरेके साथ-साथ हमारे अपने चेहरेकी रेखाएं भी कुछ न कुछ जरूर उभरी हैं। हम चाहें तो इन कविताओंके दर्पणमें देखकर अपनेको भी पहचान सकते हैं।

गेट अप, छपाई, सफाई आदिकी दृष्टिसे भी पुस्तक सुरुचिपूर्ण है।

—दुर्गाप्रसाद झाला

चांदके दाग

रचयिता : कमर मेवाड़ी; प्रका. : संबोधन प्रकाशन, कांकरोली (राजस्थान)। पृष्ठ : १०४; क्राउन ७०; मूल्य : ३.५० रु.।

यह गीत-संग्रह कविकी दृष्टिमें उदास क्षणोंसे संबद्ध है। यहां कविकी उदासी, अजनबीपन, बेवसी, कुंठा आदि के चित्र सहज उपलब्ध हैं। कवि अपनेको 'दो ध्रुवांतरोंके बीच लटका हुआ' मानता है। वह टिटकारी मारता है तो उफनता हुआ दरिया ठंडा पड़ जाता है। कापीपर बने ग्राफकी भांति चेहरेकी रेखाएं चिंताका विषय हैं। कवि नये कविके अंदाजमें अपनी बात कहता है -

इस दिगंबर संसारमें/ प्रस्तावपर प्रस्ताव/ झूठी और बेबुनियाद दलीलें/ और खोखले समर्थन/ पर्त दर पर्त/ प्याजके छिलकेकी तरह जमे हुए हैं/ हमारा चिर बुभुक्षित अहम्/ बर्फकी तरह ठंडा हो गया है/ और हम क्लीव बन, निरुद्देश्य/ इधर-से-उधर भटक रहे हैं [पृ. १३] 'प्याज के छिलकेकी तरह' उपमान कविकी दृष्टिमें कदाचित नया उपमान है।

कविका व्यंग्य सपाट व्यंग्य है। यथा, मुझे दुख होता है/ जब मैं देखता हूँ/ कि सबसे छोटा 'पप्पू' अमेरिकन गेहूँसे बनी/ रोटीके टुकड़ेको/ सबकी नजरें बचाकर/ बड़ी फुर्ती और सावधानीके साथ/ खिड़कीके रास्ते/ नीचे फेंक देता है/ और पड़ौसके दो कुत्ते/ उस टुकड़ेकी खातिर/ झपटते झगड़ते हैं/ फिर बारी-बारीसे उसे सूंघकर/ बिना खाये ही/ अपनी अपनी दिशाको चले जाते हैं (पृ. १६)।

कवि 'रिक्थ' अथवा प्राचीन विरासत माननेको तैयार नहीं है / वह कहता है —भुलादे/ समस्त संसारकी बीती बातोंको / लोगोंके भरमायेमें मत आओ/ ढहादो/ आदर्शो के सभी स्तंभ/ और मिटा दो पुरानी लीककी टेकको / खड़ी करो/ नये विचारोंकी नई दीवार/ जिसपर तुम/ वर्तमानका महल निर्माण करने जा रहे हो। (पृ. ९)/ वह यह मानकर चलता है कि पूरीकी पूरी पीढ़ी ही विपर्यस्त है-- हम सब ध्रुवांतरोंके आर-पार बलात्कार कर रहे हैं/ गालियोंको गुलमोहर फूलकी तरह बांटते हैं, स्वार्थमें लिप्त रहते हैं। कविकी विकृत रुचि ऐसे दृश्योंपर रमती है - एक कुंआरी नर्सने अस्पतालमें बच्चा जना (पृ. १०२)। बंबईके एक गटरमें/ किसी तरुणीकी/ विवस्त्र लाश मिली (पृ. १०३)। मैं वहां (घरमें खड़ा हुआ) नग्न हूँ (कृपया स्त्रियाँ क्षमा करें)/··· मैं सबको देखता हूँ/··· मैं संतुष्ट हूँ अपनी नग्नतासे/ .. आपभी मेरी तरह नग्न खड़े रहें/ ताकि दुनियांकी निगाहें/ आपतक न पहुँच पायें (पृ. ७९)। इत्यादि।

कविकी घुटन आजके लोगोंकी घुटनका परिचायक है - कितना व्यर्थ हो गया है जीना/ शताब्दीकी शताब्दी रो रही है आज/ अपनेही पांवोंपर कुल्हाड़ी मार रहे हैं सब/ ..(पृ. ५३)। कविकी स्वीकारोक्ति कलतक हम आदमी थे/ आज जानवर हो गये हैं/ कलतक हम थे/ आज हमारा अस्तित्व भी नहीं है (पृ. ९०), सबपर लागू है। कवि सांप्रतिक जीवनको निकटसे देखता है पर नवता के दुराग्रहके कारण कहीं-कहीं असंगत एवं अमर्यादित हो जाता है। निस्संदेह कविमें नवित भाव बोध है, समाजकी असंगति या विसंगति दूर करनेकी छटपटाहट है, भाषाकी शक्तिपर ध्यान है पर कुल मिलाकर वह यहाँपर उखड़ा-उखड़ा मालूम पड़ रहा है। 'चांदके दाग' को अपनेमें, अपने अड़ोस-पड़ोसके लोगोंमें देखकर हतप्रभ है, विस्मय-विमुग्ध है।

—स्वर्णकिरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुक्तिगंधा

कवि : सोहनलाल द्विवेदी; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३ दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : ११७; डिमाई ७२; मूल्य : ८.०० रु.।

'मुक्तिगंधा' हिन्दीके यशस्वी राष्ट्रीय कवि श्री सोहनलाल द्विवेदीकी स्वतन्त्रता-प्राप्तिके पश्चात् लिखित सैंतीस ओजस्वी कविताओंका संग्रह है। इन कवियोंमें भारतीय जनताका दुख-दर्द समाया हुआ है। भारतकी निर्धन, पर स्वाभिमानी जनताने स्वतंत्र देशका जो स्वप्न संजोया था; वह साकार नहीं हुआ। राष्ट्रीय स्वाधीनता प्राप्तिके पश्चात् पच्चीस-वर्ष बीत जानेके बादभी देशकी आर्थिक स्थितिमें सुधार नहीं हुआ। जन-साधारणकी दशा बदसे बदतर ही हुई। कविने भारतकी सामान्य जनताके जीवनको 'मुक्तिगंधा' में चित्रित किया है तथा उसकी निराशा व आक्रोश-भावनाको मुखरित किया है। कविका दृष्टिकोण यथार्थवादी है। उसने अपनी बात बड़ी स्पष्टता और निर्भीकतासे कही है। 'मुक्तिगंधा' का कवि भारतके करोड़ों अभावग्रस्त और त्रस्त नागरिकोंका प्रतिनिधित्व करता दिखायी देता है। उसकी अभिव्यक्ति भी तदनुरूप सरल व जनवादी है। इस दृष्टिसे 'मुक्ति-गंधा' की अपनी काव्यात्मक सार्थकता है। संग्रहका प्रथम गीत 'जागरण गीत' - हमें यथार्थ भूमिपर प्रतिष्ठित करता है :

कल्पनामें आजतक उड़ते रहे तुम
साधनासे सिहरकर मुड़ते रहे तुम;
अब तुम्हें आकाशमें उड़ने न दूंगा
आज धरतीपर बसाने आ रहा हूँ।

कवि भारतीय जनताकी सम्मान-रक्षाको सर्वोपरि मानता है :

दासता इंसानकी करनी नहीं है
दासता भगवानकी करनी नहीं है;
वन्दनामें मैं तुम्हें झुकने न दूंगा
वन्दनीय तुम्हें बनाने आ रहा हूँ।

आज देशका नेतृत्व धन-कुबेरों, व्यापारियों और भ्रष्ट बुद्धिजीवी वकीलोंके हाथोंमें है। जनताकी संस्था कांग्रेसके बड़े-बड़े नेता ऐसे ही लोग हैं। उन्हें ही या उनके गुर्गोंको चुनावके लिए टिकट मिलते हैं; और फिर वे ही सत्तारूढ़ होते हैं; विधायक बनते हैं, उपमंत्री-मंत्री बनते हैं। ऐसे लोगोंसे क्या आशा की जा सकती है? जनतंत्र, गांधी-नेहरू, समाजवादी समाज-व्यवस्था आदिके नारे लगाकर ये लोग निर्धन व अर्द्ध-शिक्षित जनताका घोर शोषण कर रहे हैं। अपने बंगले और कोठियां भर रहे हैं। देशकी सारी समृद्धि इन्हींके घरोंमें जाती है। प्रशासन पर इनका आतंक है। तभी तो कविने कहा है :

क्या तुमने पूछा कभी हमें क्या चाहत है?
क्या तुमने पूछा कभी, हमें क्या राहत है?
क्या खाते हम, क्या पीते हम
यह हृदय हमारा कहाँ-कहाँपर आहत है?
× × × ×
क्या तुमने पूछा कभी हमें गेहूं मिलता,
कितनी कीमत देकर हम उसको लाते हैं?
क्या तुमने पूछा कभी हमें शक्कर मिलती,
कितनी मुसीबतें झेल उसे हम पाते हैं?

'युगबोध अभिशप्त' प्रस्तुत संग्रहकी सर्वोत्तम कविता है। 'यह कैसा जनतंत्र' में व्यंग्यका सहारा भी लिया गया है।

हंस कर रहे आज वन्दना
तिमिरावती उलूककी,
सरस्वती कर रही अर्चना,
लक्ष्मीपुत्र अबूककी;
है समस्त साहित्य निछावर
राजनीतिके पांवमें,
सत्य बन गया है शरणार्थी
इन झूठोंके गाँवमें।

कवि इन भ्रष्ट राजनीतिज्ञों, जमाखोरों और शोषकों को सचेत करता हुआ कहता है 'क्या आनेवाली आँधी का तुम्हें न कुछ आभास रे!' हाँ आनेवाली आँधीकी इन पद-लोलुप व धन-मदमें चूर नेताओंको कोई चिन्ता नहीं है। उनके हाथ बहुत लम्बे हैं। वे आनेवाली क्रांति को कुचल देंगे। उनके पास कभी समाप्त न होनेवाले साधन हैं। प्रेस हैं, अखबार हैं, धन है, छल-बल है, गुण्डे हैं। बड़ी निर्लज्जताके साथ वे शासन कर रहे हैं।

कहना न होगा, इस सबके बावजूद, 'मुक्तिगंधा' की काव्याभिव्यक्ति इतनी सशक्त नहीं है (बहुत थोड़े अंशको छोड़कर) जो शोषितोंमें उत्तेजना भर सके। वे इन कवि-ताओंको पढ़कर या सुनकर प्रभावित हो सकें। इसका कारण रचनाओंका सतहीपन है। कहीं तीव्र भावावेशका अभाव है, तो कहीं भाषाका लंगड़ापन है। कविताओंमें कसावटकी कमी है। अभिव्यक्तिमें काफी बासीपन है। 'मुक्तिगंधा' की कविताओंका अल्पमोली जन-संस्करण अपेक्षित था। व्यर्थ इतना बढ़िया कागज खराब किया।

— डॉ. महेन्द्र भटनागर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीत सौरभ

संपादक : ठाकुर भूपतिसिंह; प्रकाशक : नवसाहित्य प्रकाशन समिति, पाटन, जबलपुर (म. प्र.)। पृष्ठ : ६२; का. ७३; मूल्य : २.५० रु.।

यह कुछ ज्ञात-अज्ञात हस्ताक्षरोंका प्रकृति संबंधी गीतोंका संकलन है जिसका उद्देश्य है प्राकृतिक सौंदर्य का उपभोग करना। संपादक महोदयका निवेदन है कि प्रस्तुत संकलन प्रकृति सुषमा एवं ऋतु वैविध्यके स्वरोंसे गुंजित है। यहां सम्मिलित कवि सामयिक युग-बोधके प्रति सचेत हैं। कविका निवेदन अतिरंजित नहीं दीखता। प्रकृतिके स्वतंत्र आलंबन रूपके प्रति आकर्षण सहज स्वाभाविक है। उपमा उत्प्रेक्षा, रुपक आदि विभिन्न अलंकारोंका सहारा लेकर कवियोंने अपने कथ्यको निवेदित किया है। संकलनका प्रारंभ 'बच्चन' के शरद-पूर्णिमा वर्णनसे है जोकि 'जाल समेटा' संग्रहसे साभार गृहीत है पूरे चांदकी यह रात/ जैसे भूमिको हो स्वर्गकी सौगात/ (पृ. ५)। नर्मदाप्रसाद खरेके गीतमें लोकगीत की मीठास है —

पीपलकी फुनगीपर, मन मेरा डोल रहा/ कजरारे मेघोंका छंद-छंद बोल रहा/ कनखीसे झांको ना, रूप रीझ जाएगा/ फागुन बौराएगा, पुलक-पुलक गाएगा/ (पृ. ६)।

विट्ठलभाई पटेलके मौसमका गीत सिनेमासे प्रभावित है जोर ये हवाका है/ जोर ये हवाका है/ अंबरसे धरतीतक/ लगता तवा-सा है। झरना ही जीवनका सार! (पृ. ५६)

चंद्रसेन विराट्की गीतपरक कविता 'घनी दोपहरी' में नया भावबोध एवं उत्प्रेक्षाका चमत्कार स्पष्ट है -

घनी दुपहरी हो गयी, पीड़ा दुहरी हो गयी,
अंतसकी आदिम गुहा, ज्यादा गहरी हो गयी,
डूब उदासी ऊबमें, दुहरी तिहरी हो गयी,
पीकर प्राणोंका लहू, धूप सुनहरी हो गयी,
कौन सुनेगा अश्रुकी, दुनियां बहरी हा गयी,
गीत, लौट चला, न्यायकी बंद कचहरी हो गयी।
(पृ. १७)

जयकुमार शीतलके गीतमें नये प्रयोग हैं— केसरसी दिन/ फूलों-सी साँझ/ पेड़ोंने सुरमयी/ साड़ी ली बाँध (पृ. २५)। महेंन्द्रकुमार दुबेके गीतोंमें साँप्रतिक काल-बोध एवं व्यंग्यकी स्पष्टता है —

उत्तरसे दक्षिणतक, पूरवसे पश्चिमतक
उजियारेकी बूंद बूंद अँधियारा लील गया
राजनीतिके पलने सोई प्रगति हमारे देशकी
वादोंकी लोरीमें खोयी गीत हमारे मीतकी,
अवसरका कौआ देखो हाथसे रोटी छीन गया।...
(पृ. ४२)।

नरेंद्र 'चंचल' का मुक्तक गीत 'ओ विद्रोही कलम उठा' वर्णनात्मक एवं सहज बोधगम्य है—हिंसा हत्या छल प्रपंचकी जगमें आग लगी है/ दानवता विकराल रूपसे फिरसे आज जगी है (पृ. ६८)।

संग्रहमें अज्ञात अथवा अर्द्धज्ञात हस्ताक्षरों—गीतकारोंके गीत प्रायः पारंपरीण हैं, छंदः दोषके साथ हैं और उनके माध्यमसे न तो प्रकृतिका कोई नया रूप दृग्गोचर होता है न प्रकृतिकी विच्छित्ति या विशेषताकी प्रतीति होती है। पृष्ठभूमि, दूतिका, शिक्षिका, अलंकरण आदि विभिन्न रूपोंमें प्रकृतिका आकलन कदाचित् संकलनकर्त्ता का अभिप्राय है। रसवत्तापर ध्यान है और यह सामान्य पाठकोंका ध्यान खींचनेमें संभव है, सक्षम हो।

—स्वर्णकिरण

बिरवाके पात

रचयिता : ध्रुव मिश्र; प्रकाशक : लेखक (पुलिस विभाग, मणिपुर)। पृष्ठ : ४४; मूल्य : सहानुभूति।

'बिरवाके पात' हिंदी जगतके अज्ञात कवि ध्रुवमिश्र की प्रारंभिक कविताओंका एक संग्रह है। कवि कविता को अपने अस्तित्वमें हुए भयंकर घावका सड़ा-गला, लाल-पीला स्राव समझता है जो कविकी कदाचित् विकृत रुचि, विपर्यस्त स्वाद (Perverted taste) का परिचायक है (द्रष्टव्य, प्रस्तावना)। कवि प्रेमिकाके वियोगमें अपने को दग्ध पाता है और प्रेमिकाकी प्रतीक्षा करता है। कालिदासके यक्षकी तरह मेघको दूत बनाकर संदेश भेजने को शायद कटिबद्ध है यह कहते हुए कि —बीत गया/ एक साल और ..../ ओ मेघदूत/ तुम ना आये। (पृ. १)। प्रेम-यज्ञने कविको अस्तव्यस्त कर दिया है कवि स्थितप्रज्ञ चाहकरभी नहीं हो पाया। कवि कहत है —

मेरे गांवके पूरब
बगियासे सटा हुआ
एक पनका कुआँ है—
तुम्हारे स्मरणका
संताप झेलता हूं... (पृ. ४)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविके अंतर्मनमें नवताका दुराग्रह है। कदाचित् यही कारण है कि संध्याका वर्णन गर्भिणी सुबहके गर्भपात करनेके रूपमें करता है -गर्भिणी सुबह आती/ कुक्षिमें लिये/ आशाका अंकुर/ आत्मसात् / संध्याका रक्तिम पट/सूचित कर देता है। गर्भपात (पृ. ५)। अथवा सुबह या प्रभातका चित्र सूरजके एकबूंद खूनवाले पेशाबके रूपमें करता है लाल सूरज प्रभातका / एक बूंद खून/ पेशाब करके भागी/ रजस्वला रातका (पृ. ७)। सुबह को रतिरत, जेठकी चाँदनीको गंदी अस्नात रजस्वला मजदूरनी आदिके रूपमें प्रस्तुत करनेके पीछे निश्चयही कविकी सांस्कृतिक-चेतनाकी निष्क्रियताका सूचक है।

कवि प्रयोगवादी है। स्थान-स्थानपर कविने नये प्रगोग किये हैं। उदाहरणार्थ,...

मैं अकेला (मारा मारा)/ फिर रहा हूं/ और/ थककर/ मूंगफलीके छिलके-सा (बेचारा) यहाँ-वहाँ गिर रहा हूँ। (पृ. १३)।

सुबह/ आगयी/ वारंटकी तरह/
दोपहर/ किसी बदमाश जैसी/ चढ़ गयी सर—।
साँझ/ बुढ़ियाके स्तनसी/ ढली हुई, बाँझ—।
(पृ. २०)

X X X

तुम्हारे साथ 'श्री ए सेज' में बैठ
फ़िंगर बाउलमें अंगुलियां धोता
बंधारसे लौटती गायोंकी ठोकर उड़ी
धूलिका किसी घासकी फुनगीवर
बैठ जाया करता हूँ। (पृ. २४)

गज़लों और गीतोंमें कविकी निहायत व्यक्तिगत अनुभूति व्यक्त हुई है। कवि 'ब्रेस्ट कांसस हैं' सपनोंके टूट जानेपर उदास-उदास/ नयी रुचिके लोगोंको संभव है, संग्रहमें कुछ नये बिंब मिल जायें पर कुल मिलाकर संग्रहकी कविताएं शिष्ट पाठकोंके लिए वस्तुतः चिंताका कारण हैं।

—स्वर्णकिरण

शाहिका

कवि : अखिलेश कुमार शाही; प्रकाशक : प्रेस, सर्विस ऑफ़ इण्डिया, पटना-४। पृष्ठ : ३२; डिमाई ७३; मूल्य : १.७० रु.।

'शाहिका' एक लम्बी प्रेम कविता है। कविता ऋतु-कान्त मुक्त छंदमें निबद्ध है। रचनामें काव्य-गुणोंका अभाव है। प्रूफ़की अनेक अशुद्धियां हैं। मूल्य बहुत अधिक है!

कुछ कविताएं : कुछ कहानियां

लेखक : प्रेमप्रकाश गौतम; प्रकाशक : नीराजना प्रकाशन, दिल्ली। पृष्ठ : ८२; क्राउन ७३; मूल्य : ५.०० रु०।

'कुछ कविताएं : कुछ कहानियाँ' पुस्तिकामें लेखक की बीस कविताएं और छह कहानियाँ संकलित हैं। यद्यपि रचनाएं साधारण कोटिकी हैं; पर लेखकमें विकासकी सम्भावनाएं हैं। पुस्तिका मूल्य बहुत अधिक रखा गया है।

—श्रीमती कमलेश

हास्य-व्यंग्य

दंतकथा

लेखिका : श्रीमती शांति मेहरोत्रा; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, कनाट प्लैस, नई दिल्ली-१। पृष्ठ : १४३; क्राउन १९७२; मूल्य : ७.०० रु.।

प्रस्तुत संग्रहमें कुछ हास्य-व्यंग्य कहानियाँ और कुछ कहानी जैसे मनोरंजक ललित निबंध संगृहीत हैं जिनकी संख्या १७ है। इन कहानियों और निबंधोंका हास्य और व्यंग्य पाठकको प्रारंभसे अंततक बाँधे रखनेमें सक्षम है। हिंदीमें हास्य-व्यंग्यके नामपर कुछ फूहड़मिजाज लेखकों द्वारा जो बेतुका साहित्य रचा जा रहा है. यह संग्रह उससे बिल्कुल भिन्न प्रकारका है। संग्रहमें हास्य-व्यंग्यकी जो गहरी पैठ है वह अपने आपमें अनुपम है। हास्यकी साहित्यिकता और व्यंग्यकी तीक्ष्णतामें भरी हुई मधुरता बरबस आकर्षित कर लेती है। एक विशेषता औरभी है—संग्रहको बार-बार पढ़नेपर भी मन भरता नहीं है।

आजके जीवनमें व्यंग्यका एक विशेष क्षेत्र बन गया है—राजनीतिक बिडंबनाओंका अंकन, परंतु प्रस्तुत संग्रह में साधारण जीवनमें घटनेवाली घटनाओंकी विसंतियों और घरेलू जीवनकी स्थितियोंको हास्य-व्यंग्यका माध्यम बनाया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'गाथा कुल दीपककी' परिस्थितिजन्य हास्यका अच्छा उदाहरण है जिसमें रामरतन किसीप्रकार भगवानके दर्शन करके अपने पुत्रके लिए प्रारंभसे ही पूर्ण विकसित बुद्धिका वर मांगता है। और फिर पालनेमें लेटे अपने आठ माह के बालकके साथ पिताके वार्तालापसे हास्य अट्टहासतक पहुँच जाता है। व्यंग्य भी उस समय चरम स्थितिपर पहुँच जाता है जब पिता द्वारा पुत्रकी बुद्धिको साधारण कर देनेकी प्रार्थनापर भगवानके दरबारमें २२ वर्ष बाद उस समय ध्यान दिया जाता है जबकि बालक बड़ा होकर इंजीनियर बन जाता है। उस समय आनेवाला संदेश इस प्रकार है "आपके आवेदन पत्रपर विचार करनेके बाद भगवानने कृपापूर्वक आपके सुपुत्रको बालबुद्धि देना स्वीकार कर लिया है।" यहाँतक आते-आते आधुनिक कार्यालयोंमें कामकी गतिपर भी तीखा व्यंग्य उभरकर आया है।

'सेवायात्रा' में विद्यालयके छात्र-छात्राओंके उन दलों पर व्यंग्य किया गया है जो ग्रामोत्थानका परम पावन ध्येय लेकर ग्रामोंमें जाते हैं परंतु यह कार्यक्रम मात्र पिकनिक और फैशन परेडतक ही सीमित रह जाता है। 'उनकी लच्छियाँ और राष्ट्रका भविष्य' में हास्यके आवेष्टनमें उन महिलाओंपर व्यंग्य है जो संगीत और साहित्य के कार्यक्रमोंमें भी ऊन बुननेके लिए ले जाती हैं। 'द्वारा पोस्ट बाक्स नंबर जीरो' में संपादकोंके नाम लिखी जाने वाली अजीबोगरीब चिट्ठियोंके नमूने प्रस्तुत किये हैं। वहींपर ऐसे पुस्तक समीक्षकोंपर भी व्यंग्य किया है जो बिना पुस्तक पढ़े उसकी समीक्षा लिखनेकी हिम्मत करते हैं। 'महमूद बघर्राने डायटिंग की' में गुजरातके सुलतान महमूद बघर्राकी अत्यधिक भोजन-प्रियताका हास्यमय चित्रण है। 'उपदेश कृष्णका अर्जुनको' आधुनिक पति-पत्नियोंके गृह-युद्धकी गाथा प्रस्तुत करता है। अलग-अलग दंपतियोंकी सात झलकियाँ अच्छा मनोरंजन करती हैं। 'रचना प्रक्रिया' में लेखिका इस बातसे परेशान है कि वह साहित्यसृजन करे अथवा गार्हस्थ-जीवनकी समस्याओंका समाधान करे। अंततः साहित्यकी प्रगति रुकी रह जाती है। 'बालगोपाल संहति' साहित्यिक-सांस्कृतिक आयोजनों में बच्चोंको आवश्यक रूपसे ले जानेकी हास्यपूर्ण दलील पेश करता है। 'नींद क्यों रात भर नहीं आती' एकांकी महिलाकी रातकी उदासी और चिंतनकी कथा है। 'हूटिंग : एक ललित कला' में कवि-सम्मेलनोंमें कवियोंकी कविताओंको सुनकर उनपर विविध प्रकारेण हूट करने वालोंके हास्यात्मक नमूने प्रस्तुत किये गये हैं। 'पिता-पुत्र संवाद' में आधुनिक पुत्र और दीन पिताके मध्य होनेवाले संवादोंके माध्यमसे आधुनिक छात्र-सभ्यता, पिताओंकी सनक और लड़कियोंसे डरनेवाले प्रोफेसरोंका हास्य-चित्र प्रस्तुत किया गया है।

'विज्ञापन' आधुनिक विज्ञापन-कलाका हास्यव्यंग्यमय प्रस्तुतीकरण है। अपनी वस्तुओंके विक्रयके लिए अब नवीनतम प्रकारके विज्ञापन प्रसारित किये जाते हैं। कुछ नमूने भी प्रस्तुत किये गये हैं।

'एक बिचारे रोगोंके मारे' के बलभद्र बाबू अपने रोगी स्वभाव और रोगोंके वर्णनको नहीं छोड़ पाते। यहाँतक कि अच्छे खासे मित्रको भी दाँतोंमें कैंसर हो जानेके भयसे परेशान कर देते हैं। 'अधूरी रिसर्च' में बताया गया है कि 'एम. ए. या एम. एस-सी. पासकर चुकनेके बादभी जब लड़कोंको काम-धंधे और लडकियोंको ब्याह-शादीके कोई आसार नज़र नहीं आते तब उनका ध्यान रिसर्चकी ओर जाता है।' यही स्थिति आजके उपाधि प्राप्त लड़के-लड़कियोंकी है। आधुनिक शिक्षापर किये गये इस व्यंग्यके साथही 'हिंदीमें प्रेम-पत्र साहित्य' पर रिसर्च करनेके बहाने चार बढ़िया प्रेम-पत्रोंको भी प्रस्तुत किया गया है।

'सत्यमेव जयते' में आधुनिक अस्पतालोंकी दुर्दशाका व्यंग्य-चित्र खींचा गया है जहाँ रोगियोंके साथ अभद्र व्यवहार किया जाता है और उनकी समुचित चिकित्सा का कोई प्रबंध नहीं होता। अनेक चित्रोंमेंसे एक चित्र द्रष्टव्य है—"सुबह होतेही डाक्टरों, लघु-डाक्टरों और भावी डाक्टरोंके झुण्डने मुझे फिर घेर लिया। वही-वही प्रश्न, वही-वही उत्तर। अबतक मुझे सारे संवाद रट गये थे। अंतमें मैंने भी अपना प्रश्न दुहरा दिया "तो फिर डाक्टर साहब, आपने क्या तय किया?" "निश्चित रूप से अभी कुछ कहा नहीं जा सकता।" "कार्डियोग्राम कबतक होगा?" "उसका यंत्र अभी खराब है।" "कब तक ठीक होगा?" 'जब बजटमें गुंजाइश होगी।" "गुंजाइश कब तक होगी?" "यह मैं कैसे बता सकता हूँ?" "अंदाजन दिल कमजोर लगता है, या नहीं?" "विज्ञानके युगमें अन्दाजन कुछ नहीं कहा जा सकता।" "मैं घर कबतक जा सकूंगी?" "फिलहाल उसका सवाल ही नहीं उठता।" "उठना बैठना मना रहेगा?" "पहले ही बता चुका हूँ।" इलाज वही?" "वही।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दंत कथा' में बात दाँतकी पीड़ासे प्रारंभ होकर पति-पत्नियोंकी नोक-झोंकतक पहुँच गयी है। इस संबंध में लेखिकाका दृष्टिकोण है, 'वास्तवमें हर सरल, शांत एवं सद्गुणी पत्नीका पति उससे सदा अकारणही रुष्ट होता है क्योंकि कारण तो उसे लाख ढूंढनेपर भी नहीं मिल पाता। और अगर सच बातका बुरा न मानें, तो मैं कहूँगी कि यह पतियोंकी हॉबी होती है। अगर वे इस तरह बिना-बात बिगड़ते न रहें तो उनकी सत्ता कैसे कायम रहे?' और फिर लेखिकाने पतिकी सहानुभूति प्राप्त करनेके उद्देश्यसे अपना दाँत निकलवाही दिया परंतु वह अंतमें कहती है, "सोचती हूं, भविष्यमें समझौते के प्रति यह नरम दृष्टिकोण नहीं रखूंगी वरना यह इकत्तीसी कितने दिन चलेगी।"

अंतमें कुछ पुस्तककी साज-सज्जाके बारेमें भी। इस संबंधमें इतना कहा जा सकता है कि पुस्तक भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशनके गौरवके अनुकूल ही है और सब प्रकारसे पठनीय एवं सँग्रहणीय है।

— डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल

दर्शनशास्त्र

तर्क रेखा

लेखक : सुरेन्द्र बारलिंगे; प्रकाशक : **राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, ए-२६/२, विद्यालय मार्ग, तिलकनगर, जयपुर-४। पृष्ठ : २३६; डिमाई, ७२; मू. १२-०० रु.।**

प्रतीकात्मक तर्कशास्त्र

ले. राजनारायण; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १८३; डिमा. ७३; मू. १०-०० रु.।

प्रतीकात्मक तर्कशास्त्रकी इन पुस्तकोंके लेखकोंने अपनी-अपनी कृतिकोयों हिंदीमें इस विषयका पहला ग्रंथ माना है। पता नहीं, यह दावा कहांतक सत्य है, पर कम से कम इतना तो प्रकट है कि इन दोनोंमेंसे पहला ग्रंथ कौन है। छपाईकी भूलें दोनोंमें हैं, दोनोंही पुस्तकोंमें शुद्धि-पत्र लगे हुए हैं : पहलीमें चार पृष्ठोंका और दूसरी में छहका। छपाईकी भूलोंकी सूची यदि और सावधानी से बनायी गयी होती तो दोनोंमें लगी सूचीसे वह कई गुनी बड़ी होती।

लेखकोंके भाषा और व्याकरण-संबंधी अज्ञानकी भूलें भी कुछ कम नहीं हैं। उदाहरणतः "अर्थापतित (त. रे., पृ. ८), "यदि योग्य पानी बरसता है तो" (वही, पृ. ८), 'स्वाश्रयाभाष-दोष" (वही, पृ. १२६), 'सादृश्यता" (प्र. त, पृ. १), "सापेक्षिक" (वही, पृ. ५), "पृथक्कीकरण" (वही, पृ. ५), "प्रतीकृत" (वही, पृ. १३), 'अंतर्सम्बन्ध" (वही, पृ. १६), "संतुष्टीय" (वही पृ. १७१) "संतुष्टीयता" (वही, पृ. १७१, "तादात्म्यता' (वही, पृ. ११४) इत्यादि। इस मामलेमें दूसरी पुस्तक और भी आगे है। पर अंग्रेजी शब्दोंके गलत उच्चारणों की ओर पहली पुस्तकमें बरबस ध्यान चला जाता है खास तौरसे 'वाई' वाले शब्दोंके। लेखकने बार-बार "साइलोजिज्म" लिखा है और शुद्धि-पत्रमें उसे "सिलोजिज्म" कर दिया है। यह छपाईकी भूल नहीं बल्कि लेखकका कृतित्व है : "साइमीट्री" (पृ. २११) और "एंथाइमेम" (पृ. २१५) इसके उदाहरण हैं—सही "सिमिट्रि" और "एन्थिमीम" हैं।

तर्करेखामें प्रयुक्त तकनीकी शब्दोंके बारेमें एक बात विशेष रूपसे कहनी है, और वह यह कि लेखकने प्राचीन प्रयोगोंको चलानेकी कोशिश करके तथा प्रचलित शब्दोंको अजीबोगरीब अर्थोंमें इस्तेमाल करके बड़ी गड़बड़ी पैदा की है। उदाहरणार्थ "लक्षण" को लें। आजकल यह अंग्रेजी शब्द symptom और characteristic के अर्थमें रूढ़ हो गया है। तब क्या लेखकका इसे पुराने अर्थ (definition) में चलाना भ्रामक नहीं होगा? इसी प्रकार "प्रबंध" (पृ. ३), "प्रतिबंध" (पृ. ६), 'पर्याय' (पृ. १०) इत्यादिका प्रयोग किया गया है। कुछ ऐसेभी प्रयोग हैं जो प्राचीनताका भ्रम पैदा करते हैं पर वे न प्राचीन हैं और न प्रचलित। "युक्तिवाद" (argument के लिए) शब्द इसी कोटिका है। क्या प्रचलित शब्द "युक्ति" मात्रका प्रयोग काफी नहीं था? कुछ शब्दोंका अर्थही समझमें नहीं आता, जैसे "बंध" का। लेखकने अंतमें तकनीकी शब्दोंकी सूची दी ही नहीं है। यह एक बड़ी कमी है। प्रतीकात्मक तर्कशास्त्रमें सूची दी तो गयी है पर वह अंग्रेजी-हिंदी है। देनी चाहिये थी हिंदी-अंग्रेजी, क्योंकि पाठकको अपरिचित हिंदी शब्द देखकर स्वभावतः यह जिज्ञासा होती है कि वह किस अंग्रेजी शब्दके लिए रखा गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समीक्षाधीन पुस्तकोंकी मुख्य विषयवस्तुके बारेमें कहा जा सकता है, यदि प्रस्तुतीकरण ही दोषपूर्ण हो तो पुस्तककी आधीसे अधिक उपयोगिता समाप्त हो जाती है। यदि उसमें सामग्री अत्यधिक ज्ञानवर्धक और नवीन हो तो पाठक त्रुटिपूर्ण प्रस्तुतीकरणकी बाधाओंसे जूझने के लिए भी तैयार हो जाता है। ये पुस्तकें ऐसी किसी नवीनता या मौलिकताका दावा नहीं कर सकतीं। दूसरी पुस्तक कोपी इत्यादिके अंग्रेजी ग्रंथोंकी नकलसे अधिक नहीं है। पहलीमें लेखकने धर्मकीर्ति इत्यादि पुराने भारतीय तर्कशास्त्रियोंके शब्दों और सिद्धांतोंको बीच-बीच में स्थान देकर कुछ नवीनता लानेकी कोशिश अवश्य की है, पर इससे पुस्तककी बोधगम्यता घटी है। उदाहरणार्थ, पृ. ६ पर लेखकने यह लिखकर कि "भारतीय न्याय-शास्त्र में तर्कको मिथ्या माना है" पाठकके मनमें एक बड़ा भ्रम पैदा कर दिया है, क्योंकि यह बता देना जरूरी था कि यहां "तर्क" शब्द का एक विशेष अर्थ है जिसे अंग्रेजी में reductio ad absurdum कह सकते हैं, न कि साधारण अर्थ reasoning। ऐसा प्रतीत होता है कि अभी हिंदीमें आधुनिक तर्कशास्त्रपर ऐसी "मौलिक" पुस्तकें लिखनेके बजाय कोपी इत्यादिके प्रसिद्ध पाठ्यग्रंथों के ही शुद्ध और प्रामाणिक अनुवाद करवाना अधिक उपयोगी सिद्ध होगा।

— गोवर्द्धन भट्ट

पथका प्रभाव

मूल लेखक : लाओत्स; अनुवादक: जगदीशचन्द्र जैन; प्रका.: साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन, नयी दिल्ली-१। पृ. ८१; का. ७३; मू. २५० रु.।

प्रस्तुत पुस्तक दर्शनशास्त्रकी श्रेणीमें रखी जा सकती है। चीनमें बौद्ध धर्मका दर्शन क्या है, इस सम्बन्धमें पुस्तक प्रकाश डालती है। वस्तुतः यह लाओत्स द्वारा रचित चीनी भाषाके सुप्रसिद्ध दार्शनिक ग्रंथ "ताओ-ते-चिंग" का यह हिन्दी अनुवाद है। इस ग्रन्थका संसारकी दूसरी कई भाषाओंमें अनुवाद हो चुका है, और बहुचर्चित रहा है। हिन्दीमें इसे प्रस्तुत करनेका श्रेय श्री जगदीशचन्द्र जैनको है।

पुस्तकके प्रारंभमें उन्नीस पृष्ठोंकी भूमिका दी गयी है जो पुस्तकके परिचयमें सहायक होती है। इस भूमिका में चीनी क्लासिकके प्राचीन वैभवका न केवल ज्ञान होता है अपितु जनवादी चीन द्वारा स्वीकृत नयी विचारधाराके प्रकाशमें इसके तात्पर्यका पुनः मूल्यांकन भी किया गया है। पुस्तक दो खण्डोंमें विभाजित है : "पहली किताब" तथा "दूसरी किताब"। इसमें हिन्दीके गद्य गीतोंकी तरह विचार गुम्फित है, जो नयी कविता जैसे लगते हैं परन्तु उनमें उच्च कोटिकी दार्शनिक भावनाके दर्शन होते हैं। जीवनको प्राचीन सन्त लाओत्सने जो समझा उसे सहज शब्दोंमें हमारे सामने रखा और इनमें जीवनके कई मूल्य स्थापित हुए हैं। अनेक स्थलोंपर पुस्तकके आप्त वचन प्रभावित करते हैं और उनका साम्य भारतीय वेदान्त-दर्शनमें भी पाया जाता है। उदाहरणार्थ : - "हृदयका महत्व उसकी गहराईसे है, मानवीय सम्बंधोंका महत्त्व उनकी मानवीयतासे है। बोलनेका महत्व उसकी सद्निष्ठा से है। राज्य संचालनकी महत्वपूर्ण वस्तु उसकी सद् व्यवस्था है। दूसरोंकी सेवामें योग्यताका महत्व है कार्य का महत्व उसकी समयोचितता है।" (पृष्ठ २५)।

इसप्रकार स्पष्ट है कि संसारके सभी धर्म, चाहे वह कोई भी हो, अच्छी सामाजिक व्यवस्था उसे मानता है जिसमें बुराई न हो और राजनीतिक व्यवस्था अव्यवस्था से मुक्त हो। बौद्ध धर्मका यह दर्शन भारतीय दर्शनके अत्यन्त निकट है।

समाजमें नैतिकताके स्थापनहेतु पुस्तकमें (पृष्ठ ३३) यह वाक्य नितान्त सहज रूपमें कहा गया है कि "चतुराई का उन्मूलन करो और लाभको अस्वीकार करदो। चोर और लुटेरे नहीं रहेंगे।" परन्तु समाजमें आचरण इस दर्शन भावनाके विपरीत ही किया जाता है। हम चतुराई की प्रशंसा करते हैं, उन्मूलन नहीं; और अपने लाभको हम कभी अस्वीकार नहीं करते। फलस्वरूप नैतिक पतन और भ्रष्टाचारका बोलबाला है।

पुस्तकका दृष्टिकोण धार्मिक नहीं है, न शोभनार्थ संग्रहके लिए है। उसका अनुकरण जबतक समाजमें न हो जन-मानस उसे हृदयंगम न करले, तबतक कोई महत्व नहीं है। अत आशा की जाती है कि पुस्तक अधिकाधिक रूपसे समाजमें जहां चीनी क्लासिकलका परिचय देगी, वही आचरणमें उतारनेमें भी सहायक होगी।

—मदनलाल श्रीवास्तव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान भौतिकी

प्रारम्भिक ऊष्मागतिकी, गैसोंका अणुगति सिद्धांत और यांत्रिकी

लेखक : फ्रांसिस वेस्टन सियर्स; अनुवादक : डॉ. महेशप्रकाश सक्सेना; प्रकाशक: राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, ए २६/२, विद्यालय मार्ग, तिलकनगर, जयपुर-४। पृष्ठ : ३८६; रामल ७३; मू. १६.०० रु.।

भौतिक विज्ञानकी तीव्र प्रगतिसे विद्यार्थियोंको अवगत करानेके लिए और भौतिकीके अध्ययनमें रूचि एवं जिज्ञासा उत्पन्न करनेके लिए विषयको उनकी मातृभाषा में सरल रूपमें प्रस्तुत करना आवश्यक है। सियर्सकी मानक पाठ्य-पुस्तक 'थर्मोडाइनेमिक्स' का हिन्दी अनुवाद इसप्रकारके प्रयासोंकी शृंखलाकी एक कड़ी है। प्रस्तुत पुस्तकमें ऊष्मागतिकी, अणुगति सिद्धांत और सांख्यिकीय यांत्रिकीके मूल सिद्धांतोंको सरल रूपमें प्रस्तुत किया गया है एवं अनेक उदाहरणोंकी सहायतासे उन्हें स्पष्ट किया गया है। पुस्तकका यह हिन्दी अनुवाद भारतीय विश्वविद्यालयोंके विज्ञानकी स्नातक कक्षाओंके विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। अनुवादमें मूल पुस्तकके स्वरूपको बनाए रखकर भाषाको सरल एवं प्रवाहपूर्ण रखनेका प्रयास किया गया है।

पुस्तक सत्रह अध्यायोंमें विभक्त है। प्रथम दस अध्यायोंमें ऊष्मागतिकी तंत्र, अवस्था समीकरण, कार्य, ऊष्मागतिकीका प्रथम नियम और उसके परिणाम, प्रावस्थाके परिवर्तन, ऊष्मागतिकीका द्वितीय नियम, ऐन्ट्रोपी, संयुक्त प्रथम तथा द्वितीय नियम तथा ऊष्मागतिकीके इंजीनियरीमें अनुप्रयोगोंके सम्बंधमें चर्चा की गयी है। आदर्श गैसका अणुगति सिद्धांत विस्तृत रूपसे प्रतिपादित किया गया है। अन्तिम छः अध्यायोंमें आणविक वेगोंके बंटन, अभिगमन परिघटनाएं, मैक्सवेल-बोल्टज़मेन सांख्यिकी और उसके अनुप्रयोग, क्वान्टम सांख्यिकी और उच्चावचनकी सुन्दर व्याख्या है। प्रत्येक अध्यायके अन्तमें प्रश्न दिये गये हैं, और अन्तमें इन प्रश्नों के उत्तरभी दिये गये हैं। इससे पुस्तककी उपयोगिता शिक्षकों और विद्यार्थियोंके लिए बहुत अधिक बढ़ गयी है।

—डॉ. मदनमोहन बजाज

समस्थानिक

लेखक : डॉ. सत्यनारायण माथुर ; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : २७५; रायल, ७२; मू. १५-०० रु.।

सरल एवं सुग्राह्य हिन्दीमें लिखित प्रस्तुत पुस्तक भौतिकी एवं रसायन शास्त्रके स्नातकोत्तर विद्यार्थियोंको दृष्टिमें रखते हुए लिखी गयी है। पुस्तक आठ भागोंमें विभक्त है। प्रथम चार अध्यायोंमें समस्थानिकों (ISOTOPES) की खोज एवं उनके अध्ययनसे सम्बधित ऐतिहासिक विवरणोंसे लेकर समस्थानिकोंके पृथक्करण तककी चर्चा की गयी है। पांचवे और छठे अध्यायोंमें तत्वोंकी समस्थानिकीय रचना, समस्थानिकी बाहुल्य, नाभिकका स्थायित्व तथा अंत:नाभिक बलकी विवेचना की गयी है। अंतिम दो अध्यायोंमें नाभिकीय रूपांतरण, समस्थानिकोंका उत्पादन एवं समस्थानिक और विकिरणों के उपयोगपर प्रकाश डाला गया है। अन्तमें तीन उपयोगी परिशिष्ट जोड़े गये हैं। प्रथम परिशिष्टमें पारिभाषिक शब्दावली, दूसरेमें नाभिकीय चक्रणके मान, उपयोगी रेडियोधर्मी समस्थानिकोंके अर्द्ध-आयुकाल और उपयोगी रेडियोधर्मी समस्थानिकोंकी विकिरण ऊर्जाएं तथा तीसरे में लघुगुणक (Logarithms) एवं अलघुगुणककी सारिणियां हैं। इन तीनों परिशिष्टोंसे पुस्तककी उपयोगिता सन्दर्भ ग्रंथके रूपमें भी बढ़ गयी है।

पुस्तकमें यत्र तत्र छपाईकी गलतियां बहुत खटकती हैं, क्योंकि पुस्तक विद्यार्थियोंके हाथोंमें जानेवाली है, इसलिए पुस्तक-प्रकाशनसे सम्बंधित अधिकारियोंसे मेरा अनुरोध है कि इन त्रुटियोंको अगले संस्करणोंमें ठीक कर दिया जाये। छपाई संबंधी असुविधाके कारण यद्यपि हम ऐसे वैज्ञानिक संकेतों और समीकरणोंका उदाहरण देनेमें असमर्थ हैं, फिरभी इस विषयके किसी अधिकारी विद्वानसे इनका पुनरीक्षण कराया जा सकता है। पृष्ठ ७ पर समीकरण ३.१ और समीकरण ३.२ विद्यार्थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

-सुलभ तरीकेसे प्रस्तुत नहीं की गयी हैं। यदि विद्यार्थी-आधारभूत समीकरणोंको कंठस्थ करता रहेगा और समझ नहीं पायेगा, तो इससे उसके विकासकी गति अवश्य अवरुद्ध होगी। आधारभूत समीकरणोंको पर्याप्त विस्तारसे प्रस्तुत किया जाना चाहिये। पृष्ठ १९४ पर सात समीकरण अशुद्ध रूपसे मुद्रित हैं। पुस्तकमें अन्तर्राष्ट्रीय एव आधुनिक प्रथाका अनुपालन नहीं किया गया है। द्रव्यमानांक(MASS NUMBER) को बांयी ओर लिखा जाना चाहिये। दांयी ओर लिखने की प्रथा कई वर्ष पूर्व समाप्त हो गयी है। पृष्ठ १७४ और और १७५ पर भी प्रोटोनोंकी संख्या गलत स्थानोंपर मुद्रित हुई है।

पुस्तकमें दिये गये चित्र भी बहुत अच्छे नहीं हैं। चित्र ७.२ में यह नहीं दिखाया गया है कि ग्राफके क्ष— और य – अक्षपर कौन-कौनसे भौतिकी परिवर्त्तनांक VARIABLES लिये गये हैं। ऐसे दोषोंसे पुस्तकको सही रूपसे समझनेमें बहुत कठिनाई होगी।

विद्वान लेखक डॉ. सत्यनारायण माथुर बधाईके पात्र हैं कि उन्होंने हिन्दीके वैज्ञानिक साहित्यको एक उपयोगी पुस्तक भेंट की है और मुझे पूरा विश्वास है कि समस्थानिकोंसे सम्बंधित आधुनिक गवेषणाओंको भी वे आगामी संस्करणोंमें समाविष्ट करके पुस्तकको और अधिक उपयोगी बना देंगे।

—डॉ. मदनमोहन बजाज

संगीत : संस्कृति

भारतीय संगीत वाद्य

ले. डॉ. **लालमणि मिश्र; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, बी/४५-४७, कनाट प्लेस, नई दिल्ली-१। पृष्ठ : २५४; डिमाई दुगना, ७३; मूल्य : ४०-००** रु.।

प्रस्तुत पुस्तक प्रसिद्ध संगीतशास्त्री डॉ. लालमणिका शोध-प्रबन्ध है जिसमें वैदिक कालसे लेकर आधुनिक युग तकके भारतीय संगीत वाद्योंके विकास-क्रमका विशद विवेचन किया गया है। साथही इसमें साहित्य, संगीत, धर्मग्रंथों, प्रस्तरकला और चित्रकलाके क्षेत्रोंमें उपलब्ध सामग्रीका भी समावेश किया गया है जिससे वाण, विपंची, चित्रा, घोषिका, मृदंग, पणव, दर्दुर, पटह आदि प्राचीन वीणाओं और अवनद्ध वाद्योंसे लेकर सितार, सरोद, तंजौरी वीणा, विचित्र वीणा, तबला आदि आधुनिक वाद्योंके स्वरूप, शिल्प आर्ट वादन-सामग्रीके बारेमें प्रामाणिक तथ्य देकर अनेक प्रचलित भ्रांत धारणाओंका निराकरण संभव हो सका है।

भारतीय शास्त्रोंमें प्राचीन कालसे ही वाद्योंके चार प्रमुख वर्ग माने गये हैं— तत, अवनद्ध, सुषिर तथा घन। इनमें तत और सुषिर मुख्यतः स्वर-वाद्य और अवनद्ध तथा घन लय-वाद्य है। आदि कालसे मनुष्य किसी-न किसी रूपमें वाद्योंका प्रयोग करता आया है। जैसे-जैसे मनुष्य सभ्य और सुसंस्कृत होता गया, उसके द्वारा प्रयुक्त वाद्य भी विकसीत होते गये। विश्वके किसी प्रदेशके वाद्यों के सम्पूर्ण अध्ययन और विवेचनके लिए इन चारों वर्गोंके वाद्योंका आकलन होना जरूरी है, परन्तु, इनके स्वरुपात्मक और प्रयोगात्मक विवेचनका क्रमबद्ध इतिहास सदा ही दुर्लभ रहा है। इस विषयके विद्वान और अन्वेषक डॉ. लालमणि मिश्रने इस दिशामें, इस शोध-प्रबंधमें, गहराईके साथ विश्लेषण किया है।

पुस्तककी सामग्री चौदह खंडोंमें बांटी गयी है। पहले खंडमें संगीतका परिचय, मुख्य तत्त्व, उद्देश्य और जीवन से संबंध आदिपर प्रकाश डालते हुए संगीतकी उत्पत्तिकी मुख्य मान्यताओंकी विवेचना की गयी है और उसके व्यावहारिक एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोणकी संयुक्त व्याख्या की गयी है। दूसरे खंडमें गान, वादन तथा नर्त्तनके मूल तत्त्वोंपर विचारके साथही वाद्योंके वर्गीकरणका ऐतिहासिक विवेचन भी है। तीसरे खंडमें संगीत-वाद्यों संबंधी सामग्री, वेदकी परंपराएं और प्राचीन तथा मध्यकालीन तत वाद्योंके रूपों तथा वादन-विधियोंका वर्णन है। चौथे, पांचवें और छठे खंडोंमें क्रमशः अवनद्ध, सुषिर और घन वाद्योंके बारेमें यथेष्ट सामग्री है। सातवें खंडमें उन मध्यकालीन नवीन वाद्यों (तरंग-वाद्य, यथा जलतरंग, काष्ठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरंग, घण्टा तरंग, घुंघरू-तरंग और तत-वाद्य यथा इसराज, कमांयचा, दिलरुबा, सरोद, सुरसिंगार, सुरबहार) की जानकारी दी गयी है जिनका प्रादुर्भाव उत्तर-मध्य कालमें हुआ और जिनका वर्णन भारतीय संगीतके संस्कृत ग्रंथोंमें नहीं हुआ है। आठवें खंडमें संगीत-वाद्योंके प्राचीन, मध्यकालीन और अर्वाचीन रूपोंकी तुलनात्मक विवेचना की गयी है और उदाहरणों सहित सिद्ध किया गया है कि प्राचीन संगीतकलामें प्रयुक्त होनेवाले वाद्य किस प्रकार अपने विकासके चरणों सहित आजभी अपनी परम्पराको अक्षुण्ण बनाये हुए हैं। नवें खण्डमें शास्त्रीय संगीतके वर्तमान वाद्योंके निर्माणसे संबद्ध पूरी जानकारी दी गयी है और विस्तृत स्वरूप-वर्णन किया गया है ताकि कोईभी व्यक्ति इसे पढ़कर इन वाद्योंके रूपोंको आत्मसात् करसके।

पिछले सौ वर्षोंमें संगीत-वाद्योंकी वादन-विधि और वादन-सामग्रीका बहुत विस्तार हुआ है। कई वाद्योंके नये परिष्कृत रूप सामने आये हैं तो कई पुराने वाद्योंको मामूली परिवर्तनोंके साथ पुनः अपनाया गया है। दसवें खंडमें वादन-विधिमें नये प्रयोगों, सितारकी तमाम गतें, तबलेके प्रायः सभी प्रचलित और अप्रचलित बोलोंके उदाहरण दिये गये हैं। यह खण्ड दुर्लभ गतों और बोलों की दृष्टिसे विशेष महत्वपूर्ण है। ग्यारहवें खंडमें लोक-गीतोंका क्रमिक विकास दिखाते हुए लोकगीतोंमें संगीत-वाद्योंके महत्वके बारेमें बताया गया है और लोक-संगीग के अगणित वाद्योंमेंसे प्रतिनिधि-वाद्योंका वर्णन किया गया है। यह खंडभी लेखककी सूक्ष्म दृष्टि और गम्भीर अध्ययनका परिचायक है। बारहवें खण्डमें नाद-तत्त्व और वाद्य-ध्वनियोंका वैज्ञानिक विवेचन किया गया है यानी वैज्ञानिक दृष्टिसे तारता, तीव्रता और गुण आदिकी दृष्टि से वाद्योंका एक नवीन वर्गीकरण वाद्योंकी ध्वनिगत सीमाओंकी जानकारी देते हैं।

तेरहवें खण्डमें संगीत-वाद्योंका प्रतीकात्मक स्वरूप और वाद्यों द्वारा रसानुभूतिके बारेमें बताया गया है। तात्त्विक दृष्टिसे प्रत्येक कलाके दो पहलू होते हैं भावपक्ष और कलापक्ष, जब किसी कलाका प्रयोजन अंतर्निहित भावोंकी अभिव्यक्ति होता है तब उसका भाव-पक्ष और जब उस कला विशेषके प्राविधिक चमत्कार अथवा उसके नियमादिका उद्घाटन ही प्रयोज्य हो तब उसका कला-पक्ष उभर आता है। जहांतक संगीतका प्रश्न है, प्रयोग विशेष और स्थल विशेषके कारण उक्त दोनों स्थितियां विद्यमान रही हैं मगर काल विशेषमें एकका विकास और दूसरेका ह्रास होता रहा है। आदिकालमें भावपक्ष और मध्यकालमें कला-पक्ष प्रबल था। आज फिर संगीतका भावपक्ष सबल होता जा रहा है। कथानक के आधारपर किसी भाव विशेषकी सिद्धिके लिए वाद्योंका प्रयोग करते समय – उसमें परंपरायुक्त प्रयोग, स्वरोंकी तारता, तीव्रता और गुण आदिपर पूर्ण विचार किया जाता है। लेखकने सोदाहरण बताया है कि किसप्रकार तारता, तीव्रता, गुण तथा लय आदिके विशेष प्रयोगों द्वारा भैरवी, तोड़ी जैसे करुण रागोंमें वीर भाव, देस, बागेश्वरी जैसे दयनीय भाववाले रागोंमें शृंगारिक और ओजपूर्ण भावोंकी परियोजना की जा सकती है। वृन्द-वादनमें वाद्योंके नये प्रयोगोंकी गुंजाइश होती है। आशा की जानी चाहिये कि वृन्द-वादनके पुनर्विकासके वर्तमान युगमें संगीत वाद्यों द्वारा अभिव्यक्तीकरणकी ओर कई नयी दिशाओंका सूत्रपात होगा जो विश्वको भारतीय संगीतकी अभूतपूर्व देन साबित हो सकेगी।

अंतिम खंडमें वाद्योंकी उत्पत्ति और उनके क्रमिक विकासका वर्णन किया गया है। इसमें बताया गया है कि प्राचीनतम वाद्य झुनझुना माना जाना चाहिये और तत, अवनद्ध तथा सुषिर वाद्योंकी अपेक्षा सर्वप्रथम घन वाद्योंका ही प्रयोग हुआ। इसके बाद अवनद्ध और फिर सुषिर तथा तत वाद्योंका प्रादुर्भाव हुआ। इस खंडसे जानकारी मिलती है कि किसप्रकार वाद्योंके विकास-क्रम के साथ नये वाद्योंके आगमन-क्रमका संबंध जुड़ा है और हमारे देशमें किसप्रकार एकके बाद दूसरे वाद्य-रूपोंका आविर्भाव होता गया।

पुस्तकके अंतमें विश्वभरके वाद्योंके दो सौ तीस चित्र दिये गये हैं जिससे ग्रंथका महत्त्व और बढ़ गया है तथा यह 'संग्रहणीय' की कोटिमें आ गया है। ये चित्र विशेष कालकी विशेष-विशेष रुचियों और वाद्य-रूपोंके परिवर्तन आदिको भी प्रकट करते हैं। इन चित्रोंके जरिए संभवतः पहली बार भरत मुनि द्वारा वर्णित मृदंगके आंकिक, आलिंग्य और उर्ध्वक रूप सामने आये हैं।

लेखकके अनुसार, इस ग्रंथका उद्देश्य प्रचलित तथा अप्रचलित भारतीय वाद्य-रूपोंकी जानकारी, भारतीय वाद्योंकी प्राचीन तथा अर्वाचीन वादन-विधिकी जानकारी देना और भारतीय संगीतके उन तमाम सिद्धांतोंका प्रत्यक्षीकरण रहा है जिनका वर्णन प्राचीन ग्रंथोंमें उपलब्ध है, जो आजके संगीतज्ञके लिए अपनी परम्पराको बनाये रखने के वास्ते बहुत जरूरी है, फिरभी जिनसे वह पूर्णतः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपरिचित हो गया है। भारतीय संगीतकी प्राचीन परंपरा का प्रत्यक्षीकरण भारतीय वाद्यों और उनकी वादन-विधि के गहरे अध्ययनके बगैर संभव नहीं है। लेखक स्वयं कुशल वादक भी है, इसलिए वह इस कठिन कामको सफलतापूर्वक निभा ले गया है।

लेखकने कई भ्रांत धारणाओंका निराकरण भी किया है। मसलन, कि महर्षि भरत द्वारा वर्णित मृदंग, प्राचीन पटह, पणव, दर्दुर आदि रूपोंके ज्ञानके जरिए उसने इस मान्यताको समूल नष्ट कर दिया है कि आधुनिक अवनद्ध वाद्योंपर विदेशी प्रभाव है। लेखकने इस मान्यताको भी गलत बताया है कि अमीर खुसरोने सितार और तबलाका आविष्कार किया था। लेखकने यह भी सिद्ध किया है कि भारतीय वाद्य सर्वाधिक प्राचीन हैं। "भलेही हमारे पास भारतीय वाद्योंकी प्राचीनताको सिद्ध करनेके लिए खुदाई में मिली प्रस्तर मूर्तियोंका बाह्य साक्ष्य न हो किन्तु अभ्यन्तर साक्ष्य इतने प्रबल तथा ठोस हैं कि उनको देख कर भारतीय वाद्योंकी सर्वाधिक प्राचीनतामें संदेह नहीं रह जाता।" (पृ. १९६)।

इसमें संदेह नहीं कि संगीत-वाद्योंके अध्येताओंके लिए इस ग्रंथमें नयी दिशाओंका संकेत है और संगीत-वाद्योंके अध्ययन और अभ्यासके लिए यह ग्रंथ अपने-आपमें एक 'गुर' है। संगीत-प्रेमियोंके लिए यह ज्ञानका अथाह सागर है। कुल मिलाकर इसे प्रामाणिक संदर्भ-ग्रंथ माना जा सकता है और यह हर दृष्टिसे संग्रहणीय है। गेट अप और मुद्रण आकर्षक है।

—शम्भुनाथ मिश्र

भारतीय सँगीत

लेखक : आचार्य उत्तमराम शुक्ल; प्रकाशक : दुर्लभ प्रकाशन मंदिर, तुलसी चबूतरा, मथुरा (उ. प्र.)। पृष्ठ : ५००; डिमाई ५८; मू. १२-०० रु.।

हिन्दुस्तानी संगीत पद्धतिका शास्त्रीय विवेचन हिन्दी में बहुत कम हुआ है। इस विषयपर कुछ गिनी चुनी पुस्तकें ही उपलब्ध हैं। इस सारे, साहित्यमें यद्यपि अनेक विवेचकोंने स्वतंत्र अध्ययनको स्थान दिया है, परन्तु विवेचन में सामान्यतः भरत, मतंग, शार्ंगदेव प्रभृति आचार्योंकी विवेचन-पद्धतिका अनुसरण हुआ है। आधुनिक युगमें श्री मातखण्डे और श्री विष्णु दिगम्बरने इस विवेचन-पद्धतिको नयी दिशा प्रदान की, और दोनों की शिष्य-परम्पराके लोगोंने इस क्रमको आगे बढ़ाया है। श्री शुक्ल ने इन सभी विवेचन-शैलियोंका अध्ययन-मनन करनेके बाद समन्वयात्मक ढंगसे व्यावहारिक आधारपर यह ग्रंथ लिखा है। लेखक स्वयं संगीतशास्त्री होनेके साथ कुशल गायक भी रहे हैं, इसलिए शास्त्रीय पक्षके साथ व्यावहारिक पक्षभी उनके सामने रहा है।

श्री शुक्ल संभ्रान्त गुजराती परिवारके है, परन्तु वर्षोंसे ब्रजभूमिमें निवासके कारण पुस्तक उन्होंने छन्दोबद्ध ब्रजभाषामें लिखी है, प्रत्येक छन्दके नीचे सरल हिन्दी में उसका अर्थ दिया है और आवश्यक स्थलोंपर विस्तृत व्याख्या द्वारा विषयको स्पष्ट कर दिया है। यथा-स्थान अनेक उपयोगी तालिकाएं भी दी हैं।

प्राचीन शास्त्रकारोंमें संगीत संबंधी मान्यताओंपर प्रायः मतभेद है। यदि लुप्त 'मार्ग गायन पद्धति' की उपेक्षा भी करदें तोभी संगीत-रत्नाकरकार शार्ंगदेवने लुप्तप्राय राग-रागिनियोंकी चर्चा की है, जिनके संबंधमें इस समय जानकारी उपलब्ध नहीं है। इनमें वर्णित अनेक नाम वर्तमान प्रचलित नामोंसे बहुत भिन्न हैं। रागोंकी संख्यामें भिन्नता हैं, उनके वर्गीकरणमें भी भिन्नता है। संगीतादर्पणकारने छः रागों और उनमेंसे प्रत्येककी छः-छः रागनियोंके नाम 'रागार्णव' में गिनाये नामोंसे मेल नहीं खाते। 'राग विवोध' में जनक रागोंकी संख्या २३ है, अर्थात् उसमें तेईस थाटोंका प्रतिपादन है, जन्य रागोंकी संख्या ७६ है। 'स्वरमेलन कलानिधि' में जनक रागोंकी संख्या २०, जन्य रागोंकी संख्या तीन गुनी मानी मानी गयी है। 'चतुर्दण्डिका प्रकाशिका' में ७२ मेल माने गये हैं, इनमेंसे प्रचलित थाटोंकी संख्या १९ कही गयी है। 'संगीतसारामृत' में उन्नीस थाट स्वीकार करके भी गणना भिन्न नामोंसे की गयी है।

वस्तुतः शार्ंगधर तथा पूर्ववर्ती आचार्योंके समय प्रचलित अनेक राग-रागनियोंके नामों एवं स्वरूपमें परिवर्तन हो गया है। अनेक आधुनिक संगीतशास्त्रियोंने इसपर बिना विचार किये प्राचीन विवरणोंको ज्योंका त्यों उल्लेख कर दिया है। श्री शुक्लने इन पूर्ववर्ती मतोंको कसौटीपर कसनेके बाद अपना स्वतंत्र मत निर्धारित किया है। लेखककी ये स्थापनाएं व्यावहारिक समीक्षाकी दृष्टि से परीक्षणीय हैं। इसी दृष्टिसे लेखकने प्रचलित संगीत को दस थाटोंमें विभक्तकर जन्य-जनक भावका प्रतिपादन किया है।

इस ग्रंथमें प्रायः सभी प्रसिद्ध एवं प्रचलित राग लक्षणों सहित दिये गये हैं। यह विवेचन संगीत-मर्मज्ञ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रौर संगीतमें सामान्य रूचि रखनेवाले दोनों वर्गोंके लिए उपयोगी है। ग्रन्थमें नाद संबंधी विवेचनभी अधिक बुद्धि-संगत है। इनके अतिरिक्त संगीतके शास्त्रीय क्षेत्रमें प्रयुक्त परिभाषाओं ग्राम, थाट, मूर्च्छना, शुद्ध और विकृत स्वर, वादी-संवादी-विवादी, तान, अलंकार आदि अनेक अंगोंपर स्वतंत्र विवेचन किया है।

लेखकने ग्रंथ-रचनामें कितना अध्ययन-मनन और श्रम किया है, यह लेखकीय भूमिकासे स्पष्ट हो जाता है। ग्रंथकी पृष्ठभूमिको समझने और उसकी प्राचीन आधार-भित्तिका ठीकसे परिचय प्राप्त करनेके लिए यह भूमिका-अंश पठनीय है।

यह ठीक है कि लेखकका ब्रजके प्रति ममत्व है, इस-लिए उसने संपूर्ण कृति छन्दोबद्ध ब्रजमें तैयार की है। फिरभी, विषयकी व्यापकता और अखिल भारतीय दृष्टि-कोणसे यदि इसे आधुनिक गद्य शैलीमें लिखा जातातो अधिक उपयुक्त होता। वर्तमान रूपमें परम्पराप्रियता की झलक मिलती है और विषयके विशद और वैज्ञानिक विवेचनके अवसर कम हो जाते हैं हैं। फिरभी, क्योंकि संगीतशास्त्र संबंधी अनेक नयी स्थापनाएं हैं, अनेक नये समन्वयात्मक प्रतिपादन हैं, इसलिए इस क्षेत्रमें अनुसंधान करने वालोंके लिए यह पठनीय ग्रन्थ हैं।

हमारी संस्कृति

ले. डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६। पृष्ठ : १०८; डिमा. ७२; मू. ८-०० रु.।

इस कृतिमें भारतीय संस्कृतिके महत्वपूर्ण पक्षों एवं प्रमुख धर्मोंका विद्वत्तापूर्ण पर्यवेक्षण प्रस्तुत किया गया है। विद्वान् लेखकके आठ निबन्धोंका क्रम इसप्रकार है— धर्मकी आवश्यकता, भारतके धार्मिक विचार और आधु-निक सभ्यता, धर्मोंकी आपसी एकता, आध्यात्मिक खोज, बुद्ध और उनका सन्देश, महावीरका संदेश, आदि ग्रन्थ और सिख धर्म तथा विज्ञान और धर्म। धर्मकी इतनी स्पष्ट व्याख्या, व्यापक एवं वैज्ञानिक विवेचन अन्यत्र दुर्लभ है। लेखकने भारतके सभी धर्मोंकी आत्माकी एकता का अत्यन्त हृदयग्राही स्पष्टीकरण करते हुए विश्व-धर्मके साथ उसका सामंजस्य स्थापित किया है। लेखकका दृष्टि-कोण समन्वयात्मक होनेके साथही, विज्ञानकी आधुनिक प्रगतियोंमें उनकी कहाँतक संगति संभव है और वर्तमान युगमें उनका आचरण किस सीमातक उचित और अनुचित है, इसकी भी गम्भीर समीक्षा प्रस्तुत की गयी है। भारतीय संस्कृति किसप्रकार अतीत कालसे भारतके आध्यात्मिक, धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन को प्रेरणा देती हुई आजभी संसारकी उन्नति, विकास एवं धर्मोंके सामंजस्यमें वैज्ञानिक-युगके साथ समझौता करती हुई मार्ग-दर्शन कर सकती है, इसका विवेचनभी संतुलित शैलीमें किया गया है। लेखकका मत है कि दि संसारकी एकताको टिकाऊ बनाना है तो इसे अपने भीतर मनोवैज्ञानिक एकता तथा आध्यात्मिक सामंजस्य लाना पड़ेगा। विवेचन तथा विश्लेषणकी शैली तर्कपूर्ण एवं सशक्त है। भाषाका स्वरूप सर्वत्र प्रांजल तथा प्रवा-हात्मक है। विद्वानों, विद्यार्थियों और सामान्य पाठकोंके लिए यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है। प्रामाणिक एवं सुन्दर अनुवादके लिए अनुवादकका कार्य भी प्रशंसनीय है।

—डॉ. विष्णुशरण इन्दु

गांधी-वाङ्मय

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय खण्ड (४७, ४८)

प्रकाशकः प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ खण्ड : ४७-५२७, खण्ड ४८-५६५; डिमाई, ७२; मू. प्रत्येक ७.५० रु.।

संपूर्ण गांधी वाङ्मय' के खण्ड ४७ में गांधीजीके कार्यकलापकी १८ जून से लेकर ११ सितंबर १९३१ तक की सामग्री दी गयी है और खण्ड ४८ में १२ सितंबर १९३१ से ३ जनवरी १९३२ तक की।

पहले खण्डका काल वह था जब गांधी-इर्विन पैक्ट के नामसे प्रसिद्ध दिल्ली-समझौतेको कार्यान्वित करनेमें आरही कठिनाइयोंसे उसके भंग होनेकी आशंका पैदा हो गयी थी और अंतमें गोलमेज परिषदमें भाग लेनेके लिए गांधीजी लन्दन गये भी तो, जाते हुए ट्रेनमें 'यंग इंडिया' के लिए लेखमें उन्होंने इसप्रकार अपनी मनःस्थिति व्यक्त की थी : "जब मैं लन्दनके आसारका ख्याल करता हूँ और जब मैं जानता हूँ कि भारतमें सबकुछ ठीक नहीं है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा समझौता किसीभी तरह शोभनीय नहीं है तथा सुखद स्मृतियोंसे युक्त नहीं है, तो मेरे लिए निराश होने को कुछ बाकी नहीं रह जाता।" यही नहीं बल्कि यह बताते हुए कि "क्षितिज उतना ही अंधकारपूर्ण है जितना कि हो सकता है," इस बातका भी स्पष्ट आभास दे दिया था कि "मेरे खाली हाथ लौटनेकी प्रत्येक संभावना है।" (पृष्ठ ४०८)।

यह अकारण भी नहीं था, क्योंकि उन्हें संदेह होने लगा था कि सिविल सर्विसवाले "समझौतेको क्रियान्वित करनेकी दिशामें रुकावटें खड़ी कर रहे हैं" और "इरादतन समझौतेको भंग कर रहे हैं।" (पृष्ठ ६४)। उनकी दृष्टिमें वातावरण एक ऐसा था "मानो सरकार कांग्रेसके साथ लड़ाई ठाने हुए है।" (पृष्ठ १२९)।

खण्ड ४८ में गोलमेज परिषदके लिए जानेपर लन्दन की तथा अन्य विदेशी हलचलोंका विवरण है। रास्तेमें एक ब्रिटिश पत्रकी मुलाकातमें गांधीजीने कहा—"मैं इतना ही चाहता हूँ कि भारतमें शांति स्थापित हो जाये और इसमें मैं ब्रिटेनकी जनताकी सहायता चाहता हूँ।" और यह बताकर कि "मुझे ऐसा संदेशवाहक कहा गया है जिसे किसीका प्रतिनिधित्व करनेका कोई अधिकार नहीं," कहा- "यह तो सरासर गलतबयानी है। मुझे यह अधिकार प्राप्त है और देनेवाली है भारतकी जनता।" (पृष्ठ १)। लन्दन पहुँचकर स्पष्ट किया कि "यद्यपि आशा रखनेका कोई आसार नजर नहीं आ रहा है, फिरभी एक जन्मजात आशावादी होनेके नाते मैं प्रतिकूल परिस्थितियों में भी आशा नहीं छोड़ सकता।"

गोलमेज परिषदसे तो, जैसीकि आशंका थी, गांधीजी खाली हाथ लौटे, परंतु अपनी विदेश-यात्राका उपयोग उन्होंने जनमतको भारतकी स्थितिसे अवगत करानेमें और लोगोंकी सद्भावना प्राप्त करनेमें अच्छी तरह किया। आक्सफोर्डके एक प्रश्नोत्तरमें उनसे पूछा गया, "आप भारतको (ब्रिटिश) साम्राज्यसे कहांतक अलग करना चाहेंगे?" इसपर उन्होंने कहा: "साम्राज्यसे तो पूरी तरह, लेकिन ब्रिटिश राष्ट्रसे बिल्कुल नहीं।" "मैं ब्रिटेनकी बराबरीका ऐसा साझेदार होना पसन्द करूंगा जो उसके सुख-दुःखका हिस्सेदार होगा और सभी उपनिवेशोंका भी साझेदार होगा।" (खंड ४८, पृ. २५४)। साथही एक बातचीतमें विदेशी वस्त्र-बहिष्कारके बारेमें स्पष्ट किया: कांग्रेस-नीति केवल लंकाशायरके (ब्रिटिश) आयातको बन्द करनेके पक्षमें हो ऐसी बात बिल्कुल नहीं है, बल्कि वह सभी विदेशी कपड़ोंके आयातको बन्द करने के पक्षमें है।" (खंड ४७, पृ. ७३)। गोलमेज परिषदकी राजनीतिक चर्चामें उन्होंने कांग्रेसके निर्देशका हवाला देते हुए पूर्ण स्वराज्यकी मांग दोहरायी और उसका मतलब बताया कि अन्य विषयोंके अतिरिक्त एक सेना, वित्त तथा परराष्ट्र नीतिपर भी राष्ट्रका नियंत्रण रहे, साथही भारत और ब्रिटेन प्रत्येक पक्षको आपसकी साझेदारी अपनी इच्छानुसार समाप्त कर देनेका अधिकार हो। (खंड ४७, पृष्ठ १९)। और अमरीकाको दिये सन्देशमें "भारत की स्वातंत्र्य-प्राप्तिमें अन्ततः विश्वका कल्याण" बताते हुए भारतकी राष्ट्रीयताको इसप्रकार अन्तर्राष्ट्रीयताकी भावनासे संबद्ध किया: "जिस क्षण हम सत्य और अहिंसा रूपी साधनका सहारा लेते हैं उसी क्षण हमारी देशभक्ति अंतर्राष्ट्रीयतामें परिवर्तित हो जाती है।" (खंड ४७, पृष्ठ ४)। कुछ और बातें भी भिन्न-भिन्न अवसरोंपर उन्होंने स्पष्ट कीं, जैसे—

(१) "ब्रिटिश व्यापार यदि भारतीय हितोंके प्रतिकूल है तो रक्षाकी कोईभी व्याख्या भारतमें उसे बचा नहीं सकेगी।"

(२) "भारतकी भावी सरकारको परिस्थितियोंको समान करनेके लिए लगातार वह काम करना पड़ेगा जिसकी मौजूदा सरकारने उपेक्षा की, अर्थात् जिन लोगोंको प्रकृतिने अथवा स्वयं सरकारने कृपा करके धन और अन्य सुविधाएं प्रदान की हैं उनके विरुद्ध और भूखे मरते भारतीयोंके पक्षमें उसे बराबर भेदभाव करना पड़ेगा।"

(३) "भारत जैसे अविकसित देशके बारेमें इंग्लैंड जैसे अत्यन्त विकसित उद्योगप्रधान द्वीपकी तरह नहीं सोचना चाहिये। जो बात ग्रेट ब्रिटेनके लिए हितकारी है वही भारतके लिए विषरूप है। भारतको अपनाही अर्थशास्त्र, अपनीही नीति, अपनीही उद्योग-पद्धति और अन्य अब अपनाही विकसित करना है।"

(४) "सेना पूर्णतया हमारे नियंत्रणमें आनी चाहिये। (और ब्रिटिश कमांडर इन चीफसे) मैं आशा करता हूँ कि कमान हस्तान्तरित करते समय वे वहां मौजूद होंगे और सैनिकोंको बतायेंगे कि यदि वे सेवा करते हैं तो आखिर अपने देशवासियोंकी ही करते हैं। ब्रिटिश सैनिकोंको भी यह बताया जा सकता है कि अब वह समय आ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया है जब आपको यहां ब्रिटिश हितों और ब्रिटिश लोगोंकी रक्षाके लिए नहीं रहना है, बल्कि भारतकी विदेशी आक्रमण और भीतरी विप्लवसे रक्षाके लिए ऐसे रहना है मानो आप अपने खुदके ही देशवासियोंकी रक्षा और सेवा कर रहे हों।"

इन महत्वपूर्ण गतिविधियोंके बीच गांधीजीका व्यापक पत्र-व्यवहारभी इन खण्डोंमें है जिसमें उनके मानवीय रूप और लोगोंको प्रभावित करनेके उनके ढंगकी झांकी मिलती है। उदाहरणके लिए गांधी-इर्विन पैक्टके बाद होम-सेक्रेटरी इमर्सनको लिखे उनके एक व्यक्तिगत पत्रके कुछ अंश प्रस्तुत हैं: "यह पत्र मैं आपको यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि शिमलामें (बातचीतके समय) आप की स्पष्टतः अड़ंगा लगानेकी नीतिसे मुझे बहुत दुःख पहुँचा। मैं मानना चाहूँगा कि मेरी यह आशंका ग़लत है और आप उस क्षोभाजनक स्थितिके लिए जिम्मेदार नहीं थे जिसके कारण तीन दिनका अमूल्य समय नष्ट हुआ। जिन व्यक्तियोंके ऊपर भरोसा किया जा सके, ऐसे मनुष्यों से मिलनेका जो सुख है उसके मुकाबले एक संविधान प्राप्त कर लेनेका सुख मेरे लिए तुच्छ है।... मैं जानता हूँ कि आपका क्या प्रभाव है। क्या मैं ऐसा मान सकता हूँ कि आप उस प्रभावका सही उपयोग करेंगे?"

लन्दनके एक भाषणमें क्रांतिकारियोंका भी उन्होंने उल्लेख किया। कहा, "हमारे बीच हिंसामें विश्वास करने वालोंका भी एक दल है। मैंने और मेरे बहुतसे सहयो गियोंने उन्हें उस चीज़की ओरसे विमुख करनेकी कोशिश की है, जिसे हम ग़लत मानते हैं। लेकिन साथही मैं यह भी जानता हूं कि हमारे और उनके बीच उद्देश्यकी एक समानता भी है। वे स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए व्याकुल हैं स्वतंत्रता, जिसपर भारतका हक है जो उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। "इससे स्पष्ट है कि विरोधियों या विपरीत मतवालोंके प्रति वे भी कितनी सदाशयता रखते थे और उनके बारेमें बोलते हुए काफी संतुलन रखते थे।

राष्ट्रकी समस्याओंपर उनका रचनात्मक रुखभी हिन्दी संबधी उनके इस मन्तव्यसे स्पष्ट है कि "समस्त भारतके लिए प्रांतीय भाषा या भाषाओंके स्थानपर नहीं बल्कि उनके अतिरिक्त अन्तःप्रांतीय संपर्कभाषाके रूपमें एक समान भाषा होनी चाहिये (और) यह भाषा केवल हिन्दी-हिन्दुस्तानी ही हो सकती है। यदि स्वराज्य करोड़ों क्षुधापीड़ित लोगोंके लिए, करोड़ों अपनढ़ लोगोंके लिए, अनपढ़ स्त्रियोंके लिए, दलित अस्पृश्योंके लिए होना है, तो हिन्दीही एक मात्र संभव समान भाषा है।" अंग्रेजी को न केवल एक वैकल्पिक बल्कि एकमात्र संभव माध्यम चाहनेवालोंको उन्होंने ऐसे 'कुछ लोग' बताया है "जिनके मनमें जनसाधारणका कोई विचार नहीं है।" साथही कहा है, "विदेशी आधिपत्यका मोहकारी प्रभाव न होता तो ऐसी बात सोचनाभी संभव नहीं था।" (खण्ड ४७, पृष्ठ ५)।

इसतरह 'गांधी वाङ्मय' के (४७, ४८) दोनों खण्ड महत्वपूर्ण जानकारीके साथ-साथ रचनात्मक सुझावोंसे भी परिपूर्ण हैं, जिनसे राष्ट्र चाहे तो लाभ उठा सकता है। साथही व्यक्तिगत जीवनको उच्च बनानेके लिए भी सामग्री इनमें है। छपाई-सफ़ाई तो ठीक है ही।

—मुकुटबिहारी वर्मा

जेबी पुस्तकें

समीक्षक: जीवन

उपन्यास

गुरुदत्तके दो उपन्यास जेबी पुस्तकोंमें हिन्द पाकेट (हिन्द पाकेट बुक्स, शाहदरा दिल्ली-३२) ने प्रकाशित किये हैं। एक है **मंजिल** (१८९ पृ., ७३, ३ रु.) तथा दूसरा **ऊंचे मकान** (२३५ पृ.,७४, ४ रु.)। मंजिलका सजिल्द संस्करण **'प्रगतिके पथपर'** शीर्षकसे छपा था। एक अनपढ़ हिन्दू ग्रामीणको एक ईसाई परिवारमें शरण मिली और वह पढ़-लिखकर अध्यापक हो गया। स्वतंत्रता पूर्वके भारतीय समाजका चित्रण करते हुए गुरुदत्तने हिन्दू विचारधाराको विजयी दिखाया है और साथही, जैसा उनका दृष्टिकोण है, हिन्दू-मुसलिम दंगोंको साम्यवादियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की कोशिश सिद्ध किया है। सामन्ती समाज जमींदारकी विलासिता अनाचारका वर्णन तो है पर उस समाजके आमूल परिवर्तनपर गुरुदत्तका विश्वास नहीं है।

'ऊंचे मकान' स्वाधीनताके तुरन्त बादके भारतीय समाजका चित्रण करता है जिसमें एक अनपढ़ देहाती विधान सभाका सदस्य बन जाता है और धीरे-धीरे एक दुश्चरित्र स्त्रीके साहचर्यमें चालाक बनकर मंत्री पद पाकर जायज नाजायज तरीकेसे धन कमाता है और दूसरोंको पथपात्र है। खलनायक कम्युनिस्ट है जिसका मंजिल तथा गुरुदत्तके अन्य उपन्यासोंकी भांति दुखद अन्त होता है। राजनीतिके माध्यमसे फैले हुए भ्रष्टाचारका चित्रण मनोरंजक है, किन्तु व्यापारमें फैले भ्रष्टाचारके समर्थनका गुरुदत्तका दर्शनशास्त्र भिन्न है। वैसे देशका पूरा अर्थतंत्र इस समय राजनीतिके नियंत्रणमें है, व्यापार उसका एक अंग होते हुए भी एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। राजनीतिक भ्रष्टाचारने व्यापार क्षेत्र के लिए खुलकर खेलनेका मार्ग अबाधित रूपसे खोल दिया है। वैसे गुरुदत्तकी रचनाओंमें पात्रोंका तीसरा आयाम होता ही नहीं है, वे सपाट होते हैं और केवल टाइप होते हैं, जो हर उपन्यासमें केवल नाम बदलते हैं।

रूमानी उपन्यास

रूमानी उपन्यासोंकी श्रेणी ऐसे उपन्यासोंकी कही जा सकती है जो भावुकताकी चाशनीमें डूबे हुए हैं ताकि युवक-युवतियोंमें लोकप्रिय हों। 'शेखर' ऐसे लेखकों में हैं जिनका **निर्दोष** (हिन्द पाकेट, ७३) बलात्कारसे उत्पन्न सन्तान और उसकी मांके इर्द-गिर्द है जिसमें पुरुषसे घृणा करनेवाली नारी है। संयोगोंसे पूर्ण घटनाचक्रमें अन्तमें दोषी झुक जाता है। **संयोग** 'शेखर' के दूसरे उपन्यास (प्रकाशक वही, ७४) का नाम है जिसमें दो बहिनोंके समानान्तर जीवन और त्यागके संयोगोंकी कहानी है।

एक नया नाम है धर्मवीर कपूरका जिनका उपन्यास **अधूरा सपना** (प्रका. वही ७३) उन्हीं अस्वाभाविक संयोगों से भरपूर है जिसमें सपना पूरा होनेके पूर्व ट्रेजेडी है। फिरभी कहीं-कहीं पात्रोंको सजीव बनानेके प्रयासमें लेखक ने सफलता पायी है।

'**समीर**' के दो उपन्यास **उमंग और वरदान** (स्टार पाकेट बुक्स, आसफअली रोड, नयी दिल्ली-१, ७४) फिल्मी फार्मूलेके रोमांटिक उपन्यास हैं जिनमें कोर्ट, कालेज, कोठा, कोठी सभी कुछ हैं। प्रेम और हिंसा, अमीर-गरीब का झगड़ा और एकता हर बात 'समीर' फिट कर लेते हैं।

लोकदर्शीका एक और उपन्यास डकैतीकी पृष्ठभूमिपर बदले हुए शिशुओंकी पिटी-पिटाई कहानी लिये हुए प्रकाशित हुआ है—**मंजिल** (स्टार' ७४)।

जासूसी उपन्यास

जेबी पुस्तकोंमें लोकप्रियताको नजरमें रखकर जासूसी रोमानी उपन्यासोंकी प्रमुखता है ही। आलोच्य पुस्तकोंमें जहां जाने-पहचाने कापीराइट नाम हैं, एकाध नये नाम भी जुड़ गये हैं। **कर्नल रंजीत** के नामपर एक पुस्तक है ७३ की प्रकाशित **गहरी चाल** (प्रका. हिन्द पाकेट बुक्स) जिसमें एक अन्तर्राष्ट्रीय षडयंत्रके अधीन देशमें साम्प्रदायिक दंगे कराने और आर्थिक ढांचेको नष्ट करनेकी कल्पना की गयी है। जिसका, जासूस मेजर बलवन्त रहस्योद्घाटन करता है। सामयिक समस्यापर रोचक रचना है। गुप्तदूत का उपन्यास **नाचती मौत** (प्रका. स्टार, ७४) भी विदेशी साधुओंके द्वारा भारतमें तस्करीका कथानक लिये है पर लेखकके नामसे जुड़े स्तरका ही है। '**राजवंश**'का **प्रतीक्षा** (प्रका. स्टार, ७४) भी नकली दवाइयोंके द्वारा जनताके जीवनसे खिलवाड़ करनेकी सामयिक समस्यापर लिखा गया है, पर पुस्तक फिल्मी फार्मूले से बोझिल है।

एक नया नाम **बलवन्तसिंह**का है जिसका उपन्यास **सुनहरे बालोंवाली** (हिन्द पाकेट ७३) एक स्तरीय जासूसी रचनाका नमूना कहा जा सकता है। एक आत्महत्याके मामलेको हत्याके रूपमें पेशकर बड़ी रोचकतासे गुत्थी सुलझायी गयी है। लेखन शैलीमें साहित्यका रस भी मिला हुआ है।

विविध पाकशास्त्र

लड़कियोंको गृहविज्ञान पढ़ाया जाता है इसकारण पाकशास्त्रपर छपी पुस्तकें बिकती हैं। **मजेदार भोजन खाइये-खिलाइये** (प्रका. स्टार; पृ. १६८, मू. ३ रु.) एक और प्रकाशन हैं जो पाक विद्या सिखानेमें सहायक होगा। लेखकका नाम कहीं नजर नहीं आया। २३ अध्यायोंमें सब्जियां, दाल, चावल, रायते, हलवे, नमकीन, आचार मुरब्बे, मिठाइयां, अंडे-मुर्गे, गोश्तके अनेक फार्मूले दिये गये हैं जिनको पढ़कर मुंहमें पानी आता है। बना कर जो खायेंगे उनको रसानुभूति होगी।

विविध : सन्दर्भ

सामान्य ज्ञानपर भारत ज्ञानकोषके वार्षिक प्रकाशन के साथ-साथ हिन्द पाकेटने **विश्व ज्ञानकोष १९७३-७४**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी (२०८ पृ., ७३, ३ रु.) प्रकाशित किया है जिसके सम्पाक **योगराज थानी** है। थानी दिल्लीके पत्रकारोंमें अपना विशेष स्थान बना रहे हैं, उनका यह प्रयास सराहनीय है। ब्रह्माण्ड, भौगोलिक विश्व, संयुक्त राष्ट्र, विज्ञान, खेल, भारतकी संक्षिप्त जानकारी और अन्य जानकारियोंके साथ कुछ ज्वलन्त प्रश्नोंपर भी चर्चा है। वार्षिकीके रूपमें इसमें आलोच्य वर्षकी प्रमुख घटनाओं का क्रमानुसार दिया जाना उचित होता। महत्त्वपूर्ण तथा चर्चित व्यक्तियोंपर भी एक अध्याय होना चाहिये। फिर भी सुलभ मूल्यपर यह सामग्री आजके युगमें हिन्दी माध्यम से उपलब्ध होना खुशीकी बात है।

प्राप्ति-सूचना

[समीक्षार्थ प्राप्त पुस्तकोंकी सूची निम्न है, आगामी अंकोंमें इनकी समीक्षा अथवा परिचय प्रस्तुत किया जायेगा। **समीक्षार्थ दो प्रतियां आनी चाहियें**, एक प्रतिकी समीक्षाका दायित्व स्वीकार नहीं किया जाता।]

शोध-आलोचना

उदात्त भावना : एक विश्लेषण; लेखक : प्रेमसागर; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, ए-२६/२, विद्यालय मार्ग, तिलकनगर, जयपुर-४। पृष्ठ : २१४; डिमाई ७३; मूल्य : ११.०० रु.।

कम्बनारायण और रामचरित मानस; ले. रामेश्वर-दयालु अग्रवाल; प्रका. कल्पना प्रकाशन, ७ कबाड़ी बाजार, मेरठ छावनी। पृ. ४३८; डिमा. ७३; मू. ४०.०० रु.।

पारसी हिन्दी रंगमंच; ले. डॉ. लक्ष्मीनारायणलाल; प्रका. राजपाल एंड संस, कश्मीरी दरवाज़ा, दिल्ली-६। पृ. २१५; डिमा. ७३; मू. २०.०० रु.।

मैथिली नाटकका उद्भव और विकास (शो. प्र.); ले. डॉ. प्रतापनारायण झा; प्रका. महाराजा सयाजी-राव विश्वविद्यालय, बड़ौदा। पृ. २४१, रायल ७३; मू. १३.०० रु.।

भाषा-विज्ञान

अवधीका विकास; ले. बाबूराम सक्सेना; प्रका. हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद। पृ. ३२०; डिमा. ७२; मू. १३-५० रु.।

उपन्यास

छाया मत छूना मन; ले. हिमांशु जोशी; प्रका. भारतीय ज्ञानपीठ, बी/४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१। पृ. ११२; क्राउन ७४; मूल्य ; ७.५० रु.।

मृत्युंजय; ले. शिवाजी सावन्त; अनुवादक : ओम शिवराज; प्रका. उपर्युक्त। पृ. ६८६; डिमा. ७४; मू. ४०.०० रु.।

कहानी-संग्रह

प्रिज्मोंमें बंटी किरणें; सम्पादक : जवाहर रैणा, निर्मल विनोदी, विजयकुमार शर्मा; प्रका. युवा हिंदी लेखक संघ, जम्मू (तवी)। पृ. ८४; क्रा. ७४; मू. ५-०० रु.।

बारह हंगरी कहानियां; अनु. भारतभूषण अग्रवाल, रघुवीरसहाय; प्रका. साहित्य अकादेमी, रवीन्द्र भवन, फिरोजशाह रोड, नयी दिल्ली-१। पृ. २००; डिमा. ७४; मू. १०-०० रु.।

नाटक

प्रह्लाद; ले. बालकृष्ण सम; अनु. अक्षोभ्येश्वरी प्रताप, रामेश्वर प्रेम; प्रका. उपर्युक्त। पृ. १७५; क्रा. ७४; मू. : ६-०० रु.।

काव्य-संकलन

ऋतुगंधा; ले. रमेश गुप्ता 'चातक'; प्रका. विशाला प्रकाशन, उज्जैन। पृ. ६८; डिमा.; मू. ६.०० रु.।

मलयामलकी नयी कविता; सपा. डॉ. जी. गोपी-नाथन; प्रका. रंजन प्रकाशन, बांके विलास, सिटी स्टेशन रोड, आगरा-३। पृ. ७६; डिमा. ७४; मू. ५-०० रु.।

मेरी कविता : मेरे गीत; कवि. पद्मा सचदेव;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लघु-विज्ञापनों
के लिए
सुरक्षित
पैनल
दरों के लिए लिखें
व्यवस्थापक : 'प्रकर'
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग
दिल्ली-७.

कुछ चुनी हुई
किशोर-बालोपयोगी
पुस्तकें

[अ]रविन्द : जीवन दर्शन – रवीन्द्र	३.००
[शंक]राचार्य : जीवन दर्शन – नारायणदत्त वैद्य	२.५०
[गुरु] नानक : जीवन दर्शन – नारायणदत्त वैद्य	५.५०
[स्वामी] दयानन्द : जीवन दर्शन – नारायणदत्त वैद्य	५.००
[...]-अभियान – डॉ. हरिदत्त भट्ट	२.२५
[...] (बाल-उपन्यास) – विराज	२.००
[...]-पुष्पा – चिरंजीत	३.५०
[...] का हौवा (हास्य) – हरिकृष्ण तैलंग	१.००
[...] चर्चा – हरिकृष्ण तैलंग	१.००

नवभारती
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग,
दिल्ली-.

नवीनतम
श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यास

नेपालेश्वर

(लेखक : विराज)

नेपालके इतिहासपर
आधारित एक रोमांचक
उपन्यास

मूल्य ; २०.००

सम्पर्क करें :

साहित्य मंदिर
५२ ए, कमला नगर
दिल्ली-.

'प्रकर'

के
अब तक प्रकाशित विशेषांक
उपलब्ध हैं।

भारतीय साहित्य : २५ वर्ष	८.००
अहिन्दी भाषियोंका हिन्दी साहित्य	६.००
१९६९ के उल्लेखनीय प्रकाशन	२.००
१९७० के ,,	६.००
१९७१ के ,,	६.००
१९७२ के ,,	प्रेस में

आदेश दें :

व्यवस्थापक 'प्रकर'
ए-८।४२, राणा प्रताप बाग,
दिल्ली-७.

नये शोध प्रबन्ध

रामचरित मानस और पूर्वांचलीय रामकाव्य

(लेखक : रमानाथ त्रिपाठी)

रामचरित मानस और देशके पूर्वी क्षेत्रोंमें प्रचलित राम कथाओंका तुलनात्मक अध्ययन। उ. प्र. सरकार द्वारा पुरस्कृत।

मल्य : ४५.०० रु.

आधुनिक हिन्दी और उर्दू काव्यकी प्रवृत्तियां

(लेखक : डॉ. सुधेश)

सन् १९०० से १९६० तक की हिन्दी उर्दू काव्यकी उल्लेखनीय प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन.

मूल्य : ४८.५० रु.

अन्य शोध-प्रबन्ध

पं. अम्बिकादत्त व्यास : एक अध्ययन डॉ. कृष्णकुमार	२५.००
संस्कृत कवितामें रोमांटिक प्रवृत्तियां — डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा	२०.००
संत काव्यका दार्शनिक विश्लेषण – डॉ. मनमोहन सहगल	१५.००
रीतिकाव्य के स्रोत — डॉ. रामजी मिश्र	३२.५०
निम्बार्क सम्प्रदाय और उसके कृष्ण भक्त हिन्दी कवि — डॉ. नारायणदत्त शर्मा	१५.००

नवभारती
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग
दिल्ली-७.

[लघु]-विज्ञापन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- नवीनतम प्रकाशनोंकी जानकारीके लिए
- प्रकाशनोंके मूल्यांकन, विवेचन और परिचयके लिए
- समीक्षा-विधाकी प्रगति और उसके विकाससे संपर्क रखनेके लिए

प्रकर

आपका अनिवार्य और श्रेष्ठ साथी है। इसकी सहायतासे न केवल आप पुस्तकोंका सही मूल्यांकन प्राप्त कर सकते हैं, बल्कि अपने लिए उपयोगी पुस्तकोंका चुनाव भी सरलतासे कर सकते हैं।
इसकी विशिष्टता है :

- सृजनात्मक साहित्यकी प्रगतिपर निरन्तर प्रकाश.
- हिन्दीतर क्षेत्रोंकी साहित्यिक प्रगतिका लेखा-जोखा.
- ज्ञान-विज्ञान, इतिहास, राजनीति, अर्थशास्त्र आदि अनेक आधुनिक जीवनसे संबद्ध प्रकाशनोंका परिचय.
- लेखकों, पत्रकारों, शिक्षकों, शोध-छात्रों, प्रकाशकों, पुस्तकालयों और वाचनालयोंके लिए अनिवार्य रूपसे पठनीय मासिक प्रकाशन.

वार्षिक मूल्य : १२.०० रु. प्रति अंक १.२५ रु

सम्पर्क : व्यवस्थापक, 'प्रकर',
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग
दिल्ली-११०००७

'नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)' के लिए विद्यासागर विद्यालंकारद्वारा सम्पादित, प्रताप मुद्रणालय, दिल्ली-७ के लिए एम. आर. प्रैस, बहादुरगढ़ (टेलफोन नं. ८३-५६४) में मुद्रित, ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७ [टेलफोन नं. २२३८६३] से प्रकाशित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

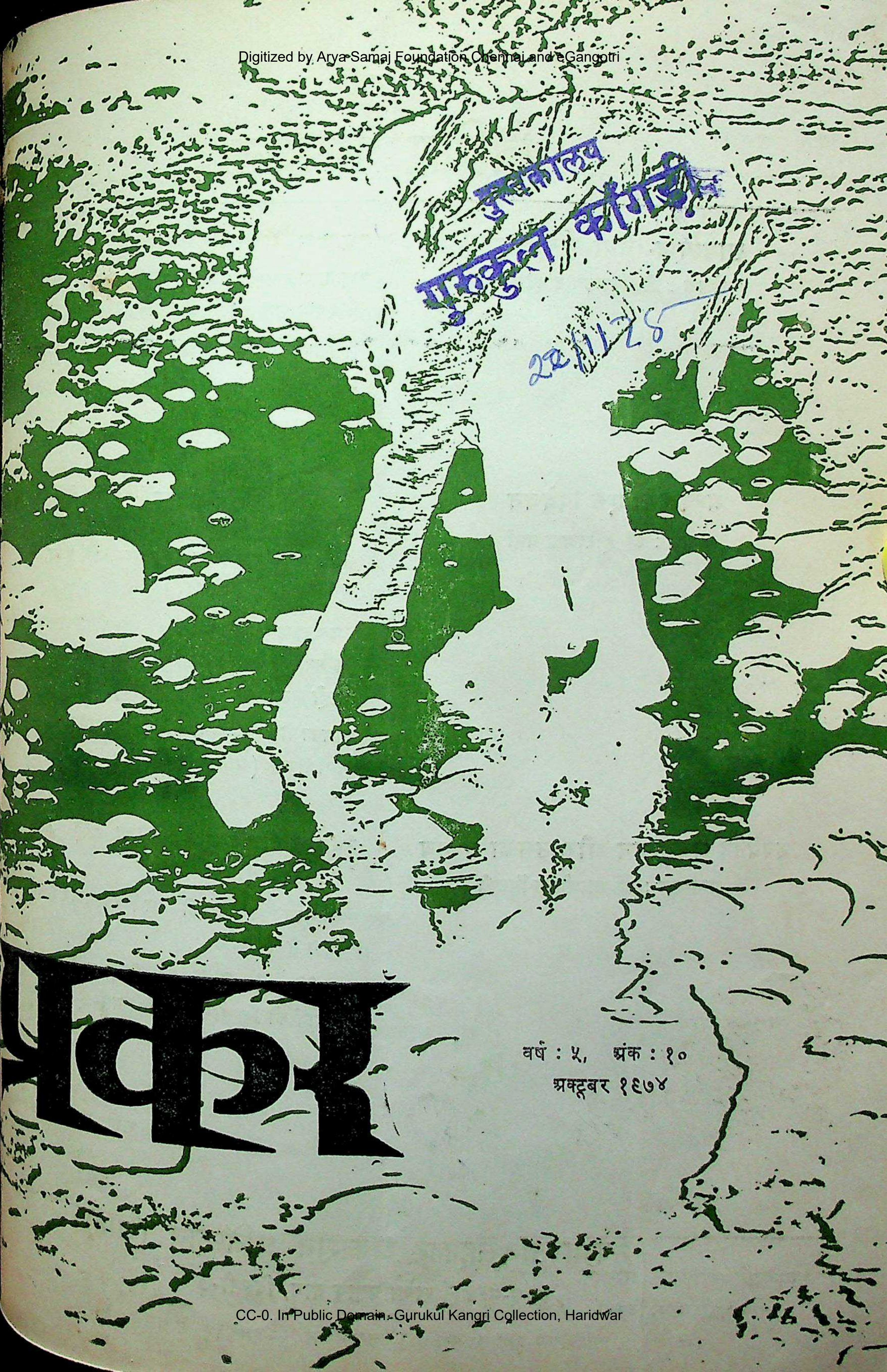

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

प्रकर

वर्ष : ५, अंक : १०
अक्टूबर १९७४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशिष्ट प्रकाशन

छायावाद: नया मूल्यांकन
लेखक : प्रो. नित्यानन्द पटेल

- छायावाद सम्बन्धी नया अध्ययन.
- छायावाद सम्बन्धी अबतक की सभी विचारधाराओंका परिचयात्मक तथा समीक्षात्मक विवेचन।
- लेखककी मान्यता है कि छायावादका मूलाधार प्रगाढ़ प्रकृति-प्रेम है। इस पक्षका तर्कपूर्ण शैलीमें प्रमाणों सहित प्रस्तुतीकरण।

मूल्य ८.०० रु.

अन्धायुग: एक विवेचन
लेखक : डॉ हरिश्चन्द्र वर्मा

- 'अन्धायुग' के सभी पक्षों—काव्य-रूप, कथा-वस्तु चरित्र-चित्रण, संवाद, अभिव्यंजना शैली, अभिनेयता और सन्देशका पृथक-पृथक सात अध्यायोंमें सूक्ष्म, युक्तियुक्त एवं तलस्पर्शी विवेचन.
- 'अन्धायुग' के लेखक डॉ० भारतीकी काव्य-साधनाका क्रमिक विकास एव उनकी सभी काव्य-कृतियोंका सार-ग्राही मूल्यांकन (प्रथम अध्याय).
- समकालीन काव्य-ग्रन्थोंपर 'अन्धायुग' के प्रभावका पर्यालोचन (अन्तिम अध्याय)।

मूल्य ११.०० रु.

रुपयेका अवमूल्यन और उसका प्रभाव
सम्पादक : डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी

- मंहगाई बढ़नेके साथ रुपयेका मूल्य गिरता है यही अवमूल्यन है.
- अवमूल्यनका देशकी अर्थव्यवस्थापर क्या प्रभाव होता है ?
- चोटीके अर्थशास्त्रियों द्वारा लिखी गयी इस पुस्तकमें इन प्रभावोंकी विस्तारसे चर्चाकी गयी है।

मूल्य १०.०० रु.

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशिष्ट नवीन प्रकाशन

आवारा मसीहा : विष्णु प्रभाकर—सुविख्यात उपन्यासकार शरतचन्द्र चटर्जी का पन्द्रह वर्षों के परिश्रम से लिखा सर्वप्रशंसित जीवन-चरित्र। उपन्यास से भी अधिक रोचक। बीसों दुर्लभ चित्र। आकर्षक साज-सज्जा। मूल्य ४५-०० रु०

पहले मैं सन्नाटा बुनता हूं : अज्ञेय—मूर्धन्य कवि अज्ञेय की नवीनतम कविताओं का आकर्षक संकलन। मूल्य १०-०० रु०

हरा समन्दर, गोपीचन्दर : लक्ष्मीनारायण लाल—लोकप्रिय उपन्यासकार का बहु-प्रतीक्षित नवीन उपन्यास जिससे उसका प्रमुख पात्र युगव्यापी उन्माद को चुनौती देता है और विक्षिप्त समझा जाता है। समसामयिक स्थितियों पर इसमें गहरा व्यंग्य है। मूल्य १२-०० रु०

मेरी प्रिय कहानियां : भगवतीचरण वर्मा—वरिष्ठ कथाकार की चुनी हुई कहानियां, भूमिका सहित। मूल्य ७-०० रु०

साथ सहा गया दुःख : नरेन्द्र कोहली—युवा लेखक का एक मार्मिक उपन्यास। मूल्य १०-०० रु०

कुछ उथले कुछ गहरे : डॉ० इन्द्रनाथ मदान—लेखक की प्रसिद्ध व्यंग्य रचना का नवीन संस्करण। मूल्य ८-०० रु०

प्रतिम चित्र : बलराज साहनी—लोकप्रिय अभिनेता और लेखक की ऐसी भावपूर्ण कहानियों का संग्रह जिनकी किसी समय भूरि-भूरि प्रशंसा की गयी है। मूल्य ६-०० रु०

मेरी फिल्मी आत्मकथा : बलराज साहनी—एक ऐसी कृति जो अवश्य पठनीय है। मूल्य १०-०० रु०

भारत के जंगली जीव : इ० पी० जी०—जवाहरलाल नेहरू की भूमिका सहित अपने विषय की अधिकृत रचना। मूल्य १४-०० रु०

हिन्दी तथा द्रविड़ भाषाओं के समानरूपी भिन्नार्थी शब्द : (रेड्डी, राव एव इकबाल) अपने विषय की प्रथम परंतु सामान्य पाठक के लिए भी मनोरंजक पुस्तक। मूल्य १५-०० रु०

घर परिवार : प्रेम पी० भल्ला—स्त्रियों के लिए घरेलू जीवन की छोटी-से-छोटी लेकर बड़ी-से-बड़ी बातों की जानकारी। मूल्य १०-०० रु०

स्वीडन : चन्द्रगुप्त विद्यालंकार-देश और निवासी माला की नई पुस्तक। मूल्य ४-०० रु०

राजपाल एण्ड संज,
कश्मीरी गेट, दिल्ली—११०००६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी

हिन्दी भाषामें अध्ययन-अध्यापनमें एकरूपता लानेके लिए आवश्यक है एकसी पारिभाषिक शब्दावलीका उपयोग।

मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी द्वारा प्रस्तुत ग्रन्थोंमें केन्द्रीय शब्दावली आयोग द्वारा स्वीकृत मानक शब्दावलीका प्रयोग हुआ है।

आश्वस्त रहें अकादमीके लेखक अपने-अपने विषयके अधिकारी विद्वान हैं। आपके हाथों तक अकादमीकी पुस्तकें तभी पहुँचती हैं जबकि देशके प्रतिष्ठित विद्वानों द्वारा प्रकाशनार्थ अनुशंसित हो जाती हैं।

मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमीकी वैज्ञानिक, तकनीकी और मानविकी विषयोंकी अबतक प्रकाशित १७० पुस्तकें विश्वविद्यालय स्तरकी परीक्षाओंमें अध्ययनके लिए श्रेष्ठ मार्ग-दर्शन दे सकती हैं।

विशेष विवरण एवं निशुल्क पुस्तक सूचीके लिए सम्पर्क सूत्र -

दूरभाष १३३७ — विक्रय अधिकारी,
दूरलेख 'अकादमी' म० प्र० हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,
९७, मालवीयनगर भोपाल—३

अपनी दृष्टि

सोलनिस्तीन साहित्य

सोलनिस्तीनके उपन्यासोंको लेकर विभिन्न विचारधाराओं और मतवादोंसे प्रतिबद्ध लोगोंने विभिन्न दृष्टिकोणोंसे पक्ष-विपक्षमें बहुत कुछ लिखा है। प्रतिबद्ध लोगोंके विचारोंमें उग्रता है, तीव्र आलोचना है और कटुतम शब्दोंमें निन्दा है। यह उग्रता और कटुता सोलनिस्तीनके उस लेखनसे उत्पन्न हुई है जो कि त्रास, आतंक और यातनाके बल चलनेवाली व्यवस्थाको निरावरण कर देता है और उस व्यवस्थाके आतंक और यातनाओंको उसने स्वयं भोगा है और अनुभव किया है। ये यातनाएं और आतंक तीव्रतम रूपमें सोलनिस्तीनके सशक्त लेखनमें उभरकर आयी हैं। पाठकके मनमें उभरनेवाले ये चित्र इतने भयावह हैं कि ऐसी व्यवस्थाके प्रति उसका मन विद्रोह कर उठता है। 'व्यवस्थाके प्रति विद्रोह और घृणा' ऐसी स्थिति है जो कि प्रतिबद्ध लोगोंको असह्य है और इसीकारण सोलनिस्तीनके प्रति वे उग्र और कटु हैं। यह कटुता और उग्रता राजनीतिक स्तरपर है और व्यवस्थाके प्रति प्रतिबद्धताकी निष्ठाको चुनौती है।

साहित्यिक दृष्टिसे, यदि वह प्रतिबद्ध नहीं है, ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यमें कृतिकी विश्वसनीयता और प्रभविष्णुताका प्रश्न सामने आता है। परन्तु जब लेखक अपनी कृति 'द गुलाग आर्किपेलागो' के बारेमें कहता है कि 'इस पुस्तककी सामग्री मैंने उन २२७ गवाहोंके प्रतिवेदनों, स्मरणपत्रोंसे प्राप्त की है जिनके नाम यहां दिये गये हैं', और यह गवाह स्वयं पुस्तकके भीतर पृष्ठ-पृष्ठपर विद्यमान हैं और कथ्यके साक्षी रूपमें नहीं बल्कि सम्पूर्ण घटनाक्रमका अंगीभूत होकर, तब यह पूछनेकी आवश्यकता होती है कि लेखककी विश्वसनीयता विवादास्पद है या राजनीतिक दृष्टिसे प्रतिबद्ध प्रचारककी। चुनौती देनेके कारणभी स्वयं कृतियोंमें विद्यमान हैं, लेखक आर्थोडाक्स क्रिश्चियन आर्डरका पक्षपाती है, अतीत - रूसी - राष्ट्रवादकी वकालत करता है (देखें : अगस्त १९१४), स्थान-स्थानपर समाजवादी व्यवस्थाका उपहास और विरोध करता है। परन्तु जिन अनुभूतियोंसे अभिभूत होकर वह उन्हें अभिव्यक्ति देता है, उसकी प्रमाणिकताको केवल वैचारिक मान्यताके आधारपर अविश्वसनीय ठहराना फिर उसी त्रास, आतंक, पीड़ा और यातनाकी व्यवस्थाका समर्थन करना होगा, जिसका लेखक विरोधकर रहा है और जिसके प्रति आक्रोश और घृणा उत्पन्न कर रहा है। वस्तुतः सोलनिस्तीनने 'इवान डेनिसोविचके जीवनका एक दिन' में विरोधका जो स्वर मुखरित किया था, वह गुलाग द्वीपसमूह तक पहुँचते-पहुँचते आक्रोश और घृणामें बदल गया है, जिससे प्रतिबद्ध लोग क्षुब्ध हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष : ६
अंक : १०
अक्तूबर १९७४

प्रकर

सम्पादक : विद्यासागर विद्यालंकार
सम्पर्क : ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७
वार्षिक मूल्य : बारह रुपये
सामान्य अंक : एक रुपया पच्चीस पैसा

समीक्षित पुस्तक	पृष्ठ संख्या	समीक्षक
१. अपनी दृष्टि		
सोलनिस्तीन साहित्य	२	सम्पादकीय
२. उपन्यास		
उद्देश्यकी दृष्टिसे—अलेक्जेंडर सोलनिस्तीन	५	सुरेन्द्र तिवारी
कैंसरवार्ड —अलेक्जेंडर सोलनिस्तीन	६	"
द गुलाग आर्किपेलागो —अ. सोलनिस्तीन	७	दिलीप पदगांवकर
अज्ञातवास—श्रीलाल शुक्ल	११	शिवशकरपाण्डेय
दर्दके पैबन्द —डॉ. प्रभाकर माचवे	१२	डॉ. रणवीर रांग्रा
राजुली मालूसाही—यमुनादत्त वैभव 'अशोक'	१२	प्रेमचन्द जैन
दायरे आस्थाओंके—डॉ. सं. लि. भैरप्पा	१३	डॉ. ज्ञानचन्द्र गुप्त
३. कहानी-संग्रह		
एक शहरकी मौत—अमृता प्रीतम	१३	डॉ. रमेश तिवारी
आवनूस—सुरेन्द्र अरोड़ा	१४	राजकुमार सैनी
गहरेबाजी —ईश्वरचन्द्र सिन्हा	१५	शम्भुनाथ मिश्र
४. नाटक		
उलझी आकृतियां—हमीदुल्ला	१६	डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल
सुनयना—स्वर्णकिरण	१७	डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
५. काव्य संकलन		
जय इन्दिरा—संपा. ठाकुर भूपतिसिंह	१७	स्वर्णकिरण
परवलय —राजेन्द्र घस्माना	१८	राजकुमार सैनी
आंसूकी गीता—योगेन्द्र दिवाकर	१८	स्वर्णकिरण
कांवरमर धूप—नारायणलाल परमार	१९	मंजुल उपाध्याय
अल्ला-ईश्वर—सत्यनारायणसिंह 'गहमरी'	१९	स्वर्णकिरण
६. शोध आलोचना		
सूरदासकी लालित्य चेतना—डॉ. परेश	२०	डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित
पारसी हिन्दी रंगमंच —डॉ. लक्ष्मीनारायणलाल	२१	महेश आनन्द
स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और ग्राम चेतना —डॉ. ज्ञानचन्द्र गुप्त	२४	डॉ. रमेशचन्द्र मिश्र
शार्टकटकी संस्कृति—केशवचन्द्र वर्मा	२६	डॉ. रमेश तिवारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. विविधा

का वार्ता—राजेन्द्रप्रसाद सिंह	२७	डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
चयन-संचयन— सम्पा. वेचन	२८	डॉ. दुर्गाप्रसाद झाला

८. विज्ञान

रसायन-दर्शन—सम्पा. भोगीलाल गांधी	२८	माधव पंडित
महासागर—एच.यू. स्वेरड्रप, मार्टिन डब्ल्यू जानसन, रिचर्ड एच. फ्लेमिंग	२९	प्रेमकृष्ण टंडन

९. स्वास्थ्य-विज्ञान

आहार एवं पोषाहार—डॉ. सत्यदेव आर्य	३०	डॉ. उषा रानी
स्वादिष्ट भोजन कला—अरुणा शेट	३०	"

१०. पत्र-पत्रिकाएं

संभावना—साम्प. डॉ. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल	३१	डॉ. शान्तिस्वरूप गुप्त
संत संदेश—सम्पा. डॉ. राजनारायण राय	३१	डॉ. शीतला मिश्र
साहित्य-निर्झर (लघुकथांक)—सम्पा रमेश बतरा	३२	अमलतास
राष्ट्र धर्म (लोककथांक)—सम्पा. भानुप्रताप शुक्ल	३२	"

११. प्राप्ति सूचना ३३

(०)

मौलिक वैज्ञानिक उपन्यास

अपराधी वैज्ञानिक

(यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक'

आजका वैज्ञानिक विश्वपर शासन करनेका स्वप्न देखता है। यदि वैज्ञानिक सत्ताको हथियानेके लिए लालयित हो उठे तो विश्व-संहारके भयानक दृश्य उपस्थित कर सकता है। प्रतिभाशाली वैज्ञानिक अलीता-मन भी इसी मार्गपर चलता है और सम्पूर्ण पृथ्वीपर प्रलयके दृश्य उपस्थित कर देता है।

साथही पृथ्वीकी धुरीके कोणमें परिवर्तन द्वारा पृथ्वीकी ऋतुओं, भूकम्पों, जल-स्थलपर आवश्यकतानुसार पियन्त्रणके सिद्धान्तका परिचय कथामें संजोकर दिया गया है।

हिन्दीका यह एक सफल और श्रेष्ठ वैज्ञानिक उपन्यास है।

मूल्य १२.०० रु०

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सो.)
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोलनिस्तीन साहित्य

उद्देश्यकी दृष्टिसे

लेखक : अलेक्जेंडर सोलनिस्तीन; अनुवादकः लेखराम; प्रकाशक:नेशनल अकादमी, ६ अंसारी मार्केट, दरियागंज, दिल्ली ६। पृष्ठ : १४८; क्राउन, ७२; मूल्य : ५-०० रु०।

कैंसरवार्ड (दो भाग)

लेखक : अलेक्जेंडर सोलिनिस्तीन; अनुवादक : प्रथमभाग-रमेश गौड़; दूसरा भाग-विजयश्री भारद्वाज; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : प्रथम भाग-३६६, दूसरा भाग-३१२; क्राउन; ७३; मूल्य प्रत्येक भाग ; ८-०० रु०।

अलेक्जेण्डर सोलनिस्तीनके समीक्ष्य उपन्यासका अगर सारांश निकालना हो तो प्रकाशकीय वक्तव्यके अनुसार इतना ही है—'यह उपन्यास रूसके एक प्रान्तीय नगरके टेक्निकल विद्यालयके छात्रों और कर्मचारी वर्गकी कहानी है जिन्होंने आत्म बलिदानी प्रयत्नोंसे अपने विद्यालयके लिए तैयार किया जानेवाला नया भवन पूरा करनेमें सफलता प्राप्त कर ली है। विद्यालयके पुराने अपर्याप्त भवनोंके बदलेमें स्थानीय अधिकारियोंने नया स्थान प्रदान करके उसपर यह भवन इन छात्रोंकी सहायतासे तैयार किया है।' इसप्रकार यह सफ़लता नौकरशाहीकी अयोग्यता और अक्षमतापर उत्साहकी विजयके रूपमें हैं। तथापि नौकरशाह लोग तथाकथित 'उद्देश्यकी दृष्टिसे' यह भवन किसी अन्य संस्थाको प्रदान करनेके लिए इस भवनपर अपना कब्जा जमा लेते हैं। विद्यालयके छात्रों और अध्यापकोंको नये सिरेसे संघर्ष शुरू करनेके लिए असहाय छोड़ दिया जाता है।

'थीम'के रूपमें पूरे उपन्यासका सारांश यही है। इस सारांशको पढ़कर अचानक यह ख्याल आता है कि कहीं यह उपन्यास विशुद्ध रूपसे राजनीतिक प्रचारका माध्यम तो नहीं बन गया है? पर ऐसा नहीं है। इस कृतिकी औपन्यासिकतापर कहीं सदेह नहीं किया जा सकता। यह अलग बात है कि नौकरशाहीका नगा नर्तन इस उपन्यासमें है। पर यह अस्वाभाविक नहीं है। एक साम्यवादी, प्रगतिशील विचारधारावाला लेखक अपने विचारोंसे कहां हट सकता है?

इस कृतिके प्रकाशनोपरान्त रूसमें इस कृतिके पक्ष-विपक्षमें काफी चर्चाएं हुईं, बातें उठीं, पत्र-पत्रिकाओंमें लेख लिखे गये। [पुस्तकके अन्तमें परिशिष्ट रूपमें ऐसे कुछ लेखोंको भी दिया गया है।] इन चर्चाओंसे यह सिद्ध हो जाता है कि देश, वह चाहे कोई भी हो, व्यक्ति चाहे वह कोई भी हो, अगर पूर्ण साम्यवादी दृष्टि लेकर चलता है, तो उसके साम्यवादी बिछौनेकी चादरपर नौकरशाह सोये रहेंगे और किसी भी गलत सही 'उद्देश्यकी दृष्टि' की बात उठाकर जनसाधारणकी इच्छाओंको कुचलते रहेंगे! उसकी मेहनतका कोई प्रतिफल उसे कभी प्राप्त नहीं होगा, जैसेकि विद्यालयके छात्रोंको नहीं हुआ, जबकि नये भवनमें जानेके लिए उनके अन्दर जिस उत्साह और अकुलाहटका दर्शन होता है, वह अपनी मेहनतको सार्थक होता देख-कर ही है।

वास्तवमें सोलनिस्तीनका यह उपन्यास मेहनतकश वर्ग और लालफीताशाही-नौकरशाही-वर्गके बीचके अन्तरको स्पष्ट दर्शाता है। और साथही इस कहानीका सम्बन्ध साधारण नैतिक समस्याओंसे भी जुड़ता है, और इसमें रूसी नौकरशाहीपर चोट पहुँचानेवाला हमलाभी किया गया है। इसलिए यह पुस्तक मास्कोकी दो पत्रिकाओंके बीच उग्र वादविवादका कारण बन गयी। इन वादविवादोंमें साहित्यिक सिद्धान्तोंसे अधिक राजनीतिक सिद्धान्तोंकी बात ही की गयी है, जिन सिद्धान्तोंतक साधारण पाठक या आम आदमीकी पहुंच नहीं होती। आम आदमी तो उपन्यास पढ़नेपर सिर्फ इतना सोचेगा कि वह कौन-सा नियम या कानून है जिसके बलपर नौ सौ युवा छात्र-छात्राओंकी इच्छाओं और सुविधाओंको खत्म करनेकी चेष्टा कुछ पदाधिकारियों द्वारा की जाती है और जो इन युवा छात्रोंके प्रयत्नसे बनाया गया भवन छीन लेते हैं। इस विद्यालयके प्रधानाध्यापक फिओडोर मिखेयेविचकी बात तब कितनी सही प्रतीत होती है—'ईमानदारीकी बात है आइवन! क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम इस कदमको विद्यालय भवनको हड़प लेनेकी कोशिशको मूर्खतापूर्ण नहीं समझते हो ? मैं सिर्फ विद्यालयकी दृष्टिसे यह बात नहीं कह रहा, किन्तु राज्यके हितकी दृष्टिसे यह बात कहता हूं ! क्या यह कोरी मूर्खता नहीं है ?' पर इस मूर्खताका कोई हल् नहीं है। लोग मूर्खता करते हैं और प्रधानाध्यापकके हाथोंसे विद्यालयका भवन निकल जाता है और तब वे अपने छात्रोंके सामने जिसप्रकार थके-हारे कदमोंसे आते हैं, उससे वे अनायासही सहानुभूतिके पात्र हो उठते हैं। इनके लिए इस भवनकी हानि एक महान व्यक्तिगत दुःखद घटना है ! और इन्हीं क्षणोंमें जब उन्हें विद्यालयके एक चेकपर सही करना होता है तब उनके कांपते हाथोंको देखकर आसानीसे उनकी व्यथाको समझा जा सकता है।

इसके पश्चात भी वे जी-जानसे कोशिश करते हैं, बड़े-बड़े अधिकारियों और अपने परिचितोंसे मिलते हैं, पर हर जगहसे उन्हें निराश ही होना पड़ता है और नौकरशाहीकी चक्कीमें वे अपने छात्रोंके साथ पिस जाते हैं।

पर इस समस्त राजनीतिक विचारधाराके बावजूद 'उद्देश्यकी दृष्टिसे' एक परिपूर्ण उपन्यास ही है और ठीक वैसाही उपन्यास जैसा गोर्कीका 'माँ' या शोलोखोवकी 'धीरे बहे दोन'। इस उपन्यासमें सोलिनिस्तीनने इस बातका भी ख्याल रखा है कि उपन्यासमें अनावश्यक बातोंका या उद्देश्यहीन बातोंका कहीं समावेश न हो जिससे कि उन्हें अपनी ही बात झुठलानी पड़े कि 'यह उपन्यास वर्तमान कलेवरके दसवें भागमें पूरा हो सकता था और वर्तमान रूप में यह पढ़नेके योग्य नहीं है (पृष्ठ ४२)।' इसी पृष्ठपर एक और व्यंग्यात्मक प्रहार आजकलके आत्मकथा लेखकों पर उन्होंने किया है—आजकल संस्मरणही लिखनेका रिवाज है। जो व्यक्ति भी पचास वर्ष अथवा इसके आस-पासका हो जाता है आपने संस्मरण लिखने बैठ जाता है और लिख डालता है। वह कैसे पैदा हुआ और कैसे उसकी शादी हुई, इस सबके बारेमें लिख मारता है। इस प्रकारकी चीज कोई भी बुद्धू लिख सकता है। ······ ये लोग जैसी बेहूदा बातें लिखते हैं, वे तो कुछ इसप्रकारकी होती है—बागमें घूमते समय मुझे ठंड लग गयी ! मैं शहर पहुँचा और मुझे होटलमें कोई कमरा नहीं मिला ···

सोलनिस्तीनका यह व्यंग्य रूसी आत्मलेखकोंपर ही नहीं सम्पूर्ण विश्वके आत्मकथा-लेखकोंमेंसे अधिकांशपर सही उतरता है। माना जा सकता है कि किसी उपन्यास की कल्पनाभी किसी संस्मरणसे ही उभरती है पर 'संस्मरणात्मक कल्पना' और 'संस्मरणात्मक व्यौरा' दोनोंमें काफी अन्तर है, इस बातको भी नहीं भूला जा सकता। और इसलिए अगर कोई यह कहे कि सोलनिस्तीनकी कृतियां भी संस्मरण ही हैं तो यह स्वीकारना पड़ेगा कि उन्होंने 'संस्मरणात्मक कल्पना' का आश्रय जरूर लिया है पर संस्मरणात्मक व्यौरोंसे वे बचे हैं और यही उनकी सफलताका कारण है।

'उद्देश्यकी दृष्टिसे एक उद्देश्यपूर्ण सफल उपन्यास है, इसमें दो मत नहीं हो सकते ! अनुवादकी भाषा भी काफी सन्तोषजनक और संवरी हुई है, जिससे मौलिक कृतिका आभास बराबर बना रहता है और इसका श्रेय लेखरामजीको प्राप्त है।

× × ×

'कैंसर वार्ड' एक बृहद परिवेशकी बृहद कृति है ! कैंसर वार्डमें कोई प्लाट नहीं है—किसी कथाको ताने-बानेमें नहीं बुना गया है बल्कि कई चित्रोंका एक संकलन है यह। ये चित्र समाजके विभिन्न वर्गोंसे आये व्यक्तियोंके चित्र हैं ! पर सिर्फ व्यक्ति कहनेसे ही सबकुछ स्पष्ट नहीं होता इसलिए इसके साथ यह कहना भी आवश्यक है कि यह विभिन्न व्यक्तियोंके सामाजिक स्तर और विचार-भिन्नता का भी चित्रण है।

कैंसरके एक अस्पतालमें दूर-दूरके शहरों और गांवोंसे आये व्यक्ति अपनी-अपनी मानसिकता और संवेदनाओंके साथ जीनेको लाचार और विवश हैं। इनमें ऐसेभी कई व्यक्ति हैं जो समझते हैं कि उनका इस अस्पतालमें रहना व्यर्थ है, अपनी बाकीकी जिन्दगी अस्पतालके बाहर रहकर वे ज्यादा अच्छी तरह शायद जी सकते हैं ! पर इसके बावजूद वे अस्पताल में रहनेको किसी न किसी तरह विवश हैं और ऐसे व्यक्तियोंके लिए अस्पताल एक पिंजरा है जहां उन्हें कैद कर रखा गया है और कैद करनेवालोंकी मेहरबानीपर वे जी रहे हैं। इन मेहरबानों - डाक्टरों, नर्सों, सर्जनों तथा अस्पतालके अन्य कर्मचारियोंके प्रति कई व्यक्तियोंके मनमें पर्याप्त घृणा है, इसके बादभी ऐसे लोगोंके साथही उन्हें अपना समय काटना पड़ता है।

दो भागोंमें विभाजित कैंसर-वार्ड इन्हीं पिंजरेमें कैद व्यक्तियोंका जीवन-चरित है ! पर सोलिनिस्तीन मात्र एक दर्शक या कथा-वाचक नहीं हैं इस उपन्यासमें, बल्कि वह हर रोगी, यहांतक कि अस्पतालकी नर्सों और डाक्टरोंतक की अन्तरात्मामें पैठा हुआ नजर आता है। और यही कारण है कि जब वह रोगियोंकी उलझनकी चर्चा करता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, उस वक्त डाक्टरोंकी उलझनकी बात भी नहीं भूल पाता और न नर्सोंकी मजबूरियोंको ही। रोगियों और डाक्टरोंके कार्योंके बीच सामंजस्यताकी बात भी सोलनित्सीनने स्वीकार की है और यही सत्य भी है कि डाक्टर और रोगी एक दूसरेपर विश्वास रखकर ही इलाज कर और करा सकते हैं! और यही कारण है कि जबभी किसी डाक्टरके आनेका समय होता है, स्त्री-वार्ड हो या पुरुष-वार्ड, सभी शान्त भावसे डाक्टरका इन्तजार करते हैं! चाहे वह वृद्ध उज्बेक मुर्सालीमोव हो, जो एक सहकारी खेतीका दरबान था और जिसकी हालत यह थी कि अगर वह थोड़ा-सा और सूख जाता और उसकी चमड़ी कुछ और काली हो जाती तो 'ममी' का भ्रम होता। या फिर एगनवरदेव जो बीचकी आयुका कज्जाक गड़रिया था, जिसके होठपर एक छोटा-सा फोड़ा था जिसके कारण वह अस्पतालमें आया था। रेडियो खुरंटने उसे एक बड़े और गुलाबी खुरंटमें बदल दिया था। उस खुरंटने उसका मुंह लगभग बन्द कर दिया था और खाना-पीना कठिन हो गया था, परन्तु न तो वह कष्टसे करवटें बदलता था न चीखता, चिल्लाता था और न ही बेचैनीका कोई प्रदर्शन करता था। उसकी प्लेट में जो कुछ डाला जाता वह खा लेता और उसके पश्चात घण्टोंतक बड़ी शान्तिसे शून्यमें देखता रहता! या फिर १६ वर्षीय दयोमा, या फिर प्रोश्का जो स्वस्थ युवक दिखायी पड़ता था, इतना स्वस्थ कि नाचमें भी शामिल हो सकता था या फिर अहमद जान जिसे खेलनेको कोई साथी न मिलता तो अपने आगे कम्बलपर शतरंज बिछाकर अपने ही विरुद्ध बाजी लगा देता, या फिर येफ्रेम जिसकी पट्टियोंने उसे कवचकी तरह जकड़ रखा था और जिसके लिए अपने सिरको हिलाना भी असम्भव था या फिर अजोवकिन जिसके माथे और कनपटियोंपर पसीनेकी बूंदे थीं और उसका पीला चेहरा प्रकट करता था कि वह भयंकर कष्टमें है। या फिर पावेल निकोलाईविच जिसका आधिपत्य पूरे उपन्यासपर छाया हुआ है, गरदनमें रसौली होनेके बाद वह अस्पतालमें भर्ती हुआ था! या फिर और सैकड़ों रोगी।

इन सभी लोगोंको डाक्टरका इन्तजार रहता है, अपने रोगसे मुक्तिका इंतजार रहता है। पर प्रकटत: ये सभी निराश और उदास लोग हैं। बल्कि अस्पतालमें सब ऐसे दुखी और पराधीन थे जैसे लकड़ीके बुत हों। अजोवकिन को छोड़कर कोई भी ऐसा नहीं लगता था जैसे वे कष्टमें हों। वे इसके हकदार ही नहीं थे कि स्वस्थ हो जायें। वास्तवमें कैंसर-वार्डमें भर्ती रोगियोंको कैंसरसे उतना भय नहीं है उतना भय अस्पतालके सफेदवर्दीवाले हत्यारोंसे है और यही कारण है कि कुछ रोगियोंको मौतका भय दिन रात सताता रहता है। पर कुछ रोगी ऐसे भी हैं जो मौत को जिन्दगीसे ऊपर समझते हैं। कीसोग्लोतोव तभी कहता है – प्रार्थना करना (जिन्दगीके लिए) बेकार है। अगर हम मौतकी बात यहाँ (अस्पतालमें) नहीं कर सकते तो संसारमें कहाँ कर सकते हैं? अरे, अच्छा तो हम हमेशा जिन्दा रहेंगे? वह फिर कहता है — हमारे जीवन-दर्शनका निचोड़ आखिर क्या है? यही न कि अरे जीवन तू कितना अच्छा है? अरे जीवन मैं तुझसे प्यार करता हूँ। जीवन खुशियोंके लिए है। क्या ही गहरी भावनाएं हैं। ऐसी बातें तो हर जानवर कह सकता है—मुर्गी, बिल्ली, या कुत्ता—और बिना हमारी सहायताके।

तो कैंसर वार्डमें ऐसे ही मौत और जिन्दगीके बीच जूझते लोगोंकी कहानियां हैं। उनके विचार और संवेदनाओंकी कहानियां। पर इन कहानियोंके वर्णनमें लेखक मात्र सुनी हुई बातोंको दोहराता हुआ नहीं लगता, न कल्पित पात्रोंको लेकर विचारोंके साथ खिलवाड़ करता हुआ ही, बल्कि पूरा उपन्यास एक स्वयं भोक्ताकी दृष्टिका प्रतिपादन करता है। मैं नहीं जानता सोलनित्सीनकी रचनामें यह यथार्थपूर्ण दृष्टि या भुक्त जीवनका यथार्थपूर्ण चित्रण किसी तरह सम्भव हुआ है, पर है यह एक आश्चयजनक स्थिति ही। एक अस्पतालके रोगियोंके प्रति इतनी गहरी समझ और सूक्ष्म संवेदनओंकी पकड़ और वहभी पूर्णरूपेण यथार्थके धरातलपर खड़े रहकर! बहुत कम कृतियोंमें यह तथ्य देखनेको मिलता है।

मैंने पहलेही कहा है कि इस उपन्यासमें किसी कथा की बुनावट नहीं है और शायद इसीकारण यह कृति साधारण पाठकोंकी पकड़से अलग भी रहे, पर एक वर्ग-विशेषके लिए जिसे हम बौद्धिक कहते हैं, यह कृति बार-बार पठनीय हो सकती है, अगर गम्भीर और विचारणीय कृतियोंको पढ़नेकी आदत हो।

यों इस उपन्यास को डाक्टरी पेशेपर एक कटु प्रहार भी माना जा सकता है क्योंकि अस्पतालका डाक्टर यह मानकर किसी मरीजको जल्दी नहीं देखता कि यह उसका कर्तव्य है बल्कि यह सोचकर देखता है कि यह उसका पेशा है और इसलिए जब कोई मरीज अच्छा नहीं होता या मर जाता है तो उसका दोष भी डाक्टर अपने ऊपर नहीं लेना चाहता, कारण उस रोगीके लिए एक पेशेवर डाक्टरके रूपमें वह जितना कर सकता था, करता रहा, फिरभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगर रोगी नहीं बचा तो इसके लिए वह जिम्मेवार क्यों हो ? पर सच तो यह है कि डाक्टरी पेशेका सारा प्रश्न इस जिम्मेदारीका ही है; नैतिकताकी बात अगर भुला भी दें तो ईमानदारीपूर्ण कर्तव्यकी बातको कैसे भुलाया जा सकता है ? और जब डाक्टर अपने इस कर्तव्यसे अलग हटते हैं तभी यह सोचना पड़ता है कि ऐसे डाक्टरको दण्ड क्यों न दिया जाये ? कैंसर-वार्डका एक रोगी कहता है—ऐसे डाक्टरोंपर तो मुकदमा चलाना चाहिये और उनकी सजा वही होनी चाहिये जो एक हत्यारेकी होती है :

वास्तवमें इसी परिप्रेक्ष्यमें यह स्वीकारना पड़ता है कि आदमी सचमुचके कैंसरसे उतना त्रस्त नहीं होता जितना सामाजिक कैंसरके कीड़ोंसे त्रस्त रहता है। बेई-मानी, कर्तव्यहीनता और दायित्वहीनताका जो परिचय सामाजिक कर्त्ता-धर्ता दिखलाते हैं उसका इलाज किस वार्डमें हो ? कौन करे ? शोषण और अत्याचारका चक्कर किसीभी देशमें साधारण जनताको किस तरह पीस डालता है, इस बातकी अनुभूति उन्हीं लोगोंको हो सकती है जो साधारण जनता होते हैं। और यह चक्कर सम्पूर्ण विश्वमें है इसलिए दूसरा प्रतिकारभी आसान नहीं है और प्रति-रोधमें उठ खड़ा हुआ व्यक्ति या तो गोलियोंसे भून दिया जाता है या फिर अन्दरही अन्दर वह घुलता जाता है और ऐसे व्यक्तियोंके लिए भी अन्तमें किसी कैंसर-वार्डका एक बेड ही आधार होता है। सोलिनिस्तीनने कई तरहसे इस तथ्यको 'कैंसर वार्ड' में सिद्ध करनेकी कोशिश की है। पावेल निकोलाईविच ओलीग जो अपने जीवनका बहु-तांश श्रम-शिविरोंमें बिता चुका था और पिछले सात वर्षों में वह इतनी मेहनत-मशक्कत कर चुका था कि अब बाल्टी उठाने और फसलोंमें पानी देनेतक भी अपनेको असमर्थ पाता था। जोमा, जिसकी आयु अभी कुल तेईस वर्ष थी, लेकिन वह बहुत कुछ देख चुकी थी और उसे बहुत कुछ याद था युद्धकालकी विभीषकाएं ! यंत्रणाएं ! युद्धकाल के वर्षोंमें कितना तनाव था और कितनी भूख थी। उन दिनोंमें लोग राशन कार्डों और चोर बाजारमें कीमतोंके अतिरिक्त और किसी विषयपर बात करते ही नहीं थे और चचा फेदमा उसके बिस्तरके पास रखी मेजसे राशनकी रोटियां चुरा लिया करता था—और अब जोमाके सामने घातक कैंसरकी यंत्रणा थी। इसतरह नष्टप्राय जीवनके रोगियोंको थका देनेवाली ये कहानियां थीं और उनके आंसू थे और उन सबका एक ही दुश्मन था मौत। एक बार मौतका सामना हो जाये तो धरतीकी कोई चीजभी इरादोंमें फर्क नहीं डाल सकती ! पर मौतका सामना हो कैसे ? जीवनमें हारे-थके-पिसे लोगोंको तो मौत और भी जल्द ग्रस लेती है।

मानना पड़ेगा कि सोलनिस्तीनका यह उपन्यास 'कैंसर वार्ड' उपन्यास नहीं, एक कड़वा घूंट है जिसे पीने का साहस नौकरशाही, सामंतवादी, या पूंजीवादी लोगोंमें नहीं हो सकता। यह साधारण वर्ग-चेतनाका एक असा-धारण महाकाव्य है, जहां हर व्यक्ति सामाजिक, राजनी-तिक दुष्चक्रोंके बीच पिसता दीखता है फिरभी जिसमें जीने की अदम्य लालसा है और जो अपनी जिन्दगीके महत्वको समझता है और यह समझ ही इस उपन्यासको ज्यादा जीवन्त बना देती है, ज्यादा विश्वसनीय और ज्यादा जीवन के निकट।

अनुवादकी भाषा मूलका रसास्वादन कराती है और इसकारण उपन्यासका प्राणतत्व कहीं नष्ट नहीं होता। कई जगह कुछ रूसी कठिन शब्द या साधारण बोलचाल-वाली भाषाके शब्दोंको ज्योंका त्यों रखकर अनुवादकने बादमें उनपर सुन्दर ढंगसे टिप्पणी दी है जिससे पाठककी कठिनाई दूर हो सके।

—सुरेन्द्र तिवारी

× × ×

आधुनिक सोवियत समाजके मानवीय यातनाके ये चित्र सोलनिस्तीनके 'उद्देश्यकी दृष्टिसे' और 'कैंसर-वार्ड' उपन्यासोंतक ही सीमित नहीं हैं। यातनाओंके इनसे भी अधिक भयंकर चित्र 'फर्स्ट सरकल' में उभरकर सामने आते हैं। यंत्रणा द्वारा मनुष्यको तोड़कर रख देनेकी राजनीतिक प्रवृत्तिका ये ग्रंथ आधि-कारिक रिकार्ड हैं। परन्तु 'द गुलाग आर्किपेलागो' (गुलाग द्वीपसमूह) के माध्यमसे सोलनिस्तीनने केवल अपने उत्पी-ड़नकी कहानी नहीं कही, बल्कि उन अनेक लोगोंकी यातनाओं और उत्पीड़नोंके अनुभवोंको भी चित्रित करता है, जिन्होंने अपने विवरण उपन्यासकारको प्रदान किये। इस दृष्टिसे 'गुलाग द्वीपसमूह' के कथाचित्र कहीं अधिक व्यापक यातनाप्रद अनुभूतियोंके शब्दचित्र हैं। यह एक राजनीतिक प्रणाली और एक विशिष्ट सिद्धान्तवादितापर लगाया गया अभियोगपत्र है।

सामान्य रूपसे बताया जाता है कि सोवियत संघमें 'आतंक युग' का आरम्भ तीसरे दशकमें शुरू हुआ, परन्तु सोलनिस्तीनकी स्थापना है कि 'जन-आतंक' का यह युग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोवियत शासन प्रणालीके पैर जमाते ही शुरू हो गया था। अन्य अनेक लेखकोंके विपरीत सोलनिस्तीन इस आतंकका दोष स्तालिनकी 'व्यक्ति पूजा' अथवा उसके पैशाचिक चरित्रपर नहीं मढ़ता। उसका प्रतिपादन है कि यह महामारी स्वयं लेनिनसे शुरू हुई (सोवियत दृष्टिसे ऐसा आरोप लगाना अक्षम्य अपराध है), जिसने एक बार बुद्धिजीवियोंको 'गू' का ढेर बताया था। सोलनिस्तीनने किसीको क्षमा नहीं किया, न स्टालिन और गोर्कीको, न बुखारिन और ट्राटस्कीको। वह सप्रमाण बताता है कि इन सबके हाथ खूनसे रंगे हुए थे।

उपन्यासके शीर्षकका 'द्वीप समूह' किसी भौगोलिक स्थानका संकेत नहीं देता, बल्कि बन्दी-शिविरोंके फैले हुए जालका प्रतीक है, जिनका संचालन सोवियत गृह मंत्रालय के कुख्यात गुप्तचर और पुलिस विभाग द्वारा होता था। दशकों तक इस द्वीप समूहमें क्या घटित होता रहा, उसे सोलनिस्तीनने तीसरे अध्यायके प्रथम पैरेमें ही उपस्थित कर दिया है :

"यदि चेखोवके नाटकोंके बुद्धिजीवियोंको, जिन्होंने अपना सारा समय यह अनुमान लगानेमें बिता दिया कि बीस तीस अथवा चालीस वर्षोंमें क्या होगा, यह बता दिया गया होता कि चालीस वर्षोंके भीतर रूसमें यंत्रणाएं देकर पूछ-ताछका प्रचलन हो जायेगा, कि बन्दियोंकी खोपड़ियों को लोहेके छल्लोंसे कसकर भींचा जायेगा, कि उन्हें तख्तसे नंगे बांधकर चींटियों और खटमलोंसे कटवानेके लिए छोड़ दिया जायेगा, कि प्राइमस स्टोव पर गरम की गयी लोहेकी छड़ें उनकी गुदाओंमें घुसेड़ी जायेंगी (गुप्त दाहांकन) और कि किन्हीं सौभाग्यशाली क्षणोंमें सप्ताहभर तक सोने न देकर, प्यासे रखकर, पीट-पीटकर मांसका लोंदा बनाकर बन्दियोंको यंत्रणा दी जायेगी, तो एक भी नाटक समाप्तितक न पहुँच पाता क्योंकि सभी नायक पागलखानोंमें पहुँच गये होते।'

नहीं, आतंकका सूत्रपात तीसरे दशकके उत्तरार्द्ध में नहीं हुआ। यह 'एक लहरके बाद दूसरी लहर' के रूपमें आया और क्रान्तिके प्रारम्भिक वर्षोंमें ही अराजकता-वादियों और सामाजवादियोंको जड़मूलसे नष्ट कर देनेके साथ शुरू हो गया। तीसरे दशकके प्रारम्भकी एक बड़ी लहरमें सामूहिक खेती लादनेके प्रयत्नोंमें लाखों किसानोंको कुलक (समृद्ध किसान) बताकर निष्कासित कर दिया गया। एक और 'लहर' में छोटी पूरी जातियोंको विस्थापित कर दिया गया। एक और 'लहर' में स्वदेश लौटनेवाले लाखों युद्धबन्दियोंको शिविरोंमें भेज दिया गया। सोलनिस्तीन इनमेंसे प्रत्येक 'लहर' की त्रासदायी स्मृतियां पूरे विवरणके साथ जगाता है। कुछ लोग इसे असहाय स्थिति, अन्यलोग मूक निराशा कुछ और स्पष्ट विसंगति और विचारहीनता बताते हैं जैसाकि मास्कोमें आयोजित पार्टीकी एक बैठकसे प्रकट होता है जहांकि स्टालिनके नामके उल्लेखमात्रसे छः, सात, दस मिनट तक भवन तालियोंकी गड़गड़ाहटसे गूंजता रहता है, कोई भी व्यक्ति ताली बजाना इसलिए बन्द नहीं करना चाहता क्योंकि एन. के. वी. डी. (सोवियत गुप्तचर विभागका पूर्व नाम)के लोग सावधानीसे ठीक-ठीक जाननेकी प्रतीक्षामें हैं कि वह 'पहला' व्यक्ति कौन है जिसने ताली बजाना बन्द किया। यदि कोई ऐसा दुस्साहसी है और एकाएक ताली बजाना बन्द कर देता है, तो दस वर्षके लिए किसी शिविरकी यात्रापर चला जाता है! यह आतंक सभी क्षेत्रोंके लोगों—राजनीतिज्ञों, लेखकों, इंजीनियरों, किसानों और सैनिकों—में व्याप्त है। अनेक लोगोंको अत्यन्त भीषण परिस्थितियोंमें वे अपराध स्वीकार करने को बाध्य होना पड़ा है जो उन्होंने कभी नहीं किये।

यही वह याथातथ्य है जिसके कारण **'गुलाग द्वीपसमूह'** कचोटकर रख देता है। रूससे बाहर आनेवाली यह पुस्तक पहली नहीं है। दास्तोवस्कीके साइबेरिया-निर्वासनके संस्मरण और सखालिन द्वीपमें जेलोंके बारेमें चेखोवका प्रतिवेदन भी जेल-जीवनके सुविस्तृत विवरण हैं। हालके वर्षोंमें ईवजिनिया गिंजबर्ग, मार्टेचेंको, नदेज्दा मैंडल्स्ताम और कुजनेत्सोवने स्टालिनी आतंकके बारेमें बहुतही उद्बोधक रूपसे लिखा है। इससे भी बढ़कर इतिहासके एक सोवियत विद्वान राय मेडवेदेवने स्टालिनी 'शुद्धीकरण' के संहारों का सांगोपांग विवरण प्रकाशित किया है। फिरभी इनमें कोई भी पुस्तक वैसा परित्रस्त नहीं कर पाती जैसाकि सोलनिस्तीनकी कृति। अन्य कृतियोंमें श्रेष्ठतम श्रीमती मैंडल्स्तामकी **'होप अगेंस्ट होप'** केवल इसकारण उल्लेखनीय है कि यह कवियित्रीका पीड़ाओंका तिक्त आलेख है।

वस्तुतः सोलनिस्तीन उस प्रणाली और विचारधारा की कटु आलोचना करता है जोकि इस आतंककी स्थिति को कायम रखे हुए हैं; निस्सन्देह ऐसी विचारधाराको वह नितान्त घृणास्पद मानता है। वह लिखता है: "यह विचारधारा अपने कुकृत्योंको चिरान्वेषित औचित्य प्रदान करती है और कुकृत्योंसे अपने हाथ रंगनेवालोंको आवश्यक दृढ़चित्तता और दृढ़ संकल्प प्रदान करती है। यह एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा सामाजिक सिद्धान्त है जोकि ऐसे लोगोंको अपनी और अन्य लोगोंकी दृष्टिमें अपने कृत्योंको कुत्सित मानने की बजाय शिष्ट माननेमें सहायता देता है और जो तिरस्कार, भर्त्सना तथा अभिशापके स्थानपर पुरस्कार, सम्मान और प्रतिष्ठा प्रदान करता है। यही कारण था कि (ईसाई) जांच-न्यायालयोंके कर्त्ता-धर्त्ताओंको ईसाइयतके नामपर अपनी विचारधारा लादनेका संकल्प प्राप्त हुआ; अपनी मातृभूमिकी महानताकी स्तुति द्वारा विदेशी भूमियों पर अधिकार करनेका बल मिला; सभ्यताके प्रसारके नाम पर उपनिवेश कायम करनेका उत्साह हुआ; जातिगत श्रेष्ठताने नाजियोंको प्रोत्साहन दिया; और समानता बन्धुत्व तथा भावी सन्ततिकी सुख-शान्तिके नामपर जैकोबिन (पूर्वके और बादके) लोगोंको प्रश्रय दिया।"

कुछ औचित्यके साथ यह तर्क दिया जा सकता है कि सोलनिस्तीनकी विचारधाराके प्रति असहिष्णुता उसे विशिष्ट प्रकारके संकीर्ण स्लाव-प्रेम (स्लावोफिलिज्म — उस स्लाव अथवा रूसी संस्कृतिकी वकालत जोकि १९वीं शताब्दीके मध्यमें रूसी बुद्धिजीवियोंके कुछ वर्गोंमें प्रचलित थी) का समर्थन करनेसे नहीं रोकती क्योंकि वह वस्तुतः रूसमें फिरसे कठोर आर्थोडाक्स क्रिश्चियन आर्डर (परम्परावादी ख्रीस्तीय व्यवस्था) की स्थापना चाहता है। प्रायः लोग लेखकसे इसबारेमें असहमत होंगे, परन्तु इससे उसकी कृतिका महत्व कम नहीं होता। दास्तोवस्की द्वारा कारावासके बाद राजसत्ता और चर्चके प्रति आत्मसमर्पणसे उसके साइबेरिया सम्बन्धी संस्मरणोंकी यथार्थता समाप्त नहीं हो जाती। इसीप्रकार, चेखव द्वारा बादमें रूसी व्यवस्थाके प्रति प्रेम-प्रदर्शन विवादास्पद हो सकता है परन्तु इससे सखालिन जेलोंके बारेमें उसकी रिपोर्टकी यथातथ्यता किसी प्रकार कुण्ठित नहीं होती।

यही स्थिति **'गुलाग द्वीपसमूह'** की है। यही कारण है कि इस कृतिके प्रति सोवियत अधिकारियोंकी प्रतिक्रिया इतनी कटुतापूर्ण हुई। इससे पूर्व स्टालिनी आतंकोंके संबंध में जिन लेखकोंने लिखा है, उनमेंसे किसीकी भी सोलनिस्तीनके समान आलोचना और निन्दा नहीं की गयी। इस वर्षके प्रारम्भमें प्रावदाने अपने १४जनवरीके अंकमें लिखा: **"गुलाग द्वीपसमूह** का स्पष्ट उद्देश्य सरलतासे धोखेमें आजानेवाले लोगोंको सोवियत संघके बारेमें सभी प्रकारकी कहानियां गढ़कर मूर्ख बनाना और ठगना है। इस कृतिका लेखक वस्तुतः अपने देश, समाजवादी व्यवस्था और सोवियत जनताके प्रति आन्तरिक घृणासे भरा बैठा है; वह जहां देश उसका जन्म हुआ है और उसका पालन-पोषण हुआ है।"

यह बताना संभव नहीं है कि सोवियत जनताकी सोलनिस्तीनके प्रति क्या प्रतिक्रिया है, विशेषरूपसे जबकि उसकी बादकी कृतियोंके बारेमें जनताको जानकारी नहीं है। परन्तु यह कोई नहीं जानता कि कुछ थोड़ेसे बुद्धिजीवी भी, जिन्होंने लुक-छिपकर उसकी कृतियोंको पढ़ा है, परमाणु भौतिकविद आन्द्रेइ सखारोवकी कम गीतात्मक आवाजको कहीं अधिक प्रभावशाली नहीं मानते। संभवतः उनमेंसे कुछ कुजनेत्सोवसे सहमत हो सकते हैं जबकि वह आरोप लगाता है कि "रूसी समाजकी राजनीतिक संस्कृति सदाही निरंकुश रही है।" कौन कह सकता है?

फिरभी कुछ ही लोग इनकार करेंगे कि **गुलाग द्वीपसमूह** इस कारण लिखा गया क्योंकि जिस सोवियत नेतृत्व ने सोवियत कम्युनिस्ट पार्टीकी बीसवीं बैठकमें स्तालिनवाद की विधिवत् आलोचना की थी, उसने इन रहस्योद्घाटनोंके फलितार्थोंको निभाया नहीं। यह इसकारण हुआ क्योंकि सोवियत नेताओंने रक्तसनी शाखाओं-उपशाखाओं सहित अतीतके कटु तथ्योंको स्वीकार करनेसे इनकार कर दिया और सोवियत इतिहासको उसके भद्देरूपसे मुक्त करानेका कार्य सोलनिस्तीनको करना पड़ा।

जहांतक बाहरी संसारका सम्बन्ध है, **गुलाग द्वीपसमूह** घोर पीड़ाओं, साहस, निर्भीकता, वीरता और सबसे बढ़कर मानवीयताका अभिसाक्ष्य है क्योंकि सोलनिस्तीनके इन विचारों कि रूसमें कैसा शासन होना चाहिए के बावजूद उसकी कृतिका राजनीतिक सन्देश आज उतनाही सामयिक हैं जितना कि चेखवके पात्रोंके लिए था: कि उन्हें अपनी आत्माको "प्रबुद्ध" और सर्वविद्याविशारद मतवादों, दलों अथवा नेताओंके पास बन्धक नहीं रख देना चाहिये। यह उन्मत्त व्यक्तिवादके पक्षमें तर्क नहीं है और अराजकतावादके पक्षमें तो बिल्कुल नहीं है, केवल एक आवेशपूर्ण चेतावनी है कि लक्ष्यको तबतक स्वयंसिद्ध नहीं मान लेना चाहिये जबतक कि उसे सिद्ध करनेके साधन संदेहास्पद हैं।

— दिलीप पदगांवकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अज्ञातवास

लेखक : श्रीलाल शुक्ल; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली–६, पृष्ठ : ११७; क्रा. ७३; मूल्य : ६-०० रु० ।

कलात्मक अभिव्यक्ति आंतरिक छटपटाहटसे मुक्तिपाने का एक माध्यम है। इसके लिए शब्दों, रेखाओं, रंगों आदिका सहारा लिया जाता है। इसीलिए एक बिंदु विशेषपर आकर शब्दोंकी कविता और रेखाओं-रगोंकी कवितामें विभाजन रेखा नहीं रह जाती, इनकी दूरियाँ सिमट-सी जाती हैं। क्योंकि यह अभिन्नता जीवनके धरा-तलपर आधारित है। जिंदगीके हर स्पंदनकी अभिव्यक्ति में साहित्यकी दूसरी विधाओंकी अपेक्षा उपन्यास कहीं अधिक समर्थ विधा है—यह जिंदगीका कार्डियोग्राम है। इसप्रकार प्रस्तुत कृति—'अज्ञातवास' में इस बातका संकेत है कि जीवन विसंगतियोंसे भरा है किन्तु हम उन्हें जान नहीं पाते और जितना कुछ जान पाते हैं वह अधूरा है — पूर्ण नहीं। क्योंकि हमारे परिचित संसार, हमारे जाने-पहचाने जीवनसे परेभी बहुत कुछ है—उतनाही कटु, उतनाही सच और उतनाही वास्तविक जिसकी हर सचाई साथ किसी-न-किसी रूपमें अज्ञातवास जुड़ा हुआ है। यही कारण है कि मि० आर० कान्त इतने दिनोंके बाद महसूसते हैं कि राजेश्वरकी पेंटिंगके घने जंगलोंमें उनका 'कुछ' खो गया है जिससे उनका जीवन दिशा हारेकी भाँति निरूद्देश्य भटक रहा है। अपराह्नसे जटिल एवं शंकाकुल वर्तमानका खोखलापन उन्हें अतीतकी मधुरताकी ओर प्रेरित करता है। वास्तवमें पेंटिंगके गझनार पेड़ोंके पीछेकी विस्तृत कालिमा उनका अपना अतीत है जिसे वे बार बार भुलाना चाहते हैं, किंतु वैसा नहीं कर पाते। अतीत उनका पीछा नहीं छोड़ता। 'जैसे वे क्लबमें व्हिस्की पी रहे हों और बिलियर्ड खेल रहे हों, और पड़ोसके कमरेसे कहकहे और नाचकी धुनें कानोंमें आ रही हों, तभी कोई उन्हें बाहर बुलाकर ले आये, रोशनी, गर्मी, मस्ती और ठहाकोंसे दूर ले जाकर किसी वीरान और ठिठुरनभरी सड़कपर अकेला छोड़ दे...' पूरे २७ वर्षोंतक और वे समझ न पायें कि क्या हो रहा है? धीरे-धीरे वे अपने उस अतीतकी ओर लौटने लगते हैं जिसे एक झटकेसे तोड़कर वे बहुत आगे निकलचुके थे। यद्यपि वे जानते हैं कि अतीत खंडहरकी खोखली दीवार जैसा है फिरभी वर्तमानके दबावोंका प्रभाव है कि उन्हें कोई सहारा चाहिये जहाँ बैठकर वे आँखें मींच लें, बीते दिनोंको बिसूर सकें। इस प्रकार गाँवमें पैदा होकर भी रजनीकान्त वहाँके जीवनको न अपना सके किंतु अभी भी कहीं कुछ बचा है जिसे छोड़ पाना उनके लिए असंभव हो गया है। कथ्यकी जीवन्तता 'अज्ञातवास' की अपनी विशेषता है। इसमें एक ओर रजनी कान्तका अतीत है तो दूसरी ओर वर्तमान। इसी अतीत (पुराने) और वर्तमान (नये) के बीच जूझते व्यक्ति (रजनी कान्त) के माध्यमसे उन सभी लोगोंकी कहानी प्रस्तुत हुई है जो आधुनिक बननेके मोहमें अतीतकी छायासे दूर रहना चाहते हैं किन्तु अतीत है कि परछाईंकी भाँति उनके अवचेतनमें समाया हुआ है। फलत: पुरानेको न छोड़पाने तथा नयेको न अपना सकनेकी मजबूरी जिनकी नियति बन जाती है। इतनाही नहीं, इसमें चित्रित ग्रामीण जीवनकी सचाई आज भी ज्योंकी त्यों बरकरार है। नौकरशाहीके फौलादी पंजों के करिश्में आजभी (कहीं और उग्र रूपमें) देखनेको मिलते हैं। बड़े लोगोंकी बड़ी बातें–दिखावे-आडंबर-अंदर से कुछ, बाहरसे कुछ-की भी स्पष्ट झलक 'अज्ञातवास' में है। उसमें गाँववालोंके जागरणकी ओर भी संकेत है जिसे नौकरशाहीका महादैत्य निगल जाता है। किन्तु अब उन्हें अधिक दिनोंतक अन्धेरेमें नहीं रखा जा सकता।

'अज्ञातवास' में ग्रामीण अंचलको उसकी सारी वास्त-विकताओं-सहित उभारनेका भी सफल प्रयास है। गाँवकी मिट्टी और उसकी सोंधी महकसे सारा उपन्यास भरा पड़ा है। वहाँकी बोली-भाखा, रीति-रिवाज, रहन-सहन - सब कुछ बड़ी तटस्थताके साथ चित्रित है। 'लोकल-कलर' के कारण उपन्यास औरभी सजीव हो चला है।

कथ्यके साथ ही शिल्पका भी बड़े दायित्वके साथ निर्वाह हुआ है। जहाँ तक चरित्र-चित्रणका प्रश्न है इसमें 'एकसे एक करेक्टर' भरे पड़े हैं। एक ओर मि० रजनी कांत और उनके अजीबोगरीब दोस्त हैं तो दूसरी ओर गंवार रामलाल, घसीटे, बनवारी और वसन्त··· जिनकी अपनी-अपनी समस्याएं हैं, जो अपने अंदर करुणा, दुःख, विपन्नताका लहराता महासागर छिपाये हुए भी ग्राम गीतोंके स्वरमें ऐसे बह जाते हैं कि यह जान पाना मुश्किल हो जाता है कि इस भाँति सुमधुर स्वर लहरी बिखेरनेवाले इन देहातियोंकी कौन-सी रग दुख रही है? इसी प्रकार रानी और डा० सीता दत्तकी भी जिंदगीके अपने-अपने छोर हैं।

प्रस्तुत कृतिमें बिंबों, प्रतीकोंके सहारे कथ्यको पूर्ण अभिव्यक्ति मिली है। भाषापर लेखकका पूरा-पूरा अधि-कार है। शब्द-योजनाके प्रति भी सजगता बरती गयी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पात्रानुकूल भाषाका सार्थक प्रयोग--विशेषकर ग्रामीण ग्रंचलके संदर्भमें —'रेणु' के बाद श्रीलाल शुक्लकी कृतियों में दर्शनीय है—चाहे वह 'ग्रंगदका पाँव' हो चाहे 'राग दरबारी'··। किन्तु कहीं-कहीं लेखक चूक गया है। उदाहरणके लिए जहाँ 'रेणु' ने सुतरी कातनेके संदर्भमें 'ढेरा' शब्दसे काम लिया है ('उच्चाटन' कहानी, ज्ञानोदय, नवम्बर, ६४ पृ. ३४) वहीं श्रीलाल शुक्ल कई पंक्तियाँ बरबाद करके भी ढेरेपर सन कातनेवाले रामलालके चित्रण में ग्रायी कृत्रिमतासे न बच सके।(पृ० ४१-४२)। इसमें लोकोक्तियाँ ग्रौर मुहावरोंके प्रचुरताके साथ ग्रंग्रेजीके शब्दों वाक्योंका भी बेधड़क प्रयोग हुग्रा है। प्रकृति चित्रणसे कथ्यको ग्रौरभी उभार मिला है। जगह-जगहपर पैने व्यंग की बौछार भी की गयी है। संस्कृतनिष्ठ भाषाके प्रयोगसे कृतिका समापन हुग्रा है।

संक्षेपमें 'ग्रज्ञातवास' कथ्य एवं शिल्प दोनों दृष्टियोंसे एक सफल ग्रौपन्यासिक कृति है जिसमें ग्राजकी बहुग्रायामीय जिंदगी ग्रनेकानेक कोणोंसे प्रस्तुत हुई है।

—शिवशंकर पांडेय

दर्दके पैबन्द

लेखक : डा. प्रभाकर माचवे; प्रका. साहित्य भवन (प्रा.) लि., इलहाबाद। पृष्ठः १६८; मूल्यः १२-००रु०।

डा० प्रभाकर माचवेका यह उपन्यास ऐसे विषयको उठाता है जिसकी चर्चा साहित्यमें तो क्या साहित्येतर लेखनमें भी कम ही हुई है। भारतमें गौतमसे लेकर गाँधी तक बड़ेसे बड़े सन्त-महात्मा ग्राये ग्रौर उनके क्रान्तिकारी विचारों एवं ग्रादर्शोंकी देशके एक छोरसे दूसरे छोरतक बाढ़-सी ग्रा गयी। लोगोंको लगा कि समाजमें ग्रामूल-चूल परिवर्तन होनेवाला है, पर उनके जीवनकालमें ही ग्रथवा निधनके तुरन्त बाद समाजकी दुम पुनः टेढ़ी हो गयी ग्रौर उनके सुधारोंका निशानतक न बचा। सबसे बड़ी बात तो यह हुई कि जब देशभरमें उन महापुरुषोंके नामका डंका बज रहा था, उनके ग्रपने इलाकेकी जन-जातियां 'चिराग तले ग्रंधेरा' सार्थक करती हुई उनसे नितान्त ग्रप्रभावित रहीं। भक्तोंकी भीड़ने महापुरुषोंका इतना जबरदस्त घिराव किये रखा कि इन निरीह प्राणियोंके दुख-दर्दकी भनकतक उनके कानोंमें न पड़ सकी।

इस कटु यथार्थके उद्घाटनार्थ इस उपन्यासमें दो नारियोंकी जीवन-गाथा एक सूत्रमें पिरोयी गयी है। ग्रपने को प्रबुद्ध माननेवाली एक भारतीय युवती ऋता भारत ग्राये हुए एक ग्रतालवी पुरातत्व-शास्त्रीकी समृद्धिपर मुग्ध होकर उससे विवाह करके यह सिद्ध कर देती है कि धनके लोभमें विदेशियोंके हाथों भारतीय मूर्तियां ही नहीं, नारियां भी खुशी-खुशी बिक जाती हैं। दूसरी ग्रोर भारत ग्रौर उसकी संस्कृतिके प्रति ग्रगाध श्रद्धा होनेके कारण एक विदेशी युवती रीटा ग्रनुसंधानके लिए भारत ग्राती है ग्रौर यह देखकर उसे घोर निराशा होती है कि सेवाग्राम (वर्धा) के पासके गाँवके महारों, शान्ति निकेतनके निकटके संथालों तथा श्रीग्ररविन्दाश्रम पांडीचेरीके पासके गरीब तमिष ग्रादिवासी मजदूरोंके दुख-दर्दको गांधी, रवीन्द्र ग्रौर ग्ररविन्द छू तक न सके थे। इसप्रकार सुधारवादी ग्रादर्शों पर यह उपन्यास बड़ा तीखा व्यंग्य है।

—डॉ० रणवीर रांग्रा

राजुली मालूसाही :

लेखक : यमुनादत्त वैष्णव 'ग्रशोक'; प्रकाशक : रंजन प्रकाशन, बांके विलास, सिटी स्टेशन मार्ग, ग्रागरा-३। पृष्ठ : २३२; क्रा. ७३; मूल्य : ८.००रु.।

प्रस्तुत पुस्तक कुमाऊं जनपदमें प्रचलित प्रसिद्ध प्रेम-कथाका गद्य रुप है जिसे विज्ञ लेखकने मध्यकुमाऊंमें गायी जानेवाली गाथाके ग्राधारपर लिपिबद्ध किया है। ग्रति प्राचीनकालसे कुमाऊं ग्रंचलके जनमानसको रस-विभोर करती ग्रायी यह कथा जो ग्रबतक गायकोंके कण्ठोंतक ही सीमावद्ध थी, प्रथयबार लिखित रुपमें प्रकाशित हो रही है। कुमाऊंनी भाषाभाषी श्री 'ग्रशोक' हिन्दीके निष्णात लेखक हैं ग्रतः उनके द्वारा प्रस्तुत यह लोककाव्य हिंदी-भाषियोंको मूलरचनाका रसास्वादन करानेमें निश्चय ही सहायक होगा।

विराट देशके राजकुमार मालू तथा भोट व्यापारी सुनपतिकी कन्या राजुलीके प्रणय-प्रसंगपर ग्राधारित यह गीतिकाव्य है। काव्यात्मकताके ग्रतिरिक्त ग्रध्यात्म, तंत्र-मंत्र, चिकित्सा-विज्ञान ग्रौर तत्कालीन भूगोल, राजनीति, सामाजिक ग्राचारविचार एवं व्यापार-वाणिज्य ग्रादिके सम्बन्धमें भी इससे पर्याप्त जानकारी मिलती है। हजारों वर्षोंसे भी ग्रधिक समयसे केवल गायन रुपमें प्रचलित ग्राख्यानमें यत्र तत्र पाठभेद होना स्वाभाविक है पर उसमें कथाके मूलस्वरमें कोई ग्रंतर नहीं पड़ता। संचार, ग्रावागमन तथा मुद्रणके सुलभ साधनोंके ग्रभावमें गेयकाव्य ही प्राचीन समयमें जनसाहित्य का कार्य करते थे। ग्रतः

 In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषालालित्य तथा ज्ञानगरिमाकी दृष्टिसे अपेक्षाकृत श्रेष्ठ काव्योंको ही वास्तविक अर्थोंमें जनप्रिय होनेका गौरव प्राप्त होता था। 'राजू मालूसाही' भी एक ऐसी ही जनप्रिय रचना है जिसका अपूर्व काव्यरस समयके बृहद् अंतरालसे बेस्वाद नहीं हुआ है तथा जिसके अज्ञात रचनाकार का स्मरण जनमानस सदा कृतज्ञतापूर्वक करता रहेगा।

पुस्तकको पढ़नेसे कुमाऊंनी भाषाकी विशिष्ट पदावली, ध्वनियों तथा अभिव्यंजनाओंका भी ज्ञान होता है। इस काव्यमें प्रयुक्त जनपदीय भाषाकी अपूर्व उक्तियां, उपमाएं तथा मुहावरे खड़ी बोलीके पाठकोंको निश्चयही चमत्कृत करेंगे। एक सर्वथा अप्रकाशित मोहक रचनाको हिन्दीके माध्यमसे प्रकाशमें लानेके लिए लेखक प्रशंसा और साधुवादका अधिकारी है।

अनेक घटनाओं और चरित्रोंसे गुम्फित यह कथानक फिल्मीकरणके लिए भी सर्वथा उपयुक्त है। किसी साहित्य प्रेमी कुशल निर्माताके हाथों 'राजुली-मालूसाही' पर एक सफल चित्रका निर्माण हो सकता है जो अन्य परम्परागत प्रणय कहानियोंकी अपेक्षा सब दृष्टियोंसे अधिक मनमोहक सिद्ध होगा।

—प्रेमचन्द्र जैन

दायरे आस्थाओंके

लेखक : डॉ० सं. लि. भैरप्पा; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली। पृष्ठ : २०६; क्रा. ७३; मूल्य : ६-०० रु०।

कन्नड़ भाषाका यह उपन्यास अपनी शक्ति और संवेदनामें अद्भुत है, जिसने भौतिक जीवनकी चुनौतियों, जीवनके शाश्वत प्रश्नों, आस्थाओं-अनास्थाओंके द्वन्द्वों आदिको बड़ेही स्वाभाविक एवं भोगे हुए यथार्थकी ताजगी के साथ प्रस्तुत किया है। लेखकीय कौशल और खतरा उठानेकी शक्ति दोनोंही प्रशंसनीय है क्योंकि आजके युगमें उसने जीवन और मृत्यु, मोह-माया, कर्मवाद आदि जैसे दार्शनिक एवं नीरस प्रसंगोंको लेकर पुर्नजन्मकी एक घटना के कथातंतुओंसे मैसूर प्रान्तके ग्रामीण यथार्थका उद्घाटन करनेवाली कथा कही है। यह बात अलग है कि ग्रामचेतनाकी समग्रता उसमें रूपायित नहीं हो पायी है, फिर भी जिसप्रकारसे अन्धविश्वास, रूढ़ परम्पराएं वहाँ जड़ जमाये बैठी है, उन्हें देख यही लगता है कि अभी वहाँ शैक्षणिक चेतनाकी अपरिहार्य आवश्यकता है।

उपन्यासकी कथाका सम्बन्ध पुनर्जन्म, अन्धविश्वासों तथा इनके कारण उत्पन्न पारिवारिक जटिलताओंसे है। परिणाम स्वरूप परिवारका विघटन होता है। प्रसंगवश परम्पराओंके बोझसे मुक्ति पानेके बादभी नयी चेतनाको ग्रहण करनेकी असमर्थतासे उत्पन्न समस्याओंकी झलकभी उपन्यासमें मिलती है। औपन्यासिक संरचनामें न तो संश्लिष्टता है और न पारस्परिक संग्रंथन। कई स्थलोंपर कभी एक पात्रको, तो कभी दूसरे पात्रको कहानीकी पुनरावृत्ति करनी पड़ती है। सपाट बयानी तो है ही। पात्रों में अच्चण्णा, जोगइय्या, बेंकम्मा, तिरूमलजोइसी, विश्वेसर जहाँ प्राचीनताके पोषक हैं, वहां अच्युतमें नयापन है। लेकिन उसके नयेपनमें वह तेजी नहीं है जो उसके लिए अपरिहार्य थी। विश्वेसरमें स्वाभाविकता और काल्पनिकता दोनोंका मेल है। इन सबके बावजूद कथानकमें गति और बहाव दोनों हैं। पाठक जिज्ञासु बना घटनाओंको तेजीसे पढ़ता चला जाता है और लेखकीय दार्शनिकता कहीं आड़े नहीं आती। दार्शनिक संदर्भोंमें भी रोचकताका प्रभाव ज्योंका त्यों दिखता है। कृति अपनी वैचारिकतामें नवीनता और प्राचीनता दोनोंका पुट लिये हुए है। आवरण सज्जामें कृति नखशिख दुरुस्त है।

—डॉ० ज्ञानचन्द्र गुप्त

कहानी-संग्रह

एक शहरकी मौत

लेखिका : अमृता प्रीतम; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी, दिल्ली-६। पृष्ठ : १६०; क्रा. ७३; मूल्य : ७.०० रू.।

अमृता प्रीतमका यह कहानी-संग्रह इस दृष्टिसे विशेष महत्वपूर्ण है कि इसमें विभिन्न प्रान्तों, वर्गों, संप्रदायों एवं धार्मिक आस्थाओंवाले विभिन्न चरित्रोंको लेकर कहानियोंके ताने-बाने बुने गये हैं और इसप्रकार एक व्यापक कथा-संवेदनाकी मिसाल प्रस्तुतकी गयी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस संग्रहमें अमृता प्रीतमकी कुल सत्रह कहानियाँ संग्रहीत हैं जो अलग-अलग प्रान्तों तथा वर्गों और संप्रदायोंके चरित्रोंपर आधारित हैं तथा उनके जीवनकी विभिन्न घटनाओंसे संबंधित हैं। इनमेंसे 'एक शहरकी मौत' पंजाबी पात्रोंको लेकर लिखी गयी है तो 'मित्रा' तथा 'कल और आज' इण्डियन तथा ग्रीक माइथालॉजीको लेकर; 'कोकली' मछेरे पात्रोंपर आधारित है तो 'लटियाकी छोकरी' तथा 'गांजेकी कली' मध्यप्रदेशीय पात्रोंपर आधारित और 'जंगली बूटी', 'न जाने कौन रंग रे', 'सतलतिया' तथा 'गरुण गंगा' उत्तरप्रदेशीय चरित्रोंकी कहानियां हैं तो 'उधड़ी हुई कहानियाँ' आदिवासी तथा 'अदालत' असमिया चरित्रोंकी कहानियां।

इतनाही नहीं, अमृता प्रीतमने अपने इस संग्रहमें विदेशी चरित्रोंको लेकर भी कई कहानियां लिखी हैं जो विदेशी-जीवन तथा चरित्रोंकी अच्छी खासी झलक प्रस्तुत करती हैं और अपने पाठकोंको विदेशोंके संबंधमें महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्रदान करती हैं। ऐसी कहानियोंमें 'आज' पाकिस्तानी एवं बंगला-देशी चरित्रोंपर आधारित है तो 'केनीका सफर' अर्ध-पालिश और अर्धबंगाली पात्रोंपर; इसीप्रकार 'खाली कैनवस' बल्गारियन तथा 'गुलियाना का एक खत' युगोस्लाव पात्रोंको लेकर लिखी गयी हैं तो 'दो खिड़कियां' रोमानियन पात्रोंकी कहानी है।

कहनेकी आवश्यकता नहीं कि अमृता प्रीतमने इन विभिन्न देशों, प्रान्तों, वर्गों एवं संप्रदायोंके जीवनको अपनी इन कहानियोंमें व्यक्त करनेका प्रशंसनीय प्रयास किया है। उनका अनुभव-संसार व्यापक है और विभिन्न वर्गों एवं संप्रदायों तथा संस्कृतियोंके विभिन्न चरित्रोंकी समझ बड़ी पैनी और बारीक है। इण्डियन और ग्रीक माइथालॉजीपर आधारित उनकी कहानियां विशेष उल्लेखनीय हैं।

अमृता प्रीतमकी इन कहानियोंमें शिल्पकी ताजगी तथा भाषाकी प्रादेशिक सोंधी गंध भी है जो उनकी कला को एक विशेष आकर्षणसे भर देता है और उसे अधिक रोचकता तथा प्रियता प्रदान करता है।

—डॉ. रमेश तिवारी

आबनूस

लेखक : सुरेन्द्र अरोड़ा; प्रकाशक : भारती भाषा प्रकाशन, ५१८१६ बी. विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली-३२। पृष्ठ : १०२, क्रा. ७४; मूल्य ५-५० रु.

सुरेन्द्र अरोड़की कहानियोंका दूसरा संग्रह 'आबनूस' उन्हें एक उदीयमान कहानीकारके रूपमें प्रतिष्ठित करता है। कमलेश्वरका कहना है कि ये कहानियां 'भूख संत्रास और 'सेल्फ' की कहानियाँ हैं' जो शायद इस संग्रहकी कहानियोंकी सतही प्रशंसा या समीक्षा है। दरअसल ये कहानियां 'भूख, संत्रास और सेल्फ' की कहानियां न होकर एक तृप्त नवयुवककी 'स्वत्वहीनता' को उजागर करती हैं जिसका 'संत्रास' से कोई वास्ता नहीं। इसीलिए इन कहानियोंमें वासना, रोमांस, प्रेम और तृप्तिके व्यक्तिपरक दृश्य हैं जो सामाजिक सन्दर्भोंसे कटे हैं और एक रूमानी असंगतियोंमें ग्रस्त हैं। किन्तु इसके साथही वे एक तरुण लेखककी आकांक्षाओं, दुर्बलताओं और असफलताओंके प्रति पाठकोंकी संवेदनाको जागते हैं और सहानुभूतिकी मांग करते हैं। 'मरीचिका' शीर्षक कहानीका पगला आदमी, 'इन्तजार' कहानीका प्रतीक्षाकुल पति, 'मनके दायरे' कहानी का रमेश और 'आबनूस' का 'मैं' एक ऐसे नवयुवककी मनोदशाओंके चित्र पेश करते हैं जो रूमानी अतृप्तिके शिकार हैं। कहना ही होगा, कि 'रूमानी-अतृप्ति' का शिकार वही व्यक्ति होता है जो वास्तविक जीवनकी आधार-भूत समस्याओंसे मुक्त हो—दूसरे शब्दोंमें भौतिक-तृप्तिमें डूबा हो। जो लोग 'रूमानी—अतृप्तियों' की तृप्तिके लिए साहित्यको माध्यम चुनते हैं उनके लिए वास्तविक जीवनके अभाव (जैसे रोटी-रोजीकी समस्या, बेरोजगारी, आर्थिक शोषण और व्यवस्थाका दमन आदि) साहित्येतर विषय हो सकते हैं; किन्तु जो लोग साहित्यानुभूति और समाजीकृत जीवनानुभूतिके युग-युगसे चले आते पारस्परिक सह-भाव और तादात्म्यको, जीवन और साहित्यके अन्योन्याश्रित सम्बन्धों और सन्दर्भोंको वाणी देनेके लिए साहित्य-सृजन करते हैं, वे अपने परिवेशसे अछूते नहीं रह सकते। सामाजिक सन्दर्भों और अपने राजनीतिक-सामाजिक परिवेशके प्रति निर्लिप्त हो रहना तटस्थता नहीं है, बल्कि एक प्रकारकी जड़ता है। इसीलिए 'आबनूस' कहानी संग्रहका लेखक 'कहीं न कहीं भयानक ठण्डेपन' का शिकार है। 'आगका जंगल' (पहला कहानी संग्रह) के बाद यह आबनूसी ठण्डापन एक साहित्यिक और सांस्कृतिक पिछड़ेपनका आभास देता है।

इसके बावजूद, 'किस्सा तोता-मैनाका' 'मरीचिका', 'आबनूस' और 'परछाइयां' आदि कहानियाँ (एक संवेदनशील और सृजनधर्मी कहानीकारके रूपमें) सुरेन्द्र अरोड़ा को प्रतिष्ठा प्रदान करती है। यदि वे अपनी संवेदनशीलता और सृजनधर्मिताको जन-जीवनके सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सन्दर्भोंके लिए समर्पित कर सकें तो उनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी-कला 'कोरी और तटस्थ साहित्यिकता' के आवरण से मुक्त होकर सही अर्थोंमें सार्थक-साहित्यिकताका रुतबा ग्रहण करेगी।

—राजकुमार सैनी

गहरेबाजी

(भोजपुरी कहानी-संग्रह)

लेखक : ईश्वरचन्द्र सिनहा; प्रकाशक : भोजपुरी संसद, जगतगंज, वाराणसी—२। पृ० : १००; क्रा. ७३; मूल्य: ४-०० रु०।

प्रस्तुत संग्रहमें भूमिकाके तौरपर 'कथा-यात्रा' शीर्षक के अन्तर्गत प्रसिद्ध कथाकार समीक्षक डॉ० विवेकी रायने लिखा है, "खड़ी बोली हिन्दीके अभ्यस्त पाठकोंको अक्सर शिकायत होती है कि भोजपुरी हिन्दी पढ़नेमें अटपटी लगती है और जल्दीही थककर ऊब जाते हैं। शिकायत निराधार नहीं है। भोजपुरी-हिन्दीका लेखक जब उसे 'गढ़ने' लगता है तो उसका सहज प्रवाह आहत हो जाता है। खड़ीबोली हिन्दीकी मानसिकता और पड़नेवाली छाया उसे और असहज देती है।"

इस परिप्रेक्ष्यमें प्रस्तुत संग्रहकी कहानियोंको देखें तो उनकी भाषागत सहजताका प्रवाह पाठकोंको इसप्रकार बहा ले जाता है कि खड़ीबोली और भोजपुरीके अन्तराल का स्मरण भी नहीं रह जाता। संग्रहमें कुल चौदह कहानियां हैं जिनमें कुछेकको छोड़ बाकी सभी कहानियोंकी पृष्ठभूमि काशी नगरी है। स्वर्गीय शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र' की पुस्तक 'बहती गंगा' में चटख बनारसी रंग था; बहुत कुछ यही बनारसी रंग प्रस्तुत संग्रहकी कहानियोंमें भी दिखायी देता है। इन कहानियोंमें लोक-कथा है, पौराणिक कथा है हास्य-व्यंग्य है, नयी कहानी है, अकहानी है और जासूसी कहानी भी है। मजा यह है कि इसके बावजूद शिल्पका कहीं दुहराव नहीं है। कथाकारको समयके साथ बदलती जाती हिन्दी कथाधाराकी गहरी पकड़ है और इसके परिणामस्वरूप वह इन कहानियोंमें परिवर्तित विषय-वस्तुकी पहचानकर पाया है।

संग्रहकी दो सबसे अच्छी कहानियां हैं—'राधा गावत हौं' और 'भैरवी क साज'। जहाँ 'राधा गावत हौं' में आधुनिक जीवनकी पहचान साफ-साफ उभरी है और आधार राधाके असमय उजड़े सौभाग्यकी घनीभूत संवेदनाको लोकगीतकी एक कड़ीके जरिए व्यंग्यका रूप देकर पाठकोंको झकझोर देता है वहीं 'भैरवी क साज' का कलात्मक चरमोत्कर्ष पाठकोंके मनमें कुतूहलके साथ-साथ एक अजीब-सी सिहरन पैदा कर देता है। 'राधा गावत हौं' का 'ट्रीटमेंट' कथाकारकी वैचारिक परिपक्वता और तटस्थ दृष्टिका परिचायक है तो 'भैरवी क साज' का रूमानीपन और अन्तर्विरोध, परिवेशके प्रति उसकी सजगताका।

'दसखत' अकहानी है और इसमें अत्यन्त कड़वे मध्यवर्गीय जीवनका व्यर्थता-बोध है। डा० विवेकी रायके शब्दोंमें कहूँ तो युगीन जीवनकी विसंगतियोंके धक्केसे टूटते-टूटते भी यदि जीवनका कोई अंश शेष है तो उसे लेकर कोई व्यवस्थापूर्ण सृजन हो सकता है किन्तु जब सब कुछ बिखरकर खण्ड-खण्ड हो गया है और क्या भीतर क्या बाहर, समूचा जीवन एक अन्तहीन यातना और घुटन का पर्याय हो गया है तो इन एब्सर्ड स्थितियोंके साक्षात्कार से उत्पन्न सृजनात्मकताकी चुनौतीको कहानी नहीं अकहानी ही स्वीकार कर सकती है। 'गहरेबाजी' में एक खोये सांस्कृतिक आयामकी स्पष्ट खोज है।

कथाकार मूल रूपसे पत्रकार है मगर कहानी लिखते समय वह पत्रकार एकदम नहीं रह जाता। उसे कहानीकी टेकनीक, शिल्प, चालू फैशन आदिकी एक सीमा तक ही अपेक्षा होती है। उसकी कहानियोंमें कथा-चेतना स्वयं अपनी राह बना लेती है अनगढ़ मगर आकर्षक! उसमें गहरी सूझ है और चुस्त पकड़ है। कहानियोंका अप्रत्याशित अन्त या अन्तमें नयी जगहपर चोट देकर पाठकोंको चौंका या तिलमिला देना, इन कहानियोंकी विशेषता है। सभी कहानियां बिंबात्मक हैं और सबसे बड़ी बात यह है कि कथाकार हर कहानीको आधुनिक सेक्सी-स्पर्शके फैशन या फार्मूलेसे बचाता गया है। दूसरे शब्दोंमें, उसकी कहानियां 'सेक्स' के बगैर भी पाठकोंको बांधती हैं, आकर्षित करती हैं। 'सेक्स' को केन्द्र बनाकर लिखनेवाले कथाकारों के लिए इन कहानियोंसे अच्छी सीख मिलती है।

—शम्भुनाथ मिश्र

प्रकर विज्ञापन का

उत्तम साधन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाटक

उलझी आकृतियां

लेखक : हमीदुल्ला; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, बी/४५-४७, कनाट प्लैस, नई दिल्ली-१ । पृष्ठ: २३२ क्राउन : ७३; मूल्य ९-०० रु० ।

उलझी आकृतियाँमें' तीन व्यंग्य नाटक— समय संदर्भ, एक और युद्ध, उलझी आकृतियाँ—संकलित है। तीनों व्यंग्य नाटक हैं और तीनों अपने कथ्य और तकनीक में अपनी नवीनताकी छाप छोड़ जाते हैं।

वैज्ञानिक उपलब्धियोंके इस युगमें हममें से प्रत्येक किसप्रकार अपनेही अस्तित्वकी खोजमें व्याकुल होकर भटकनका अनुभव कर रहा है, हमारी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संस्थाओंका वास्तविक रूप क्या है और हम सब, पता नहीं क्यों, किस-किस बिसातपर शतरंजके मोहरोंके समान आचरण कर रहे हैं' इस आत्मभोगी परिस्थितियों और यातनाओंकी कथा नये परिवेशमें इन नाटकों में उभरकर आयी हैं।

'समय संदर्भ' का कथ्य है 'आजकी जिन्दगीके बारेमें आजके इनसानके बारेमें, उसकी जरूरतोंके बारेमें, उस तमाम सारे दर्दके बारेमें जो दुनियां बननेके बाद इनसानने बरदाश्त किये हैं, इनसानी तबाहीके बारेमें। – आजका इनसान मशीनी बन गया है और मशीनी मानव शायद किसी दिन इनसान बन जाये, या इनसानके मुकाबलेमें आकर खड़ा हो जाये। यह आपको अजीब लग सकता है, लेकिन नामुमकिन बात नहीं है।' यह कथन है नाटकके सूत्रधार दोका जोकि नाटकको मात्र मनोरंजनसे जोड़नेका हामी न होकर मानव मात्रकी अभिव्यक्तिका माध्यम मानता है।

इसके बाद प्रस्तुत होते है वैज्ञानिक बोस जिन्होंने मशीनी मानवका निर्माण किया है परन्तु जो अपने उन मशीनी मानवोंके मध्य रहते हुए अपनी गृहस्थ-भावनाओं को विस्मृत कर चुके हैं और एक दिन अपने उन मशीनी मानवोंमें भावना, चिन्तन और विचारोंका उदय होनेपर, मशीनी मानवपर मनुष्यकी अत्यधिक निर्भरताके बाद कह उठते हैं 'मशीनी मानव, मशीनी मानव, मशीनी मानव। तंग आ गया हूँ सुनते-सुनते। मैं नहीं जानता था कि आदमीका यह निर्माण एक दिन उसे बेवकूफ बना देगा। बन्द करो यह सब।' (पृ० ४४-४५)।

किन्तु अन्तमें बोसको मशीनी मानवोंसे समझौता करना पड़ता है। इस नाटकमें प्रतीकोंके माध्यमसे यह बताया गया है कि मशीनी युगमें मात्र एक कदम आगे पीछे रखनेसे ही खुशहाली तबाहीमें बदल सकती है। इस लिए मशीनोंसे समझौता और उनमें सन्तुलन आवश्यक है।

'एक और युद्ध' में डाक्टर और उसकी मरीज आशा के माध्यमसे आजके सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक ढाँचेमें लगे हुए उन घुनोंकी प्रयोगात्मक पद्धतिसे चर्चा की गयी है जो उसको खोखलाकर नष्ट कर रहे हैं। आशा, जो अत्यधिक भावुक है, दिलके दौरेकी शिकायतसे परेशान है। डाक्टर आशासे उसके विगत जीवनके वृत्तान्त को जानना चाहता है जिससे उसकी बीमारीका निदान प्रस्तुत कर सके। इसके बाद उसके विगत जीवनकी संपूर्ण घटताएं, जिनमें घुटन, दर्द, सामाजिक द्वन्द्व और सहानुभूति, भ्रष्टाचारके प्रति आक्रोश, राजनीतिक दुराचारको नंगा खड़ा करनेकी भावना विद्यमान है, फ्लेश बैक पद्धतिसे मंचपर प्रस्तुत की जाती है। विशेष रूपसे ध्वनि और प्रकाशका संयोजन इस नाटककी मंचीयतामें सहायक हुआ है।

'उलझी आकृतियाँ' में कुल सात पात्र हैं और सभी आधुनिक कार्यालयी एव सामाजिक भ्रष्टाचारी सभ्यताके प्रतीक हैं। आधुनिक कार्यालयोंमें चपरासीसे लेकर अधिकारीतक सभी कामचोर, असत्यभाषी, लालची, व्यसनी और चरित्रहीन है। यहाँ चपरासीभी अपनेको अधिकारीसे कम नहीं समझता और छोटेसे छोटा क्लर्क और अधिकारी महिला कर्मचारियोंकी ओर ललचायी गिद्ध दृष्टि लगाये रहता है। ये महिला कर्मचारी भी इतनी अभ्यस्त हो जाती हैं कि अपना उल्लू सीधा करनेके लिए सब कुछ मान लेती है। जी-हुजूरी मनो सबका मुख्य कर्तव्य हो गया है और इसके बाद बड़ा बाबू मेजपर टाँगें रखकर पान चबा सकता है, पी० ए० वेला खाली बैठे नाखूनोंपर पालिश लगा सकती है और चपरासी रामदीन स्टूलपर बैठकर ऊंघ सकता है।

इन परिस्थितियोंमें बिलोंके भुगतान रुके रहते हैं, आफिसोंकी वस्तुएं दूसरों द्वारा इस्तेमाल की जाती रहती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, किसीभी व्यक्ति द्वारा प्रस्तुत प्रार्थनापत्र एक फाइलसे दूसरी फाइलतक दौड़ता-दौड़ता थक जाता है परन्तु महिला पुरुष कर्मचारियोंके रोमाँसमें कोई कमी नहीं होती।

नाटकके सभी पात्र अपनी-अपनी जिन्दगियोंके जीवन्त प्रतीक है जो अपनी व्यंग्यपूर्ण परिस्थितिके कारण हृदय तक पठनेकी सामर्थ्य रखते हैं।

समग्र रूपसे यदि हमीदुल्लाके इन नाटकोंको देखा जायेतो उनमें आधुनिक रंगनाटकोंकी आधुनिक तकनीक को अपनाया गया है जिनमें विस्तृत रंगमंच अथवा दो-तीन छोटे मंचोंकी आवश्यकता होगी। ये सभी मंच विशिष्ट प्रकाश व्यवस्थासे सुसज्जित हों जिससे आवश्यकतानुकूल प्रभाव उत्पन्न किया जा सके।

तीनों नाटकोंकी भाषा पात्रोंकी चरित्रगत, मनोगत और आधुनिक सभ्यतासे युक्त समाजकी अवस्थाका दिग्दर्शन करानेवाली है। नाटकोंमें कार्य-व्यापार कहीं बहुत तीव्र है तो कहीं धीमा, परन्तु वह समयके साथ दौड़ता है।

तीनों नाटक परिष्कृत व्यंग्यके उदाहरण हैं और हास्य-व्यंग्यके क्षेत्रमें जैसे फूहड़ हास्य और व्यंग्यकी परम्परा व्याप्त रही है उससे हटकर आधुनिक परिवेशमें ले जानेमें सक्षम हैं।

—डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल

सुनयना

लेखक : डॉ० स्वर्णकिरण; प्रकाशक : मिथलेश प्रकाशन, आरा (बिहार)। पृ. : १०१; क्राउन, ७२; मूल्य : ३-०० रु०।

लेखकके अनुसार यह एक 'सैद्धान्तिक नाटक' है। नाटकके विविध रूपोंको देखते हुए यह संज्ञा सुविचारित लगती है। पश्चिममें जिसप्रकार 'मोरालिटी प्ले' (नैतिकता प्रधान नाटक) का प्रचलन हुआ, या उनके पूर्व 'मिरकल प्ले' (चामत्कारिक नाटक) का जन्म हुआ, उसी प्रकार, लगभग उन्हींकी प्रतिस्पर्धामें हिन्दी नाट्य-विधाके अन्तर्गत भी कई नये नाम उछाले गये हैं। 'सैद्धान्तिक नाटक' नाम इसी प्रेरणाका परिणाम है। लेखकने एक स्थानपर इसका स्पष्टीकरण देते हुए स्वयं कहा है —'मात्र सैद्धान्तिक नाटककी संज्ञा देना अयुक्तियुक्त नहीं।"

इस सैद्धान्तिक पृष्ठभूमिमें 'सुनयना' विचारणीय है। यह नाटक कुछ पौराणिक पात्रों, जैसे— 'सीरध्वज' (मिथिलानरेश जनक), सुनयना (पट्टमहिषी), वंदीदत्त (राजपण्डित) शतानन्द (राजपुरोहित) अंगजा, माधवी (क्रमशः वंदीदत्त एवं शातानंद की पत्नियां), कुलानंद (मंत्री) जीवक (सुनयनाके भ्राता) आदिसे सम्बद्ध है। इनके माध्यमसे नाटककारने नारीकी स्थिति, सत्‌शिक्षा, विवाह बनाम मुक्तप्रेम, अध्यात्म, भौतिक उपलब्धि और साम्प्रतिक संकट जैसे प्रश्नोंपर शास्त्रार्थ कराया है। नाटकमें घटनाएं कम हैं और दर्शन-मननका उपक्रम अधिक है। सिद्धान्तोंकी असंगतिसे बचनेका यत्न करनाही इसका मूल प्रयोजन है। इसी उद्देश्यसे उसने जीवककी भौतिकतावादी दृष्टि, जनक (विदेह) की विरक्ति और सुनयनाकी मानकुण्ठाकी आवर्जना की है। इसप्रकार पौराणिक प्रसंगों में युगबोधके सूत्र खोजनेका यत्न भी किया गया है।

नाटक अपने कथ्य और शिल्पमें समस्तरीय है। भाषा परिनिष्ठित है। कुछ संवाद कृत्रिम हो गये हैं तथा पात्रानुपयुक्त भी। कुछ शब्द-प्रयोग चिन्त्य हैं, जैसे—स्त्रियोचित, प्रकटित (७३), बुलाहट (५५) शब्दतः (११) आदि। मुद्रणकी अशुद्धियां (यथा विसुब्ध, सत्म मीमा, विसर्जिन, आग्री अस्वस्थय, बलीसी खटकनेवाली हैं। साजसज्जा साधारण है यों, नये प्रयोगके रूपमें यह कृति पठनीय तो है ही।

—डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

काव्य संकलन

जय इन्दिरा

प्रधान सम्पादक : ठाकुर भूपति सिंह; प्रकाशक : नव साहित्य प्रकाशन, पाटन, जबलपुर (म. प्र.)। पृ. : ६४; क्राउन ७४; मूल्य : ३-०० रु०।

'जय इन्दिरा' भारतकी प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधीके सम्बन्धमें प्रस्तुत कुछ चुने हुए कवियोंकी चुनी हुई कविताओंका संग्रह है। संग्रहके 'आमुख' में संपादकका स्वीकरण है कि 'जय इन्दिरा' में व्यक्तिके गीत नहीं, समष्टिके गीत गाये गये हैं। यदि समष्टिके आदर्श इन्दिराके व्यक्तित्वमें समाये हुए दिखायी दें तो वह व्यक्ति-पूजाका प्रतीक नहीं, वह हमारे महान आदर्शोंकी आराधनाका प्रतीक है। इंदिरा गांधीके सम्बन्धमें यह टिप्पणी कुछ लोगोंकी दृष्टिमें भले अतिवादी हो, पर गहराईमें उतरकर विचार करनेपर टिप्पणी अतिवादी नहीं कही जा सकती। जिस कठिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समयमें इन्दिराजीने जिस साहससे काम लिया है और जिस निर्भीकतासे देशकी बागडोर संभाली है, उस साहस, उस निर्भीकतासे कम लोग काम लेंगे। बाल कवि वैरागी, सोहनलाल द्विवेदी, श्यामनारायण पांडेय, भवानीप्रसाद तिवारी, ठाकुर भूपतिसिंह आदि सुपरिचित कवियोंसे लेकर रामकृपालप्रसाद, विजयदत्त श्रीधर, सुन्दर जैन—अल्प परिचित या अपरिचित हस्ताक्षरतककी श्रद्धा-सुरसरिमें स्नानका अवसर देकर प्रधान सम्पादकने वस्तुत: एक आनुष्ठानिक कार्यसम्पन्न किया है और इन्दिरा गाँधीके व्यक्तित्वको हिमालयी व्यक्तित्व सिद्ध किया है। कुछ-एक उदाहरण :

वीर जवाहरलालकी ज्योतिऽ,पोती मोतीलालकी,
जय जय जय कमलाकी जायी जय ज्वाला बंगालकी…
मुक्तिवाहिनी जिंदाबाद, मित्रवाहिनी जिंदाबाद,
नव वसुन्धरा जिंदाबाद, वीर इन्दिरा जिंदाबाद…
—बालकवि वैरागी, पृ० १०

गूंज उठी धरती अंबरसे जय इन्दिरा भवानी।
—सोहनलाल द्विवेदी, पृ० १२

मनुजताके चीत्कारोंकी व्यथासे चूर हो तुम।
श्यामनारायण पांडेय, पृ० १३

तुम प्रलयचारिणी, अनयवारिणी साथ-साथ।
तुम मुक्तिवाहिनी, विजयवाहिनी साथ-साथ।
- भवानीप्रसाद तिवारी, पृ० १५

भारतकी तुम व्याप्त आत्मा, स्वर्ण-अतीत उदित हो।
जयति इन्दिरा देवी तेरी जय हो, सदा विजय हो।
ठाकुर भूपति सिंह, पृ० २३

कवि राजेश उपाध्यायने इन्दिरा गांधीके नामके व्यंजनोंको ग्रहणकर अच्छी समस्यापूर्ति की है—'इ' से ईषत् शक्ति अनोखी… । द' से दानव संघारिन तू…, 'र' से रक्षक मातु अनोखी : ग' से गीर्वाण भारतकी…'ध' से धैर्य अदम्य रखे जय जय हे शक्ति महान् [पृ. ३०]। कवि-यित्रियोंमें कुमारी रेखा वर्मा वर्षा अय्यरकी श्रद्धांजलि कविता अपने कथ्यकी रमणीयताके कारण सुन्दर है। अन्तिमपत्र 'दीदी इन्दिराके नाम' लिखकर संग्रहके प्रधान सम्पादक ठाकुर भूपतिसिंहने प्रशंस्य कार्य किया है। संग्रह निस्सन्देह ऐतिहासिक महत्वका है।

— स्वर्ण किरण

परवलय

कवि : राजेन्द्र धस्मान; प्रकाशक : शशि प्रकाशन, ४।११५ विश्वासनगर, सरबरिया मार्केट, शाहदरा, दिल्ली-३२। पृष्ठ : १३६; डिमा० ७३; मूल्य : १०-०० रु०।

कविताकी कला गणितके फार्मूलोंसे भी दृष्टांत-बद्ध की जा सकती है, 'परवलय' की कविताएं पढ़कर यह बात जानी जा सकती है। नगरमें 'आत्म निर्वासित' मध्यम-वर्गीय वेतनभोगी बुद्धिजीवी कविकी ये कविताएं उसके बिखराव, भटकाव, उखड़ेपन और खोये-खोये अन्दाजको तो रेखांकित करती ही हैं साथही उसकी साज-सज्जा, बनाव और नक्शेबाजीका भी नमूना पेश करती हैं। 'मैं कागज लेकर बैठा हूँ मौन / इसीतरह घन्टोंतक बैठा रह जाता हूँ' या 'इस होनेमें इकाई / सम्पूर्णता / परम्परा / के धागोंसे / एक भ्रम—जाल बुनूं / और तान दूं उसे' जैसी सूक्तियां इस बातका संकेत करती हैं कि राजेन्द्र धस्मानापर 'अस्तित्ववाद' की खुमारी चढ़ी रही है। इसके साथ-साथ कहीं-कहीं सामाजिक सन्दर्भोंके फ्लैशेज भी चमक चमक उठते हैं, लेकिन एक सही यथार्थबोधके स्थानपर एक रूमानी भाव-बोध वहाँभी बना रहता है जो इन कविताओंको अपने आस-पासके परिवेशका एक धुंधला-दर्पणही बनाये रहता है। यह दर्पण कुछ साफ और सहज ढंगके प्रतिबिम्ब दे पाता तो धस्मानाकी कला सार्थकताकी ओर कदम बढ़ा पाती। पर ऐसा नहीं हुआ, वह मध्यम-वर्गीय रूमानी यथार्थकी एक 'फैंटेसी' होकर रह गयी है।

— राजकुमार सैनी

आंसूकी गीता

कवि : योगेन्द्र दिवाकर; प्रकाशक : दिवाकर साहित्य सदन, २१४, वीणा मन्दिर (पारस छविगृहके पीछे) सागर (म. प्र.)। पृ० : ५६; क्राउन : ६९; मूल्य : १-०० रु०।

'आँसूकी गीता' युवक कविकी कुछ-एक मुक्तक कवि-ताओंका संग्रह है जिसके केन्द्रमें आँसू अवस्थित है। कवि 'आँसू' को महत्वपूर्ण मानता है और यह कहता है मत 'आँसूको गुमराह करो, आँसू हमजोली होता है; मत आँसू का अपमान करो, आँसू तो मोती होता है [पृष्ठ ४०]। आँसू नयनोंके दर्पण हैं, ये हृदयके प्रेमके परिचायक हैं। कवि दर्शनके आलोकमें आँसूको विस्तारितकर, काव्यका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप देता है । प्रेमपात्रके प्रति सच्चे आँसूका प्रस्तुतीकरण मानवोचित गुण है । कवि ऐसे गुणसे वंचित नहीं है । यह 'आँसू' पर ध्यान न देनेवाले लोगोंपर व्यंग्य करता है —

कब मानवताके काँटेपर किसने आँसूको तोला है ।
जितनेभी ढोल यहाँ बजते हर ढोल वस्तुतः पोला है ।

कवि दर्द बेचकर सुखका अनुभव करता है यह जीवन ऊब चुका है, यह कल्पित महल बनाते । मानसका पानी सूखा, ये कोमल कमल खिलाते, कल सही, उधार अभी मैं यह दर्द बेचता हूँ जी । मैं द्वार तुम्हारे आकर यह दर्द बेचता हूँ जी । [पृ० २८] 'आँसूकी गीता' शीर्षक लम्बी कवितामें आँसूके उदाहरणोंको जुटाकर कवि अपने अध्य-यनको तो संकेतित करता है पर 'आँसू' के सम्बन्धमें ठोस वस्तुनिष्ठ पर्याय नहीं रखता या आँसूके सम्बन्धमें कल्प-नात्मक बिंब नहीं रखता । मर्मस्पर्शितापर ध्यान रहता तो कवि अपनेको वर्णनसे बचाता पर वह शायद पाठकोंकी चेतनापर अधिक विश्वास करनेको तैयार नहीं है । आँसू गंगामें धुलता है, आँसू यमुनामें बहता है । आंसू पर्वतसे गिरता है, आँसू सागरमें रहता है । आँसूकी उपयोगिताको नजरअन्दाज करनेके लिए कवि सपनेमें भी तैयार नहीं है । कविका प्रयास उपेक्ष्य नहीं है ।

—स्वर्ण किरण

कांवर भर धूप

लेखक : नारायणलाल परमार; प्रकाशक : छत्तीसगढ़ विभाग, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, रायपुर । पृष्ठ : ५६; डिमा. ७३; मूल्य : ५-०० रु० ।

प्रस्तुत संकलनके पहले कुछ गीत धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तानमें पढ़े थे, अच्छे लगे थे । फिर, इस पुस्तकपर लिखनेके पूर्व वह प्रभाव मैंने पुनः याद करके सोचा कुछ और अच्छे गीत पढ़नेको मिलेंगे । पर यह भावना टूट-सी गयी यह पुस्तक पलटकर । पहले पृष्ठसे लेकर लगभग अन्तिम पृष्ठतक सभी-पृष्ठ असफल लगे । अनचाहा प्रयोग, मनमाना वाक्य विन्यास, गलत बिम्ब-प्रयोगोंसे भरी पड़ी इस पुस्तकमें ऐसा कुछ नहीं, जिसके बारेमें चर्चाकी जाये । क्या हिन्दीका आम लेखक इतना विपन्न हो गया है कि नये अनुभवों, नयी रचनाशीलता, विचारोंसे परे है ! यही दिक्कत कमोवेश हर गीतकारके साथ है ।

—मंजुल उपाध्याय

अल्ला ईश्वर

कवि : डॉ० सत्यनारायणसिंह 'गहमरी', प्रकाशक : जिला श्रमिक समन्वय समिति, शहडोल (म. प्र.) । पृष्ठ : ५६; क्रा. ७३; मूल्य : २.००रु. ।

श्रमिकोंके लोकप्रिय नेता स्वर्गीय कमलकुमार चोगले की स्मृतिमें प्रस्तुत यह काव्य युवा कवि डॉ० सत्यनारा-यण सिंह गहमरी' के द्वारा लिखित एक अनुष्ठान काव्य है । कवि 'आत्मकथ्य' (भूमिका) में कहता है कि मेरी यह पवित्र भावना है कि यह पुस्तक महान पथके भटकते हुए पथिकोंको उनकी समस्त वास्तविक सत्ताओंका पूर्ण अनुभव करानेमें समर्थ होगी । कविका यह कथन अति-रंजित नहीं कहा जा सकता । कवि वस्तुतः यह मानकर चलता है कि मनुष्य अपने भाग्यका स्वामी और अपने जीवनका राजा है । कविका आत्म-विश्वास 'शक्ति-स्रोत' में स्पष्ट है :

बोल रहा मजदूर देशका, मैं श्रम स्रोत बहानेवाला ।
चीर धराका हृदय स्वेदसे, अंकुर प्रगति उगानेवाला ।

कवि कमलकुमार चोगलेको कुशल श्रम संकल्पी, कर्त्त-व्यपरायण, गरीबीको वरदान समझनेवाले, संतोषी करुण हृदय, क्रांतिप्रेमी आदि समझता है । मतलब यह कि चोगले साहब मानवोचित गुणोंसे सम्पन्न एक श्रद्धास्पद व्यक्ति थे । कवि इन्हींको केन्द्रमें रखकर अपना कथ्य निवेदित करता है : सच्चा सन्तोष वहींपर; जो चिथड़ोंपर इतराता/ पाकर वैभव थोथेको, अधिकार नहीं ठुकराता/ [पृ०१६] तुम सत्व-सत्वके ज्ञाता, जगमें विवेक बिखराये/ धूमिल-सा मेरे मनको, अनुपम प्रकाशमें लाये/पाकर शीतलता तेरी, तरु पल्लव क्या मुरझाये /सोची चेतनता जागी, आँखोंमें ज्योति समाये / [पृ. २०] / हममें तुममें जड़ चेतन नील गगन पावसमें भी / बसता है अल्ला-ईश्वर पल-पल छिपे प्रलयमें भी / अंतरमें अंतरमें मेरे होता रहता संघर्ष निरंतर /मृत्युके बाद पड़ा क्या जीवन का बड़ा समुन्दर [पृ० ५०] ।

अल्ला ईश्वरको गवाही देकर अपने दुःख-दर्दकी गाथा सुनानेवाला कवि चोगले साहबके माध्यमसे युग एवं जीवन की प्रतिक्रियाको सरल शब्दोंमें रखता है । काश कविका छंदपर अधिकार रहता, एकही व्यक्तिको कहीं तू, कहीं तुम नहीं कहता, कहीं 'तेरा' कहीं 'तुम्हारा' विशेषणके प्रयोगसे बचता । यों अल्ला ईश्वर चोगले साहबकी समदर्शि-ताको संकेतित करनेवाला काव्यका अच्छा शीर्षक मालूम पड़ता है । कवि प्रोत्साहनके योग्य है ।

— स्वर्ण किरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोध आलोचना

सूरदासकी लालित्य चेतना

लेखक : डॉ० परेश; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, बी/४५-४७ कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : २२४; डिमा. ७२; मूल्य : १५-०० रु०।

काव्यकी परख और कवि-दृष्टिके उन्मीलनके लिए चिन्तकोंने अनेक आयामोंकी खोज की है। भारत और पश्चिमी देशोंमें रचना और आस्वादको लेकर अनेकानेक मत प्रस्तुत हुए हैं। इन मतोंके व्याख्यानमें चिन्तनके थोड़े-बहुत उत्तरके कारण पारस्परिक रूपसे इनकी प्रमुखता-गौणता तो सिद्ध की जाती ही रही है, परस्पर एक-दूसरेके अन्तर्भावका प्रयत्न बराबर होता आया है। नित नयी व्याख्याएं एक ही बातको कभी संकुचित अर्थमें ग्रहण करके उसे लांछित करती है या फिर उसकी व्यापकताका प्रतिपादन करके उसके शासनमें ही अन्य तत्वोंको ग्रहण करना सिखाती रही हैं। इसी प्रतिष्ठा-क्रममें अलंकार-शास्त्र काव्यशास्त्रके स्वीकृत रचना-तत्वोंको निकषका रूप मिल जानेपर उनकी रचनापरक दृष्टिपर आस्वादपरक दृष्टिकी प्रमुखता प्राप्त हो जानेके कारण कविके सर्जन-व्यापारकी दिशामें नये तत्वोंकी खोज या ज्ञात तत्वोंके पुनर्नियोजन और पुनर्व्यवस्थापनका प्रयत्न आरम्भ हुआ तो सौन्दर्य-मूल्य और लालित्य-चेतनाके रूपमें नयी चर्चा का सूत्रपात भी हुआ। यों इस लालित्यचेतनाके मूलमें भी प्राचीन तत्वोंको ग्रहण किया गया, किन्तु विगत शास्त्रानु-शीलनमें अलंकार या रसको जिस खण्डित और विभाजित ढंगसे प्रस्तुत किया गया था उससे पृथक् एक समग्र और संगठित दृष्टिको स्वीकार करके रचनाकारको सर्जन-क्षमता को परखने-निरखनेके प्रयत्नके कारण इस नवीन चिन्तनका अलग स्थान बन गया। हिन्दीमें लालित्य सम्बन्धी चिन्तन का सूत्रपात आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीने 'कालिदासकी लालित्य-योजना' के अन्तर्गत किया। उसी क्रममें डॉ० परेशने अब 'सूरदासकी लालित्य-चेतना' का शोधात्मक अध्ययन प्रस्तुत करके पीएच०डी० की उपाधि प्राप्त की है। प्रस्तुत ग्रन्थ उसी प्रबन्धका मुद्रित रूप है।

सूरदासके काव्यका अनुशीलन अबतक अनेक रूपोंमें हो चुका है, उनके जीवन-वृत्तसे लेकर उनके काव्यमें विभिन्न शास्त्रीय तत्वों और काव्य-सौन्दर्यके घटकोंका अनुशीलन प्रस्तुत किया जाता रहा है। इस अनुशीलनमें प्रसंगतः इस प्रकारके तत्व भी निहित रहे हैं जो लालित्य-योजनापर प्रकाश डालते हैं, किन्तु उसे पृथक् रूपसे अनु-शीलनका विषय बनपकर सामने लानेवाला यह पहला प्रबन्ध है।

प्रबन्धका विषय सौन्दर्यानुशीलनसे सम्बन्ध रखता है, अतः काव्य-रचनामें शब्दार्थ, अलंकार और रसके तात्विक अध्ययनको आवश्यक रूपसे ग्रहण करता है, किन्तु प्राचीन काव्यशास्त्रके द्वारा प्रस्थापित और अन्ततः प्रचलित खण्डित और विभक्त रूपमें उनकी चर्चा और नाम-गणना की प्रवृत्तिको कहीं नहीं अपनाता। शब्द, छन्द और अलं-कार तीनोंकी व्याख्या पूर्वगृहीत एवं परम्परित धारणाओं से भिन्न और व्यापक रूपमें प्रस्तुत करते हुए डां० परेशने सूरदासकी चेतनागत प्रवृत्तियोंको और रचनापर पड़े उनके प्रभावको अंकित किया है। इस सारे संगठन सग्रंथन में लेखकको पश्चिमी और भारतीय मतोंका सहारा लेना आवश्यक हो गया है, उसके बीचसे अपने लिए रास्ता उसका अपना खोजा हुआ है। इस खोजमें सार्वत्रिक रूपसे आचार्य द्विवेदी उसके आलोकदाता रहे हैं। प्रबन्ध-लेखन की दृष्टिसे एक बात जो आप्रबन्ध व्यक्त रहती है वह यह कि अन्य शोधकर्ताओंके समान लेखकने पहले एक अलग खण्डमें सैंकड़ों पन्ने रंगकर 'लालित्य–चेतन' का विस्तृत व्याख्यान नहीं किया है। उसने अध्याय-क्रममें सम्बद्ध विषयका सांकेतिक आधार प्रस्तुत करते हुए विवेचन किया है। इससे विषयके नियोजनमें सम्बद्धता और स्पष्टता दोनों ही आ गयी हैं। इसके साथही इस क्रममें शास्त्र-चर्चा और पूर्व आलोचकोंके मतोंका विवेचनभी सूक्ष्मता और सावधानीके साथ हो गया है। इस विवेचनमें यदि शोधग्रन्थोंकी गतिका अनुसरण किया जाता तो सूरके काव्यसे उदाहरण देकर झट आगे बढ़ जानेकी पद्धति अपनायी जा सकती थी, जिससे पाठकके हाथ कुछ न पड़ता। परन्तु परेशने जिस पद्धतिका अनुसरण किया है उसमें उद्धरणोंका सहारा बातकी सही और सीधी पकड़ और चिन्तनकी सूक्ष्मताके लिए लिया गया है। यही इस शोध-प्रबन्धका बल है, यही इसकी विशेषता; अन्यथा सूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर अबतक पर्याप्त लिखा जा चुका है और उससे बहुत बाहर परेशका विवेचन भी नहीं है।

आरम्भमें परेशने भारतीय चिन्तनका सहारा लेकर लालित्य चेतनाका अर्थ स्पष्ट किया है और पाश्चात्य चिन्तनसे उसकी संगति बैठानेका प्रयत्न किया है। वह लालित्य-चेतनाको शास्त्रकी अपेक्षा संस्कृत-चेतना मानते हैं 'जिससे सुन्दर वस्तुके शुद्ध उपभोगका बोध बनता है।' इसकी परिभाषा करनेकी अपेक्षा उसका बोध करना ही उनका उद्देश्य रहा है। इस कार्यमें रचना, आस्वाद और मूल्यांकन-परक तीनों दृष्टियोंके योगको ध्यानमें रखा गया है।

दूसरे अध्यायमें सूरदासके साहित्यकी प्रामाणिकताका विचार करते हुए दशम स्कन्धपर विशेष ध्यान दिया है। लेखकके ही शब्दोंमें 'इस दशम स्कन्धके पूर्वार्द्धको हमने लालित्यका नाभि-केन्द्र माना है। सम्पूर्ण बृहत्काय सूरसागरमें कथा निर्वाहके लिए अनेक प्रकारके जलोंका प्रवेश हो गया है, किन्तु कलाकारका चैतन्य, सिसृक्षा, हृदयगत लालित्य और आत्माका छन्द जिन पदोंमें उतरा है—वे लीलागानके ही हैं।'

तीसरे अध्यायमें सूर-काव्यमें लालित्य-विधान तत्वों—शब्द-शक्ति, छन्द, अलंकार, स्वप्न, बिम्ब आदिपर विचार किया गया है। इनमें से छन्दको उसने आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदीके द्वारा प्रतिपादित विस्तृत स्वरूपमें और अलंकार-चेतनाको 'माध्यमके सुरुचिमय उपयोगकी चेतना' के रूपमें ग्रहण किया है। अन्य तत्वोंमें प्रातिभज्ञान, स्फुरण, स्फोट प्रतिभा और रचनात्मक सूझके माध्यमसे रचनाप्रक्रियाके आन्तरिक व्यापारका विचार किया गया है।

चौथे अध्यायमें लालित्य उद्भावनाकी प्रक्रियाके अंतर्गत वस्त्राभरण, उक्ति, मुद्रा, मनः स्थिति आदिके विवेचनके माध्यमसे अनेक प्रकारके बिबोद्भावना-कौशलको स्पष्ट किया गया है और पाँचवे अध्यायमें प्रेमके शास्त्रीय, भक्तिपरक और लौकिक रूपोंको ग्रहण करते हुए कामजनित प्रेम और भक्ति सन्दर्भित प्रेमको भेदक तत्वकी चर्चा तथा प्रेमकी अन्यान्य विहित दशाओंके चित्रणमें सूरकी सफलता और उनकी तद्विषयक लालित्य-चेतनाका वर्णन किया गया है। परेशका विचार है कि 'हम, आधुनिक अर्थोंमें जो प्रेम है, उसीको तत्कालीन भक्तोंके प्रेमके समकक्ष नहीं रख सकते।' या कि 'आलंकारिकोंका शृङ्गार लौकिक शृङ्गार है जबकि सूरका शृङ्गार दिव्य शृङ्गार।'

साथही वह आचार्य रामचन्द्र शुक्लकी इस धारणासे सहमत नहीं है कि शृङ्गारी साहित्यके द्वारा विषय-वासनाके युक्त लौकिकोंपर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ेगा। सूरके विषय में लेखकका कथन है कि 'यह शृङ्गार चाहे लौकिक है, चाहे अलौकिक— इससे इसके शृङ्गार होनेमें और सौन्दर्य को निष्पन्न करनेमें अन्तर नहीं पड़ता, बल्कि लौकिक शृङ्गारके माध्यमसे तो इस आध्यात्मिक शृङ्गारका सौंदर्य और खिल उठा है।'

छठा अध्याय समाहार रूपमें प्रस्तुत है।

लेखकको उसकी शैलीके लाघवके लिए और प्रकाशक को शुद्ध रूपमें पुस्तक प्रकाशित करनेके लिए बधाई देना उचित होगा।

— **डॉ० आनन्दप्रसाद दीक्षित**

पारसी–हिन्दी रंगमंच

लेखक : डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृ० : २१५; डिमा. ७३; मूल्य : २०-०० रु०।

हिन्दीके साहित्यकारों और आलोचकोंने हिन्दी रंगमंचको प्रायः उपेक्षित दृष्टिसे देखा। वैसे सही बात यह थी कि अधिकांश लोगोंको इसके बारेमें सही जानकारी कभी नहीं रही फलस्वरूप हिन्दी रंगमंच और विशेष रूपसे पारसी रंगमंचके बारेमें तरह-तरहकी भ्रांतियां फैला दी गयी और एक आज्ञाकारी शिष्यकी तरह भावी पीढ़ी ने (विशेषरूपसे हिन्दीके प्राध्यापक और तथाकथित नाट्यालोचक) उन्हें स्वीकार कर लिया। सन् १९६० के बाद कुछ उत्साही नाट्यालोचक और रंगकर्मी हिन्दी रंगमंचके प्रति सचेत हुए। उपेक्षित पारसी रंगमंचके बारेमें भी नये दृष्टिकोणसे सोचा जाने लगा। डॉ० विद्यावती नम्र, डॉ० अज्ञात और डॉ० लक्ष्मीनारायण लालने इनपर शोध-कार्य किया और कई महत्वपूर्ण निष्कर्ष सामने आये।

वास्तवमें पारसी रंगमंच हमारी लोकनाट्य परम्परा और आधुनिक रंगमंचके बीचकी एक महत्वपूर्ण कड़ी है। इसका साक्षात्कार किये बिना हम हिन्दी रंगमंचको गहराईसे न तो समझ सकते हैं और न उसे उपयोगी बना सकते हैं। हमारे यहाँका नाटककार (विशेषरूपसे जयशंकर प्रसाद) इस रंगमंचसे जुड़कर हिन्दी रंगमंचके उत्थानके सम्बन्धमें सोचता तो शायद हिन्दी रंगमंचका रूप ही दूसरा होता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलोच्य पुस्तकमें डॉ० लालने पारसी-हिन्दी रंगमंच के स्वरूप, सीमाओं और उपलब्धियोंको रेखांकित करनेका प्रयास किया है। प्रथम अध्यायमें पारसी रंगमंचका अर्थ स्पष्ट करते हुए लेखकने कहा है कि पारसी रंगमंचसे एकसाथ पारसी-हिन्दी, पारसी गुजराती, पारसी-उर्दू, पारसी-मराठी, और बंगला रंगमंचोंका समवेत अर्थबोध होता है। 'पारसी थियेटर' संज्ञा कलात्मक रूपसे सही नहीं है। यह संज्ञा दर्शकोंसे मिली है क्योंकि इन थियेटर कम्पनियोंके मालिक प्रायः पारसी लोग होते थे। लेखकने यहभी स्पष्ट किया है कि मंचने एक ओर प्राचीन भारतीय संस्कृतिके गौरव और राष्ट्रीयताको उभारनेका प्रयास किया तो दूसरी ओर संस्कृत, मध्ययुगीन भाषा नाटक और लोक रंगमंचकी पद्धतियोंका सहज समन्वय भी किया। लेकिन यह समन्वय व्यावसायिकताकी खाल ओढ़े हुए था।

राधेश्याम कथावाचक और नारायणप्रसाद 'बेताब' जैसे नाटककारोंके आनेपर तो पारसी रंगमंचका सारा रूप ही बदल गया और सारे पारसी-मुसलमान रंगकर्मी हिन्दी भाषा और उसकी संस्कृतिके प्रति आकर्षित हो गये। उसमें सन्देह नहीं कि हिन्दी चरित्रोंको लेकर हिन्दीमें नाटक लिखनेके कारणही पारसी नाटककार अधिक प्रसिद्ध हुए। इनकी लोकप्रियता देखकर ही गुजराती, मराठी, मारवाड़ीभाषी अभिनेता और निर्देशक हिन्दी भाषा सीखनेके लिए अग्रसर हुए।

इस पुस्तककी सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि लेखकने कहीं-कहीं तथ्योंके मूलस्रोतका उल्लेख नहीं किया और उद्धरणोंको तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत कर दिया है।

(१) प्रस्तुत पुस्तकमें पृ० १८ के पहले दोनों पैराग्राफ नटरंग (अंक १५-१६) से लिये गये हैं लेकिन लेखकने इनको उद्धृत करते समय कई भूलें की है जैसे भारतीय नाट्य निकेतन, बम्बईका स्थापना काल १९४९ या पूर्व लिखा गया है जबकि इसका स्थापना काल १९५९ या पूर्व है।

(२) इसी पृष्ठपर डॉ. लालने लिखा है: 'पारसी थियेटरका गुजराती रंगमंच, मराठी रंगमंच, मारवाड़ी भाषा रंगमंच विभिन्न नामोंसे आजभी बम्बई और अन्य शहरोंमें जीवित है।' जबकि वास्तविकता यह है कि पारसी शैलीका गुजराती रंगमंच देशी नाटक समाज के नामसे बम्बईमें जीवित है, लेकिन 'पारसी शैलीका कोईभी मराठी रंगमंच बम्बई क्या, किसी भी अन्य नगरमें आज जीवित नहीं है।' (देखिये रंगभारती मार्च १९७४)।

(३) डाक्टर लालने पृष्ठ २५ पर कृष्णजन्म (१९०२) तथा मयूरध्वज (१९०२) को विनायकप्रसाद तालिबका नाटक बताया है जबकि ये नाटक बेताबके हैं।

(४) पृ. २१ पर 'रामहाल नाटक मंडली' का नाम रामदास नाटक मंडली दिया गया है जो ठीक नहीं है।

दूसरे अध्याय—'रंगभूमि: पारसी थियेटर क्या था?'—लेखकने पारसी थियेटरके स्वरूपको स्पष्ट करनेका प्रयास किया है। वास्तवमें इस नये अध्यायको अलगसे लिखनेकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं थी। इसे पहले अध्यायके अन्तर्गत रखा जा सकता था क्योंकि 'पारसी थियेटरकी मूल प्रकृति और उसका रंग सत्य' में भी तो लेखक यही बताना चाहता था। ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक स्वयं निश्चित नहीं कर पाया कि इस सामग्रीको किसप्रकार प्रस्तुत करना है। यही बात तीसरे अध्यायके साथ भी है। यही कारण है कि लेखकको स्वयं अपने निष्कर्षोंपर ही विश्वास नहीं रहा। डा० लालका कहना है 'यदि हम इन कम्पनियोंमें खेले गये नाटकों और उनके प्रदर्शनोंकी प्रकृति और उनके सारे स्वरूपका अध्यन करें तो प्रकट है कि ये कम्पनियां अंग्रेजी कम्पनियोंके अनुकरण या प्रभावसे उत्पन्न नहीं हुई (पृष्ठ २१)। लेखक यह सिद्ध करनेका प्रयास तो करता है लेकिन दूसरे अध्यायमें लेखक अपना मत बदल देता है: 'यह थियेटर अपनी संज्ञा, नाट्य प्रकृति, रंग-व्यवहार आदि सभी दृष्टियोंसे अंग्रेजी कम्पनियोंके अनुकरण और प्रभावके भीतरसे विकसित हुआ था' (पृष्ठ ३३)। ऐसा लगता है कि लेखकने ये अध्याय अलग-अलग समयपर काफी अन्तरके बाद लिखे हैं और जैसे-जैसे सामग्री मिलती गयी, लेखक उसे समेटता गया। उसे कसौटीपर कसनेका प्रयास न कर पानेके कारण ही इसप्रकारके विरोधाभासोंका जन्म हुआ।

इसी पृष्ठपर लेखक बताता है कि बम्बईमें १८४९ में ग्रांड रोडपर 'बम्बई थियेटर' बना। डाक्टर विद्यावती नम्रने इसका स्पष्टीकरण बहुत पहले। नटरंग अंक १८,१९७२) देते हुए कहा था कि 'बाम्बे थियेटर' (बम्बई नहीं) की स्थापना सन् १७७६ में हुई थी और इसकी बिक्रीसे मिली रकम से १८४२ में ग्रांट रोड थियेटर (ग्रांडरोड नहीं) की स्थापना हुई और फरवरी १०,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८४६ को इसका उद्घाटन हुआ। बादमें इसीको बाम्बे थियेटर कहा जाने लगा।

इसी अध्यायमें डॉ लाल एक और भ्रांतिपूर्ण तथ्यकी स्थापना करते हुए कहते हैं कि 'हिन्दू ड्रैमेटिक कोर' का जन्म बाम्बे थियेटरमें तफरीहके लिए खेले जानेवाले अंग्रेजी नाटकोंके परिवेशसे हुआ। लेखकके अनुसार इस कम्पनीका उद्देश्य था 'हिन्दुस्तानी जबानमें ड्रामा खेलना।' डॉ. विद्यावती नम्र और डॉ. अज्ञात इस मतका खंडन बहुत पहले कर चुके हैं। वास्तविकता यह है कि सांगली के नाटककार विष्णुदास भावेकी 'सांगलीकर नाटक मंडली' को ही बम्बईके अंग्रेजी पत्र 'बम्बई टाइम्स' ने अंग्रेजी नाट्य मंडलियोंसे अलग दिखानेके लिए 'हिन्दू ड्रैमेटिक कोर' नाम दिया। "यह मंडली पूर्णत: मराठी नाटक मंडली थी, जिसने केवल एक ही हिन्दी नाटक 'गोपीचन्दाख्यान' खेला। इसलिए इसका उद्देश्य 'हिन्दुस्तानी जबानमें ड्रामा खेलना' नहीं था और न ही इसका जन्म तफरीहके परिवेशमें हुआ (दे०नटरंग अंक १५-१६)।

यहीं डॉ० लाल एक और भ्रामक तथ्य प्रस्तुत करते हैं। उनके अनुसार 'हिन्दू ड्रैमेटिक कोर' के तत्वावधानमें १८५३ में ही उर्दू नाटक 'राना गोपीचन्दर' खेला जो शेरो-शायरीसे लबालब आपेरा था। विष्णुदास भावेका नाटक 'गोपीचन्दराख्यान' हिन्दीका है और 'गोपीचन्द' नामक आपेराके लेखक तो पारसी नाटककार नसरवान जी खानसाहेब 'आराम' थे। इनके नाटक 'गोपीचन्द' (या गोपीचन्दर) को डॉ० विद्यावती नम्रके अनुसार 'कुंवरजी नाजिर व दादाभाई पटेल एम० ए० की भागीदारी वाली विक्टोरिया नाटक मंडलीने खेला था' (नटरंग १८)।

दूसरे अध्यायमें लेखक बताता है कि 'निर्देशकसे लेकर मेकअप मैन और पेन्टर तक सब अंग्रेज ही थे' जबकि 'विष्णुदास भावे इसके एकमात्र नाटककार एवं निर्देशक थे और इसके सभी अभिनेता प्रायः मराठे थे। इसमें कोई भी अंग्रेज नहीं था' (नटरंग अंक १५-१६)।

यह अध्याय बहुत पहले धर्मयुगमें १५ फरवरी १९७० के अंकमें 'वह पारसी थियेटर वास्तवमें क्या था ?' का परिवर्तित रूप है। डॉ० लालके इन तथ्योंका खण्डन डॉ. नम्रने २९ मार्च १९७० में 'हिन्दू ड्रैमेटिक कोर' और पारसी थियेटरकी वास्तविकता' और डॉ० अज्ञात नटरंग (अंक १५-१६) में 'पारसी-हिन्दी रंगमंचः कुछ और तथ्य' नामक लेखमें कर चुके थे। लेकिन डॉ० लालने न तो अपने मतोंमें परिवर्तन किया और न ही इनका खंडन किया।

जैसाकि ऊपर कहा जा चुका है प्रथम तीनों अध्यायोंमें जो सामग्री प्रस्तुत की गयी है वह पारसी रंगमंचके स्वरूप को स्पष्ट करनेमें सहायक अवश्य है लेकिन लेखकने इन्हें मनचाहे शीर्षकोंके अंतर्गत अव्यवस्थित ढंगसे पेश किया है। फलस्वरूप कई बातोंकी पुनरावृत्ति, अंतर्विरोधी स्थापनाएं और तथ्योंकी भूलें जगह-जगह दिखायी देती हैं।

तीसरे अध्याय 'पारसी-हिन्दी रंगमंच : प्रकृति और मर्यादा' में डॉ० लालका कहना है कि 'इसकी प्रकृति और मर्यादाको समझनेके लिए इन नाटकोंका अध्ययन और इनकी रचना-प्रकृतिको समझना आवश्यक है ही परन्तु उन दिनों इन नाटकोंके बारेमें नाटककार और उस कालकी पत्र-पत्रिकाएं क्या मर्यादाएं रखती थीं इसका भी लेखा-जोखा बड़ा दिलचस्प है' (पृ० ५१)। अतः लेखकने इस अध्यायमें बेताब-चरित (बेताब), मेरा नाटक काल (कथावाचक), माधुरी (प्रेमचन्दका लेख) और कुछ नाटकोंकी भूमिकाओंको आधार बनाया है। अगर लेखक इस सामग्रीको पारसी नाटकोंके अध्ययन और रचना-प्रकृतिके स्पष्टीकरणके बाद कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्षों के साथ प्रस्तुत करता तो अधिक अच्छा होता। और इस सामग्रीके अंश प्रथम अध्यायमें समाविष्ट चाहिये थे।

चौथे अध्यायमें 'नाटक कम्पनियाँ, रंगमंचके विविध चरण और नाट्य-साहित्य' में पारसी-हिन्दी रंगमंच और नाट्य-साहित्यका विवेचन है। लेखकने सारा अध्ययन राधेश्याम कथावाचक, नारायणप्रसाद बेताब आगा हश्र कश्मीरीके आधारपर ही प्रस्तुत किया है। तुलसीदत्त शैदा, हरिकृष्ण 'जौहर', श्रीकृष्ण 'हसरत' जैसे महत्वपूर्ण लेखकोंकी कृतियोंके सम्बन्धमें बिल्कुल जानकारी नहीं दी। इसप्रकार यह विवेचन एकांगीही कहा जायेगा, क्योंकि पारसी रंगमंचकी जो अन्य धाराएं थी—उनकाभी अपना एक स्वरूप था। अतः उनकी उपेक्षा करके केवल प्रतिनिधि नाटककारोंके आधारपर हम पारसी रंगमंचके स्वरूप को स्पष्ट नहीं कर सकते। और इसप्रकारके विवेचनको वैज्ञानिक विवेचन भी नहीं कह सकते।

इस अध्यायमें लेखकने पारसी नाटकोंको तीन धाराओं पौराणिक, रोमानी और पुनरुत्थानवादीमें बाँटा है। इस विभाजनको हम वैज्ञानिक नहीं कह सकते, क्योंकि इन लेखकोंने पौराणिक, ऐतिहासिक या सामाजिक आधारको लेकर जो नाटक लिखे हैं उनमें पुनरुत्थानकी भावना मौजूद नहीं है अतः पुनरुत्थानवादी नाटकका अलगसे वर्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनाना अधिक उचित नहीं। इस अध्यायमें दिये गये कुछ तथ्योंकी प्रामाणिकता संदिग्ध है—

१. डॉ० लालके अनुसार 'विक्टोरिया थियेट्रिकल कम्पनी की सन् १८७२ में खुरशेदजी बालीवाली द्वारा स्थापना हुई।' लेकिन डॉ० धनजीभाई पटेलके अनुसार इसकी स्थापना सन १८६७ या ६८ में हुई। (पारसी नाटक तख्तानी तवारीख, पृ० , ८७) और डॉ. डी. जी. व्यासके अनुसार इसकी स्थापनाके रवशरू काबराजीने सन् १८६७ में की और १८६८ में यह व्यावसायिक रूपमें सामने आयी (ना० प्र० पत्रिका मार्च, अप्रैल ६८, पृ० १०४)।

२. डॉ० लालके अनुसार 'कावसजी खटाऊने एल्फ्रेड थियेट्रिकल कम्पनीकी सन् १८९८ में स्थापना की। डॉ. विद्यावती नम्रके अनुसार फरामजी जोशीने १८७१ में इसकी स्थापना की है। (हिन्दी रंगमंच और पं० नारायणप्रसाद बेताब' पृ० ६६)।

पाँचवें अध्याय 'नाटकका रचना-विधान' में लेखकने आगा हश्रके 'रुस्तम सोहराब', बेताबके 'महाभारत' और राधेश्यामके 'वीर अभिमन्यु'के आधारपर रचना-विधान सम्बन्धी कुछ निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं। जिसमें लेखकने तीन प्रकारकी प्रवृत्तियों—पौराणिकता, रोमानियत और पुनरुत्थानकी भावनाके प्रतिनिधि नाटकोंका चयन किया है। इसमें सामाजिक और राजनीतिक नाटकोंको भी लिया जाना चाहिये था जिनकी लेखकने उपेक्षा कर दी।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि डॉ० लालने कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं। जिससे पारसी नाटकोंका रचना-विधान स्पष्ट हो जाता है। लेकिन जिसप्रकार लेखकने पारसी रंगमंचकी नाट्य-प्रकृति और विविध कम्पनियोंकी नाट्य-प्रदर्शन पद्धतियोंके चार निश्चित विकास चरण माने हैं १८५३-१९००, १९०१-१९१७, १९१८-१९४०, १९४०-१९६०। उसीप्रकार वह रचना विधानके विकासको भी चित्रित करता तो अधिक महत्वपूर्ण निष्कर्ष सामने आते। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य प्रकारके नाटकोंको भी नहीं लिया गया।

छठे अध्याय 'पारसी रंगमंचके आधारभूत तत्व' में 'निर्देशक' का विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इसमें डॉ० लालने निर्देशकका महत्व, उसका पारसी रंगमंचमें स्थान आदिके बारेमें बताया है। इसके साथ रिहर्सल प्रक्रियाके बारेमें भी कुछ संकेत दिये हैं।

सातवें अध्याय 'अभिनय' में अभिनयके मूल तत्व, भाव-विविधता, वाक् अभिनय, अतिअभिनय, गति और रंगचर्याके सम्बन्धमें विस्तारसे बताया है इसके अतिरिक्त कुछ प्रसिद्ध अभिनेताओं और अभिनेत्रियोंका परिचय दिया है।

अध्याय आठमें 'संगीत और नृत्य-परम्परा और प्रकृति' में काफी परिश्रमसे विवेचन किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन लेखकके सूक्ष्म विश्लेषण और अध्ययनके कारण अधिक महत्वपूर्ण बन पड़ा है।

नवें अध्यायमें 'पारसी थियेटर कालका हिन्दी नाटक और रंगमंच'के बारेमें भी संक्षेपमें परिचय दिया गया है। इसमें लेखकने उन कारणोंको स्पष्ट करनेका प्रयास किया है जिनके कारण हमारा हिन्दी नाट्य-साहित्य और रंगमंच स्वस्थ रूपसे विकसित नहीं हुआ।

परिशिष्टमें कुछ पारसी नाटकोंका सारांश, उनके प्रचार और विज्ञापनकी रूपरेखा दी गयी है।

अन्तमें एक बात स्पष्ट कर देना उचित होगा कि लेखकने इस पुस्तकके द्वारा कोई इतिहास लिखनेकी कोशिश नहीं की बल्कि पारसी-हिन्दी नाटकोंके भीतरसे उनका रंगमंच खोजनेका प्रयास किया है और उसमें लेखक सफल रहा है। जहाँ लेखकने कुछ महत्वपूर्ण तथ्योंको प्रस्तुत करनेका प्रयास किया है वहां वह असफल हो जाता है। अगर लेखक अगले संस्करणमें कुछ तथ्योंकी प्रामाणिकताके सम्बन्धमें ठोस आधार प्रस्तुत करते हुए डॉ० विद्यावती नम्र और डॉ० अज्ञातके निष्कर्षोंका खण्डन या मंडन करे तो निस्सन्देह प्रस्तुत पुस्तक एक महत्वपूर्ण और अपने ढंगकी एक मौलिक कृति सिद्ध होगी।

—महेश आनन्द

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और ग्राम चेतना

लेखक : डॉ० ज्ञानचन्द गुप्त; प्रकाशक : अभिनव प्रकाशन, वैस्ट सीलमपुर, दिल्ली-३१। पृ० : ३०४; डिमा. ७४; मूल्य : ३६.०० रु.।

प्रस्तुत शोधप्रबन्ध स्वतन्त्रता-प्राप्तिके पश्चात् लिखे गये सामाजिक-आंचलिक उपन्यासोंका सही लेखा-जोखा उपस्थित करता है। अबतकके अध्ययनोंमें ग्राम-चेतना आंचलिकतासे आबद्ध होकर समीक्षा-इतिहासकी धारपर अपने संकुचित दायरेमें ही परखी जाती रही है। इस क्षेत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में विशेष उपन्यासकारसे सम्बन्धित ग्राम-जीवन सम्बन्धी छुटपुट अध्ययन भी हुए हैं। किन्तु, डॉ० ज्ञानचन्द गुप्तके उक्त प्रयत्नके द्वारा उपन्यासों विशेषतः जनजीवनसे सम्बन्ध उपन्यासोंका-- 'ग्राम-चेतना' के प्राणतत्वके आधार पर, तात्विक अध्ययन प्रथम बार हुआ है। 'ग्राम-चेतना' संबंधी लेखकका यह वाक्य 'आजके सन्दर्भोंमें परिवर्तित ग्राम जीवनकी समूची वैचारिक और संवेदनात्मक मानसिकताको ग्राम-चेतना कहा जा सकता है' सूत्र वाक्यके रूपमें जनजीवन सम्बन्धी अध्ययनको टॉर्च-लाइटकी भांति दिशा-निर्देश करनेमें समर्थ होसकता है और अपने इसी तात्विक अनुशीलनके कारण यह शोधकृति अबतकके तत्सम्बन्धी अध्ययन-प्रयत्नोंमें विशेष महत्वकी कही जा सकती है।

प्रस्तुत शोधकृति छः अध्यायोंमें विभक्त है—पहला अध्याय 'विशेष-प्रवेश' का है जो सैद्धान्तिक दृष्टिसे समूचे ग्रन्थका 'प्राण' कहा जा सकता है। छठा अध्याय 'ग्राम-चेतना' का उपन्यासोंकी संरचनापर प्रभाव' शरीर है। शेष द्वितीय (राजनीतिक आयाम), तृतीय (सामाजिक आयाम), चतुर्थ (आर्थिक आयाम), पंचम (धार्मिक एवं सांस्कृतिक आयाम) अध्याय शरीर-सज्जा ही हैं। प्रथम और षष्ठम अध्यायोंमें लेखकने ग्राम-चेतना संबंधी तात्त्विक शोध की है, शेष चारमें वर्ण्य सामग्री संकलन। किन्तु विषयवस्तुकी पारम्परिकताका एवं वर्ण्यको संजोने की क्षमता प्रारम्भसे अन्ततक अनूठी रही है। पुस्तकका उपसंहार पुस्तककी 'भूमिका' है जिसमें समस्त अध्ययनका सर्वेक्षण बड़ी तटस्थ दृष्टिसे प्रस्तुत किया गया है। हां, तथाकथित 'वर्गसंघर्ष' को लेखकने भारतीय गांवोंके मानस में प्रविष्ट हुआ नहीं माना (पृष्ठ २६२)। गांवके पुरातन अक्षयवटके मूलमें पीस-पीसकर डाले जानेवाले शीशेको लेखकने संवेदनापूर्वक अनुभव किया है--'गांवके विभिन्न वर्गोंकी ग्रामीण जनता आजीविकाकी तलाशमें गांवसे शहरकी ओर पलायन कर रही है। गाँव टूट-टूटकर शहरोंमें समा रहे हैं। आखिर उपचार भी क्या है? आज समय आ गया है कि देशके नेता इन समस्याओंकी भयावहतापर गहन विचार करें अन्यथा समय स्वयं मजबूर होगा इसके प्राकृतिक समाधानके लिए।' (पृष्ठ २६३)। साहित्यकार समस्याका कोई समाधान नहीं पेश करता, न तो उपन्यासकारोंने समस्याका हल दिया होगा और न समालोचकने। ऐसा करनेसे अभिधेयता बढ़ जाती है, व्यंजनाकी सामर्थ्य कम हो जाती है। चूंकि उपन्यास का वर्ण्य जीवनकी समग्रताको वर्णनात्मकताके द्वारा ही अभिव्यंजित करता है, इसलिए ऊपर आधारित यह अध्ययन विवरणात्मकताकी शक्तिसे लिखा गया है। उदाहरणके लिए जैसे ग्राम चेतनाके राजनीतिक आयामके अध्ययनमें 'सामन्तीय जीवनमें विघटनका विवरण', 'रतिनाथकी चाची', 'नदी फिर बह चली', 'परती परिकथा', 'आधा गांव', 'अलग अलग वैतरणी', 'जल टूटता हुआ', में प्रधानतासे और क्रमशः कथात्मकताके आकर्षणके साथ-साथ समस्याके मूलको पकड़नेका प्रयास है। साथही जिनमें सामान्तीय टूटनका संवेदनात्मक स्पर्श है उन उपन्यासोंका नाम दे दिया है। किन्तु ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करते हुए हर प्रसंगमें उपन्यासके नामके साथ उपन्यासकारका नाम कोष्ठकोंमें हरबार दिया गया है जो सहज नहीं लगता वैसे डॉ. गुप्त यह भी भलीप्रकार जानते हैं कि अपने अध्ययनके लिए किन-किन उपन्यासोंको आधार बनाना चाहिये। और यह आधार सन् ७० तककी उपन्यास-कृतियोंको अध्ययनके लिए चुना है, इससे इस अध्ययनकी उपयोगिता और बढ़ गयी है। साहित्य जन-जीवनकी चितवृत्तिका सही प्रतिबिम्ब होता है, इस उक्तिको लेखक डॉ० गुप्तने उपन्यासोंके अध्ययनमें भलीप्रकार सिद्ध कर दिया है। उनकी उपलब्धि है कि 'स्वतन्त्रता प्राप्तिके बाद भारतीय गांव विघटित हुआ है। स्वातंत्र्योत्तर कालमें लिखे गये ग्राम संदर्भमें हिन्दी उपन्यासोंने गांवकी उस इमेजको तोड़ा है जिसमें गांव तो सरलता, सहजता, सन्तोष, सुख, आत्मनिर्भरता आदिकी प्रतिमाके रूपमें उपस्थित किया जाता था। और शायद भारतीय गांवोंकी मूल चेतना यही है। ऐसा लेखकका विश्वास है।

'स्वातन्त्र्योतर' प्रयोग चल तो पड़ा है, परन्तु, मुझे उचित नहीं लगता। स्वतन्त्रताके बाद क्या? परतन्त्रता अथवा अन्य किसी प्रकारकी स्वतन्त्रता? प्रूफकी कुछ अशुद्धियां तो रह ही जाती हैं, और कुछ शीघ्रतामें छपने के कारण नहीं निकाली जा सकी हैं, ऐसा लगता है। कुछ मिलाकर शोधकृतिका अपना साहित्यिक और सामाजिक महत्त्व है। तब जबकि देश समाजवादकी ओर बढ़ रहा है और 'गंवारपन' ग्राम-चेतनामें परिष्कृत होकर सामाजिक और राजनीतिक जीवनमें दृढ़तासे खड़े होकर राष्ट्रजीवनमें अपना विशेष योग दे रहा है। शोधार्थीके रूपमें डॉ० गुप्तने हिन्दीके उपन्यासोंमें शायद स्वीकार किया है कि यह ग्राम-चेतना वर्ग संघर्ष का परिणाम न होकर सैकड़ों वर्षोंकी परतंत्रताके पश्चात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्त स्वतंत्रता और उसके विशेष वातावरणके परिणाम-स्वरूप आयी है। आजकी ग्राम-चेतनाको धनात्मक दिशा चाहिये। आकार-प्रकार और सज्जाकी दृष्टिसे पुस्तक आकर्षक है!

—डॉ० रमेशचन्द्र मित्र

शार्टकटकी संस्कृति

लेखक: केशवचन्द्र वर्मा; प्रकाशक: भारतीय ज्ञान पीठ, बी। ४५-४७ कनाट प्लेस, नयी दिल्ली १। पृ० १६७: क्रा. १३; मूल्य: ८. ०० रु.।

पिछले दिनों इलाहाबादके हास्य-व्यंग्य लेखक श्री केशवचन्द्र वर्माने कुछ महत्वपूर्ण कलाकारोंसे समकालीन सांस्कृतिक संकट तथा साहित्यसे संबंधित विभिन्न विषयों पर बातचीत की जिसे उन्होंने 'अंतरंग बातचीत' कहा और जिसे 'धर्मयुग' तथा 'दिनमान' ने अपने पाक्षिक प्रकाशनों में ससम्मान छापा। यह पुस्तक उन्हीं अतरंग बातचीतों का संकलित रूप है जिसमें आजके विभिन्न साहित्यिक तथा सांस्कृतिक मसलोंको उठाया गया है और संस्कृतिके क्षेत्र में परिव्याप्त आजकी अराजकता तथा टूट और नयी पीढ़ीके नकार तथा विद्रोहको इसका विषय बनाया गया है।

किंतु कहनेकी आवश्यकता नहीं कि इस व्यापकतामें इन समस्त सांस्कृतिक पहलुओंको उठानेका परिणाम यह हुआ है कि संपूर्ण पुस्तक इन विभिन्न साहित्यिक तथा सांस्कृतिक सवालोंपर मात्र एक सरसरी निगाह बनकर रह गयी है और जिसमें किसीभी सवालको पर्याप्त गंभीरता तथा व्यापकतामें उठा पाना संभव नहीं हुआ है। वस्तुतः इन गंभीर तथा जटिल सवालोंपर प्रकाश डालनेके लिए यह जो बातचीतकी शैलीको माध्यम बनाया गया है, भूल मूलतः वहींसे प्रारंभ हो गयी है। क्योंकि बातचीतमें किसी गंभीर सांस्कृतिक पहलूपर पर्याप्त प्रकाश डालना संभव भी नहीं है। बातचीत चाहे अंतरंग हो या गैर अन्तरंग, बातचीत-बातचीत होती है और उसकी कुछ सीमाएं होती हैं। छोटे मसलोंपर भी अक्सर बातचीतमें कोई निर्णयात्मक सूत्र पकड़में नहीं आता। ऐसी दशामें इन बड़े तथा महत्वपूर्ण सांस्कृतिक मसलोंको बातचीतमें सुलझाना तथा उनपर पर्याप्त प्रकाश डालना कैसे संभव हो सकता है। यही कारण है कि इस पुस्तकमें उठायी गयी सारी अंतरंग बातचीत केवल 'ड्राइंगरूम टाक्स' बनकर रह गयी है। ऐसी हालतमें वर्माजीसे यह पूछा जा सकता है कि साहित्यिक तथा सांस्कृतिक विषयोंपर सोचने-विचारने का यह 'शार्टकट' क्या आधुनिक 'शार्टकटकी संस्कृति' की देन नहीं है? फिर इस 'शार्टकटकी संस्कृति' से इतनी हाय तोबा क्यों?

दरअसल वर्माजीकी परेशानी इस शार्टकटके कारण नहीं बल्कि उस शार्टकटकी ट्रेजेडीको लेकर है जिसे उनकी परिमल-पीढ़ीने बड़ी सज-धजके साथ शुरु किया था और बादमें जो सुविधाओं तथा सुखी और सद्-गृहस्थ जीवनके तमाम प्रलोभनोंमें धीरे-धीरे टूटती और बिखरती चली गयी। सचमुच परिमल पीढ़ीय किसी लेखकके लिए यह घोर कष्टदायक तथ्य है और इस खीझमें उसे नयी पीढ़ी का यह परिवर्तित दृष्टिकोण तथा यह व्यापक सांस्कृतिक उलट-पुलट दिशाहीन और निरर्थक ही लग सकता है।

वस्तुतः साहित्य तथा संस्कृतिके क्षेत्रमें इतनी जल्दबाजीमें कुछ भी नहीं होता जितनी जल्दबाजीकी कल्पना वर्माजी करते हैं—यहां शताब्दियोंमें कोई परिवर्तन होता है और बदलाव आता है। लेकिन उसकी शुरुआत बहुत पहलेसे ही हो गयी रहती है और निरंतर उसकी तैयारियां होती रहती हैं। परिवर्तनकी यह तैयारी शुरु-शुरुमें इसी तरह चौंकाती है, लोगोंको परेशान करती है, उत्तेजित करती है और कुछ-एकको तो कोंचती भी है, जैसाकि वर्माजीके साथ है, किंतु वह किसी तरहका कोई शार्टकट नहीं होती और न कोई निरर्थक, दिशाहीन, तथा भ्रमपूर्ण कार्य व्यापार ही होती है। सांस्कृतिक क्रांतिकी इस प्रारंभिक शुरुआतको दिशाहीन, विदेशीकी नकल तथा ऐय्याश प्रेतों का विद्रोह—ये तथा इन जैसे विभिन्न निरर्थक तथा भ्रमपूर्ण मुहावरोंके माध्यमसे परिभाषित करना न केवल और असमझपूर्ण है, बल्कि परिवर्तनाकां क्षियोंके प्रति यह गलत अनुचित और हिंसात्मक दृष्टिकोण भी है जिसे साहित्य तथा संस्कृतिके क्षेत्रमें अधिक तरह नहीं दिया जाना चाहिये।

वैसे यह प्रसन्नताकी बात है कि इस अन्तरंग बातचीतमें शामिल कुछ-एक लेखकों-विचारकोंका दृष्टिकोण परिवर्तनकी इस भूमिकाके प्रति सहानुभूतिपूर्ण और उदार है जिन्हें वर्माजीको आड़े हाथों लेना पड़ा है और उनसे अपनी असहमति ही व्यक्त करनी पड़ी है। ऐसे विचारकोंमें विजयदेव नारायण साही, श्रीलाल शुक्ल और अरविन्द गोखलेका नाम उल्लेखनीय हैं, जिनके साथकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केशवचन्द्र वर्माकी बातचीतमें इस पुस्तकके सर्वोत्तम अंश हैं तथा जिनमें ये लेखक वर्माजीको दो-टूक जवाब देते हैं। निश्चयही इन लेखकोंका दृष्टिकोण आजके इन सांस्कृतिक परिवर्तनों तथा स्वीकृत मूल्योंके इन्कारके प्रति सहानुभूतिपूर्ण और उदार है तथा इस व्यापक उलट-पुलटको ये एक सांस्कृतिक बदलावके सन्दर्भमें देखते हैं।

इसके अतिरिक्त इलाचन्द्र जोशी, अमृतलाल नागर, शांति मेहरोत्रा, माणिक वर्मा, नरेश मेहता, उस्ताद अली-अकबर खां तथा अवधकिशोर शरणसे केशवचन्द्र वर्माकी बातचीत सामान्य स्तरकी बातचीत है जिसकी अधिकांश चर्चाएं उनके व्यक्तिगत जीवन तथा धन्धेके ही इर्द-गिर्द सिमटकर रह जाती है। हाँ, कथाकार यशपालके साथकी बातचीत फिर कुछ तेजतर्रार है और वहाँभी वर्माजी अपना वही पुराना दृष्टिकोण तथा परम्परावादी दकियानूसी रूप उपस्थित करते हैं जिसको लेकर यशपालजीके सामने एक समस्या उठ खड़ी होती है। किन्तु यशपालजी ने अपनी पीढ़ीकी गम्भीरता और शिष्टताको ध्यानमें रखते हुए उन्हें उचित और माकूल जवाब दिया है जिसकी उनसे आशा भी थी।

शेष लोगोंमें, जहाँतक पन्त, बच्चन, जैनेन्द्रकुमार और फिराक साहबके साथकी केशवजीकी बातचीतका प्रश्न है वह तो निहायत घरेलू और व्यक्तिगत बातचीत है जिनकी प्रासंगिकताभी इस संग्रहमें समझमें नहीं आती —समझमें नहीं आसकती। क्योंकि इसे समझनेके लिए फिर केशवचन्द्र वर्मासे ही शब्द उधार लेना पड़ेगा—वही 'शार्टकट' शब्द, जिसमें सभी कुछ एकही साथ समेट लेने तथा लगे हाथ सभीको निबटा लेनेका भाव है। वैसे आज के इस विघटन, इन्कार तथा विद्रोहपूर्ण युगमें परम्परित मूल्यों तथा व्यवस्थाओंको निरर्थक मानकर उसे 'रिजेक्ट' करनेवाली नयी पीढ़ीके सोच तथा मानसिकता तथा उसके सृजनात्मक प्रयत्नोंके सम्बन्धमें पुरानी तथा बीचकी पीढ़ी के दृष्टिकोणको समझनेकी दृष्टिसे इस पुस्तकका महत्व निर्विवाद है।

—डॉ० रमेश तिवारी

विविधा

का वार्ता

लेखक : राजेन्द्रप्रसादसिंह; प्रकाशक : प्रगति प्रकाशन, बैतुल बिल्डिंग, आगरा-३। पृष्ठ: १११; क्रा० ७३; मूल्य : ५.०० रु०।

समीक्ष्य पुस्तक गद्यकी विभिन्न विधाओंकी बानगी सजाये हुए चार प्रकारकी (चौमुखी) वार्ताओंका संकलन है। इसके लेखक श्री राजेन्द्रप्रसादसिंह नयी विधाके रचनाकार हैं। कवि रूपके अतिरिक्त यहाँ उनका गद्यकार रूप भी उभरा है। यह कृति चिन्तनपूर्ण कथात्मकता, नाट्य शिल्प, औपन्यासिकता और निबन्धात्मकतासे ओतप्रोत है। गद्यका लालित्य-प्रदर्शन इसका मूल लक्ष्य है। वस्तुतः यह 'प्रतन्न लेखन' का एक उदाहरण है।

'कावार्ता' में ५ प्रसंग वार्ताएं हैं। 'क्षितिजपर: उद्योतों में दृष्टांतारक चिन्तनसूत्र हैं, 'पूर्व दिशा : एक सांस्कृतिक तत्त्व' में 'पूर्व' सम्बन्धी वैदिक उद्धरण हैं, 'सीताकी जन्मभूमि' और 'जनकपुरका धाम' में पुरातात्विक तथ्यातथ्य-विमर्श है, तथा 'पगडंडीका प्रात ' में शब्द परिदृश्य (फीचर) हैं। सृजनवार्ताओंके अन्तर्गत शब्दचित्र एवं अर्थचित्रसे युक्त पाँच रेखांकन हैं। लेखकने व्याजरूपसे स्वयंको 'गद्य गीतोंका नायक' कहा है। निश्चय ही इस स्तम्भमें गद्य गीतोंका एकत्र संकलन है। तृतीय स्तम्भ है —'आमुख वार्ता' का। इसमें तीन काव्य कृतियों की भूमिकाएं तथा समीक्षाएं संगृहीत हैं। अन्तिम अर्थात् चतुर्थ स्तम्भ 'अनिवार्ता' (या अभिवार्ता) में 'जर्मन जनवादी गणतन्त्रमें बुद्धिजीवी' शीर्षक एक इण्टरव्यू है और 'सौमनस्यके प्रतीक' नामक रचनामें श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' सम्बन्धी कुछ संस्मरण हैं एवं इसी बहाने उनकी व्यक्तित्व चर्चा भी।

इसप्रकार लेखकने 'गद्य विविधा' उपशीर्षकके अनुरूप गद्य-लेखनके कई 'करतब' दिखाये हैं। इनमें चिन्तन, कथात्मक प्रसंग और अनुभवके यों कई चटकीले रंग हैं अवश्य पर कुल मिलाकर इसमें 'गद्यगीत' का तत्व ही ही अधिक 'हावी' रहा है। लेखककी भाषा और भावभंगिमा नितांत निजी है। हाँ, कुछ शब्द प्रयोग अखरने वाले हैं; जैसे—वाल्मिकीय (पृ० २१) हिरण (हरिण) पृ० २७, पटने (पटना) पृ० ७२ आदि। छापेकी भूलें प्रायः मिल जाती है। कुछ उदाहरण—भेद (भेंट),

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिक्रम (परिकल्पना) तहात्मा (पृ० २७) मानवता (मान-वता) पृ० ५८ वात्स्यायन (पृ० ७६) आदि। एक शीर्षक **'अभिवार्ता'** 'अनिवार्ता'का भ्रम पैदा करता है। भूमिकामें लेखकने 'आत्मवार्ता'की चर्चा की है, पर पुस्तकमें ऐसा कोई स्तम्भ नहीं है। 'सृजनवार्ता' में 'सबेरेके क्षितिजपर उद्योतन' नामक जिस निबन्धका भीतर अनुक्रम दिया गया है, वह भी यथास्थान प्राप्य नहीं है। इससे प्रकट है कि पुस्तकके मुद्रणमें सावधानी नहीं बरती गयी है। अन्ततः यही कहूँगा कि पुस्तक स्वागत योग्य है। यदि 'प्रसन्न लेखन' का यह क्रम बना रहा तो लेखकको इस 'यक्ष-प्रश्न' की प्रपूर्ति कभी न कभी मिल जायेगी।

—**डॉ० सूर्यप्रसाद दीक्षित**

चयन-संचयन
(साहित्य-संकलन)

सम्पादक : डॉ० बेचन; प्रकाशक : शताब्दी प्रकाशन, भगवान पुस्तकालय, भागलपुर-२ (बिहार)। प्रथम संस्करण : १६७३, पृ० १११; मूल्य : ७-५० रु०।

'चयन-संचयन' इस रूपमें अपने नामको सार्थक करनेवाली कृति है कि इसमें कविता, कहानी, निबन्ध, लघु उपन्यास, पत्र, समीक्षा-आदि साहित्यकी प्रायः प्रत्येक विधाका प्रतिनिधित्व हुआ है। इसमें ३० रचनाएं संगृहीत हैं। रचनाओंका स्तर साधारण ही कहा जा सकता है। कामेश्वरसिंह 'मस्त', छोटेलाल 'जलज' और डॉ० श्रीनिवासकी कविताएं कुछ प्रभावित करती हैं। डॉ०नन्द-किशोरका 'चिन्तन' भी कहीं-कहीं मन-मस्तिष्कको झकझोर जाता है। 'आठवां दशक और छोटी पत्रिकाएं'—शीर्षक शशि कमलेशका लेख आज-कल निकलनेवाली छोटी पत्रिकाओंका परिचय करानेके साथही उनके सन्दर्भमें कुछ सार्थक सवाल भी उठाता है। कतिपय छोटी पत्रिकाओंके परिप्रेक्ष्यमें कहे गये लेखिकाके इस कथनमें पर्याप्त तथ्य है: 'शिविरगत स्तर्योंका दबाव और टकराव छोटी पत्रिकाओं के दिशा-बोधको खतमकर देता है।' साथही, इस सच्चाई को भी कैसे नकारा जा सकता है कि 'सम्पादकके सामने लेखकोंकी और खास तौरपर बरसाती मेंढकोंकी लम्बी सूची रहती है। उनमें कुमारियाँ विशेष कृपा-दृष्टि पा जाती हैं। कुछ पत्रिकाओंका तो हर अंक लेखिका-अंक कहा जा सकता है।' दो टूक शैलीमें व्यक्त इस तथ्य-कथन के लिए मैं लेखिकाको खास तौरपर बधाई देना चाहूँगा।

अच्छा हो, इसप्रकारके संकलनोंके लिए रचनाओंका चयन अधिक निर्ममताके साथ हो। मूल्य काफी ज्यादा है।

—**दुर्गाप्रसाद झाला**

विज्ञान

रसायन दर्शन

प्रधान सम्पादक : भोगीलाल गाँधी; प्रकाशक : सरदार पटेल यूनिवर्सिटी, वल्लभ विद्यानगर (गुजरात)। पृ० : २७०; काउन दुगना, ७२; मूल्य : २०-०० रु०।

भारत सरकारके शिक्षा मंत्रालयकी मानक-ग्रन्थोंकी प्रकाशन योजनाके अन्तर्गत रसायन विज्ञान सम्बन्धी यह पुस्तक प्रकाशित की गयी है। पुस्तक किसी पाठ्यक्रमके अनुसार नहीं लिखी गयी, बल्कि हिन्दीके शिक्षित जन-साधारणको रसायन-विज्ञानके क्षेत्रमें हुई प्रगतिका परिचय प्रदान करनेके लिए लिखी गयी है। फिरभी, छात्रों और विद्यार्थियोंके लिए भी यह ग्रन्थ समान रूपसे उपयोगी है। रसायनविज्ञानके महत्वपूर्ण क्षेत्रका परिचय और जानकारी प्राप्त करने और इस विषयमें प्रवेश करनेके लिए उत्सुक लोग इस ग्रन्थसे असंदिग्ध रूपसे लाभान्वित होंगे।

ग्रंथको सात खण्डोंमें बांटा गया है। प्रथम खण्ड रसायन विज्ञानके इतिहाससे सम्बद्ध है। आधुनिक रसायन विज्ञानका विकास यूरोपीय देशोंमें हुआ है, स्वभावतः इसका इतिहास भी यूरोपीय देशोंसे जुड़ा है। फिरभी इस विज्ञानकी प्रारम्भिक अवस्थामें भारतीयों, चीनियों और अरबोंने भी योगदान किया है। इन लोगोंके योगदानपर प्रथम खण्डके दो अध्यायोंमें प्रकाश डाला गया है। भारतीय योगदानके रूपमें विज्ञानके दर्शन और औषधिक्षेत्रमें रसायन विज्ञानके प्रयोगपर संक्षिप्त-सा विवरणात्मक परिचय दिया गया है। सम्भवतः सीमित पृष्ठ संख्यामें इससे अधिक विवरण सम्भव भी नहीं था। इस खण्डके तीसरे अध्यायमें आधुनिक वैज्ञानिक प्रगतिका रोचक इतिहास है और धीमे-धीमे विकसित होनेवाले वैज्ञानिक

 In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्टिकोणका परिचय है । इसी प्रसंगमें चौथे अध्यायमें आजके रसायन विज्ञानके मूल तत्वोंका वर्गीकरण और आवर्त-सारणी है ।

बादके खण्डोंमें आधुनिक रसायन-विज्ञानकी सामग्री है। अकार्बनिक रसायनके क्षेत्रके धातुवर्गसे प्रायः सभी लोग परिचित हैं । इसी कारण खण्ड दो के प्रथम अध्याय में धातु-रसायनका परिचय है । धातुओंकी दृष्टिसे हमारा देश निर्धन नहीं है, यह तो कहा जा सकता है । अपने देशकी धातु-सम्पदाका उल्लेख इसमें न होते हुए भी धातुएं प्राप्त करनेके साधन, उनके शोधन आदिपर अच्छा प्रकाश डाला गया है । देशमें उपलब्ध धातुओं-विशेषरूपसे सामरिक दृष्टिसे महत्वपूर्ण आधुनिक परमाणु-विज्ञानमें उपयोगी धातुओं-की देशमें उपलब्धिका विवरण पाठकोंको मनोवैज्ञानिक दृष्टिसे बहुत प्रभावित करता । अगले अध्यायमें आजके विस्फोटकोंका रसायनकी दृष्टिसे विवरण है और विस्फोटकोंका अच्छा परिचय प्रदान करता है । वस्तुतः यह अध्याय कार्बनिक रसायनसे सम्बद्ध है । इसके तत्काल बाद अकार्बनिक रसायनसे सम्बद्ध रत्न विज्ञान है। रत्नोंके रासायनिक संगठन और उनकी रचनाकी दृष्टिसे अध्याय उपयुक्त है, परन्तु सामान्य पाठककी रूचि प्राकृतिक और नकली रत्नोंके पहचानमें अधिक होती है, यह सामग्री इसमें नहीं है ।

आधुनिक जीवनमें पैट्रोलियम, रबर, प्लास्टिक, रासायनिक रेशोंसे बने वस्त्रों, रंगों, औषधियों आदिका अनिवार्य स्थान हो गया है । ये सभी वस्तुएं कार्बनिक रसायनकी दृष्टिसे इनका परिचय और इनके उत्पादन और निर्माणकी सामान्य प्रक्रियाओंका विवरण आगे खडों में दिया गया है । खण्ड तीनका आरम्भ ही 'कार्बनिक रसायनकी भूमिका' से किया गया है और कार्बनिक रसायनका सरल ढंगसे परिचय दिया गया है । इस अध्यायकी सामग्री एक प्रकारसे अगले सभी अध्यायोंकी सामग्रीका पूर्वाधार है । इन सभी विषयोंका चार खण्डोंमें परिचय है, इसलिए ध्यानाकर्षक है क्योंकि इनमें वर्जित चीजोंका दैनिक जीवनमें प्रयोग होता है ।

विभिन्न खण्डोंके विभिन्न अध्यायोंके लेखक पृथक्-पृथक् हैं । ये हैं : डॉ. नरसिंह मू. शाह, डॉ. सुरेश सेठना, डॉ. भास्कर मांकड, श्री पद्मकान्त शाह, श्री बंसीधर गांधी । सभी लेखक रसायन-विज्ञानके विद्वान् हैं । इसलिए सामग्रीमें प्रामाणिकता है ।

मूलतः यह ग्रंथ गुजरातीमें छपा था, लेखकभी सभी गुजराती विद्वान् हैं । फिर भी, श्री श्यामू संन्यासीका हिन्दी अनुवाद सहज है, उससे अनुवादका पता नहीं चलता जो कि अनुवादकी सफलताका प्रमाण है ।

इसप्रकारके ग्रंथोंका स्वागत होना चाहिये ।

—माधव पण्डित

महासागर

लेखक : एच० यू० स्वेरड्रप, मार्टिन डब्लू० जोनसन और रिचार्ड एच० फ्लेमिंग; अनुवादक : रूपचन्द्र भंडारी, तारूलाल दशोरा और वीरेन्द्रकुमार; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ, अकादमी, जयपुर। पृष्ठ : ५१६; रायल. ७१ (अंग्रेजी संस्करण १६६१); मूल्य : २२-०० रु० ।

समुद्र-विज्ञान यद्यपि एक प्रकारसे नया विज्ञान है किन्तु आजके सन्दर्भमें इसका महत्व दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा है । कारण यह है कि भूमिके साधन इतनी तेजी के साथ खत्म हो रहे हैं कि सभी राष्ट्रोंका ध्यान समुद्रके अन्दरके साधनोंके उपयोगकी ओर जा रहा है । अनुमान लगाया गया है कि तेलका जिस रफ्तारसे इस्तेमाल हो रहा है यदि वह जारी रहा तो आगामी ५०-६० वर्षमें विश्वके सभी तेल भंडार खाली हो जायेंगे । इसी सन्दर्भमें भारतने दक्षिण अमरीकाके कराकास नगरमें हुए अंतर्राष्ट्रीय समुद्री कानून सम्मेलनमें माँग की कि प्रत्येक देश को अपने तटसे दो सौ मील दूर समुद्र तक खनिजोंकी खोज करने और मछली पकड़नेका अधिकार होना चाहिये । वर्तमान कानून यह कहता है कि अपने तटसे उस हदतक समुद्रमें खनिजोंकी खोज करनेका अधिकार है जहाँतक समुद्रकी गहराई २०० मीटर हो और समुद्रीसीमा तटसे केवल तीन मील दूर तक मानी गयी है । भारतकी माँग है कि समुद्री सीमा तटसे १२ समुद्री मील होनी चाहिये । ऐसी स्थितिमें समुद्री साधनोंका ज्ञान आवश्यक हो गया है । आलोच्य पुस्तकमें समुद्री साधनोंका अध्ययन है । इसमें जहाँ एक ओर समुद्री-जलके गुणकर्म, समुद्री धाराओं, तरंगों तथा ज्वारभाटों आदिके भौतिक गुण धर्मोंका अध्ययन किया गया है वहाँ समुद्री जलकी रासायनिकी, समुद्री जलमें ताप, लवणता तथा घनत्वका वितरण तथा जीवधारियोंका समुद्री जलकी संरचनापर प्रभाव आदिके विषयमें अध्ययन किया गया है । साथही समुद्रमें विभिन्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकारके जीवधारियोंकी उत्पत्ति, विकास, संरक्षण तथा उनके अन्तर्सम्बन्धके विषयमें भी महत्वपूर्ण आंकड़े दिये गये हैं। अन्तमें विस्तृत सन्दर्भ-सूची भी दी गयी है, जो बहुतही उपयोगी है।

—प्रेमकृष्ण टण्डन

स्वास्थ्य-विज्ञान

आहार एवं पोषाहार

लेखक : डॉ० सत्यदेव आर्य; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, तिलकनगर, जयपुर-४। पृ० : २८३; डिमा. ७३; मूल्य : १२-५० रु०।

प्रस्तुत पुस्तकमें २२ अध्याय हैं, दो तालिकाएं हैं तथा अन्तमें एक अनुक्रमणिका। पुस्तकमें आहार तथा पोषाहार सम्बन्धी विभिन्न विषयों यथा सामान्य खाद्य सामग्री, उससे प्राप्त होनेवाले महत्वपूर्ण पोषक तत्वों, पोषक तत्वोंकी विशिष्टताओं, उनके पाचन, अवशोषण तथा चयापचयकी प्रक्रियाओं तथा उनके अभावमें होनेवाले बिकारोंका निभ्रान्त विश्लेषण किया गया है। इसके अतिरिक्त विभिन्न वर्गोंके लिए सन्तुलित आहार व्यवस्था, अल्प पोषण तथा अत्यधिक पोषणके दुष्परिणामों, खाद्य-सामग्रीके परिक्षण तथा मुख्य-मुख्य बीमारियोंमें वांछित आहार आदि विषयोंपरभी विचार किया गया है। विषय के स्पष्टीकरणके निमित्त यथास्थान चित्रों एव तालिकाओं का भी समुचित उपयोग किया गया है। विभिन्न विषयोंके उपयुक्त उपशीर्षकोंके अन्तर्गत विभाजनसे विषय अधिक स्पष्ट तथा सुबोध हो गया है। यद्यपि सामान्यत: मीट्रिक पद्धतिका ही उपयोग किया गया है किन्तु कतिपय स्थलो पर मील, पौंड, इंच आदिके प्रयोगसे न केवल पुस्तककी एकरूपताको क्षति पहुँची है अपितु मीट्रिक पद्धतिके हो प्रयोगके सरकारी निर्देशकी भी अवहेलना हुई है। यदि पुस्तकके अन्तमें अंग्रेजी तथा हिन्दीमें, इसी विषयपर उपलब्ध, पुस्तकोंकी सूचीभी दे दी जाती तो अच्छा रहता। फिरभी यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि हिन्दीमें वैज्ञानिक साहित्यकी अभिवृद्धिकी दृष्टिसे यह एक महत्वपूर्ण एवं प्रमाणिक कृति है।

स्वादिष्ट भोजन कला

लखिका : अरुणा शेट; प्रकाशक: राजपाल एण्ड संस, दिल्ली। पृष्ठ : १३६; क्रा. ७३; मूल्य : ५-७५ रु.।

प्रस्तुत पुस्तक अरुणा शेटकी अंग्रेजी पुस्तक "The New Indian Cook Book" का हिन्दी रूपांतर है। रूपांतरकार हैं कृष्ण विकल तथा पुनरीक्षिका हैं श्रीमती तारा तिक्कू। इसका प्रकाशन हिन्दीके विकास और प्रसारके लिए शिक्षा एवं समाज कल्याण मन्त्रालय की प्रकाशन-योजनाके अन्तर्गत हुआ है। पुस्तकके आरंभ में सन्तुलित आहार विषयक एक अत्यन्त संक्षिप्त अध्याय है और तदनन्तर ठंडे पेय, मीठे व्यंजन, उत्तर भारतके प्रिय पकवान, महाराष्ट्रके प्रिय पकवान, दक्षिण भारतके प्रिय पकवान, चटनियां, रायते, अचार बचे हुए भोजनका उपयोग तथा अन्नरहित पकवान शीर्षक ग्यारह अध्यायोंमें भारतके विभिन्न प्रदेशोंमें प्रचलित खाद्य-पदार्थोंके तैयार करनेकी विधियां सरल रीतिसे बतायी गयी हैं। लेकिन इस पुस्तकका अध्यन करनेसे यह पता लगता है कि इसकी रचना भारतीय पाठकोंको ध्यानमें रखकर नहीं की गयी है। यही कारण है कि इस पुस्तकमें अनेक स्थलोंपर नाप-तोलके उन बट्टोंका उल्लेख किया गया है जो भारतीय परिवारोंमें प्रचलित नहीं हैं। पिण्ट, क्वार्ट आदि ऐसेही प्रयोग हैं। इसीप्रकारसे कतिपय स्थलोंपर मीट्रिक पैमानों का इस्तेमाल नहीं किया गया है। उदाहरणार्थ ५२वें ११४, ११७, १२४, १२५, १३१ आदि पृष्ठोंपर इसी का प्रयोग किया गया है। अनेक स्थलोंपर शब्दावलीकी एकरूपताका अभाव भी बहुत खटकता है। उदाहरणार्थ 'Condensed Milk' के लिए कहीं तो 'पाउडरका दूध' वाक्यांशका प्रयोग किया गया है (देखिए पृ० १७) तो कहीं 'सूखा दूध' का (देखिए पृ० २९)। जहांतक विविध खाद्य-पदार्थोंको तैयार करनेकी विधियोंका प्रश्न है वे प्रायः ठीक ही रही हैं, लेकिन यदि पुस्तकके प्रारम्भ अथवा अन्तमें यह बतला दिया गया होता कि कप, चम्मच आदिमें सूखे अथवा तरल पदार्थोंकी कितनी-कितनी मात्रा आती है तो कहीं अधिक अच्छा रहता। पुस्तककी छपाई साफ-सुथरी तथा साज-सज्जा आकर्षक है।

—डॉ० उषा रानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्भावना (अर्द्धवार्षिक)

सम्पादक : डॉ. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल; प्रकाशक: हिंदी विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र (हरियाणा)। वार्षिक शुल्क : १५-०० रु०।

हिन्दी आलोचना-जगत्‌में विद्वानोंका एक वर्ग विश्वविद्यालयके हिन्दी प्राध्यापकोंको पुरानी लीकपर चलनेवाला, सड़े-गले सलीबको ढोनेवाला एवं उनके हिन्दी विभागके तत्वावधानमें उनके द्वारा किये गये समीक्षा-कार्यको परम्परागत, रूढ़िबद्ध, प्रतिक्रियावादी आदि कहता रहा है। कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालयके हिन्दी विभाग द्वारा प्रकाशित 'सम्भावना' विश्वविद्यालयोंके हिन्दी विभागों द्वारा प्रकाशित उन पत्रिकाओंकी एक कड़ी है जो आलोचकोंकी उपर्युक्त मान्यताको चुनौती देती है। इसमें साहित्यके नित्य-नवीन उद्‌भासित होनेवाले स्वरूपपर पूर्वाग्रहविहीन, शुद्ध जिज्ञासु-भावसे चिन्तनकर उसका विवेचन-विश्लेषण किया गया है। 'सम्भावना' परम्पराको इलियटके अर्थमें ग्रहणकर साहित्यिक चिन्तन और शोधके क्षेत्रमें नये आयाम खोजनेका स्तुत्य प्रयास है। इस पत्रिकाके प्रथम दो अंकोंमें छपे सौन्दर्यशास्त्र, भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र, कालकी धूलमें छिपे अज्ञात काव्य-रत्नोंकी खोज, भाषा-विज्ञान, लोक-साहित्य आदिसे सम्बद्ध लेख पाठकोंके ज्ञान-भंडारको समृद्ध, उनके दृष्टि-क्षितिजको विस्तीर्ण तथा चिन्तन-मननकी नयी सम्भावनाओंको खोलते हैं। विभिन्न रूचिके पाठकोंको इसमें अपनी-अपनी रुचिके अनुसार पर्याप्त सामग्री मिलेगी—एक ओर लोक-वार्ता प्रेमाख्यानों 'कथा-कामरूप' और 'निहालदे' का विवेचन है तो दूसरी ओर पश्चिमकी नवीनतम समीक्षा-पद्धति 'उत्पत्तिमूलक समीक्षा' पर गवेषणात्मक लेख है। एक ओर भारतीय आचार्यों द्वारा प्राय: उपेक्षित विषय सृजन-प्रक्रिया और सृजन-क्षणोंमें कलाकारके अन्तस्‌में झांकनेका प्रयास है तो दूसरी ओर हरियाणाकी संस्कृतिको उसके लोक-गीतोंमें खोजनेका प्रयत्न है। देश-विदेशमें हिन्दीकी प्रगतिका परिचय पत्रिकाके पाठकोंको अन्यत्र अनुपलब्ध जानकारी देता है तो सद्य: प्रकाशित पुस्तकोंकी समीक्षा उन्हें नये साहित्यसे परिचित कराती है। उच्च-कोटिकी वस्तु-सामग्री, उसके पीछे अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि, सुरुचिपूर्ण सम्पादन इसकी अन्य विशेषताएं हैं जिनके कारण निश्चय ही 'सम्भावना' पत्रिका-प्रकाशनके मार्गमें मीलका पत्थर सिद्ध होगी।

—शान्तिस्वरूप गुप्त

सन्त सन्देश (कबीर विशेषांक)

सम्पादक : डॉ. राजनारायण राय; प्रकाशक: कबीर विद्यापीठ, पूना-२। पृ० : १४६; क्रा० दुगना, ७३; मूल्य : १०-०० रु०।

'संत संदेश' कबीर विद्यापीठ, पूनाकी वार्षिक पत्रिका है। सन् ७३ का अंक कबीर विशेषांक है। इसमें सत्रह लेखकोंने कबीरके सन्देश और सन्त सम्प्रदायके सम्बन्धमें सामग्री दी है। गुजरात और महाराष्ट्रमें कबीर-पंथके प्रचार और कबीरके अध्ययनका विवरण भी दिया गया है। विशेषांकमें कबीरका साहित्यिक और साम्प्रदायिक [कबीर सम्प्रदायकी दृष्टिमें] महत्व साधारणतया उजागर हुआ है। कबीर-सन्देशका वह पहलू जो वास्तविक है और जो मानवीय अस्तित्वकी समस्याओंके समाधानमें उपयोगी है, इस विशेषांकमें कहीं भी पकड़ा नहीं जा सका है। इसलिए इस विशेषांकका सार्वजनीन महत्व नहीं रह गया है। प्रबुद्ध पाठकोंके लिए साधारण है। अच्छा होता कि कबीर-सन्देशसे ऐसी बातें चुनकर उनपर लेख लिखवाये जाते जो आजके मनुष्यको प्रकाशका पथ दिखा सकती हैं। कबीर-अध्ययन जैसी पुस्तकोंमें इसतरहका विवरण भरा पड़ा है—उनकी आवृत्तिका अर्थ क्या है? विवरण नहीं, विश्लेषणकी आवश्यकता है और विश्लेषण भी ऐसा कि आजके लिए कबीरकी प्रासंगिकता उभर सके। विशेषांकका शायद यह लक्ष्य ही नहीं था। विवरण मात्र लक्ष्य रहा होगा; उसमें भी वह कुल मिलाकर कुछ दे नहीं पाता है। लेखक और सम्पादक दोनोंने पाठकोंको ध्यानमें नहीं रखा है। या रखा है, तो शायद विश्वविद्यालयके हिन्दी छात्रोंको। यदि यह सच है, तो विशेषांककी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष उपयोगिता नहीं रह जाती क्योंकि इसकी सामग्री की तुलनामें अधिक श्रेष्ठ सामग्री अन्यत्र उपलब्ध है।

'सन्त सन्देश' का एक उद्देश्य है: भारतीय संतों, भक्तों द्वारा प्रदत्त अमूर्त आलोकका प्रचार-प्रसार। सामग्रीमें 'आलोक' का कहीं पता नहीं चलता; आलोक शब्दोंके विवरण-उद्धरणमें नहीं होता है; होता हैं उनके अभिप्रायों-आशयोंके मार्मिक विश्लेषणमें और वही इसमें नदारद है।

—डॉ० शीतला मिश्र

साहित्य निर्भर (लघुकथांक), ३६२५।२३ डी, चंडीगढ़
राष्ट्रधर्म (लोक कथांक), संस्कृति भवन, डॉ रघुवीर नगर, लखनऊ-४।

मेरे सामने कथा साहित्यकी दो उपविधाओंके, पत्रिकाओंके दो विशेषांक हैं। लोक-कथा और लघुकथा। दो नाम। दो प्रतीक। दो रंग। दो प्रवाह। दो रूप। ऊपरसे देखनेपर और अन्तससे झांकनेपर भी। सर्वथा दो भिन्न व्यक्तित्व

लोक-कथाका जन्म तभी हो गया था जब आदमीका जन्म हुआ था। भाषाके जन्मनेके साथ और लिपिके विकसित होनेके पहले ही लोक कथा अस्तित्वमें आ चुकी थी किन्तु लघुकथा अभी एक नयी विधा है। खासकर हिन्दी में।

लघुकथाके क्षेत्रमें रावीके योगदानको प्राय: नकारा जा रहा है किन्तु मैं समझता हूँ कि हिन्दीकी लघुकथाकी पृष्ठभूमि रावीने ही तैयार की। संभावनाओंभरी इस उपविधापर 'कहानीकार' पत्रिकाके यशस्वी सम्पादक श्री कमल गुप्तकी जब नजर पड़ी, तो उन्होंने लघुकथा प्रतियोगिता आयोजित कर डाली जिससे लेखकोंका ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ। लघुकथाएं बड़ी संख्यामें लिखी जाने लगी। डॉ० महाराजकृष्ण जैनने लघुकथाकी महत्ताको पहचानकर अपनी पत्रिका 'तारिका' के लघुकथांकके सम्पादन का भार रमेश बतरापर डाला। साधनोंके अभावमें भी बतराने जिस कुशलतासे 'तारिका' का लघुकथांक निकाला, अपने आपमें एक मिसाल हैं। इसके बाद शुरू होता है लघुकथाके राज्याभिषेकका इतिहास। राजमहलकी कहानी। उत्तरदायित्वोंका जोखिमभरा गीत। चर्चित और विवादास्पद व्यक्तित्व कमलेश्वरने 'सारिका' के लघुकथांकोंकी घोषणाकर मानों नये खूनके नये आदमीको किसी नये स्टेट का चीफ मिनिस्टर बना दिया। लघुकथाके हाथमें सत्ता और अधिकार दोनों आ गये। इसका श्रेय कमलेश्वर और सारिकाके अतिरिक्त किसीको नहीं दिया जा सकता। सारिकाके दो लघुकथा विशेषांकोंके बाद चारों तरफ लघुकथाकी जय जयकार होने लगी। यकायक लगा कि इस जयजयकारके दर्पमें लघुकथाका मूल सूखने लगा। खतरे की घंटी बजी और उसे फिरसे सुना रमेश बतराने। ध्यानाकर्षण प्रस्तावके रूपमें 'साहित्य निर्झर' का लघुकथांक सामने आया। ऐसा लगा की खतरेकी घंटीसे लघुकथा चौंककर संभल गयी है। उसने अपनी भूलकी खोज-खबर ली है। साहित्यनिर्झर का यह लघुकथांक (सम्पादन: रमेश बतरा) पाकर एक सुखद अनुभूति हुई। लगा कि चीफ-मिनिस्टर एक बार फिर अपने गांवकी मिट्टीकी सोंधी-महक लेनेके लिए लौट आया है। उसने एक बार फिर कीचड़से सनी गांवकी गलियों और शहरके हातों-चालों एवं मानसिक अन्तर्द्वंद्वसे छटपटाती चौपालोंपर नजर डाली है। काश। समय-समयपर यह मिनिस्टर आत्मविश्लेषण करता रहे। राजमहलके वैभवमें भी अपनी दैन्य स्थितिको भूले नही।

'साहित्य निर्झर' के इस विशेषांकमें लघुकथापर रावी, डॉ० इन्द्रनाथ मदान डॉ० महाराजकृष्ण जैन, सिमर सदोष आदिके नोट्स ध्यान देने योग्य हैं। रमेश बतराकी चतुर्दिक रचना 'लघुकथा नहीं' पठनीय हैं और विचारणीय भी। उन्होंने 'लघुकथा' नामको ही नकारनेकी कोशिश की है लेकिन मैं समझता हूं कि कथाकी इस उपविधाको यह 'लघुकथा' नाम चाहिये। उसे इसकी जरुरत है एक अलग उपविधाके रूपमें बतराके नकारनेसे 'लघुकथा' कथामें समाहित नहीं हो सकती। कथा और लघुकथा अब दो अलग-अलग सीमान्तोंपर है। उन्हें एक सीमान्तपर लाना संभव नहीं। ४० से अधिक लघुकथाओं, एक दर्जनसे अधिक नोट्स और तीन पेजके गम्भीर (अपेक्षाकृत) सम्पादकीय लिए यह अंक स्थायी महत्वका बन गया है। पठनीय और संग्रहणीय अंकके लिए बतरा बधाईके पत्र हैं।

इसके अतिरिक्त राष्ट्रधर्म' का लोककथा अंक। आज की कथाका जन्म लोककथासे ही हुआ। लोक-कथाका मूल तत्त्व आजकी कहानीसे गायब है और कहानीके पाठकों का अभाव इसका ही परिणाम है। ऐसा मन्तव्य सम्पादक भानुप्रताप शुक्लने व्यक्त किया है अपने सम्पादकीयमें। देशकी सबसे बड़ी कहानी पत्रिका 'सारिका और उसके सम्पादक कमलेश्वरकी नजरोंमें भी लोक-कथाके आदरका भाव झलकता है तभीतो सारिकामें लोक कथाएं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ती रहती हैं। काश, लघुकथा विशेषांकोंकी तरह ...रिकां' लोक-कथा विशेषांक भी निकालती। 'राष्ट्रधर्म' ...लोक-कथा विशेषांक पाकर सुखद अनुभूति हुई है और ...श्चर्य भी कि सूरज पश्चिमसे कैसे उदित हो गया, शायद ...तलाल नागरकी प्रेरणासे। देशके विभिन्न प्रान्तोंकी ८० से अधिक लोक-कथाओंका यह अंक निकालकर भानु-प्रताप शुक्लने अपनी साहित्यिकी सूझबूझकश्री (राष्ट्रय ही नहीं) परिचय दिया है।

—अमलतास

प्राप्ति सूचना

[निम्न पुस्तकें समीक्षार्थ प्राप्त हुई हैं, आगामी अंकोंमें इनकी समीक्षा अथवा परिचय प्रकाशित होगा। समीक्षार्थ ...प्रतियां आनी चाहिये, एक प्रतिकी समीक्षाका दायित्व स्वीकार नहीं किया जाता।]

शोध-आलोचना

आधुनिक हिन्दी कविता; ले. गोकाककर, कुलकर्णी; प्रका. फड़के बुकसेलर्स, महाद्वार पथ, कोल्हापुर-२। पृ ३०४; डिमा. ७४; मू. १७-०० रु.।

क्रान्तदर्शी कवि तुलसी (शो. प्र.); ले. श्रीनारायण सिंह; प्रका. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग। पृष्ठ ३७५; क्रा. दु. ७४; मू. ४०-०० रु.।

दक्खिनी हिन्दीका साहित्य; ले, डॉ. श्रीराम शर्मा; प्रका. दक्षिण प्रकाशन, २१-७-६२, गांधी बाजार, हैदराबाद-२। पृ. ४३१, रायल, ७२; मू. ३०-००रु.।

नाटककार मोहन राकेश; सम्पादक : सुन्दरलाल कथूरिया; प्रका. कुमार प्रकाशन, २०/३० मोती-नगर, नयी दिल्ली-१५। पृ. २४६; डिमा. ७४; मू. ३०.०० रु.।

निराला : साहित्यिक मूल्यांकन; लेखक गोकाककर, कुलकर्णी; प्रका. फड़के बुकसेलर्स, कोल्हापुर। पृष्ठ ३१२; डिमा. ७४; मू. १७-०० रु.।

पंत काव्यमें बिम्ब योजना (शो. प्र.); ले. डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै; प्रका. दक्षिण प्रकाशन, हैदराबाद। पृ. ४०८; डिमा. ७४; मू. ५०-०० रु.।

रूपककार वत्सराज (शो. प्र.); लेखक डॉ. लक्ष्मण नारायण शुक्ल; प्रका. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग। पृ. ४०४; रायल ७४; मू. ४०-०० रु.।

कहानी-संग्रह

अपने आस-पास; संपादकः मणि मधुकर; प्रकाशक राजस्थान प्रकाशन, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर-२। पृ. ११२; डिम. ७४; मू. ५-०० रु.।

दूसरा फुटपाथ; ले. सुरेन्द्र तिवारी; प्रका. विद्या प्रकाशन, कलकत्ता-२५। पृ. ७३; डिमा. ७४; मू. ५-०० रु.।

निर्वासित; लेखक ओम गोस्वामी; प्रका. गोस्वामी पुस्तक प्रकाशन, जम्मू-४। पृ. ७४; क्रा. ७४; मू. ५-०० रु.।

काव्य-संकलन

मेरी कविता : मेरे गीत; कवि. पद्मा सचदेव; प्रका. साहित्य अकादेमी, नयी दिल्ली-१। पृ. ९९; डिमा. ७४; मू. ७-०० रु.।

यक्ष-प्रश्न; कवि : सुरेन्द्र प्रबुद्ध; प्रका. पृथक् प्रकाशन, महासमुन्द (म.प्र.)। पृ. ४४; डिमा. ७४; मू. ३.०० रु.।

रत्नावली; कवि : स्वर्णकिरण; प्रका. मिथिलेश प्रकाशन, आरा (बिहार)। पृ. ४०; क्रा. ७४; मू. १-५० रु.।

शब्दोंका घूंघट; कवि : मरुधर मृदुल; प्रका. लालित्य प्रकाशन, स्टेशन रोड, जोधपुर। पृ. १६५; डिमा. ७३; मू. १२.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संबंधोंके दर्पणमें; कवि. शकुन्तला भार्गव 'अर्चना', कमला नेहरू हाल, जोधपुर। पृ. ६४; डिमा. ७४; मू. ४-५० रु.।

विज्ञान

रसायन-दर्शन (रसायन विज्ञान); ले. डॉ. नरसिंह भाई मू. शाह, डॉ. सुरेश सेठना, डॉ. भास्कर मांकड़, पद्मकान्त शाह, बंसीधर गांधी; अनु. श्यामू संन्यासी; प्रका. सरदार पटेल यूनिवर्सिटी, वल्लभ विद्यानगर (गुजरात)। पृ. २७०; क्राउन दुगना, ७२; मू. २०-०० रु.।

इतिहास

बाबरनामा; अंग्रेजी सम्पादक : एफ. जी. टैलबॉट; अनु. युगजीत नवलपुरी; प्रका. साहित्य अकादेमी, नयी दिल्ली-१। पृ. ५२१; डिमा. ७४; मू. ३०-०० रु.।

यात्रा

तुर्की-हिन्दोस्तानी निगाहोंमें; ले. सुदर्शन मजीठिया; प्रका. कैलास पुस्तक सदन, पाटनकर बाजार, ग्वालियर। पृ. ९९; क्रा.; मू. ६-०० रु.।

जीवन : संस्मरण

तरुदत्त; ले. पद्मिनी सेनगुप्त; अनु. युगजीत नवलपुरी; प्रका. साहित्य अकादेमी, नयी दिल्ली-१। पृ. १०८; डिमा. ७४; मू. २.५० रु.।

दर्शन-अध्यात्म

दिव्य-जीवन; ले. श्री अरविन्द; अनु. श्यामसुन्दर झुनझुनवाला; प्रका. श्री अरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी-२। पृ. ५२३; डिमा. ७२; मू. १७-३५ रु.।

गांधी-वाङ्मय

संपूर्ण गांधी वाङ्मय(खण्ड, ५१, ५२, ५३, ५४); प्रका. प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१। खण्ड ५१, पृ. ५३६ खण्ड ५२, पृ. ५०० खण्ड ५३, पृ. ५९०; खंड ५४, पृ. डिमा. ७३; मूल्य प्रत्येक ७-५० रु.।

जेबी पुस्तकें

प्रतीक्षा (उप.); ले. राजवंश; प्रका. स्टार पाकेट बुक्स। पृ. १५६; ७४; मू. ३.०० रु.।

भारत गांधी और मैं (विचार साहित्य); रजनीश; प्रका. स्टार पाकेट बुक्स। पृ. १४५; ७४ मू. ३.०० रु.।

मजेदार भोजन; प्रका. स्टार पाकेट बुक्स। पृ. १६८; ७४; मू. ३.०० रु.।

मंजिल (उप.;) लोकदर्शी; प्रका. स्टार पाकेट बुक्स। पृ. १४८; ७४; मू. ३.०० रु.।

मेरी फिल्मी आत्मकथा (संस्मरण) ले. बलराज साहनी; प्रका. हिन्द पाकेट बुक्स। पृ. १९९; ७४; मू. ३.०० रु.।

वरदान (उप.); ले. समीर; प्रका. स्टार पाकेट बुक्स। पृ. १५६; ७४; मू. ३.०० रु.।

सुनहरे बालोंवाली (उप.); ले. बलवन्तसिंह; प्रका. हिन्द पाकेट बुक्स। पृ. १३२; ७३; मू. २.०० रु.।

बहारोंके सपने (उप.) लेखक : पारस; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १४८; ७३; मूल्य : २.०० रु.।

बॉबी (फिल्मी कथानक); लेखक : ख्वाजा अहमद अब्बास; प्रकाशक : स्टार पाकेट बुक्स, आसफ अली रोड, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : १६७; ७३; मूल्य : ३.०० रुपये।

मिलन (उप.); लेखक : समीर; प्रका. उपर्युक्त। पृष्ठ १२८; ७३; मूल्य : २.०० रुपये।

यौवन (उप.); लेखक : प्रशान्त; प्रकाशक : पुष्प कार्यालय, इलाहबाद। पृष्ठ : १३५; ७३; मूल्य : २.०० रुपये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लघु-विज्ञापनों
के लिए
सुरक्षित पैनल
पुस्तक-प्रकाशकों और विक्रेताओंके
लिए प्रति पैनल २५-०० रु०
व्यवस्थापक : 'प्रकर'
ए ८/४२, राणा प्रताप बाग
दिल्ली-७.

कुछ चुनी हुई
किशोर-बालोपयोगी
पुस्तकें

श्री अरविन्द : जीवन दर्शन — रवीन्द्र	३.००
शंकराचार्य : जीवन दर्शन नारायणदत्त वैद्य	२.५०
गुरु नानक : जीवन दर्शन — नारायणदत्त वैद्य	५.५०
महर्षि दयानन्द : जीवन दर्शन — नारायणदत्त वैद्य	५.००
एवरेस्ट-अभियान डॉ. हरिदत्त भट्ट	२.२५
भंवरी (बाल-उपन्यास) विराज	२.००
चुन्नू-मुन्नू-पुष्पा - चिरंजीत	३.५०
होली का हौवा (हास्य) — हरिकृष्ण तैलंग	१.००
जूता चर्चा — हरिकृष्ण तैलंग	१.००

नवभारती
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग,
दिल्ली-७.

नवीनतम
श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यास
नेपालेश्वर
(लेखक : विराज)
नेपालके इतिहासपर
आधारित एक रोमांचक
उपन्यास
मूल्य ; २०.००

सम्पर्क करें :
साहित्य मंदिर
५२ ए, कमला नगर
दिल्ली—.

'प्रकर'
के
अब तक प्रकाशित विशेषांक
उपलब्ध हैं।

भारतीय साहित्य : २५ वर्ष	८.००
अहिन्दी भाषियोंका हिन्दी साहित्य	६.००
१९६९ के उल्लेखनीय प्रकाशन	२.००
१९७० के ,,	६.००
१९७१ के ,,	६.००
१९७२ के ,,	प्रेस में

आदेश दें :
व्यवस्थापक **'प्रकर'**
ए-८।४२, राणा प्रताप बाग,
दिल्ली-७.

नये शोध प्रबन्ध
**रामचरित मानस और
पूर्वांचलीय रामकाव्य**
(लेखक: डॉ. रमानाथ त्रिपाठी)
रामचरित मानस और देशके पूर्वी
क्षेत्रोंमें प्रचलित राम कथाओंका
तुलनात्मक अध्ययन। उ. प्र. सरकार
द्वारा पुरस्कृत।
मल्य : ४५.०० रु.

**आधुनिक हिन्दी और उर्दू
काव्यकी प्रवृत्तियां**
(लेखक : डॉ. सुधेश)
सन् १९०० से १९६० तक की हिन्दी
उर्दू काव्यकी उल्लेखनीय प्रवृत्तियों
का तुलनात्मक अध्ययन.
मूल्य : ४८.५० रु.

अन्य शोध-प्रबन्ध

पं. अम्बिकादत्त व्यास : एक अध्ययन डॉ. कृष्णकुमार	२५.००
संस्कृत कवितामें रोमांटिक प्रवृत्तियां —डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा	२०.००
संत काव्यका दार्शनिक विश्लेषण डॉ. मनमोहन सहगल	१५.००
रीतिकाव्य के स्रोत — डॉ. रामजी मिश्र	३२.५०
निम्बार्क सम्प्रदाय और उसके कृष्ण भक्त हिन्दी कवि — डॉ. नारायणदत्त शर्मा	१५.००
पंत काव्यमें बिम्ब योजना - डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै	५०-००

नवभारती
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग
दिल्ली-७.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- नवीनतम प्रकाशनोंकी जानकारीके लिए
- प्रकाशनोंके मूल्यांकन, विवेचन और परिचयके लिए
- समीक्षा-विधाकी प्रगति और उसके विकाससे संपर्क रखनेके लिए

प्रकर

आपका अनिवार्य और श्रेष्ठ साथी है। इसकी सहायतासे न केवल आप पुस्तकोंका सही मूल्यांकन प्राप्त कर सकते हैं, बल्कि अपने लिए उपयोगी पुस्तकोंका चुनाव भी सरलतासे कर सकते हैं।
इसकी विशिष्टता है :

- सृजनात्मक साहित्यकी प्रगतिपर निरन्तर प्रकाश.
- हिन्दीतर क्षेत्रोंकी साहित्यिक प्रगतिका लेखा-जोखा.
- ज्ञान-विज्ञान, इतिहास, राजनीति, अर्थशास्त्र आदि अनेक आधुनिक जीवनसे संबद्ध प्रकाशनोंका परिचय.
- लेखकों, पत्रकारों, शिक्षकों, शोध-छात्रों, प्रकाशकों, पुस्तकालयों और वाचनालयोंके लिए अनिवार्य रूपसे पठनीय मासिक प्रकाशन.

वार्षिक मूल्य : १२.०० रु. **प्रति अंक १.२५ रु.**

सम्पर्क : व्यवस्थापक, 'प्रकर',
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग
दिल्ली-११०००७

'नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)' के लिए विद्यासागर विद्यालंकारद्वारा सम्पादित, प्रताप मुद्रणालय, दिल्ली-७ के लिए एम. आर. प्रैस, बहादुरगढ़ (टेलफोन नं. ८३-५६४) में मुद्रित, ए-८/४२, राणा प्रताप बाग दिल्ली-७ [टेलफोन नं. २२३८६३] से प्रकाशित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकर

वर्ष : ६, अंक : ११
नवम्बर १९७४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशिष्ट प्रकाशन

छायावादः नया मूल्यांकन
लेखकः प्रॉ. नित्यानन्द पटेल

*छायावाद सम्बन्धी नया अध्ययन.
*छायावाद सबंधी अबतक की सभी विचारधाराओंका परिचयात्मक तथा समीक्षात्मक विवेचन ।
*लेखककी मान्यता है कि छायावादका मूलाधार प्रगाढ़ प्रकृति-प्रेम है । इस पक्षका तर्कपूर्ण शैलीमें प्रमाणों सहित प्रस्तुतीकरण ।

मूल्य ८.०० रु.

अंधायुगः एक विवेचन
लेखक : डॉ० हरिश्चन्द्र वर्मा

*'अन्धायुग' के सभी पक्षों—काव्य-रूप, कथा-वस्तु, चरित्र-चित्रण, संवाद, अभिव्यंजना शैली, अभिनेयता और संदेशका पृथक-पृथक सात अध्यायोंमें सूक्ष्म, युक्तियुक्त एवं तलस्पर्शी विवेचन.
*'अन्धायुग' के लेखक डॉ० भारतीकी काव्य साधनाका क्रमिक विकास एवं उनकी सभी काव्य-कृतियोंका सारग्राही मूल्यांकन (प्रथम अध्याय).
*समकालीन काव्य-ग्रन्थोंपर 'अन्धायुग' के प्रभावका पर्यालोचन (अन्तिम अध्याय)

मूल्य ११.०० रु.

रुपयेका अवमूल्यन और उसका प्रभाव
सम्पादकः डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी

*मंहगाई बढ़नेके साथ रुपयेका मूल्य गिरता है यही अवमूल्यन है
*अवमूल्यनका देशकी अर्थव्यवस्थापर क्या प्रभाव होता है ?
*चोटीके अर्थशास्त्रियों द्वारा लिखी गयी इस पुस्तकमें इन प्रभावोंकी विस्तारसे चर्चा की गयी है ।

मूल्य १०.०० रु.

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान [सी]
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष : ६
अंक : ११
नवम्बर : १९७४

प्रकर

सम्पादक : विद्यासागर विद्यालंकार
सम्पर्क : ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

वार्षिक मूल्य : बारह रुपये .प्रति अंक : एक रुपया पच्चीस पैसा

समीक्षित पुस्तक	पृष्ठ संख्या	समीक्षक
१. अपनी दृष्टि		
विश्व हिन्दी सम्मेलन : हिन्दी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा	३	—
२. इतिहास : मध्ययुग		
बाबरनामा—एफ. जी. टैल्बॉट, अनु. युगजीत नवलपुरी	५	वन्दना पाराशर
मारवाड़से मुगलोंके संबंध—डॉ० वी. एस. भार्गव	८	ओमप्रकाश केजड़ीवाल
चौहान सम्राट् पृथ्वीराज तृतीय और उनका युग—डा. दशरथ शर्मा	९	सत्यप्रकाश संगर
३. शोध : आलोचना		
व्यक्ति चेतना और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास—डॉ. पुरुषोतम दुबे	१०	डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित
नाटककार मोहन राकेश—संपादक : सुन्दरलाल कथूरिया	१३	डॉ. गोविन्द चातक
गो. तुलसीदासकृत श्रीकृष्ण पदावली—संपा. ज्यो. राधेश्याम द्विवेदी	१४	नटवरलाल नागर
माधव ग्रंथावली—संपा. एवं टीका. डॉ. भवानीलाल, कु. इन्द्रा सक्सेना	१५	राजमल बोरा
मीरां मुक्तावली—संकलन. नरोत्तमदास स्वामी	१६	डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित
४. निबंध-संकलन—		
लोक कला : मूल्य और संदर्भ—डॉ. महेन्द्र भानावत	१७	डॉ. शम्भू शुक्ल 'अभीत'
चिन्तन—डॉ. प्रेमप्रकाश गौतम	१८	डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
५. उपन्यास		
साथ सहा गया दुख—नरेन्द्र कोहली	१९	सुरेन्द्र तिवारी
सोना—भवानी भट्टाचार्य, अनु. श्रवणकुमार	२१	राजनारायण राय
ऊंचे मकान—गुरुदत्त	२१	पुष्पा लहरी
मनका व्यापार—राजेश्वरप्रसाद सिंह	२२	मदनलाल श्रीवास्तव
६. नाटक : एकांकी		
प्रह्लाद—बालकृष्ण सम.	२२	डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल
रेडियो नाटक : एक संकलन	२४	डॉ. भीमसेन निर्मल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. जीवन : संमरण

बिदा बन्धु बिदा—प्रणवकुमार वंद्योपाध्याय २५ डॉ. रमेश तिवारी

भूलाभाई देसाई—एम. सी. सीतलवाड २६ त्रिलोकीनाथ व्रजबाल

भारतके गौरव (भाग ६) २७ मनमोहन वर्मा

नारी आलोककी नौ किरणें—मिश्रीलाल जैन २७ त्रिलोकीनाथ व्रजबाल

८. संदर्भ ग्रन्थ

भारत—७३ २८ म. मो. वर्मा

भारत—७४ २८ "

९. वैदिक-साहित्य

वैदिक-वन्दन—सत्यकाम विद्यालंकार २९ धर्मदेव विद्यामार्त्तण्ड

१० दर्शन-शास्त्र

मूल्य-मीमांसा—गोविन्दचन्द्र पांडे ३० डॉ. प्रेमकान्त टंडन

नीति दर्शनकी पूर्वपीठिका—थामस हिल ग्रीन, अनु. संगमलाल पांडेय ३२ मधुकर

११. सैन्य-विज्ञान—

भारतीय सेना और युद्धकला—कर्नल गौतम शर्मा ३२ प्रेमकृष्ण टंडन

भारतीय सैन्य पद्धति—देवदत्त शास्त्री ३२ "

भारतका सैनिक इतिहास—देवदत्त शास्त्री ३२ "

१२. किशोर-बाल साहित्य ३४ डॉ. हरिकृष्ण देवसरे

१३. जेबी पुस्तकें ३७ जीवन

१४. प्राप्ति सूचना ३९

(पृष्ठ ४ का शेष)

समस्या वहांके हिन्दीभाषियों और सरकारोंको सुलझानी है। परन्तु संयुक्तराष्ट्रसंघमें हिन्दीको स्थान दिलानेका कार्य स्वयं हमारी सरकारको करना है और इस प्रयोजन से सं० रा० सं० के विभिन्न विचारधाराओं और भाषाओंवाले सदस्य देशोंका सहयोग प्राप्त करनेकी आवश्यकता होगी। भाषाके प्रश्नपर कितने देश सं० रा० सं० की महासभामें भारतका समर्थन करनेको तैयार होंगे, यह संदिग्ध है। इस संदेहका आधार एक तो स्वयं भारतीय प्रतिनिधियोंका आचरण है जोकि पारस्परिक व्यवहारमें भी हिन्दीका प्रयोग करनेको तैयार नहीं होते और उन्हें ऐसा करना अपनी प्रतिष्ठाके प्रतिकूल प्रतीत होता है; जबकि संयुक्त राष्ट्रसंघकी दीर्घाओं, कार्यालयों, सार्वजनिक स्थानोंपर अन्य देशोंके प्रतिनिधि केवल अपनी भाषाका ही प्रयोग करते हैं। अरब देशभी संयुक्तराष्ट्रमें अरबीको स्थान दिलनेके लिए प्रयत्नशील है, परन्तु वे भारतीयोंके विपरीत सदा अरबीका ही प्रयोग करते हैं। स्वयं अपनी भाषाकी उपेक्षाही नहीं तिरस्कार करनेवाला भारतीय प्रतिनिधिमण्डल अपने देशकी भाषाको वहां स्थान दिलानेके लिए ईमानदारीसे कितना प्रयत्न करेगा इस सम्बन्धमें किसी टिप्पणीकी आवश्यकता नहीं। दूसरी बात सदस्य देशोंका समर्थन प्राप्त करनेकी है। अबतक का अनुभव यह बताता है कि देशके हितोंसे सम्बद्ध किसी समस्या या प्रश्नपर हम निर्विवाद समर्थन प्राप्त करनेमें असफल रहे हैं और आजभी हमारे देशसे सम्बद्ध अनेक प्रश्न सं० रा० सं० में अधरमें लटके हुए हैं। क्या हमें आशा है कि राजनीतिक स्तरपर असफल रहनेपरभी भाषाके प्रश्नपर सफल हो जायेंगे ?

इन समस्याओंकी चर्चा करनेका मात्र उद्देश्य उन समस्याओंकी ओर ध्यान खींचना है जोकि हिन्दीको अन्तर्राष्ट्रीय स्थान दिलानेमें हमारे सामने हैं। आशा है गोष्ठीमें विचार करते समय इनपर विचारकर कोई कार्यक्रम निश्चित किया जायेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी दृष्टि

विश्व हिन्दी सम्मेलन : हिन्दी-अन्तर्राष्ट्रीय भाषा

यह वस्तुतः प्रसन्नताकी बात है कि विश्वभरमें फैले हिन्दीभाषियों और हिन्दीका अध्ययन-अध्यापन करनेवाले लोगोंको एक मंचपर इकट्ठाकर 'विश्व हिन्दी सम्लमेन' का नागपुरमें आयोजन किया गया है। सम्मेलनमें जहां हिन्दी-साहित्यके सृजन-कार्यमें संलग्न संस्थाओंके प्रतिनिधित्वपर ध्यान दिया गया है, वहां हिन्दीतर क्षेत्रके हिन्दी विद्वानों को भी निमंत्रित किया गया है। देशकी अन्य भाषाओंके प्रमुख साहित्यिक भी सम्मेलनमें भाग ले रहे हैं और उन्हें सम्मानित करनेका भी आयोजन किया गया है। हिन्दीभाषी अपने देशके सहभाषियोंको सम्मानित करें और उन्हें अन्तर्देशीय प्रतिष्ठा प्रदान करें, इसमें पूरा औचित्य है। इससे उन कृत्रिम व्यवधानोंको दूर करनेमें, देशकी सभी भाषाओंको एक दूसरेके निकट लाने और पारस्परिक व्यवहार तथा साहित्यिक आदान-प्रदानमें हिन्दीको माध्यम बनाने में सहायता मिलेगी।

यहभी उल्लेखनीय है कि मारीशस, फिजी, त्रिनिडाड और सुरीनाम जैसे देशोंमें भारतीय वंशके लोगोंका बहुमत है और वे हिन्दीका व्यापक रूपसे प्रयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त अफ्रीकाके पूर्वी देशोंमें हिन्दीभाषी बड़ी संख्यामें बस भी हैं। इन लोगोंका भी इस सम्मेलनमें प्रतिनिधित्व होगा, विशेष रूपसे मारिशसका राजनीतिक और साहित्यिक दोनों स्तरोंपर सशक्त प्रतिनिधित्व होगा।

सामान्य रूपसे इस बातकी जानकारी बहुत कम लोगों को है कि भारतसे बाहर ९३ विश्वविद्यालयोंमें हिन्दीके अध्ययन-अध्यापनकी व्यवस्था है। ये विश्वविद्यालय २९ देशोंमें फैले हुए हैं। हिन्दी पढ़ानेवाले विश्वविद्यालयों अथवा संस्थाओंकी सर्वाधिक संख्या संयुक्तराज्य अमरीकामें है जोकि ३३ है। सोवियतसंघमें हिन्दी अध्यापनके साथ कहीं अधिक बड़े परिमाणमें हिन्दीपर कार्य हुआ है और हो रहा है। इन दोनों देशोंके सशक्त प्रतिनिधिमण्डल सम्मेलनमें भाग लेंगे। इनके अतिरिक्त उन सभी अमरीकी, यूरोपीय और एशियायी देशोंके विद्वानोंको निमंत्रित किया गया है जहां हिन्दी-शिक्षाकी व्यवस्था है। इसप्रकार सम्मेलनको यथार्थ रूपसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तरपर आयोजित करनेका प्रयास किया गया है।

हिन्दीप्रेमी इस विश्व-सम्मेलनका स्वागत करेंगे, इसमें संदेहकी गुंजाइश नहीं है। फिरभी, हिन्दीकी अन्तर्राष्ट्रीय स्थितिका प्रश्न इतना जटिल और उलझा हुआ है कि इस संबंधमें न केवल गहराई और व्यापक रूपसे विचार करनेकी आवश्यकता है, बल्कि राजनीतिक और आन्दोलनात्मक दृष्टिसे भी इसपर ध्यान देनेकी जरूरत है। इस संबंधमें सम्मेलन द्वारा भी विचारगोष्ठी आयोजित की गयी है। यह गोष्ठी केवल भावनात्मक क्षेत्रतक सीमित न रह जाये, अथवा भावुकताके प्रवाहमें न बह जाये, इसलिए कुछ तथ्यों की ओर ध्यान खींचना संभवतः उपयुक्त होगा।

किसीभी भाषा, विचार या आन्दोलनको अन्तर्राष्ट्रीय रूप देनेके प्रयत्नोंसे पूर्व यह आवश्यक है कि उसकी अपने मूल स्थान या देशमें जड़ें मजबूत हों। जहांतक हिन्दीका प्रश्न है, अपनेही देशमें उसकी स्थिति संदिग्ध है। यह सत्य है कि अपने देशके संविधानमें हिन्दीको प्रथम भाषाका स्थान प्राप्त है (हिन्दीको राजभाषाका पद प्रदान करनेवाले संविधानकी आधिकारिक और वैधानिक भाषा अंग्रेजी है—जो कि मनोवैज्ञानिक दृटिसे विचारणीय है); पर इसके साथही यहभी सत्य है कि भाषा-अधिनियमके अंतर्गत प्रथम स्थान अंग्रेजीको प्राप्त है और व्यवहारमें राजकीय तथा प्रशासनिक कार्योंमें हिन्दीको लगभग कोई स्थान प्राप्त नहीं है। केन्द्रीय सेवाओंके हिन्दी जाननेवालों तथा हिन्दीमें कार्य करनेको उत्सुक कर्मचारियोंको जिन अपमानजनक स्थितियोंका सामना करना पड़ता है, उनकी योग्यताकी उपेक्षाकरके उन्हें आगे बढ़नेसे रोक दिया जाता है अथवा उनके कार्यमें जो बाधाएं पैदा की जाती हैं, वे तभी प्रकाशमें आ सकती हैं, जबकि किसी उच्चाधिकारप्राप्त आयोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा समिति द्वारा इसकी जांच करायी जाये। स्वयं हिन्दी भाषी प्रदेशोंमें भी अभीतक हिन्दीको पूर्ण राजभाषाका स्थान प्राप्त नहीं है। अनेक राज्यों और केन्द्रके बीच हिन्दी में पत्र व्यवहारको मान्यता देनेकी घोषणाओंके बावजूद प्रयोग अंग्रेजीका ही होता है। इस राजनीतिक और व्यवहारिक स्थितिको बनाये रखनेमें अंग्रेजीवालोंका स्वार्थ निरंतर कार्य करता रहता है और ये लोग ऐसा कोई अवसर हाथसे नहीं जाने देते जिससे हिन्दीकी स्थिति कमजोर न की जा सकती हो। अपनी सद्भावनाओंके आवरणमें ये लोग पूरी दृढ़ता और निष्ठाके साथ अंग्रेजीको देशकी सर्वोच्च भाषाके रूपमें स्थापित करनेपर तुले रहते हैं।

हिन्दीको अन्तर्राष्ट्रीय रूप दिलाने अथवा उसे संयुक्त-राष्ट्र संघकी एक भाषाके रूपमें मान्यता दिलानेके सबंध संसद्में जो प्रश्नोत्तर हुए और केन्द्र सरकारकी ओरसे इसे जिस रूपमें टाल दिया गया, उससे पर्याप्त संकेत मिल जाता है कि हिन्दीको उसका स्थान दिलानेमें अभी केन्द्रकी कोई रुचि नहीं है, अभी वह देशमें अंग्रेजीको बनाये रखना चाहती है। इस स्थितिसे सम्मेलनके आयोजक अपरिचित नहीं होंगे, इसलिए यह अनुमान करना अनुपयुक्त न होगा कि इस आयोजनका एक आन्दोलनात्मक उद्देश्य है और वह है देशके बाहरके हिन्दीभाषियों और हिन्दीप्रेमियोंको संगठित कर संख्याके आधिक्य और क्षेत्रकी व्यापकताके आधारपर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें हिन्दीकी स्थितिको मजबूत करना।

पर यह कार्यभी सहज नहीं है। सर्वप्रथम इस सम्मेलनको इस समय देशके जिन एकदलीय राजनीतिज्ञों और सरकारका जो उत्साहवर्धक समर्थन प्राप्त हो रहा है, उसका कारण हिन्दीके प्रति संवैधानिक दायित्व नहीं, अपितु देशकी वर्तमान आन्तरिक राजनीतिक और आर्थिक-स्थिति है। सम्भवतः ये राजनीतिज्ञ कुछ ऐसा अनुभव करते हैं कि इसप्रकारके आयोजनोंसे जनसाधारणका ध्यान दूसरी ओर बटाया जा सकता है और ऐसे आयोजनको समर्थन प्रदानकर अपनी अन्य राजनीतिक आकांक्षाओंकी पूर्तिमें बहुत बड़े वर्गको अपने साथ लिया जा सकता है अथवा उसकी सहानुभूति जुटायी जा सकती है, नहीं तो उन्हें तटस्थ तो बनायाही जा सकता है। सम्मेलन द्वारा प्रचारित सामग्रीसे ऐसा प्रतीत नहीं होता कि उसे सत्तारूढ़ दलके अतिरिक्त किसीभी अन्य राजनीतिक दलका सक्रिय सहयोग प्राप्त है, यद्यपि अन्य राजनीतिक दल सत्तारूढ़ दलकी अपेक्षा कहीं अधिक तीव्र रूपसे अंग्रेजी-साम्राज्यवादका विरोध करते हैं और भारतीय भाषाओंके पक्षपाती हैं।

दूसरी बात यह है कि यदि देशके राजनीतिक दलदल में फंसी हिन्दीकी स्थितिकी उपेक्षा भी कर दी जाये तो क्या अन्य हिन्दी-बहुल देशोंमें ऐसी स्थिति है कि वह सम्मेलनके उद्देश्यकी दृष्टिसे सहायक हो सके। ऐसा प्रतीत नहीं होता कि हिन्दी-बहुल मारीशस और फिजी जैसे देशोंमें वैधानिक और राजनीतिक दृष्टिसे हिन्दीकी स्थिति संतोषजनक है। मारीशसमें वैधानिक भाषा अंग्रेजी है, दूसरी भाषा फ्रांसीसी। कुछ समय पूर्वतक शिक्षण संस्थाओं में हिन्दीको स्थान प्राप्त नहीं था, अब उसे शिक्षण संस्थाओंमें स्थान प्राप्त होने लगा है, परन्तु आजभी वहां के विरल कालेजोंमें शिक्षणका माध्यम नहीं है। अल्प संख्यक वर्ग हिन्दीके प्रति दबे स्वरोंमें विरोध प्रगट करते हैं, जबकि फ्रांसीसी समर्थक लोग हिन्दीके प्रबलतम विरोधी हैं। वहांके प्रशासनमें हिन्दीको अभी स्थान प्राप्त नहीं है। हम यह आशा कर सकते हैं कि वहांके हिन्दीभाषियोंके उत्साहके कारण हिन्दीकी स्थितिमें सुधार हो जायेगा, परन्तु अपनी राष्ट्रीय-सीमाओंके बाहर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मारीशस हिन्दीका कितना समर्थन कर पायेगा, विशेषतः अंग्रेजी-फ्रांसीसी समर्थक उग्र अल्पसंख्यकोंके विरोधको देखते हुए, इस सम्बन्धमें सुनिश्चित राय देना कठिन है। इसीप्रकार फिजीके अल्पसंख्यक मूल आदिवासी तथा उनके मस्तिष्कका कार्य करनेवाले अंग्रेजीपंथी सहज रूपसे हिन्दीकी अन्तर्राष्ट्रीय स्तरकी मांगको स्वीकार कर लेंगे, यह संदिग्ध है। बल्कि आशंका यह है कि उन लोगोंकी ओरसे इसका विरोध होगा। त्रिनीडाड और सुरीनामकी स्थिति भी इससे भिन्न प्रतीत नहीं होती। यदि इस सम्मेलनमें सम्मिलित इन देशोंके हिन्दीभाषी अपने-अपने देशोंमें हिन्दीको उसका उचित स्थान दिलानेकी प्रेरणा प्राप्तकर निष्ठापूर्वक और दृढ़ संकल्पके साथ इस दिशामें कार्य करनेका निश्चय कर लौटते हैं तो यह अपने आपमें एक बड़ी उपलब्धि होगी और हिन्दीको अन्तर्राष्ट्रीय स्तर प्रदान करनेकी दिशामें एक सक्रिय कदम होगा।

हिन्दीको अन्तर्राष्ट्रीय स्तर दिलानेका प्रश्न संयुक्त राष्ट्र संघमें हिन्दीकी स्थितिसे भी जुड़ा है। समुद्रपारके हिन्दीभाषी देशोंमें हिन्दीको उचित स्थान दिलानेकी (शेष पृष्ठ २ पर)

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतिहास : मध्ययुग

बाबरनामा,

मूल : एफ० जी० टैलबॉट; अनुवादक : युगजीत नवलपुरी; प्रकाशक : साहित्य अकादेमी, रवीन्द्र भवन, फिरोजशाह रोड़, नई दिल्ली-१ । पृष्ठ : ५२१; डिमाई, ७४; मूल्य ३०.०० रुपये ।

बाबरनामा, बाबरका अद्वितीय स्मारक है। १५२६ ई० में पानीपतके प्रथम युद्धमें दिल्लीके सुल्तान इब्राहीम लोदीको पराजितकर बाबरने भारतमें मुगल साम्राज्यकी नींव डाली। बाबरने अपनी आत्मकथाके रूपमें अपनी मातृ-भाषा चगताई तुर्कीमें इस ग्रन्थकी रचना की। बाबरके समय का इतिहास जाननेके लिए बाबरनामा अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ है।

बाबरनामा एक ऐसा दर्पण है, जिसमें बाबरका स्वभाव, चरित्र और व्यक्तित्व ही नहीं, उसके समयकी राजनीतिक घटनाएँ, सामाजिक परम्पराएँ, सामरिक गतिविधियाँ और सांस्कृतिक उपलब्धियाँ भी स्पष्टत: प्रतिबिम्बित होती हैं। बाबरने अपने जीवनमें अनेक उतार-चढ़ाव देखे। तीन बार वह अपनी तलवारके बलपर समरकन्दकी गद्दीपर बैठा और तीनों बार उसे पराजित होकर वहाँसे भागना पड़ा। वस्तुत: हिन्दुस्तानमें उसे मिलनेवाली सफलताएँ और विजयें जितनी निर्णयात्मक थीं, मध्य-एशियामें मिलनेवाली पराजयें और असफलताएँ उससे कम निर्णयात्मक नहीं थी। जीवनमें अनेक बार उसे भयानक विपत्तियोंका सामना करना पड़ा, प्राण बचानेके लिए जंगलों और पहाड़ोंमें पैदल भटकना पड़ा, किन्तु ईश्वरपर उसकी आस्था कभी नहीं टूटी। विपरीत परिस्थितियोंने उसे विचलित अवश्य किया, किन्तु उसका मनोबल अजेय रहा। अनेक बार भाइयों, सम्बन्धियों और अमीरोंने उसका साथ छोड़ दिया, उसके साथ विश्वासघात किया, उसके विरुद्ध षडयन्त्र किये, किन्तु कटु अनुभवोंकी कटुताको उसने अपने मनपर हावी नहीं होने दिया। जब बादमें यही सम्बन्धी और अमीर उसके पास आश्रय मांगने आये, तब उसने उनके अपराधोंको उदारता-पूर्वक क्षमा ही नहीं किया, अपितु उनके लिए उचित प्रबंध भी किया।

स्वभावसे बाबर उदार था, आवश्यकताके समय कठोर भी हो सकता था। हृदयसे ईश्वरभक्त और धर्मभीरू था किन्तु धर्म और धर्मके बाह्याडम्बरके बीच भेद करना खूब जानता था। कट्टर सुन्नी होते हुए भी उसने ईरानके शिया शासक शाह इस्माईलके साथ सन्धि की और तदनुसार शिया रीति रिवाजोंके अनुसार आचरण करना स्वीकार कर लिया। बाबर, हिन्दुओंको काफिर और अफगानोंको अविश्वसनीय मानता था, किन्तु इनके नेताओंके प्रति उसका व्यवहार आदर और उदारताका रहा।

जीवनको पूरी समग्रताके साथ भोगनेका आग्रह बाबरके व्यक्तित्वकी सबसे बड़ी विशेषता है। अपने संपर्कमें आनेवाली प्रत्येक वस्तु और व्यक्तिके विषयमें, उसने जितनी दिलचस्पी और जानकारीके साथ लिखा है, उससे बाबरकी सूक्ष्म निरीक्षण शक्तिका परिचय मिलता है। प्रकृतिसे उसका गहरा लगाव था। पेड़ों, पौधों, फूलों, फलों, पशु-पक्षियों और नदी तालाबोंके विषयमें उसने विस्तारसे लिखा है। बागवानीका उसे शौक था। इसी कारण उसे मालियोंका मुकुट कहा जाता है। बाबरके आगमनके कारण ही, हिन्दुस्तानमें उद्यान-निर्माण कलाकी एक नयी शैलीका जन्म हुआ। कलाके प्रत्येक क्षेत्रमें उसकी रुचि थी। साहित्यकी प्रत्येक विधा अर्थात् गद्य, पद्य, निबन्ध, व्याकरण आदिमें उसकी गहरी पैठ थी। वह जितना कुशल सैनिक और सेनापति था, उतना ही अच्छा कवि और लेखक भी था। उसकी भाषा सरल और प्रवाहमयी, वाक्य संरचना स्पष्ट और शैली चित्रात्मक है। अपने समकालीन जिन व्यक्तियोंका चित्र उसने खींचा है, वह अत्यन्त रोचक है। बाबरनामा पढ़ते समय, पाठक इसमें वर्णित घटनाओंके विषयमें केवल पढ़ता ही नहीं है, अपितु उन्हें अपने सामने घटते हुए भी देखता है और बाबरनामाकी यही सफलता है।

बाबरनामाका ऐतिहासिक महत्त्व दो बातोंसे कम हो जाता है। पहली यह, कि इसमें बाबरके जीवनका पूरा वर्णन नहीं मिलता। बाबरने अपना वृत्तान्त १२ सालकी आयु अर्थात् फरगनाकी गद्दीपर बैठनेके समयसे प्रारंभ किया है, और इससे पहलेके अपने जीवनके विषयमें कुछ नहीं लिखा है। बाबरका बचपन किसतरह व्यतीत हुआ,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने किन व्यक्तियोंसे शिक्षा प्राप्त की, आदि अनेक बातोंकी जानकारी बाबरनामामें नहीं मिलती। बाबरनामाके फारसी, अंग्रेजी और हिन्दी अनुवादकोंने भी, बाबरके बचपनके विषयमें खोज करने और इस जानकारीको जुटानेका प्रयास नहीं किया। प्रस्तुत अनुवादमें भी यह कमी है। दूसरे बाबरनामाका वृत्तान्त १४९४ ई० अर्थात् बाबरके फरगना की गद्दीपर बैठनेसे प्रारम्भ होकर १५३० ई० में उसकी मृत्यु तक पूरा नहीं है, अनेक स्थानोंपर यह क्रम टूट गया है। दिसम्बर १५०२ से जून १५०४ ई० तक, मई १५०८ से जनवरी १५१९ ई० तक, जनवरी १५२० से नवम्बर १५२५ ई० तक और सितम्बर १५२९ ई० से दिसम्बर १५३० ई० तक के कालकी घटनाएँ बाबरनामामें नहीं मिलतीं। इनके अतिरिक्त भी अनेक स्थानोंपर कुछ दिनों, कुछ सप्ताह आदिका क्रम भंग हुआ है किन्तु वह महत्त्वपूर्ण नहीं है। बाबरके विषयमें लिखनेवाले अधिकांश लेखकों और बाबरनामाके अनुवादकोंने इस छूटे हुए समयकी घटनाओंके विषयमें लिखा है और टूटे हुए सूत्रको जोड़नेका प्रयास किया है। प्रस्तुत ग्रन्थमें भी नवलपुरीने अनेक पूरकोंमें समकालीन फारसी ग्रन्थोंके आधारपर इस छूटे हुए विवरणको पूरा किया है। किन्तु छूटे हुए समयकी घटनाओंके वर्णन और व्यक्तियोंके चित्रणमें अनुवादकने समकालीन ग्रंथोंकी गहरी जांच करके अनेक ऐतिहासिक तथ्योंके विषयमें फैली भ्रन्तियोंको दूर करनेका प्रयास नहीं किया। बाबरकी मृत्युके सम्बन्धमें प्रचलित आत्मबलिदानकी कहानीको ज्योंका त्यों दोहरा दिया है, बाबरके वजीर खलीफाके षड़यन्त्रके विषयमें बाबरनामाकी विदुषी अनुवादिका मिसेज वेवरिजके अनुमान को स्वीकार कर लिया गया है। लेखकका विचार है कि बाबर हिन्दुस्तानका राज्य अपने दामाद मोहम्मद जमान मिर्जा को सौंपना चाहता था, हुमाँयूसे असन्तुष्ट था। बाबरकी पत्नी और हुमांयूकी माँ माहम बेगमको बाबरकी इच्छाकी जानकारी थी और उसीने हुमांयूको बदख्शांसे बुलाया था। किन्तु माहमके काबुलसे आगरा पहुंचनेके केवल दस दिन बाद हुमांयू आगरामें था। इतने कम समयमें, माहम बेगम द्वारा, मोहम्मद जमान मिर्जाको हिन्दुस्तानका राज्य देनेकी बाबरकी इच्छाका पता लगाना, हुमांयूको बदख्शांमें खबर भेजना और हुमांयूका आगरा पहुँचना संभव प्रतीत नहीं होता।

बाबरके समयका इतिहास जाननेके लिए समकालीन ग्रन्थ अधिक उपलब्ध नहीं हैं। ख्वन्दमीरके 'हबीबुस्सियर', बाबरके मौसेरे भाई मिर्जा हैदरकी 'तारीखे रशीदी' और शेख रिजकुल्लाह मुश्ताकीकी 'वाकेआत-ए-मुश्ताकी' को ई एक सीमा तक समकालीन माना जा सकता है। बाबरके बाद लिखनेवाले अन्य सभी अफगान मुगल वृत्तान्तकारोंने बाबर सम्बन्धी विवरणके लिए बाबरनामाका ही आश्रय लिया है। उपर्युक्त तीनों ग्रंथोंमें भी ख्वन्दमीरने ईरान, मिर्जा हैदरने मंगोलों और मुश्ताकीने अफगानोंका इतिहास लिखा है और बाबरका वर्णन प्रसंगानुसार ही हुआ है। बाबरके इतिहासकी जानकारी के लिए केवल बाबरनामा ही उपलब्ध है और उसे पूर्णतः प्रामाणिक माना जाता है। बाबरने स्वयं भी अनेक स्थानोंपर लिखा है कि उसने जो कुछ लिखा है सच-सच लिखा है और कुछ भी नही छिपाया हैं। किन्तु इस बातके प्रमाण मिलते हैं कि बाबरने तथ्योंको छिपाया भी है और तोड़मरोड़कर भी लिखा है। यही नहीं, अपने विरोधियों और शत्रुओंके विषयमें बाबरका विवरण निष्पक्ष न होकर पूर्वाग्रहग्रस्त है। खानवाके युद्धके ठीक पहले रायसेनके शासक सलाहदी तँवरके माध्यमसे राणा साँगाके साथ होनेवाली सन्धि-वार्ताके विषयमें बाबर मौन हैं। बाबरके हिन्दुस्तान आनेसे पहले राणा सांगाके साथ होनेवाले पत्र-व्यवहारके विषयमें बाबर लिखता है कि राणा साँगाने उसे निमन्त्रित किया, जबकि घटनाएँ यह प्रमाणित करती हैं कि यदि इसप्रकारकी कोई वार्ता हुई भी तो, उसकी पहल बाबरकी ओरसे हुई थी। इसीप्रकार इब्राहीम लोदीके विषयमें बाबरने जो कुछ लिखा है वह इब्राहीम लोदीके पाससे भागकर काबुल पहुंचनेवाले असन्तुष्ट अफगान अमीरोंके मुँहसे सुनी-सुनाई बातोंपर आधारित है। पानीपतकी विजय और हिन्दुस्तानमें जम जानेके बाद ही बाबरने लिखा कि 'इब्राहीम लोदी अनुभवशून्य नवयुवक था, जिसे न आगे बढ़ना आता था न पीछे हटना' अथवा 'इब्राहीम लोदी अपनी कंजूसीके कारण सैनिकोंको संतुष्ट नहीं कर सका,' जबकि ऐतिहासिक तथ्यों और घटनाक्रमके सूक्ष्म निरीक्षणसे बाबरका विवरण सत्य प्रमाणित नहीं होता। फिरभी अपवादोंको छोड़ देनेपर बाबरनामाका ऐतिहासिक महत्त्व कम नहीं है।

बाबरने अपनी आत्मकथा चगताई तुर्कीमें लिखी है। मिसेज वेवरिजने हैदराबाद पोथीके आधारपर १९०५ ई० में मूल तुर्की संस्करण प्रकाशित किया। बाबरनामाके तीन फारसी अनुवाद प्रसिद्ध हैं। पहला, बाबरके ही जीवनकालमें उसके सद्र शेख जेनुद्दीन ख्वाफीने किया। दूसरा अकबरके समय पायन्दा हसन गजनवी और मुहम्मद कुली हिसारीने किया था। तीसरा और सर्वप्रसिद्ध फारसी अनुवाद अब्दु-

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहीम खानखानाने किया था।

बाबरनामाका पहला अंग्रेजी अनुवाद लेईडन और असंकिनने १८२६ ई० में लन्दनसे प्रकाशित किया। आर० एम० केल्डकाटने १८४४ ई० में और एफ० जी० टेलबाँटने १९०९ ई० में असंकिनके अनुवादके संक्षिप्त संस्करण प्रकाशित किये। १९२१ ई० में किंगका अंग्रेजी अनुवाद भी छपा। इसी बीच मिसेज बेवरिजने मूल तुर्कीसे अपना अनुवाद प्रकाशित किया। मूल तुर्कीसे किये जानेके कारण और भौगोलिक स्थानों एवं ऐतिहासिक व्यक्तियोंसे सम्बन्धित विस्तृत एवं परिचयात्मक टिप्पणियों और परिशिष्टोंके कारण यह अनुवाद सर्वाधिक प्रामाणिक अंग्रेजी अनुवाद माना जाता है।

सैयद अतहर अब्बास रिजवीने बाबरसे सम्बन्धित अधिकांश फारसी ग्रन्थोंका हिन्दी अनुवाद 'मुगलकालीन भारत—बाबर' शीर्षकसे १९६० ई० में अलीगढ़से प्रकाशित किया। इसमें बाबरनामाके अब्दुर्रहीम खानखाना कृत फारसी अनुवादका हिन्दी अनुवाद किया गया है। इस ग्रन्थकी विस्तृत भूमिका महत्त्वपूर्ण है। दूसरा हिन्दी अनुवाद, केशवकुमार ठाकुरने किया, जो इलाहबादसे १९६८ में छपा। यद्यपि इसकी भूमिका और उपसंहार उल्लेखनीय हैं, किन्तु स्वतंत्र इतिहास-ग्रन्थकी दृष्टिसे इसका अधिक महत्त्व नहीं है। तीसरा हिन्दी अनुवाद डा० मथुरालाल शर्माने किया जो १९७१ में ग्वालियरसे छपा। इस अनुवादकी विशेषता यह है कि अनुवादकने बाबरके हिन्दुस्तानमें आनेके बादके अंशका ही अनुवाद किया है और उसके पहलेके जीवनको निबन्धोंके रूपमें लिखा है। यह अनुवाद अत्यन्त संक्षिप्त है, टिप्पणियाँ बहुत कम हैं और इससे बाबर सम्बन्धी इतिहासके विषयमें विस्तृत सूचना नहीं मिलती।

प्रस्तुत ग्रन्थ बाबरनामाका नवीनतम हिन्दी अनुवाद है। यह एफ० जी० टेलबॉट कृत बाबरनामाके अंग्रेजी अनुवादपर आधारित है। टेलबॉटकी पुस्तकका ऐतिहासिक महत्व अधिक नहीं है और टेलबॉटने अनेक भूलें भी की हैं। नवलपुरीके हिन्दी संस्करणकी यह विशेषता है कि अनेक उपयोगी विवरण जो टेल्बॉटने छोड़ दिये हैं, इस पुस्तकमें सम्मिलित किये गये हैं और टेल्बॉटकी भूलोंको सुधारा गया है। एक स्थानपर बाबरने हिरातके सुल्तान हुसैन बेकराके अमीरके विषयमें जो लिखा है उसे टेल्बॉटने सुल्तान हुसैन बेकराके पुत्रके नाम से छाप दिया है। नवलपुरीने इस भूलको ठीक कर दिया है। (देखिये, एफ० जी० टेल्बॉट—मेमार्यस आफ बाबर, लन्दन १९०९ पृ० १८९-११०, तथा प्रस्तुत ग्रन्थ, पृ० १९१)।

नवलपुरीने केवल टेल्बॉटके आधारपर ही यह पुस्तक नहीं लिखी है अपितु बाबरनामाके मूल तुर्की फारसी संस्करणोंको भी सामने रखा है। अनुवादकी विशेषता यह होनी चाहिये कि मूलकी आत्माको सुरक्षित रखकर भी मूलकी कमजोरियां दूर कर दे। इस अर्थमें यह अनुवाद सफल माना जा सकता है। प्रत्येक अध्यायके अन्तमें दी गयी परिचयात्मक और विवेचनात्मक टिप्पणियां अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। बाबरनामामें जो जानकारी नहीं मिलती, अन्य ग्रन्थोंके आधारपर उसे भी जुटाया गया है। बाबरके अनेक शेर और पद्यांशोंको हिन्दी अनुवादके साथ मूल तुर्की फारसीमें भी दिया गया है। अनेक शब्दों और नामोंकी मूल व्युत्पत्ति दी गयी है। टेल्बॉटने १५२७ ई० तकके वृत्तान्तका ही अनुवाद किया है। नवलपुरीने १५३० ई० में बाबरकी मृत्यु तक का पूरा विवरण दिया है।

विवेच्य पुस्तकमें भूमिका नहीं है। टेलबॉटकी विस्तृत भूमिकाका अनुवाद नहीं किया गया, केवल प्राक्कथनका ही अनुवाद किया गया है। बाबर और बाबरनामाके विषयमें मौलिक भूमिकासे ग्रन्थकी उपादेयता बढ़ जाती। इसी प्रकार, बाबरनामाके अनेक चित्र टेल्बॉटने दिये हैं, यदि उन्हें भी इस पुस्तकमें सम्मिलित कर लिया जाता तो यह ग्रन्थ अधिक आकर्षक बन सकता था।

हिन्दी अनुवादमें मूल ग्रन्थकी सजीव वर्णनात्मकता, रोचकता, सरलता और स्पष्टताको सुरक्षित रखा गया है, किन्तु अनेक स्थानोंपर जहां हिन्दीके शब्द उपलब्ध हो सकते थे, वहां उर्दू फारसीके शब्दोंका अधिक उपयोग भाषाके प्रवाहमें बाधक है। इसके अतिरिक्त 'अक्सर' शब्दका फारसीमें अर्थ है बहुत या अधिक, किन्तु हिन्दीमें यह शब्द प्रायः अथवा बहुधाके अर्थमें प्रयुक्त होता है। नवलपुरीने 'अक्सर' का उपयोग फारसीके अर्थमें किया है, जो खटकता है।

कुछ एक साधारण कमियोंको छोड़ देनेपर यह कहा जा सकता है कि यह ग्रन्थ बाबरनामाके सभी हिन्दी अनुवादोंसे श्रेष्ठ और प्रामाणिक है। लेखकने बाबरकी आत्मकथाका अनुवाद ही नहीं किया है अपितु बाबरके इतिहाससे सम्बन्धित सभी उपयोगी सामग्रीको एकत्रित करके, स्वतंत्र इतिहास ग्रन्थके रूपमें इसे लिखा है। बाबरके समयका इतिहास जाननेके लिए यह एक महत्वपूर्ण पुस्तक है।

—वन्दना पाराशर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मारवाड़से मुग़लोंके सम्बंध

लेखक : डॉ० वी० एस० भार्गव; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, ए-२/६२ विद्यालय मार्ग, तिलक नगर, जयपुर-४ । पृष्ठ : ९३ ; डिमा० ७३; मूल्य : ५.०० रु० ।

मुगलकालीन इतिहाससे सम्बन्धित हर स्तरीय किताबमें विभिन्न मुगल सम्राटोंकी नीतिका विवरण मिल जाता है । डॉ० वी० एस० भार्गवने प्रस्तुत पुस्तकमें इसी प्रसंगपर विस्तारसे लिखा है । इस विषयपर वैसे पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है और लेखकने स्वयं भी श्री गोपीनाथ शर्माकी 'मेवाड़ एण्ड द मुगल एम्परर्स' और श्री रेऊजीके 'मारवाड़का इतिहास" का हवाला दिया है । कई स्थानोंपर एक पुस्तक "मारवाड़ एण्ड दी मुगल एम्परर्स" की चर्चा की गयी है—पर कहीं भी लेखकका नाम नहीं दिया गया । प्राक्कथनमें भी 'मारवाड़ एन्ड मुगल एम्परर्स' शोध प्रबन्धके बारेमें विस्तारसे चर्चा की गयी है और इसे पढ़कर लगता है कि वह लेखककी ही कृति है—इस दृष्टिसे प्रस्तुत पुस्तक एक अनुवाद हुआ, लेकिन कहीं भी यह स्पष्ट नहीं किया गया ।

इसीप्रकार सिंहावलोकनमें कहा गया है "संलग्न मानचित्रसे स्पष्ट हो जायेगा........." । लेकिन पुस्तकमें में कहीं भी कोई मानचित्र नहीं है ।

पुस्तक या पुस्तिका (क्योंकि यह ९३ पृष्ठोंकी ही है) की विषय-वस्तुकी चर्चाके पूर्व इसकी एक और कमीकी ओर ध्यान खींचना उपयुक्त होगा कि प्रस्तुत पुस्तिकामें गलतियोंकी भरमार है । उदाहरणके लिए : जरनल (Journal) को अधिकतर 'जनरल' ही बताया गया है (पृष्ठ ६ नोट ११, पृष्ठ ७ नोट १६; पृष्ठ ४२ नोट २); "मैंने सन् १६६१-६२ में एक अनुसंधान लेख द्वारा यह सिद्ध करनेका प्रयास किया था कि जसवन्तसिंह और शिवाजीके बीच सांठ-गांठ होनेकी कोई सम्भावना नहीं थी" (पृष्ठ ३८); राष्ट्रकूटाज एण्ट देयर टाइम्स (पृष्ठ ४ नोट १); मुगम सम्राट अकबर (पृष्ट १२); एक और तो जसवन्तसिंहकी प्रतिष्ठामें अभिवृद्धि की दूसरी और उसे सातलमेर परगना मुगल सम्राटकी कृपासे प्राप्त हो गया । गल्तियां तो दर्जनों हैं पर इस गलतीका मुकाबला क्या हो सकता है जब पृष्ठ १३ पर लेखकने हुमायूँकी स्थितिको शौचनीय बताया है । इसके मुकाबले केवल एक ही गलती और ध्यानमें आती है । नयी दिल्लीमें प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्रीके नामपर बने भवनके मार्गदर्शन बोर्डपर 'शात्री भवन' ही लिखा है ।

अब विषय-वस्तुकी बात ! पुस्तकके अधिकांश भागमें विभिन्न राजाओंकी जय-पराजयकी सूचियां है । कहीं-कहीं वाक्यमें एक नयी घटना दी हुई है जो कोई छाप नहीं छोड़ती । केवल लेखककी स्रोत-सूची प्रभावित करती है । लेकिन इस प्रकारकी पुस्तकमें घटनाओंकी अपेक्षा निष्कर्षोंकी ओर अधिक ध्यान देना चाहिये था । कहीं-कहीं लेखकने नया दृष्टिकोण पेश करनेकी कोशिश की है जैसे "मारवाड़के संदर्भमें सांगाको सर्वशक्तिमान शासकके रूपमें स्वीकार नहीं किया जा सकता (पृष्ठ १०); धरातलमें उबड़-खाबड़ पत्थर बिछे हुए हैं । अतएव असावधानीके कारण भी (गांगाकी) मृत्यु हो जाना असंगत प्रतीत नहीं होता (पृष्ठ ११); मेरी दृष्टिमें मालदेवको विश्वासघाती कहना ठीक नहीं है (पृष्ठ १४) आदि । एक जो नयी बात लेखक ने बतायी है वह यह कि जोधाबाई अकबरकी पत्नी और जहाँगीरकी माँ नहीं वरन् जहाँगीरकी पत्नी और शाहजहांकी माँ थी । लेखकने इसके पक्षमें कई पुस्तकोंका हवाला दिया है—और यह भी बताया है कि "जोधाबाईके सम्बन्धमें अंग्रेज इतिहासकारों—एलफिन्सटन और कर्नल टॉडने भ्रान्ति उत्पन्न कर दी है ।" यदि लेखक इन इतिहासकारोंके स्रोतोंका भी हवाला देता तो उचित रहता कि आखिर उन्होंने किस आधारपर ऐसी गलती की । हो सकता है लेखकने 'जरनल आफ इन्डियन हिस्ट्री' के लेखमें यह स्पष्टीकरण किया हो ।

इस समीक्षाका अन्त मैं दो बातोंके उल्लेखके साथ करना चाहता हूं । पृष्ठ २० के एक वाक्यको देखिये "प्रतापको चन्द्रसेनके समान भाइयोंकी कलहका इतना अधिक सामना नहीं करना पड़ा था;—जितना चन्द्रसेनको करना पड़ा ।"

पृष्ठ ६१ (सिंहावलोकन) के इस हिस्सेपर गौर कीजिये । "....लेकिन मध्यकालीन मारवाड़के शासक बहुसंख्यक देशवासियोंके प्रतिनिधि थे । वे जो कुछ भी कार्य करते थे उसमें उनमें जनताका सहयोग और समर्थन प्राप्त होता था । सुमेलके युद्धसे पूर्व मालदेव तो भाग चुका था, लेकिन बारह हजार व्यक्तियोंने अपनी जानपर खेलकर यह प्रमाणित कर दिया कि मालदेवने उनकी इच्छा और भावनाओंकी उपेक्षा की थी । ....इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि मध्यकालीन मारवाड़के राठौड़ राजा जनता की इच्छा और भावनाओंका प्रतिनिधित्व करते थे ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात समझमें नहीं आयी ।

—ओमप्रकाश केजरीवाल

चौहान सम्राट् पृथ्वीराज तृतीय और उनका युग

लेखक : डॉ० दशरथ शर्मा; प्रकाशक : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर । पृष्ठ : १०२; डिमाई ७२; मूल्य ५.०० रु० ।

"पृथ्वीराज विजय" के अनुसार आदि चाहमानका जन्म म्लेच्छोंके उपद्रवको समाप्त करनेके लिए हुआ था। जनसंख्या सवा लाख होनेके कारण, उनके प्रदेशका नाम सपादलक्ष था और राजधानी सांभरके निकट थी।

पृथ्वीराज तृतीयके पूर्वजोंमें चन्दनराज, वाक्पति राज तथा सिंहराज थे। सिंहराजने परमभट्टारक-महाराजाधिराज परमेश्वरकी उपाधि ग्रहण की थी। उनके उत्तराधिकारियोंमें विग्रहराज द्वितीय, दुर्लभराज, पृथ्वीराज प्रथम, अजयराज तथा अर्णोराजके नाम उल्लेखनीय हैं। अर्णोराजकी ११३३ में मृत्यु हुई।

अर्णोराजने तुर्कोंसे युद्ध किया। मालवा, हरियाणा तथा बुंदेलखण्ड उसके आक्रमणोंसे सुरक्षित न रह सके। उसने गुजरातके चालुक्य राजा जयसिंह सिद्धराजकी पुत्री कांचनदेवीसे विवाह किया। पृथ्वीराज तृतीयके पिता सोमेश्वर कांचनदेवीके पुत्र थे। दूसरी पत्नी सुधन्वासे उत्पन्न पुत्र जगद्देवके हाथों अर्णोराजकी मृत्यु हुई थी।

जगद्देवका कनिष्ठ भाई बीसल विग्रहराज तृतीयके नामसे सिंहासनारूढ़ हुआ। उसने मुसलमानोंसे युद्ध तथा एक सफल नीतिका पालन किया। वह कुशल सेनापति, शासक तथा साहित्यका रक्षक था। उसकी छोटी आयुमें मृत्यु हो गयी थी। अपरगांगेय तथा पृथ्वीराज द्वितीयके पश्चात् सोमेश्वर गद्दीपर बैठा। ११७७ ई० में उसकी मृत्युके बाद पृथ्वीराज तृतीय सपादलक्षका राजा बना। उसकी छोटी आयुके कारण राज्यकार्य उसकी माँ कपूरदेवीने संभाला।

आरम्भसे ही वह युद्धोंमें व्यस्त रहा। उसने गुड़गाँव पर चढ़ाई की, बुंदेलखण्डको लूटा, भादानकों तथा चंदेलोंसे युद्ध किया, दिल्ली तथा कुरुक्षेत्रके तंवरोंको अपने अधीन किया।

११७८ ई० में पृथ्वीराजका मुहम्मद गौरीसे प्रथम संघर्ष हुआ। तत्पश्चात् गौरीने पंजाब, मुलतान तथा सिंध पर कब्जाकर अपनी सत्ताका विस्तार किया। ११८६ उसने सरहदपर चढ़ाईकर उसे अपने अधीन किया। उसे वापस लेनेके लिए पृथ्वीराजने सरहदपर आक्रमण कर, उसे घेरेमें लिया। फलस्वरूप उसका मुहम्मद गौरीसे तराबड़ीके स्थानपर प्रथम युद्ध हुआ। दिल्लीका राजा गोविन्द राज हाथीपर सवार सेनाका संचालन कर रहा था। मुहम्मद गौरीने बरछा मार उसके दो दाँत तोड़ दिये। जवाबी कार्यवाहीमें गोविन्दराजने कटारीके वारसे उसके बाजूपर घोर प्रहार किया। गौरीको पीछे हटना तथा रणक्षेत्रसे भागना पड़ा। पराजित शत्रुका पीछा न कर पृथ्वीराजने घोर भूल की।

गजनी वापस लौट, मुहम्मद गौरीने प्रतिशोधकी भावनासे एक वर्ष तक पृथ्वीराजसे मुकाबला करनेकी तैयारी की। १,२०,००० अश्वरोहियोंके साथ भारतकी ओर रवाना हुआ।

विजयसे उन्मत्त पृथ्वीराज सुखैश्वर्यका जीवन व्यतीत करने लगा। उसने अनेक विवाह रचाये। अन्य राजाओंके सहयोगसे एक सुदृढ़ राजनीतिक संगठन बनानेकी बजाय, वह संयोगिता अथवा कान्तिमतीके प्रेमपाशमें फंस गया। उसके सामन्तोंको जयचन्द्रके सैनिकोंका मुकाबला करना पड़ा। बहुतसे वीरगतिको प्राप्त हुए। जो बचकर लौटे वे वैसे ही असंतुष्ट थे। एक प्रबल शत्रुकी उपेक्षा करना रणकुशल सम्राटकी दुर्नीति उसके अपने हितमें तो थी ही नहीं, उसके राज्यके लिए भी लाभदायक सिद्ध नहीं हुई।

राजस्थानके प्रख्यात इतिहासकार स्वर्गीय डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझाके विचारसे संयोगिताकी कहानी भ्रममूलक है। परन्तु डा० दशरथ शर्मा इसे तथ्यपर आधारित मानते हैं। चाहमान इतिहासमें इसका वर्णन है।

मुहम्मद गौरीको इन घटनाओंका पता चल गया और ११९२ में अपनी प्रबल तथा सुसज्जित सेनाके साथ भारत पहुँचा। परिणामस्वरूप तरावड़ीका द्वितीय युद्ध हुआ।

इस युद्धका वृत्तांत अनेक मौलिक स्रोतोंसे उपलब्ध है जिनमें तारीखे नासिरी, ताजुल म'आसिर, जामअल हिकायत, तारीखे मुबारकशाही उल्लेखनीय हैं। हम्मीरकाव्यके अनुसार पृथ्वीराजने नाटारम्भ घोड़ेसे उतरकर युद्ध करना शुरू किया, एक तुर्क सैनिकने उसके गलेमें रस्सी डालकर उसे नीचे गिरा दिया तथा अन्य सैनिकोंने उसे बांध लिया।

पृथ्वीराजरासोमें वर्णित पृथ्वीराजके बन्दी बनाये जाने, कवि चन्द बरदाईके साथ मिलकर मुहम्मद गौरीके वध इत्यादिकी कथा कोरी कल्पना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा लगता है कि बन्दी बनाये जानेके पश्चात पृथ्वीराज को अजमेर ले जाया गया। ताजुल म' आसिरके अनुसार उसे एक दिनके लिए गद्दीपर बैठाया गया, परन्तु राजद्रोह के दोषपर उसे मरवा डाला गया तथा राज्य उसके पुत्र गोविन्दराजको सौंपा गया।

डॉ० शर्माका कथन है कि पृथ्वीराजके छोटे भाई हरिराजने कुछ समय मुसलमानोंका मुकाबला किया। परन्तु कुतबुद्दीन द्वारा अजमेरपर आक्रमणके पश्चात् भविष्यसे निराश हो उसने लाहौरके शाही सम्राट जयपालके समान चितारोहणकर शरीर त्याग दिया।

तरावड़ीका द्वितीय युद्ध अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था, जिसके फलस्वरूप समस्त सपादलक्ष एवं हरियाणापर मुहम्मद गौरीका प्रभुत्व हो गया तथा उत्तरी भारतके द्वार विदेशी आक्रमणकारियोंके लिए खुल गये। हिन्दूतंत्रका प्रमुख आधार समाप्त हो गया।

चाहमान राज्यके इतिहासके वृत्तांतके पश्चात् विद्वान लेखकने तीन पृथक अध्यायोंमें उस कालके शासन, धर्म, दर्शन, समाज, साहित्य तथा शिक्षा, और आर्थिक व्यवस्था का चित्रण किया है। एक परिशिष्टमें पृथ्वीराजकी जीवनी के मुख्य इतिहास स्रोतोंका आलोचनात्मक वर्णन किया हैं।

डॉ० दशरथ शर्मा विख्यात इतिहासकार हैं और उन की प्रस्तुत कृति एक मौलिक एवं महत्वपूर्ण रचना है जो इतिहासके विद्यार्थियोंके लिए अत्यन्त लाभदायक सिद्ध होगी।

—सत्यप्रकाश संगर

शोध : आलोचना

व्यक्ति-चेतना और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास

लेखक : डॉ० पुरुषोत्तम दुबे; प्रकाशक : अनुपमा प्रकाशन, ७/८ बोरावाला बिल्डिग, हार्नीमन सर्कस, फोर्ट, बम्बई-१ । पृष्ठ : ४१५; रायल; मूल्य : ३५.०० रु०

'व्यक्तिचेतना और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास' डॉ० पुरुषोत्तम दुबे द्वारा प्रस्तुत एवं बम्बई विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध है। ग्रंथ सात अध्यायोंमें विभक्त है। प्रथम तीन अध्यायोंमें लेखकने व्यक्ति-चेतनाकी विकास यात्राकी चर्चा करते हुए आधुनिकता के संदर्भमें उसका स्वरूप निर्धारण किया है और अंतिम चार अध्यायोंमें व्यक्तिचेतनाके आधारपर पचाससे अधिक उपन्यासकारोंकी प्रतिनिधि रचनाओंका विवेचन-विश्लेषण एवं मूल्यांकन किया है।

आरंभमें शोधकर्ताने पूर्व और पश्चिम दोनोंकी निरंतर विकासोन्मुख व्यक्तिचेतनाका चिंतन, दर्शन, धर्म, समाज, अर्थ, और मनोविज्ञानके आधारपर परीक्षण किया है। अपने परीक्षणके बीच शोधकर्ताने यह दर्शाया है कि विश्वका समस्त चिंतन-मनन ऐतिहासिक करवटोंसे अनुशासित होता आया है अतः व्यक्ति-चेतना भी चिंतन-मननसे अनुप्राणित किंतु इतिहाससे अनुशासित होती रही है।

पूर्व और पश्चिमकी एक दूसरेको आवेष्टित करती हुई परिधियोंमें भ्रमणशील व्यक्ति-चेतनाकी विभिन्नयुगीन विकास यात्राका विवरण प्रस्तुत करते हुए शोधकर्ता इस निष्कर्षपर पहुँचता है कि, "स्वातंत्र्योत्तर व्यक्ति-चेतना अपने वर्तमान स्वरूपमें मूलतः दो आधारोंपर प्रतिष्ठित है— पहला आधार है अर्थ और दूसरा आधार है काम। इन दोनोंमें भी अर्थ अधिक प्रधान है क्योंकि इस अर्थवादी युगमें अर्थके बिना काम भी लड़खड़ा जाता है। अतः यह निस्संकोच रूपसे माना जा सकता है कि स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासने व्यक्ति-चेतनाको प्रथमतः अर्थवादी और द्वितीयतः कामवादी अभिव्यक्ति प्रदान की है।"

व्यक्तिचेतनाके आधुनिक प्रतिमान निश्चित करनेकी दिशामें डॉ० दुबेने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम, स्वतंत्रता और इनके भीतरसे विकसित व्यक्ति-चेतनाका संक्षिप्त ऐतिहासिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। प्रायः दो सौ वर्षमें व्याप्त यह इतिहास छः काल खण्डोंमें विभक्त है। यह विभाजन घटनाओंके ऐतिहासिक आधारपर नहीं अपितु व्यक्ति-चेतनाके विभिन्न आयामोंके आधारपर किया गया है।

शोधकर्ता भारतीय स्वतंत्रता संग्रामको तीन विभिन्न भूमियोंपर परिचालित हुआ मानता है— गाँधीजीकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहिंसात्मक भूमिपर, लक्ष्मीबाई और भगतसिंहकी रक्तिम क्रान्तियुक्त भूमिपर और सुभाषचन्द्र बोसकी हिंसा एवं अहिंसाकी संयुक्त भूमिपर। इन तीनों भूमियोंपर परिभ्रमण करती हुई व्यक्तिचेतनासे संपृक्त हिन्दी उपन्यासकी विकास यात्राने उसकी दृष्टिमें चार मोड़ लिये हैं। पहला मोड़ है प्रथम स्वातंत्र्य संग्रामसे प्रथम असहयोग आन्दोलन तक, दूसरा प्रथम असहयोग आन्दोलनसे प्रथम भारतीय मन्त्रिमण्डल तक, तीसरा प्रथम भारतीय मन्त्रिमण्डलसे प्रथम स्वतंत्रता दिवस तक और चौथा मोड़ है स्वातंत्र्योत्तर भारतके उस नये पथका जिसपर स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास निरन्तर गतिमान हो रहा है। इन चारों मोड़ोंके बीच स्थित उपन्यासकारोंकी कृतियोंका विवेचन-विश्लेषण करते हुए शोधकर्ता निम्नलिखित निष्कर्षोंपर पहुँचता है, "प्रथम मोड़पर लाला श्रीनिवास दास तथा उनके साथियोंने व्यक्ति चेतनाका मूल्यांकन सामाजिक नैतिक सुधारवादी भूमिपर किया। इन्हीं क्षेत्रोंमें वह विकास पाती रही। द्वितीय मोड़ राष्ट्रीय चेतनाका स्वर्ण युग था। इसीसे प्रेरित व्यक्तिचेतना सामाजिक धरातलसे वर्गगत धरातलको पानेका प्रयास कर रही थी। औद्योगीकरण और पूंजीवाद समाजको वर्गमें बाँटनेकी राहपर चल पड़े थे, व्यक्तिचेतना समाजकी इकाईमें छटपटाने लगी थी, किंतु समाजकी सीमामें वह अभी भी आबद्ध थी। प्रेमचंद और उनके साथियोंने व्यक्तिचेतनाको सामाजिक पारिवारिक संदर्भोंमें तौलना आरंभ किया था किंतु गोदान तक पहुँचते-पहुँचते परिवारमें भी दरारें पड़ने लगीं ··· तृतीय मोड़पर आकर व्यक्तिचेतना वर्ग और व्यक्तिमें केन्द्रित हो गयी। उसके मूल्यांकनका आधार मनोविज्ञान और मनोविश्लेषण हो गया।··· तर्क बुद्धिवाद प्रेरित बौद्धिकतामें व्यक्तिचेतनाका रूप उभरने लगा। यशपाल और उनके साथियोंने उसे वर्गवाद और वर्ग संघर्षके घेरेमें अभिव्यक्ति दी। जैनेन्द्रकी कृतियोंमें व्यक्तिचेतना परिवारके भीतरसे प्रस्फुटित तो हुई किंतु काम (सेक्स) परिचालित होकर वह परिवारसे कट गयी और अपने व्यक्तित्वको लेकर एक स्वतंत्र इकाईके रूपमें प्रतिष्ठा पानेका प्रयास करने लगी।···'अज्ञेय' ने तर्क बुद्धिवाद और अहंवादके साथ व्यक्तिचेतनाको परिवार, वर्ग, समाज सबसे छुटकारा दिला कर उसे विशुद्ध व्यक्तिवादी भूमिका प्रदान की और व्यक्तिवादी भूमिपर ही उसका मनोवैज्ञानिक प्रयोगशालामें विश्लेषण करना प्रारंभ किया। तात्पर्य यह है कि हिन्दी उपन्यास साहित्यके प्रथम मोड़पर खड़ी व्यक्तिचेतना समाज और नीतिका क्षितिज पार करके धीरे-धीरे परिवारके नक्षत्रोंकी ओर मुड़ी और अन्तमें व्यक्तिरूपी ध्रुवतारेमें स्थिरता पाकर भूले भटकोंको दिशाज्ञान कराने लगी।"

उपर्युक्त विवेचन व्यक्तिचेतना और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासकी पृष्ठभूमि तैयार करता है। लेखकका मूल उद्देश्य है स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासोंके परिप्रेक्ष्यमें व्यक्तिचेतनाके विविध बिम्बोंका उद्घाटन और स्वरूप निर्धारण। ग्रंथके उत्तरार्द्धमें इसकी विशद चर्चा की गयी है। कृतियोंके विश्लेषणसे पूर्व शोधकर्ताने युगीन प्रवृत्तियों का निर्धारण किया है। वह लिखता है कि, "आधुनिक युग विशृंखला और बिखराहटका युग है। विश्व बिखर गया है राष्ट्रोंमें, राष्ट्र टुकड़ोंमें और टुकड़े बिखर गये हैं इकाइयोंमें। उधर समाज भी बिखर गया है वर्ग, समूह, संस्था, यूनियन, पार्टीमें, और अब वह भी नहीं रहा—रह गया है केवल व्यक्ति। और व्यक्ति स्वयं अपने आप ही भीतर बिखर गया है, उसका मन बिखर गया है— चेतन, अर्द्धचेतन, अचेतनमें विभक्त हो गया है। व्यक्तिचेतना बिखर गयी है— अहं में स्व में। सर्वत्र एक टूटन महसूस की जा रही है— केवल टूटन और कुछ नहीं। आज कहीं कोई ऐसी विशिष्टता नहीं दिखायी देती जिसके विषयमें यह निर्णय दिया जा सके कि वह सवत्र, सर्वसाधारणमें पायी जाती है। आजकी बिखराहट, छितराहट, आकुल-व्यकुलता और व्यापक अराजकता "स्व" को छोड़कर किसी अन्यके नेतृत्व, किसी औरके प्रतिनिधित्व में विश्वास नहीं करती। सारा युग व्यक्तिवादी बन गया है, व्यक्तिचेतनावादी हो गया है। उपन्यास इसी मानव, इसी व्यक्तिकी अभिव्यक्ति है।"

युगगत व्यक्तिचेतनाके संदर्भमें शोधकर्ताने स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासका मूल्यांकन पांच आधारोंपर किया है— अर्थगत, परिवेशगत, विस्तारगत, शैलीगत और समस्यागत। इन आधारोंपर उसने लघु, सामान्य, दीर्घ, आंचलिक आदि सभी प्रकारके उपन्यासोंको परखा है। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासको वह चार पीढ़ियोंकी साहित्य साधनाकी बहुमुखी गंगा मानता है। पहली पीढ़ी प्रेमचन्द्र वर्गके सामाजिक-ऐतिहासिक उपन्यासकारोंकी सबसे पुरानी पीढ़ी; दूसरी पीढ़ी परतंत्रता और स्वतंत्रताके बीच स्थित संधिकालमें नयी चेतना लेकर अवतरित होनेवाली वह पीढ़ी है जो गांधीके मानववादकी अपेक्षा फ्रायडके मनोविश्लेषणवाद या मार्क्सके साम्यवाद अथवा सार्त्रके अस्तित्ववादसे अधिक प्रभावित हुई। तीसरी पीढ़ीमें वे लेखक आते हैं जिन्होंने अपने बचपनमें हिरोशिमा और नागासाकीके चीत्कारोंको सुना था और चौथी पीढ़ी भारतीय स्वतंत्रताकी रोशनीमें जन्मे उन उपन्यास-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारोंकी है जो वर्तमानसे असंतुष्ट और भविष्यसे आशंकित हैं। इन चारों पीढ़ियोंके बीच कोई विभाजन रेखा नहीं खींची जा सकती क्योंकि, "उनके मस्तिष्कमें उभरती चेतना उनकी संवेदना उनकी अनुभूति युग-संदर्भमें उन सभी आयामोंका स्पर्श करती है जो उनके युगको व्यक्तित्व और उनकी लेखन प्रक्रियाको कृतित्व प्रदान करते हैं"।

उपर्युक्त वृत्तों और परिधियोंके अंतर्गत शोधकर्ता प्रायः सभी सुप्रसिद्ध उपन्यासकारोंकी प्रतिनिधि रचनाओंका विश्लेषण करता है। विवेचन रचनाओंमें प्रदीप्त-प्रस्फुटित और प्रक्षेपित व्यक्तिचेतनाका है।

तीसरी पीढ़ीका लेखक विशुद्ध व्यक्तिवादी लेखक माना गया है क्योंकि उसे आजका व्यक्ति आत्मकेन्द्रित प्रतीत होता है। वह "स्व" को स्वीकारता है "पर" को नहीं। इस 'स्व' की स्वीकृति और "पर" की अस्वीकृतिका मूल कारण शोधकर्ता व्यक्तिकी निरन्तर जागरूक 'भूख' में पाता है। यह भूख है शरीरकी, शारीरिक सुखकी, भौतिक सुखकी, जिसका मूलाधार है अर्थ और काम।

इस पीढ़ीके समीक्षित उपन्यासकारों और उनकी कृतियों की सूची लम्बी है। धर्मवीर भारतीसे लेकर शशिप्रभा शास्त्रीतक बीससे अधिक लेखकोंकी कृतियोंका सूक्ष्म विश्लेषण किया गया है। इन्हें दो वर्गोंमें बाँटा गया है— 'स्व' को 'पर' के संदर्भमें अभिव्यक्ति देनेवाली कृतियां और 'स्व' को 'स्व' के संदर्भमें तौलनेवाली रचनाएं। इन सभी उपन्यासोंके साथ कोई न कोई उपलब्धि जुड़ी हुई है। 'मन वृन्दावन' की दो भौतिक और एक मानसिक प्रेमयात्रा, 'अन्धेरे बन्द कमरे' के बुद्धिजीवी मध्यम वर्गकी निष्क्रिय, अर्थहीन सांस लेती हुई नपुंसकता, 'तंतुजाल' की अस्तित्ववादी दृष्टि, अथवा भूखी पीढ़ीका कामसूत्र पारायण, तीसरी पीढ़ीके उपन्यासोंमें आजकी रूग्ण व्यक्तिचेतनाका स्पष्ट दर्शन करानेमें समर्थ हैं। इन कृतियोंमें व्यक्तिचेतनाका प्रायः विकृत काम और सेक्सके आधारपर निरूपण हुआ है और उसमें अस्तित्ववादी दिशाओंका उन्मेष एवं अर्थपरक वृत्तियों का समावेश देखा जाता है। डॉ० दुबेके शब्दोंमें, "चेतना क्षणमें जीवित रहे, चाहे नदीके द्वीप बनकर, वह जीवनके सरित्प्रवाहमें अपना अस्तित्व प्रमाणित करती रहे, वह समूहके साथ संश्लिष्टता धारण कर ले अथवा अपनी विश्लिष्टता तक को अजनबीपनका जामा पहना दे, किंतु इतना निश्चित है कि वह जीनेपर विवश है। इधरकी पीढ़ीके उपन्यासकारोंने व्यक्चितेतनाकी इस विवशताका बड़ी गहराईसे अध्ययन किया है, उसे मार्मिक अभिव्यक्ति दी है और उसका सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है।"

ग्रंथके अन्तिम अध्यायमें सातवें दशकके उपन्यासोंकी चर्चा और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासकी उपलब्धियोंका विवेचन और मूल्यांकन किया गया है। शोधकर्ताका तर्क है कि सातवें दशकके उपन्यासमें, "भावुकताका कम और तर्कका अधिक प्रवेश हो रहा है। व्यक्तिकी साँसकी अपेक्षा उसकी ऊष्मा, मनकी अपेक्षा उसकी गहराई और बुद्धिकी अपेक्षा उसकी सूक्ष्मतापर लेखकका ध्यान अधिक केन्द्रित हो गया है क्योंकि युग ही तर्क बुद्धिवादी बन गया है"। बुद्धिजीवी मध्यमवर्गकी समस्याओं, कुण्ठाओं और विकृतियों को इन उपन्यासोंमें सबसे व्यापक अभिव्यक्ति मिली है। पूँजीवादी भोगवाद, कामविकृति, न्यूरासिस, होमोसैक्सुअलिटीके समानान्तर अर्थाभाव जन्य काम-विकृति एवं नैतिक मूल्योंकी अस्वीकृतिका चित्रण इन उपन्यासोंमें महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इनमें राष्ट्रसेवाके नामपर धूर्तता, छल-कपट, भ्रष्टाचार आदि अनेक विरोधी तत्वोंके बीच व्यक्ति किस प्रकारकी समस्याओंका सामना कर रहा है, इसका भी लेखा जोखा किया गया है।

सातवें दशकके उपन्यासोंमें कुछके प्रति शोधकर्ताका मंतव्य विचारणीय है। राजकमल चौधरी कृत "मछली मरी हुई" के विषयमें शोधकर्ता लिखता है, "आजकी पीढ़ीके साहित्यकारोंका नारा है भोगना और झेलना, किंतु भोगा झेला क्या जा रहा है— यह आजतक समझमें नहीं आया। 'मछली मरी हुई' भी भोगना और झेलनाका मुरब्बा है। मछलियां बदबूदार होती है, मरनेपर और भी बदबूदार बन जाती है और यदि उसी हालतमें उसे तल दिया जाये तो उसकी बदबू दूर दूर तक फैल जाती है। चौधरीके इस उपन्यासमें बदबूके तीनों सैम्पल्स पाये जाते हैं"। शिवप्रसाद सिंह कृत "अलग अलग वैतरणी" डॉ० दुबेके मतानुसार देशके सात लाख गाँवोंकी कथा है जो करैता गाँवके सिवानसे बाहर न जाकर भी सिवानको स्वीकार नहीं करती। वह आंचलिकताकी नहीं गाँवकी आत्माकी खोज है। श्री लाल शुक्ल कृत "राग दरबारी" में चित्रित शिवपालगंज भी टाउन एरिया नहीं, ग्राम पंचायत है। इन दोनों उपन्यासोंमें व्यक्तिचेतना कहीं तो अधुनिकताके संस्कारोंमें उझली दिखायी देती है कहीं राजनीतिक दलदलमें फंसी, कहीं वर्ग संघर्ष, भ्रष्टाचार और भाषणोंमें डूबी तो कहीं चुनावों और शोहदापनके अखाड़ोंमें कुश्तियाँ लड़ती प्रतीत होती है। इन सबके मूलमें है जिजीविषा जो व्यक्तिको अपनेमें ही केन्द्रित सीमित बननेपर मजबूर कर रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपर्युक्त विवेचनके बाद शोधकर्ता स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासकी उपलब्धियोंका, प्रवृत्तिगत, परिवेशगत; वस्तुगत, पात्रगत और शलीगत लेखा जोखा प्रस्तुत करता है। तत्पश्चात् व्यतीत और वर्तमान, तथा वर्तमान और भविष्यके संदर्भमें वह लिखता है कि "स्वतंत्रताने देशको राष्ट्रीयता प्रदान की और हिन्दी उपन्यासने उसे राष्ट्रीय चेतनासे अभिभूत किया। और जब राष्ट्र, राष्ट्रीयता तथा राष्ट्रीय चेतना, कालाबाजार, भ्रष्टाचार, स्वार्थ, लिप्सा और भोगविलासमें डूबते हुए नेताओं, प्रशासकों और धनियोंको देखकर पीड़ित हो उठी तो हिन्दी उपन्यासने उस पीड़ाको भी अभिव्यक्त किया। भाई-भतीजावाद, उठाओ-गिराओकी वृत्ति, मैं और केवल मैं का दृष्टिकोण, राजनीतिक शिक्षा और शिक्षामें राजनीति, प्रसिद्ध व्यक्ति, प्रबुद्ध व्यक्ति और पिछड़ा हुआ व्यक्ति, सभी, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासकारके विषय बने।" सेक्सका नग्नप्रदशन और नवीनताके नामपर प्रत्येक व्यक्तिको नंगा कर देनेका प्रयास भी इस युगकी रचनाओंमें कम नहीं हुआ। परन्तु शोधकर्ता, कतिपय बुराइयोंके बावजूद भी हिन्दी उपन्यास साहित्यके भविष्यके विषयमें पूर्ण आश्वस्त है। अपने ग्रंथकी अंतिम पंक्तियोंमें उसका विश्वास द्रष्टव्य है, "यह सत्य है कि आजके पाठकको, जो वह चाहता है, मिल नहीं पाता। स्वाभाविक है कि वह असंतुष्ट हो जाये। परन्तु आजकी समग्र मानवता सामूहिक और वैयक्तिक दोनों क्षेत्र असंतोषके सहारे ही जी रही है। व्यक्ति असंतुष्ट, व्यक्तिचेतना असंतुष्ट! उपन्यास, असंतुष्ट व्यक्तिचेतनाका उद्घाटक और पाठक अपनी असंतुष्टिके उद्घाटनसे असंतुष्ट! चक्र है जो कभी खत्म नहीं होगा। परन्तु असंतोषके भीतर ही तो संतोषकी संभावनाएँ निहित हैं अतः असंतोषके बावजूद भी हिन्दीका उपन्यास मरेगा नहीं"।

उपन्यास साहित्यकी आलोचनाके सन्दर्भमें यह ग्रंथ जगह-जगह विचारके लिए टोकता-रोकता और चुनौती देता है। इतने विस्तारसे व्यक्तिचेतनाका उद्घाटन उपन्यासके संदर्भमें पहले नहीं हुआ। लेखकने बड़ी स्पष्टता और दृढ़ता के साथ अपने विचारोंको प्रस्तुत किया है। उससे कहीं किसीकी असहमति हो यह भी उसकी अपनी मौलिकता और स्वतंत्र विचार सत्ताका ही प्रमाण है, कमजोरीका नहीं। लेखकको हम इस विस्तृत अध्ययन-चिन्तनके लिए बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि इस ग्रंथका यथोचित सम्मान होगा।

—डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित

नाटककार मोहन राकेश

सम्पादक : सुन्दरलाल कथूरिया; प्रकाशक : कुमार प्रकाशन, २०/३० मोती नगर, नयी दिल्ली-१५। पृष्ठ : २४६; डिमाई ७४; मूल्य : ३०.०० रु०।

'नाटककार मोहन राकेश' श्री सुन्दरलाल कथूरिया द्वारा संपादित विभिन्न लेखकों द्वारा लिखित निबन्धोंका संकलन ग्रंथ है। इसमें मोहन राकेशका नाटककार, व्यक्तित्व और उनके कृतित्वपर विस्तारसे मौलिक रूपमें विचार किया गया है। कुल मिलाकर यह ग्रंथ राकेशके व्यक्तित्व, नाट्य-कृतियों, नाट्य-शिल्प और रंग-प्रयोगको लेकर लिखा गया है। लेखक नये पुराने दोनों हैं और समीक्षाएँ भी कुछ पूर्व प्रकाशित हैं और कुछ विशेष रूपसे इस ग्रंथके लिए लिखी गयी हैं।

व्यक्तित्वकी रेखाओंको उभारनेमें राजेन्द्रपालका लेख एक अच्छा प्रयत्न है। 'बटुक' जी ने राकेशके नाटकोंमें उसके व्यक्तित्वको तलाशनेका प्रयास किया है जिसमें कुछ और गहराईसे पैठनेपर अध्ययनकी महत्वपूर्ण सामग्री हाथ लग सकती है। आधुनिक नाटकोंकी शुरुआत राकेशसे हुई है, हुई भी है या नहीं—यह एक ज्वलंत प्रश्न है। इस ग्रंथमें डा० इन्द्रनाथ मदान, डा० कृष्णबिहारी सहल तथा डॉ० प्रेमपतिके लेखोंमें इसपर विभिन्न दृष्टिकोणोंसे विचार हुआ है। किंतु उन तथ्योंकी अभी अपेक्षा बनी हुई है जिसके आधारपर राकेशके नाटकोंकी आधुनिकताका निर्णय किया जा सके। डॉ० इन्द्रनाथ मदानने अपनी बात पूरे तर्कोंके साथ कही है, किंतु यह प्रश्न अभी अनुत्तरित ही है कि आधुनिकता कहाँतक राकेशके नाटकोंको श्रेष्ठतर बनाती है।

विष्णुकांत शास्त्रीने ऐतिहासिकता, चरित्र चित्रण समस्या, संवेदना आदिकी दृष्टिसे मोहन राकेशकी आधुनिक दृष्टिके औचित्यके संबंधमें जायज सवाल उठाया है। उन सवालोंका आधुनिक दृष्टिसे उत्तर दिया जा सकता है—राकेशने दिया भी है—किंतु क्या उत्तर भारतीय और पाश्चात्य चिंतनकी विभाजक रेखाओंसे विभक्त रहेंगे? क्या जब भारतीय लेखक पाश्चात्य दृष्टि अपनाता है, तभी वह मौलिक और आधुनिक बनता है? कुछ लोग यह मानते हैं—राकेशके स्वरमें स्वर मिलाते हुए लेखकोंने लिखा भी है कि राकेशके नाटक उस अर्थमें ऐतिहासिक नहीं है जिस अर्थमें ऐतिहासिक नाटकोंकी अबतक परिकल्पना होती रही है। फिरभी च्यवन ऋषि झाने बड़े यत्नसे यह सिद्ध करनेका प्रयत्न किया है कि राकेशके नाटक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐतिहासिकताका बिम्ब उभारनेमें सर्वथा समर्थ हैं। ऐतिहासिकता और आधुनिकताके दो विरोधी तत्वोंकी स्थिति स्वयं राकेशको स्वीकार्य नहीं थी। फिरभी यह प्रश्न अनुचित नहीं कि क्या आधुनिकताको एक मूल्यके रूपमें स्वीकार किया जा सकता है। डॉ० सिद्धनाथकुमारने ठीक ही इस ओर संकेत किया है। उन्होंने 'लहरोंके राजहंस' को आसक्ति और अनासक्तिके द्वंद्वके रूपमें स्वीकार नहीं किया है और प्रतीकामकताको वे नाट्यकृति पर बहुत बड़ा बोझ मानकर चले हैं। 'लहरोंके राजहंस' में नन्द और सुन्दरीकी यातना गाथाकी व्याख्याकी दृष्टिसे डॉ० सत्येन्द्र तनेजाका लेख उपादेय है। उन्होंने पात्रोंके द्वन्द्वको आधुनिक मानवके संदर्भमें व्याख्यापित करनेका प्रयास किया है। दूसरी ओर डॉ० जगदीशकुमारने 'बौद्ध प्रभाव' लेखमें—जिसका शीर्षक भ्रामक है—नाटकमें प्रयुक्त-अप्रयुक्त ऐतिहासिक सामग्री अथवा देशकाल योजना का सुन्दर विवेचन किया है। कुल मिलाकर 'आषाढ़का एक दिन' और 'लहरोंके राजहंस' के विवेचनमें समीक्षकोंकी दृष्टि या तो ऐतिहासिताके निरूपणमें रमी या आधुनिकताके आख्यानमें। इसमें कोई संदेह नहीं कि राकेशकी दृष्टि नवीन है किंतु प्रसादकी भांति ऐतिहासिकताके निर्वाहपर भी उन्होंने बरीकीसे ध्यान दिया होता तो उनके नाटक अधिक पूर्ण और प्रभावशाली होते।

ओम शिवपुरी, महेश आनन्द, डॉ० प्रेमप्रकाश गौतम आदि कई लेखकोंने राकेशके रंगशिल्पके संबंधमें विवेचना की है। ओम शिवपुरीका लेख एक निर्देशककी प्रतिक्रियाको व्यक्त करता है जो रचनाके साहित्यिक मूल्यांकनकी दृष्टिसे भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। अच्छा होता निर्देशकों की प्रतिक्रियाको व्यक्त करनेके लिए सत्यदेव दुबे, जालान, राजेन्द्रनाथ आदिके लेख भी ग्रंथमें सम्मिलित होते। रंगके संदर्भमें महेश आनन्द, प्रेमप्रकाश गौतम आदिके लेख सामान्य है। उन्होंने जो आपत्तियां उठायी हैं वे भी सर्व-मान्य नहीं। इस दृष्टिसे ओमप्रकाश शर्माका लेख अधिक गंभीर और पूर्ण है। डॉ० रूपनारायणने 'आधे अधूरे' को मध्यवर्गीयता, मनोहर अभयने समसामयिक युगबोध तथा रवीन्द्रनाथने यथार्थकी दृष्टिसे परखनेका प्रयास किया है। इन विषयोंमें पर्याप्त मतभेदकी गुंजायश है। डॉ० शांति-स्वरुप गुप्तका लेख 'अस्तित्वबोधका संकट' राकेशके नाटकोंमें अस्तित्ववादी तत्त्वोंकी तलाशकी दृष्टिसे अच्छी शुरुआत करता है। सुखवीरसिंहने राकेशका विकासात्मक अध्ययन तो सही दिशामें किया है किंतु 'आधे अधूरे' को प्रतीकात्मक नाटक कहना समझसे बाहर लगता है। रस संबंधी दृष्टिका आधुनिक रचनाकारों और समीक्षकोंमें जो विरोध हो रहा है, उसे देखते हुए राकेशके नाटकोंमें रसकी खोज बड़ा साहसका कार्य है। फिरभी सुन्दरलाल कथूरिया ने इस संदर्भमें कार्पण्य रसकी चर्चा कर एक स्थापना की है जो रसके विद्यार्थीके लिए सर्वथा निर्मूल नहीं, किंतु उसकी प्रमाणिकता विद्वानोंके बीच समझने-परखनेकी वस्तु है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि पुस्तक राकेशके व्यक्तित्व और कृतित्वको सही दिशामें व्याख्यायित करती है। संकलन ग्रंथकी क्षेत्र-सीमाके नाते एक जैसे तथ्योंकी पुनरावृत्ति अनेक लेखोंमें हुई है जो खटकती है। इसीप्रकार परस्पर विरोधी विचार और अनिर्णयकी स्थिति पाठकको अपनी समझपर छोड़ देती है। राकेशके नाटकोंका शिल्प, शैली और भाषागत अध्ययन और पूर्णता चाहता है। इसके अतिरिक्त नाटककार राकेशकी सफलतासे आंतकित समीक्षक उसकी प्रशंसा अधिक कर गये हैं; दोषोंके प्रति उन्होंने आंखें मूंद ली हैं। ऐसा हर जगह नहीं हुआ है। फिरभी एक आतंकसे समीक्षक ग्रस्त दिखायी देते हैं। इस दृष्टिसे डॉ० प्रेमपतिका लेख बहुत विचारोत्तेजक है और उनकी दृष्टिमें एक प्रकारका पैनापन भी है।

—डॉ० गोविन्द चातक

गो० तुलसीदास कृत
श्रीकृष्ण पदावली

सम्पादक : ज्यो० राधेश्याम द्विवेदी; प्रकाशक : भारती अनुसंधान भवन, मथुरा। पृष्ठ : ६३; डिमा. ७३; मूल्य : २.०० रु.।

गोस्वामी तुलसीदासकृत श्रीकृष्ण पदावलीकी विशेषता है रामभक्त कवि द्वारा श्रीकृष्णकी स्तुति और वह भी अवधीके स्थानपर ब्रजमें। इसमें श्रीकृष्णके जीवनके कुछ प्रसंगोंका वर्णन है। यह वर्णन भाव, भाषा और विषयकी दृष्टिसे कृष्ण-भक्ति साहित्यमें अपना विशिष्ट स्थान रखता है। ब्रजभाषा सहित्यमें "श्रीकृष्ण पदावली" अपने अर्थ-गाम्भीर्य, अर्थ-सौष्ठव और माधुर्य भावके कारण गोस्वामी जीकी अमर कृति बन गयी है। अलंकारोंकी मंजुल मनो-हारिणी छटाने तो कृतिके कला-पक्षको और भी उत्कृष्टता प्रदान की है। अलंकारोंका प्रयोग देखते ही बनता है—

तुलसी मनोरथ-मन-मृग मरत जहाँ तहाँ धाई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम स्याम सावन भादों बिनु जियकी जरनि न जाई ।।

भाषाकी दृष्टिसे गोस्वामीजीकी इस कृतिका सौष्ठव किसी भी व्रजभाषाभाषी कविकी कृतिसे कम नहीं है। कृतिको आद्योपान्त पढ़नेके बाद निःसंदेह यह कहा जा सकता है कि व्रज भाषापर गोस्वामीजीका असाधारण अधिकार था। व्रजभाषाकी तरह संस्कृत भाषापर भी गोस्वामीजीका पूर्ण अधिकार था। "श्रीकृष्ण पदावली" में भी संस्कृतके शब्दों का कुशलताके साथ प्रयोग हुआ है—

गोपाल गोकुल-वल्लभी-प्रिय गोप-गोसुत बल्लभम् ।
चरणारबिंदमहं भजे भजनीय सुर-मुनिदुर्ल्लभम् ।।

गोस्वामीजीके श्रीकृष्ण सम्बन्धी पदोंके संग्रह वैसे तो नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा प्रकाशित तुलसी ग्रंथावली तथा डॉ० सीताराम चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित तुलसी-ग्रंथावलीमें "श्रीकृष्ण गीतावली" नामसे प्रकाशित हो चुके हैं। गीता प्रेस द्वारा भी "श्रीकृष्ण गीतावली" नामसे गोस्वामीजीके कृष्ण सम्बन्धी पदोंका संग्रह प्रकाशित हुआ है परन्तु जैसाकि "श्रीकृष्ण पदावली" के विद्वान सम्पादक ने भूमिकामें कहा है, कि "श्रीकृष्ण पदावली" की रचनाका श्रेय वल्लभ सम्प्रदायके कवियोंका सम्पर्क, गो० विट्ठल नाथजीका अनुग्रह तथा अपने अनुज नन्ददासजीके साथ कृष्णलीलाओंकी चर्चाको है। नन्ददासजी स्वयं अष्टछापके गायक थे, तुलसीदासजीने निश्चय ही इन्हींसे प्रभावित हो कर अष्टछापकी पद-शैली परम्परामें यह रचना की। "श्रीकृष्ण पदावली" नाम भी अष्टछापकी पद-शैली परम्परा से ही प्रभावित है। विद्वान सम्पादकने अपने मतकी पुष्टिके लिए "तुलसी प्रकाश" का उल्लेख किया है। यह "तुलसी प्रकाश" अविनाशराय भट्ट द्वारा विरचित है। अविनाशराय भट्ट स्वयं गोस्वामी तुलसीदासके सत्संगमें रहे थे। "तुलसी प्रकाश" में भी श्रीकृष्ण सम्बन्धी गोस्वामीजीके पद-संग्रह को "श्रीकृष्ण पदावली" ही कहा गया है—

तुलसी कृष्ण पदावली सृजन कियो आरंभ,
अनुज भेंटि कासी चले भगति भवनकें थंभ।

इसप्रकार भारती अनुसंधान भवनने श्रीकृष्ण सम्बन्धी गोस्वामीजीके पदोंके संग्रहको नवीन नामसे प्रकाशितकर इस कृतिकी ओर समस्त साहित्य जगतका ध्यान आकृष्ट किया है।

—नटवरलाल नागर

माधव ग्रन्थावली

संपादक एवं टीकाकार : डॉ० भवानीलाल, कु० इन्द्रा सक्सेना; प्रकाशक : लोक सम्पर्क प्रकाशन, १६५ गांधी नगर, जयपुर । पृष्ठ : १६२+६८; डिमाई ७३; मूल्य : ५.०० रु.।

'माधव ग्रंथावली' में कविकी तीन रचनाएं १. शक्ति-भक्ति प्रकाश, २. करुणा बत्तीसी तथा ३. करुणाष्टक हैं। तीनोंही रचनाएं सटीक रूपमें सम्पादित हैं। इस ग्रंथावलीका प्राक्कथन डॉ० भवानीलाल भारतीयका लिखा हुआ है। अपने प्राक्कथनमें डॉ० भारतीय लिखते हैं— "प्रस्तुत प्रबन्धमें मुंशी माधवरामकी तीन उपलब्ध काव्य-कृतियोंको अध्ययनका आधार बनाकर उनके विचार पक्ष तथा अभिव्यंजना पक्षको सुस्पष्ट करनेका एक विनम्र प्रयास किया गया है" (प्राक्कथन)।

ग्रंथावलीमें तीन उपलब्ध रचनाओंके साथ-साथ लेखिकाने माधवदास कविके व्यक्तित्व और कृतित्वका पूरा परिचय शोध-प्रबन्धके रूपमें दिया है। शीर्षक हैं—१. जीवन वृत्त, २. व्यक्तित्व विश्लेषण, ३. ग्रन्थ परिचय, ४. समसामयिक परिस्थितियाँ, ५. भक्तिका स्वरूप और विकास, ६. मुन्शी माधवरामकी भक्तिभावना, ७. प्रतिपाद्य विषय, ८. भाव विधान, ९. कला पक्ष तथा १०. उपसंहार। अन्तमें सहायक एवं आधारभूत ग्रंथसूची दी गयी है।

मुंशी माधवराम (संवत् १७४० से संवत् १८२८) रीतिकालके कवि हैं। ये मेड़ताके निवासी बतलाये गये हैं। इन्होंने जोधपुर राज्यकी सेवा की। मुन्शीके रूपमें इन्होंने पुश्तैनी पेशेको अपनाया और जोधपुर दरबारके प्रतिनिधिके रूपमें दिल्लीमें भी काम किया। दरबारसे सम्बद्ध होनेके कारण इन्होंने जीवनमें परिस्थितियोंके अनुसार उतार चढ़ाव देखे। कहते हैं जब ये दिल्लीमें थे, उस समय इन्हें किसीके कहनेमें आकर जोधपुरके महाराजाने (संवत् १७९८) बुलवाया और इनपर कलंक लगाकर कारागृहमें डाल दिया। कारागृहकी व्यथाको सहते हुए मुंशीजी ने 'शक्ति-भक्ति प्रकाश' की रचना की। 'करुणा बत्तीसी' भी कारागृहकी रचना है। इस सम्बन्धमें कुछ किंवदन्तियां भी हैं। यथार्थ बात यह है कि कविकी प्रसिद्ध रचना 'शक्ति-भक्ति प्रकाश' कारागृहमें लिखी गयी। संवत् १८०० के आसपास मुंशीजीको कारागृहसे मुक्ति मिली। बादमें इनका फिर दरबारमें सम्मान हुआ।

यह स्पष्ट है कि 'शक्ति-भक्ति प्रकाश' की रचना कविने संकट कालमें, कारागृहमें रहते हुए की। इसमें कविका आत्मनिवेदन है, मनकी व्यथा है और खोये हुए आत्मबलको पानेका प्रयत्न है। सारा निवेदन जगदम्बा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माताके प्रति है। रचनाकी प्रथम पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :—

शिव हरि अज इन्द्रादि सुर चरन शरन अवलम्ब।
बिघन हरन मंगल करन जय जय श्री जगदम्ब ॥१॥

अपनी व्यथाका कारण बतलाते हुए लिखा हैं :—

दिल्ली बीच चाकरी सो पाई कांकरी ना,
वा करी हुं मेहनत और घर बरबाद है।
चुगल औ धारनको भयो अधिकार अति,
भये इतबार बिन जेते खानाजाद है।
आछो आछो काम कीन्हें, साह पास दाम लीन्हें,
साम धर्म चीन्हें पें न पाई कुछ दाद है।
एतेपर पाय बेरी डारी तब तोहि टेरी,
ऐ री जगदम्ब मेरी तो सौं फरियाद है।

छं०सं० २२, शक्ति-भक्ति प्रकाश

इस रचनामें अप्रत्यक्ष रूपसे सामयिक परिस्थितियों का चित्रण हो गया है। जोधपुर दरबारका सम्बन्ध दिल्लीसे, मराठोंसे, गुजरातसे, जैसे रहा है और कविके मनको इन सब प्रभावोंके कारण जो प्रतीति हुई है, वह इस रचनामें है। जैसेकि रचनाका नामकरण 'शक्ति-भक्ति प्रकाश' है; कविने माताकी शक्तिमें विश्वास व्यक्त किया है और भक्त रूपमें आराधना की है। जैसेकि रचनाके अन्तमें कविने कहा है :—

कविताई जानत नहीं पिंगलके अनुसार,
बिथा कही निज मात सों जो है जगत अधार ।१८।
तरुन कहा बालक कहां, कहा वृद्ध मति धीर,
मैया मैया कहत हैं जबे होत तन पीर ।१९।
मैं हूं अपनी मात सों बेदन कही बनाय,
कहाँ होय नर सों कहें, अम्बा करत सहाय ।२०।

× × ×

नाम धर्‌यो या ग्रन्थको शक्ति भक्ति प्रकाश,
हेत प्रीति सों जो पढें ताकी पूरे आस ।२२।

× × ×

ग्रन्थकार कायस्थ कुल मुन्शी माधोराम,
माथुर कुल अतरोलिया नगर मेड़ते धाम ।२४।

'करुणा बत्तीसी' अवं 'करुणाष्टक' दोनोंमें कृष्णके भक्त रक्षक रूपको स्मरण किया गया है। दोनों ही रचनाओंका नाम संख्यापरक है।

सम्पादिकाने रचनाओंके स्पष्टीकरणके लिए उचित संदर्भ दिया है और अर्थ सुबोध है। आशा है, इस ग्रंथावली का स्वागत हिन्दी जगतमें होगा।

—राजमल बोरा

मीरां मुक्तावली

संकलनकार : नरोत्तमदास स्वामी; संपादक : लक्ष्मी कमल तथा ब्रजनारायण पुरोहित; प्रकाशक : श्री राम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा। पृष्ठ : ६२; डिमा. ७३; मूल्य : ६.०० रु.।

मीरां राजस्थानकी ही नहीं भारतकी प्रसिद्ध भक्त कवियित्री हैं। हिन्दी साहित्यमें उनका विशेष आदर है। अपनी भावुकता, हृदयस्पर्शी विरहाकुलता, सहज-सरल अभिव्यक्ति और भक्तिकी प्रगाढ़ताके कारण उनका काव्य जनतासे लेकर विशेषज्ञों और विद्वानों तक प्रशंसित होता और आदर प्राप्त करता रहा है। उनके प्रति इसी आदरके कारण अबतक उनपर कई शोधप्रबन्ध भी लिखे जा चुके हैं और उनके पदोंके संग्रहभी प्रकाशित हुए हैं। प्रस्तुत पुस्तकमें भी उनके भक्तिपदोंका पन्द्रह शीर्षकोंके अन्तर्गत संकलन किया गया है। संकलनमें केवल १०१ पद हैं, जिन्हें पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्धके क्रमशः १० तथा ५ (कुल १५) शीर्षकों में बांटा गया है। शीर्षक काव्यपंक्तियोंके हैं जिनसे उनकी भक्ति, कृष्ण रूप वर्णन, विरह, मिलनामिलाषा, प्रियके आगमनकी सूचना और तज्जन्य प्रसन्नता, ऋतु-वर्णन, अनन्यासक्ति और रहस्य भावनाका संकेत मिलता है। आरम्भके दो पृष्ठोंमें मीरांका संक्षिप्त परिचय दिया गया है। पदावली देते हुए संपादकोंने शब्दार्थ भी दे दिये हैं जिनमें मुरलीका अर्थ वंशी भी दिया गया है जिसकी कोई आवश्यकता नहीं थी। 'बिसूरै' का अर्थ 'सूरती है' और 'चोंच' का अथ 'चोंच' (क्रमशः पृष्ठ २५ और १७) दिया गया है जिनमें से पहला गलत और दूसरा निरर्थक है। संपादकों तथा संकलनकारने मूल पाठ तथा शब्दार्थके अन्तर्गत वर्त्तनीकी एकरूपताका ध्यान नहीं रखा। एक ही शब्द भिन्न स्थलोंपर भिन्न वर्त्तनीके साथ उपस्थित है तभी मूल शब्दोंकी वर्त्तनी उसके अर्थमें प्रयुक्त उसी शब्दके समय बदल गयी है। पुस्तक पाठ्यक्रममें स्थान पानेकी दृष्टिसे प्रस्तुत की गयी जान पड़ती है। उस दृष्टिसे भूमिका के कुछ विस्तारकी अपेक्षा थी। वैसे सामान्यतः उपयोगी है।

—डॉ० आनन्दप्रकाश दीक्षित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निबंध-संकलन

लोक कला : मूल्य और संदर्भ

'सम्पादक : डॉ० महेन्द्र भानावत; प्रकाशक : भारतीय लोक कला मंडल, उदयपुर (राजस्थान)। पृष्ठ : ८१; डिमा. ७४; मूल्य : १५.०० रु०।

आलोच्य पुस्तक १० निबन्धोंका संकलन है—देहाती मनोरंजनका शहरीकरण, लोककलाओंका पुनर्जागरण और सामयिक सन्दर्भ, लोककलाओंकी भूमिका और बदलते सामाजिक मूल्य, लोककला : संभावना और प्रक्रियाकी दिशा, लोककलाओंके अलमबरदार कौन, लोककलाएँ : पुनरुद्धारकी प्रक्रिया, लोककला : तब, अब और आगे, लोककला : परिवेश और प्रक्रिया, लोककला : विघटन और विकृतियाँ, लोककलाएँ और उनका सार्थक नैरन्तर्य। इन निबन्धोंके साथ डॉ० सत्येन्द्रकी ५१ पृष्ठोंकी बृहद भूमिका है।

सभी निबन्धोंके लेखक लोकवार्ताके अधिकारी विद्वान हैं। 'देहाती मनोरंजनका शहरीकरण' में श्री जगदीशचन्द्र माथुरने लोक कलाओंके प्रति शहरोंमें बढ़ती हुई रुचिपर प्रकाश डाला है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि लोककलाएँ अपने-अपने क्षत्रोंसे बाहर आकर विशेष सम्मान प्राप्त कर रही हैं। 'लोककलाओंका पुर्नजागरण और सामयिक सन्दर्भ' निबन्धमें देवीलाल सामरने भी इस तथ्यकी ओर संकेत किया है परन्तु साथही सामरजीने इस बातपर चिन्ता भी प्रकट की है कि इससे लोकलाओंकी आत्माका ह्रास हो रहा है। शहरोंमें लोककलाका प्रवेश शौकिया रूपमें हो रहा है, लोककलाका शौकियारूप खतरेसे खाली नहीं। लोककला विश्वास और भावनासे जुड़ी होती है। सामरजीका मत है कि यदि कलाको बचाना है तो उसके साथ जुड़े संस्कारोंकी भी रक्षा करनी होगी। श्री माथुर भी कलाओंके अपने ही वातावरणमें प्रदर्शित होनेकी बात स्वीकारते हैं।

डॉ० नरेन्द्र भानावतने 'लोककलाओंकी भूमिका और बदलते सामाजिक मूल्य' में, बदलते सामाजिक मूल्योंमें लोककलाओंके योगदानपर प्रकाश डाला है। इसमें कोई संदेह नहीं कि 'जहां लोकसाहित्य और लोककलाएँ विलुप्त होते हुए सांस्कृतिक तत्त्वोंके रक्षणका कार्य करती हैं, वहाँ वे सांस्कृतिक मूल्योंके प्रसारमें शक्तिशाली माध्यम भी बनती हैं।' (पृ० ३४)। मालती शर्माने 'लोककला : संभावना एवं प्रक्रियाकी दिशा' में बताया है कि लोककलाओंको समसामयिक जीवनमें आबाद किया जाये, जीवनकी बदली हुई धुरियोंपर केन्द्रित किया जाये। आजके युगमें राज्याश्रय और धर्माश्रयकी परम्परा समाप्त हो चुकी है। आजकी बदली हुई परिस्थितियोंमें लोककलाओंको रोपनेके लिए सबसे उर्वर और विस्तृत क्षेत्र शिक्षण संस्थाएं हैं। यह ठोस सुझाव है। कुछ विश्वविद्यालयोंने उच्चस्तरीय पाठ्यक्रममें हिन्दीके साथ लोकसाहित्यको स्थान दिया है, परन्तु क्रियात्मक रूपसे इसके जो परिणाम सामने आये हैं—उनसे आश्वस्त नहीं हुआ जा सकता। यह भी विचार व्यक्त किया गया है कि लोकसाहित्य शोधके लिए तो ठीक है परन्तु पाठ्यक्रमका अंग नहीं बनाया जाना चाहिये। अत: आवश्यक है कि प्रारम्भिक शिक्षण संस्थाओंसे इसका बीजारोपण किया जाये, केवल हिन्दीके पाठ्यक्रममें ही नहीं, कला और संस्कृतिके पाठ्यक्रममें भी लोककलाओंका अध्ययन निर्धारित होना चाहिये।

श्री विजयवर्माने 'लोककलाओंके अलमबरदार कौन?' में लोककलाओंके संरक्षणके उपाय सुझाये हैं। आजकी परिस्थितियोंमें एक सबसे बड़ी समस्या है—मिलावटकी। यह समस्या परम्परागत गायकोंमें भी उत्पन्न हो गयी है। गायकोंका एक ऐसा वर्ग पनपा है जो लोकगीतोंको गाते समय परम्परासे इतर वाद्योंका प्रयोग कर लोकगीत गा देता है।

यह ध्यानमें रखते हुए परम्परागत गायकी मिलावटके मार्गपर चल पड़ती है, अतः विजय वर्माके अन्य सुझावोंके साथ यह सुझाव कि 'लोकगीतोंके साथ परम्परासे इतर वाद्योंका वादन तुरन्त बन्द किया जाये' (पृ० ४५) महत्वपूर्ण सुझाव है। परन्तु ध्यान देनेकी बात यह है कि परम्परागत गायकोंने भी मिलावटके नुस्खे सीख लिये हैं। इसकारण शोधार्थीको परम्परागत गायकीका असली रूप, परम्परागत वाद्योंका ज्ञान प्राप्त करनेमें अधिक श्रम करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ता है। धीरे-धीरे परम्परागत वाद्य नष्ट होते जा रहे हैं। आकशवाणीपरभी ऐसे गायकोंका प्रभुत्व छाया हुआ है जो परम्परागत गायकीसे कोसों दूर हैं। ऐसे गायक लोकवाद्योंका प्रयोग तो दूर उनका नाम भी नहीं जानते।

'लोककला : तब, अब और आगे' में प्रो० पुष्कर चन्दरवाकर इसपर जोर देते है कि लोककलाओंमें अभिव्यक्त आदिम और वर्तमान जीवनका शृंखलाबद्ध अध्ययन होना चाहिये। लोककलाओंको समझनेके दो आधार हो सकते हैं—मनोरंजनके साधनके रूपमें, वैज्ञानिक सामग्रीसे युक्त अभ्यासके साधनके रूपमें। लोककलाओंको जीवनमें उतारते समय उनके उपयोगी पक्षको नहीं भूलना चाहिये। उनका विचार है कि लोककलाका अस्तित्व लोक-संस्कार तथा राष्ट्रीय संस्कारकी दृष्टिसे आवश्यक है। आजकी शिक्षा प्रणालीमें लोककलाओंके शिक्षण-प्रशिक्षणको स्थान मिलना चाहिये। तभी शिक्षित वर्ग लोककलाओंके प्रति आत्मीयता अनुभव कर सकेगा।

'लोककला : परिवेश और प्रक्रिया' में प्रो. प्रफुल्लकुमार-सिंह 'मौन' इस बातपर बल देते हैं कि हमारी लोक-कलाओंका आजके परिवेशमें संस्कार होना चाहिये, उनपर परम्परा पोषण अधिक हावी रहा है, उन्हें आधुनिकताका स्पर्श मिलना चाहिये। इन्हें जीवित रखनेका यही एक उपाय है। 'लोककला : विघटन और विकृतियाँ' में, प्रो० विजयकुल श्रेष्ठका मत है कि लोककलाओंके पुनरुद्धारका प्रश्न उठाया जानाही व्यर्थ है। लोककलाओंका क्या पहले कभी पुनरुद्धार किया गया था? आवश्यकता है—लोक-कलाओंके संरक्षणकी, विघटन और विकृतियोंसे बचानेकी। उनके अनुसार परम्परागत प्रवाहके रूपमें प्राप्त बीज मूलोंके आधारको नकारना परिष्कार नहीं, विघटन है।

'लोककलाएँ और उनका सार्थक नैरन्तर्य' में डॉ० श्याम परमारने बताया है कि शताब्दियोंकी उपेक्षा, अवहेलना, नये सौन्दर्यबोधकी प्रतिष्ठाके बादभी लोककलाओंकी निरन्तरतामें बाधा नहीं आयी। फिरभी आज हमें इस बातपर विशेष रूपसे सोचना है कि 'उनका सार्थक नैरन्तर्य किसप्रकार 'बनाये रखा जाये? इसके लिए हमें एक नीति निर्धारित करनी होगी जिससे संरक्षण और विकास हो सके। डॉ० परमारका भी मत है कि शिक्षण संस्थाओमें इनके पठन-पाठनका सिलसिला कायम हो।

'लोककलाएँ : पुनरुद्धार प्रक्रिया' में डॉ० महेन्द्र भानावतने कुछ प्रश्न खड़े किये हैं? आजकी बदलती हुई जीवन व्यवस्थामें इन कलाओंका क्या रूप हो? क्या ये कलाएँ अपने पारंपरिक परिवेशमें ही जीवित रह सकती हैं? इनमें-परिवर्तन परिवर्द्धन भी हो तो किस सीमा तक? परिवर्तन-परिवर्द्धन कलाकार स्वयं करें अथवा अन्य कोई कला पुरुष? क्या यह परिवर्तन थोपा हुआ नहीं लगेगा? फिर उन्होंने बताया है कि लोककलाओंके क्षेत्रमें जयचंद पनप रहे हैं, ऐसे युगमें आवश्यकता है ऐसे हरिश्चन्द्रकी जो इन कलाओंको यथार्थकी भूमिपर प्रतिष्ठित कर सके।

निष्कर्ष रूपमें कुछ बातें हमारे सामने आती हैं:—आजके युगमें लोककलाओंके प्रति लोगोंका आकर्षण बढ़ा है परन्तु साथही लोककलाएँ फैशनके रूप बनकर अपने पारंपरिक स्वरूपको खो रही हैं। अतः इनके संरक्षण, संवर्द्धन और विकासका प्रश्न सामने हैं। साथही यह भी आवश्यक है कि इनके परम्परागत स्वरूपकी रक्षा करते हुए आधुनिक परिवेशमें फिट किया जाये। संरक्षण, संवर्द्धन और विकासके लिए सभी विद्वानोंकी राय है कि शिक्षण संस्थाओंमें लोककलाओंके पठन-पाठनकी व्यवस्था हो। 'लोककला मंडल उदयपुर'की भाँति 'अखिल भारतीय लोक-कला प्रतिष्ठान' की स्थापना हो। आलोच्य कृतिमें लोक-कलाओंके संवर्द्धन संरक्षण और विकासके सन्दर्भमें कुछ प्रश्न उठाये गये हैं और उनके उत्तर भी दिये गये हैं। इन प्रश्नोंके अतिरिक्त और भी प्रश्न हो सकते है तथा पुस्तकमें दिये गये उत्तरोंके अतिरिक्त उत्तरभी हो सकते हैं। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि प्रस्तुत पुस्तकके अधिकारी विद्वानोंने लोककलाओंके क्षेत्रमें प्रवेश कर गये उन विघटन-कारी तत्त्वोंका उल्लेख भी किया है। आवश्यकता है समय रहते उनसे लोककलाओंके मूलरूपकी रक्षाकी तथा आधुनिक परिवेशके अनुरूप ढालनेकी। इसप्रकार आलोच्य कृतिको इस दृष्टिसे महत्वपूर्ण कहा जा सकता है कि इससे लोक-कलाओंके प्रशंसकों, संरक्षकों, उन्नायकों और साधकोंको ठोस सुझाव और कार्यप्रणाली प्राप्त होती है।

—डॉ. शम्भू शुक्ल 'अभीत'

'चिन्तन'

लेखक : डॉ० प्रेमप्रकाश गौतम; प्रकाशक : साहित्य प्रकाशन, दिल्ली। पृष्ठ : १३५; डिमाई ७३; मूल्य : १५.०० रु.।

पुस्तकमें काव्यशास्त्र, समालोचना और भाषा-व्याकरण सम्बन्धी १५ निबंध संकलित हैं, जो लेखकके 'पुरोवाक्' के अनुसार 'पिछले पाँचवर्षोंमें लिखे गये हैं' और जिनमें साहित्य सम्बन्धी निजी विशिष्ट 'मौलिक चिन्तन' आध्यव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सायिक 'व्यसन' तथा 'गहनतर अनुशीलन' का वैशिष्ट्य है। ग्रन्थका शीर्षक भी यही पूर्वाभास कराता है, किन्तु वस्तुस्थितिकी परीक्षा करनेपर उक्त दावे स्वतःसिद्ध नहीं हो पाते। लेखकका यह अध्ययन अवश्य ही उसकी साहित्यिक सुरुचिका परिचायक है पर यह 'चिन्तन' शुद्ध साहित्यिक संस्कारोंका द्योतक नहीं बन पाया है। कारण, भाषा के वैज्ञानिक अध्ययनकी अभ्यस्त दृष्टि सहृदय संवेद्य समालोचनामें बाधक हो जाती है। इसका प्रथम प्रमाण मिलता है—'कामायनी-पुनर्मूल्यांकन' में। लेखकने उपयोगितावादी दृष्टिसे आलोच्य कृतिका जो 'हिसाब किताब' किया है, उससे काव्यका प्रबन्धत्व, चरित्र-विधान, रूपकतत्त्व, संदेश, रसबोध, प्रतीकत्व आदि कुछ भी उसे नहीं रुचा है। उसने 'श्रद्धा और विश्वासके महत्त्व' को काव्यका मूलोद्देश्य माना है (पृ. १७), आनंदको 'अंगीरस' कहा है (२०), मनुको नायक घोषित किया है (१६), भावोंकी व्यापकताका अभाव इंगित किया है (१५), और इसप्रकार कामायनी को सर्वस्वत्वहीन प्रदर्शित किया है, पर विडम्बना यह है कि इसके बावजूद भी 'पुनर्मूल्यांकन' किया है। इस सन्दर्भ में 'कामायनी-माहात्म्य' स्थापित करना मेरा उद्दिष्ट नहीं है, मेरा मात्र यही निवेदन है कि कुछ विचित्र या विचारोत्तेजक कहनेके आग्रहवश लेखकने कामायनीका अवमूल्यन कर डाला है। अगले दो निबंधोंमें क्रमशः तुलसी और आचार्य महावीर द्विवेदीकी अन्तर्भूत काव्यदृष्टिका तथ्योद्घाटन किया गया है। निबंध सं० ४ में 'रसनिष्पत्ति' और रसभेद सम्बन्धी प्रश्न उठाये गये हैं, जो 'रस' विषयक होकर भी नीरस हैं। इसीप्रकार काव्य-दोष, काव्यकी आधुनिक परिभाषा, कला, सौन्दर्य, आनंद, कलादर्श, क्रोचेकी कला दृष्टि तथा अद्वैतवाद सम्बन्धी ये निबन्ध तथ्य-संकलन और पाठयोपयोगी लेखनकी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण हो सकते हैं, यों साहित्य-चिंतनके ये अब 'आउटडेटेड' विषय हैं। नव चिन्तन या सहचिन्तनकी दिशामें डॉ. गौतमने जो यत्न किया है, वह 'नयी कविताः पुराने मान,' 'साठोत्तर हिन्दी कविता' आदि निबन्धोंमें निहित है। लेखककी सूचनाएँ कुछ पुरानी अवश्य पड़ गयी हैं, पर उसकी विवेचना निश्चय ही प्रासंगिक हैं। हाँ, नये साहित्यकी पूर्ण अवगतिके लिए नये बोधमें निस्संग गति एवं स्थितिका होना आवश्यक है। अन्तिम अध्यायमें डॉ. गौतमने कुछ तथाकथित तत्सम शब्दोंका बृहत् विश्लेषण किया है, हाँ, कुछ अतिरिक्त उत्साहवश बहुत सारे प्रचलित शुद्ध शब्दोंको अशुद्ध घोषित कर दिया है, जैसे सचिवालय, सरिता, अभिलाषा, जागृत, आधारित आदि। लेखकके कई शब्द-प्रयोग स्वयंमें चिन्त्य हैं जैसे 'भीमकायता' (४१) उज्जवल (४२) औन्मुक्त्य (४३) कलंकिता (४२) खिलवाड़ी (६४) भ्रान्तता (६६) स्रजेता विप्रुषों (७७) आदि। अन्ततः निष्कर्ष यह है कि उक्त ग्रन्थ अपनी पूर्वप्रतिज्ञाके अनुरूप तो नहीं पर सर्व-सामान्य स्तरके उपयुक्त है और इसी दृष्टिसे प्रयोजनीय है।

—डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

उपन्यास

साथ सहा गया दुख

लेखक : नरेन्द्र कोहली; प्रकाशक : राजपाल एंड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : १५५; क्राउन ७४; मूल्य : ६-०० रु.।

'साथ सहा गया दुख' पढ़ते हुए मुझे सुखद आश्चर्य हुआ नरेन्द्र कोहलीके लेखकीय परिवर्तनको लक्ष्यकर! अबतक उनसे एक व्यंग्य-लेखकके रूपमें ही परिचय रहा है। पर 'साथ सहा गया दुख' से उनके लेखनका एक नया रूप सामने उभरकर आया है।

'साथ सहा गया दुख' एक कथा नहीं, एक झेली-सही गयी जिन्दगीकी तसवीर है! व्यक्तिगत वेदनाओंकी डायरी है। और यही कारण है इस उपन्यासमें उन सूक्ष्मसे सूक्ष्म भावों और चित्रोंतकका दर्शन होता है, जिन्हें हम किसी की डायरीमें ही पा सकते हैं।

अमित और सुमन-पति-पत्नीके इर्द-गिर्द ही इस उपन्यास का सारा तानाबाना बुना गया है। दोनों एकही पेशे अध्यापनसे जुड़े हैं। दोनोंकी अलग-अलग आदतोंके कारण अक्सर उनमें मनमुटावकी स्थिति बन आती है। मनमुटाव की स्थितियोंके बीच एक-दूसरेसे इस कदर वे टूट जाते हैं कि उनके सम्पर्कोंकी समाप्तितककी बात मनमें आने लगती है। पर अलगावकी स्थिति आ नहीं पाती क्योंकि इसी बीच उनकी प्रथम संतान पुनीताका आगमन हो जाता है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनोंका सारा ध्यान पुनीतापर ही टिक जाता है। हालांकि पुनीताका जन्मभी उनके बीच हल्का मतभेदका कारण बन जाता है। अमितका खयाल है, पुनीताके जन्ममें सुमनने जल्दी की है, जबकि सुमनकी मां बननेकी चाह है इसलिए वह 'गर्भ-निरोधक' के प्रयोगमें ढिलाईकर देती है। फिरभी दोनों पुनीताके हर सुख-दुखका खयाल रखते हैं। अपनी समस्त आर्थिक विवशताओंके बावजूद ये लोग पुनीताके खर्चको ही प्राथमिकता देते हैं। दोनोंमें पुनीताके आगमनके साथही एक अलग तरहकी मानसिकता पनपती है और वे अपने सम्बन्धोंकी गहराईको समझने लगते हैं। और यह समझ तब और स्थायित्व पा लेती है जब अचानक पुनीता रोगग्रस्त होकर मर जाती है। पुनीताके दुखसे दुखी पति-पत्नी जब रातको फिर बिस्तरपर होते हैं तब वे एक-दूसरेको और अधिक आत्मीय होकर ग्राहते हैं। क्योंकि तब उनके मनमें अतीतके सारे दुख-दर्द और व्यथाएं उपस्थित हैं, जिन्हें हरक्षण साथ रहकर उन्होंने झेला है और अतीतके इन क्षणोंके साथ ही भविष्यके वे सुखद सपनेभी उनके समक्ष हैं जिनके वे सहभोक्ता होंगे। तभी सारे दुखोंको भूलकर पत्नी सोचती है—पुनीताके लिए जो कुछ आया था, उसका उपयोग अगले बच्चेके लिए हो जायेगा। वह पतिसे कहती है—मेरी पुन्नी किसी घृणित बीमारीसे नहीं गयी है। उसकी ये चीजें किसीभी प्रकार दूषित नहीं हैं। मैं इन्हें अपने दूसरे बच्चेके लिए रखूँगी।'

और तब अमित सोचता है—'सुमन ठीक कहती है। वे दूसरे बच्चेकी प्रतीक्षा कर सकते हैं। कदाचित अब वह दूसरे बच्चेको पुन्नीसे भी अधिक प्यार कर सकेगा। अब वह उससे, उसकी बीमारी और दुख-तकलीफसे तंग नहीं आयेगा। उसकी किसी बातसे उसमें खीझ भी नहीं उठेगी। वह बच्चे और सुमन दोनोंको ही पहलेसे अधिक प्यार करेगा।'

और यही, पति-पत्नीका यह सोचही उपन्यासका पूर्ण आधार बनता है। उनके दैनिन्दिन जीवनकी सारी प्रक्रियाएँ-जिन्हें बड़ी खूबीसे लेखकने इस उपन्यासमें संजोया है और आम आदमीकी जिन्दगीमें जहां छोटी-सी छोटी बातको कोई महत्व नहीं दिया जा सकता, लेखकने उन्हें सही स्थितियों और क्रियाओंके बीच महत्त्वपूर्ण बना दिया है। चाहे पति-पत्नीके बीच कलहकी स्थिति हो या पूर्ण आत्म-समर्पणकी, चाहे घरकी बात हो या कालेजकी—दोनों अलग-अलग कालेजोंमें लेक्चरर हैं—लेखककी पैनी नजरसे कुछभी नहीं छूटा है। यहांतक कि कालेजकी उन स्थितियोंका भी वास्तविक चित्रण इसमें है, जहां लोगोंके समक्ष आदमीसे अधिक महत्वपूर्ण चीज है कालेजकी घंटी। पेपरके पर्चे। और ऐसी स्थितियोंमें लेखककी व्यंग्य-दृष्टि फिर उभर आयी है। प्रिंसिपलका सुमनसे यह कहना—'आप गवर्निंग बाडीके मेम्बर्सको जानती ही हैं। वे सब मुझपर झपट पड़े। (सुमनके छुट्टी लेनेपर) आप जानती ही हैं, आप जब छुट्टी पर गयीं तो आप अनकनफर्म्ड थीं। उनका कहना है कि अनकंनफर्म्ड लेक्चररको मेटर्निटी लीव नहीं दी जा सकती!' कितनी हास्यास्पद बात है।

वास्तवमें 'साथ सहा गया दुख' आजके नौकरीपेशा दम्पतीके मानसिक उद्वेलनका एक यथार्थ चित्रण तो है ही, साथही यह आदमीके अन्दर छिपी आस्थाकी बातको भी सही ढंगसे प्रस्तुत करता है। आजके वातावरणमें जितनी घुटन, आर्थिक कठिनाइयाँ, सम्पर्कों और सम्बन्धोंके बीच अलगावकी स्थिति है वह आदमीको आस्थाहीन, वर्तमान-जीवी बनानेके लिए पर्याप्त है। पर 'साथ सहा गया दुख' इस अनास्थाको तोड़ता है आदमीको भविष्यके प्रति आशा-वान बनाता है, और मेरी दृष्टिमें यही इसकी सबसे बड़ी सफलता है, क्योंकि आजका जब पूरा लेखनही इसी आस्था-हीनताके बीच पनप रहा है, तब 'साथ सहा गया दुख' जैसी कृति संतोष देती ही है।

'साथ सहा गया दुख' की एक और विशेषता है भाषा। बिलकुल ही सहज और अकृत्रिम भाषा जहां स्थितियोंके संवेगको पकड़ती है, एक औत्सुक्यभी बनाये रखती है और पूरा उपन्यास पाठकको एकही बैठकमें शेष करनेको विवश करती है। भाषाके कारण ही वे कई स्थान विशेष भी ग्राह्य लगते हैं जहां अमित सुमनकी गोदमें सिर देकर फूट-फूटकर रोता है और अपनी गलतियोंका प्रायश्चित-सा करता लगता है। ऐसे स्थल प्रायः अत्यधिक या तो भावुकतापूर्ण हो उठते हैं या नाटकीय। पर यहां ऐसा नहीं हुआ है बल्कि ऐसे स्थल अमितकी विवशताके मानसिक उद्वेगोंके परि-चयात्मक हो उठे हैं। इसका एक कारण औरभी है जहां पति-पत्नी एकात्म हो उठते हैं उनके सम्बन्धकी जड़ें गहराई तक पहुंच जाती है वहां पुरुष अगर नारीके समक्ष दुर्बलभी हो तो उसे असह्य या अग्राह्य नहीं माना जा सकता। क्योंकि पुरुष स्त्रीके समक्ष मात्र अपने सुखोंका प्रदर्शन करके ही संतुष्ट नहीं हो सकता अपने दुखोंके बोझको भी वह उसके समक्ष रखना चाहता है और तभी 'साथ' की सार्थकता भी है। और 'साथ सहा गया दुख' में यह सबकुछ अपनी वास्तविकताके साथ उपलब्ध है, यही इस उपन्यासकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपलब्धि भी है और सार्थकता भी।

—सुरेन्द्र तिवारी

सोना

लेखक : भवानी भट्टाचार्य ; अनुवादक : श्रवणकुमार; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६। पृष्ठ : १८०; क्राउन ७३; मूल्य : ७.०० रु.।

प्रस्तुत पुस्तक 'दि गॉडेस नेम्ड गोल्ड' नामक अंगरेजी उपन्यासका संक्षिप्त हिंदी अनुवाद है जिसके रचयिता भवानी भट्टाचार्य हैं। भारतीय अंगरेजी उपन्यासकारोंके बीच अपनी सशक्त कथाकृतियोंके कारण वे पाँक्तेय रहे हैं। हिंदी पाठक इनकी अन्य रचनाओंसे अपरिचित नहीं है क्योंकि 'हि हू राइडस ए टाइगर' और 'शैडो फ्रॉम लद्दाख' के हिंदी अनुवाद क्रमशः 'शेरका सवार' और 'लद्दाखकी छायामें' सुलभ हैं।

भवानी भट्टाचार्यके इस उपन्यासकी पृष्ठभूमि ग्रामीण है जहां स्वार्थी शोषक सेठ, स्वतंत्रता आंदोलनमें भाग लेनेवाला भजनीक, कर्त्तव्यपरायण सोहनलाल जैसे पुरुष; और अद्भुत साहस एवं परोपकारकी जीवंत मूर्ति मीरा और उसकी बूढ़ी दादी, सेठ पत्नी लक्ष्मी जैसे स्त्री पात्र मिलकर आजादी से उत्पन्न सुखकी कल्पना करते हैं तथा अपने-अपने ढंगसे उसे अर्थवत्ता देनेके लिए संघर्ष करते हैं। लेखकने इन पात्रोंके साथ जो सरस कथा पेश की है उसकी सारी घटनाएं अत्यन्त स्वाभाविक और परस्पर संबद्ध लगती हैं।

वस्तुतः यह उपन्यास सेठ और कर्जदारकी कथा नहीं है बल्कि शोषक और शोषितकी या पीड़क और पीड़ितकी कहानी है जो केवल सोना मिट्टीकी ही नहीं अपितु समस्त भारतकी है। राजनीतिक दृष्टिसे यह कृति १९४७ के आस-पासकी घटनाओंको स्पर्श करती है जिससे यह और अधिक रोचक बन गयी है। कथाकारने तावीजकी प्रसंगोद्भावना कर एक ओर अतिरिक्त आकर्षकता एवं कौतूहलकी सृष्टि की है दूसरी ओर यह बतानेका भी प्रयत्न किया है कि आजादी प्राप्तिके बाद सुख समृद्धि किसी चमत्कार शक्ति या जादू मंत्रसे नहीं लायी जा सकती बल्कि इसके लिए भी प्रयत्न करना होगा। 'ताबीज' स्पष्टतः एक प्रतीक है जिसके सन्निवेशसे कथाकारकी सृजनात्मिका कल्पना शक्तिका बोध होता है।

इस उपन्यासमें लेखकके उद्देश्य एवं उसकी राजनीतिक चेतना अत्यन्त कलात्मक ढंगसे व्यक्त हुए हैं जो वर्तमान संदर्भमें काफी महत्त्वपूर्ण हैं। गुलामीके जुएको उतार फेंकनेके बाद जो परिवर्तन संभावित था वह न होनेसे भजनीक जोरदार शब्दोंमें कहता है : 'हमें आजादी मिल गयी है, अब हमें विश्वासकी जरूरत है। तभी असली परिवर्तन होगा। तभी हमारी जिंदगियाँ सोना बनेगीं।' (पृष्ठ सं० १७८)'। हमारा जो मोह-स्वप्न-भंग हुआ उसके कारणोंपर प्रकाश डालते हुए वह आगे कहता है : 'लुटेरे अनेक हैं इस जैसे सेठके वेशमें।' देहातोंकी निस्बत शहरोंमें तो औरभी तरह-तरहके हैं। एक तो पैसेवाले सेठ हैं जिनके लिए आजादीका मतलब है विदेशियों द्वारा खाली किये गये व्यापार क्षेत्रोंको हड़पनेका मौका हासिल करना, फिर राजनीतिवाले सेठ हैं जो अपनी जबानकी सफाईसे लोगोंको भरमाते हैं। एक सरकारी सेठ है हमेशा उद्दण्ड जो अपनी मानसिकता अपनी आकाओंके मुताबिक फौरन बदल देते हैं—हमेशा बिकनेको तैयार जो सबसे ज्यादा दाम दे। कुछ धार्मिक सेठ हैं जो अपने देवी-देवताओंका सौदा करते हैं। एक वे सेठ हैं जो अपने सिरोंपर गांधी टोपी लगाकर टोपीको ही फरेबके अस्त्रके नाते इस्तेमाल करते हैं।' (पृ० ८६)। लेखकने यह अनुभवकर ठीक ही बताया है कि स्वतंत्रताकी रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है। लुच्चे लफंगे यदि नेता बनना चाहें तो उनकी चाहको दबाना होगा। यह कर्त्तव्य नारी पुरुष सबका है।

लेखकने इस उपन्यासके माध्यमसे नारी जातिकी जागरूकता और समान अधिकारकी मांगको भी प्रस्तुत किया है। युवती मीरा और उसकी दादीने अपनी क्रियाशीलतासे यह स्पष्ट कर दिया है कि आजादीके बादका स्वप्न तबतक साकार न होगा जबतक कि स्त्री और पुरुषमें 'वास्तविक एकात्म्य' पैदा न होगा और इसके लिए 'आदमी और औरत एक-दूसरेको बराबरीका दरजा' मिलना जरूरी है। निस्संदेह भवानी भट्टाचार्यको अपने कथ्यकी व्यंजनामें पूर्ण सफलता मिली है। विभिन्न पात्रोंका वैविध्यपूर्ण एवं विश्वसनीय चित्रण, ग्रामीण परिवेशका यथार्थ वर्णन तथा चुस्त और उपयुक्त संवादोंका प्रयोग इस कृतिको मनोरंजक और कलात्मक बनाते हैं। भाषा अत्यन्त सरल है।

—राजनारायण राय

ऊँचे मकान

लेखक : गुरुदत्त; प्रकाशक : राजपाल एंड संस, दिल्ली-६। पृष्ठ २५३ ; क्राउन ७३ ; मूल्य : १०.०० रु.।

प्रस्तुत रचनामें आजकी राजनीतिके घिनौने रूपको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उजागर किया गया है। जिस देशकी बहुसंख्यक जनता अपढ़ और पिछड़ी हुई है, राजनीतिक कर्त्तव्य एवं अधिकारोंकी जहाँ जानकारी नहीं है, उस देशमें जनतंत्रकी सीढ़ीपर बलबीर जैसे 'अंगूठा छाप' कैसे चढ़ जाते हैं, विधायकसे मंत्रीपद तक कैसे पहुंच जाते हैं, इसका यथार्थ चित्रण राजनीतिक क्षेत्रके अनुभवी लेखकने प्रस्तुत उपन्यास में किया है। पैसेवालोंकी घृणित राजनीतिमें लाला सुखरामके पैसा लगानेके उद्देश्य और सेठ मधुसूदनकी धुआंदार कमाईके विभिन्न साधनोंपर करारा प्रहार किया है। मेकअपवाली सर्वांग व्यवस्थित स्त्रियाँ अपटूडेट बनकर राजनीतिमें कैसे गोलमाल करती हैं और आजकी राजनीति सेक्सपर कितनी निर्भर हो गयी है इसका यथार्थ चित्रण है। उपन्यास आजकी कांग्रेसी राजनीतिपर या अपढ़ देशके जनतन्त्रपर करारा व्यंग्य है।

गुरुदत्त पुरातन सभ्यताके प्रवक्ता हैं, राजनीतिमें वे शुद्ध भारतीय दृष्टि रखते हैं अतः उनका चित्रण आदर्शवादकी परिधिसे घिर जाता है और कुछ अवास्तविक हो उठता है। सुखमणि जैसी नारियाँ शुद्धतः भारतीय हैं यद्यपि युगके राजनीतिक थपेड़ेमें उनका अस्तित्व संदिग्ध लगता है। परमेश्वरीदेवीका चरित्र ऐसा लगता है मानो कीचड़में कमल हो। सेठ मधूसूदन काला बाजार और घूसखोरी बढ़ानेमें औचित्य देखते हैं और बलबीरको सही मार्गपर लाते हैं। उनका यह विश्वास नहीं है कि अच्छे उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए मार्ग भी शुद्ध होना आवश्यक है। आधुनिक हिन्दू जीवनमें नारीके आदर्श रूपकी कल्पना और सुखमणिके जीवनकी दुर्लभ भावनाका औचित्य दिखाकर लेखक भारतीय जीवनके सत्य रूपसे दूर हट जाता है।

उपन्यासकी पृष्ठभूमि और घटनाएँ भले ही यथार्थ हों, किन्तु उसका आदर्शवादी आवरण कसौटीपर खरा नहीं उतरता। लेखकका आदर्शवाद यथार्थपर हावी हो गया है। इसकारण उपन्यासकी प्रभाव सृष्टिमें व्याघात आ जाता है।

—पुष्पा लहरी

मनका व्यापार

लेखक : राजेश्वर प्रसादसिंह ; प्रकाशक : अनादि प्रकाशन, ६०९ कटरा, इलाहाबाद । पृष्ठ १३० ; क्राउन ७३; मूल्य : ५.०० रु.।

उपन्यास पुराने ढर्रेका और प्रायः फिल्मी शैलीपर है। होटेल पारएक्सिलेंस है, वहाँ आर्केस्ट्राकी प्रसिद्ध धुन है और उस धुनपर इठलाती, नाचती मादक शारीरिक सौन्दर्यका आकर्षक प्रदर्शन करती नायिका है। उसकी ओर आकर्षित होनेवाला युवक है, जो साधारण मध्यमवर्गीय परिवारमें जन्म लेकर भी उच्च पद प्राप्त करनेमें सफल हुआ है। नायक नायिकाको प्राप्त करनेमें सफल होता है परन्तु विलेनकी तरह लड़-झगड़कर नहीं अपितु सम्पर्क बढ़ाकर और अंतमें उससे विवाहकर उसे अपनी जीवन-संगिनी बना लेता है। उसके मार्गमें अवरोध उत्पन्न करनेवाला एक धनिक है जो कि असफल रहता है। लेखकने धनके स्थान पर मनकी महत्ताका प्रभाव स्पष्ट किया है और इस तरह मनका व्यापार उपन्यासका नामकरण सार्थक है।

कथानक लघु है परन्तु उद्देश्यपूर्ण है। इसमें दो धर्मों दो संस्कृतियोंके मिलनके एकताके और मानवमात्रकी समानताके स्वरका उद्घोष है।

—मदनलाल श्रीवास्तव

नाटक : एकांकी

प्रह्लाद

लेखक : बालकृष्ण सम; अनुवादक : अक्षोभ्येश्वरी प्रताप, रामेश्वर प्रेम; प्रकाशक : साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन, फिरोजशाह रोड़, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : १७५, क्राउन १९७४, मूल्य : ६.०० रु.।

विभिन्न भारतीय अथवा विदेशी भाषाओंसे साहित्यिक कृतियोंका हिन्दी अनुवाद, साहित्यकी समृद्धि और तद्-तद्भाषाओंमें उपलब्ध ज्ञान-विज्ञानसे परिचित होनेके लिए आवश्यक है। विभिन्न भाषाओंकी जानकारी न होनेपर भी उनमें प्रकट भाव, विचार और दृष्टिकोणका सम्यक्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञान अपनी भाषामें सम्भूत सुष्ठु अनुवादसे समुचित रूपसे हो सकता है। एकही मुख्य कथा भिन्न-भिन्न स्थलोंपर किन परिवर्तित रूपोंमें प्रस्तुत की गयी है, इसका सहज अनुमानभी वहाँ रचित साहित्यके माध्यमसे हो सकता है। इस दृष्टिकोणसे नेपाली भाषाके नाटककार श्री बालकृष्ण समके नाटक 'प्रह्लाद' का हिंदी अनुवाद प्रस्तुत करनेके लिए साहित्य अकादमी साधुवादकी पात्र है।

समीक्षित नाटक श्रीमद्भागवतके सप्तम स्कंधमें वर्णित कथाके आधारपर लिखा गया है, परन्तु नाटककारने इसे पौराणिक कल्पनाके क्षेत्रसे हटाकर ऐतिहासिक कल्पना-क्षेत्रमें उतारनेका प्रयास किया है। हिंसा, लूटपाट, अन्याय और अत्याचार पौराणिक युगमें भी थे और आधुनिक युगमें भी उनका अस्तित्व है। परंतु वास्तवमें इनका जन्म होता क्यों है और किसप्रकार उनका समूल विनाश किया जा सकता है, यह मूल ध्येय इस संपूर्ण नाटकमें उभरकर आया है।

नाटकका मूल कथ्य जहाँ पौराणिक गाथापर आधारित है वहाँ उसके प्रस्तुतीकरणका ढंग निराला है। विशेष रूपसे नाटक इस तथ्यकी ओर दौड़ता है कि मानव-स्वभावमें परिवर्तन कर सकनेका साधन या मनुष्य मात्रको अधिक सत्वगुणी बनानेका साधन जबतक नहीं निकलेगा, तबतक स्थायी शांति हमारे लिए स्वप्नवत् रहेगी, उसके साधनको पानेके लिए अध्यात्मको पदार्थके यहाँ जाकर या पदार्थको अध्यात्मके यहाँ जाकर हाथ मिलाना पड़ेगा। विज्ञानमें ज्ञान है और ज्ञानमें विज्ञान (भूमिका पृ० ५); यहाँ प्रह्लाद जहाँ ज्ञान और भक्तिके प्रतीक हैं वहाँ हिरण्यकशिपु मात्र विज्ञानका प्रतीक है जोकि विज्ञानसे ज्ञानको समाप्त करना चाहता है, जबकि प्रह्लाद ज्ञानके साथ आध्यात्मिक विज्ञानको लानेका हामी है।

नाटककारका विचार है कि संसारमें कोईभी जाति बाहरसे जितनीभी सूक्ष्म-शक्ति प्राप्त कर ले, फिरभी यदि हृदयके अंदर सद्भावना उत्पन्न नहीं कर सकती तो निश्चयही वह शक्तिका दुरुपयोग करेगी। इसीप्रकार हृदयके भीतर जितनीभी सद्भावना संग्रहीत हो, बाहरी वैज्ञानिक शक्ति प्राप्त न कर सकनेवाली जातिको दूसरेके आधीन दास या भिक्षु होकर जीवन व्यतीत करना पड़ता है (भूमिका पृ० ८)। इसी आधारपर दैत्यराज हिरण्यकशिपु विषाक्त धूप (संभवत: आणविक शक्ति) और सृष्टिकर्ता ब्रह्मासे अद्भुत वरदान प्राप्त करके भी सद्भावना, सहृदयता, आध्यात्मिक ज्ञानके अभावमें नृशंसही बना रहा जबकि प्रह्लादने आध्यात्मिक ज्ञानके साथ-साथ भौतिक शक्ति जुटानेका कार्य भी किया (पृ० ४०)। इसी कारण वह शक्ति-सम्पन्न दैत्यराजके अत्याचारोंके सामने नतमस्तक नहीं हुआ। उसने उन अत्याचारोंका डटकर मुकाबला किया।

आजभी यही हो रहा है। हम भौतिक ज्ञान अथवा भौतिकशास्त्रकी उन्नति तो निरंतर कर रहे हैं, आणविक शक्तिसे युक्त हो रहे हैं, अनेक प्रकारके शस्त्रास्त्रोंका निर्माण कर रहे हैं परंतु आध्यात्मिक विज्ञानको हमने तिलांजलि दे दी है। परिणाम स्पष्ट ही सामने आ रहा है। भौतिक कलह, हिंसा और बरबादी। इनके शमनका उपाय है—सत्वबम। इसीलिए प्रह्लाद कहता है—भजन तो निमंत्रण है परंतु निमंत्रित परमेश्वर उस मन-मंदिरमें नहीं समाते जिसमें कामवासनाका एक बूँद कीचड़ क्रोधाग्निकी एक ताप, लोभी जगतका एक कण धूल, मोहक नयनका एक-एक आँसू, मदोन्मत्तकी फीकी गंध और ईर्ष्याकी एक लकीर है। इसीलिए भजनके साथ मन-मंदिरको साफ करो (पृ० १६४)।

नाटकमें पात्रोंकी संख्या अच्छी-खासी है। कुल ३५ पात्र हैं। जिनमें २५ पुरुष और १० स्त्रीपात्र हैं। हिरण्यकशिपु जहाँ अपनी कठोरताके साथ आकर्षित करता है, अपने अहंकारके साथ प्रभावित करता है, अत्याचारी होने पर भी अपने वर्गके प्रति आस्थावान होनेके कारण नाटकपर छाया रहता है वहाँ अध्यात्म-दर्शन-योग, ज्ञान-विज्ञान, आस्था-विश्वास, भक्ति और कर्मठता, सुकुमारता और कोमलताका पुंजीभूत रूप प्रह्लाद पाठक-दर्शक सभीके मनपर छाया रहता है। उसके प्रति आकर्षणका एक मुख्य मनोवैज्ञानिक कारण पौराणिक युगसे चला आता हुआ विश्वास भी है। छात्रोंमें रोध प्रभावी है। नाटककारकी विशेषता यही है कि उसके द्वारा सृजित सभी पात्र उपस्थित होकर स्वत: अपने चारित्रिक गुणोंको प्रकट करनेकी सामर्थ्य रखते हैं।

काव्यात्मक भाषाका प्रयोग नाटककारकी इस ओर सजगताका प्रतीक है। परंतु यह प्रयोग कहीं-कहीं खटकने की सीमातक है। अनेक स्थलोंपर अशुद्ध वाक्य-विन्यासभी बहुत खटकता है। पृष्ठ ३८ पर हिरण्यकशिपुका निम्न-कथन द्रष्टव्य है—"मैं शीघ्रही स्वर्गसे लड़ूंगा। स्वर्गके जहाँ सूर्यास्त होते ही शिखर स्वर्ग (संभवत: स्वर्ण) का हो जाता है चढ़ाई पहले करूँगा उसी सुमेरू हिमालयपर। विप्रचित आदिको परसों सेना ले जाना पड़ेगा, जहाँ वह सैन्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुचलेगा वहाँ दल-दल बन जायेगा। सबको यह भूकम्प समर घोषणा कर देगा।" (पृ० ३८)।

"प्रह्लाद" रंगमंचीयताकी दृष्टिसे बहुशः सफल है। इसका कारण यह है कि मंचपर अभिनीत न किये जानेवाले दृश्य सूच्य द्वारा वर्णित हैं। विशेषकर प्रह्लादकी हत्याके विभिन्न प्रयत्नोंकी सूचना बाजारमें उपस्थित कुछ पात्रों द्वारा दी गयी है। उत्सुकता अन्ततक बनी रहती रही है।

इस नाटकके प्रस्तुतीकरणमें मुख्य रूपसे जोशी शिकायत की जा सकती है वह अनुवादकों और साहित्य अकादमी के कार्यकर्ताओंसे है। दोनोंही अनुवादकोंसे इतनी सशक्त रचनाके जितने प्रभावी और श्रेष्ठ अनुवादकी आशा की जानी चाहिये थी, उसकी पूर्ति नहीं हुई है। यदि नेपालीके वाक्य-विन्यासमें काव्यात्मकताका आग्रह इतना अधिक है कि वहाँ क्रियाका प्रयोग पहले और कर्त्ता आदिका प्रयोग बादमें किया जाता है तो भी हिन्दीमें हुए अनुवादकी दृष्टिसे उसको परिवर्तित करना अपेक्षित था। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

१. जीवित रहें हम सब, पिता (पृ० ३३)।
२. इसकी नाकने सूंघ लिया है निष्कृष्ट विषका धुँआ (पृ० ३२)।
३. मुझे अब न फुसलाओ कल्पनासे। अब प्रश्न करता हूँ एक, मिले निर्मल उत्तर, मेरा शरीर नहीं मरेगा? (पृ० ३७)।
४. जगदीश्वर, मैं इस जीवनसे पोंछता हूँ तेरे चरणों की रज (पृ० १२८)।

बहुतसे स्थलोंपर अशुद्ध वाक्योंका प्रयोग मनमें ग्लानि उत्पन्न करता है—

१. करोड़ों सूर्य को बीज गर्भमें रखनेवाले (पृ०४०),
२. धूल बन सबोंके चरणमें नतमस्तक होकर(पृ०४१),
३. विवाहके लिए अनेकों बसंतकी प्रतीक्षा क्यों करनी पड़ रही है (पृ० ४३),
४. लेकिन जीतेंगे अंतमें वही जो झुककर अपनायेंगे माता प्रकृतिका पथ, जो अपने पथमें प्रकृतिका पथ मिला देना चाहता है (पृ० ४७),
५. एक एक है यह ज्ञान मिला (पृ० ६७),
६. वही है खिलानावाला जिसने मुँह और अन्न दोनों दिया (पृ० ६८),
७. यह कभी कोई चीज दुनिया नहीं चलती(पृ०७०),
८. हम सबके बीच पहले हम लोगोंने इसका पता लगाया चक्रमूर्तिने (पृ० ७०),
९. आज हर तरफ हम सबने धूप ज्यादा महसूस किया (पृ० ७१)।

ये तो कुछ थोड़ेसे उदाहरण हैं। इस प्रकारके कितने ही वाक्य पूरे नाटकमें छांटे जा सकते हैं। आखिर इतना अनुत्तरदायित्वपूर्ण कार्य क्यों हुआ?

पूरी पुस्तकमें प्रूफकी लगभग सौ-सवासौ अशुद्धियाँ तो ऐसी हैं जिन्हें साधारण पाठकभी नजरअंदाज नहीं कर सकता। बहरहाल पुस्तककी छपाई साफ हुई है। गेटअप सुंदर है। नाटककी दृष्टिसे कोई शिकायत न होनेपरभी प्रस्तुतिकी दृष्टिसे कई बातें अंगुली उठानेके लिए काफी हैं।

—डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल

रेडियो नाटक : एक संकलन

प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-१। पृष्ठ, ४८३; डिमाई ७३; मूल्य १०.०० रु०।

रेडियो नाटक दृश्य-तत्त्व-विहीन मात्र श्रव्य नाटक है। दृश्य-तत्त्वकी कमीकी पूर्ति संवादोंसे होती है। इन श्रव्य नाटकोंके प्राण संवाद ही होते हैं। अतः इस प्रकारकी रचनाकी सफलता संवाद विधानपर ही निर्भर करती है। प्रस्तुत संकलनके नाटक उक्त तथ्यके सुन्दर प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

आकाशवाणीने सन् १९५६ से अखिल भारतीय नाटक कार्यक्रमके अन्तर्गत प्रादेशिक भाषाओंके श्रेष्ठ नाटकोंके रेडियो रूपान्तर प्रसारित किये थे। यह कार्यक्रम भावनात्मक एकताकी दिशामें अत्यन्त सराहनीय सिद्ध हुआ था, साथ साहित्य प्रेमियोंको इतर भाषाओंकी साहित्यिक-गतिविधियोंसे परिचित करानेवाला भी। 'रेडियो नाटक' शीर्षक इस पुस्तकमें अखिल भारतीय नाटक कार्यक्रममें प्रसारित नाटकोंमेंसे प्रतिनिधि १६ रचनाओंका संकलन आकाशवाणीके नाटक विभागके मुख्य प्रस्तुति-अधिकारी एवं सुप्रसिद्ध नाटककार श्री चिरंजीतने प्रस्तुत किया है। यह ऐसा पहला प्रयास है जिसमें रेडियो द्वारा प्रसारित नाटकोंको अक्षर रूप देकर, पाठकोंके लिए सुलभ कर दिया गया है। तदर्थ आकाशवाणी तथा प्रकाशन विभागके अधिकारी बधाईके पात्र हैं।

श्री चिरंजीतने पुस्तककी भूमिकाके रूपमें रेडियो नाटक-विधाकी समग्र चर्चा तथा विश्लेषण कर, उसके इतिहासपर प्रकाश डालते हुए कहा है कि रेडियो नाटक

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सही मानोंमें भारतकी जीवंत एवं प्रतिनिधि नाट्य-विधा है। यह कथन बहुत हद तक सत्य एवं तर्क संगत है।

प्रस्तुत संग्रहमें सोलह नाटक संकलित हैं। यथा कठफुला (असमिया), वात्या (उड़िया), जेबकतरा (उर्दू), पतझड़ (कश्मीरी), कली कलमी हृदयकी (कन्नड़), मधुकर पुष्पविलासम् (गुजराती), पुनर्जीवन (तमिल), रामप्पा (तेलुगु), अतीतकी परछाइयाँ (पंजाबी), जटायु (बंगला), घर (मराठी), जन्मकुण्डली (मलयालम), परदेशी, टूटते परिवेश, उसका अजनबी, बिल्वमंगलकी आँखें (हिन्दी)। इन सभी नाटकोंमें आधुनिक भारतीय मानवका-मनोविज्ञान के धरातलपर—चरित्र-चित्रण किया गया है जो यथार्थ होनेके नाते अत्यन्त प्रभावशाली बन पड़ा है। सभी रचनाएँ विषय वस्तु एवं शिल्पगत सौष्ठवकी दृष्टिसे उत्तम हैं। फिर भी जन्मकुण्डली, बदलते परिवेश, रामायण तथा घर उल्लेखनीय हैं। आधुनिक नाटकके लिए यह संकलन अवश्य पठनीय एवं संग्रहणीय है।

पुस्तकका गेट-अप, छपाई, कागज आदि अपेक्षाकृत उत्तम हैं। मूल्यभी बहुत उपयुक्त है।

—डॉ. भीमसेन निर्मल

जीवन : संस्मरण

विदा बन्धु विदा

लेखक : प्रणवकुमार वन्द्योपाध्याय ; प्रकाशक : पांडुलिपि प्रकाशन, ई-११/५, कृष्णनगर, दिल्ली-३१। पृष्ठ : १७६; क्राउन, ७३; मूल्य ८-०० रु.।

'विदा बन्धु विदा' प्रणवकुमार वन्द्योपाध्यायकी आत्मकथा है जिसे उन्होंने बड़े परिश्रम तथा अध्यवसायके साथ प्रस्तुत किया है। शैशवकालीन स्मृतियोंपर आधारित यह आत्मकथा सचमुच शैशवावस्थाका ही स्मरण कराती है क्योंकि इसमें जीवनी-लेखनकी वह तटस्थ दृष्टि नहीं है जिससे आत्मकथामें प्रौढ़ता तथा गंभीरता उत्पन्न होती है। इसमें सब कुछ अच्छा-ही-अच्छा है, बुरा कुछभी नहीं है, स्वयंका गुणगान-ही गुणगान है, अपनी त्रुटियों या भूलोंसे पाठकोंको आगाह करके उन्हें कुल लाभ पहुँचानेकी आकांक्षा नहीं है, और यहभी कि इसमें आत्मरति तथा आत्मविज्ञापनकी कैशोर्य भावुकता है, आत्मकथा लेखककी यथार्थ दृष्टि नहीं है।

और यही कारण है कि इस आत्मकथामें शुरूसे आखिरतक एक प्रकारकी तरल भावुकताके दर्शन होते रहते हैं जो किसीभी दृष्टिसे आत्मकथाकी तटस्थताके लिए वरेण्य नहीं कही जा सकती। इससे कहानी तो अच्छी बन जाती है—बन सकती है किंतु आत्मकथा अच्छी नहीं बनती—नहीं बन सकती। आत्मकथाके लिए निर्मम विश्लेषणकी क्षमता एक अनिवार्य गुण है जिसके अभावमें आत्मकथाकी बुनियादही नहीं खड़ी की जा सकती।

एक बात और। आत्मकथाकी सफलता-असफलताका सवाल व्यक्तिके जीवनकी महानता तथा तुच्छतासे भी जुड़ा हुआ है। और यद्यपि तुच्छ जीवनको भी ईमानदारी तथा निर्ममताके साथ खोलकर रख देनेवाली आत्मकथात्मक रचना अपनेमें प्रौढ़ और महान बन सकती है, किंतु अगर विवेच्य जीवन अपनेमें महान है। गांधीजीकी आत्मकथा 'सत्यके प्रयोग' से यह बात बखूबी प्रमाणित हो जाती है।

तात्पर्य यह कि आत्मकथा आदमीको तभी लिखनी चाहिये जब उसका जीवन किसी न किसी रूपमें विशिष्ट हो और उसने औरोंसे भिन्न तथा विशिष्ट कोटिका कोई अनुभव प्राप्त किया हो। इस दृष्टिसे प्रणवकी यह आत्मकथा एकप्रकारसे अप्रासंगिक ही प्रतीत होती है और असामयिक भी क्योंकि स्वतंत्रताके आस-पास जन्मे प्रणवकी दुनियाँ अभी इतनी सीमित और छोटी है कि उसके आधार पर 'आत्मकथा' लिखने जैसा कोई गंभीर तथा जटिल सर्जनात्मक प्रयास संभव भी नहीं दिखता। यही कारण है कि आत्मकथा लोग अकसर अपनी पूरी जिंदगी गुजार चुकने के बाद लिखते हैं, प्रणवकी तरहसे छब्बीस-सत्ताइसकी कच्ची उम्रमें नहीं। छब्बीस सत्ताइसकी इस उम्रमें तो लेखन ही प्रौढ़ नहीं हो पाता फिर इस उम्रमें 'आत्मकथा' भला कैसे लिखी जा सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और यही कारण है कि प्रणवकी इस आत्मकथामें बहुत साधारण-साधारण-सी घटनाओं तथा रोजमर्राकी बातोंको बड़ी घटना और बड़ी बात बनाकर पेश करनेकी असफल चेष्टा जगह-जगह दिखायी पड़ती है जो लेखकको किसीभी दृष्टिसे बड़ा बनानेमें कोई मदद नहीं पहुंचाती। जीवनी-लेखकका जीवन अगर स्वयंमें बड़ा और महान नहीं है तो उसकी जीवनी लिखकर उसे मदान नहीं बनाया जा सकता। यह वैसेही जरूरी है जैसे साहित्य तथा कला के लिए विषयका महत्वपूर्ण तथा महान होना। और इसी लिए जिसप्रकार विषयका ओछापन कला तथा साहित्यमें ओछापन उत्पन्न कर देता है उसीप्रकार आत्मकथा लेखक के जीवनका ओछापनभी आत्मकथाको हल्का बना देता है। अच्छा होता यदि प्रणव अपनी आत्मकथा लिखनेमें थोड़ा धैर्यसे काम लेते और अपने जीवनानुभवोंको थोड़ा और व्यापक और प्रौढ़ बनाकर पेश करनेके माकूल अवसरका इन्तजार कर लेते।

—डॉ. रमेश तिवारी

भूलाभाई देसाई

लेखक: एम० सी० सीतलवाड, अनुवादक: मुकुटबिहारी वर्मा; प्रकाशक: प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ: २५६; डिमाई ७२, मूल्य: ५.०० रु.।

गुजरातके ख्यातिप्राप्त साहित्यकार, कांग्रेसके सुप्रसिद्ध नेता तथा विद्याभवनके संस्थापक श्री कन्हैयालाल माणिक लाल मुंशीने अपनी आत्मकथाके दूसरे भागमें श्री भूलाभाई देसाईके विषयमें लिखा है:—

"भूलाभाईके परिचयमें मैंने बहुत कुछ सीखा और अनेकोंके परिचयमें आया। यदि मैं भूलाभाईके परिचयमें न आया होता तो वास्तविक बम्बई और उसके जीवनके अनेक स्वरूपोंको भी कभी न जान सका होता।.........धारा-शास्त्रीके रूपमें भूलाभाईकी विशिष्टताओंमें मुख्य थीं उनकी स्वाभाविक कथन शक्ति और उनका अथक परिश्रम, पृथक्करण-शक्ति तथा सभासदों का मन जीत लेनेका कौशल। ......उनका विद्यार्थी जीवन जिसप्रकार तेजस्वी था, उसीप्रकार उनका कार्यकारी जीवनभी अत्यन्त तेजस्वी था। उन्होंने अपना जीवन बहुत साधारण ढंगसे प्रारम्भ किया था किन्तु वे अपनी योग्यतासे बहुतऊंचे स्तरपर पहुंच गये"।

उपर्युक्त कथन प्रस्तुत जीवनीको पढ़ते समय पूर्णत: सत्य-सा प्रतीत होता है। जीवनी लेखक श्री सीतलवाड़ने श्री भूलाभाईके सम्बन्धमें प्रामाणिक सामग्री एकत्रकर यह जीवनी लिखी है। यह जीवनी जहाँ एक ओर प्रेरणाप्रद है वहाँ दूसरी ओर भारतके राष्ट्रीय जीवनके विषयमें भी पर्याप्त प्रकाश डालती है।

श्री भूलाभाई देसाई आर्थिक स्थितिसे एक बहुत मामूली से ब्राह्मण परिवारमें जन्मे थे। उनका पालन-पोषण बचपन में ननिहालमें हुआ था। बचपनसे ही कुशाग्र-बुद्धि थे अत: एकके बाद एक परीक्षा सफलतापूर्वक उत्तीर्ण करते चले गये।

प्रारम्भमें वे गुजरात कालेजमें अंग्रेजी तथा इतिहासके प्राध्यापक रहे, तत्पश्चात एल-एल० बी० की परीक्षा उत्तीर्ण कर बम्बई हाईकोर्टमें एडवोकेट हो गये। एडवोकेट होते ही उन्होंने जी भरके कड़ा परिश्रम किया और अपने क्षेत्रमें अपना विशिष्ट स्थान बना लिया। वकालतमें सफलता प्राप्त करनेके उपरान्त वे राजनीतिमें सक्रिय हो गये और कुछ वर्षोंमें ही उन्होंने राजनीतिमें भी प्रमुख स्थान बना लिया। बादमें वे केन्द्रीय धारा-सभाके सदस्य बने और फिर सभाके नेता भी रहे। पर, राजनीतिकी दुरभिसन्धिमें वे सफल न हो सके और जब केन्द्रमें पहली बार मन्त्रिमंडल बननेकी सम्भावना हुई उस समय उन्हें राजनीतिक चक्रसे पूर्णत: अलग कर दिया गया। इसका उनके जीवनपर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया और वे बीमार हो गये। इसी पीड़ामें ६ मई सन् १९४६ में उनकी मृत्यु हुई। उनका अड़सठ वर्षका जीवन अत्यन्त उच्च भावनाओं से परिपूर्ण रहा।

उनके जीवनका सबसे महत्वपूर्ण मुकदमा था—आजाद हिन्द फौजका मुकदमा—, जिसमें कप्तान शाहनवाज खाँ, कप्तान सहगल तथा लेफ्टिनेन्ट जी० एस० ढिल्लों अभियुक्त थे। यह मुकदमा राष्ट्रीय महत्वका था और अत्यन्त पेचीदा तथा परिश्रमसाध्य था। इसका प्रमाण इसी बातसे लगाया जा सकता है कि इस मुकदमेका विवरण ३८७ पृष्ठों में प्रकाशित हुआ। उन्होंने इस मुकदमेके लिए जीतोड़ परिश्रम किया और सफलता प्राप्त की, इसी प्रकार उन्होंने बारडोलीके आन्दोलनको सफल बनाया था और किसानोंकी ओर से लगान माफ करानेमें पूरा प्रयत्न किया।

श्री भूलाभाई देसाई और उनकी पत्नी श्रीमती इच्छा बहन दोनों ही धर्मभीरू, आस्थावान देशभक्त थे। उनके केवल एक ही संतान थी —पुत्र धीरू भाई, जो पिताके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समान ही एक उच्चकोटिके बैरिस्टर थे ।

इस पूरी जीवन-कथाको लेखकने अत्यधिक प्रभावशाली ढंगसे लिखा है । पाठक पढ़ते समय चरित-नायकके उच्चादर्शोंके प्रति आकर्षित होता है । उसे ऐसा नहीं लगता जैसे वह किसी काल्पनिक व्यक्तिकी कथा पढ़ रहा हो, बल्कि ऐसा लगता है जैसे कि, किसी आदर्श नायकका जीवन सचित्र रूपसे देख रहा हो ।

—त्रिलोकीनाथ व्रजबाल

प्रथम महायुद्धके समय जर्मन सरकारसे हथियार खरीदनेकी योजनामें मानवेन्द्रनाथ रायका विशेष हाथ था, किन्तु पृष्ठ ८७ पर उनका उल्लेख नहीं है । इनके अतिरिक्त प्रूफकी भी कई गलतियां देखनेको मिली हैं ।

पुस्तकमें पत्रकार शिरोमणि सखाराम गणेश देउसकरका चित्र पहली बार देखनेको मिला है । उन्होंने जिन क्रांतिकारियोंको प्रेरणा दी उनमें अवनी मुकर्जी प्रमुख थे ।

—मनमोहन वर्मा

भारतके गौरव (भाग ९)

प्रकाशक: प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-१ । पृष्ठ: १६७; डिमा. ७४; मूल्य: ४.०० रु. ।

'भारतके गौरव' के इस भागमें हम उन महापुरुषोंके निकट आ गये हैं जिनसे आजकी पीढ़ीका बहुत ही निकटका परिचय रहा है । भारतके प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद और प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरूका नाम कौन नहीं जानता है । मौलाना अबुलकलाम आजाद, पंडित गोविंद वल्लभ पंत, डॉ० सम्पूर्णानन्द और राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडनका नाम भी सभी लोगोंने सुन रखा है । इन महापुरुषों की जीवनियोंके साथ आलोच्य भागमें विभिन्न राज्योंके कुछ और राजनीतिक नेताओं, समाजसुधारकों, वैज्ञानिकों तथा प्रशासकों आदिका भी परिचय है जिन्होंने आधुनिक भारतके निर्माणमें सक्रिय योगदान दिया है । ६ क्रांतिकारियोंकी भी जीवनियां हैं ।

पुस्तकमें सभीकी जीवनियां संतुलित हैं जिसका पिछले कई भागोंमें प्रभाव रहा है । सम्पादनकी दृष्टिसे यह भाग बहुत ही अच्छा बन गया है, किन्तु यदि कुछ और सावधानी बरती जाती तो रही-सही कमजोरियाँ भी दूर हो जातीं । जैसे एम० आर० जयकरका पूरा नाम न तो सूचीमें है और न ही लेखके प्रारम्भमें, पर एम.एस. अणेके लेखमें यह बात नहीं है । यतीन्द्रमोहन सेनगुप्तके साथ 'देशप्रिय' शब्द लगा है किन्तु पुरुषोत्तमदास टंडनके साथ 'राजर्षि' नहीं है । दिल्ली षडयंत्र-कांडके सिलसिलेमें ४ क्रांतिकारियोंको फांसी दी गयी थी किन्तु पृष्ठ २८ पर भाई बालमुकुन्दका नाम रह गया है । इस संबंधमें यह उल्लेखनीय है कि पृष्ठ १०९ पर ४ क्रांतिकारियोंके लिए लेखकने ३-४ अन्य व्यक्तियोंको फांसी दिये जानेका जिक्र किया है, जिससे स्पष्ट है कि वह संख्याके बारेमें अस्पष्ट है । लाला हरदयालकी जीवनी के बीच-बीचमें सब-हेडिंग हैं जो दूसरे लेखोंमें नहीं है ।

नारी आलोककी नौ किरणें

लेखक: मिश्रीलाल जैन; प्रकाशक: श्री वीर निर्वाण ग्रंथ प्रकाशन समिति, ४८ सीतलामाता बाजार, इन्दौर । पृष्ठ: १२५; क्राउन १९७४; मूल्य: ३.०० रु. ।

प्रस्तुत कथा संग्रहमें जैन साहित्यकी चुनी हुई नौ कथाएँ हैं जिनमें नारी-जीवनके उज्ज्वल पक्षको अभिव्यक्त किया गया है । वस्तुतः भारतीय नारीका जीवन त्याग, शील, समर्पण और सत्यसे सुगन्धित है । पौराणिक एवं ऐतिहासिक कथाएँ लिखनेका मुख्य उद्देश्य यही होता है कि उन्हें पढ़कर व्यक्ति अपने सद्गुणोंका विकास करें तथा अपने कर्त्तव्योंके प्रति सजग रहे । कथाओंके द्वारा मनोरंजनके साथ साथ सद्प्रेरणा भी हो । वर्तमान कथा साहित्यमें भोग-विलास सम्बन्धी कुत्सा और यथार्थके नामपर अश्लील चित्रण जितना अधिक मात्रामें बढ़ रहा है वह वास्तवमें चिन्तनीय है ।

'सीता' नामक कथामें लेखकने उस प्रसंगका, जिसमें 'सीता' को श्री रामकी आज्ञासे वनमें पहुँचाया गया था, कितना सजीव वर्णन किया है, द्रष्टव्य है :— (पृष्ठ : ३९-४०) ।

"गोधूलि-बेला सिमटने लगी । अन्धकार घनीभूत होने लगा । बियावानमें रथ रुका । कृतान्त वक्त्रने कसमसाये स्वर में कहा—

"महारानी, निर्दिष्ट स्थान आ गया है ।"

और कुछ कहनेकी उसकी शक्ति चुक गयी । वह फूट-फूटकर रोने लगा ।

सीताने धीर-गम्भीर वाणीमें कहा— "अवधकी महाबलशाली सेनाके अधिपतिकी आँखोंमें आँसू शोभा नहीं देते । सेनापति सत्यको प्रकट करो । प्रभुका आदेश सुनाओ ।"

कृतान्त वक्त्रने पृथ्वीकी ओर देखकर कहा— 'माँ, सेवक होना संसारका सबसे बड़ा अभिशाप है । कैसे कहूँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माँ, कैसे सुनाऊँ वह कठोर राजाज्ञा ? हृदय विदीर्ण हो रहा है।"

धैर्यके सुदृढ़ सेतुपर बैठी सीताने अविचल भावसे कहा—"वत्स, सेवक अभिशापित नहीं होता, वह अनुशासित होता है। अभिशाप जीवनकी निकृष्टतम अवस्था है और अनुशासन पवित्र कर्त्तव्यनिष्ठा। कहो वत्स कहो, मेरे आराध्यका आदेश, निस्संकोच सुनाओ।"

लेखककी भाषाका यह एक उदाहरण है। सम्पूर्ण पुस्तक ऐसी ही भाषामें लिखी है। भाषा अत्यन्त मर्यादित तथा प्रवाहमयी है। लेखकने— मुंडिका, सीता, राजुल, चेलना, प्रभावती, अनन्तमती, काललदेवी नीली और मनोवती—शीर्षकसे नौ कथाएँ लिखी हैं। इन कथाओंमें सत्य और तथ्य दोनोंही हैं।

कथाओंमें जो रेखा चित्र दिये हैं वे आधुनिक शैलीमें हैं तथा आकर्षक हैं। इस सुन्दर प्रेरणाप्रद कथा-संग्रहके लिए प्रकाशक बधाईके पात्र हैं।

—त्रिलोकीनाथ व्रजबाल

संदर्भ ग्रन्थ

भारत ७३
भारत ७४

प्रकाशक: प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : भा. ७३—४६६; भा. ७४—४६०; रायल, ७३ और ७४; मूल्य: ८.०० रु. और ८.५० रु.।

भारत सरकारके सूचना और प्रसारण मंत्रालयका गवेषणा और संदर्भ विभाग १९५३ से भारत वार्षिक संदर्भ ग्रन्थ निकाल रहा है। आलोच्य ग्रन्थ भारत १९७३, संदर्भका २०वाँ संस्करण है जिसमें पहली बार चित्र दिये गये हैं।

इस ग्रंथमें स्वतन्त्राके २५ वर्षोंका सिंहावलोकन भी सम्मिलित किया गया है। साथही कई और सुधार भी किये गये है जैसे 'भूमि सुधार' अध्यायको 'कृषि' अध्यायमें, 'पिछले वर्ग' अध्यायको 'समाज' कल्याण अध्याय और 'सामुदायिक विकास' अध्यायको 'सहकारिता' अध्यायमें मिला दिया गया है। "भारत और संसार" अध्यायको सम्मिलित ही नहीं किया गया है। "राज्य और संघीय क्षेत्र" अध्यायको नये ढंगसे प्रस्तुत किया गया है।

यह ग्रंथ सरकारी सूत्रोंके सहयोगसे संकलित होनेके कारण अधिकृत जानकारी देता है किन्तु समयपर प्रकाशित न होनेके कारण अब अपना महत्त्व खोता जा रहा है। आलोच्य ग्रंथका १९७४ का अंग्रेजीका संदर्भग्रंथ बाजारमें आ गया है अत: अब १९७३ के हिन्दी संस्करणको कोई क्यों पूछेगा, जिसमें सामान्त: १९७२ के मध्यतककी जानकारी ही उपलब्ध है। इसप्रकार कहनेको हिन्दीका १९७३ उपलब्ध है लेकिन अनुपयोगी। हिन्दीका संदर्भ ग्रंथ उसी अवस्थामें उपयोगी सिद्ध हो सकता है जबकि वह अंग्रेजीके ग्रंथके साथही समयसे निकले। आशा है प्रकाशक इस बातका ख्याल रखेंगे।

× × ×

वार्षिक संदर्भ ग्रंथका अपना महत्व तभी है जब वह ज्यादासे ज्यादा नये वर्षके अप्रैल महीनेतक बाजारमें विक्रीके लिए आ जाये। क्योंकि इसमें राष्ट्रीय जीवन और प्रशासन तथा अर्थ व्यवस्थाके संबंधमें अधिकृत सूत्रोंके सहयोगसे संकलित सामग्री दी जाती है, अध्यापक, छात्र, जन-साधारण इसकी प्रतीक्षामें रहते हैं। किन्तु यह समयसे नहीं निकलता। इस ग्रंथकी प्रकाशन तिथि जुलाई १९७४ दी हुई है किन्तु यह बाजारमें वर्षकी अंतिम तिहाईसे पहले देखनेमें नहीं मिला। अब, जब बाजारमें उपलब्ध है तब वर्ष समाप्त हो रहा है और लोग नये वर्षकी प्रतीक्षा में हैं। दूसरे यह कि इसकी सामग्री भी अब पुरानी रहती है। आलोच्य ग्रंथमें सामान्यत: अप्रैल १९७३ तक के आँकड़े हैं किन्तु अधिकांश जानकारी १९७२ तक ही है। तीसरे यह कि अब इसमें सरकारी मंत्रालयोंकी अनावश्यक बातें इतनी भर दी गयी हैं कि जानने योग्य जरूरी बातों को खोजना पड़ता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी स्थितिमें अब यह आवश्यक हो गया है कि इस ग्रंथमें मूल रूपसे परिवर्तन करके इसे अनावश्यक विवरणों के बोझिल आंकड़ों और मंत्रालयोंके विस्तृत चिट्ठोंसे मुक्त करके छोटे किन्तु सारगर्भित संदर्भ ग्रंथका रूप दिया जाये। ऐसा करनेसे यह ग्रंथ छोटा तो हो ही जायेगा, किन्तु सबसे बड़ी बात यह होगी कि यह समयपर निकल सकेगा।

—म. मो. वर्मा

वैदिक-साहित्य

वैदिक वन्दन

लेखक : सत्यकाम विद्यालंकार; प्रकाशक : गोविन्द राम हासानन्द, ४४०८, नई सड़क, दिल्ली ६। पृष्ठ : २३६; क्रा. ७४; मूल्य : ७.०० रु.।

प्रस्तुत पुस्तकमें चारों वेदोंसे चुने हुए ११६ मंत्रोंकी सुबोध और सरल व्याख्या प्रस्तुत की गयी है। यह संकलपात्मक संकलन स्तुतिपरक, प्रार्थनापरक, ईश्वरीय आदेशात्मक, वन्दन, तात्त्विक शीर्षकोंके अन्तर्गत किया गया है। सर्वप्रथम मूल मंत्र पूरे निर्देशके साथ दिया गया है, नीचे शब्दार्थ दिया गया है और अन्तमें लगभग दो पृष्ठोंमें मंत्रके भावको सरल भाषामें खोलनेका सराहनीय प्रयत्न किया गया है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि विद्वान् लेखकने मन्त्रोंका गम्भीर मनन और मन्थन करनेके बाद ही यह प्रयास किया है।

इस संकलनमें मन्त्रोंका चुनाव करते समय यह बात ध्यानमें रखी गयी है कि वे जीवनको नयी प्रेरणा देनेवाले हों, और जीवनमें आस्था, उत्साह, गौरव और मानव-मात्रके लिए कल्याणकी भावना जगानेवाले सिद्ध हों। इसमें सन्देह नहीं कि निरन्तर अध्ययनसे ये मंत्र आध्यात्मिक आनन्द प्रदान करते हैं, आनन्दकी इस अनुभूतिसे समृद्ध जीवनकी ओर बढ़नेका संकल्प प्राप्त होता है।

संकलनके अनेक मन्त्र संध्या-हवनके दैनिक मन्त्रोंमें से हैं। केवल दैनिक शब्द-पाठके साथ मन्त्रका तत्त्व दूर रहता है। इन व्याख्याओंको हृदयंगम करनेके बाद दैनिक पाठसे जो आनन्दानुभूति होती है वह लोकोपयोगी कर्मके लिए प्रेरणा भी देती हैं। मन्त्रोंके भावोंका और उनकी व्याख्याका हमारे दैनिक जीवनसे कितना संबंध है, यह निम्न उद्धरणोंसे स्पष्ट हो जायेगा :

१. सत्यस्वरूप भगवान्के द्वारपर मन,वचन, कर्मसे सत्य निष्ठा होकर ही हम पहुंच सकते हैं। (पृ० २४)
२. अपने हृदय-मन्दिरमें आनन्दमय प्रभुको प्रतिष्ठित करो, आनन्दका झरना स्वयं प्रवाहित होकर चारों ओरके वन-उद्यानोंका अभिसिंचन कर देगा। प्यासी धरती तृप्त हो जायेगी। कुम्हलाये फूल खिल उठेंगे। काटि-कोटि मानवकण्ठोंसे आनन्दभरी स्वरगंगा स्वयं प्रवाहित हो उठेगी। (पृ० ३३)
३. विश्वकी भव्यता और सुन्दरता उसमें समाये मनमोहक प्रभुके कारण ही है। वही आदित्यमें ज्योति है, फूलमें सुगन्ध है, पानीमें शीतलता है। उषाकालकी स्वर्णिम आभामें वही है और ढलती सांझके सांवले रूपमें उसीकी सुषमा है। (पृ० ३७)
४. जो मनुष्य जगत्के मोहजालसे विरक्त होकर प्रभुसे अनुराग करते हैं, वे प्रभुकी वरुण नावपर सवार होकर लहरोंका आनन्द लेते हैं। समुद्रके ज्वार भाटेमें उठती गगनचुम्बी लहरें भी उनके लिए झूला बन जाती हैं। उनकी प्रभु-आश्रित नाव जीवनकी ऊंची-नीची लहरों पर सदा सुरक्षित तैरती रहती है। (पृ० ८७)
५. श्रद्धाके अनुरूपही मनुष्यका व्यक्तित्व बनता है। उसका चिन्तन, कार्यकलाप उसके अन्तरकी श्रद्धाके अनुरूप ही निर्मित होते हैं। श्रद्धाही मनुष्यको कर्मकी प्रेरणा देती है। और कर्मक्षेत्रके संघर्षोंमें उत्साहपूर्वक भाग लेने तथा जय-पराजयको धैर्यपूर्वक सहनेका निर्देश देती है। (पृ० ११८)

इन उद्धरणोंसे लेखककी काव्यात्मक शैलीका भी अच्छा परिचय मिलता है। वेद स्वयं काव्य है, काव्यात्मक शैली की व्याख्या मूल भावनाके अधिक निकट लानेमें समर्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती है। साथही, भावुक हृदयमें ऐसी भाषाकी पैठ अधिक गहरी होती है।

पुस्तक दैनिक स्वाध्यायके उपयुक्त है। हमें विश्वास है कि वैदिक साहित्यमें रूचि लेनेवाले श्रद्धालु ही नहीं, आध्यात्मिक स्तरपर प्रेरणा प्राप्त करनेके उत्सुक लोग भी इसका पारायण करना चाहेंगे।

—धर्मदेव विद्यामार्तण्ड

दर्शन शास्त्र

मूल्य-मीमांसा

लेखक : गोविन्दचन्द्र पांडे; प्रका०, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ए-२६/२, विद्यालय मार्ग, तिलक नगर, जयपुर ४। पृष्ठ : ३००; रायल,७३; मू० १५.०० रु.।

मूल्योंपर आज जिस रूपमें चर्चा की जा रही है उस रूपमें उनपर चर्चाका इतिहास सौ वर्षोंसे अधिक पुराना नहीं है। और, सौ वर्ष पुराना इतिहास तो विदेशमें होगा, मूल्य-विवेचनाका देसी इतिहास तो शायद अभी इतिहास बन भी नहीं पाया है। 'मूल्य' शब्दको आज दिन अवधारणाओं से संपृक्त किया जा रहा है उन अवधारणाओंकी दृष्टिसे स्वयं मूल्य शदब्का प्रयोग भी हालकी ही घटना है। सहसा इस शब्दने हमारे जीवनमें एक बहुत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है। कला और साहित्यके क्षेत्रमें भी इधर मूल्योंकी चर्चा की जाने लगी है। इस चर्चाका सूत्रपात संभवतः प्रोफ़ेसर रिचर्डसके प्रसिद्ध आलोचना-ग्रंथ 'प्रिंसिपल्स ऑव लिट्रेरी क्रिटिसिज्म' के प्रकाशन (सन् १९२४) से हुआ है। मूल्योंपर चर्चाके इस क्रममें क्रमशः बहुतसे प्रश्न उठे, यथा, मूल्य वस्तुनिष्ठ है या 'व्यक्तिनिष्ठ', या उसकी प्रतीति अन्योन्याश्रितकी स्थितिमें होती है; मूल्यकी साहित्यगत और साहित्येतर अवधारणाएं क्या-क्या हैं, और उनकी क्या संभावनाएं हो सकती हैं; मूल्य कितने प्रकारके हो सकते हैं और उनके वर्गीकरणके आधार क्या हैं; मूल्योंकी स्वतंत्र सत्ता होती है या वे परस्पर सापेक्षिकताकी स्थिति में अनुभूत होते हैं; मूल्य शाश्वत हैं या परिवर्तनशील या दोनों प्रकारके; और यदि परिवर्तनशील भी हैं तो उनमें परिवर्तनके कारण क्या हैं; साहित्यके क्षेत्रमें सौंदर्य-मूल्यों और मानव-मूल्योंका संबंध क्या है, उनकी रचना-प्रक्रियाका स्वरूप क्या है, आदि।

मोटे तौरपर 'मूल्य' को एक 'प्रतिमान' या 'आदर्श' के रूपमें समझा जा सकता है। प्रतिमानोंकी प्रामाणिकता और संगतिके निर्धारणकी अनेक विधियां और शर्तें हैं। निश्चयही जीवनको निर्दिष्ट करनेवाले प्रतिमान और आदर्श तो मानव-इतिहासमें पहले भी रहे हैं, हलांकि उनकी अभिधा 'मूल्य' नहीं रही है। उदाहरणके लिए, विवेच्य ग्रंथके लेखकके अनुसार कठोपनिषद्‌में 'मूल्य' के लिए 'अर्थ' शब्द का प्रयोग किया गया है, और इस 'अर्थ' का नैरुक्तक अर्थ है: प्राप्य (पृ० ५)। उक्त दृष्टिसे मूल्य-विवेचन मानवकी गत्यात्मकताका विवेचन माना जा सकता है।

पिछले प्रायः ५० वर्षोंमें पाश्चात्य विद्वानोंकी स्वतन्त्र रूपसे मूल्य संबंधी कई अच्छी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनमें मूल्योंका विवेचन भिन्न-भिन्न दृष्टियोंसे किया गया है। 'मूल्य -मीमांसा' हिन्दीमें प्रकाशित होनेवाली मूल्य विवेचन विषयक कदाचित् पहली स्वतंत्र पुस्तक है, और इस दृष्टिसे इसका अपना महत्त्व है। इसमें मूल्यकी अवधारणाका ऐतिहासिक, तुलनात्मक और तात्त्विक विवेचन है। वैसे, ग्रंथके विद्वान लेखकके अनुसार, प्रस्तुत पुस्तकमें शुद्ध प्रत्यय और सांस्कृतिक अनुभूतिके द्वन्द्वात्मक संबंधको बुद्धिस्थकर मूल्य-मीमांसाका प्रयास किया गया है।' (आमुख)

विवेच्य ग्रंथ एक सत्रह पृष्ठीय परिशिष्टके अतिरिक्त कुल नौ अध्यायोंमें विभक्त है। पहले अध्यायका विवेच्य है: 'मूल्य चिन्तनका विकास।' २९ पृष्ठोंके इस अध्यायमें मूल्य-बोध और मूल्य-मीमांसाके उद्‌गमकी भारतीय और पाश्चात्य परंपराओंका उनकी आधुनिक प्रवृत्तियों तक परिणतिके संदर्भ में ऐतिहासिक विवेचन है। भारतीय चिंतन परंपरामें 'पुरुषार्थ चतुष्ठय'के विकासकी पृष्ठभूमिके सूत्रोंकी खोज यहां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष द्रष्टव्य है। आधुनिक प्रवृत्तियोंका विवेचन अपूर्ण और संक्षिप्त है। विज्ञान और प्रविधिके इस युगमें मूल्योंकी संक्रांति और परंपरागत मूल्योंके विघटनकी स्थितियां क्यों और कैसे उत्पन्न हुईं, स्वतन्त्रता, समता और व्यक्तित्वकी संपन्नता जैसे मूल्य किन स्थितियोंमें विकसित हुए और आज उनकी स्थितिको विद्वान और चिंतक किस रूपमें लक्षित कर रहे हैं, इनपर भी विवेचन यहां अपेक्षित था।

दूसरे अध्यायका शीर्षक है: 'मूल्य-बोधका उद्गम: पर्येषणा'। यह अध्याय भी २९ पृष्ठोंका है। लेखकके अनुसार मूल्य-प्रत्ययके तीन घटक-तत्त्व हैं: एषणा, विवेक और स्वतंत्रता (पृष्ठ ३१)।' यथाप्राप्त विषयोंके अंतरालसे आदर्श विषयोंकी खोज—यही मनुष्यका मनुष्योचित जीवन है और यही मूल्यान्वेषण और पर्येषणा है' (पृ०३०)। यहीं लेखकने संक्षेपमें मूल्यानुभवकी विषय-विषयी सापेक्षताका प्रतिपादन किया है। प्रश्न उठाया गया है कि मूल्य ज्ञानात्मक है या भावात्मक? पहली दृष्टिसे मूल्य स्वयंमें साध्य है और दूसरीमें साधन। लेकिन यह वक्तव्य उचित नहीं है। लेखकने प्रश्नका उत्तर यह दिया है कि मूल्य -प्रत्यय एक ऐसा विषय-विषयीभावका संकेत करता है जिसमें विषय अपने तात्त्विक रूपमें इष्ट विषयी-स्वतंत्र होता है, और दोनोंका साध्य-साधक संबंध होता है' (पृ० ३५ और ३१, क्रमश:)। उक्त दोनों अध्यायोंका एक संक्षिप्त परिशिष्ट है।

तीसरे अध्यायका शीर्षक है: 'मूल्योंके भेद और भूमियां'। परिशिष्ट सहित यह २५ पृष्ठोंका है। इसमें मूल्य-बोधकी गत्यात्मकताका संक्षिप्त विवेचन करते हुए मूल्योंके व्यावहारिक, आदर्श और पारमार्थिक नामक तीन भेद बताये गये हैं। इन मूल्यों-भेदोंमें तारतम्य निरूपण और तारतम्यके आधारोंका भी विवेचन है। अध्याय चार, पांच और छ: में क्रमश: व्यावहारिक, सात्त्विक और नैतिक मूल्योंका तात्विक और तुलानात्मक अध्ययन किया गया है। व्यवहारिक मूल्य जिजीविषा, सुखैषणा, समता, स्वतंत्रता आदि हैं, और सात्त्विक मूल्य सौंदर्य आदि। व्यावहारिक और सात्त्विक मूल्योंका अंतर यह है कि 'व्यवहारमें कर्म अहंकारमूलक और भोगावसानिक होता है जबकि सात्त्विक भूमिमें कर्म निजी अहंकार एवं भोगसे असम्बद्ध सोता हैं (पृ० १३१)। ये तीनों अध्याय ५६ पृष्ठोंके हैं।

सातवां अध्याय 'सौंदर्य-बोध और कला' से संबंधित है। पुस्तकमें सबसे बड़ा अध्याय यही है, ४१ पृष्ठोंका। इसमें शुद्ध कलात्मक मूल्योंकी तुलनात्मक मीमांसाके साथ सौंदर्य-सृजन एवं बोधकी अनेक समस्याओंका विवेचन है तो अवश्य, लेकिन विवेचनका ढंग सर्वथा परंपरित है, और विवेचन स्वयंमें भी अपूर्ण और एकांगी है। आठवें अध्यायमें 'सत्यकी खोज' शीर्षकके अंतर्गत सत्य, ज्ञान, धर्म आदिकी अवधारणाओं और उनके तारतम्यका संक्षेपमें निरूपण है। नवां अध्याय उपसंहार है, जिसमें लेखक मूल्यको साध्यसे अभिन्न ठहराता है। (पृ० २५३)। अंतमें परिशिष्ट है, जिसमें 'मानव पर्येषणा और दर्शनिक विमर्श' तथा 'सतके दो पक्ष-वस्तु और मूल्य'-इन दो शीर्षकोंके अंतर्गत मूल्य संबंधी कतिपय अन्य समस्याओंका विवेचन है। अंतमे सहायक ग्रन्थोंकी सूची, नामानुक्रमणिका, विषयानुक्रमणिका, और शुद्धि-पत्र दिये गये हैं।

जैसा ऊपर कहा गया, मूल्य विवेचनपर हिन्दीमें प्रथम स्वतंत्र प्रकाशित ग्रंथ होनेके कारण विवेच्य ग्रंथका अपना महत्व है। लेकिन ग्रंथ एक सीमातक ही उपयोगी है, और इसके दो कारण हैं: एक यह कि इसमें मूल्यकी अवधारणा का ऐतिहासिक-तुलनात्मक-तात्त्विक विवेचन सिद्धांतके स्तर पर किया गया है, और वह भी एक सीमित रूपमें। व्यक्ति और परिवेश, यथार्थ और आदर्शके परस्पर घात-प्रतिघातसे मूल्योंकी संक्रांति, संक्रमणशीलता, उनके विघटन और नये मूल्योंके सृजनकी स्थितियोंका क्या स्वरूप हुआ करता है, इसपर विद्वान लेखकके 'आमुख' में वक्तव्यके बावजूद, विवेचन प्राय: नहींवत् है, और मूल्य विवेचनका यह पक्ष भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं होता। इसके अतिरिक्त, आज अनुभव किये जानेवाले अनेक मूल्योंका विवेच्य ग्रंथमें नामोल्लेख तक नहीं है। उदाहरणके लिए, 'दायित्व-बोध'। 'दायित्व-बोध' भी स्वयंमें मूल्य है, और बहुत महत्त्वपूर्ण मूल्य है। 'स्वातंत्र्य-बोध' के साथ इसकी अनिवार्य स्थिति है, और मानी जानी चाहिये। 'स्वातंत्र्य बोध' भी मूल्य है, लेकिन दायित्व-बोधके अभावमें क्या उसकी मूल्यवत्ता स्वीकार की जा सकेगी? दूसरा कारण पुस्तककी अत्यंत दुर्बोध, क्लिष्ट, अनेक स्थानोंपर अशुद्ध और उबाऊ भाषा शैली है। शास्त्रीय विवेचनमें भाषा-शैलीकी स्पष्टता-ऋजुताका अपना स्थान है। लेकिन यहां इसपर कोई ध्यान नहीं दिया गया है। नतीजा यह है कि कथ्य एक अजब वाग्जालमें उलझकर रह जाता है। अब जैसे यह वाक्य लीजिये: 'आत्म-संबद्ध अभावका बोध पुरस्कृतकर फल-ज्ञान-जन्य संस्कारोंसे प्रभावित होकर फल-प्राप्ति विषयक एषणाका उदय होता है जो साधना-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्मक कर्मके द्वारा भोग उपनीत करती है और भोगविषयक तात्कालिक अथवा कालान्तरीय असंतोष-विमर्श पुनः एषणान्तरके उदयका कारण बनता है।' (पृ०७०)। इसमें समझ पाना कठिन है कि लेखकका मंतव्य क्या है। सारे ग्रंथमें स्थान-स्थानपर इसीप्रकारके लम्बे-लम्बे उलझे वाक्य, सर्वथा अप्रचलित क्लिष्ट तत्सम शब्द, जिनके लिए दूसरे सरल शब्द आसानीसे मिल सकते थे, गलत वाक्य, गलत और निरर्थक शब्द और वाक्य-समूह भरे पड़े हैं, जो ग्रंथकी सार्थकताको नष्ट कर देते हैं। अन्यथा विवेच्य ग्रंथका प्रकाशन स्वागत-योग्य है।

—डॉ० प्रेमकान्त टंडन

नीति दर्शनकी पूर्वपीठिका

ले० थामस हिल ग्रीन; अनु. सगमलाल पांडेय; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : ३८८; रायल, ७२; मू० २०.०० रु.।

'नीति-दर्शनकी पूर्वपीठिका' टामस हिल ग्रीनकी विख्यात और समादृत अंग्रेजी पुस्तकका हिंदी अनुवाद है। इसमें नीतिशास्त्रके कुछ मौलिक प्रश्नोंपर प्रत्ययवादी दृष्टिकोणसे नया प्रकाश डाला गया है। नीतिशास्त्रका मुख्य प्रश्न यह है कि यदि मनुष्य भी उसी जगतका एक भाग है जिसके सामान्य नियमोंके अनुसार परस्पर क्रिया और प्रतिक्रिया करनेवाली अन्य वस्तुएँ और विषय हैं तो मनुष्यको नैतिक दृष्टिसे स्वतंत्र कहना असम्भव है। ऐसा इसलिए प्रतीत होता है कि अनुभव और भौतिक विज्ञानमें प्रायः उस तत्त्वकी उपेक्षा की जाती है जो हमारे सारे ज्ञानमें सदा मौजूद रहती है। ग्रीनके अनुसार हमारे नैतिक ज्ञानमें वे मूल तत्त्व निहित हैं जिनके आधारपर मनुष्यकी नैतिक स्वतंत्रता और ईश्वरके अस्तित्वकी मान्यताओंको स्थापित किया जा सकता है।

लेखकने यह दिखानेका प्रयास किया है कि स्वतंत्रता किस अर्थमें मानवके कर्ममें सामान्यतः उपलब्ध होती है। लेखकने सुखवादी धारणाका खंडन करते हुए यह प्रतिपादित किया है कि नैतिक आदर्श मानवकी शक्तियोंकी सम्पूर्ण उपलब्धि और तृप्ति है। मनुष्य इस जगतका एक विशेष विषयमात्र नहीं है। वह ज्ञानका विषयी है और वह नैतिक सत्ता भी है जो अपने साथ-साथ सारे विषयोंको उस सम्पूर्णताके संबंधमें जान सकता है जिसमें वह स्वयं भी शामिल है।

पूर्वपीठिकाके अन्तिम दो खंडोंमें लेखकने नैतिकताके व्यावहारिक मूल्योंका विवेचन किया है और यह दिखानेका प्रयास किया है कि उसका मत अन्य मतोंसे किस अर्थमें अधिक उपयुक्त और समीचीन है और किसतरह हमें अपने कर्मोंके न केवल परिणामोंके बारेमें वरन् कर्मोके कारणपर भी विचार करनेमें समर्थ बनाता है।

अनुवाद अच्छा है और अनुवादकी भाषा सुघड़ है। किंतु कहीं-कहींपर वाक्य विन्यासमें कुछ जटिलताजन्य दुरुहता पायी जाती है। यदि वाक्य विन्यास कुछ कम संश्लिष्ट होता तो इस दुरुहतासे बचा जा सकता था।

— मधुकर

सैन्य विज्ञान

भारतीय सेना और युद्ध कला

ले० कर्नल गौतम शर्मा; प्रका० राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६। पृष्ठः २३२; डिमा, ७३; मू० १५.०० रु०।

भारतीय सैन्य पद्धति

ले. देवदत्त शास्त्री; प्रका. स्मृति प्रकाशन, ६१, महाजनी टोला, इलाहाबाद। पृष्ठ : १६७, डिमा, ७३; मू. १०.०० रु०।

भारतका सैनिक इतिहास

लेखक और प्रकाशकः उपर्युक्त। पृष्ठः ३२०; डिमा, ७३, मू० १८.०० रु.।

देशकी स्वतंत्रताके पिछले २५ वर्षोंमें हमें कई बार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शत्रुओंका सामना करना पड़ा है। इन अवसरोंपर हमें जय-पराजय, सफलता-असफलता दोनोंका सामना करना पड़ा है। गुलामीकी जंजीरोंको तोड़कर उदित होनेवाले नवराष्ट्रके लिए यह शुभ लक्षण था, क्योंकि इससे हमें अपने पैरोंपर खड़े होनेका अवसर मिला। १९६२ में चीन द्वारा भारतपर हमला होनेपर प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरूको बड़ा धक्का लगा था क्योंकि वे सदा 'भारत-चीन मित्रता' के सपने लेते रहे थे। वास्तवमें हम तभी चौंके थे और हमने देशको सैनिक दृष्टिसे आत्मनिर्भर बनानेकी आवश्यकता अनुभव की।

तभीसे सैनिक इतिहासमें रूचि ली जाने लगी है और इस दृष्टिसे विचार होने लगा है कि किसके पास कैसे हथियार हैं उन हथियारोंकी कितनी मार शक्ति है तथा उन हथियारोंका सामना करनेके लिए किस-किस प्रकारके हथियार प्राप्त करने होंगे।

आलोच्य पुस्तकें ऐसे पाठकोंके लिए लाभप्रद हैं जो भारतके सैनिक इतिहासके बारेमें जानकारी चाहते हैं। 'भारतीय सेना और युद्ध कला' लेफ्टिनेंट कर्नल गौतम शर्मा की प्रसिद्ध पुस्तक 'इंडियन आर्मी थ्रू एजेज' का संशोधित एवं परिवर्धित हिन्दी रूपांतर है। इसमें उन्होंने वैदिक कालसे आजतक न केवल भारतीय सेनाके विकासका विधिवत् इतिहास दिया है अपितु भारत भूमिपर आजतक लड़े गये सभी प्रमुख युद्धोंके विश्लेषणपूर्ण अध्ययनसे देशकी युद्ध-कलापर समुचित प्रकाश डाला है।

आलोच्य पुस्तकसे यह स्पष्ट है कि भारतीय सेनाकी अपनी अलग परम्पराएँ रही हैं और उनके विकासका एक लम्बा इतिहास है। भारतीय युद्ध-नीति और सामरिकीकी अपनी आचार-संहिता भी है जिसका स्तर बहुत ही उच्च रहा है। इसका मुख्य कारण मानवीय धार्मिक वृत्ति रही है। भारतीयोंने युद्धके दौरान कभी निम्न स्तरके तरीके नहीं अपनाये, बल्कि उन्होंने हर स्थितिमें मानवकी प्रतिष्ठा की सदा रक्षा की।

प्राचीन भारतके दो महान विजेताओं अशोक और समुद्रगुप्तके कालमें जो युद्ध नियम लागू थे उनमें मानवीय प्रतिष्ठाका पूरा ध्यान रखा जाता था। युद्धमें तलवार तलवार से, भाला भालेसे और गुर्ज गुर्जसे ही टकराते थे। साथही वास्तविक युद्ध शुरू होनेसे पूर्व विरोधीको सचेत करनेका भी रिवाज था।

देशमें सन् १००० तक तीर-कमान, तलवार, भाला और कुल्हाड़ीका ही आम इस्तेमाल होता था। भारतीय एक लम्बी बेलनाकार नलीमें बारूदका इस्तेमाल अवश्य करते थे किन्तु देशकी धरतीपर तोपखानेका प्रयोग पहली बार बाबरने इब्राहिम लोदीकी विशाल सेनाके विरुद्ध किया था। कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि इसी युद्धमें भारत की धरतीपर मुगलोंके पैर जमे थे। तोपखानेके प्रयोगने व्यूह-बद्ध लड़ाइयोंमें क्रांति पैदा कर दी। इसके साथही मुगलोंने घुड़सवार सेनापर जोर दिया क्योंकि उन्हें दूर-दूरके क्षेत्रोंमें नियमित लड़ाईयां लड़नी पड़ती थीं। बादमें उन्होंने पूर्वी भारतमें नौ सेना भी रखी।

मराठोंकी भी युद्ध कलामें विशिष्ट देन है और वह है छापामार युद्ध। मेवाड़के राजपूतोंने भी छापामार युद्ध प्रारम्भ किये थे किन्तु मराठे एक नवीन जागृतिके प्रतीक बन गये। इसके साथ ही मराठोंने उन यूरोपीय सैनिकोंका भी इस्तेमाल किया जो ईस्ट इंडिया कम्पनीकी नौकरी छोड़कर पैसा इक्ट्ठा करनेमें लग गये थे। इससे मराठा सेनामें कवायदके तथा अन्य प्रकारके नये तरीके प्रचलित हुए।

सिक्ख भी लगभग १०० वर्षतक सैनिक शक्तिके रूपमें संगठित रहे, किन्तु अपने नेताओंकी देशघाती नीतियोंके शिकार हुए। १८५७ के प्रथम स्वाधीनता संघर्षके कुछ वर्ष पूर्व सिक्ख शक्ति तोड़ दी गयी थी और सिक्ख ब्रिटिश राज्यके वेतनभोगी सैनिक बन गये थे।

लेखकने युद्धोंके विश्लेषणपूर्ण अध्ययनोंसे यह निष्कर्ष निकाला है कि भारतीयोंकी सबसे बड़ी कमजोरी गतिशीलताकी कमी रही है। प्राचीनकालमें रथ और घोड़े काममें लाये जाते थे। किन्तु वे सामरिक श्रेष्ठताके स्थानपर शान और दिखावेके लिए अधिक होते थे। सिकन्दर और चन्द्रगुप्त अपनी सशस्त्र घुड़सवार सेनाके कारण ही जीते थे। इसीप्रकार भारतीय सेनामें हाथीको एक अभेद्य दुर्गके रूपमें खड़ा किया जाता था किन्तु सशस्त्र घुड़सवारोंके जोरदार हमलोंके सामने उन्होंने अपने ही पक्षको ज्यादा हानि पहुंचायी थी। मुगल सेनामें गतिशीलता थी किन्तु उसमें विदेशी तत्त्व समा रहा था और अभियानों के समय उसके साथ हरम रहता तथा साथमें विशाल रसद विभाग भी चलता जिससे गतिशीलता तो कम हो ही जाती थी, असुविधा भी कम नहीं होती थी। मराठे छापामार युद्धके कारण शुरुमें सफल हुए किन्तु राजकीय सत्ता प्राप्त होते ही सुविधा और आरामकी आदत पड़ गयी।

हाइडेस्पीज युद्धके अध्ययनसे स्पष्ट है कि पुरूके पास संख्यामें शत्रुसे घुड़सवारोंको छोड़कर ४:१ के अनुपात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की श्रेष्ठता थी (पृष्ठ ४२), किन्तु फिरभी सिकन्दर जीता और पुरू हारा। सन् ७१२ के देवल युद्धमें मुहम्मदके पास बहुत कम सैनिक थे किन्तु अपने श्रेष्ठ तरीकोंसे उसने राजा दाहरको हराया था। (पृष्ठ ५०)। गजनीका महमूद सन् १००१ में राजा जयपालको अपने घुड़सवारोंके कारण ही हरा सका (पृष्ठ ५०)। हमारी सेनाके हारनेके कारणोंमें एक कारण शौर्य सम्बन्धी हमारे नियम भी रहे हैं जो दोषपूर्ण होनेकी सीमा तक उदार हैं (पृष्ठ ६४)। इसका सबसे बड़ा उदाहरण पृथ्वीराजने प्रस्तुत किया। उन्होंने मुहम्मद गोरीको तरावड़ीकी पहली लड़ाईमें स्वयं घायल किया और बचकर निकल जाने दिया किन्तु गोरीने दूसरी लड़ाईमें पृथ्वीराजके बन्दी हो जानेपर उसे मरवा डाला (पृष्ठ ६४)। इसीप्रकार आलोच्य पुस्तकमें बहुत-सी जानकारी भरी पड़ी हैं

× × ×

देवदत्त शास्त्रीकी पुस्तकें उपर्युक्त पुस्तकके मुकाबलेमें हल्की हैं। 'भारतका सैनिक इतिहास' में भी वैदिक कालसे लेकर १९७१ तकके संग्रामोंका वर्णन है। लेखकने यह पुस्तक हजारों पृष्ठोंमें लिखी थी और हजारों चित्र भी एकत्र किये थे किन्तु प्रकाशनमें रुकावटें आ जानेसे उन्होंने उसका संक्षिप्तीकरण कर दिया, जिससे वह प्रकाशमें आ सके। संक्षिप्तीकरणके कारण पाठक बहुत-सी जानकारीसे वंचित हो गये और चित्रोंके अभावमें पुस्तकका मजा चला गया। इतना होते हुए भी पुस्तकमें काफी जानकारी है। रामायण काल, महाभारत काल, नन्द-मौर्य काल, शुंग-सातवाहन युग और मध्य युग कालके युद्धों व सामरिकीका अध्ययन लगभग १५० पृष्ठोंमें किया गया है। ब्रिटिश कालके युद्धोंका वर्णन नगण्य है। तत्पश्चात् १९६२ के चीनके साथ हुए संघर्षका विस्तृत वर्णन करनेके साथ, पाकिस्तानके साथ हुए संघर्षोंका अध्ययन है। यह अध्ययन अधिकतर वर्णनात्मक शैलीमें है और कहीं-कहीं ऐसा प्रतीत होता है कि केवलमात्र पृष्ठ-संख्या बढानेके लिए वर्णनका विस्तार किया जा रहा है।

"भारतीय सैन्य पद्धतिमें भारतीय सैन्य व्यवस्था और व्यूह रचनाका अध्ययन है। इसमें प्रूफोंकी इतनी गलतियां हैं कि जो प्राचीन शब्द शुद्ध हैं उनपर भी विश्वास नहीं होता। इसमें लगभग ९५ पृष्ठोंमें वैदिक कालसे लेकर महाराजा रणजीतसिंहकी सेनातकका अध्ययन है शेष लगभग ७० पृष्ठोंमें ब्रिटिश कालका अध्ययन है।

तीनों ही पुस्तकें सैनिक इतिहासमें रुचि लेनेवाले पाठकोंके लिए प्रचुर सामग्री प्रस्तुत करती हैं आशा है इनका स्वागत होगा।

—प्रेमकृष्ण टंडन

किशोर-बाल साहित्य

समीक्षक : डॉ० हरिकृष्ण देवसरे

सिंह

लेखक : रमेश बेदी ; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली—१। पृष्ठ: ५८, क्रा. दुगना ७३; मू. ३.२५ रु.।

सिंह जितना शिकारियों, वन-विहारियों और पर्यटकोंके लिए आकर्षक है, उससे कहीं अधिक वह बच्चोंके लिए है। शायद इसलिए कि बच्चे सिंहके बारेमें अनेक कहानियाँ सुनते हैं और उसके बारेमें अनेक जिज्ञासाभरे प्रश्न उनके मस्तिष्कमें घूमते रहते हैं। सर्कस या चिड़ियाघरमें सिंहको देखनेका जो आनन्द बच्चे लेते हैं, वह शायद बड़े नहीं ले पाते। स्वाभाविक है कि सिंहके बारेमें लिखी पुस्तकके प्रति भी बच्चोंके मनमें उतना ही आकर्षण हो, जितनाकि सिंहको प्रत्यक्ष देखनेपर। रामेश बेदीने इस पुस्तकमें भारतीय पौराणिक साहित्यमें सिंह महिमा, भारतीय कलामें सिंहका चित्रांकन तथा सामाजिक जीवनमें सिंहके प्रतीकोंके प्रयोगकी चर्चाकर पुस्तकको आरम्भसे रोचक और ज्ञानवर्धक बनानेका प्रयत्न किया है। इसके बाद सिंहोंके निवास और उनकी संख्याके विवेचनमें यह भी स्पष्ट किया है कि हमारे यहां सिंहोंकी रक्षाके लिए क्या प्रयत्न किये जा रहे हैं और किन जंगलोंमें तथा कब सिंह देखे जा सकते हैं। वैसे गीर-वन तो प्रसिद्ध है ही, क्योंकि वहां सिंहोंको अभयदान मिला है। सिंहकी आदतोंका विवेचन अत्यन्त रोचक है जो बच्चों और बड़ों—सभीके लिए पठनीय है। लेखकने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरल, रोचक शैलीमें, अपने कुछ निजी संस्मरणों तथा कुछ कथाओंके आधारपर विषय-वस्तुको बड़े अच्छे ढंगसे प्रस्तुत किया है और इसके लिए वे बधाईके पात्र हैं। पुस्तकमें सिंहसे सम्बन्धित चित्र भी दिये गये हैं जो कथ्यको उजागर करते हैं।

जंगलकी कहानी

मू० ले० जैक लंडन; अनु. श्रीकांत व्यास; प्रकाशक: शिक्षा भारती, दिल्ली। पृष्ठ : ७९; क्रा., ७३; मू० २.०० रु.।

जैक लंडनके प्रसिद्ध उपन्यास 'काल ऑफ दि वाइल्ड' का यह रूपांतर अत्यंत रोचक है। इसमें एक ऐसे कुत्तेकी कहानी है जिसे एक नौकर एक दिन एक व्यापारीको बेच देता है। वह कुत्ता कितनी यातनाएं सहता है और किस तरह यहांसे वहां भटकता-घूमता है—इसे लेखकने बड़ी कुशलतासे चित्रित किया है। कुत्तेकी वफ़ादारी, समझ और आदतोंका भी अच्छा परिचय प्रस्तुत किया गया है। बच्चोंको कुत्ता पालनेका बहुत शौक होता है। यह कहानी इस पालतू जीवके प्रति उनके हृदयमें संवेदना जगायेगी। रूपान्तर बहुत अच्छा हुआ है। भाषा सरल और बोधगम्य है। बच्चोंके लिए इस प्रकारके उपन्यासोंका स्वागत है।

मोबी डिक

मू० ले० हरमन मेकविल; रूपान्तर : श्रीकांत व्यास; प्रकाशक : शिक्षा भारती, दिल्ली। पृ० १००; क्रा० ७३; मू० २.०० रु.।

मोबी डिक एक ह्वेलका नाम है जिसके शिकारकी रोमांचक गाथा प्रस्तुत की गयी है। समुद्री शिकारियोंकी कहानियां अत्यन्त रोचक होती है। उनका जीवन कैसा होता है, वे किसतरह शिकार करते हैं; ह्वेलका शिकार कितना जोखिम भरा होता है—आदि बातोंपर इस उपन्यासमें बड़ी सुन्दरतासे प्रकाश डाला गया है। पूरा उपन्यास एक रोमांचक साहसकथा है। इसमें समुद्रयात्रा, शिकार और रोमांचका सुन्दर सम्मिश्रण हुआ है। हिन्दीमें ऐसे उपन्यासोंका स्वागत है। रूपान्तरकी भाषा प्रवाहमयी है। स्थान-स्थानपर दिये गये चित्र कथाको रोचक बनाते हैं।

सप्त-सरिता

लेखक : काका कालेलकर; प्रकाशक : सस्ता साहित्य मंडल, कनाट सरकस, नयी दिल्ली। पृष्ठ : १०७; क्रा० ७३; मू० ३.०० रु.।

'सप्त सरिता' में तेरह नदियोंकी कहानी हैं। पुस्तकके नामकरणके औचित्यको बताते हुए लेखकने भूमिकामें लिखा है—"यहाँ कुल नदियोंकी संख्या बारह हो या पन्द्रह, इस किताबका नाम तो 'सप्तसरिता' ही रहेगा और अपने सब नदी-भक्त पूर्वजोंकी दलीलका उपयोग करके कहूँगा कि भारतकी सब नदियां इन सातोंके भिन्न-भिन्न अवतार ही हैं।" भारतीय नदियोंके पौराणिक, धार्मिक महत्त्व, उनके प्राकृतिक सौन्दर्य तथा उनके यात्रा-पथका वर्णन काका साहेबने अपनी प्रभावकारी शैलीमें बड़े सुन्दर ढंगसे किया है। किन्तु शैली सौन्दर्य और भावनाओंके प्रवाहमें सभी नदियोंके भौगोलिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और आज उनके जलसे बननेवाले बाँध तथा उत्पन्न होनेवाली बिजली जैसे महत्त्वपूर्ण और उपयोगी तथ्य छूट गये हैं। वस्तुतः यह पुस्तक काका साहेबकी पूर्व प्रकाशित पुस्तक 'जीवनलीला' (प्र० नवजीवन ट्रस्ट) के कुछ अध्यायोंका संकलन है—केवल भूमिका और कुछ पृष्ठ ही नये हैं। यदि लेखक नहीं, तो कमसे कम संपादकका तो यह कर्त्तव्य था ही कि वह पुस्तकको आजके पाठकोंके लिए उपयोगी बनाने हेतु सन् १९२४ और १९२६ के लिखे लेखोंका आवश्यकतानुसार परिवर्द्धन करता। काका साहेबका हिन्दी जगतमें आदर है, इसलिए मात्र व्यावसायिक दृष्टिकोण अपनाकर उनकी किसीभी कृतिको किसीभी रूपमें, बिना उसकी उपादेयता और सामयिक सन्दर्भमें मूल्यांकन किये ही छाप देना लेखकके प्रति अन्याय है। आश्चर्य तो यह है कि स्वयं काका साहेबने भी भूमिका लिखते समय इसका विरोध क्यों नहीं किया या संशोधनकी आवश्यकता क्यों नहीं समझी। इतना ही नहीं, जब भारतकी महत्त्वपूर्ण नदियोंके बारेमें लिखा जा रहा है तो लेखकका यह कहना, "गुजरातके वाशिंदोंके सामने उन्हींके प्रदेशकी नदियोंके बारेमें क्यों लिखूँ? यह काम गुजरातके सुपुत्रोंका है," खटकता है। 'साबरमती' की कहानीका अभाव खटकता है और पुस्तक को अपूर्ण बनाता है। इस तरहके बयानोंसे लेखकको बचना चाहिये था—क्योंकि पुस्तक पढ़नेवाला जिन आशाओंसे उसे उठाता है, उससे उसे बहुत निराशा होती है—विशेषकर तब जबकि उसके मनमें नदियोंके बारेमें कई महत्वपूर्ण प्रश्न अनुत्तरित ही रह जाते हैं। पुस्तककी उपादेयतापर इसी कारण संदेह होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक देश : एक हृदय

लेखकः विष्णु प्रभाकर ; प्रका. प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस नयी दिल्ली-१ । पृष्ठः १७४, क्रा. दुगना ७३; मू. ५·०० रु. ।

आज देशमें अट्ठाईस प्रांत हैं । इन सभीका अपना ऐतिहासिक गौरव है, अपनी सामाजिक सांस्कृतिक और लोकजीवनकी परम्पराएं हैं । फिरभी इस विभिन्नतामें एकता है । प्रस्तुत पुस्तकमें देशके सभी प्रदेशोंका संक्षिप्त किन्तु सम्पूर्ण परिचय दिया गया है । प्रत्येक प्रदेशकी भौगोलिक स्थिति, उसका इतिहास, जनजीवन, आर्थिक और वैज्ञानिक प्रगति आदिका ब्यौरा देकर पुस्तकको उपादेय बनाया गया है । यथास्थान चित्र भी दिये गये हैं । किन्तु प्रत्येक अध्याय का शीर्षक जितना आकर्षक, उनका विषय-वस्तु-विवेचन उतना ही शुष्क है । इसीलिए पूरी पुस्तक पढ़ जानेके बाद ऐसा लगता है मानो किसी कक्षाकी 'सामाजिक विज्ञान' की पाठ्य-पुस्तक पढ़ी हो । भाषामें भी दुरूहता आ गयी है । अच्छ होता कि पुस्तकको रोचक बनानेका भी प्रयास किया जाता । अपने वर्तमान रूपमें पुस्तक ज्ञानवर्धक अवश्य है किन्तु रोचक और मनोरंजक नहीं ।

यह गाथा वीर जवाहरकी

लेखकः कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर; प्रकाशकः प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी-दिल्ली १ । पृष्ठः ७६; क्रा० दुगना ७३; मू० ३.०० रु. ।

बच्चोंके चाचा नेहरूकी गाथा और उसके प्रसंग अत्यंत प्रेरक हैं । नेहरूजीके जीवनकी यह गाथा अत्यन्त मौलिक ढंगसे लिखी गयी है । इसमें एक ओर जहां जीवनके सभी महत्वपूर्ण तथ्यों, घटनाओं और उनके प्रति नेहरूजीके स्वयं के विचारोंका समावेश किया गया है, वहीं यह भी ध्यान रखा गया है कि बच्चोंके लिए जीवन-कथाका कौन-सा प्रसंग अधिक रोचक एवं प्रेरक होगा । चयनकी इस दृष्टिने पुस्तकको पूर्णतः बालोपयोगी बना दिया है । पूरी कथाको जिस सरल और धाराप्रवाह शैलीमें कहा गया है— वह मिश्रजीकी अपनी विशेषता है । इससे भी विशेष बात यह है कि तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों और संदर्भोंका विवेचन उन्होंने इस कुशलताके साथ कथामें पिरोया है कि बच्चोंको वह बिना किसी अतिरिक्त परिश्रमके ही ग्राह्य बन गया है । जीवन चरित्र लिखनेकी एक सफल शैलीके रूपमें इस पुस्तकका उदाहरण दिया जा सकता है । स्थान-स्थानपर दुरंगे-इकरंगे चित्र पुस्तकको आकर्षक बनाते हैं ।

नए घरके नए देवता

लेखकः मनोरंजन क्रांछल; प्रकाशकः साहित्य संगम प्रसाद परिजात; सिटी स्टेशन रोड, आगरा-३ । पृष्ठः ६१; क्रा० दुगना , ७३; मू० ३.०० रु. ।

आजके वैज्ञानिक युगमें, जबकि गांवोंके अपढ़ बच्चे भी साइकिल, मोटर, रेडियो आदिसे परिचित हो गये हैं, और शहरके बच्चे तो बिजली, सिलाई मशीन, टेलीफोन ग्रामोफोन, दूध पानीका यंत्र, कैमरा, थर्मामीटर आदिसे परिचित होते हैं— तो समझमें नहीं आता कि पुस्तकको 'नए घरके नए देवता' शीर्षक देकर, बच्चोंके मनमें इन वस्तुओंके प्रति देवत्वकी भावना जगानेकी आवश्यकता क्यों पड़ी ? क्या सरल और सीधी भाषामें इन वस्तुओंसे परिचय नहीं कराया जा सकता था । हिन्दी बालसाहित्यका यही दुर्भाग्य रहा है कि बिना समय और बच्चोंके विकासके बारेमें सोचे ही पुस्तकें लिखी जाती हैं । उनकी दृष्टिमें बच्चे एकदम मूर्ख होते हैं और उन्हें सरल भाषा और किसी टेढ़ी-मेढ़ी शैलीमें कुछ दिया जा सकता है । यह पुस्तक एक ऐसा ही नमूना हैं जिसमें लेखकने पुस्तकके प्रति बच्चोंको आकर्षित करनेके व्यामोहमें फंसकर उसे देवताओंका स्थान प्रदान कर दिया । और सबसे मजेकी बात यह है कि पुस्तककी विषय-वस्तुको जिस शैलीमें लिखा गया है उसमें भी आरंभसे ही बच्चोंको मूर्ख मानकर प्रश्नोत्तर शैलीमें बातें कही गयी हैं और अन्तमें फिर 'यही करना था' फार्मूलेके अनुसार देवताके रूपमें उस वस्तुको प्रतिष्ठापित किया गया है । क्या यह सोचनेकी आवश्यकता नहीं रह गयी है कि जिस आयुमें पहुंचकर बालक ऐसी पुस्तकोंको पढ़ने योग्य बनता है, उस समयतक वह बिजली, रेडियो आदिके प्रति अजनबी नहीं रह जाता । तब फिर उससे लेखकका यह कहना कि कमरेका स्विच दबाते ही क्या होता है ? कमरेमें प्रकाश किसके द्वारा होता है ?' और फिर यह मान लेना कि आजके वैज्ञानिक और विकसित युगका बच्चा इन प्रश्नोंका उत्तर नहीं दे पायेगा, इसलिए उसे बताना कि 'बिजली' किसे कहते हैं— कितना हास्यास्पद लगता है । इसीतरहकी बातें अन्य अध्यायोंके बारेमें भी कही जा सकती हैं । वस्तुतः बच्चोंका साहित्य लिखनेके पूर्व उसकी आवश्यकताएँ, मर्यादाएँ, बच्चोंके ज्ञानस्तर और उनके उपयुक्त शैलीका चयन किये बिना लिखा गया बाल साहित्य कसौटीपर खरा नहीं उतरता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जेबी पुस्तकें

समीक्षक : जीवन

रजनीश साहित्य

भारतमें इस समय ८० से ऊपर ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने स्वयंको भगवान घोषित किया है। इन साधुओंका पाश्चात्य शिष्योंपर विशेष प्रभाव है। भगवान श्री रजनीश भी इनमें एक हैं। उनका कथन है—"मैं शिक्षा देनेके लिए नहीं जागरूक करनेके लिए आया हूं। समर्पण करो और मैं तुम्हें परिवर्तित कर दूंगा। यह मेरा वचन है।" श्री रजनीशको विश्व गुरु कहते हैं और बुद्ध, महावीर, ईसा और मुहम्मदके समकक्ष उनके शिष्य मानते हैं। रजनीश (जन्म दिसम्बर ११,१९३१) राबर्ट्सन कालेज जबलपुरमें अध्यापक थे, जिन्होंने नवसंन्यासका आन्दोलन चलाया है। कहा जाता है ४००० के लगभग व्यक्ति इस संन्यासमें दीक्षित हो चुके हैं। 'नवसंन्यास अन्तर्राष्ट्रीय आन्दोलन' की शाखाएँ पश्चिमी जर्मनी, केनिया, इंगलैण्ड, कनाडा, सं० रा० अमरीका, स्वीडनमें है। अंग्रेजी और हिन्दीमें उनके प्रवचनोंकी ५० के लगभग पुस्तकें भी छप चुकी हैं।

स्टार पाकेट बुक्स दिल्लीने भारतीय राजनीतिपर रजनीशके प्रवचनोंकी दो पुस्तकें प्रकाशित की हैं। **समाजवाद से सावधान'** (१२९ पृ०, २ रु०, '७३) तथा **"भारत, गांधी और मैं"** (१५४ पृ०, ३ रु०, '७४) 'समाजवादसे सावधान' में रजनीश द्वारा १३ अप्रैल ७० से १७ अप्रैल ७० तक क्रास मैदान बम्बई दिये गये व्याख्यान हैं। 'भारत, गांधी और मैं' उनके ९ प्रवचनोंका संग्रह है।

समाजवादके सम्बन्धमें रजनीश मार्क्सवादका यह सिद्धान्त तो मानते हैं कि सामन्तवादसे पूंजीवादसे समाजवादसे साम्यवादसे अराजकतावाद पैदा होता है। किन्तु उनके अनुसार जबतक पूंजीवाद परिपक्व न हो जाये समाजवाद आ ही नहीं सकता। लेनिनने यह सिद्ध किया था कि पूंजीवादके पूर्ण होनेके पूर्वभी किसी देशमें समाजवाद आ सकता है।

समाजवादको स्वीकार करते हुए भारतमें उसके लिए परिस्थिति न होनेकी बात कहनेके कारण रजनीश अपने विचारोंमें विरोधाभासको भी स्वीकार करते हैं। वे पूंजीवाद और समाजवादके संघर्षके स्थानपर सहयोगकी बात कहते हैं। वे समझते हैं—"अगर समाजवादको कहींसे भी फैलना है दुनियांमें, तो वह केन्द्र वाशिंगटन होगा। समाजवाद वाया वाशिंगटन, उसके सिवाय कोई सम्यक् रास्ता नहीं हो सकता है।" (पृ० ६०)। अमरीकाके पूंजीवादके समर्थक अनेक प्रचारक-विचारक (?) यही धारणा रखते हैं कि पूंजीवादका उदार रूप समाजवाद है जो अमरीकामें है। "यदि मार्क्स आज होते" शीर्षकसे ऐसा विचार व्यक्त कर अमरीकी पूंजीवादका दर्शन फैलाया जाता है। रजनीशकी नजरभी अपने अन्तर्राष्ट्रीय आन्दोलनकी ओर है।

इन्हीं प्रवचनोंमें गान्धीजीका प्रसंग आया है "गांधीजीके आचार और विचारोंमें इतनी बड़ी खाई थी कि जितनी दुनियांमें शायदही किसी आदमीके विचार और आचारमें रही हो" (पृ० ७६)। गान्धीपर अपनी दूसरी पुस्तकमें रजनीशने यही चर्चा विस्तारसे की है। "समाजवाद सबपर रोक लगाता है।....वह अमानवीय है। पूंजीवाद एक मानवीय व्यवस्था है...पूंजीवादमें खामियां हैं। वे खामियां दूर की जा सकती है।" (पृ० १०२-३)।

गान्धीपर अपने प्रवचनोंमें रजनीशने यह स्वीकार किया है कि "गांधी पहले हिम्मतवर आदमी थे जिन्होंने समाजकी ओरसे मुंह नहीं मोड़ा।...वह पहला आदमी था जिसका जीवनके प्रति स्वीकारका भाव था। (पृ० १३, भारत, गांधी और मैं)। किन्तु टैक्नोलोजीके प्रति, दरिद्रके प्रति गांधीके दृष्टिकोणको रजनीश स्वीकार नहीं करते। पूंजीपतिके हृदय-परिवर्तनकी बातभी नहीं मानते। "पूंजीपतिको नहीं बदलना है, पूंजीवादको बदलना है।" (पृ० ३८)। वे यह भी कहते हैं कि देशकी एकता "समाजवादका परिणाम होगी। उसके पहले नहीं हो सकती।" (पृ० ४३)। यहभी कि "समाजवादसे ज्यादा धार्मिक और कोई आन्दोलन जगत्में नहीं है।" (पृ० ४४)।

रजनीश आधुनिकताके पूर्ण समर्थक हैं। वे चर्खा खादीके विरुद्ध हैं। वे मानते हैं कि शोषण पाप है; चोरी पाप नहीं, वह तो शोषणका बाइ-प्रोडक्ट है। वे यह समझते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं कि संसारको असार कहना पूंजीपतिके शोषणका समर्थन करना है। "समाजवादसे सावधान" के प्रवचनोंसे आगे बढ़ कर गान्धीपर विचार करते हुए रजनीश समाजवादके अधिक समर्थक हो गये हैं। गान्धीके प्रति उनका दृष्टिकोण जहाँ आर्थर कोएस्लरके मतसे प्रभावित है—आचार विचारके विरोधाभासके सन्दर्भमें—वहां वे मार्क्सवादी विचारकों और जवाहरलाल नेहरूके भी समीप हैं। उदार-पूंजीवादके अमरीकी विचारोंके प्रति मोह होते हुए भी रजनीश समाजवादको समझनेका प्रयास कर रहे हैं ऐसा लगता है।

रजनीशके विचारोंसे सहमत हुए बिनाभी उनका अध्ययन विचारशील पाठकोंको उत्तेजना प्रदान कर सकता है।

उपन्यास

हिन्द पाकेट बुक्सके नये सैटमें प्रकाशित **कर्नल रंजीत का मौतका वारन्ट** (पृ० १४४; ७४; मू० ३-०० रु०) विभिन्न हत्याओंके साथ एकही प्रकारकी विचित्र वस्तु रखने के क्रममें एक और रचना है जिसमें मृतकोंके साथ विचित्र लिबास मिलते हैं। प्रतिहिंसासे प्रेरित खूनीका पता लगानेमें जासूस मेजर बलवन्तको सफल होना ही था।

शेखर का रोमानी उपन्यास **लिजा** (पृ० १४४; ७४; मू० ३-०० रु०) एक हिप्पी लड़कीके मानसिक शारीरिक सम्बन्धोंपर आधारित है जो अपने भारतीय प्रेमीको गिरफ्तारीसे बचा लेती है। हिप्पी जीवनके अन्तरमें पैठने का कोई प्रयास लेखकने नहीं किया है।

दत्त भारती लिखित **अनबुझी प्यास** (पृ० १४४; ७४; मू० ३-०० रु०) में पात्रोंके काल्पनिक होनेकी घोषणाके बाद ऐसा लगता है कि किसी जानी पहचानी घटनाका जिक्र है। स्वाधीनतापूर्वकी पृष्ठभूमि बनाकर एक नेत्र चिकित्सक सर्जनकी कहानी कही गयी है जिसे उच्च उपाधि से विभूषित भी किया जाता है। अपनी बदसूरत पत्नीकी उपेक्षा कर वासनापूर्ण जीवन जीते हुए वह एक प्रेमिकाके जालमें फंस जाता है जो न केवल उसकी सारी आर्थिक सामाजिक गतिविधिको नियंत्रित कर लेती है वरन अन्तमें विवाहिता पत्नीकी भी हत्या कर देती है।

रामकुमार भ्रमरने चम्बलके बीहड़ोंपर एक और उपन्यास **खून और वासना** (पृ० १४४; ७४; मू० ३-००रु०) प्रस्तुत किया है जिसमें डाकू मानसिंह उर्फ पानाका वास्तविक चरित्र है जो डाकुओंकी परम्परा छोड़कर बलात्कार भी करने लगता है। इसीकारण ग्रामवासी ही अन्ततः उसकी निर्मम हत्या केवल लाठियों, कुल्हाड़ोंसे कर डालते हैं। पुस्तक रोचक है।

फिल्म स्क्रिप्ट

हमराही फिलमका स्क्रिप्ट कृशनचंदर द्वारा लिखित है (पृ. १४४;७४; मू० ३.०० रु०)। रामानन्द सागरके पुत्रों प्रेम, आनन्द और सुभाषकी निर्मित इस फिलममें कृशनचन्दर ने इन्टरव्यू देने जा रहे एक पुरुष और एक स्त्रीका संयोग पूर्ण मिलाप प्रेम दिखाया है। फिल्मी फार्मूलेके सभी तत्वों का इसमें समावेश है।

कहानी संग्रह

आचार्य चतुरसेन शास्त्रीके अनेक कहानी संग्रह इस सीरीजमें छपे हैं जिनमें नवीनतम है **रूठी रानी** (पृ. १४४; ७४; मू० ३.०० रु०)। भारतके पौराणिक, ऐतिहासिक नारी चरित्रोंपर लिखी शास्त्रीजीकी विभिन्न बारह कहानियां। वैदिककालीन कुण्डनी-शम्बरका 'मृत्यु चुम्बन;' सिद्धार्थकी 'प्रबुद्ध', 'वासवदत्ता', 'जैसलमेरकी' रानी, 'कुंभाकी तलवार, से 'नूरजहां' तक नारी चरित्रोंकी कहानियां एक बार फिर पढ़ी जा सकती है।

जीवनी

स्वामी विवेकानन्दपर सत्यकाम विद्यालंकारकी पुस्तक (पृ. १४४;७४; मू. ३.०० रु०) जेबी संस्करणमें अच्छी जीवनी कही जा सकती है। विवेकानन्द भारतीय पुनर्जागरणके अग्रदूत थे जिन्होंने भारतीय संस्कृतिको पाश्चात्य संस्कृतिके समक्ष खड़ा करनेका प्रथम सफल प्रयास ही नहीं किया, सोये हुए राष्ट्रमें एक नयी चेतना भी जगायी, उनकी सामाजिक दृष्टि अत्यन्त दूरदर्शितापूर्ण थी। १८९६ में रूसी क्रांतिके २३ वर्ष पूर्व उन्होंने कहा था— "इससमय संसारमें वैश्य-धनकुबेरोंका प्रभुत्व है। इस प्रभुत्वके विनष्ट होनेके बाद शूद्र-मजदूरीसे जीविका अर्जित करनेवालोंका युग आयेगा।" स्वामीजीके जीवनमें उनकी १८९० की अल्मोड़ा यात्राका जिक्र नहीं किया गया है जिसमें वस्तुतः उन्होंने साधना कर सत्यके दर्शन किये थे। इसीकारण उन्होंने अपना आश्रम अल्मोड़ाके निकट मायावतीमें बनाया था। परिशिष्टमें स्वामीजीकी दृष्टिमें भारतीय नारीके अन्तर्गत पेसिडोनामें स्वामीजीका भाषण तथा कतिपय स्फुट विचार दिये गये हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्ति सूचना

[निम्न पुस्तकें समीक्षार्थ प्राप्त हुई हैं, आगामी अकों में इनकी समीक्षा अथवा परिचय प्रकाशित कर दिये जायेंगे। समीक्षार्थ दो प्रतियां आनी चाहियें, एक प्रतिका दायित्व स्वीकार नहीं किया जाता।

शोध-आलोचना

आधुनिक हिन्दी कवितामें उर्दू के तत्व :—लेखक : डॉ० नरेश; प्रका. राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : १३२; डिमा. ७३; मू. १०.०० रु.।

गोस्वामी तुलसीदास संबंधी समीक्षाओं और शोधोंका अनुशीलन; ले. डॉ० वीरेन्द्रपाल श्रीवास्तव; प्रका० स्मृति प्रकाशन, ६१, महाजनी टोला, इलाहाबाद। पृष्ठ: ६१७; डिमा. ७४; मू. ५०.०० रु.।

तुलसी स्मारिका (मानस चतुश्शती जयन्ती); सम्पादकः डॉ० पुष्पपालसिंह; प्रका. हिन्दी साहित्य परिषद, मुलतानीमल डिग्री कालेज, पटियाला। पृष्ठः ११०; डिमा. ७४; मूल्यका उल्लेख नहीं।

प्रसादके नाटक तथा रंगमंच; ले० डॉ. सुषमा पाल मल्होत्रा; प्रका. राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-६। पृष्ठः १८३; डिमा. ७४; मू. २०.०० रु.।

भाषा विज्ञान

हिन्दी तथा द्रविड़ भाषाओंके समान रूपी भिन्नार्थी शब्द; ले० प्रा० जी. सुन्दर रेड्डी, डॉ० पी० आदेश्वर राव, एस. एम्. इकबाल; प्रका. राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-६। पृष्ठ: २०८; क्रा० ७४; मू० १५.०० रु.।

कोश

मीरां कोश; ले. डॉ. शशिप्रभा; प्रका. स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद। पृष्ठः १६६; डिमा. ७४; मू० १८.०० रु.।

उपन्यास

एक असम्भव मृत्यु; ले. प्रदीप पन्त; प्रका. सामयिक प्रकाशन, ३५४३, जटवाड़ा, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठः १३१; क्रा० ७४; मू० ६.०० रु.।

जाने आलम; ले. इकबाल बहादुर देवसरे; प्रका. साहित्य भवन (प्रा०) लि., इलाहाबाद। पृष्ठः ३६३; डिमा. ७४; मू. २५.०० रु.।

कहानी संग्रह

एक घटना; ले. मोहन राकेश; प्रका. राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-६। पृष्ठ, १०८; क्रा. ७४; मू. ६.०० रु.।

गलियारे; ले. डॉ. कृष्णा अग्निहोत्री; प्रका. अनादि प्रकाशन, ६०६, कटरा, इलाहाबाद-२। पृष्ठः १८४; क्रा० ७४; मू १०.०० रु.।

मेरी प्रिय कहानियाँ; ले. उषा प्रियम्वदा; प्रका. राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-६। पृष्ठः १३४; क्रा० ७४; मू० ७.०० रु.।

मेरी प्रिय कहानियां; ले. भगवतीचरण वर्मा; प्रका. उपर्युक्त। पृष्ठः १३४; क्रा. ७४; मू० ७.०० रु.।

काव्य-संकलन

कलियोंके द्वारपर अलियोंका गुंजन; कविः डॉ. अन्नपु रेड्डी श्रीराम रेड्डी, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, गवर्नमैंट डिग्री कालेज, निडदवोलु (पश्चिम गोदावरी)। पृष्ठः १३०; क्रा० ७४; मू० ५.०० रु.।

थिरके पत्ता पीपलका (डोगरी लोकगीत); संकलन और अनुवाद: डॉ. ओमप्रकाश गुप्त; प्रका. ललित कला संस्कृति तथा साहित्य अकादमी, जम्मू। पृष्ठः १४६; डिमा. ७४; मू. ६.०० रु.।

भोरका कुहासा; कविः राजमणिराय; प्रका. गीत कुंज प्रकाशन, काशीपुर, समस्तीपुर। पृष्ठः ६४; क्रा. ७४; मू. ४.०० रु.।

रोशनी बांट दो; संपा. रामदेव आचार्य; प्रका. माया प्रकाशन मंदिर, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर २। पृष्ठः ६६; डिमा. ७४; मू. ५.०० रु.।

सुमन मन; कवि : डॉ अ. श्रीराम रेड्डी, निडदवोलु (प. गोदावरी)। पृष्ठः ४८; क्रा. ७४; मू. २.५० रु.।

हरे ठूंठ मधुमास; कवि : परमान्द अश्रुज; प्रका. किरण प्रकाशन, आजाद चौक, कटनी (म. प्र.)। पृष्ठः ८०; डिमा. ७४; मू. ५.०० रु.।

संदर्भ ग्रन्थ

भारत-१६७४; प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठः ४६०; डिमा. ७४: मू. ८.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी वार्षिकी-१९७१; सम्पा. डॉ. बी. एल. उपाध्याय, रामप्रवेश जायसवाल, जगदीश चतुर्वेदी; प्रका. केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, पश्चिमी खंड ७, राम कृष्णपुरम, नयी दिल्ली-२२। पृष्ठ : ३९७; डिमा. ७४; मू. ८.५० रु.।

कला

मेंहदी रंग राची; ले. डॉ. महेन्द्र भानावत; प्रका. भारतीय लोककला मंडल, उदयपुर। पृष्ठ : ४२; डिमा. ७४; मू. ५.०० रु.।

राजनीति

नव-वामपंथ; ले मॉरिस क्रैन्सटन, अनु. विजयश्री भारद्वाज। प्रका. नेशनल एकाडमी, ६, अंसारी मार्केट, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : १९२; डिमा. ७४; मू. ८.०० रु.।

मानव अधिकार क्या हैं; लेखक अनुवादक प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १५२; डिमा. ७४; मूल्य ८.०० रु.।

लाल किलेके प्राचीरसे; प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ: २१२; डिमा. ७४; मू. ४.०० रु.।

अर्थशास्त्र

आधुनिक भारतकी आर्थिक कहानी; ले. डी. एच. बुटानी; अनुवाद : एन. एस. बेदी; प्रका. प्रकाशन विभाग, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ: १६३; क्रा. ७४; मू. ४.०० रु.।

जीवन : संस्मरण

राष्ट्रपति जाकिर हुसैन; ले. ए. जी. नूरानी; अनु. रामनाथ सुमन; प्रका. राजपाल एंड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ: १७१; क्रा.७४; मू. १०.०० रु.।

राजस्थानी साहित्य

थारोके त्यां हां(हास्यव्यंग्य); ले. नागराज शर्मा; प्रका. सुशील प्रकाशन, पिलानी (राजस्थान)। पृष्ठ ११४; क्रा. ७४; मू० ५.०० रु.।

पत्र-पत्रिकाएं

राज्यशास्त्र समीक्षा; (अर्द्धवार्षिक); सम्पा. इकबाल नारायण, राजनीति-विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर-४। वार्षिक मू० २० रु.।

समांतर साहित्य; (त्रैमासिक); सम्पा० ललितमोहन अवस्थी, ३६/१७ राममोहनका हाता, कानपुर-१। वार्षिक मू० ८.०० रु.।

बाल-किशोर साहित्य

अब्दुल्लाकी नौकरी (उप.); ले. एम० एन० चौधरी; प्रकाशक: ज्ञानभारती बाल पाकेट बुक्स, विशेश्वरनाथ रोड़, लखनऊ। पृष्ठ: १०६; बाल जेबी; मू० १.१० रु.।

एक देश : एक प्राण; ले० प्रेमचन्द महेश; प्रका० वाणी प्रकाशन, ६१-एफ, कमलानगर, दिल्ली-६। पृष्ठ: ६४; क्रा० ७४; मू० ४.०० रु.।

एक थी लड़की जो प्रधानमंत्री बनी (जीवनी); ले० प्रकाश बाथम; प्रका. ज्ञान भारती बाल पाकेट बुक्स, लखनऊ। पृष्ठ: १११; बा० जे०; मू० १.१० रु.।

कमांडरकी बेटी (साहसिक कहानियाँ) ले० नयन तारा; प्रका० उपर्युक्त। पृष्ठ १०८; बा०जे०; मू० १.१० रु.।

कहो न मम्मी (उप.); ले० रामचन्द्र चौधरी; प्रका. उपर्युक्त। पृष्ठ: १११; मू० १.१० रु.।

कुदाल पंडित (कहानी-संग्रह); ले० भगवतीशरण मिश्र; प्रकाशक आदि उपर्युक्त।

खूंखार बकरे (क० स०); ले० जहीर न्याजी; प्रका० उपर्युक्त। पृ० १११; मू० १.१० रु.।

नये घरके नये देवता; ले० मनोरंजन कांछल; प्रका. साहित्य संगम, प्रसाद पारिजत, सिटी स्टेशन मार्ग, आगरा ३। पृष्ठ: ९१; क्रा० दु० ७३; मू० ३.०० रु.।

बुरे लोग (उप.); राजेन्द्रकुमार मेहरोत्रा; प्रका० ज्ञान भारती बाल पाकेट, लखनऊ। पृ० १११; मू० १.१० रु.

भयानक योगी (उप०); ले० कृष्ण प्यारे लाल। प्रका० उपर्युक्त। पृ० १११ मू० १.१० रु.।

सतीका शाप (उप०); ले जयशंकर शर्मा; प्रका० उपर्युक्त। पृ० १०९; मू० १.१० रु.।

हा...हा...हू...हू...(लघुकथाएँ); ले० अशोककुमार राना; प्रका० उपर्युक्त। पृ० १०८; मू० १.१० रु.।

जेबी पुस्तकें

अपराध और सजा (उप०); ले० ए० मनीश; प्रका० पुष्पी पाकेट बुक्स, ११९-बी, बाईका बाग, इलाहाबाद-३। पृ० १३४; मू० २.५० रु.।

आखिरी रात (उप.) लेखक प्रकाशकः उपर्युक्त। पृ० १४२; मू० १२ रु.।

काला सोना (जासूसी उप.) ले० कर्नल राना; प्रका. उपर्युक्त। पृ० १६६; मूल्य ३.०० रु.।

काली ऐनक (जा. उप.); ले. मेजर; प्रका. उपर्युक्त। पृ० १५७; मू० ३.०० रु.।

कोरा बदन (उप.) ले. पारस; प्रका. उपर्युक्त। पृ० १३८; मू० २.५० रु.।

खूनकी कुंजी (जा. उप.); ले० कैप्टन देवेश; प्रका० उपर्युक्त। पृ० १४४; मू० २.५० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ चुने हुए शोध प्रबंध

ंत काव्यमें बिम्ब योजना

(ले० डॉ. एन० पी० कुट्टन पिल्लै)

मित्रानन्दन पंतकी विशाल काव्य-शिका पाश्चात्य एवं भारतीय मतों अनुसार अनेकमुखी बिम्बोंका शद अध्ययन।

मूल्य : ५०.००रु.

रामचरित मानस और पूर्वांचलीय राम काव्य

(ले० डॉ. रमानाथ त्रिपाठी)

रामचरित मानस और देशके पूर्वी त्रोंमें प्रचलित राम कथाओंका तुलनात्मक अध्ययन। उ० प्र० सरकार द्वारा पुरस्कृत।

मूल्यः ४५.००रु.

अन्य शोध-प्रबंध

० अम्बिकादत्त व्यासः एक अध्ययन —डॉ. कृष्णकुमार ३०.००

कृत कवितामें रोमांटिक प्रवृत्तियां —डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा २०.००

त काव्यका दार्शनिक विश्लेषण —डॉ. मनमोहन सहगल १५.००

धुनिक हिन्दी और उर्दू काव्यकी वृत्तियां—डॉ. सुधेश ४८.५०

ति काव्यके स्रोत —डॉ. रामजी मिश्र ३२.५०

म्बार्क सम्प्रदाय और उसके कृष्णभक्त वि—डॉ० नारायणदत्त शर्मा १५.००

नवभारती

—८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

डॉ. देवराज उपध्यायकी नयी कृति

कथा-साहित्यके मनोवैज्ञानिक समीक्षा सिद्धान्त

मूल्यः २५.००

अन्य रचनाएं

देवराज उपध्याय ग्रंथावली	४५.००
यौवन के द्वार पर	५.००
मेरी यात्राएं	५.००

शीघ्र प्रकाश्य

कथा-साहित्य : मेरी मान्यताएं

सौभाग्य प्रकाशन
पो० बा० सं० १०४,
इलाहाबाद-२११००३

प्रकर

अबतक प्रकाशित विशेषांकः

भारतीय साहित्यः २५ वर्ष	८.००
अहिन्दी भाषियोंका हिन्दी साहित्य	६.००
१९६९ के उल्लेखनीय प्रकाशन	२.००
१९७० "	६.००
१९७१ "	६.००
१९७२ और १९७३ के उल्लेखनीय प्रकाशन	प्रेस में

आदेश दें

व्यवस्थापक **'प्रकर'**
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग
दिल्ली-७

बहुचर्चित समीक्षा कृति

समकालीन कविताः सार्थकता और समझ

(ले० डॉ० राजेन्द्र मिश्र)

मूल्यः १०.०० रु.

जैन बुक डिपो
सदर बाजार, रायपुर (म० प्र०)

नवीनतम

श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यास

नेपालेश्वर

लेखकः विराज

नेपालके इतिहासपर आधारित एक रोमांचक उपन्यास

मूल्यः २०.००

साहित्य मन्दिर
५२-ए कमला नगर,
दिल्ली-७

लघु-विज्ञापनोंके लिए
सुरक्षित पैनल
पुस्तक-विक्रेताओंके लिए
प्रति पैनल दर २५.०० रुः

व्यवस्थापकः **'प्रकर'**
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग,
दिल्ली-८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* नवीनतम प्रकाशनोंकी जानकारीके लिए
* प्रकाशनोंके मूल्यांकन, विवेचन और परिचयके लिए
* समीक्षा-विधाकी प्रगति और उसके विकाससे संपर्क रखनेके लिए

प्रकर

आपका अनिवार्य और श्रेष्ठ साथी है। इसकी सहायतासे न केवल आप पुस्तकोंका सही मूल्यांकन प्राप्त कर सकते हैं, बल्कि अपने लिए उपयोगी पुस्तकोंका चुनाव भी सरलतासे कर सकते हैं।

इसकी विशिष्टता है :

* सृजनात्मक साहित्यकी प्रगतिपर निरन्तर प्रकाश
* हिन्दीतर क्षेत्रोंकी साहित्यक प्रगतिका लेखा-जोखा
* ज्ञान-विज्ञान, इतिहास, राजनीति, अर्थशास्त्र आदि अनेक आधुनिक जीवनसे संबद्ध प्रकाशनोंका परिचय,
* लेखकों, पत्रकारों, शिक्षकों, शोध-छात्रों, प्रकाशकों, पुस्तकालयों और वाचनालयोंके लिए अनिवार्य रूपसे पठनीय मासिक प्रकाशन

वार्षिक मूल्य : १२.०० रु. **प्रति अंक १.२५ रु.**

सम्पर्क : व्यवस्थापक, 'प्रकर'
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग
दिल्ली-११०००७

'नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी०)' के लिए विद्यासागर विद्यालंकारद्वारा सम्पादित, प्रताप मुद्रणालय, दिल्ली-७ के लिए विशाल प्रिंटर्स २/३४, रूप नगर, दिल्ली-७ में मुद्रित, ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७ [टेलीफोन नं० २२३८६३] से प्रकाशित.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

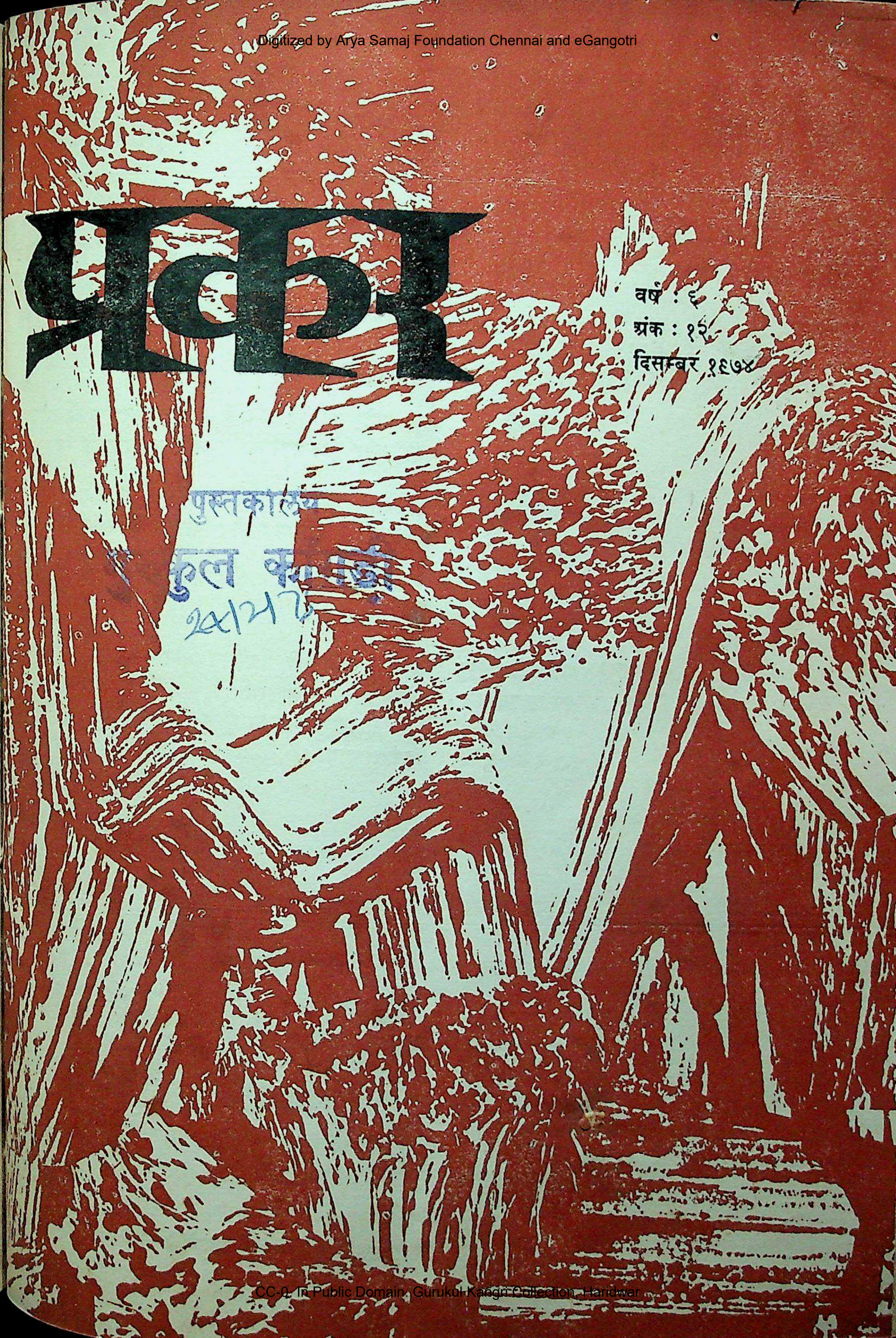

पुस्तकालय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान (सी.)

ए-८/४२ राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

यह लेखकों और पत्रकारोंकी सहकारी संस्था है और मल्टी यूनिट कोआपरेटिव सोसायटीज एक्ट १९४२ और दिल्ली कोआपरेटिव सोसायटीज एक्ट १९७२ के अन्तर्गत पंजीकृत है।

- इस संस्थाको संगठित करनेका मुख्य प्रयोजन रहा है कि :

  क-हिन्दी तथा अन्य प्रादेशिक भाषाओंमें साहित्य रचनाको प्रोत्साहित किया जाये और अन्तर्राज्यीय आदान-प्रदानकी व्यवस्था की जाये।

  ख- विविध विषयोंके ग्रन्थोंका प्रकाशन और वितरण किया जाये।

  ग- लेखकों, साहित्यिकों और सम्पादकोंको उनके परिश्रमका अधिकतम पुरस्कार प्रदान किया जाये।

- कोई भी वयस्क लेखक, साहित्यसेवी, पत्रकार और कलाकार इस संगठन का सदस्य बन सकता है। सदस्यता-प्राप्तिके लिए प्रतिष्ठानका न्यूनतम एक अंश लेना अनिवार्य है। एक अंशका मूल्य सौ रुपया है। इसके साथ दो रुपया प्रवेश शुल्क देना होगा।

संगठन

- प्रत्येक अंशधारी सदस्य साधारण-सभाका सदस्य होता है। संस्थासे संबद्ध सभी मामलोंका अन्तिम उत्तरदायित्व और अधिकार इसी साधारण-सभाका होता है।
- साधारण सभा कार्य संचालन के लिए पंद्रह सदस्योंकी व्यवस्था समिति का निर्वाचन करती है।
- सभी पदाधिकारियों का चुनाव साधारण सभा द्वारा होता है।
- प्रकाशनके लिए पुस्तकोंका निर्वाचन और पाण्डुलिपियोंके सम्बन्धमें निर्णय विभिन्न विषयोंके विशिष्ट मंडलों द्वारा होता है।

आप भी इस संस्थाके सदस्य बनकर इस महान कार्यमें योगदान करें.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष : ६
अंक : १२
दिसम्बर : १९७४

प्रकर

सम्पादक : विद्यासागर विद्यालंकार
सम्पर्क : ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

वार्षिक मूल्य : बारह रुपये
प्रति अंक : एक रुपया पच्चीस पैसा

समीक्षित पुस्तक	पृष्ठ संख्या	समीक्षक
१. अपनी दृष्टि		
अंग्रेज़ी-लेखक मंच और भारतीय भाषाएं	३	सम्पादकीय
२. काव्य-संकलन		
मेरी कविता : मेरे गीत—पद्मा सचदेव	५	डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित
मलयालमकी नयी कविताएं—सम्पादक : डॉ. जी. गोपीनाथन	७	डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित
मृत शिशुओंके लिए प्रार्थना—प्रणवकुमार वंद्योपाध्याय	९	मंजुल उपाध्याय
दुबला पतला भीम—सुदर्शन शंगारी	९	रंजीत भट्टाचार्य
खुरदरे प्रसंग—आनन्दप्रकाश	१०	राजकुमार सैनी
नयी पीढ़ीकी कवियित्रियां—संपा. ठाकुर भूपतिसिंह	१०	स्वर्णकिरण
हरे ठूंठ मधुमास—परमानन्द अश्रुज	११	राज केसरवानी
३. उपन्यास		
बैसाखियोंवाली इमारत—रमेश बक्षी	११	डॉ. रणवीर रांग्रा
किस्से ऊपर किस्सा—रमेश बक्षी	११	डॉ. रणवीर रांग्रा
पूर्णावतार—प्रमथनाथ विशी, अनु. हंसकुमार तिवारी	१२	मंजुल उपाध्याय
पचास परचे ईरा क्लबके—रावी	१३	रजनीकान्त लहरी
चिकने सपाट पेड़—मोनीक लॉज, अनु. नरेन्द्र शर्मा	१४	बैजनाथ राय
छाया मत छूना मन—हिमांशु जोशी	१४	नरेन्द्र कोहली
दस्तावेजकी चोरी—नीलम	१५	बैजनाथ राय
४. कहानी-संग्रह		
अन्तिम चित्र—बलराज साहनी	१५	सुरेन्द्र तिवारी
बारह हंगारी कहानियां—भारतभूषण अग्रवाल, रघुवीरसहाय	१६	नरेन्द्र कोहली
जहर—श्रवणकुमार	१६	नरेन्द्र कोहली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. शोध-आलोचना

रामचरितमानस : तुलनात्मक अनुशीलन—डॉ. सज्जनराम केणी १७ डॉ. रमानाथ त्रिपाठी

राम-कथाके पात्र—डॉ भ. ह. राजूरकर १८ सूर्यनारायण रणसुभे

आधुनिक हिन्दी साहित्यको अहिन्दी लेखकोंका योगदान—डॉ. विलास गुप्ते १८ डॉ. भीमसेन निर्मल

६. विविधा

प्रतिनिधि संकलन : सिन्धी—सम्पा. मोतीलाल जोतवाणी २० डॉ. लक्ष्मीकान्त शर्मा

तुर्की हिन्दुस्तानी निगाहोंमें—सुदर्शन मंजीठिया २२ डॉ. त्रिलोकीनाथ

विश्व शांतिकी खोज—व्रजनारायण मेहरोत्रा २२ अमलतास

७. जीवन : संस्मरण

आवारा मसीहा—विष्णु प्रभाकर २२ डॉ. रामदरश मिश्र

लेनिन—राबर्ट कान्क्वेस्ट, अनु. ओमप्रकाश दीपक २४ सुरेन्द्र तिवारी

संत ज्ञानेश्वर—कृ. गो. वानखड़े २५ त्रिलोकीनाथ व्रजबाल

तरुदत्त—पद्मिनीसेन गुप्त, अनु. युगजीत नवलपुरी २५ त्रिलोकीनाथ व्रजबाल

८. गांधी साहित्य

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय—(खण्ड ४९,५०,५१,५२,५३) २६ मुकुटबिहारी वर्मा

९. श्रमिक आन्दोलन

भारतीय श्रमिक वर्ग आन्दोलन—डॉ. जगन्नाथस्वरूप माथुर २८ मनमोहन वर्मा

१०. राजनीति-इतिहास

नव वामपंथ—मॉरिस क्रेंसटन २८ मुद्राराक्षस

अमेरिकी इतिहासकी रूपरेखा—अमरीकी सूचना सेवा २९ मनमोहन वर्मा

११. भाषा-साहित्य इतिहास

कन्नड़ साहित्यका सुबोध इतिहास—काशीनाथ एम. हल्लीखेड़े २९ डॉ. ओम्प्रकाश सिंहल

उर्दू साहित्यका सुबोध इतिहास—डॉ. कमलनारायण टंडन ३० डॉ. सुधेश

१२. राजस्थानी साहित्य

जूनां बेली नुवां बेली—संपा. शिवरतन थानवी, पुरुषोत्तम तिवारी ३२ नरपतसिंह सोढ़ा

थारो के ल्यां हां—नागराज शर्मा ३२ "

१३. रामतीर्थ साहित्य ३३ डॉ. त्रिलोकीनाथ

१४. किशोर-बाल साहित्य ३४ मनमोहन वर्मा, हरिकृष्ण देवसरे

१५. जेबी पुस्तकें ३५ माधव पंडित, शंभुनाथ मिश्र

१६. प्राप्ति-सूचना ३८ —

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी दृष्टिसे

अंग्रेजी लेखक मंच और भारतीय भाषाएँ

इंडियन इंग्लिशके लेखकोंका एक सम्मेलन इस महीनेकी समाप्तिपर धूमधामके साथ नयी दिल्लीमें हुआ और सम्मेलनके प्रचारके सभी साधनोंका उपयोग किया गया। इसमें लेखकोंकी जिन सार्वजनिक समस्याओंको उठाया गया, लेखकोंकी दृष्टिसे वे महत्वपूर्ण थीं और लेखक वर्गके सभी लोग उनसे चिन्तित हैं। इनमें लेखकोंके प्रकाशकों द्वारा शोषणकी ओर विशेष रूपसे ध्यान दिया गया। अधिकांश लेखकोंको प्रकाशकोंकी जो शर्तें स्वीकार करनी पड़ती हैं उनमें न्यूनतम देय रायल्टी किसी निश्चित अवधिमें प्राप्त नहीं होती और बहुधा अनुबन्ध होते हुए भी प्रदान नहीं की जाती। प्रकाशक प्रायः प्रयत्न करते हैं कि वार्षिक रायल्टीके स्थानपर एकमुश्त राशि देकर सर्वाधिकार प्राप्त कर लिये जायें। इस बातकी भी कोई गारन्टी नहीं होती कि जितनी संख्याका संस्करण छापनेका अनुबन्ध किया गया है, उससे अधिक नहीं छापा जायेगा। बहुधा किसी अच्छी पुस्तकको अधिक संख्यामें छपा लिया जाता है और लेखकको पता भी नहीं चलता और वह अपने श्रमका पूरा मूल्य प्राप्त करनेसे वंचित हो जाता है। लेखकोंको प्रकाशकोंका हिसाब-किताब देखनेकी सुविधा नहीं होती और और वे इस बारेमें कुछ भी करनेमें असमर्थ होते हैं। पांडुलिपि स्वीकार हो जानेके बादभी निश्चित अवधिके भीतर उसके प्रकाशित न होनेसे भी अनेक बार लेखक पारिश्रमिकके रूपमें प्राप्त होनेवाली रायल्टीसे वंचित हो जाता है।

इनमें से अनेक समस्याओंका सम्बन्ध कापीराइट अधिनियमसे है। इन समस्याओंको निपटाने तथा लेखकोंकी कठिनाईयोंको दूर करनेके लिए कापीराइट अधिनियममें संशोधनके प्रस्ताव स्वीकार किये गये हैं और आशा है यह संशोधित अधिनियम संसदके अगामी अधिवेशनमें स्वीकृतिके लिए प्रस्तुत किया जायेगा। लेखकोंके पक्षमें इस अधिनियममें जो संशोधन किये जाये जायेंगे, लेखकोंके सभी वर्ग उसका स्वागत करेंगे। इस समस्याकी ओर सत्तारूढ़ लोगोंका ध्यान खींचनेके लिए इस सम्मेलनकी सराहना की जायेगी।

फिरभी, इस सम्मेलनसे ऐसी प्रवृत्ति उभरती दिखायी दी, जिससे इसे 'इंडियन-इंग्लिश' लेखकोंका सम्मेलन कहनेको विवश होना पड़ा। सम्मेलनमें भारतीय भाषाओंके लेखकोंका प्रतिनिधित्व नहीं था। इसलिए सम्मेलनमें जितनी चर्चाएँ हुईं या जिन समस्याओंकी ओर ध्यान खींचा गया, उनका केन्द्र-बिन्दु केवल इंडियन-इंग्लिशके लेखक थे। यह संयोगकी बात है कि उन्हीं समस्याओंसे भारतीय भाषाओंके लेखक भी पीड़ित हैं और कहीं अधिक उग्र रूपसे। १९५७ के मध्यसे लागू कापीराइट अधिनियम भारतीय भाषाओंके लेखकोंकी समस्याएँ सुलझाने में अभीतक सफल नहीं हुआ, संशोधित अधिनियम इन्हें सुलझानेमें कितना सफल होगा, यह भविष्य बतायेगा। वस्तुतः स्थिति यह है कि वर्तमान परिस्थितियोंमें कानूनी व्यवस्थाओंसे कुछ मुठ्ठीभर प्रभावशाली, विशेषतः अंग्रेजी-लेखकोंको तो लाभ मिल जाता है, परन्तु भारतीय भाषाओंके सामान्य लेखकोंको इसका लाभ नहीं मिलता। भारतीय भाषाओंके इन लेखकोंको किसीभी लाभ या सुविधा प्राप्त करनेके लिए मजदूर-संगठनोंके ढंगके प्रभावशाली संगठनोंकी आवश्यकता है। भारतीय भाषाओंके प्रतिनिधित्व रहित अंग्रेजी-लेखकोंका यह संगठन 'आथर्स गिल्ड ऑफ इन्डिया' केवल अपने वर्गके अतिरिक्त अन्य लेखकोंकी ओरसे कुछभी कहने-बोलनेका कितना अधिकारी है, इसे गिल्डसे सम्बद्ध लोग अनुभव नहीं कर पायेंगे, क्योंकि ये लोग सम्भवतः भारतीत भाषाओंके लेखकोंको लेखक नही मानते।

स्पष्ट बात यह है कि भारतीय भाषाओंके लेखकों और इंडियन-इंग्लिश लेखकोंके हितोंमें केवल परस्पर विरोध ही नहीं है, अपितु भारतीय भाषाओं द्वारा अंग्रेजी का स्थान ग्रहण करनेके प्रबल प्रयत्नोंके कारण इस देश में अंग्रेजीका भविष्य अधिकाधिक संदिग्ध होता जा रहा है, इसके साथही इस भाषासे सम्बद्ध लेखकोंका भी। यह बेचैनी सम्मेलनमें गिल्डके महासचिव श्री माणकेकरकी 'लेखनके व्यवसायीकरण' की माँगसे व्यक्त होती है। इस मांगके पीछे यह सैद्धान्तिक विवाद नहीं है कि लेखन व्यवसाय है या नहीं, लेखन अभिव्यक्ति की प्रबल आकांक्षा है या नहीं, अथवा केवल रुचिवश लेखन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सार्थक है या नहीं। इस मांगका सीधा अभिप्राय आर्थिक आधिपत्य और एकाधिकारसे है। स्वतन्त्रता-प्राप्तिके बादसे लेखनके आर्थिक पक्षपर अंग्रेजी लेखकोंका आधिपत्य अधिकाधिक बढ़ता गया है। सरकारी और प्रशासनिक प्रोत्साहन भी इसी वर्गको मिलता रहा है। यह बात विभिन्न स्रोतोंसे उपलब्ध आंकड़ोंसे पुष्ट होती है। सन् ७३ के उपलब्ध आंकड़ोंसे पता चलता है कि देशमें अंग्रेजीके कुल प्रकाशनोंकी संख्या ६१८३ थी, जिसमें ५० प्रतिशत से अधिक प्रकाशन शासकीय थे। अर्थात् सरकारी और गैर सरकारी दोनों स्तरोंपर व्यावसायिक लाभ अंग्रेजी लेखकोंको मिला। इसके विपरीत इसी अवधिमें देशभर के भारतीय प्रकाशनोंकी कुल संख्या ८५७७ थी। इन सभी भाषाओंके प्रकाशनोंके लाभके वितरणके औसतसे यह स्पष्ट हो जाता है कि अंग्रेजी लेखकोंको लगभग ४५ प्रतिशत लाभ मिला। इतना बड़ा लाभ प्राप्त करनेके बाद जब अंग्रेजी लेखकोंके मंचसे लेखनके व्यवसायीकरणकी मांग की जाती है तो यह सन्देह होना स्वाभाविक है कि भारतीय भाषाओंका प्रतिनिधित्व न करनेवाला यह मंच केवल अंग्रेजी लेखकोंके हितोंको आगे बढ़ानेके लिए ही प्रयत्नशील है।

हमारे सन्देहका एक कारण और है। जिसप्रकार गिल्डके ये लेखक जन-जीवनसे कटे हुए हैं, अपनी शिक्षा-दीक्षा, संस्कार और जीवन-वृत्तियोंके कारण देशके मूल सामाजिक और सांस्कृतिक जीवनसे अलग-थलग पड़े हुए हैं, उसीप्रकार इनके समानधर्मा प्रशासक भी हैं। ये प्रशासक अबतक पूरा अर्थलाभ और सम्मान इसी वर्ग को प्रदान करते रहे हैं। सम्मेलनका आयोजन-प्रदर्शन भी इसी प्रशासक वर्गको प्रभावित करनेके लिए किया गया है। दोनों ही सुविधाभोगी वर्ग हैं, एक दूसरेकी सुविधाओं और सम्मानके प्रति सतर्क हैं। स्वभावतः इस 'व्यवसायीकरण' की मांगकी भावनाको प्रशासक वर्ग सही रूपसे जानता है और अंग्रेजी लेखकोंके आर्थिक आधिपत्यको और अधिक सुदृढ़ बनानेके लिए प्रयत्नशील हो जायेगा।

इस सम्मेलनने जिस बातपर ध्यान नहीं दिया, वह यह है कि पश्चिमी देशोंका पूंजीवादी समाज अभीतक लेखनका व्यवसायीकरण करनेमें सफल नहीं हुआ। वहां छः में से ऐसा एक लेखक भी कठिनाईसे उपलब्ध होना है जो केवल लेखनसे सुविधापूर्वक जीवन-निर्वाह कर पाता है। जब कि हमारे देशमें यह अनुपात अंग्रेजी लेखकोंकी दृष्टि से छः में से तीन है। फिरभी इन समृद्ध देशोंकी तुलनामें सभी प्रकारके अभावोंसे पीड़ित गरीब भारतीय समाज अपने धरती-पुत्र लेखकोंको भूखा नंगा रखकर पहलेसे लेखनके लाभका ४५ प्रतिशत प्राप्त करनेवाले इन सुविधाभोगी इंडियन-इंग्लिश लेखकोंके लिए कितना और जुटा पायेगा, यह विचारणीय है। इससे जो असन्तोष पहलेसे विद्यमान है, वह और अधिक उग्र रूप ले लेगा।

सम्मेलनने अपने सदस्योंके आर्थिक लाभके लिए सहकारी प्रकाशन शुरू करनेका भी निश्चय किया है। 'सहकारी' शब्दके साथ सैद्धान्तिक आकर्षण जुड़ा है। पर यह प्रकाशन तो अंग्रेजी ग्रन्थोंका ही करेगा। इसके लिए पैसा भी सरकारी साधनोंसे जुटानेका प्रयत्न किया जायेगा और इन प्रकाशनोंकी बिक्री भी सरकारी साधनों और माध्यमोंसे होगी। इसका सारा बोझ तो देशकी उस ९९ प्रतिशत जनतापर पड़ेगा, जो अंग्रेजी नहीं जानती, पर आर्थिक और राजनीतिक स्थिति इसी वर्गकी मजबूत होगी।

यदि अंग्रेजी मंचसे भारतीय भाषाओंके पिछड़ेपन को उजागर न किया जाये, तो संभवतः सम्मेलन अधूरा रह जाता है। इस महत् कर्मको पूरा किया सूचना प्रसारण मन्त्री श्री इन्द्रकुमार गुजरालने। उन्होंने भारतीय भाषाओंके लेखकोंका आगे आनेका आह्वान करते हुए उन्हें सूचना दी कि १९७३-७४ में १७,००० कुल प्रकाशनों में से भारतीय भाषाओंके प्रकाशन केवल ६००० थे। उनके आंकड़ोंका आधार हमें पता नहीं, परन्तु नेशनल लाइब्रेरी आंकड़ोंके अनुसार इस अवधिमें अंग्रेजी प्रकाशनोंकी संख्या ६१८३ थी, जबकि भारतीय भाषाओंके प्रकाशनों की संख्या ८५७७ थी। इस वर्षके तथा इससे पूर्व वर्षके आंकड़ोंकी यदि तुलना की जाये तो पता चलेगा कि सन् ७२ में भारतीय भाषाओंके प्रकाशनोंकी संख्या १०४३४ थी। (यहां तथा ऊपर जितने भी आंकड़े दिये गये हैं। वे संविधानकी आठवीं अनुसूचीमें उल्लिखित भारतीय भाषाओंके हैं। अन्य प्रादेशिक भाषाओंके आंकड़े इनमें सम्मिलित नहीं हैं।) ऐसी स्थितिमें क्या मन्त्री महोदय से यह नहीं प्रश्न किया जा सकता कि एक वर्षके भीतर भारतीय भाषाओंके प्रकाशनोंमें लगभग १९ प्रतिशतकी इस कमीमें सरकारी आर्थिक नीतियोंका क्या योगदान है? इस कमी को दूर करने के लिए सरकार ने क्या कदम उठाये? इन प्रश्नोंका उत्तर सम्मेलनमें एक और वक्ताने दिया जिसने ध्यान दिलाया कि सरकार भारतीय भाषाओं से अंग्रेजीमें अनुवादके लिए अंग्रेजीसे भारतीय भाषाओं में अनुवादकी तुलनामें ऊंची दरें प्रदान करती हैं।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काव्य-संकलन

मेरी कविता : मेरे गीत

कवियित्री : पद्मा सचदेव; प्रकाशक : साहित्य अकादेमी रवीन्द्र भवन, फिरोजशाह रोड, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : ६६; डिमा. ७४; मूल्य : ७.०० रु.।

पद्मा सचदेवका नाम हिन्दी पाठकोंके लिए अब नया नहीं है। इसलिए नहीं कि उन्हें उनकी कविताओंपर साहित्य अकादेमी नयी दिल्लीसे पुरस्कृत किया जा चुका है, बल्कि इसलिए कि पत्र-पत्रिकाओंके माध्यमसे हिन्दी पाठकने उनकी रचनाओंसे कुछ और अधिक पहचान पैदा कर ली है। साहित्य अकादेमीने तो उन्हें उनकी डोगरी कविताओंके लिए सम्मानित किया था और उनकी पुरस्कृत पुस्तककी और कुछ नयी कविताओंका यह संग्रह भी इधर अब निकला है, इस बीच पत्रिकाओंने ही उनके और पाठकके बीच पहचानकी भूमिका तैयार की है।

३८ कविता-गीतोंके इस संग्रहमें धरतीकी ऐसी सोंधी उसास है, भावोंकी ऐसी भीनी गन्ध और अभिव्यक्तिकी ऐसी सहज तरलता है कि इनके सुर अपने साथकी और कविताओंसे अलग होकर उभरते और पाठकसे सहज संवाद स्थापित करते हैं, बौद्धिक व्यायामकी मांग नहीं करते। इसीमें उनका नयापन है, इसीमें उनका टटकापन और अचरज नहीं कि अपनी विलक्षणतामें मुग्धकारी भी है।

सामयिक हिन्दी-कविताके संदर्भमें इन कविताओंका स्वर रोमानी कहा जायेगा। जिनके कानोंमें आक्रोश, अनास्था और कुण्ठाके स्वर रस-बस गये हैं, और जो कविता को उसकी तेज-तर्रार भाषाके माध्यमसे पहचानते-स्वीकार करते हैं, उन्हेंभी इन अन्तरंगतामें भीगे यादों भरे, उन्मुक्त प्रकृतिके आँगनमें खेलने और खेलते रहनेको विह्वल, प्यार-दुलारके हल्के-गहरे रंग भरते और यदा-कदा उदासी बिखेरते गीतोंमें मानवीय संवेदनाकी ऐसी प्रगाढ़ता मिलेगी कि और चाहे जो हो उसे नकारना, उसे अनचीन्हा करदेना संभव न होगा। पद्मा सचदेवके ये गीत इतने सहज हैं कि इनमें आत्मीयता और विश्वासका सहज भोलापन आपसे-आप उभर आता है और ऐसा लगता है जैसे कवियित्री और पाठकके बीचकी दूरी संवादकी समीपतामें बदल गयी है। इन गीतोंकी भूमि तैयार की है लोक-गीतोंने और इसलिए जहाँ इसमें ये गुण दिखायी देते हैं वहीं लोक-भाषा से सम्पन्न अभिव्यंजनामें भी ये समृद्ध हैं। भावोंकी सहज अभिव्यक्ति ही नहीं बल्कि उनके उत्कर्ष और सहज विश्वसनीयतामें भाषाने बहुत योग दिया है और अलंकृति, या रचाव-कसाव और प्रतीकात्मक विलक्षणताओंके फेरमें पड़नेकी कहीं आवश्यकता नहीं हुई है। इन गीतोंके ऐसे ही गुणोंसे प्रभावित होकर इसके भूमिका-लेखक स्व० 'दिनकर' जीने इनकी 'अद्‌भुत आध्यात्मिक संपत्ति' की सराहना की है और कहा है: "जो बात पद्मा कहती है, वह असली कविता है। हममें से हर कवि उस कवितासे दूर, बहुत दूर हो गया है।" 'दिनकर' जीने अनुभव किया है कि "कवितामें आजकल ज्ञानका युग चल रहा है यानी कविता मर गयी है" और यह अनुभव उन्होंने इन गीतोंके संदर्भमें ही किया है। इसी भूमिकामें उन्होंने कविता और गीतके बीच एक भेदक रेखा भी खींची है और इस संग्रहमें बिखरी गीत-राशिको सहेजनेके लिए संकेत दिया है : "कवितामें कुछ ज्ञान भी होता है, पाण्डित्य भी होता है, मगर गीत केवल रसकी बूंद है, कविके भीतरी व्यक्तित्वके प्रस्वेद हैं, उसके दर्दकी खुशबू हैं।" और ये गीत सच ही आपको इस रूपमें आश्वस्त करते हैं। इनके विषयमें यह बात भी इतनी सच है कि हिन्दीके पाठक जहां इसमें लोक-गीतोंकी माधुरी, नारीकी सहज-पीड़ा और उसके दुःखसे भीगे हुए जीवनका सहज अंकन पायेंगे, वहां यह भी अनुभव करेंगे कि इनमें घटनाओंका रस और इतिहासका सत भी पूर्णतः रूपायित हुआ है।"

भाषाके सीधी-सरल होनेके बावजूद इन उक्तियोंमें ताजगी है, निरालापन और बांकपन है। बिम्बोंकी रचना करने और स्थितियोंके संकेतसे भी उनका पूरा अहसास करनेमें ये गीत अत्यन्त सक्षम हैं।

संग्रहकी पहली कविता है 'भादों'। सावन-भादोंको लेकर वर्षा-वर्णन तो बहुत हुआ है और कवियोंने विरहिणीके प्रसंगमें उसे नियोजित करनेमें भी अपनी सारी शक्ति लगा है, किन्तु निम्नलिखित पंक्तियोंमें आवेगको जैसी आवेशकी भाषा दी गयी है और दुलार-भरा जैसा वनस्पतिका चित्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उरेहा गया है या कि वर्षासे भीगते घरोंकी दीवारों, सीलन और रंगोंका इसी कविताकी अन्य पंक्तियोंमें वर्णन किया गया है, वह अपनेमें अलग ही है :

भादोंने गुस्सेमें आकर जब खिड़कियां तोड़ी
तब मुझे यों लगा, जैसे कोई आया है।

× × ×

छोटे-छोटे पत्तोंमें ठण्ड उतर आयी
मुए थर-थर काँपते हुए नीले हो गये
मानो मांने बांहसे पकड़कर जबरदस्ती नहलाया हो
और नहानेसे सुन्दरताको और रूप चढ़ गया
बेलोंसे जब वृक्षोंने कलियां उधार मांगीं
तब मुझे यों लगा जैसे कोई आया है।

संग्रहकी दूसरी कविता 'सखि वे दिन कैसे थे !' एक ऐसी कविता है जिसमें उदासीभरी यादें पुकार मचाती हैं परन्तु इसके लिए कवियित्री शब्दोंकी खोजमें नहीं निकलती, यादोंमें ऐसी डूब जाती है कि विगत अनुभवोंका संसार और उससे लिपटे हुए उल्लास-उत्साहके भाव आपसे-आप नितान्त बातचीतकी गद्यात्मक भाषामें उतर आते हैं और वह सारी स्थिति वर्तमानका उल्लेख न करते हुए भी उसके विरोध (कण्ट्रास्ट) में, उभरकर इसतरह सामने आ जाती है कि उदासीका आलम छा जाता है और तब इन पंक्तियों का प्रभाव भी और गहरा पड़ता है :

बरछी बनकर वे यादें कलेजेमें धंस रही हैं
दिन और रात बौराए हुए हैं, समय डंक मार रहा है
अब न वह वसंत आयेगा, नही वह गुलाबी बैसाखी
इस जन्ममें वह उम्र अब मेरे घर कभी नहीं आयेगी

और यादोंभरे इन उदास लमहों पद्माजीका मन कश्मीरकी वादियोंमें घूमने लगता है, वहांके प्राकृतिक सौन्दर्यको फिरसे देख पाने और देखते रहनेकी तीव्र उत्कण्ठा और अदम्य लालसा जाग उठती है। 'काश' वे उस सारे सुखसे वंचित न होतीं, उस वातावरणमें कितना सुख, कितना काम करनेका मन होता। कविताओंके बीचसे उनका बचपन, मुग्ध भावुकता और निसर्ग-सौन्दर्यसे मण्डित कश्मीरके प्रति उनकी ललक रह-रहकर उभर आती है। इस सौन्दर्यको जिसने नहीं देखा वह इस ललकका महत्व भला कैसे समझेगा। इस सन्दर्भ में 'काश', 'मन करता है' और 'आप क्या जानें' शीर्षक तीनों कविताएं पढ़ने योग्य हैं। भोले, सरल मनके प्रतिबिम्बके साथ इन कविताओंमें, विशेषतः 'मन करता है' में चित्र उतार लानेकी कुशलता भी है, और रूप-भावके सजीव और गतिपूर्ण सौन्दर्यको आंकनेमें मुहावरेदार और लाक्षणिक शब्दाबलीकी अकृत्रिम अभिनवता भी है —

"यहां देखो सरसों फूली बैठी है / न जाने किसके भुलावेमें आ गयी है / दूर तक खिलखिला रही है / मानो ब्रह्माकी अंजुरीसे बिखर गयी हो / वृक्षोंकी छायामें लेटी ये सरसों / अपने ही बोझसे दोहरी होती जा रही है / किसकी यादमें ये गोरी पीली होती जा रही है / इसके बीज कहीं बिखरे हैं / जम्मू, चम्बे और अखनूरमें / मन करता है सारी बांध लूं / केसर और कटीली झाड़िया समेट लूं /"

और सच है कि कवियित्रीको उह कहनेका हक़ प्राप्त हो जाता है :

"मेरे देशका सौन्दर्य आपने न देखा न सुना
मेरे मनकी व्यथा आप क्या समझेंगे
मेरे मनकी आशाको आप क्या जानेंगे"

वह आप क्या बताये जो जानती है "टहनीपर खड़े होकर / आपने डोरी नहीं लूटी" और जिसे याद है "कहीं रावीके बहावमें / मेरी पाजेब खुल गयी", जो प्रकृतिकी उल्लास-भरी बांहोंमें अपना बचपन बिता चुकी है और जिसकी आँख और मनमें उस प्रदेशकी रूप-गन्ध बस गयी है। वह क्या कहे जिसे अपने प्रदेशसे अलग हो जानेका दुःख इतना सालता है कि जैसे उसे "देस-निकाला" ही मिल गया हो। अपने प्रदेशसे बिछुड़ी ससुरालमें बैठी इस विरहिणीको सावन-भादोंके दृश्योंकी याद विकल कर देती है। उसे जान पड़ता है : 'बरसातकी पहली बाढ़ लहू-लुहान है / ये आकाश मुझे खूनी दिखायी देता है।" या कि "मेरी आँखोंकी बाढ़ गली-गलीमें गयी है / जम्मूकी तवी नदीमें जाकर मिल गयी है" और वह अपनी मां, अपनी सखियोंकी यादसे ऐसी भर उठती है, अपने आस-पासके प्राकृतिक सौन्दर्यको फिर देखने के लिए ऐसी बेचैन हो उठती है कि उससे कहे बिना नहीं रहा जाता :

"मेरी मां मुझे चम्पा और मोतियोंकी सुगन्ध भेज
मेरी जान सूलीपर टंगी हुई है।"

पीड़ाकी इससे गहरी अनुभूति क्या होगी और उसे और किन शब्दोंमें प्रगट किया जा सकेगा ? ससुरालका नियंत्रण और मैकेकी स्वतन्त्रता, दोनोंके बीचकी खाई इतनी गहरी है कि हर पल, हर बात पीड़ा ही नहीं दे जाती, दिमागमें उस स्थितिका तनाव बराबर बना रहता है। ससुरालके चरखेसे ब्याह जानेके बावजूद उनकी रूह खेतोंकी ओर दौड़ती है और उनकी सारी कविताओंमें जैसे हर बार यह स्वर गूंजता सुनायी देता है : "भगवान् मुझे गर्मीका मौसम दो, दुःख-सुख दो / परन्तु मैकेसे हमेशा मुझे ठंडी हवा आये / सुखका संदेश आवे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धरतीके प्रति उनका गहरा अनुराग, श्रम करके उस पर उगायी गयी धान्य और फूलोंकी फसलके प्रति सहज अपनापन और सुरक्षाकी भावना उन्हें सचेत किये रहती है कि उसकी ओर किसीकी कुदृष्टि हो तो वे विद्रोह कर उठें, अपने हक्के लिए लड़ें और कड़वेपनकी परवाह न करके पूछ बैठें :

"जिन्हें खोद-खोदकर हमने बीज और खाद डाले/जिनके मिट्टीके घरौंदोंका गदला जल पिया/जिनको धूपमें पानी देकर सींचा था / प्रियतम सूखा मुंह देखकर नाराज भी हुए थे/जिनके अंकुरित होनेपर मन खिल उठा था / और बौर पड़नेपर हमारी दीवाली हुई थी/किसीकी क्रोधसे घूरती आंखोंने / हमारी आंखोंसे पूछा/ये सुन्दर क्यारियां क्या आपकी हैं?/ये राजाके महल क्या आपके हैं ?

ऐसेमें अपने श्रमपर दूसरेका अधिकार जमते देख वे यह कैसे भूल जायें :

"ये ऊंची दीवारें आकाश छूती हैं/महल माल व खजानेसे मालामाल है / ये ईंटें, इनका लाल रंग मनको भाता है / हमारे लहूकी याद आती है / हमारे शरीरसे पसीनेकी नदियां यहीं बही थीं / हमारे कंधोंसे शहतीर यहीं उतारे गये थे / धूप सहकर जिन्होंने ये दीवारें कायम कीं / क्या ये उनके महल आपके हैं ?"

पद्माजीका यह स्वर इन कविताओंमें नया है और नया है उनका तेवर भी। अन्यथा इन कविताओंका मूल स्वर तो वही है जिसकी अबतक इससे पहले चर्चा की गयी है। अभिव्यक्तिकी सरलता, सुघरता और फिरभी उसके बांकपनके लिए ये कविताएँ याद की जायेंगी। साथही एकदम सीधी लोक-शैलीमें लिखी गयी कविताओं के लिए भी 'अमावस्याकी हंसी' और उसीके साथका 'गीत' जैसी रचनाएँ उदाहरण बनी रहेंगी। "चैतकी हवा" और 'चाव' जैसी कविताओंमें मनके हिलकोरोंके सहारे सौन्दर्य पेंग बढ़ाता मिलेगा, उपमाओं और उपमानों की बहार मिलेगी, मनको छूनेवाला अन्तरंग प्यार मिलेगा और मन खुशीसे खिल उठेगा। अलग-अलग चित्रोंकी बाढ़के लिए 'अभिसारिका' का स्वागत किया जायेगा :

"जब मैं घरसे निकली / सांझ थी कुछ लालगी-सी थी / जैसे अधजगी गोरीकी आंखमें नींदके डोरे हों

जब मैं फिर चली तो आकाश तारोंसे जड़ा था / जैसे जीजाको पहले दिन उसके ठहरनेके स्थानपर / सालियों ने घेर लिया हो

जब मैं घर पहुँची तो आकाशपर एक ही सितारा था / जैसे सांवले रंगकी गोरीकी नाकमें हीरेकी / लौंग झिलमिलाए

सितारा ये मुझे डूबता लगा ! धड़कते मेरे सीनेमें ये डूबता लगा / मेरी आंखकी पोरमें ये चुभता सा लगा।"

ऐसे दृश्य इन कविताओंमें बहुत-से हैं जिनमें प्रकृतिके साथ साहचर्यका असीम सुख है, उसके लिए ललक है, तड़पन है और उसके सौन्दर्यपर प्रशंसाभरी सहज उक्तियां हैं। भाव और अभिव्यक्तिके सौन्दर्यसे चारू इन कविताओंका निस्सन्देह सम्मान होगा।

—डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित

मलयालमकी नयी कविताएं

सम्पादक तथा अनुवादक : डॉ. गोपीनाथन; प्रकाशक : रंजन प्रकाशन, प्रसाद पारिजात, सिटी स्टेशन रोड, आगरा-२८२००३। पृष्ठ : ८०; डिमा. ७४; मूल्य ५.०० रु.।

भाषा-भिन्नताके बावजूद हमारे देशमें जो कुछ लिखा जा रहा है और पहले भी लिखा गया है, वह मूल सन्दर्भोंमें एक है और इस देशकी चेतनाको उसकी समग्रतामें उपस्थित करता है। हिन्दीमें नयी अभिव्यक्तिका दौर इस देशकी अन्य भाषाओंके साहित्य-रचयिताओंके लिए अजूबा नहीं है, क्योंकि वे सबभी थोड़ा-बहुत आगे-पीछे उसी नये दौरसे गुजरी हैं। नया दौर अनुभूतिका भी और अभिव्यक्तिका भी। लेकिन दूसरी भाषाओंके प्रति हमारा अजानापन कुछ इतना बढ़ा-चढ़ा है कि इस बातको जानने के लिए अनुवाद ही एकमात्र सहारा हो सकता है। कविताका कवितामें अनुवाद सरल काम नहीं। कठिनाइयों से अवगत होते हुए भी इसप्रकारके प्रयत्न हिन्दीमें भी बहुत हुए हैं और मूल भाषामें किसी रचनाको नागरी लिपिके माध्यमसे प्रस्तुत करते हुए उनके साथ हिन्दी अनुवादकी योजना तो कई पत्रिकाओंने भी अपनायी थी, परन्तु दोनों भाषाओंकी—मूल और अनूदित—रचनाएं एक साथ प्रस्तुत करनेकी रीति पुस्तकोंमें प्रायः नहीं अपनायी गयी।

डॉ. गोपीनाथनने इस पुस्तकमें मलयालमके 'कुछ बिलकुल नये (८) कवियों' की कविताओंको नागरी लिप्यन्तरके साथ प्रस्तुत करते हुए उनका स्वरचित हिन्दी कवितानुवाद भी दिया है। इन कविताओंके सहारे मलया-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लमकी स्वातन्त्र्योत्तर काव्य-प्रवृत्तियोंकी जानकारी प्राप्त की जा सकती है और उनमें हिन्दी कविताके साथ अद्भुत मेल पाया जा सकता है। डॉ. गोपीनाथनको दोनों भाषाओंपर समानाधिकार प्राप्त हैं, अतएव उन्हें इस अनुवाद कार्यमें आवश्यक सुविधा भी रही है। अनुवादके पूर्व उन्होंने दस पृष्ठकी एक लम्बी भूमिका प्रस्तुत करते हुए मलयालमकी नयी कविताके इतिहासके सन्दर्भमें इन कविताओंके कथ्य और शिल्पपर विचार किया है।

संगृहीत आठ कवियोंमें क्रमशः हैं: १- एन.वी. कृष्ण वारियर, २-अय्यप्प पणिक्कर, ३-सुगतकुमारी, ४-एन०एन० कक्काट, ५-एम० एन० पालूर, ६-आट्टूर रविवर्मा, ७-सच्चिदानन्दन तथा ८-कुञ्ञुण्णि। पहले सात कवियोंकी दो-दो कविताएँ और अन्तिमकी दो पंक्तियोंसे लेकर छः पंक्तियों तकके ५ मुक्तक इसमें सम्मिलित हैं। इन कविताओं में लम्बी कविताओंका भी अपना हिस्सा है।

डॉ० गोपीनाथनने अपनी भूमिकामें यह स्पष्ट कर दिया है कि मलयालममें रूमानी कविताओंके विरुद्ध प्रगतिशील आन्दोलनसे ही नयी कविता प्रवृत्तियोंकी नींव पड़ी और बौद्धिकताका प्रवेश बढ़ता गया। यहांतक कि १९५० और ६० ई० के बीच उसकी नयी कविताका सूत्रपात ही हो गया और वह अभीतक विकासके पथपर है। इस सूत्रपातमें एन. वी. कृष्णवारियरने रुमानियतके विरूद्ध और मोह-भगके पक्षमें आवाज उठाकर महत्त्वपूर्ण भूमिका निवाही है और अपने 'लम्बी कविताएँ' तथा 'कुछ और लम्बी कविताएँ' संग्रहोंमें उन्होंने शिल्पगत नये प्रयोग भी किये हैं। साधारण व्यवहार-भाषा और सामाजिक व्यंगकी दिशामें प्रयोगकी दृष्टिसे उनकी कविताका महत्त्व है। अस्तित्वके लिए चिरन्तन संघर्ष और आधुनिक भावबोधको गहराईसे पकड़नेके साथ ही प्रतीकात्मक लम्बी कविताएँ प्रस्तुत करनेकी दृष्टिसे अय्यप्प पणिक्कर, विषादमय अनुभूतियों और आधुनिक संवेदनाको स्वर देने की दृष्टिसे सुगतकुमारी, आधुनिक जीवनकी उलझी हुई अभिव्यक्तिके लिए कक्काट, पालूर, रविवर्मा और सच्चिदानन्दन तथा व्यंग्यात्मक लघुकविताओंके लिए कुञ्ञुण्णिका उल्लेख कविताके सन्दर्भमें जरूरी है।

वर्तमान जीवनकी मूल्य-हीनता और विडम्बनाओंका अनुभव करता हुआ मानवका त्रस्त जीवन और उसकी चीख, दर्द और दयनीयताको इन कविताओंमें स्वर मिला है। मानवीय अस्तित्वके संकटका बीभत्स और भयावह चित्रों तथा व्यंग्यात्मक भाषाके माध्यमसे साक्षात्कार कराया गया है। नागरिक सभ्यतामें घुटती हुई आजके मनुष्यकी अकेली आवाज और आजके मनुष्यकी लक्ष्यहीनता तथा उसके भटकावको फ़ैंटसियों, प्रतीकों और बिम्बोंके सहारे व्यक्त किया गया है। नौकरीपेशा आदमीकी नियति और उसकी विवशताकी कथा भी इन कविताओंमें कही गयी है। डॉ. गोपीनाथनके ही शब्दोंमें "इन कविताओंमें निषेधके साथ स्वीकार है, घोर निराशाके बीचमें आशाकी किरणें हैं। इन कविताओंका कथ्य कोई बाहरसे आरोपित वस्तु नहीं है। ये तो अपने आसपासके जीवनकी अनुभूतियोंसे जन्म ली हुई कविताएँ हैं। इनमें यद्यपि किसी खास दार्शनिक विचारोंका प्रभाव नहीं है, तोभी इनका एक लक्ष्य अवश्य है। वह है सभ्यताके बीच खोये हुए मनुष्यकी खोयी हुई मानवताको पानेके लिए सतत् संघर्ष, इस संघर्षको मूर्त्त बनानेके लिए ही ये कविताएं लिखी गयी हैं। इनमें से अधिकांश कविताएँ चौंकाती अवश्य हैं, परन्तु साथही तीखा व्यंग्य भी छोड़ जाती हैं, जो पाठकको गहराईमें छूनेमें सक्षम है।"

संगृहीत कविताएं आत्मगत नहीं समाजगत हैं, सामाजिक स्थितिके यथार्थबोधके सन्दर्भमें ही राग-बोध और चिन्तनको दिशा मिली है। सामाजिक सन्दर्भोंने ही उन्हें व्यक्तिगत जटिल बिम्बों और प्रतीकोंकी उपस्थितिसे बचाया है। उनकी पहुंच वर्तमानमें गहरी होते हुए भी पुराकथाओं, मिथकों और प्रतीकोंसे इस तरह युक्त है कि पूरे दृश्यको एक ओर प्राचीन परम्परासे जोड़ती-सी जान पड़ती है और दूसरी ओर उसे नये अर्थ भी देती है। असलमें यह इसलिए हो सका है कि इन कवियोंने प्राचीनको उसके पुराने अर्थमें ही ग्रहण नहीं किया है, उससे वर्तमान को प्रतिबिम्ब कर सकनेवाले नये अर्थ ही ग्रहण किये हैं। इन कविताओंके तीखे स्वभावके कारण इनसे न भदेस बचा है न बीभत्स। अपनी बातको सूक्ष्म ब्यौरोंके साथ कहनेके लिए और अपने मनोभावोंको सही स्थितिमें प्रकट करनेके लिए जिसतरह इनमें चित्रात्मकता आ गयी है उसीतरह इनमें विखण्डित पंक्तियां, उद्धरण, गद्यका मिश्रण और चिन्तनके बीचमें आ उपस्थित होनेवाली कोष्ठकगत पंक्तियां, सब कुछ इन कविताओंमें समाहित है और हिन्दी कविताके पाठकके लिए ये परिचित स्वभावकी कविताएं कही जा सकती हैं। उन्हें हिन्दी कविताके साथ रखकर पढ़ना रुचिकर होगा।

—डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत शिशुओंके लिए प्रार्थना

कवि: प्रणवकुमार बंद्योपाध्याय; प्रकाशक: पांडुलिपि प्रकाशन, ई-११/५, कृष्णनगर, दिल्ली-५१ । पृष्ठ: १२०; डिमा. ७३; मूल्य: ५०० रु. ।

प्रस्तुत संकलन तीन भागोंमें विभक्त 'काल पुरुषका जन्म' 'समुद्र मन', और 'सूर्य-व्यातनाका काव्य' ३५ कविताओंका कविका प्रथम संकलन है। कवि होनेके पूर्व प्रणव कहानीमें भी अपने निजी प्रयोग कर चुके हैं। 'एकांत' के सम्पादन कालमें में उन्होंने लेखन शुरू किया जो आजतक जारी है। कविका ध्यान मुख्यतः पूर्व स्मृतियोंके दंशों द्वारा मिले अनुभवोंपर रहा है और उन व्यक्तिगत अनुभवोंका सरल सामान्यीकरण समाजमें फैली अव्यवस्थाके लिए किया गया है। यहाँ अनुभवोंका अतिरेक है और यह प्रक्रिया जब आस्फालित होने लगती है तब कविकी दक्षता चूक जाती है। ये अनुभव प्रायः प्रार्थनाबद्ध क्यों होते हैं शायद कवि जानता हो। एक ही कारण हो सकता है कविका अंध-समर्पण भाव। कविने हर आयामको जीवन और इतिहासके बीच समाजकी अमानवीयता और विषमताओंके दृश्योंमें चित्रित किया है और इस दौरान उपजे कष्टका प्रभाव वहाँ झलकता है। कविकी तड़प इसलिए एकांगी नहीं क्योंकि उसने कविताकी रचनामें अकेलेको देखा है बल्कि इसलिए भी कि अनुभवके विषयोंको उसने रचाया-पचाया नहीं है। वह सामाजिक कष्टकी कविता नहीं बन पाती। भाषागत प्रयोगों और अनुभवको व्यक्त करनेके लिए चुने गये शब्द कविके भ्रमको पुष्ट ही नहीं करते बल्कि उसके प्रति आत्म-मुग्ध होनेका आरोप साबित कराते हैं। न जाने किस प्रकाशकी प्रक्रियाकी वह खोजना चाहता है। फिरभी एक कथाकारका यह पहला प्रयास मानकर आगेके लिए प्रतीक्षारत रहा जा सकता है।

—मंजुल उपाध्याय

एक दुबला पतला भीम

कवि: सुदर्शन शंगारी: प्रकाशक: कन्हैयालाल खटवानी, धमतरी। पृष्ठ: १६; क्रा. ७३; मूल्य: ०.६० रु.।

"तीव्रतम कटुताकी अभिव्यक्तिमें कविकी भाषा अत्यन्त संयत और प्रतीकात्मक हो गयी है। सरलताको इतने गहरे और व्यापक संकेत करते मैंने कम देखा है……।" डॉ. बच्चनकी ये पंक्तियाँ शंगारीजीको उनकी रचना 'एक दुबला पतला भीम' के एवजमें मिली थीं। देशके आजाद हो जानेके बाद जिस असंतोष, आक्रोश एवं कुंठाने हमें घेरा है उसे कविने एक प्रतीक नायक—चारू मजूमदार द्वारा व्यवस्थाको काफी गहरा बेधनेकी चेष्टा की है।

कवि क्रांतिधर्मिताका सबल पक्षपाती है। वह अपनी आवाजमें बराबर बारूदके गोले दागता चला जाता है। यथा—

मेरा देश अब
दवाके अभावमें
मरे बच्चोंके गममें
आंसू नहीं बहाता
एक चांटेके बाद
दूसरा गाल नहीं बढ़ाता
वह बसों और डाकघरोंमें
अब आग लगा देता है
खानेके डिब्बोंको
बम या हथगोला बना देता है
सत्य-अहिंसाके सिद्धान्तोंकी
नरम दूबको वह अपने नये उगे
पैने दांतोंसे चर गया है
कौन कहता है
चारू मजूमदार मर गया है

कविका 'दुबला पतला भीम' बिम्बों,प्रतीकों और मुहावरोंके कुहासेसे मुक्त है। कवि केवल वैचारिक धरातलपर ही क्रांतिका उद्घोष करना दुर्बलता मानता है, सारा आक्रोश जनतापर केन्द्रित करता है और इस परिस्थितिको फिरसे परिवर्तित करनेमें संलग्न हो जाता है।

वह सर्वोदयी नेताओंकी तरह धीरे-धीरे होनेवाले परिवर्तनका आकांक्षी नहीं है क्योंकि शायद उसकी निगाहमें पुरानी आदत धीरे-धीरे नहीं छोड़ी जा सकती, उसे झटकेसे हीं छोड़ना होता है। कविकी वाणीमें चेतावनीका स्वर उसी के शब्दोंमें—

अपनी बन्द आंखोंसे
मेरा देश
भूखके निर्लज्ज कैबरेको
महसूस करता है
और द्रौपदीने
अभावोंकी यवनिका
ओढ़ रखी है
अब दुःशासन नहीं
शासन मेरे देशकी द्रौपदीका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीरहरण करता है
परन्तु इसी समय
'एक दुबला-पतला भीम'
ताल ठोंककर
बदला लेनेकी
प्रतिज्ञा कर गया है
कौन कहता है
चारू मजूमदार मर गया है।

भाषामें लोच है, और सादगी। परन्तु कवि तुकबन्दीका लोभ संवरण कर पानेमें असमर्थ है, जो कहीं-कहीं अटपटा-सा लगता है।

—रंजीत भट्टाचार्य

खुरदरे प्रसंग

कवि : आनन्दप्रकाश, एफ ११।१५, माडल टाउन, दिल्ली—९। पृष्ठ : ४८; डिमा. ७१; मूल्य: ६.०० रु.।

आनन्दप्रकाशकी कविताओंका यह संकलन 'कालिदास की भाषामें / जुगाली' करती हुई, मध्यमवर्गीय कवि-चेतनाकी बानगी पेश करता है जो सामाजिक-परिवेशसे अपना संवाद बनाये रहती है किन्तु गैलरीसे झांकना ही पसन्द करती है और सड़कपर जलूसमें शामिल होनेसे कतराती रहती है। 'दूध धुली साड़ियोंमें लिपटे / कसे / लहरदार' शरीरोंकी 'गोल भरी जांघोंमें / जीवनकी अपरिमित' संभावनाओंपर माथापच्ची करनेवाले कविने पिछले दिनों करवट ली है और रूमानी यथार्थके कुहासेसे निकल कर वह सामाजिक-वैज्ञानिक यथार्थकी रोशनीको झेलने लगा है। 'कुदरती असूलोंके साथ, छातियोंकी उभरती आजादी' को तिलांजलि देकर वह मेहनतकश जनताकी आजादीके लिए अपने शब्दोंके औजार गढ़ रहा है। 'खुरदरे प्रसंग' की कविताएं चिकने-चुपड़े प्रसंगोंकी कविताएँ हैं। आनन्दप्रकाशकी कलमने खुरदरे और पैने सामाजिक सदर्भोंको अपनी बादकी रचनाओंमें (उक्त संकलन के बादकी रचनाओंमें) बड़ी सफलता और सार्थकताके साथ झकझोरना शुरू किया है।

—राजकुमार सैनी

नवीन पीढीकी कवियित्रियाँ

संपादक : ठाकुर भूपतिसिंह; प्रकाशक : नव साहित्य प्रकाशन समिति पाटन, जबलपुर। पृष्ठ : ७४; क्रा. ७४; मूल्य : २.०० रु.।

'नवीन पीढ़ीकी कवियित्रियाँ' कवि ठाकुर भूपतिसिंह द्वारा प्रस्तुत प्रथम महिला काव्य-संकलन है जिसमें प्रसिद्ध-अर्द्ध प्रसिद्ध-अप्रसिद्ध तीन-चार दर्जन कवियित्रियोंकी चुनी हुई कविताओंको संकलित किया गया है। संकलनमें क्रम न तो प्रसिद्धिका रखा गया है न ही वर्ण या अक्षरका। ऐसा प्रतीत होता है कि संपादक महोदयके पास जिस-जिस कवियित्रीकी रचना पहुंचती गयी, कवि संजोता गया। शकुतला खरे, ज्ञानवती सक्सेना, विजयालक्ष्मी विभा, निर्मला चौहान रेखा वर्मा, शांति अग्रवाल, कु. रंजना, मनोरमा श्रीवास्तव, रंजना श्रीवास्तव, अभिशप्ता, राज भटनागर, वर्षा अय्यर, आराधिका, मधु श्रीवास्तवकी रचनाएं संग्रहको महत्वपूर्ण बनाती हैं। कवियित्रियोंमें ज्ञान-प्रदर्शन या प्रयोग-चमत्कारकी ललक नहीं है—ललक यदि है तो अपनेको यथावत रूपमें रखनेकी। संपादक महोदयका आमुखमें स्वीकरण—संग्रह प्रकाशनमें हमारा प्रमुख उद्देश्य कवियित्री बहिनोंको प्रकाशमें लाना रहा है—ठीक ही प्रतीत होता है।

नवीन पीढ़ीकी कवियित्रियोंमें निश्चय ही 'नवीन' विशेषणपर संपादक महोदयका बल नहीं है। रचनाएं पारंपरीण हैं :

हम महाशक्ति, हम महाक्रांति,
रणचंडीकी तलवार हमीं।
हम मातृभूमिपर मिटती हैं,
बन दुर्गाका अवतार हमीं।
—शकुतला खरे पृ. ९

प्रभु निराकार तुम मेरे,
बढ़ते हैं घोर अँधेरे।
तव पद-पंकजका संबल,
मेरी श्रद्धाके फेरे।
दु:खमें आँसू बन जाते,
सुखमें हँसते मुस्कराते।
—सावित्रीदेवी श्रीवास्तव, पृ. २१

नारी जगकी आद्याशक्ति,
नारी पुनः महान् बने।
जीवन पथकी सहचरि बनकर,
संयम की पहिचान बने।
—शीला ठाकुर, पृ. ५७।

रेखावर्मा, शांति अग्रवाल, कु.रंजना, शशि कमलेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सावित्रीदेवी श्रीवास्तव, पुखराज पांडेय, बाला शर्मा, त्रिलोचन मेहता, कुमुदनी दुबे, मनोरमा श्रीवास्तव अर्चना, रंजना श्रीवास्तव, अभिशप्ता दीदी, पुष्पा गुप्ता, कमलेश सिन्हा, आशा शर्मा, प्रभा सरस, ऋतु भाटिया, पुष्पा मिश्रा, रामदुलारी गुप्ता, आशा पाटणर, पुष्पा पाटणकर, सतनाम माटा, नीर शबनम, कु. नुसरत सईद, कु. मलिक मसर्रत, अंजना गुर्जर, राजश्री मुस्काती, यशोदा गोस्वामी, वीना अस्थाना, रामायणी देवी कायस्थ, सुसंस्कृति परिहार 'संसु' राज भटनागर, सुशीला सितारिया, वर्षा अय्यर, कंचनलता, मालती मुले, आराधिका, विमला चौधरी, शीला ठाकुर, सरोज 'सवितृ' तथा मधु श्रीवास्तव [कुछके चित्रभी संकलित-प्रकाशित] का परिचय संग्रहको सूचनात्मक बनाता है। काश, संपादक कवि इन्हें अक्षरानुक्रमसे नियोजित करता। संग्रह प्राथमिक होनेके कारण ऐतिहासिक महत्त्वका कहा जा सकता है

—स्वर्णकिरण

हरे ठूठ मधुमास

कवि : परमानन्द अश्रुज ; प्रका० किरण प्रकाशन, आजाद चौक, कटनी (म०प्र०)। पृष्ठ : ८०; डिमा. ७४; मूल्य : ५.०० रु.।

युवा कवि अश्रुजकी यह तृतीय काव्य कृति है जिसमें विधवा पुनर्विवाहके जलते सामाजिक प्रश्न चिन्हको बड़े मार्मिक और भावुक ढंगसे प्रस्तुत किया गया है। कथानकमें विधवाके कारुणिक जीवनको व्यापक कैनवास दिया गया है प्रस्तुत कथाकाव्य नौ खण्डोंमें वर्णित है, सम्पूर्ण कृति असहाय नारी जीवनकी कारुणिक महागाथा है।

—राज केसरवानी

उपन्यास

बैसाखियोंवाली इमारत

लेखक : रमेश बक्षी; प्रकाशक : इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, ११३।४, पश्चिमी आजाद नगर, दिल्ली-५१। पृष्ठ : १६४; क्रा. ७३; मूल्य : ८-००रु.।

किस्से ऊपर किस्सा

लेखक और प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १२६; क्रा. ७३; मूल्य : ६.०० रु.।

'आधुनिकता' की हवामें तैरते 'एंटी-लव' के नारेकी वैसाखी बनाकर लेखक उसके सहारे एक उपन्यासकी इमारत खड़ी कर देता है और फिर यह मानकर आश्वस्त हो जाता है कि ऐसा करके उसने 'प्रेम कथाओंका अस्थि-विसर्जन' कर दिया—मानों प्रेम-कथाओंकी अरथी निकालना उसका लक्ष्य हो। शायद इसलिए वह सृजनके आनंदसे वंचित रहा और इसे लिखते उसे ऐसा लगा कि वह कोई फैसला लिख रहा है। प्रेमके खिलाफ फ़ैसला, प्रेम-कथाओंके विरुद्ध फैसला। पर विडंबना यह है कि इस सारे ऊहापोहके बावजूद 'एंटी-लव' का झंडाबरदार यह उपन्यास समाप्त होते होते प्रेमकी ही जोरदार वकालत कर जाता है और वह भी सूक्ष्म व्यंजनाके सहारे।

इस उपन्यासके कथानायकको प्रेमसे चिढ़ है। उसका कहना है कि वह जहर खा सकता है; पर किसीसे प्रेम नहीं कर सकता। उसके निकट प्रेम 'आउट-आफ-डेट और प्राचीन संस्कृतिप्रधान परम्परा-भुक्त मूर्खता है।' प्रेमके प्रति 'आधुनिक' लेखकको और उसके नायकको भी 'अलर्जी' होना आश्चर्यकी बात नहीं, क्योंकि प्रेमकी आंचमें पड़कर उसके अहं के जलकर भस्म होनेकी आशंका रहती है, जबकि उसके स्फीत अहं को तो 'अपने शहरसे ऊपर उठकर उसकी बड़ी-बड़ी इमारतोंको अपने जूतेके नीचे देखनेकी इच्छा तंग करती रहती है'। यह बात अलग है कि उसकी यह इच्छा कभी पूरी नहीं होती और उसका अहं ही उसका सबसे बड़ा शत्रु बन जाता है। प्रेमके नामसे इस उपन्यासका नायक सिहर उठता हैं, क्योंकि किसी नारीको चाहनेका अर्थ उसके लिए प्रेम नहीं, बल्कि सीधा-सादी 'पँजेसिव इन्सटिंक्ट' है, जबकि प्रेममें पाना कुछ नहीं, खोना ही खोना होता है। वहां आत्मार्पणमें ही आत्मोलब्धि है। अपनेको हर आंचसे बचाकर रखनेवाला, अपने अहं में तनकर ताड़की तरह खड़ा रहनेवाला व्यक्ति प्रेमसे घबड़ायेगा ही, क्योंकि प्रम तो बड़े-बड़ोंको पिघला देता है, झुका देता है। प्रेमसे बचनेकी लाख चेष्टाके बावजूद यहां भी यही होता है। रचना समाप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते-होते नायकके पिघल जानेका संकेत छोड़ जाती है।

कथा-नायक किसी पत्रिकामें कला-समीक्षक है और वसुधा नामकी एक किशोरीके संपर्कमें आता है और उसके चित्रोंकी अतिरंजित प्रशंसा करके उससे घनिष्ठता पा लेता है, और फिर उसे ही पानेको बेताब हो जाता है। वह इस भ्रमको पालकर अपने अहंको गुब्बारेकी तरह फुलाता रहता है कि वसुधाकी कला उसकी प्रशंसाकी भूखी है। वह सोचता है कि वसुधा उसके इशारोंपर नाचती रहे तो वह प्रोत्साहन देकर उसकी कलाको आसमानपर चढ़ा सकता है, पर यदि वह नखरे दिखाये तो वह अपनी प्रशंसाकी डोर काटकर या समेटकर उसे धूल भी चटा सकता है। इसलिए जब एकबार नायकको मिलनेका वायदा करके भी अपनी एक चित्र-प्रदर्शनीकी तैयारीमें उसे मिल नहीं पाती तो वह जलभुनकर उससे रूठनेका अभिनय करता है और इस प्रतीक्षामें रहता है कि वह झखमारकर उसे मनाने आयेगी। पर वसुधा उस स्थितिकी चुनौतीको सारे मनोबलसे स्वीकारती हुई उसकी उपेक्षा करके पूरे मनोयोगसे अपनी कला-साधनामें जुट जाती है और अत्यल्प समयमें अपने अधूरे चित्र पूरे करके सृजन का अपूर्व आनंद पा लेती है। नायक दो-एक दिन बाद जब अपनी उदारता दिखानेके लिए उसे फोन करता है तो वस्तु-स्थिति जानकर उसके अहं को धक्का लगता है। पर उसे पानेके लिए वह अपनेको संभाल लेता है और पुनः उसको प्रोत्साहन देने लगता है।

नायककी इस स्वार्थांधताके बावजूद उसके प्रति वसुधा का आकर्षण सच्चा है और वह समझती है कि कलाकी एकनिष्ठ साधना द्वारा आत्मनिर्भर हो जानेपर वह नायकका पतिके रूपमें वरण करनेमें माता-पिताकी स्वीकृति अपेक्षा-कृत आसानीसे प्राप्त कर सकेगी। अपनी ये सब भावनाएं वह नायकको पत्रमें लिख भेजती है। पर नायकको सबसे बड़ी चिढ़ विवाहसे है और 'विवाह' शब्दसे ही वह बिदक उठता है और उसके पत्रको मसलकर फेंक देता है और वसुधाकी इस फर्माइशकी उपेक्षा करके कि जब वह सफल प्रदर्शनीके बाद बम्बईसे लौटे, नायक उसे स्टेशनपर जरूर मिले, दौरेपर जानेके लिए कमरेसे निकल पड़ता है। पर सहसा बीचमें ही लौट जाता है और वसुधाकी मसली हुई चिट्ठीको जेबमें रख लेता है। उसका यह आचरण वसुधाके प्रति उसकी गहरी आसक्तिका द्योतक है और 'एन्टी-लव' की नारेबाजीका पर्दाफाश करके इस रचनाको प्रेमकथाओं की परम्परामें ला खड़ा करता है। लेखक जिससे बचना चाहता था, अंततः वही हो जाता है।

वसुधाके अतिरिक्त इस उपन्यासमें एक और सशक्त नारी पात्र है मिस जायस, जिसका लेखकने बड़े मनोयोगसे विरूपण करनेका प्रयास किया है। पर लेखकीय घृणाके बावजूद वह पाठकोंकी सहानुभूति पा लेती है। मिस जायस सच्चे अर्थमें बोहेमियन है। रचना इसीको आधार बना, बेलाग होकर चलती तो शायद हिन्दीके कथा-साहित्यमें कोई कीर्तिमान स्थापित कर लेती। अपने वर्तमान रूपमें तो यह 'आधुनिकता' के नामपर नारेबाजीकी साहित्यिक विफलताका उत्तम उदाहरण बनकर रह गयी है।

रमेशबक्षीका उपन्यास 'किस्से-ऊपर-किस्सा' एक प्रकारसे नया कथा-प्रयोग है जिसमें लेखकके अनुसार मनो-विज्ञानकी एक शाखा 'केरेक्टरालाजी' को आधार बनाकर कम्प्लेक्सों द्वारा निर्मित चरित्रका 'पोस्टमार्टम' किया गया है। इसमें लेखकका उद्देश्य शायद यह दिखाना है कि व्यावसायिकताके फंदेमें फंसे लेखकसे उसकी विवशताएं क्या-क्या करवा सकती हैं। कथानायक एक लेखक है और किसी पत्रिकाके दफ्तरमें नौकर। उस पत्रिकाकी मालिक एक व्यावसायिक नारी है जिसका आदेश है कि नायक बहुत-सी यात्राएं करे, लड़कियोंसे प्रेम करे, अच्छे-भले घरकी बहुओं को फुलर्ट बनाये और उनके रंग-बिरंगे किस्सोंको नमक-मिर्च लगाकर पत्रिकामें छपवाये। यह उपन्यास उसकी इन्हीं मजबूरियोंके किस्से चटखारे ले-लेकर कहता है। उपन्यासकारका दावा है कि यह सेक्स-कुंठित व्यक्तिकी मनो-वैज्ञानिक कथा है जिसमें पुराने किस्से मनोग्रन्थिके प्रतीक हैं, नये किस्से निषेधके तथा प्रथम पुरुष 'मैं' अवचेतनका। पर इस रचनामें उपन्यासकार अपनी यौन-जिज्ञासाको न तो किसी बड़े सामाजिक सत्यसे जोड़ पाता है और न ही उसे खुले कामोत्तेजक वर्णनोंका रूप दे पाता है। उसमें एक अजीब-सी झिझक है, विधि-निषेधोंमें फंसे व्यक्तिकी झुंझ-लाहट है—आखिर वह भी तो कम्प्लेक्सोंसे बना वैसा ही हिन्दुस्तानी आदमी है जिसकी वह चीर-फाड़ करना चाहता है।

—डॉ. रणवीर रांग्रा

पूर्णावतार

लेखक: प्रथमनाथ विशी; रूपान्तर: हंसकुमार तिवारी; प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ, बी/४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ: ३१२; डिमा. ७३; मूल्य: १५.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंगलाके प्रख्यात कथाकार और "लाल किला" जैसे उपन्यासके स्रष्टा श्री प्रमथनाथ विशीका नाम हिन्दी साहित्य में अपरिचित नहीं है। उनकी अनूदित रचनाओंकी पाठक संख्या किसी भी मूल हिन्दी उपन्यासकारकी रचनाओंसे कम नहीं है। 'पूर्णावतार' उनका नवीनतम उपन्यास है। इसमें महाभारत कालके उपरान्तकी वह तस्वीर प्रस्तुत की गयी है जिसे भारतीय इतिहासका संक्रमण काल कहा जाता है। भगवान श्रीकृष्णके बन्धु-बान्धव यदुवंशी अपने अन्याय अत्याचार और पारस्परिक फूटके शिकार होकर स्वयं ही लड़ मरे थे। एक कृष्ण ही ऐसे व्यक्ति थे जिनसे कुछ आशा की जा सकती थी, किन्तु एक दिन भ्रमवश एक व्याधके तीरसे उन्होंने भी देह त्याग दी।

श्रीकृष्ण देहत्यागसे ही प्रस्तुत उपन्यासका प्रारम्भ होता हैं। मन्दबुद्धि व्याध जरा, जोकि इस उपन्यासका नायक है, पग-पगपर जीवनसे छला जाता है। उसकी पत्नी जरतीकी व्यथा-कथा उसके दुर्भाग्यकी कहानी है। भगवान वासुदेव उपन्यासकी पृष्ठभूमिमें रहते हुए भी समस्त कथाके नियामक संचालक हैं। और जरा-जरतीकी मर्म कथाका बयान होता चलता है। यदुवंशकी कामातुर नारियोंसे बचनेके लिए जरा कहाँ-कहाँ नहीं जाता। उसकी प्रमिका मदिरा उसके मार्गमें कितनी उलझनें खड़ी करती रहती है कि जरा का जीवन ही एक भागम-भाग बन जाता है। मुक्ति पानेके लिए वह जीवनसे भागता है किन्तु जीवन उसे खीचें रहता है। सचमुच मुक्ति कहां है, यही जराकी सबसे बड़ी खोज है, जो उसे निरन्तर भगाती रहती है। जराका अन्तर्द्वन्द्व पाठकको अपनी ओर केवल आकर्षित नहीं करता वरन् वह तादात्म्यकी स्थिति तक पहुँच जाता है।

दूसरी ओर वह अभागिन जरती, जो निरपराध तो है, किन्तु विधिकी बिडम्बनासे दुर्भाग्यके वात्याचक्रमें फंसकर रह गयी है और निरन्तर धक्के खाती रहती है। उसकी आस्तिकता पतिपरायणता और निर्बोधता भी उसकी व्यथा-कथामें सहायक नहीं हो पाते। वास्तवमें पाठककी सहानुभूतिकी सबसे अधिक हकदार भी जरती ही है। उपन्यासकारने इन दोनों चरित्रोंका इतने विस्तारसे एवं रोचक ढंगसे चित्रण किया है कि वे पाठकके समक्ष साकार हो उठते है। निस्सन्देह विशी एक कुशल शिल्पी हैं और उनके पात्र अपनी सजीवताके कारण पाठकको अभिभूत करनेकी पूर्ण क्षमता रखते हैं।

उपन्यासकारने अति सामान्य और प्रायः उपेक्षित पात्रों के माध्यमसे एक सम्पूर्ण युगका सम्यक् चित्रांकन करनेमें अपूर्व सफलता पायी है। ऐसी कृतियाँ कभी-कभी ही और प्रमथ बाबू जैसे प्रतिभासम्पन्न रचनाकारों द्वारा ही लिखी जाती है। अनुवादक श्री हंसकुमार तिवारीने भी प्रस्तुत उपन्यासके रूपान्तरमें अत्यधिक श्रम किया है और अपनी अनुवाद-क्षमताका परिचय दिया है। कहींभी ऐसा नहीं लगता कि यह एक अनूदित उपन्यास है वरन् ऐसा लगता है कि जैसे हम किसी मूल रचनाको ही पढ़ रहे हैं।

—मंजुल उपाध्याय

पचास परचे ईराक्लबके

लेखक : रावी; प्रका. सरस्वती प्रकाशन मंदिर, आगरा। पृष्ठः १४२; क्रा. ९६; मूल्यः ३.५० रु.।

प्रस्तुत उपन्यास पत्र-शैलीमें लिखित अपने ढंगकी अनूठी रचना है। इसमें विविध प्रकारके परचों, पत्रों, लेखों और समाचारपत्रोंकी कतरनों एवं टिप्पणियोंके संकलनका रूप मिलता है। इन विभिन्न रूपोंमें समाज-जीवनका यथार्थ-बोध होता है। लेखकने आत्मीय भावसे सामायिक समस्याओंपर विचार रखे हैं और उनके समाधानका प्रयास किया है। इन पत्रोंकी लेखक संख्या ग्यारह है।

लेखकका कथन है कि उक्त उपन्यास हिन्दीकी सर्वप्रथम सामाजिक आन्तर्लौकिक (सोशियो-ऑकल्ट) रचना है जो पूर्णतया एक नूतन प्रयास है। इसका आधार १९५२ई० में प्रकाशित लेखकका उपन्यास 'नये नगरकी कहानी' है। इसमें व्यक्तियोंके पारस्परिक सम्बन्धों एवं उनके मिलनकी विभिन्न संस्थाओंके वातावरणका यथार्थ चित्रण हुआ है। नये आनेवाले युगकी चेतनाके विकासके लिए उपयुक्त मानव और सुयोग तथा मिलन-स्थलको लेकर कल्पित घटनाओं और प्रसंगोंको प्रस्तुत उपन्यासमें मूर्त और साकार रूप देनेका लेखकने प्रयास किया है।

उपन्यासमें सामाजिक एवं मानव-दर्शनसे सम्बन्धित समस्याओंपर विचार हुआ है। नारी समस्या और मानवके जटिल पारस्परिक सम्बन्धोंकी विभिन्न समस्याओंपर बड़ी आत्मीयता और स्वाभाविकताके साथ ऊहापोह हुआ है। इस दिशामें गंभीर बातोंको सहजरूपमें प्रस्तुतकर लेखकने पर्याप्त सफलता प्राप्त की है।

अपने ढंगका एवं पत्र-शैलीका पहला सामाजिक आन्तर्लौकिक उपन्यास होनेके नाते लेखकने इस दिशामें सफलता पायी है। भाषा सुबोध एवं भावपूर्ण है। छपाई साफ और शुद्ध है।

—रजनीकाँत लहरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकने सपाट पेड़

ले. मोनीक लाज; अनुवादक: श्री नरेन्द्र शर्मा; प्रकाशक: जीवन प्रभात प्रकाशन, बम्बई—४०००६० । पृष्ठ : ४६; डिमा, ७३; मूल्य : १.५० रु. ।

प्रस्तुत उपन्यास फ्रांसके आधुनिक साहित्यकारोंमें विशिष्ट स्थान प्राप्त श्रीमती मोनीक लाजके द्वितीय उपन्यासका हिन्दी अनुवाद है। श्रीमती लाजका प्रथम उपन्यास 'कटफिश' अंग्रेजीमें छपते ही प्रसिद्ध हो गया और उस प्रथम उपन्यास द्वारा ही उपन्यासकारको लोकप्रियता प्राप्त हो गयी। प्रस्तुत द्वितीय उपन्यासके अनुवादमें दो प्रेमियोंके निरन्तर यात्रामें परिणत होते वियोगको, एक अन्तिम ड्राइवको, एक धूपछांवी पटकथाकी तरह हिन्दीमें ढाला है, परन्तु मूल उपन्यासका नाम न देकर पाठकको भ्रममें डाला गया है।

'समाजमें बदलते हुए मूल्य और तीव्रतासे परिवर्तित होती स्थिति आधुनिक चेतनाकी पृष्ठभूमि है।' नारीका दफ्तरोंमें जाना, कुटुम्बका टूटना, बेरोजगारीके परिवेशमें व्यक्तिकी गृहहीनता एवं आवारापन, पुरुषके प्रति प्रेमकी अभिव्यक्तिमें पहल करनेका नारीका अधिकार आदि आधुनिकता-बोधक आयाम आज भारतीय साहित्यमें भी स्पष्ट दृष्टिगोचार हो रहे हैं, विश्व-साहित्यमें तो इसका अभाव नहीं ही है। 'चिकने सपाट पेड़' इसी आधुनिकताकी चेतना की एक शिथिल कड़ी है।

पूरे उपन्यासमें डीगो और क्लाडियाकी एक लम्बी यात्रा, एक अन्तिम ड्राइव, एक आवारा जिन्दगी एवं अतृप्त वासनाकी सपाट कहानी है। यद्यपि उपन्यासकार ने डीगोको प्रेमी एवं क्लाडियाको उसकी प्रेमिकाके रूपमें उपस्थित किया है, परन्तु उसके पूर्व भी अनेक लोगोंकी प्रेमिका बन चुकी थी। इसीप्रकार डीगोके जीवनमें भी यह पहली लड़की नहीं थी। इसप्रकारके उन्मुक्त प्रेमके लिए फ्रांसकी ख्याति है, परन्तु पाश्चात्य आवारा जिन्दगी के लिबासको कुछ लोग ओढ़ना चाहते हैं, जबकि साहित्य से बाहर निकलकर व्यवहारमें कोई गुंजाइश नहीं और न ही साहस।

ऐसा प्रतीत होता है कि नारी-स्वतंत्रताकी अलमबारदार क्लाडिया इस दिशामें क्रान्तिकी घोषणा करते हुए नारी-मर्यादापर पदाघातकर उसे अस्तित्वहीन बनाना चाहती है। उपन्यासकारकी दृष्टिमें यह आधुनिक चेतना का आदर्श हो सकता है, परन्तु नारी मर्यादाकी वर्जना हमारे देशमें अभी नारीमें यह कहनेका साहस नहीं पैदा होने देती कि —'हममें समर्पणकी लालसा रहती है। किसी युवकके सम्मुख हम स्वयंको समर्पित कर पूर्णताका अनुभव करती हैं और प्राकृतिक नियमोंके अनुसार स्वीकार कर लेती हैं......(पृ० ६)।' क्लाडियाने आगे कहा—'नारी भी पुरुषकी तरह ही प्यासी है। उसे भी वासनाकी तृप्ति चाहिये...पुरुष कोई भी क्यों न हो। वसन्त ऋतुमें मनमें एक टीस उमगती है और मन प्यारमें डूबा रहता है। कभी कभी मैं सोचती हूं औरतोंके लिए पुरुष-वेश्यालय होने चाहियें, जहां पैसे देकर वासनाकी आग बुझायी जा सके' (पृ० २६)। निश्चय ही यह नयी उद्‌भावना है। चूंकि मोनीक लाज स्वयं एक नारी हैं और नारी-चरित्र एवं नारी-प्रकृतिके संबंधमें उनके निजी अनुभवको चुनौती नहीं दी जा सकती।

इन सब परिस्थितियोंमें से निकलनेके बाद जब क्लाडिया कहती है कि 'मैं अब तुमसे प्यार नहीं करती। यही मेरा खेल है, औरत चाहे तो सब कुछ कर सकती है' (पृ० ४५), तो सचमुच 'नारी' रहस्य बन जाती है और सब कुछ करके भी लगता है कि वह कुछ नहीं करती। जब ऐसा प्रतीत होता है कि उसका दैहिक संबन्ध उसके मन और हृदयको संस्पर्श तक भी नहीं करता तो इस सिद्धावस्थाकी उपलब्धिपर भारतीय ईर्ष्या कर सकते हैं।

नारी स्वातंत्र्य, अविवाहित जीवन, उन्मुक्त यौन संबंध आदि मनोवैज्ञानिक कम्प्लैक्स इस उपन्यासमें आधुनिकताके आयाम हैं। प्रस्तुत उपन्यासका चलचित्र भी बन चुका है और उसे पुरस्कार भी प्राप्त हो चुका है, परन्तु अभीतक उसकी प्रतियाँ कुल बिकी हैं, केवल पचास। इसकी लोकप्रियताका प्रमाण है? हमारे देशमें भी ऐसे अनेक उपन्यासकार हैं जो नारीके साढ़े तीन हाथके शरीर के मोहसे मुक्त होकर आगे नहीं बढ़ सके। उस श्रेणीके उपन्यासोंमें निश्चय ही यहभी पाठकोंके मनमें सनसनाहट एवं गुदगुदी पैदा करनेवाला उपन्यास है। हिन्दी अनुवादमें में यथेष्ट शिथिलता है।

—बैजनाथ राय

छाया मत छूना मन

लेखक : हिमांशु जोशी; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली-११०००१। पृष्ठ : ११२; क्रा. ७४; मूल्य : ७.५० रु. ।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोमानी कथापर आधारित, साहित्यमें प्रदूषण फैलानेवाला यह उपन्यास, ज्ञानपीठकी 'लोकोदय-ग्रन्थमाला' में छपा हुआ देखकर आश्चर्य होता है। कदाचित् लेखकने लोकप्रिय उपन्यासोंकी होड़में फिल्मीकरणके उद्देश्यको सामने रखकर यह उपन्यास लिखा है। ऐसे उपन्यासोंका प्रकाशित होना, एक दुखद घटना है।

—नरेन्द्र कोहली

दस्तावेजकी चोरी

लेखक : नीलम; प्रकाशक : सौभाग्य प्रकाशन, पो०बा० १०४, इलाहाबाद-३। पृष्ठ :१७४; क्रा.८३; मूल्य : ६.०० रु.।

रहस्य रोमांच और जासूसी उपन्यासोंके नामपर हिन्दीमें अबतक जो साहित्य उपलब्ध है वह अपने अवैज्ञानिक तथ्यों एवं कुरुचिवर्द्धक होनेके कारण प्रायः साहित्यसे संबंध विच्छेद कर चुका है। परन्तु समीक्ष्य पुस्तकके प्रकाशकका यह दावा है कि 'हिन्दीके रहस्यमय रोमांच और जासूसी साहित्यको एक नया मोड़ यह उपन्यास दे सकेगा।'

वस्तुतः यह भूल-भूलैयाका किस्सा है और पाठकको व्यस्त रखनेकी शतरंजी चालें हैं। इससे लेखकने पाठकको उबा देनेका खतरा उठाया है। अनेक स्थानोंपर कथाका तारतम्य नहीं बैठता। ५० के दशककी घटनाओंके साथ नक्सलवादियों और चारु मजूमदारका प्रसंग जोड़ा गया है, जिसकी संगति नहीं बैठती। अतिरंजित कल्पनाओंके कारण अस्वाभाविकता तो है ही।

यह अन्य जासूसी उपन्यासोंसे भिन्न प्रकारका है और इसमें कुछ नवीनता भी है। यदि लेखक इसे कथा-प्रवाहकी संश्लिष्टता और व्यतिक्रमसे बचाता और ऐतिहासिक तथ्योंकी प्रामाणिकताका ध्यान रखता तो यह उपन्यास रहस्य, रोमांच और जासूसी साहित्यको नया मोड़ देनेका दावा कर सकता था।

—बैजनाथ राय

कहानी संग्रह

अन्तिम चित्र

लेखकः बलराज साहनी; प्रकाशकः राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : ११३; क्राउन ७४; मूल्यः ६.०० रु.।

'अन्तिम चित्र' स्व० बलराज साहनीकी बारह कहानियोंका संग्रह है जिसमें उनकी कई साधारण कहानियोंके साथ कुछ अत्यधिक चर्चित प्रशंसित कहानियाँ भी संकलित हैं। श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकारकी भूमिकाके अनुसार उनकी पहली कहानी 'शहजादोंका ड्रिंक' है जो १९३६ में विशाल भारतमें छपी थी। वह हिन्दी कहानी लेखनका आरम्भिक दौर था और तबसे आजके समयके बीच कहानी विधामें इतने अधिक परिवर्तन आ चुके हैं कि सहज ही उस वक्त की किसी कहानीको आजके संदर्भमें वह विशिष्टता प्राप्त नहीं हो सकती जोकि उस वक्त हो सकती थी। फिरभी 'शहजादोंका ड्रिंक' पढ़ते हुए एक बार भी ऐसा नहीं लगता कि यह कहानी वर्षों पूर्व लिखी गयी होगी। इस कहानीको आजकी कई चर्चित कहानियोंके साथ रखा जा सकता है।

इस संग्रहमें 'शहजादोंका ड्रिंक' के अतिरिक्त और भी कई अच्छी कहानियां हैं—'ओवरकोट', 'वापसी व वापसी' तथा 'अन्तिम चित्र'। इन कहानियोंमें कथ्यगत ही नहीं शिल्पगत भी पर्याप्त भिन्नता है। इससे भी विशिष्ट बात यह है कि जहाँ पुरानी कहानियोंमें 'आदर्शवाद' ही छाया हुआ मिलता है या फिर 'समाजको बदलो' का नारा या चारित्रिक-उपदेश, वहीं बलराजजीकी इन कहानियोंमें व्यक्ति-चरित्रको प्रधानता मिली है। और यहीं उनके मौलिक विचारोंके दर्शन होते हैं। साथही इन कहानियोंको पढ़नेके बाद चन्द्रगुप्तजीकी यह बात बिलकुल सही प्रतीत होती है—'उनके (बलराजजीके) लेखनमें असाधारण ईमानदारी, स्पष्टता और सहजता है। किसी बातको घुमा-फिराकर कहना उन्हें पसन्द नहीं था। किसी तरहकी तकनीकी कैद उन्होंने अपने लेखनके लिए भी स्वीकार नहीं की।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर इसके साथही यहभी सच है कि वे कई कहानियों में अपनेको पूरी तरह स्पष्ट नहीं कर पाये हैं और जैसे कोई बात बीचमें कहीं छूट गयी हो, इस तरह इन कहानियोंको पढ़कर लगता है। उदाहरणके तौरपर 'वसन्त क्या कहेगा?' को ले सकते हैं। यह एक साधारण प्रेम कथा ही है—माधो और मंजुकी प्रेमकथा। पर उलझी-उलझी। सेठकी क्यारियोंमें अलूचोंके फूलोंकी देखभाल करती मंजु और माधो के बीच ऐसा क्या था जो वे निकट होते हुए भी दूर ही रहे! सेठका भय? उनकी अपनी विवशता? कहानीसे कुछभी स्पष्ट नहीं होता! इसी तरह जर्द कहानीमें कैदी लड़केके जुर्मका कोई पता नहीं चलता जिसके कारण एक औरत पूरे रास्ते गाड़ीके यात्रियोंका आकर्षण-केन्द्र बनी रहती है।

यों 'अन्तिम-चित्र' में संगृहीत कहानियोंके आधारपर बलराजजीके लेखनको कोई विशिष्ट स्थान प्राप्त होता है, ऐसा नहीं कहा जा सकता! पर इतना जरूर है कि उनकी लेखकीय प्रतिभाका परिचायक ये कहानियाँ जरूर हैं। और इससे महत्वपूर्ण बात यह है कि अभिनय क्षेत्रमें अपनी व्यस्तताके बावजूद बलराजजी साहित्यसे कभी विमुख नहीं हुए। यह तो अब नहीं कहा जा सकता कि यदि वे जिन्दा होते तो भविष्यमें साहित्यमें क्या स्थान बनाते, पर उन्हें एक लेखकके रूपमें साहित्य संसार तो याद रखेगा ही।

—सुरेन्द्र तिवारी

अपनी पुस्तकों को आवश्यकताके लिए हमें लिखें

—

नवभारती सहकार प्रकाशन

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग

दिल्ली-७

बारह हंगारी कहानियां

अनुवादक: भारतभूषण अग्रवाल, रघुवीर सहाय; प्रकाशक: साहित्य अकादेमी, रवीन्द्र भवन, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ: २००; डिमा. ७४; मूल्य: १०.०० रु.।

इस संग्रहमें बारह हंगारी लेखकोंकी एक-एक कहानी संकलित है। कहानीसे पूर्व लेखकका संक्षिप्त परिचय दिया गया है, जो आवश्यक था, तथा कहानीकी संवेदनाको समझनेमें सहायक होता है। कहानियोंकी मूल संवेदना भारतीय जन-जीवनसे भिन्न नहीं लगती, परिवेश अवश्य भिन्न है। उनकी मानवीय-संवेदना अत्यन्त मुखर होकर पाठकको प्रभावित करती है। ऐसी कहानियां मानवीय एकताको अधिक दृढ़तासे स्थापित करती हैं।

अनुवादकी श्रेष्ठता परखनेके लिए, हंगारी भाषाका ज्ञान आवश्यक है, जो मुझे नहीं है। इतना ही कहा जा सकता है कि जिस भाषामें वे प्रस्तुत की गयी हैं, वह अनुवादकी जटिल, कठिन प्रवाहहीन भाषा नहीं है—उसमें अपेक्षित तरलता है; जो एक सीमातक परिवेशका अजनबीपन दूर कर देती है।

—नरेन्द्र कोहली

ज़हर

लेखक: श्रवणकुमार, प्रकाशक; भारतीय ज्ञानपीठ, बी/४५-४७, कनाट प्लेस, नई दिल्ली-११०००१। पृष्ठ: १४८; क्रा. ७३; मूल्य: ७.०० रु.।

इन कहानियोंमें लेखककी जो 'टोन' उभरती है वह एक मध्यवर्गीय ऐसे युवककी हैं, जो स्वयंको 'अफसर' मान बैठा है और उसकी विशिष्टताके प्रति सदा जागरूक तथा सचेत है। इन कहानियोंके नायककी पीड़ा, मध्यवर्गीय संघर्षरत टूटते हुए व्यक्तिकी पीड़ा न होकर, एक मध्यवर्गीय अफसरकी पीड़ा है, जो अपनी आर्थिक बाध्यताके कारण तथा कथित 'अफसर' कासा जीवन जी नहीं पाता। यह कहीं भी स्पष्ट नहीं है कि वह कैसा अफसर है और 'अफसर' का जीवन-स्तर वह कैसा चाहता है।

भाषाके धरातलपर यह कहानी-संग्रह अत्यन्त दुर्बल है। लेखकके पास न तो हिन्दी भाषाकी शब्दावली है और न मुहावरा। वह हिंदीकी प्रकृतिको नहीं समझता। उर्दू तथा अंग्रेजीकी शब्दावलीकी बैसाखियाँ भाषाके लंगड़ेपनको छिपा नहीं पातीं, उसे और अधिक उजागर कर देती हैं।

—नरेन्द्र कोहली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामचरितमानस : तुलनात्मक अनुशीलन

लेखक : डॉ. सज्जनराम केणी; प्रकाशक : पुस्तक संस्थान, १०६।५०ए, नेहरु नगर, कानपुर-१२। पृष्ठ: ४६४; क्रा. ७४; मूल्य : ४५.०० रु. ।

प्रस्तुत शोधप्रबन्धमें रामचरितमानसके साथ महाराष्ट्र-संत एकनाथजीकी भावार्थ रामायणका तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। लेखकने भूमिकामें छह अध्यायों की चर्चा की है, किन्तु विषय-सूचीमें नौ अध्याय हैं विषय-सूचीमें, जिसे पांचवां अध्याय कहा गया है, उसे भूमिकामें दूसरा अध्याय बताया गया है। वस्तुतः भूमिकाका वर्गीकरण ही सही है। लेखकने एकसे चारतकके अध्यायों को एकही अध्यायके चार उपशीर्षकोंके रूपमें रखा होगा। लेखकके समक्ष लक्ष्य सुस्पष्ट, किन्तु शायद प्रकाशकके समक्ष नहीं था, अतएव उसने विषयसूचीके प्रकाशनमें त्रुटि कर दी, साथही शायद लेखकको यह परिवर्तन दिखाया नहीं जा सका होगा। मैं अध्यायोंकी संख्या भूमिकामें उल्लिखित संख्याके अनुसार ही दे रहा हूं।

प्रथम अध्यायके अन्तर्गत रामकाव्य-परम्परामें तुलसीदास और एकनाथका स्थान निर्धारित किया गया है। परम्पराका अतिसामान्य परिचय प्रस्तुतकर निष्कर्ष दिया गया है कि दोनोंने अपने समयकी दयनीय परिस्थितिको सुधारनेके उद्देश्यसे लोक-परिचित रामकथाके माध्यमसे आदर्शकी स्थापना की थी। दोनोंकी ग्रंथ-रचनाका उद्देश्य है जनकल्याण।

द्वितीय अध्याय (कथावस्तु) में ग्रन्थोंके नामकरण, आधारग्रन्थ और उद्देश्यके विषयमें बताते हुए लेखक कहता है—दोनों महापुरुषोंने केवल मनोरंजन और कला विलासके प्रयोजनसे काव्य रचना नहीं की। ये महाकवि अपनी-अपनी रचनाओं द्वारा जन-मानसपर विशिष्ट संस्कार डालना चाहते थे। लोक-शिक्षा ही उनका प्रधान उद्देश्य था जिसके साधनके रूपमें ही रामभक्ति या रामकथाको उन्होंने अपनाया था।' (पृष्ठ ५८)

सातों काण्डोंकी कथावस्तुका तुलनात्मक अध्ययन कर लेखक इस निष्कर्षपर पहुँचा है तुलसीदास एक विशुद्ध भक्त कवि हैं, तो एकनाथ कीर्तनकार एवं उपदेशक हैं। तुलसीने मुख्यतः आध्यात्म रामायणसे प्रेरणा ली, तो एकनाथने वाल्मीकि-रामायणसे। तुलसीने आधिकारिक कथाके मध्य प्रासंगिक कथाओंको अनावश्यक विस्तार न देकर संकेत शैलीसे काम लिया है, जबकि एकनाथ यह संयम नहीं दिखा सके हैं। तुलसीमें कथा-संयोजनकी जो क्षमता है एकनाथमें उसका अभाव है।

तृतीय अध्याय (चरित्र चित्रण) में लेखकका कथन है कि एकनाथने कथावस्तुकी ओर अधिक ध्यान दिया, इससे उनके चरित्रांकनमें शैथिल्य आ गया, जबकि तुलसीने चरित्र-चित्रणपर विशेष ध्यान दिया है। मानसके चरित्रोंमें संयम और मर्यादा है, भावार्थ-रामायणके कई पात्र शिष्टाचारके नियम एवं संयमका उल्लंघन कर जाते हैं। कहीं-कहीं वर्णनमें अश्लीलता आ जाती है। लेखकके मतानुसार तुलसीके चरित्रांकनकी अन्य विशेषताएँ हैं मनोवैज्ञानिकता एवं भावद्वन्द्व। तुलसीने अपने अभिप्रेत पात्रकी प्रतिमा स्थिरकर उसका मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमिपर क्रमिक विकास दिखाया है। इस अध्यायमें १५ चरित्रोंका तुलनात्मक अध्ययन है।

काव्य-सौष्ठवके तुलनात्मक अध्ययनवाले चौथे अध्यायमें बताया गया है कि दोनों कवियोंने काव्यके प्रति अपनी अनभिज्ञता प्रकट करते हुए भी उत्कृष्ट कवित्वका परिचय दिया है। तुलसीने रस-व्यंजनामें एकनाथकी अपेक्षा अधिक मर्यादासे काम लिया है। 'तुलसीका विवेचन अलंकार-बहुल है और एकनाथका अलंकार विरल।' किन्तु दोनोंही रूपक-सम्राट् हैं। तुलसीने अनेक छन्दोंका प्रयोग किया है और एकनाथने केवल एकका। दोनोंकी भाषा शैलीमें सरलता, स्वाभाविकता एवं शब्द-सम्पन्नताका गुण पाया जाता है।

युगीन सांस्कृतिक दुर्गतिसे दोनों कवि क्षुब्ध थे, दोनोंने ही आदर्श समाजकी कल्पना अपने ग्रंथोंके माध्यमसे प्रस्तुत की है। व्यक्ति, परिवार एवं समाजसे सम्बन्धित आदर्शोंका तुलनात्मक अध्ययन पांचवें अध्यायमें हुआ है। दोनों कवियोंने नारीके प्रमदा-रूपकी निन्दा की है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तिम अध्यायमें बताया गया है कि दार्शनिक विचारोंकी दृष्टिसे दोनोंमें अद्‌भुत साम्य है, अन्तर केवल प्रतिपादन शैलीमें है। तुलसीकी अपेक्षा एकनाथ अधिक सुबोध हैं।

भूमिकामें उल्लिखित डॉ० आनन्दप्रकाश दीक्षितके इस कथनसे मैं सर्वथा सहमत हूं—'तुलनात्मक अध्ययनमें जिस पक्षधरताके दोषका आ जाना शक्य है, उससे सर्वथा बचे रहकर डॉ० केणीने तटस्थ शोधकर्ताके रूपकी सर्वत्र रक्षा की है।' डॉ० केणीके निष्कर्ष सर्वत्र तर्काश्रित एवं निष्पक्ष हैं। उनकी प्रतिपादन-शैली और भाषा भी स्तुत्य है।

रामकथाको माध्यम मानकर देशमें भावात्मक एकता स्थापित करनेके उद्देश्यसे जो तुलनात्मक अध्ययन हो रहे हैं, उस कड़ीमें केणीजीका यह शोधप्रबन्ध अपना विशेष महत्व रखता है। हिन्दी और मराठीभाषी जनता औरभी पारस्परिक निकटताका अनुभव करेगी। मानस चतुश्शती-वर्षमें लेखकका यह प्रयास अभिनन्दनीय है।

कागज-संकटके इस युगमें पुस्तककी छपाई और साजसज्जा सन्तोषजनक ही कही जायेगी।

—डॉ० रमानाथ त्रिपाठी

रामकथाके पात्र

लेखक: डॉ. भ. ह. राजूरकर; प्रकाशक : ग्रन्थम्, रामबाग, कानपुर-१२। डिमा. ७२; मूल्य : ४०.०० रु.।

'रामकथा' भारतीय साहित्यकी कितनी बड़ी थाती है, यह अब विवादका विषय नहीं है। संपूर्ण भारतकी सांस्कृतिक, सामाजिक तथा मानसिक बुनावटमें इस कथा का अनन्य महत्त्व रहा है। इसी महत्वके कारण स्वतंत्रताके बाद भारतके विभिन्न विश्वविद्यालयोंमें राम-साहित्यका गंभीर रूपसे अध्ययन शुरू हो गया। परन्तु यह अध्ययन 'तुलसी' पर ही केन्द्रित रहा है। संस्कृत विभागोंमें वाल्मीकि रामायणका स्वतंत्र अध्ययन शुरू हुआ। ऐसे अध्ययनकी आवश्यकता थी और है भी। परन्तु तुलसीकी कृतिको पूर्व परम्परासे अथवा बादमें लिखे गये राम-साहित्यसे जोड़कर तुलनात्मक अध्ययनकी परम्परा अधिक विकसित नहीं हो सकी, यह दुर्भाग्यका विषय रहा। यत्र-तत्र पत्र-पत्रिकाओंमें इस प्रकारकी चर्चा अवश्य होती रही है। परन्तु केवल इसाको अध्ययनका प्रमुख लक्ष्य नहीं बनाया गया। तुलसीके मानसका अध्ययन संस्कृतकी कृतियों के संदर्भमें अथवा तुलसीके बाद विभिन्न बोलियोंमें इस विषयपर जो कृतियां प्रस्तुत की गयीं, उनके संदर्भमें अध्ययन करें तो आश्चर्यजनक तथ्य सामने आ सकते हैं। इसप्रकार तुलसीके 'मानस' को केन्द्रमें रखकर उसे पिछली परम्परासे जोड़कर अथवा अगली परम्परासे जोड़कर अध्ययन करना आजके युगकी आवश्यकता है। इस दिशामें डॉ० राजूरकरजी द्वारा प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध एक सुदृढ़ परम्पराकी ओर संकेत कर रहा है। उनके इस प्रबन्धसे इसप्रकारके तुलनात्मक अध्ययनकी शुरूआत हो जाये तो यही इस प्रबन्धकी सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जा सकती है।

प्रस्तुत प्रबन्धमें वाल्मीकि, तुलसी एवं मैथिलीशरण गुप्तके संदर्भमें रामकथाके पात्रोंका तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। "मानवका वस्तुओंके साथ जो व्यवहार होता हैं उससे सभ्यताकी प्रगतिका ज्ञान होता है और इसी-तरह अन्य मानव बंधुओंके साथ उसका जो व्यवहार होता है, उससे उसका चरित्र व्यक्त होता है और चरित्रके व्यक्त होनेमें संस्कृति व्यक्त होती है।" लेखकने अपने इसी वाक्यको आधार बनाकर रामकथाके पात्रोंका विवेचन किया है। अप्रत्यक्ष रूपसे वे यह संकेत दे रहे हैं कि चरित्रको निमित्त बनाकर तत्कालीन संस्कृतिका ही चित्रण किया जानेवाला है। परन्तु चरित्रके माध्यमसे संस्कृतिका संकेत बहुत कम हुआ है। छः प्रमुख प्रकरणोंमें विभाजित इस प्रबंधके पहले प्रकरणमें तो रामकाव्यकी परम्पराको स्पष्ट किया गया है। दूसरे प्रकरणमें रामकथाका प्रतीकात्मक विवेचन है। वास्तवमें ये दोनों प्रकरण प्रबन्धके मुख्य विषयसे संबंधित नहीं हैं। परन्तु पृष्ठभूमिके रूपमें इनका महत्त्व है। तीसरे प्रकरणमें रामकथाके पात्रोंका वर्गीकरण किया गया है। वर्गीकरणकी इस पद्धतिमें परम्पराबद्ध मार्गको अस्वीकारकर नयी वैज्ञानिक प्रणालीको लेखकने स्वीकार किया है। वाल्मीकि, तुलसी तथा मैथिलीशरण गुप्तके पात्रोंका यह वैज्ञानिक वर्गीकरण देखकर अधुनातन यूरोपीय प्रबन्धोंकी याद आती है। चौथे प्रकरणमें प्रमुख पुरुष पात्रोंका तथा पांचवेंमें प्रमुख स्त्री पात्रोंकी विवेचना है। प्रमुख स्त्री पात्रोंमें केवल तीन ही स्त्री पात्र हैं, सीता, कौशल्या तथा कैकयी। 'उर्मिला' को मैं गुप्तकी कृतिमें प्रमुख स्थान प्राप्त हुआ है परन्तु लेखकने उसकी विवेचना गौण पात्रोंमें ही की है। छठे प्रकरणमें ३९ गौण पात्रोंका विवेचन हुआ है। अंतिम प्रकरण उपसंहारका है। 'उपसंहार' शीर्षकके अंतर्गत दी हुई सामग्री पढ़कर यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि लेखक इसे उपसंहार शीर्षक क्यों दे रहे हैं। 'उपसंहार' के आरम्भ में ही एक वाक्य है—"इन सबको ध्यानमें रखते हुए राम-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथाके पात्रोंका चारित्रिक मूल्यांकन एवं तदनुसार सांस्कृतिक मूल्यांकन नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है।" इस प्रकारके वाक्य 'उपसंहार' शीर्षकके विरोधमें जाते हैं। अधिक अच्छा होता लेखक इस सातवें प्रकरणको उपसंहार न कहते हुए 'विषय प्रवेश' शीर्षक देकर आरम्भमें ही रखते।

वाल्मीकि, तुलसी तथा मै. गुप्तके रामकथाके पात्रोंमें धीरे-धीरे परिवर्तन होता गया है। यह परिवर्तन 'आचरण' का नहीं है। क्योंकि आचरण तो इन पात्रोंका तीनोंमें एक-सा है। इनकी मन:स्थितिमें, निर्णय स्थितिमें, तर्क और विचार पद्धतिमें परिवर्तन हुआ है। इस परिवर्तनका बड़ा ही सुन्दर निरूपण प्रबन्धमें हुआ है। परन्तु इस परिवर्तनके लिए कौनसी सामाजिक, राजनीतिक अथवा सांस्कृतिक परिस्थितियां कारणीभूत थीं, इसका विवेचन बहुत कम हुआ है। संभवत: इसप्रकारके अध्ययनसे प्रबंधके मूल विषयसे दूर जानेकी संभावना रही हो अथवा विस्तार भय रहा हो, इस प्रकारका विवेचन अत्यंत संक्षेपमें हुआ है, यह सत्य है। उपसंहार (?) में अवश्य लेखकने इस ओर संकेत दे दिया है। उपसंहार प्रकरणमें एक-दो स्थानपर गंभीर भूलें हैं।

एक खटकनेवाली बात यह है कि पहले प्रकरणमें संदर्भ ग्रन्थोंका उल्लेख नहीं हुआ है। दूसरे प्रकरणमें अलबत्ता प्रत्येक संदर्भ ग्रन्थका उल्लेख फुटनोटमें किया गया है। पुस्तकके अन्तमें फिरसे संदर्भ-ग्रन्थ तथा सहायक-ग्रन्थ सूची देनेकी परम्परा हिन्दी-प्रबन्धोंमें है, उससे लेखक बच गये हैं।

कुल मिलाकर प्रस्तुत प्रबंध एक नयी दिशाकी ओर संकेत कर रहा है। रामकथाके अध्ययनके नये क्षितिजोंको यह पुस्तक स्पर्श कर रही है।

—प्रा० सूर्यनारायण रणसुभे

आधुनिक हिन्दी साहित्यको अहिन्दी लेखकोंका योगदान

लेखक : डॉ० विलास गुप्ते; प्रकाशक : नवनीत प्रकाशन, रुक्मिणी सदन, हिन्दू कालोनी, दादर बंबई-१४। पृष्ठ : ३५८; डिमा. ७३; मूल्य : ३०.०० रु.।

अहिन्दी भाषा-भाषी हिन्दी लेखकोंकी कृतियोंका परिचय तथा मूल्यांकन प्रस्तुतकर, डॉ० विलास गुप्तेने सराहनीय कार्य किया है। यह शोध-प्रबन्ध अपने ढंगकी प्रथम कृति है। भारतीय विचारधाराके मूलभूत साधनोंकी एकताके परिप्रेक्ष्यमें यह संदर्श-ग्रन्थ अनेक दृष्टियोंसे महत्त्वपूर्ण है।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध ग्यारह अध्यायोंमें विभक्त है। प्रथम अध्याय प्रास्ताविक है जिसमें लेखकने अपने ग्रन्थ के विवेच्य विषयकी परिभाषा एवं सीमाओंका निर्धारण किया है। डॉ० गुप्तेने उन समस्त लेखकोंको 'अहिन्दी लेखक' माना है जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है, फिर वे किसीभी प्रान्तमें क्यों न रहते हों और जो घरोंमें अहिन्दी भाषाका प्रयोग करते हैं। मुझे सन्देह है कि यह अन्तिम शर्त विवेच्य सभी लेखकोंपर कहाँतक लागू होगी। डॉ० गुप्ते एक और वर्गीकरण कर लेते तो विवेच्य विषय अधिक स्पष्ट तथा उपादेय हो जाता। वह यह कि अहिन्दी-भाषी हिन्दी लेखकोंके दो वर्ग किये जा सकते हैं प्रथम वे जो हिन्दी प्रान्तमें रहते हैं और दूसरे वे जो हिन्दीभाषी प्रान्त के बाहर रहते हैं।

डॉ० गुप्तेने उन लेखकोंको छोड़ दिया है, जिनकी मातृभाषा कोई विदेशी (भारतीयेतर) भाषा है। एक अलग अध्यायमें इन लेखकोंकी चर्चा होती तो अच्छा रहता।

द्वितीय अध्यायमें डा० गुप्तेने सातत्य और परम्पराकी दृष्टिसे पूर्व भारतेन्दुकालीन हिन्दीतर भाषाओंके हिन्दी लेखकोंका परिचय तथा उनके योगदानकी चर्चा की है जो युक्तिसंगत है। गुजरातके चक्रधरको प्रथम अहिन्दी कवि और महाराष्ट्रकी उमांबाको प्रथम अहिन्दी कवियित्री सिद्ध करनेका स्तुत्य प्रयास किया है। इस अध्यायमें असमके शंकरदेवके नाटकोंका, तंजाऊरके शाहजी महाराजके यक्षगानोंका तथा केरलके स्वातितिरुनालके हिन्दी भजनोंका परिचय उन उन लेखकोंके योगदानके अनुकूल नहीं है। उन रचनाओंका और अधिक परिचय आवश्यक था।

तीसरे अध्यायसे लेकर दसवें अध्यायतक आठ अध्यायों में आधुनिक हिन्दी साहित्यके काल विभाजनके अनुसार, अहिन्दी लेखकोंकी सर्जनात्मक प्रतिभाका विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकारका विवेचनकर डॉ० गुप्तेने हिन्दी साहित्यकी मूल धाराके साथ अहिन्दी लेखकोंको सम्मिलतकर एक नये दृष्टिकोणका श्रीगणेश किया है। हिन्दी साहित्यके क्षेत्रमें हिन्दी और अहिन्दीके भेदको मिटाने का यह स्तुत्य प्रयत्न है।

ग्यारहवें अध्यायमें डा० गुप्तेने कुछ विशिष्ट कृतियोंका साहित्यिक मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। उपसंहारमें अंन्य साहित्यिक विधाओं प्रचारात्मक लेखन तथा पत्रकारिता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदिका परिचय दिया है।

परिशिष्टके छः भाग हैं। इनमें हिन्दी साहित्यके पुनर्लेखनकी, जिसमें अहिन्दी लेखकोंके योगदानका सम्यक् विश्लेषण हो, जोरदार माँग प्रस्तुतकर, डॉ० गुप्ते अहिन्दी लेखकोंकी बधाइयोंके पात्र बने हैं।

डॉ० गुप्तेने इतना विस्तृत कैन्वास अपनाया है जिससे कई लेखकोंका तथा उनकी कृतियोंका उल्लेख होनेसे रह गया। इसे शोधकर्त्ताकी मजबूरी अथवा कमजोरी तो माना जा सकता है किन्तु शोधकर्त्ताका कर्त्तव्य हो जाता है वह विभिन्न प्रदेशोंकी यात्रा करे और वहाँ लेखकोंका प्रत्यक्ष और समग्र परिचय प्राप्त करे। लगता है, डॉ० गुप्तेने दक्षिण भारतकी यात्रा नहीं की और पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तक सूचियों और यत्किंचित् पत्राचारको ही आधार बना लिया है। परिणामतः अहिन्दी लेखकोंका परिचय सम्पूर्ण और समग्र नहीं हो पाया है। इसलिए डॉ० ललितकुमार परीखके स्थानपर ललितनारायण पारिख (पृ० २४३) तथा 'तेलुगु और हिन्दीके काव्यशास्त्रोंकी तुलना' के स्थान पर 'तमिल और हिन्दीके काव्यशास्त्रोंकी तुलना' आदि छप गये हैं।

अहिन्दीभाषी हिन्दी लेखकोंके योगदानकी चर्चा करते समय (१) कोई युगान्तरकारी कृति या प्रवृत्ति न दे सके (पृ० ७४); (२) इस दिशामें विशेष कार्य नहीं किया (पृ० १३६) (३) अधिकांश ऐतिहासिक नाटक प्रसादकी ऊंचाई तक नहीं पहुंच सके आदि निर्णयात्मक वक्यों का परिहार कर देते तो अच्छा होता।

ईमनि लक्ष्मण स्वामीको (पृ० १०६) नाटककार माना है जबकि वे केवल अभिनेता थे। 'बंगमहिला' का असली नाम दे सकते तो शोधकार्य और अधिक पूर्ण होता। 'नावीन्य' (पृ० ४५,५६) और प्रसिद्ध (प्रकाशितके अर्थमें) करना (पृ० ४५) आदि प्रयोगोंपर मराठी भाषाका प्रभाव स्पष्ट है।

इन सामान्य-सी त्रुटियोंके अलावा डॉ० गुप्तेका यह शोध-ग्रन्थ अहिन्दीभाषा-भाषी-हिन्दी लेखकोंकी सर्जनात्मक प्रतिभाका बहुत ही सन्तुलित तथा वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करनेवाला है। यह हिन्दी और अहिन्दी लेखकोंके बीच सहज सौहार्द्र स्थापित करनेका प्रशंसनीय प्रयास है। इस सत्प्रयासके लिए डॉ० विलास गुप्ते तथा उनके निर्देशक आदरणीय डॉ० राममूर्त्ति त्रिपाठी अभिनन्दनके पात्र हैं।

—डॉ० भीमसेन निर्मल

विविधा

प्रतिनिधि संकलन-सिन्धी

सम्पादन एवं अनुवाद : मोतीलाल जोतवाणी : प्रका० भारतीय ज्ञानपीठ, बी/४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ: १६५; क्रा. ७४; मूल्य : ६.०० रु.।

भारतीय ज्ञानपीठने प्रादेशिक भाषाओंके प्रतिनिधि संकलनोंको प्रकाशित करनेकी एक योजना बनायी है, प्रस्तुत संकलन उसी योजनाकी एक कड़ी है। प्रारम्भकी संक्षिप्त भूमिकामें सिन्धी साहित्यके विकासकी विभिन्न मंजिलोंको स्पष्ट किया गया है। इसका काल-विभाजन, हिन्दी-साहित्यके इतिहासके समानान्तर चला है। प्रस्तुत संकलनमें स्वातंत्र्योत्तर सिन्धी साहित्यके श्रेष्ठतम शिखरोंका आकलन है। ये रचनाएं उपेक्षणीय नहीं कही जा सकतीं। सिन्धकी समन्वित संस्कृतिका स्वर इनमें उभरा है : भावनाओंकी उदात्तता और दृष्टिकोणकी समग्रता, हिन्दी पाठकोंके मनको मोह लेते हैं।

प्रस्तुत संकलनमें कृष्ण खटवाणीका लघु उपन्यास 'अमर प्रेम', १० कहानियाँ, १६ कविताएं और दो एकांकी संग्रहीत हैं। रचनाओंका स्तर विशेष उत्साहप्रद नहीं कहा जा सकता। पंजाबी, कश्मीरी और सिन्धी-एक दूसरेकी पड़ोसी भाषाएँ हैं। इनमें पंजाबीका साहित्य अधिक उन्नत और वैविध्यपूर्ण है, कश्मीरी साहित्यमें कश्मीरीपन है, पंजाबीमें तो यह गुण पर्याप्त मात्रामें है। पर आश्चर्यकी बात है कि प्रस्तुत संकलनकी रचनाओंमें सिन्धीपनका अभाव है, लगता है सिंन्धीपनभी कहीं विस्थापित तो नहीं हो गया! सिन्धी बड़ी खूबीसे हर प्रदेशमें घुल-मिल गये हैं, उनकी रचनाओंमें भी सिन्धीपनका वैशिष्ट्य बहुत-कम है, वे भी हिन्दी रचनाओंमें घुल-मिल गये हैं। इसे अनुवादककी सफलता भी कहा जा सकता है, और विफलता भी। हिन्दी जोतवाणीके लिए इतनी मौजूं हो गयी है कि उनमें सिन्धीपनकी महक बहुत-कम आती है।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अमर प्रेम' ४४ पृष्ठोंका एक रोमांटिक उपन्यास है। कलाकारकी प्रेरणाका उत्स, उसकी प्रेयसी 'कविता' में निहित है। वह पुनः-पुनः उसीके चित्र बनाता है। उसका सूक्ष्म वायवीय प्रणय-चित्रण, यथार्थके आधारपर टिका हुआ नहीं लगता। कला और क्रान्ति गड्ड-मड्ड हो गये हैं। इसकी करुण प्रणय-रागिणी, आत्माके अन्तर्लोकमें, सूक्ष्म संवेदनाके ज्वार उठाती है। यथार्थके कुत्सित चित्र देखते-देखते, जिनके मन भर गये हैं, उनके लिए इस लघु उपन्यास में एक ताजगीभरा सन्देश है।

अधिकांश कहानियाँ वर्णन-प्रधान हैं। कीरत बाबाणीकी कहानी 'चुन्नू और मुन्नी' में एक अभिशप्त युवककी संवेदना-तरल प्रतिक्रियाएं हैं, नारायण भारतीके 'दस्तावेज' में विभाजनका दर्द है और मानवीय व्यवहारकी सरगम। लोकनाथकी कहानी 'नाम और पैसा' में बहकते हुए अरमानोंकी चिता है। गोवर्द्धन महबूबाणीकी 'सुहागिन' एक प्रतीकात्मक कहानी है, जिसमें अनमेल विवाहकी असंगतियाँ उमर रही हैं। के० एस० बालाणीकी 'प्रभा और क्रान्ति' अद्भुत कहानी है, इसमें आत्माके रूपान्तरण और संरक्षण-भावको रेखांकित किया गया है। आजके युगमें इसे अविश्वसनीय समझा जा सकता है, पर मनोवैज्ञानिक दृष्टिसे इसमें रचनाकारने अध्यात्मके क्षितिजोंको छूनेका प्रयास किया है। लालपुष्पकी 'यह रचना : वह रचना' एक विलक्षण समस्यासे उलझनेवाली कहानी है। कहानी 'उन दोनोंका साथ रहना कठिन है, लेकिन अलग होना क्या संभव है?' एक नये सन्दर्भको झनझनाकर समाप्त हो जाती है। नये कहानीकारोंमें गुनो सामवाणी, ईश्वरचन्द्र, जयन्त रेलवाणी तथा मोतीलाल जोतवाणी उल्लेख्य हैं। लघु उपन्यास और इन कहानियोंका अनुवाद इतना सहज प्रभावशील है कि मौलिक कहानीका भ्रम होता है। अनुवादकका हिन्दी भाषाधिकार स्तुत्य है। उसकी सृजनात्मक प्रकृति, अनुवादपर पूरी तरह हावी हो गयी है। सिन्धी कथा-साहित्य, स्वतंत्र मौलिक कृतियों जैसा आभास देता है। नये कहानीकारोंमें वस्तुस्थितिपर व्यंग्य, अनूठा शिल्प-विधान और कथ्यकी सुतीक्ष्णता है। फिरभी यह स्थिति, हिन्दी पाठकको अधिक आश्वस्त नहीं करती। ये सभी कथाकार अपना पहचान खो बैठे हैं।

कविता-खण्डमें अनुवादकी अक्षमता, कई स्थलोंपर उभरी है। एक तो कविताएँ अधिक दमदार नहीं हैं, फिर अनुवादमें उनकी वास्तविक आत्मा प्रतिबिम्बित नहीं हो पायी है। कथा-साहित्य में अनुवाद जितना सफल है, कविता में उतना ही असफल। फिरभी डा० हरुमल सदारंगाणी 'खादिम', नारायण श्याम, अर्जुन शाद, वासुदेव निर्मल, कृष्ण राही, हरीश वास्वाणी आदिकी रचनाएँ और उनके अनुवाद सशक्त हैं। कई कविताओंमें उनका गद्यवत् (प्रोज़िकरूप) उनके प्रवाहमें बाधा डालता है।

सिन्धी कविता, उन्हीं राहोंसे गुजरी है, जिन राहोंसे अन्य प्रदेशोंकी कविता। प्रगतिशीलता, प्रयोगवाद और नयी कविताकी झलक यहाँ भी मिलती है। छन्दकी दृष्टिसे कहीं सानेटका प्रयोग हुआ है, तो कहीं गज़लका, अधिकांश कविताएँ मुक्त छन्दमें हैं, सम्भवतः अनुवादमें।

विषयभी विविध-आयामी हैं : कहीं 'पुरुष-वेश्या' का नज़ारा है, तो कहीं बियाफ्राके बच्चोंकी तसवीरें देखकर, दूरकी कौड़ी मारी गयी है :

'मेरी और मुझ-जैसोंकी ताज़ा लाशें / जला दें / खिलवा दें / बहा दें / दफ़ना दें / फेंक दें / चिनवा दें / नहीं तो......नहीं तो .... नहीं तो ...... । '.........' ।

'खादिम' की कविताओंमें प्रगतिशीलताकी बानगी देखी जा सकती है। वे विषयका निर्वाह भलीप्रकार करते हैं। उनका कथ्य और व्यंग्य दोनों मर्मस्पर्शी हैं :

एकको इतना मिलता है कि पचता नहीं / दूसरा एक रोटीको तरसता है?

चारों ओर फैला है / पैसेका मद ? या ताक़तका ?.... उठता है मनमें सन्देह, क्या रूप तुम्हारा चाँद-सा है ?'

नारायण श्यामकी 'हलवाहेके हाथका स्पर्श' छोटी और प्रभावपूर्ण कविता है। वासुदेव निर्मल नयी कविताके व्यंग्य को मुखर करते हैं। वे मजबूर इनसानकी नियतिको सलीब पर लटका हुआ देखते हैं। कृष्ण राहीका सॉनेट 'दिन और रात' सुन्दर बन पड़ा है। रतन आडिताणीमें आजके युगकी विसंगति और भटकनको सहानुभूतिके साथ उरेहा गया है।

अन्तमें दो एकांकी संकलित हैं : गोविन्द माल्हीका 'जुहूके किनारे' और हरिकान्तका 'मकान खाली है'। पहलेमें विपन्नतासे त्रस्त नायकको आत्मघातकी मनःस्थितिमें दिखाया गया है। सन्तोषके सान्निध्य और मार्ग-दर्शनसे उसके विचारोंमें परिवर्तन आता है और वह जीवन-संघर्षके लिए अपने-आपको प्रस्तुत करता है। दूसरा एकांकी एक प्रहसन है, जिसका सामाजिक व्यंग्य बड़ा मुखर है। मकान-मालिक की मनोवृत्तिका इससे अच्छा परिचय मिल जाता है। 'दुखी' जैसे किरायेदार, नहलेपर दहला भी मार देता है। मकान-मालिककी पुत्री कलावन्तीसे विवाह रचाकर, दुखी, जब अपने होनेवाले ससुरका किरायेदार बनता है और उसका आशीर्वाद चाहता है, तब नाटकीय प्रहसन, अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चरम परिणतिको प्राप्त करता है।

कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि प्रतिनिधि संकलन निकालनेकी योजना, हमारे विस्तृत राष्ट्रीय परिवेशको, रूपायित करनेमें काफी हदतक सफल हो सकती है। डॉ० मोतीलाल जोतवाणीके प्रयत्न, इस दृष्टिसे सराहनीय कहे जा सकते हैं। विस्तृत परिप्रेक्ष्य और विविध आयामोंको स्पर्श करनेवाली, यह योजना, हिन्दी जगत्‌की उत्कंठामें वृद्धि करेगी और उसे विस्तृत फलक प्रदानकर राष्ट्रभारतीके महत्तर उद्देश्योंको उजागर करेगी।

—डॉ० लक्ष्मीकान्त शर्मा

तुर्की हिन्दुस्तानी निगाहोंमें

लेखक : सुदर्शन मजीठिया; प्रकाशक : कैलाश पुस्तक सदन, पाटनकर बाजार, ग्वालियर-१। पृष्ठ : ९९; क्रा. ७४; मूल्य : ६-०० रु.।

हिन्दीमें आज साहित्य अपनी विकास यात्राकी ओर उन्मुख है, किन्तु यात्रा-वर्णनमें लेखककी दृष्टि यात्रा-वृत्तान्तों के चमकदार पहलुओंपर ही अटककर रह जाती है। हिन्दीके प्रसिद्ध आलोचक, व्यंग्यलेखक मजीठियाजीकी दृष्टि चमदार पहलुओंसे फिसलकर सामान्य धरातलपरभी छितरायी है।

पुस्तकमें कई देशोंके—तुर्की, बुल्गारिया, यूगोस्लाविया, इटली, स्विट्जरलैण्ड, सीरिया, ईराक, कुवैत, आदि-भ्रमणका वृत्तान्त प्रस्तुत है, जिसमें वहांका इतिहास, नागरिक जीवन, वैभव, मनोवृत्ति और प्राकृतिक तथा इमारती सौन्दर्यका मनोहारी वर्णन है।

भारतके प्रति वहांके जन-जीवनका क्या दृष्टिकोण है? भारतीय वहां पहुंचकर अपना कौनसा रूप प्रस्तुत करते हैं? ये प्रश्न पाठकको झकझोर देते हैं। हमारी वैदेशिक नीति और भारतीय-मनोवृत्तिके परिणामस्वरूप हमारी स्थिति विदेशोंमें क्या है, इसे सहज ढंगसे प्रस्तुत किया गया है।

पुस्तकमें उपन्यासकी सी रोचकता है, साथही किस्सागोई जैसी शैलीके कारण, जिसमें व्यंग्यका भी पुट है, पुस्तक पठनीय है।

—डॉ० त्रिलोकीनाथ

विश्व शान्तिकी खोज

लेखक : ब्रजनारायण मेहरोत्रा; प्रकाशक : रघु साहित्य प्रकाशन, २४।१६५ रामनारायण बाजार, कानपुर-१। पृष्ठ : १४४, क्रा. ६९; मूल्य : ८-०० रु.।

बाजार जब सस्ती जेबी किताबोंसे पट रहा हो, तब श्री ब्रजनारायण मेहरोत्रा जैसे लेखकोंकी 'विश्व शान्तिकी खोज' जैसी कृतिसे साक्षात्कार एक आश्चर्यजनक अनुभवसे कम नहीं। आध्यात्मिक और व्यावहारिक अनुभूतियोंका इतना सफल सम्प्रेषण कमही देखनेको मिलता है। 'विश्व-शान्तिकी खोज' मेहरोत्राजी द्वारा किये गये जीवनका प्रामाणिक दस्तावेज है और इसकारण एक यथार्थ जीवन-दर्शन भी। काव्यसे भी अधिक मनोरम इस आध्यात्मिक कृतिमें आकाश-सा विस्तार, सागर-सी गहराई और ब्रह्म-सी व्यापकता विद्यमान है। आस्तिक मूल्योंके प्रति आस्थावान व्यक्तियोंके लिए श्री ब्रजनारायण मेहरोत्राकी यह कृति एक उपहार है, विरल उपहार। एक ऐसा उपहार जो कभी-कभी ही मिलता है और वर्षों बाद।

—अमलतास

जीवन : संस्मरण

आवारा मसीहा

लेखक : विष्णु प्रभाकर; प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी दरवाजा, दिल्ली-६। पृष्ठ : ४७१; डिमा. ७४; मूल्य : ४५.०० रु.।

'आवारा मसीहा' बंगलाके प्रख्यात कथाकार शरच्चन्द्रके जीवनका चित्र प्रस्तुत करनेवाली एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक है। किसी सर्जककी जीवनी दो तरहसे प्रासंगिक हो सकती है। (१) सर्जकका जीवन साहसिक कारनामों, असामान्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रियाओं, परम्परा-भंजक प्रवृत्तियों, निर्णयों, व्यवहारों तथा अपने मूलमें गहरी मानवीय पीड़ा और करुणासे इसतरह भरा हुआ हो कि वह लिपिबद्ध होनेपर पाठकोंको न केवल औपन्यासिक आनन्द दे सके बल्कि उन्हें बहुत गहराई तक झकझोरकर मानव सम्बन्धों और मूल्योंको नये दृष्टिकोणसे देखनेके लिए प्रेरित भी करे। (२) उसकी जीवनीके विभिन्न सन्दर्भ, क्रियाएं, चिन्तन और संवेग उसके साहित्यमें आये हुए विभिन्न पात्रों, संदर्भों, दृष्टियों, व्यवहारों आदिको समझनेमें सहायक हों। शरच्चन्द्र संयोगसे महान साहित्यकार भी थे और महान व्यक्ति भी। इसलिए उनकी जीवनी में पाठकोंको रस मिलना स्वाभाविक है। विष्णु प्रभाकरने शरत्का जीवन-चरित्र लिखकर एक बहुत बड़े अभावकी पूर्ति की है।

शरत्का जीवन औपन्यासिकताकी सीमातक रोमांचक और वैचित्र्यपूर्ण था किन्तु वह कहीं भी सुव्यवस्थित रूपमें लिपिबद्ध नहीं है। उनके यायावरी जीवन-इतिहासके पन्ने तमाम स्थानों और समयोंमें अस्त-व्यस्त बिखरे पड़े हैं। उन भिन्न-भिन्न समयों और स्थानोंसे सम्बद्ध लोग ही उन पन्नोंके गवाह हैं। विष्णु प्रभाकरने इन गवाहोंके पास जा-जाकर बड़े मनोयोगके साथ शरतके जीवनके छिपे और बिखरे हुए तथ्यों और सत्योंको पहली बार एकत्र किया है। विष्णुजीके धैर्य और मनोयोगकी प्रशंसा करनी होगी कि उन्होंने दूसरे भाषा-भाषी लेखकके सगे-सम्बन्धियों तथा परिचितोंके बीच जाकर छिपे हुए तथ्योंको प्राप्त करनेमें सफलता हासिल की। तथ्य-संकलनका यह श्रम भी अपने-आपमें विष्णु प्रभाकरके महत्त्वको आकलित करनेमें समर्थ होता किन्तु 'आवारा मसीहा' तथ्य-संकलन मात्र नहीं है। यह एक रचनात्मक पुस्तक है। लेखकने शरच्चन्द्र के जीवनके तथ्योंको ऐसे क्रम और कौशलसे परस्पर नियोजित और गुम्फित किया है कि शरच्चन्द्रका पूरा व्यक्तित्व तथा जीवन-विकास मूर्त हो उठा है। लगता है लेखक स्वयं शरत्की मूल प्रवृत्तियों, पारिवारिक स्थितियों, उनके अभाव, संघर्ष, अवारापन, मानवीय करुणा, यातनाका एवं उनके बचपन, यौवन और यौवनोत्तर जीवनकालकी प्रत्येक गति-विधिका साक्षी रहा हो। शरच्चन्द्रके प्रति लेखकका दृष्टिकोण वस्तुवादी रहा है। उसने शरत्के चरित्र और जीवनके किसी कुरूप पहलूको न तो छिपाया है और न किसी सुन्दर पहलूकी अतिरंजना की है। शरत अपने भले-बुरे रूपमें जो थे वही इसमें प्रस्तुत किये गये हैं।

किंतु इस वस्तुवादिताका अर्थ रचनात्मक दृष्टिका अभाव नहीं है। लेखककी रचनात्मक दृष्टि यह जानती है कि शरत् इन भली-बुरी रेखाओंके बीच मूलतः महान पुरुष थे। वे अपने अनेक मानवीय कमजोरियों के बीच वस्तुतः उदात्त मानवीय धर्मके पुंज थे। यानी आवारा मसीहा थे। लेखककी रचना-दृष्टि शरत्की इस केन्द्रीय चेतना और व्यक्तित्व-धर्मिताको निरंतर उभारती चलती है और पुस्तक समाप्त करनेपर हमारे भीतर एक ऐसे व्यक्तित्वका गहरा एहसास बच जाता है जो अपनी कुछ मानवीय कमजोरियोंके होते हुएभी बहुत गहरी मानवीय-पीड़ा और मूल्यसे स्पन्दित था। इसके साथही शरत्के व्यक्तिगत जीवनके अफाट अभाव, बेबसी, अवमाननाकी एक बेधक अनुभूति उठती है जो मानवीय मूल्यों और सामाजिक यातनासे जुड़कर समग्र प्रभावको और गहरा बनाती है। इस पुस्तककी एक बहुत बड़ी विशेषता यह भी है कि यह शरत्की जीवन-कथा कहनेके क्रममें स्थान-स्थानपर तत्कालीन राष्ट्रीय और सामाजिक संदर्भोंको भी लाती है। शिक्षा-दीक्षामें, सामाजिक आचार-विचारमें, धर्म-कर्ममें परंपरा और नवीनताका जो संघर्ष चल रहा था उस संघर्षमें जो प्रभाव उभर रहे थे, राजनीतिक और सामाजिक जीवनके आकाशमें जो नये नक्षत्र उग रहे थे, साहित्यिक क्षेत्रमें रवीन्द्रके प्रभावसे जो नयी प्रवृत्तियां पनप रही थीं उन सबका बहुत प्रासंगिक उल्लेख होता चला है। इसप्रकार व्यक्तिकी जीवनी राष्ट्रीय और सामाजिक जीवनका परिवेश प्राप्त करती गयी है। लेखककी भाषामें एक अद्भुत सफाई, पारदर्शिता और वेग है। इससे पुस्तक और भी रोचक हो गयी है।

लेखकने बड़ी कुशलतासे शरत्के जीवन-प्रसंगों तथा मनःस्थितियोंको उनके उपन्यासोंके प्रसंगों और पात्रोंकी मनस्थितियोंसे जोड़ा है। शरत्के उपन्यासोंके घनीभूत प्रभावका रहस्य शायद यही है कि उन्होंने अपने पात्रोंको अपने आस-पासके अनुभूत जीवनसे लिया है और कुछ पात्रों को अपना प्रतीक बनाकर अपने जीवनके भोगे हुए दुःख-दर्दों, अनुभवों तथा परंपरा-भंजक व्यवहारों एवं विचारोंको व्यक्त किया है। काव्यशास्त्र इस बातपर बहस करता रहे कि साहित्य लेखकके व्यक्तित्वकी अभिव्यक्ति है या उससे मुक्ति। शरत्के प्रसंगमें तो यह कहा ही जा सकता है कि शरत्के विराट व्यक्तित्वमें समाहित मानवीय अनुभवोंकी अभिव्यक्तिने उनके उपन्यासोंको इतनी शक्ति और प्रामाणिकता दी है। विष्णु प्रभाकरने साहित्यकी इस शार्टकट दौड़के जमानेमें मनोयोगपूर्वक वर्षोंतक इस महत्त्वपूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकके तथ्य-संकलन और लेखनकी जो साधना की उसके लिए वे अभिनन्दनीय हैं।

—डॉ. रामदरश मिश्र

लेनिन

लेखक : राबर्ट कान्क्वेस्ट, अनु० ओमप्रकाश दीपक; प्रकाशक : पी० के० पब्लिकेशंस, ३०७२ प्रताप स्ट्रीट गोला मार्केट, दिल्ली-६। पृष्ठ : १२८; क्रा. ७३; मूल्य २.०० रु.।

'लेनिन' ऐसा कोई नाम नहीं है जिसकी जानकारी हमें न हो, लेनिनके जीवनपर पचासों किताबें हैं। खुद लेनिन द्वारा लिखित पुस्तकोंको पढ़कर भी उनके बारेमें बहुत-कुछ समझा-जाना जा सकता है। पर आधुनिक परिप्रेक्ष्यमें लेनिन का क्या महत्त्व है, इसको जाननेके लिए राबर्ट कान्क्वेस्टकी पुस्तक 'लेनिन' का अध्ययन आवश्यक है।

सन् १९७० में सोवियत संघमें लेनिनकी जन्मशताब्दी बहुत बड़े पैमानेपर मनायी गयी। उस वक्तसे भी लेनिनके सम्बन्धमें कई नये प्रश्नोंका उदय हुआ है और उन प्रश्नोंका उत्तर इस पुस्तकमें प्राप्य है।

इस पुस्तकके अनुसार लेनिन एक ऐसे देशमें पैदा हुए जिसमें नागरिक परम्पराका लगभग पूर्ण अभाव था। यहाँ तक कि लेनिनके दादा भी एक अर्द्ध-दास थे। उन्होंने दस्तकारी सीखकर उसकी कमाईसे अपनी आजादी खरीदी थी ! ऐसे कुलमें जन्मे लेनिनमें आभिजात्य और बुद्धिजीवी वर्गके प्रति घृणाका भाव कोई असंभव चीज नहीं थी। हालांकि उनमें किसी प्रकारकी जातीयता बिलकुल नहीं थी फिरभी वे अपने युगके रूसकी संतान थे और पश्चिमी चिन्तनकी शिक्षाके बावजूद हमेशा बाकी दुनियांको रूसकी ही नजरसे देखते थे। उनकी अपनी सबसे बड़ी विशेषताएं थीं, अत्यधिक प्रबल संकल्प-शक्ति और सैद्धान्तिक निष्ठाके साथ राजनीतिक विचार और कर्मके प्रति पूरी आस्था। ट्राटस्कीने लेनिनको 'इतिहासके मंचपर प्रवेश करनेवाला सबसे अधिक ऊर्जा सम्पन्न व्यक्ति कहा था। दरअसल उनके व्यक्तित्वकी विशेषताएं थीं, अपने विचारोंके प्रति पूर्ण निष्ठा, उनके सामने निजी जीवनकी पूर्ण अधीनता और उनके लिए किसीभी वस्तु या व्यक्तिका बलिदान कर देनेकी तत्परता ! दूसरे, निजी अहंकार या महत्वाकांक्षाके अभावके साथ-साथ यह अटल विश्वास कि किसीभी विवादास्पद प्रश्नका सही उत्तर केवल उनके पास ही था। तीसरे, जब राजनीतिका मामला न हो (और केवल उसी हालतमें) कभी-कभी व्यक्तियोंके प्रति दयालुता और विचित्रताओंके प्रति सहिष्णुता। लगन और संकल्प, ये मुख्य विशिष्टताएं थीं उनकी। उनके समकालीन एक प्रमुख क्रांतिकारी सहयोगी ए० एन० पोट्रिसोवने कई साल बाद लेनिनके बारेमें लिखा—'केवल लेनिन ही थे जिनको निर्विवाद नेता मानकर लोग बिना शंकाके उनके पीछे चलते थे, क्योंकि केवल लेनिनका ही ऐसा दुर्लभ व्यक्तित्व था, खासतौरपर रूसके लिए—कठोर संकल्प और अजेय शक्तिवाला व्यक्ति, जिसमें यह क्षमता थी कि आंदोलन और लक्ष्यके प्रति लोगोंमें अटल विश्वास पैदा कर सके और जिसमें 'स्वयं' वैसा ही आत्म-विश्वास था।'

पर बुद्धिजीवी वर्गके प्रति लेनिनकी कोई सहानुभूति नहीं थी। लेनिनका स्पष्ट कहना है—'आमतौरपर बुद्धिजीवियोंके लिए मेरे मनमें कोई सहानुभूति नहीं है और 'निरक्षरता मिटाओ' के हमारे नारेका कतई यह मतलब नहीं है कि हमारा लक्ष्य एक नये बुद्धिजीवी वर्गका निर्माण करना है। 'निरक्षरता मिटाओ' का उद्देश्य केवल इतना ही है कि हर किसान अपने आप बिना किसीकी सहायताके हमारे फैसलों, आदेशों और घोषणाओंको पढ़ सके। यह सर्वथा व्यावहारिक लक्ष्य है। इससे अधिक नहीं। और यही नहीं लेनिनमें किसीतरहकी भावुकताका भी अत्यधिक अभाव था। उनमें बहुत थोड़ेसे अवसरोंपर हमें ऐसे भावनात्मक दबावोंकी झलक मिलती है जिन्हें अपने स्वभावमें अपनी संकल्प शक्तिसे रोके रखते थे। आमतौरपर हमें उनमें वही भावनाएं मिलती हैं जो क्रांतिकारी संघर्षके उपयुक्त हैं—क्रोध, घृणा, अधैर्य, तिरस्कार। इसीकारण प्रसिद्ध दार्शनिक बर्ट्रान्ड रसेलने कहा है—लेनिनसे मिलनेपर जैसा मैंने सोचा था, उसकी तुलनामें एक महान व्यक्तिसे मिलनेकी अनुभूति मुझे बहुत कम हुई। मेरे मनपर जो असर सबसे ज्यादा उभरा, वह कट्टरता और मंगोल क्रूरताका था।'

राबर्ट कान्क्वेस्टने बहुत संक्षेपसे लेनिनके सारे गुणों-अवगुणों, राजनीतिक प्रभावों-कार्यों, उनके मतों आदिको इस पुस्तकमें रखनेकी कोशिश की है। यहांतक कि लेनिन की मृत्युके पश्चात् भी उनके विचारोंकी क्या प्रतिक्रियाएं होती रहीं या हो रही हैं, आज किन-किन अर्थोंमें और किन-किन रूपोंमें लेनिनका विरोध भी आरम्भ हो गया है, इसकी जानकारी इस पुस्तकमें है। अंतिम समयमें जाकर लेनिन अपनेही मत और विचारोंसे क्यों अलग पड़ने लगे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसका भी उल्लेख इस पुस्तकमें है। और इसलिए कहा जा सकता है कि निस्संदेह राबर्ट कान्क्वेस्टकी यह पुस्तक इतिहास, जीवनी और राजनीतिक विश्लेषणके मेलसे पाठकको लेनिनके विषयमें आवश्यक सामग्री प्रदान करती है कि वह उनको उनकी समग्रता समझ सके, क्योंकि लेनिनको समझनेका अर्थ है स्टालिन कालके और स्टालिनकी मृत्युके बादके रूसको समझना, बल्कि आधुनिक विश्वके मुख्य संघर्षोंको समझना।

अनुवादमें मौलिकताका रस है और शायद अनुवादकी विशिष्टताके कारण भी यह पुस्तक पाठक-वर्गको अधिक रुचिकर प्रतीत हो सके।

—सुरेन्द्र तिवारी

संत ज्ञानेश्वर

लेखक : कृ० गो० वानखड़े; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली—१। पृष्ठ : ७६; डिमा. ७३; मूल्य : ३.०० रु०।

महाराष्ट्रके सन्तोंमें सन्त ज्ञानेश्वरका नाम सर्वोपरि है। वे वारकरी सम्प्रदायके प्रवर्तक माने जाते हैं। अवतारी महापुरुषोंका जीवन अलौकिक और अद्‌भुत होता है। आजके युगमें सुशिक्षित समाजमें अलौकिक घटनाओंसे परिपूर्ण जीवन-कथाके प्रति रुचि नहीं है। सन्त-महात्माओं के जीवनकी कुछ ऐसी बातें जो असामान्य हों, कल्पनाके परे हों तो उन्हें लोग सहज माननेको तैयार नहीं होते। पर, यह सत्य है कि, सन्तोंके जीवन और उसके साहित्यमें अद्‌भुत प्रेरक शक्ति है। सन्त ज्ञानेश्वर भक्ति, ज्ञान, कर्म और योग इन सभी क्षेत्रोंके सिद्ध पुरुष थे। सन्त ज्ञानेश्वरने वारकरी सम्प्रदायकी स्थापना की और सन्त नामदेवने उस सम्प्रदायका पूरे भारतवर्षमें प्रचार किया। सन्त-ज्ञानेश्वरसे पहले महाराष्ट्रमें संस्कृत भाषाका महत्त्व था। सन्त ज्ञानेश्वरने सबसे पहले महाराष्ट्रमें सामान्य जनतामें प्रचारकी दृष्टिसे मराठी भाषाको अपने विचारोंका वाहन बनाया। यही नहीं उन्होंने अपने युगमें व्याप्त छूआछूतका भेद भी कम किया और उसकी निन्दा की।

सन्त ज्ञानेश्वरका 'ज्ञानेश्वरी' ग्रंथ तो अद्वितीय है। लोकभाषामें लिखा यह ग्रंथ गीताके गूढ़ मर्मको अत्यन्त सरलतासे समझानेमें समर्थ है। यही कारण है कि, इस ग्रंथका महाराष्ट्रमें ही नहीं वरन् सम्पूर्ण देशमें बहुत मान है।

प्रस्तुत पुस्तकमें सन्त ज्ञानेश्वरके अतिरिक्त उनके समकालीन कई अन्य सन्तोंका भी परिचय है। साथही इसमें पूर्ववर्ती सन्तोंकी परम्पराका भी उल्लेख है।

सन्त साहित्यके प्रेमी लोगोंके लिए यह पुस्तक एक सुन्दर उपहार है। इसमें दिये सचित्र विवरणोंसे यह पुस्तक और अधिक आकर्षक हो गयी है।

—त्रिलोकीनाथ व्रजबाल

तरूदत्त

लेखिका : पद्‌मिनी सेनगुप्त, अनुवादक: युगजीत नवलपुरी। प्रकाशक : साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली। पृष्ठ : १०८; डिमा. ७४; मूल्य : २.५० रु.।

विश्व-साहित्यके निर्माणमें जिन अर्वाचीन भारतीय प्रतिभाओंने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है उनमें बंगला-भाषाभाषी कुमारी तरूदत्तका योगदान भी उल्लेखनीय है। अंग्रेजी एवं फ्रेंच भाषामें उच्चकोटिका साहित्य रचकर उन्होंने यह सिद्धकर दिया कि, भारतीय प्रतिभाएँ विश्वकी अन्य भाषाओंमें भी अपनी प्रतिभाका चमत्कार दिखा सकती हैं। केवल इक्कीस वर्षकी वयमें इस भारतीय कन्याने जो कुछ लिखा वह सामान्य शक्तिकी बात नहीं है। इस जीवनीमें लेखिकाने कुमारी तरूदत्तके व्यक्तित्व और कृतित्वपर पर्याप्त प्रकाश डाला है। मूल लेखिकाका कार्य जहां सराहनीय है वहाँ अनुवादकका कार्य अधिक सन्तोषप्रद नहीं है।

अनुवादकी भाषा अप्रचलित है और ऐसे शब्दोंका प्रयोग हुआ है जिनका अर्थ हिन्दीके शब्दकोशोंमें सामान्यतया नहीं मिलेगा। ऐसे शब्दोंके कुछ उदाहरण है।

त्यक्तप्रायता, निर्वापित, संज्ञान्तक, नियराती अवाई, पांक्तेय पंडितम्मन्यों, अचलदर्श, विभावनसिद्ध, अभिसंधित, सुलभीभूत।

इसीतरह उपमामें 'आयत-मिषित-नयन' तथा सम्बन्ध-परिचयके लिए 'पितियाउत चचेरे भाई' शब्दोंका प्रयोग समझ में नहीं आता। भाषाका उदाहरण :

"......तरूदत्तका युग बहुप्रद और बहुबीज नागर युग था।" इसप्रकारके अनेक वाक्य, भाषाको जटिल बनाते हैं।

तरूदत्तकी कविताओंकी पंक्तियाँ अनुवादमें औरभी जटिल हो गयी हैं कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पाँडुर मंद सुगंधित नीम; किशाल शालमली"
"कागों कोलाहलकर कौओंकी टिकान जो
चंपा; बगलोला अगस्त सरलद्रुम डिगसा;
कनक-नागकेसर कनफुल-लटकन-दुकान जो
बना हुआ फूलोंसे—सबसे चिपका विकसा"
"भ्राजिष्णु तारिकाद्युति-सी मोहक छविच्छटा"
"मैदानोंकी निर्मल निरभ्र प्रालेय-छन्न"

फिरभी साहित्य अकादेमीने 'भारतीय साहित्यके निर्माता' सीरीजका प्रकाशन कर एक सराहनीय कार्य किया है। कम मूल्यमें उपलब्ध इसप्रकारकी जीवनियोंकी उपयोगिता अपने आपमें स्पष्ट है। पुस्तकका मुद्रण सुन्दर हुआ है। वैसे यह प्रेरणाप्रद, सुन्दर जीवनी है और हिन्दी में इसका प्रकाशन स्वागत योग्य है।

—त्रिलोकीनाथ व्रजबाल

गांधी-साहित्य

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

खण्ड: ४९, ५०, ५१, ५२, ५३; प्रकाशक: प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी-दिल्ली-१। पृष्ठ क्रमशः ५६३, ५११, ५३६, ५०१, और ५९०; डिमा. ७३; मूल्य प्रत्येक: ७.५० रु.।

खण्ड ४९ में ४ जनवरीसे मई १९३२ तक (यरवदा-जेलमें गांधीजीके पहले पांच महीनोंका), खण्ड ५० में १ जूनसे २१ अगस्त १९३२ तक (ब्रिटिश प्रधानमन्त्रीके दलित वर्गों संबंधी निर्णयके विरुद्ध आमरण अनशनकी पृष्ठभूमि), खण्ड ५१ में १ सितम्बर से १५ नवम्बर १९३२ तक (उस उपवास तथा तत्संबंधी पत्र-व्यवहार), खण्ड ५२ में १६ नवंबर १९३२ से १० जनवरी १९३३ तक (अस्पृश्यता-विरोधी अभियानसे संबंधित पत्र-व्यवहार) और खण्ड ५३ में ११ जनवरी से ५ मार्च १९३३ तक (अस्पृश्यताके विरोधियोंके मुकाबले और 'हरिजन' 'हरिजन-सेवक' तथा 'हरिजनबंधु' के प्रकाशन संबंधी) सामग्री है। इसतरह ये पांच खण्ड गांधीजीकी अस्पृश्यता-विरोधी हलचलको समग्र रूपमें प्रस्तुत करते हैं।

आश्चर्य यह है कि ऐसी हलचलमें प्रवृत्त रहते हुए भी गांधीजी मानो निरासक्त रूपमें सब कुछ करते रहे। अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए ३१ मार्च १९३२ के एक पत्रमें उन्होंने लिखा "कैदमें रहनेवालेके लिए जेलके बाहरकी दुनियांका विचार बिल्कुल त्याज्य है।" और "मैं जो कुछ कहता या लिखता हूँ, वह किसी विशेष पद्धतिके अनुसार किया गया विचार नहीं होता। सत्यकी आराधनाके सिलसिलेमें परिस्थितयोंसे पार पाने लायक शक्ति ही मेरे पास है।" यही नहीं, २३ जनवरी १९३२ की अर्द्धरात्रिके बाद लिखे एक पत्रमें यह भी समाविष्ट है कि "मेरा एक दोष कहो, गुण कहो, है। प्रसंग आनेपर ही संबंधित विचार प्रकट करता हूं।" गीता पत्रावलीका पूरा रूपभी इसमें (खण्ड ४९ में) है जो मंगल प्रभातके समय ११ नवम्बर १९३० से शुरू होकर २१ फरवरी १९३२ को समाप्त हुई। इसीलिए 'मंगल प्रभात' के शीर्षकसे यह पुस्तक रूपमें भी प्रकाशित हुई है।

ब्रिटिश प्रधानमन्त्रीके निर्णयके विरुद्ध अपने उपवास को गांधीजीने "जीवनकी उस योजनाकी पूर्ति जैसा" बताया "जिसे मैंने एक चौथाई शताब्दीसे अधिक समय तक काफी सफलताके साथ आजमाया है।" खण्ड ५० में इस हलचलके साथ-साथ 'सत्याग्रह-आश्रमका इतिहास' भी सम्मिलित है, जिसे गांधीजीने ५ अप्रैल १९३२ को लिखना शुरू किया और ११ जुलाईको उसका उपलब्ध अन्तिम अंश लिखा। गांधीजीने बताया है कि "आजकी दृष्टिसे भूतकालका अवलोकन करते हुए मुझे लगता है कि इसतरहका आश्रय मेरे स्वभावमें ही था।"

खण्ड ५१ में गांधीजीके अनिश्चितकालीन उपवासकी त्वरित सफलता और उसके परिणामस्वरूप हुए पूना-पैक्ट या यरवदा समझौतेका विवरण है। गांधीजीने इस उपवासको 'दलितोंके हितमें सत्याग्रह यज्ञमें अन्तिम आहुति देनेका ईश्वर-प्रदत्त अवसर' मानकर इसे अपना 'सौभाग्य भी'

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और 'कर्त्तव्य भी' बताया। उपवासपर देशमें हुई प्रतिक्रिया को गांधीजीने 'आधुनिक युगका एक आश्चर्य' बताया और उपवासके बाद हरिजन कार्यके लिए प्राप्त सुविधाओंका उपयोग उन्होंने पत्र-व्यवहार तथा समाचारपत्रोंमें वक्तव्यों द्वारा अस्पृश्यता-विरोधी लोकमत तैयार करनेमें किया। आश्चर्य यह है कि इस हलचलमें व्यस्त रहते हुए भी उन्होंने आश्रमवासियों तथा अन्य लोगोंकी छोटी-छोटी बातोंपर ध्यान देना बन्द नहीं किया। एक ईसाई मित्रको लिखा "सच्चा धर्म तो वही है जो जीवनकी हर प्रवृत्तिमें समाया हुआ हो। और जो प्रवृत्ति धर्मकी बलि चढ़ाये बिना न चलायी जा सकती हो, वह अनैतिक है और उससे हर हालतमें दूर रहना चाहिये।" गीताका मध्यबिन्दु अनासक्ति बताते हुए अपने सम्बन्धमें रामदास गांधीको उन्होंने लिखा: "मेरा सब काम स्वाभाविक होनेसे यानी सत्यकी साधना में स्फुरित होनेके कारण, बहुत आसान हो गया है। जगत् भरकी सेवा करनेकी भावना उदित होजानेपर अनासक्ति सहजही आ जाती है।" एक मित्रके रुग्ण पुत्रको सलाह दी: "तुम्हें अपने शरीरको अपना नहीं मानना चाहिये। वह ईश्वरका है। ईश्वरने वह तुझे कुछ समयके लिए दिया है ताकि तू उसे स्वच्छ और स्वस्थ रखे और उसे सेवाके काम में लाये। तू उसका थातीदार है, स्वामी नहीं।" और एक अन्य (एस्थर मेनन) को लिखा जिसतरह सैनिक अपने शस्त्रोंको साफ और सुव्यवस्थित रखता है उसीतरह हमें भी अपने शस्त्रों (ईश्वरके दिये हुए शरीरों) को साफ और पूरी तरह सुव्यवस्थित रखना चाहिये।" "निजी मित्र और सम्बन्धी अजनबी लोगों, पशु-पक्षियों और पेड़ोंसे अधिक भिन्न नहीं होते।" मीरा बहनकी इस दृष्टिका अनुमोदन करते हुए प्रेमा बहन कण्टकको 'बिल्ली बहन' से पुनर्मिलनके आनन्दका ही स्मरण नहीं कराया बल्कि यह भी लिखा: "फूलोंके पौधोंके साथ मेरी तरफ से बात करना। उनसे कहना कि अपने जैसा सौन्दर्य, अपनी जैसी सुगन्ध, अपनी-जैसी एकनिष्ठता···अपनी जैसी समता और सरलता प्रदान करो।"

खण्ड ५२ का अधिकांश गांधीजी द्वारा अस्पृश्यताके विरुद्ध चलाये गये अभियानसे प्रेरित और सीमित है, लेकिन इसमें भी ऐसी चीजें मौजूद हैं—"पशु, पक्षी, पेड़-पौधे, पत्थर सभी हमारे सखा-सखी हैं।" और "दस्तकारीकी तालीम भी उतनीही महत्वपूर्ण है जितना अक्षरज्ञान।" प्रेमा बहनको उन्होंने लिखा: "हमें छिपे विचार करनेका अधिकार नहीं है।" और विनोबा भावेको लिखे पत्रमें कहा: "तुम्हारी भक्ति और श्रद्धा आँखोंसे हर्षके आंसू लाती हैं। मैं इस सबके योग्य होऊं या न होऊं, परन्तु तुम्हें तो यह फलेगी ही। तुम बड़ी सेवाके निमित्त बनोगे।"

खण्ड ५३ में अस्पृश्यता विरोधी आंदोलनके जोर पकड़नेके साथ-साथ मंदिर-प्रवेशके विरोधियोंको जोर पकड़ते भी पाते हैं, जिससे गान्धीजी विचलित तो हुए पर साथही उनकी गालियोंमें गान्धीजीको आश्चर्यजनक ताजगी दिखायी दी। वह इसप्रकार कि गान्धीजीने उसका अर्थ लगाया कि वे "दीर्घकालिक मानसिक आलस्यसे जाग उठे हैं।" अपनी इस प्रवृत्तिमें व्यस्तताके बावजूद अन्य बातोंके लिए भी वे समय निकालते रहे। श्रीप्रकाशजीको उन्होंने स्वधर्म-पालन समझाते हुए लिखा: "तुम्हें केवल अपना खोया हुआ स्वास्थ्य वापस पानेकी कोशिश करनी चाहिये और परिवार देश या दुनियांके बारेमें परेशान नहीं होना चाहिये।". और रामदास गान्धीको लिखा: "हाथीको अपनी जरूरतका चारा लेनेका अधिकार है, लेकिन उतना चारा खाकर उसे व्यर्थ नहीं कर,देना चाहिये।" रामायणके लिए उन्होंने कहा: "रामको परमात्मा और रावणको ईश्वर-विमुख शक्ति समझकर सारी रामायण पढ़ना।" और प्रतिपादित किया कि "मुझमें जो भी बल है वह रामका है, मेरा अपना कुछ नहीं।"

इसतरह 'गान्धी वाङ्मय' के ये पांचों खण्ड जहां ऐतिहासिक जानकारीसे परिपूर्ण हैं वहां इनसे उद्बोधन और चिन्तनकी सामग्री भी काफी मिलती है। महंगाईके इन दिनों बड़े आकारके सुमुद्रित इतने बड़े-बड़े खंडोंका साढ़ेसात रुपया प्रति खंड मूल्यभी कमही कहा जा सकता है।

—मुकुटबिहारी वर्मा

विज्ञापनका उत्कृष्ट साधन

प्रकर

विज्ञापनकी दरोंके लिए लिखें

प्रकर, ए ८/४२, राणा प्रताप बाग

दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रमिक आन्दोलन

भारतीय श्रमिक वर्ग आन्दोलन

लेखक: डॉ० जगन्नाथस्वरुप माथुर; प्रकाशक: राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, ए-२६। २ विद्यालय मार्ग, तिलक नगर, जयपुर-४। पृष्ठ: ५२७; रायल, ७३; मूल्य: २०.०० रु.।

राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमीने भारत सरकारकी विश्वविद्यालय ग्रंथ योजनाके अन्तर्गत आलोच्य पुस्तकका प्रकाशन किया है। यह ग्रंथ १९६४ में तैयार हुआ था और इसका प्रकाशन १९७३ में किया गया। इस अवधि में कितनेही परिवर्तन हुए और मजदूर आन्दोलनके बारेमें बहुत-सी नवीन सामग्री प्रकाशमें आयी है। दो तीन मजदूर नेताओंने अपनी आत्मकथाएँ प्रकाशित की हैं और अनेक प्रामाणिक जीवनियां लिखी गयी हैं। अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेसके दस्तावेज भी प्रकाशित हुए हैं। किसान और मजदूर आन्दोलनोंके इतिहास भी देखनेमें आये हैं। मेरठ षड्यंत्र कांडके दस्तावेज भी राष्ट्रीय अभिलेखागारसे खोजे गये हैं। ऐसी स्थितिमें आलोच्य पुस्तककी जानकारी पुरानी पड़ गयी है, फिरभी अपना महत्व रखती हैं।

भारतमें मजदूर आन्दोलनका श्रीगणेश १८८४ से माना जाता है जब श्री लोखण्डेने बंबईमें श्रमिकोंका एक सम्मेलन किया था। किन्तु संगठित मजदूर आन्दोलन प्रथम महायुद्धके बादही प्रारम्भ हुआ। अभीतक नागपुरकी एक्सप्रेस मिलमें १८७७ में हुई हड़तालको देशकी पहली हड़ताल माना गया है किन्तु भारतीय स्वाधीनता संग्राममें बंगालकी देनसे संबन्धित एक पुस्तकमें बताया गया है कि हावड़ाके रेल मजदूरोंने इससे भी पूर्व ८ घन्टेके दिनकी मांग लेकर मई १८६० में हड़ताल की थी। उसी पुस्तकमें यह भी बताया गया है कि बंगाली ब्रह्म-समाजी सुधारक शशिपद बनर्जीने कलकत्ताके उत्तरी क्षेत्रके मजदूरोंका १८७२ में एक संगठन बनाया था। आलोच्य पुस्तकके लिखे जानेके बाद ऐसीही और भी बहुत-सी जानकारी प्रकाशमें आयी है। अतः इन परिवर्तनोंको ध्यानमें रखते हुए इतना कहा जा सकता है कि भारतीय मजदूर आन्दोलनपर शोध करनेवालोंके लिए आलोच्य पुस्तक सहायक सिद्ध होगी, ऐसी आशा है।

—मनमोहन वर्मा

राजनीति : इतिहास

नव वामपंथ

सम्पादक : मारिस क्रेंसटन; अनुवादिका; विजय श्री भारद्वाज; प्रकाशक : नेशनल एकादमी, ९ अंसारी मार्केट, दरियागंज, दिल्ली-६। पृष्ठ : १९२; डिमा. ७४; मूल्य : ८.०० रु०।

"गाड दैट फेल्ड" के बाद शायद संयुक्त हस्ताक्षरोंकी यह दूसरी किताब "दि न्यू लेफ्ट" या "नव वामपंथ" है, जिसने विश्वके बुद्धिजीवियों, विशेष रूपसे नयी पीढ़ीको आकर्षित किया है। किताबमें चेग्युएरा, सार्त्र, हर्बर्ट मार्क्यूस फेनोन, लैंग आदिके विचारोंकी विवेचना छह प्रसिद्ध पश्चिमी विचारकोंने की है।

पिछले दो दशकोंमें मार्क्सवादके बाद नव वामपंथको एक व्यापक दर्शनका रूप देनेकी कोशिश की गयी है जिस के मसीहा हर्बर्ट मार्क्यूस कहे जा सकते हैं और हीरो चेग्युएरा। साम्राज्यवादी व्यवस्थासे छोटे देशोंकी मुक्तिके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवालके साथ साथ तमाम नयी पीढ़ी द्वारा पुरानी मर्यादाओंसे मुक्तिकी छटपटाहट नव वामपंथका दायरा है। सार्त्र का चिन्तन तो अब व्यापक रूपसे ख्याति पा चुका है, हाँ शेष व्यक्तियोंके विचार अभी उतने लोकप्रिय नहीं हो पाये हैं। नाम जरूर एक मिथकका रूप ले चुके हैं।

चेग्युएराकी क्रान्तियात्रा तमाम पिछड़े हुए देशोंके युवावर्गके लिए एक रोमानी आकर्षण रखती है। सम्भ्रान्त वर्गोंके युवा भी अक्सर चेकी जैसी वरदी पहनना फैशन मानने लगे हैं।

दरअस्ल पश्चिम द्वारा चेग्युएरा, सार्त्र और विद्रोही अश्वेतोंके इतने बड़े प्रचारके पीछे कुछ लोगोंने ऐसा साम्राज्यवादी षड्यन्त्र भी देखा है जो सही क्रान्तिको बूर्जुआ रोमान्स में बदल दे। बहरहाल, ऐसी किताबका अपना महत्व कम नहीं होता जो एक जगह ऐसे सभी विचारकोंके दृष्टिकोण एकत्र कर दे जिन्हें नव वामपंथी चिन्तनका प्रतिनिधि माना जाता है। सार्त्रने पिछले डेढ़ दशकके बीच न सिर्फ फ्रांसकी नयी पीढ़ीका नेतृत्व किया है बल्कि समूचे विश्वमें अन्यायके विरुद्ध नारा दिया है।

हर्बर्ट मार्क्यूस मार्क्सोत्तर यूरोपीय सामाजिक चिन्तन के मसीहा माने जाते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने नयी सामाजिक मर्यादाओंकी वैज्ञानिक परिभाषा देनेकी कोशिश की है।

फ्रांटज फैनोन अश्वेत वैज्ञानिक विचारक हैं। उन्होंने श्वेत-अश्वेत समस्याको सामाजिक मनोविज्ञानके पहलूसे देखा है। ब्लैक पावर (अश्वेत शक्ति) के विचारक-मसीहा के रूपमें वे हमेशा याद किये जायेंगे।

अन्तमें आर० डी० लैंगको इस बातका श्रेय दिया जा सकता है कि उन्होंने "नव वामपंथ" नामक दर्शनकी ईजाद की। दृष्टि मौजूद थी सिर्फ उसे भाषा देनी थी जो लैंगने दी।

कुल मिलाकर यह किताब पठनीय ही नहीं संग्रहणीय भी है और विचारोत्तेजक भी।

मंहगी किताबोंके इस युगमें लगभग दो सौ पृष्ठोंकी इस सजिल्द किताबकी आठ रुपये कीमत भी आश्चर्यजनक ही कही जायेगी।

— मुद्राराक्षस

अमेरिकी इतिहासकी रूपरेखा

प्रकाशक : यूनाइटेड स्टेट्स इन्फार्मेशन सर्विस, २४ कस्तूरबा गांधी मार्ग, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ : १६४; डिमा ७४; मूल्य : उल्लेख नहीं।

अमेरिकी सूचना सेवाने बहुत पहले एक पुस्तक प्रकाशित की थी जिसमें अमेरिकी इतिहाससे संबंधित प्रश्नोंको तारमें पिरो दिया गया था। वह पुस्तक अमेरिकाका पूरा इतिहास नहीं था किन्तु उसमें राष्ट्रके विकासकी प्रमुख धाराओंका वर्णन था। उसका साइज भी कुछ अटपटा था। उसी पुस्तकको अब अमेरिकी सूचना सेवाने संशोधित और परिवर्धित रूपमें आलोच्य पुस्तकके रूपमें प्रकाशित किया है। पहली पुस्तकमें आवरण चित्र रंगीन था किन्तु अन्दर ब्लैक एण्ड वाइट चित्र थे। पर आलोच्य पुस्तकमें आवरण पर लिंकनका तो रंगीन चित्र है ही, अन्दर भी अधिकांश चित्र रंगीन हैं। यह पुस्तक इतिहासके छात्रोंके लिए बहुत ही उपयोगी है। पुस्तककी छपाई बहुत ही उत्तम है। अच्छा होता, यदि भारत सरकार भी देशके इतिहासपर ऐसी ही सुन्दर पुस्तक निकालकर विदेशोंमें वितरणके लिए भारतीय दूतावासों को दे।

—म० मो० वर्मा

भाषा-साहित्य
इतिहास

कन्नड़ साहित्यका सुबोध इतिहास

लेखक: काशीनाथ एम० हल्लीखेड़े; प्रकाशक: विद्या मन्दिर, ६८-६९ एवेन्यू रोड, बंगलौर-२। पृष्ठ : २३५; डिमा.७३; मूल्य: २०.०० रु०।

यह अत्यन्त हर्षका विषय है कि स्वतन्त्रता-प्राप्तिके उपरांत हिन्दीमें भारतीय भाषाओंकी महत्वपूर्ण कृतियोंके अनुवादोंके प्रकाशनके साथ-साथ उनकी साहित्यिक गति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विधियोंका लेखा-जोखा प्रस्तुत करनेवाले ग्रन्थोंका भी प्रकाशन हो रहा है। आलोच्य पुस्तकमें दक्षिण भारतकी एक प्रमुख भाषा कन्नड़के साहित्यका ऐतिहासिक विकास-क्रम प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि पुस्तकके शीर्षकसे यह प्रतीत होता है कि इसमें कन्नड़ साहित्यके समूचे इतिहास को समेटा गया होगा किन्तु इसमें केवल सन् १६०० तक के साहित्यका ही विवरण प्रस्तुत किया गया है।

आलोच्य पुस्तकमें दस अध्याय हैं। प्रथम अध्यायमें कन्नड़ साहित्यके अभ्युदयकी चर्चा की गयी है तथा कन्नड़ भाषाका जन्म आजसे २००० वर्ष पूर्व निर्धारित करते हुए ईसाकी पाँचवी शताब्दीके आसपास कन्नड़ भाषाके साहित्यिक रूप ग्रहण कर लेने तक का विवरण प्रस्तुत किया गया है। दूसरे अध्यायमें कन्नड़-साहित्यका काल-विभाजन किया गया है। काल-विभाजन सम्बन्धी विभिन्न मतोंका विवरण एवं परीक्षण करनेके बाद लेखकने कन्नड़ साहित्य के अध्येताओंमें स्वीकृत तथा सर्वमान्य काल-विभाजनको ही स्वीकार किया है। विभिन्न धार्मिक मतों, साहित्यरूपों, भाषा-विकास, वर्ण्य-विषय, रस-व्यंजना तथा प्रमुख कवियोंके आधारपर कन्नड़ साहित्यका काल-विभाजन करते हुए कवि अथवा भक्तोंके नामपर किये गये काल-विभाजनको इसलिए स्वीकार किया गया है क्योंकि आज कन्नड़ साहित्यमें वही सर्वमान्य है। तीसरे अध्यायमें पम्प-पूर्व युग (आरम्भ से १०० ई० तक) अर्थात् कन्नड़ साहित्यके अज्ञात कालकी प्रमुख कृतियों तथा कृतिकारों का विवेचन है तो चौथे अध्यायमें कर्नाटक प्रदेश तथा जैन धर्मका सामान्य परिचय देते हुए पम्प युग (६०० से ११५० ई० तक) के साहित्यकारों तथा उनकी रचनाओं का मूल्यांकन किया गया है। पाँचवे अध्यायमें वसवयुगीन साहित्य (११५० से १४०० ई० तक) का विवेचन है। इस अध्यायमें साहित्यिक विवेचनसे पूर्व तद्युगीन धार्मिक तथा राजनीतिक परिस्थितियोंका भी संक्षिप्त परिचय दिया गया है। छठे, सातवें, आठवें, नवें, तथा दसवें अध्यायोंमें कुमार व्यास युग (१४००से १६०० ई० तक) के साहित्य का विवेचन है। कालावधिकी दृष्टिसे ही नहीं अपितु वैविध्य एवं साहित्यिक उपलब्धियोंकी दृष्टिसे भी यह युग अपने पूर्ववर्त्ती सभी युगोंसे बड़ा है—केवल कालावधिकी दृष्टिसे तो यह आधुनिक युगसे भी बड़ा है। परिणामतः इस युगके साहित्यका विवेचन अधिक विस्तारसे होना ही चाहिये था; किन्तु यदि लेखकने इस युगका विवेचन कुछ संक्षिप्त कर दिया होता तथा आधुनिक युगीन साहित्यका भी परिचय दे दिया होता तो यह पुस्तक निश्चय ही अधिक उपादेय सिद्ध हुई होती। फिरभी यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि हिन्दीके पाठकोंको कन्नड़ साहित्यकी जानकारी करानेके निमित्त किया गया यह प्रयास सराहनीय है।

—डॉ. ओम्प्रकाश सिंहल

उर्दू साहित्यका सुबोध इतिहास

लेखक: डॉ. कमलनारायण टण्डन; प्रकाशक: विद्या मन्दिर, ६८-६९ एवेन्यु रोड, बंगलौर २ (कर्नाटक)। पृष्ठ: ११७; डिमा ७२; मूल्य: ७.०० रु.।

प्रस्तुत पुस्तकके लेखक डॉ. कमलनारायण टण्डन हैं, परन्तु मुखपृष्ठपर उन्हें सम्पादक लिखा गया है। शायद ऐसा इसलिए किया गया कि श्री टण्डनने संकलित-सामग्री का सम्पादन मात्र किया है।

हिन्दीमें उर्दू साहित्यके कई इतिहास लिखे जा चुके हैं, जिनमें श्री व्रजरत्नदास द्वारा लिखित 'उर्दू साहित्यका इतिहास' भी है, पर उर्दू साहित्यके एक विस्तृत एवं प्रामाणिक इतिहासकी आवश्यकता हिन्दीमें अभीतक बनी हुई है। इस आवश्यकताकी पूर्ति प्रस्तुत पुस्तक नहीं करती क्योंकि इसमें भी उर्दू साहित्यका सिंहावलोकन मात्र है। इतिहास लेखनमें जिस तटस्थ तथा वैज्ञानिक दृष्टि और विस्तृत अध्ययनकी आवश्यकता होती है, उसका परिचय भी इस इतिहास-ग्रन्थसे नहीं मिलता। इसका लेखन (या सम्पादन) इस पूर्वाग्रहके आधारपर हुआ है कि उर्दू हिन्दीका ही एक रूप है अर्थात् उर्दू का स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है और उर्दू मुसलमानोंकी भाषा है।

उर्दूकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें डॉ. टण्डनने अन्तर्विरोधी बातें लिखी हैं। पृष्ठ ६ पर वे लिखते हैं—"फारसी और हिन्दीके मेलसे उर्दू भाषाका संगठन हुआ है।" परन्तु पृष्ठ ७ पर वे लिखते हैं—"कुछ लोगोंका कथन है कि उर्दूकी उत्पत्ति फारसीसे हुई है, क्योंकि वह उसी भाषाके बोलनेवालोंके पड़ावोंमें संगठित हुई है परन्तु यह निरा भ्रम है।" अगले पृष्ठपर उन्होंने फिर हिन्दीमें फारसी आदि भाषाओंके शब्दोंके मिश्रणसे बनी मिश्रित भाषाको ही उर्दू कहा है। उर्दूकी उत्पत्तिपर विचार करनेकी आवश्यकता समझते हुए भी श्री टण्डनका विचार है, "उर्दू कभी किसी भाषासे नहीं निकली। हिन्दीका ही नाम उर्दू रख लिया गया है। अगर इसका नाम उर्दू न रखकर मुसलमानी हिन्दी रखा जाता तो अधिक सार्थक होता है।" (पृष्ठ ८)

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि ऐसा है तो उर्दू की उत्पत्तिको लेकर माथापच्ची क्यों की जाये ?

उर्दू के स्वतन्त्र अस्तित्वको नकारनेके लिए विद्वान लेखकने तर्क दिया है—"उर्दू शब्दमें किसी भाषा विशेष का बोध नहीं होता।" मध्यकालमें 'भाखा' शब्दसे कौन-सी भाषाका बोध होता था और उससे भी पहले 'अपभ्रंश' शब्दसे कौन-सी भाषाका बोध होता था ? फिरभी तुलसी और जायसीने 'भाखा' में महाकाव्य लिखे और स्वयंभू अपभ्रंशका महाकवि हो गया है। लेखकने सही प्रश्न उठाया है कि जब हिन्दी-उर्दूका व्याकरण एक है, तब उर्दू अलग स्वतन्त्र भाषा कैसे कहला सकती है ? मेरा एक प्रतिप्रश्न है कि हिंन्दीका व्याकरण, और व्याकरण ही क्यों हिन्दी भाषाविज्ञान, संस्कृतपर आधारित होनेपर भी हिन्दी संस्कृतसे अलग स्वतन्त्र भाषा कैसे है ? सत्य यह है कि हिन्दी संस्कृतसे बहुत कुछ लेकर भी उससे स्वतन्त्र है। इसीप्रकार उर्दू हिन्दीसे बहुत कुछ (एक मात्र व्याकरण ही नहीं) लेकर भी उससे स्वतन्त्र भाषा है।

डॉ. टण्डनकी मान्यता है कि व्यावहारिक भाषाके रूप में उर्दूका जन्म दसवीं शताब्दीके उत्तरार्द्धमें उस समय हो गया था जब दो जातियों (अर्थात् हिन्दू-मुस्लिम) का व्यावसायिक सम्पर्क हुआ और पांच शताब्दियोंतक उर्दू इसी अवस्थामें रही। इस बातका कोई प्रमाण उन्होंने नहीं दिया है। अमीर खुसरो, जायसी, रहीम, कबीर, रसखान आदिकी कवितामें फारसी शब्दोंके प्रयोगकी बात करके उस व्यावहारिक भाषाको सिद्ध तो क्या उसकी ओर संकेत भी नहीं किया जा सकता और न उपर्युक्त कवियोंको उर्दू कविके रूपमें पेश किया जा सकता है।

अनेक स्थानोंपर उर्दूको मुसलमानोंकी भाषा कहा गया है। किसी भाषाको किसी धर्म तथा जाति अथवा सम्प्रदायसे जोड़ना बहुत गलत है। भाषा एक सामाजिक सम्पत्ति है। वह किसी धर्म, सम्प्रदाय, जातिकी बपौती नहीं होती। मनुष्य साम्प्रदायिक प्रवृत्तिवाले हो सकते हैं, पर भाषाएँ मूलतः साम्प्रदायिक नहीं होती। वे उनकी हो जाती हैं, जो उनका प्रयोग करते हैं।

डॉ. कमलनारायण टण्डन उर्दूके विदेशीपन और उसकी अस्वाभाविकताकी भी शिकायत करते हैं (पृष्ठ १०) पर ही अगलेही पृष्ठपर वे उसकी सफाई, सरलता और स्वाभाविकताकी चर्चा करने लगते हैं। ऐसे अन्तर्विरोधी कथन इस पुस्तकमें अनेक हैं।

उर्दू कविताके इतिहासके नामपर इस पुस्तकमें मुहम्मद कुली कुतुबशाह (१६वीं शतीका शासक कवि, जिसे लेखकने उर्दूका प्रथम कवि बताया है) से लेकर मजाज लखनवी तककी चर्चा की गयी है। मजाज उर्दूका प्रगतिशील रोमानी शायर था। यह चर्चा परिचयात्मक अधिक हैं, समीक्षात्मक अथवा विश्लेषणात्मक कम। 'उर्दूका नया काव्य' शीर्षकके अन्तर्गत जदीदियतकी शायरीकी विवेचना अपेक्षित थी, पर लेखकने इकबाल और जोशसे उर्दू कविताका नया युग प्रारम्भ होता दिखाकर उन्हीं शायरोंकी चर्चा कर दी है जिनका उर्दूकी जदीद शायरी (अधुनातन कविता) से कोई सम्बन्ध नहीं है। हाली और मुहम्मद हुसैन आजादने जिस नवीन उर्दू काव्यकी नींव डाली थी, इकबाल, जोश, चकबस्त, सीमाब, हसरत मोहानी आदिने उसी काव्यको चार चांद लगाये, पर ये शायर उर्दू के उस अधुनातन काव्यका प्रतिनिधित्व नहीं करते, जिसके विवेचनकी अपेक्षा 'उर्दूका नया काव्य' शीर्षकके अन्तर्गत थी। अहसान दानिश, मुईन अहसन जज्बी, मजाज़ आदि प्रगतिशील शायर हैं। पर उर्दू कविताने 'तरक्कीपसन्द शायरी' की मंजिल तय कर जिन नयी दिशाओंमें प्रगति की है, उनकी चर्चा इतिहास ग्रन्थमें नहीं होगी, तो कहां होगी ?

उर्दू गद्यकी चर्चा करते हुए डॉ. टण्डनने उसका आरम्भ दिल्ली और लखनऊमें माना, पर उसका पूर्ण विकास कलकत्तेमें माना, जबकि वहां फोर्ट विलियम कालेजकी स्थापना हुई (१८वीं शताब्दीमें) और गिलक्राइस्ट की अधीनतामें उर्दू गद्यका स्वरूप निर्धारित हुआ। मतलब यह कि जॉन गिलक्राइस्ट साहब न होते तो उर्दू गद्यका स्वरूप निर्धारित न होता। हिन्दी और उर्दूमें भेदकी दीवार खड़ी करने और भारतवासियोंमें साम्प्रदायिकताका बीजारोपण करनेमें गिलक्राइस्टने जो कुछ किया उसे भूलकर उन्हें उर्दू गद्यका बाबा-ए-आदम कहना कहाँ तक उपयुक्त है ? लेकिन श्री टण्डन लिखते हैं—"डॉ. जॉन साहब (अर्थात् जॉन गिलक्राइस्ट) ने उर्दू और हिन्दी दोनों जबानोंपर इतने अहसान किये हैं कि जबतक ये जबानें दुनियांमें रहेंगी, उन्हें याद करती रहेंगी।......वह उर्दू गद्यके पिता कहलाने के सचमुच अधिकारी हैं।" (पृष्ठ ५८) इन शब्दोंमें चापलूसीकी गन्ध आती हैं। गिलक्राइस्टने हिन्दीपर तो यह अहसान किया है कि अपने उर्दू व्याकरणकी रूपरेखा को उन्होंने हिन्दी व्याकरणका नाम दिया है और उर्दूपर यह अहसान किया कि उसे मुसलमानोंतक सीमित करने और उसकी जनवादी नींवपर साम्प्रदायिकताका रेतीला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीमेन्ट लगानेका प्रयास किया। उर्दू और हिन्दीके बीच भेदभाव उत्पन्न करने, उर्दूको मुसलमानों और हिन्दीको हिन्दुओंके मत्थे मढ़नेकी शुरुआत करनेके अधिकारी कौन हैं, शायद इसे डॉ. टण्डन जानकर भी नहीं जानते।

१९वीं और २०वीं शताब्दीके उर्दू गद्य-साहित्यकी चर्चा केवल ढाई पृष्ठोंमें की गयी है और मजेदार बात यह है कि मोहन राकेशको भी उर्दू गद्य लेखकोंमें स्थान दिया गया है। यह वैसे ही है जैसे उर्दू लेखक कृश्नचन्दर (कृष्णचन्द्र नहीं) की हिन्दीमें अनूदित रचनाओंके आधार पर उन्हें हिन्दी लेखकोंमें स्थान दिया जाये।

उर्दू साहित्यके विवेचनके पहले उर्दूके छन्द और उनकी विशेषताएँ बताना (वह भी नियमोंका उल्लेख किये बिना) आवश्यक समझा गया (पृष्ठ १२ से १४ तक) और फिर आगे चलकर भी छन्दोंकी चर्चा की गयी (पृष्ठ ६२-६३ पर)। इसीसे विवेचनकी लचर पद्धतिका अनुमान लगाया जा सकता है। पहले छन्दका नाम दिया गया है 'नज़्म' दूसरेका ग़ज़ल, और तीसरेका शेर। क्यों साहब! 'नज़्म' कौनसा छन्द है? 'नज़्म' और 'ग़ज़ल' रचनाके ढंग या रचना शैलियाँ हैं, जैसे गायनकी एक शैली है 'ख़याल', पर उसका छन्द प्रायः लावनी होता है। नज़्म को छन्द बताना वैसे ही अशुद्ध है, जैसे ख़यालको राग बताना। 'शेर' नामक छन्दसे तो वास्तवमें डर लगता है। आगे दीवान, तज़किरा, तारीख़, रेख़्ती, वासोख़्तको भी छन्दोंमें गिनाया गया है (पृष्ठ १२-१४)। यदि यह पुस्तक किसी परीक्षाकी गाइड या कुंजी होती तो महान अशुद्धियाँ भी चल सकती थीं, पर साहित्यके इतिहासको ये शोभा नहीं देतीं।

अहसान दानिशका जन्म मेरठके बताया गया है। वे मेरे पड़ौसी थे और मुजफ्फरनगर (उत्तर प्रदेश) के निवासी थे। ऐसी छोटी भूलें इस ग्रन्थमें अनेक हैं, पर उर्दू साहित्य की प्रारम्भिक जानकारीके लिए यह अवश्य उपादेय है।

—डॉ. सुधेश

राजस्थानी साहित्य

जूना बेली नुवां बेली

सम्पादक : शिवरतन थानवी, पुरुषोत्तम तिवारी; प्रकाशक : चिन्मय प्रकाशन, चौड़ा रास्ता, जयपुर-३। पृष्ठ : १३६; डिमा. ७३; मूल्य : ५.७५ रु.।

थोरा के ल्यां हॉ

लेखक : नागराज शर्मा; प्रकाशक : सुशील प्रकाशन, पिलानी (राज०)। पृष्ठ : ११४; क्रा. ७४; मूल्य : ५.०० रु.।

'जूनां बेली नुवां बेली' में सृजनशील शिक्षकोंका वैचारिक श्रम समकालीन यथार्थ, क्रियाशील अनुभूतियों एवं संवेदनशील स्वरमें मुखरित हुआ है। राजस्थानी साहित्यकी यह एक अनुपम कृति है, जिसमें राजस्थानीके आधुनिक साहित्यकी विशेषताएँ एक प्रौढ़ भाषा एवं साहित्यसे प्रतिस्पर्धा करती हुई उजागर हुई हैं।

कृतिमें मुहावरे और कहावतें भाषाका सौष्ठव बढ़ाने में सक्षम हुए हैं। उदाहरणार्थ मोहन पुरोहित 'त्यागी' की कहानी—'जूनां बेली नुवां बेली' में 'घोड़ा घास सूं बेलीपो निभासी तो कांई खासी (पृ० १६) और रघुनाथसिंहकी कहानी—'अकाल ऊपर लो काल' में 'काल मौत रो ही नाम है' आदि कहावतें भाषामें सहजता लिये हुए हैं। इस कहानीमें भाषाकी चित्रात्मकता भी अनूठी है—"कँवता कँवता कालूरी आंख्यामें पाणी चिलकण लागग्यो (पृ० ३)। 'सिणगारी' नृसिंह राजपुरोहितकी एक करुणा-प्रधान कहानी है जो समसामयिक परिवेशको अपने निजी टेकनीकसे प्रस्तुत करती है।

प्रस्तुत कृतिका कविता-खण्ड भी राजस्थानीके साहित्यकारोंकी रचना-प्रक्रियाको प्रकाशित करनेमें सफल हुआ है महावीरप्रसाद शर्माकी कविताएँ 'शारदा-वन्दन' तथा 'सांझ' अपनी गेयताके साथ साथ भावोंका पिटारा खोले बैठी हैं। सांवरदइयाकी कविता—"कोयलो इत्तो कालो को हुवै नीं" में बौद्धिक व्यंग्य (विट) आक्रोशकी भूमिकापर अभिव्यक्त

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ है। करणीदान बारहठकी कविता 'जिन्दगी' स्तरीय हास्यका उदाहरण है। ओम अरोड़ा अपने 'म्हूं बी सैलूण में गियो' व्यंग्य लेखमें आद्यान्त हास्यकी फुलवाड़ी छोड़नेमें सफल हुए हैं और रामस्वरूप 'परेश' की कविता 'जैपर रो एक दिन' आजकी जिन्दगीका यथार्थ चित्रण है।

किन्तु कुछ कहानीकार अति आदर्शके खोलसे ढके हुए नजर आते हैं। पुस्तककी प्रधान कहानी 'जूनां बेली नुवां बेली' का नायक आधुनिक विषाक्त युगका आदमी होते हुए भी 'जूनां बेली' से सहानुभूति मात्र न मिलनेके कारण बेहोश होकर अपनी माँकी चारपाईके पास गिर पड़ता है। 'मतलब निकल गया तो पहचानते नहीं' के आधुनिक युगको आजका आदमी जानता है, वह इतना भावुक नहीं बनता।

'थारो के ल्यां हां' श्री नागराजशर्माका हास्य-व्यंग्य प्रधान कविता-संग्रह है। संग्रहकी कविताओंमें जनसाधारण के भाव एवं विचारोंको सरल एवं बोधगम्य शैलीमें सम्प्रेषित किया गया है। 'थारो के ल्यां हां' 'मन्ने टिकट दिवादे राम' 'समाजवाद रो रोलो' आदि कविताएँ हमारे आज के राजनीतिक ढांचेपर करारी चोट करती हैं। कृतिका 'हंसोकड़ियां'-खण्ड पाठकके मुखपर मुस्कान बिखेरनेमें सक्षम है।

किन्तु कई कविताओंमें कवि व्यंग्यको सरल एव सतही धरातलपर रखनेके मोहके कारण साहित्य और सौन्दर्य शास्त्रके गम्भीर एवं उद्बोधक चिन्तनको भुला बैठा है। यही कारण है कि उनके व्यंग्यमें 'विट' (बौद्धिकता) नजर नहीं आती और इस विटके अभावके कारण 'तेरो बाप', 'बींद बूडलो' आदि कविताओंमें बहुतही सतही और सस्ता हास्य अभिव्यक्त हुआ है।

—नरपतसिंह सोढ़ा

रामतीर्थ साहित्य

(१) स्वामी रामतीर्थ (२) सफलताका रहस्य (५) मानवता और विश्वप्रेम (४) हमारा भारत (५) ब्रह्मचर्यकी शक्ति (६) व्यावहारिक वेदान्त (७) गृहस्थ धर्म (८) हमारा राष्ट्रीय धर्म (९) रामतीर्थ सूक्ति सुधा

प्रथम पुस्तकके लेखक: श्यामजी गोकुल वर्मा; शेष स्वामी रामतीर्थ; प्रकाशक: प्रभात प्रकाशन, चावड़ी बाजार, दिल्ली-६। पृष्ठ क्रमश: ११२, ११५, ११५, १०८, ९२, १०७, ११३, १४४, १३१; क्रा. ७२; मूल्य प्रत्येक: ५.०० रु.।

आधुनिक युगके व्यावहारिक दार्शनिकोंमें स्वामी रामकृष्ण 'परमहंस', स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ और महामना तिलकका नाम विशिष्ट उल्लेखनीय है। स्वामी रामतीर्थका प्रखर चिन्तन, स्पष्ट मत, प्रबुद्ध भाव, जहाँ आध्यात्मिक चिन्तनकी गहराइयोंमें उतरनेमें सहायक हैं, वहाँ आजके संघर्षसे जूझते मानवको प्रेरणा देनेमें भी परम सहायक हैं।

रामतीर्थ विचारकके साथ-साथ एक उच्चकोटिकी साहित्यिक प्रतिभा भी थे, यह जानकारी सामान्य पाठक को नहीं है। उनके साहित्यका इस पुस्तकमालामें संकलन करके संपादक और प्रकाशकने निश्चित रूपसे स्तुत्य कार्य किया है। समीक्षित पुस्तकोंकी समीक्षाकी अपेक्षा उनकी जानकारी देना अधिक उपयुक्त होगा।

(१) 'स्वामी रामतीर्थ' स्वामीजीकी संक्षिप्त जीवनी, उनके जीवनके कई महत्वपूर्ण पक्षोंको उजागर करती है। संक्षिप्त होते हुए भी पर्याप्त रोचक, पठनीय और पर्याप्त जानकारीसे युक्त है।

(२) 'सफलताका रहस्य' में सफलताके आठ सिद्धान्त कर्म, आत्म-त्याग, आत्म-विस्मरण, प्रेम, प्रसन्नता, निर्भयता आत्मनिर्भरताका उल्लेख है; 'नामका विवाद छोड़ो काम करो', 'स्वार्थरहित होकर बलिदान करो', 'प्रेम सबसे करो' आदि शीर्षकोंमें स्वामीजीका प्रबुद्ध चिन्तन संकलित है।

(३) 'मानवता और विश्वप्रेम' व्यक्ति और समष्टिके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पारस्परिक सम्बन्धोंका व्यावहारिक वेदान्त प्रस्तुत करता है।

(४) 'हमारा भारत' में 'हमारा देश भारत' 'दूसरे देश और आजका भारत' दोनों ही दृष्टियोंसे विचार किया गया है। और हमारी संस्कृति, सभ्यता, ज्ञान-विज्ञान, जीवन-दृष्टिपर महत्वपूर्ण तथ्योंको उजागर किया है, जहां हमारी दृष्टि सहजरूपमें नहीं पहुंच पाती।

(५) 'ब्रह्मचर्यकी शक्ति' में ब्रह्मचर्यका महत्व, ब्रह्मचर्यसे लाभके अतिरिक्त प्राणायामकी महत्वपूर्ण एवं सरल विधि बताकर ब्रह्मचर्य पालनके कुछ व्यावहारिक उपायोंकी चर्चा है। साथ ही संतति-निरोधको भी महत्त्व दिया गया है।

(६) 'व्यावहारिक वेदान्त' में प्रश्नोत्तरोंके ढंगसे, अनेक जटिल शंकाओंका व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत किया गया है।

(७) 'गृहस्थधर्म' में भारतीय जीवनके संयुक्त परिवार में व्यक्तिका धर्म, भलीप्रकार स्पष्ट किया गया है।

(८) 'हमारा राष्ट्रीय धर्म' आजके नेताओंके लिए विशिष्ट मार्ग-दर्शक हो सकता है। उन्हें यह पुस्तक अनिवार्य रूपसे पढ़नी चाहिये।

(९) 'रामतीर्थ सूक्ति सुधा' में स्वामीजीके भाषणों, उपदेशोंमें आयी महत्वपूर्ण सूक्तियोंका संग्रह है।

कुल मिलाकर स्वामी रामतीर्थके भाषणोंमें से, विभिन्न शीर्षकोंसे संकलित ये विचार, बड़े करीनेसे सजाये गये हैं, जिनका व्यावहारिक पक्ष अत्यन्त सहज एवं सरल है। व्यक्ति यदि अपनेको पूर्ण मानव और एक प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्तित्वके रूपमें देखना चाहता है तो उसे इन पुस्तकोंका बड़े मनोयोगपूर्वक पठन अवश्य करना चाहिये।

—डॉ. त्रिलोकीनाथ

किशोर-बाल साहित्य

महाराष्ट्र

लेखक : श्री रा. टिकेकर; प्रकाशक: प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-१। पृष्ठ: ८०; क्रा. ७४; ३.०० रु.।

"हमारे देशके राज्य" ग्रन्थ मालाके अन्तर्गत प्रकाशित आलोच्य पुस्तक सातवीं पुस्तक है। इसमें महाराष्ट्रके भूगोल और रोमांचकारी इतिहाससे लेकर उसके आर्थिक विकास और सांस्कृतिक योगदानके बारेमें जानकारी दी गयी है।

महाराष्ट्र यद्यपि अनेक प्राकृतिक क्षेत्रोंमें बंटा है, किन्तु अधिकांश रूपसे वह पहाड़ी क्षेत्र है जिससे वहांके किसान घोर परिश्रमी, सन्तोषी और हिम्मती होते हैं। इतिहासमें मराठाओंके शौर्य और वीरताकी कहानियां भरी पड़ी हैं। महाराष्ट्रमें सबसे अधिक किले हैं और वहांकी बहादुरीकी कई घटनाएं भारतीय इतिहासमें अमर हो गयी हैं। महाराष्ट्रने शिवाजी जैसी विभूतियोंको जन्म दिया जिन्होंने अपने समयकी बड़ी शक्तियोंसे सफलतापूर्वक लोहा लिया। महाराष्ट्रकी साहित्य और कलामें भी महान उपलब्धियां हैं। महाराष्ट्र अपनी नाट्यकलाके लिए भी विख्यात है।

पुस्तकमें काफी जानकारी है। कुछ चित्र भी हैं। अच्छा होता यदि मराठीके साहित्यिकों, नाटककारों और इतिहासकारों तथा अभिनेता-अभिनेत्रियोंके पूरे नाम दिये जाते।

विवेकानन्दकी कहानी

प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली-६। पृष्ठ : ४६; क्रा. दुगना, ७३ (तीसरा संस्करण); मूल्य: २.२५ रु.।

स्वामी विवेकानन्द (१८६३-१९०२) गेरूए वस्त्रमें महान देशभक्त और स्वाधीनता सेनानी थे। उनका यह रूप १८९७ में (इसके बाद वे केवल ५ वर्ष जीवित रहे) उस समय पूर्णरूपसे उभरा था, जब वे शिकागोके विश्वधर्म सम्मेलनमें भाग लेनेके बाद जनवरीमें स्वदेश लौटे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने देशकी धरतीपर पैर रखते ही युवा लोगोंका आह्वान करते हुए ललकारा कि 'उठो और जागो'। उन्होंने कहा—देशको तुम्हारी बहुत ही जरूरत है। उन्होंने लोगोंको भारतकी महानताके साथ-साथ उसकी कमजोरियां बतायीं। विवेकानन्दने देशवासियोंके हृदयमें अतीतके प्रति अभिमान पैदा किया और भविष्यके लिए नया संदेश दिया। उन्होंने जनतासे आग्रह किया कि मनुष्योंकी सेवा करना हर व्यक्तिका लक्ष्य होना चाहिये। जिस किसीने उनके भाषणको सुना वह देश-सेवाकी भावनासे ओतप्रोत होकर मातृभूमिके लिए समर्पित हो गया। इसप्रकार, स्वामी विवेकानन्दने समाजसेवकोंकी एक नयी पीढ़ी पैदा कर दी जिसने देशसेवा तो की ही, साथही स्वाधीनता संग्राममें महान योगदान भी दिया। बंगालके क्रान्तिकारी उनके विचारोंसे बहुतही अधिक प्रभावित हुए। विवेकानन्द के विचारोंमें आजभी वह जीवनदायिनी शक्ति है कि वह सोते हुए को जगा सकती है और जागे हुए को सक्रिय कर सकती है। उनके विचारोंकी ज्योति आजभी जीवनको आलोकित कर सकती है।

आलोच्य पुस्तकमें स्वामी विवेकानन्दके जीवनको बच्चोंके लिए सुलभ किया गया है। उनके जीवनकी कई घटनाओंको बहुतही रोचक ढंगसे वर्णित किया गया है, जिससे पुस्तक नाटकीय बन गयी हैं। बच्चोंके लिए यह शैली बहुत ही अच्छी है। पुस्तकमें लेखकका नाम नहीं है, पता नहीं क्यों?

—मनमोहन वर्मा

ज्ञान भारती बाल पाकेट बुक्स

ज्ञान भारती बाल पाकेट बुक्स, लखनऊ द्वारा प्रकाशित बाल पाकेट बुक्स इधर काफी प्रचारित हुई हैं। बच्चोंके लिए पाकेट बुक्सका अभाव था। पर वे बहुत सन्तोषजनक नहीं हैं। इन पुस्तकोंकी सामग्री संक्षिप्त परिचय तो प्राप्त करना ही चाहिए। यह परिचय स्वयमेव उनकी उपयोगिता प्रतिपादित करेगा। **'हातिमताईका घोड़ा'** (लेखिका नयनतारा) में हातिमताईके मशहूर घोड़ेकी कहानी है जिसे रोम का बादशाह प्राप्त करना चाहता है। इसके अलावा इसमें 'घमंडीका सिर नीचा, 'लाली लागी प्रेमकी', 'बावली', 'माटीका दिया', 'दर्द और दवा', 'सेठजीकी काफी, 'देवी भागवतकी एक कथा' 'फकीर और बुढ़िया' 'बहरा साधु' और 'बुद्धिमान रामू' कहानियाँ भी संग्रहीत हैं। इन कहानियोंके संकलनके पीछे क्या उद्देश्य, क्या आधार रहा है, कुछभी स्पष्ट नहीं होता। कहानियाँ घटिया हैं, केवल पुस्तक का कवर ही सुन्दर है। **'आँखकी चोरी'** (ले० अनीस मिर्जा) एक ऐसा साहसिक और रहस्यपूर्ण उपन्यास है जो समझसे परे है। **'तू जीता और मैं हारा'**(ले० डा० विगत) में मोरध्वजकी पौराणिक कहानी है। **'कुदाल पंडित'** में भी कई कहानियाँ हैं—वही तुकतान— जो सिर्फ एक कहानी है। इन कहानियोंमें कितना मनोरंजन है और बच्चोंके लिए ये कितनी उपयुक्त हैं, इसका लेखा जोखा करना व्यर्थ है। **'बुरे लोग'** (ले० राजेन्द्रकुमार मेहरोत्रा) को प्रेरक बाल उपन्यास कहा गया है और इसमें तीन अभिन्न मित्रोंके बुरे कारनामों तथा उसका फल भुगतनेकी कहानी है। **'धूर्त मंत्री'** में (ले० शंकर सुल्तानपुरी) एक राजकुमारीकी चमत्कारी कहानी दी है जो अपने पतिका जीवन वापस लेनेके लिए सर्पोंकी कुटियामें जाती है। **'भयानक योगी'** (ले० कृष्ण प्यारे लाल) हैं एक रहस्यमय साधुकी कहानी है। **'कहो न मम्मी'** (ले० रामचंद्र चौधरी) में राकेटपर यात्राकी कहानी दी गयी है जो कोरी कल्पना है। **'सतीका शाप'** (ले० जयशंकर शर्मा) में राजस्थानकी सतीके शापकी कहानी है जिसने मेवाड़ और बूंदी के राजघरानोंको अपनी लपेट लिया था। **'अब्दुल्लाकी नौकरी'** में एक लकड़हारेके परिश्रम, साहस और लगनकी कहानी है जो राजा बन गया। **'हा हा हू हू'** (सं० अशोककुमार राना) में हंसीके चुटकुले और प्रसंग दिये गये हैं। **'कमांडरकी बेटी'** (ले० नयनतारा) में साहसिक कथाओंका संग्रह है।

—हरिकृष्ण देवसरे

बोध कथाएं

लेखक : आनन्द स्वामी; सम्पादक : रामकुमार गुप्त;

जेबी पुस्तकें

प्रकाशक : गोविन्दराम हासानन्द, ४०४८, नयी सड़क, दिल्ली-६। पृष्ठ : २०६; जेबी, ७४ (चतुर्थ संस्करण); मूल्य : ४.०० रु.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्मा आनन्द स्वामीजी महाराज आर्यसमाजके चोटीके उन कुछ संन्यासियोंमें से है, जिनकी वाणीमें आकर्षण है, धार्मिक साहित्यका सम्यक् अध्ययन है और उस अध्ययनके साथ चिन्तन-मनन जुड़ा है। इसके साथ उनकी वाणी अर्थात् उपदेश देनेकी कला इतनी अधिक विकसित है कि वे सहजही श्रोताओंको आकृष्ट कर लेते हैं और उन्हें अपने प्रवचनोंके साथ प्रवाहित करते हुए अपने साथ ले जाते हैं। इस आकर्षणमें उनके प्रवचनों की सहजता और सरलता तो कारण हैं ही, साथही, प्रवचनोंमें दृष्टान्तोंको जिस ढंगसे वे गुम्फित कर देते हैं और जिस सटीक ढंगसे वे प्रस्तुत करते हैं, वे उनके प्रवचनोंको बहुत सरस बना देते हैं।

उनके प्रवचनोंके इन दृष्टान्तोंका अलगसे संकलन करके 'बोध कथाएँ' नामसे यह पुस्तक प्रकाशित हुई हैं। 'बोध कथाएँ' नाम बहुत सार्थक है, क्योंकि इन दृष्टान्तोंमें बोध कराने, जीवनको सात्विक और आध्यात्मिक रंगमें रंगनेकी प्रेरणा अन्तर्निहित है। हमारा समाज जिस नैतिक संकटमें से गुजर रहा है, उसमें ये बोध-कथाएँ मार्ग-दर्शनका कार्य करती हैं।

इन बोधकथाओंमें आधुनिक लघु-कथाओंकी अपेक्षा कहीं अधिक रस है और जीवनके विशिष्ट लक्ष्योंकी स्थापना है। वाचनका आनन्द और साथमें जीवन के प्रति एक दृष्टिकोण निर्माणकी दृष्टिसे सभीप्रकार के पाठकोंसे इसे पढ़नेका निस्संकोच अनुरोध किया जा सकता है। किशोर वर्गके लिए यह पुस्तक विशेष रूप से उपयोगी हैं।

क्योंकि पुस्तक जेबी आकारमें हैं, इसलिए मूल्य भी कम है और सर्वसुलभ है।

दो रास्ते

प्रवक्ता : आनन्द स्वामी; संपादक : रणवीर; प्रका. उपर्युक्त। पृष्ठ : १९२; ७४; मू. ५.०० रु.।

भक्त और भगवान

प्रवक्ता, सम्पादक और प्रकाशक : उपर्युक्त। पृ. १२८; ७४; मू. ३.०० रु.।

दोनोंही पुस्तकोंमें महात्मा आनन्द स्वामीके प्रवचन संकलित हैं। स्वामीजीने विभिन्न स्थानोंपर समय-समयपर जो प्रवचन किये, उन्हें सम्पादित रूपमें इन पुस्तकोंमें प्रस्तुत किया गया है। इनमें स्वामीजीने प्राचीन शास्त्रों और वेदोंमें प्रतिपादित धर्मके स्वरूप को अपने ढंग और अपनी व्याख्या एवं विवेचनाके साथ प्रस्तुत किया है। क्योंकि स्वामीजी जन-वक्ता हैं, इस लिए उनके प्रवचनोंमें एक विशेष प्रकारकी सहजता रहती है और किसी भी बातको निरन्तर दैनिक जीवनकी घटनाओं और बोधकथाओंसे स्पष्ट किया जाता है, इसलिए वे अपनी बातको श्रोताओंके मन में बिना परिश्रमके उंडेल देते हैं। प्रवचन और लेखनमें जो अन्तर रहता है, उसे सम्पादकने ध्यानमें रखकर इस ढंगसे पुस्तकमें ये प्रवचन संकलित किये हैं कि इन लिखित और मुद्रित प्रवचनोंको पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है कि सामने बैठकर स्वामीजीके प्रवचन सुने जा रहे हैं।

प्रथम संकलनमें स्वामीजीके दिल्लीमें किये गये छः प्रवचन हैं। 'दो रास्ते' से उनका मतलब है एक दुनियांका, दूसरा धर्मका; स्वामीजीने इन्हीं रास्तोंकी कठोपनिषद्के 'श्रेय' और 'प्रेय' मार्गसे, यजुर्वेदके चालीसवे अध्यायमें वर्णित 'विद्या' 'अविद्या', 'सम्भूति' और 'असम्भूति' और 'मृत्यु' 'अमृत' से संगति बैठायी है। दैनिक जीवनके व्यवहारसे उदाहरण देकर उसे केवल सांसरिक स्तरतक सीमित न रखकर ऊंचे स्तरपर, अधिक व्यापक स्तरपर उठानेकी प्रेरणा है। इन प्रवचनों का दृष्टिकोण नितान्त मानवीय है, परन्तु उसपर आवरण धार्मिक है। यह धार्मिक आवरण संकीर्णताका नहीं, बल्कि विशालताका है, जिसकी हमें आज आवश्यकता है। उद्देश्य कल्याण है—मानवीय कल्याण। किसी वर्ग या सम्प्रदायके कल्याणका नहीं। इसलिए उपदेश सार्वजनिक हैं, परन्तु पृष्ठभूमि प्राचीन भारतीय साहित्य की है।

दूसरे संकलनमें भी छः प्रवचन हैं। इन प्रवचनोंके स्वर और शैली भी ऊपर उल्लिखित प्रवचनोंसे साम्य रखते हैं। प्रवक्ता इसी स्वर और शैलीमें पगे हैं। विषय अधिक आध्यात्मिक है, परन्तु श्रोताओंके मनमें सीधी पैठ करने वाली शैलीके कारण इसमें कहीं दुरुहता नहीं आने पाती। यह अवश्य हुआ है कि दुरुहतासे बचनेके लिए बौद्धिकता को कदाचित् दूर रखा गया है और पारम्परिक भावुकता को उभारा गया है। इसी भावुकताके साथ इनमें माधुर्य भी आ गया है।

हमारा विश्वास है कि इन प्रवचनोंको पढ़कर किसी को निराशा नहीं होगी। जेबी पुस्तकोंमें प्रकाशित होने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के कारण सर्वसुलभ भी हैं।

—माधव पंडित

फासला

लेखक : ख्वाजा अहमद अब्बास; प्रकाशक : हिन्द पाकेट बुक्स; जी. टी. रोड, शाहदरा, दिल्ली-३२। पृष्ठ : १२८; ७४; मू. ३.०० रु.।

यह राष्ट्रीय पुरस्कार विजेता फिल्मकार और प्रसिद्ध लेखक ख्वाजा अहमद अब्बासकी सबसे नयी फिल्मका सचित्र उपन्यास है, जिसमें एक भटके हुए अमीर युवक और एक पढ़ी-लिखी मेहनतकश युवतीकी मानसिक उथल-पुथलका चित्रण किया गया है। यह प्रेम-कथा तो है ही, इसके साथ-साथ देशमें फैली हुई आजकी विकट स्थितियोंपर करारा व्यंग्य भी है।

"जमीन और आसमानका फासला तो इन्सानने कम कर लिया है, लेकिन इन्सान और इन्सानके बीचका फासला कम नहीं हुआ"···(पृ. १२७)", "मुझे तो यह दुनियांही पागल नजर आती है वहां एक आदमी इक्कीस कमरोंमें रहता है और इक्कीस आदमी एक कमरेमें रहते हैं—जहां कुत्तोंको संगमरमरके टबमें नहलाया जाता है और लाखों आदमी दो बूंद पानीको तरसते हैं···","यह दुनियां, जहां एक एटम बम बनानेपर इतने करोड़ रुपये खर्च किये जाते हैं जिनसे हजारों अस्पताल और स्कूल बनाये जा सकते थे, करोड़ों भूखे बच्चोंको दूध पिलाया जा सकता था।" (पृष्ठ वही)—'फासला' का निचोड़ यही पंक्तियां हैं। उपन्यासको खूबसूरत शीर्षकोंवाले सोलह अध्यायोंमें बांटा गया है, यथा—'लाल आंख, पीली आख, हरी आंख', 'लड्डूकी लकीर', 'नींद क्यों रातभर नहीं आती,' 'अन्धेरी रातके मुसाफिर', 'मेरा बेटा मेरा दुश्मन', 'बन्धे हाथ', 'दुनियां कहती मुझको पागल', 'मां कहता दुनियांको पागल', आदि।

'फासला' फिल्मी फार्मूलेको ध्यानमें रखकर लिखा गया है इसलिए फिल्मोंके टिपिकल पात्रों और फिल्मी लड़कोंकी इसमें भरमार है।

बिना ब्याही मां

लेखक : गुरुबख्शसिंह; प्रकाशक : उपर्युक्त। पृष्ठ : १२७; ७४; मू. ३.०० रु.।

प्रस्तुत पुस्तकमें छिहत्तर पृष्ठोंमें 'बिन ब्याही मां' शीर्षक उपन्यास है और पांच कहानियां दी गयी हैं। प्रकाशकीय टिप्पणीमें इसे 'पंजाबीका सर्वश्रेष्ठ उपन्यास' कहा गया है जबकि उपन्यास पढ़कर ऐसा लगता है मानों किसी बच्चेने कैनवासपर अड़ी-तिरछी रेखाएँ खींच दी हों और कोई उसे सर्वश्रेष्ठ चित्र घोषित कर रहा है।

उपन्यासकी पृष्ठभूमि स्वतन्त्रतासे पहलेकी है, भाषा-शैली उससे भी पुरानी। उपन्यासमें शुरूसे अन्ततक एक के बाद एक संयोग या दुर्योग हैं। इसलिए यह कहींसे भी विश्वसनीय नहीं लगता। अलबत्ता इसपर 'चालू' फिल्म अवश्य बन सकती है।

पांचों कहानियां भी वैसी ही हैं, यानी भावुकतासे ओतप्रोत, हल्की और घिसी-पिटी।

—शम्भुनाथ मिश्र

विविध

जीना सीखिए—विट्ठलदास मोदी (प्रकाशक उपर्युक्त, पृ. १४४;७४; मू. ३.०० रु.)—आत्म-निर्माण सम्बन्धी एक और पुस्तक है जिसमें प्राकृतिक चिकित्साके व्यावहारिक चिकित्सकने ३१ अध्यायोंमें सरल भाषा, रोचक प्रसंगों उदाहरणोंके साथ मनोवैज्ञानिक दृष्टिसे अपने आपको सबल बनाकर जीवनमें सफलता प्राप्त करनेकी प्रेरणा देनेका प्रयास किया है। "अपना ध्येय महान बनायें और सामने आये हर कामको महान समझकर करें "यही इस पुस्तकका मूल मंत्र है। नवयुवकोंके लिए ऐसी पुस्तकें मनन करने योग्य होती है, अन्य भी एक जीवन दर्शन समझनेके लिए पढ़ें।

—जीवन

प्रकाशकों और पुस्तक-विक्रेताओंके लिए विज्ञापन दर

पूरा पृष्ठ	२५०-०० रु०
आधा पृष्ठ	१४०-०० रु०
चौथाई पृष्ठ	७५-०० रु०

व्यवस्थापक : 'प्रकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्ति-सूचना

[निम्न पुस्तकें समीक्षार्थ प्राप्त हुई हैं, आगामी अंकोंमें इनकी समीक्षा अथवा परिचय प्रकाशित होगा। समीक्षार्थ दो प्रतियां आनी चाहियें, एक प्रतिकी समीक्षाका दायित्व स्वीकार नहीं किया जाता।]

शोध-आलोचना

आंध्रके लोकगीत; लेखक : डा. कर्ण राजशेषगिरिराव; प्रकाशक : आंध्र विश्वविद्यालय, वाल्तेर (आंध्र प्रदेश)। पृष्ठ: ३२२; डिमा. ७४; मूल्य ३४.५० रु.।

रामचरित मानस और बाल्मीकि रामायण; लेखक : डा. एल. पी. टेसीटरी; अनुवादक : डा. राधिकाप्रसाद तिवारी; प्रका. आनन्द प्रकाशन, दीवानी मिसिल, फैजाबाद (उ. प्र.)। पृ. १०८; डिमा, ७४; मू. १२.५० रु.।

लिपिविज्ञान और नागरी लिपि; ले. ओम्प्रकाश भाटिया 'अराज'; प्रका. सूर्य प्रकाशन, नयी सड़क, दिल्ली-६। पृ. १८०; क्रा. ७४; मू. १२.५० रु.।

उपन्यास

अपना अपना राक्षस; ले. लक्ष्मीनारायण लाल; प्रका. साहित्य भवन (प्रा.) लि, के.पी कक्कड़ रोड, इलाहाबाद। पृ. १०१; क्रा. ७३; मू. ५.०० रु.।

बात एक और तकी; ले. कृष्णा अग्निहोत्री; प्रका. इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, के ७१, कृष्णनगर, दिल्ली-५१। पृ. १९२; क्रा. ७४; मू. १२.०० रु.।

लाल बाई (बंगालसे अनूदित); ले. रमापद चौधरी; अनु. मनीषदत्त; प्रका. उपर्युक्त। पृ. १९२; क्रा. ७४; मू. १२.०० रु.।

कहानी-संग्रह

डाकू आये थे; ले. लक्ष्मीनारायण लाल; प्रका. साहित्य भवन, इलाहाबाद। पृ. १४४; क्रा. ७४; मू. ६.०० रु.।

नाटक : एकांकी

खट्टे-मीठे एकांकी; डा. रामकुमार वर्मा; प्रका. साहित्य भवन, इलाहाबाद। पृ. १७९; क्रा. ७३; मू. ६.०० रु.।

बदला; ले. मुकेश; प्रका. अविनाश जनरल स्टोर; पुस्तक विक्रेता, अवागढ़ (एटा)। पृ. ६१; क्रा; मू. १.२५ रु.।

काव्य संकलन

अनाम युग; कवि : ओम्प्रकाश भाटिया 'अराज'; प्रका. सूर्य प्रकाशन, नयी सड़क, दिल्ली-६। पृ. ९६; डिमा. ७४; मू. १.०० रु.।

आशीर्वादसे बचो; कवि : विनोद गोदरे; प्रका. क्रमशः प्रकाशन, ३६ / ९८४, नेहरू नगर, कुर्ला (पूर्व), बम्बई-२४। पृ. ९२; डिमा. ७४; मू. ५.०० रु.।

आस्थाका दीप; कवि : बाबूराम शुक्ला; प्रका. आर्य बुक डिपो, ३०, नाईवाला, करौलबाग, नयी दिल्ली-५। पृ. १००; डिमा. ७४; मू. १२.०० रु.।

इस यात्रामें; कवि : लीलाधर जगूड़ी; प्रका. इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, केन्द्र, ७१, कृष्णनगर, दिल्ली-५१। पृ. ७०, डिमा. ७४; मू. १०.०० रु.।

काली कविताएं; कवि: प्रणवकुमार वद्योपध्याय; प्रका. उपर्युक्त। पृ. ८७; क्रा. ७४; मू. १.०० रु.।

जीवन : संस्मरण

हमारे इतिहासकार; ले. शुकदेव दुबे; प्रका. साहित्य भवन, इलाहाबाद। पृ. १४०; क्रा. ७३; मू. ५.०० रु.।

पत्र-पत्रिकाएं

युग-परिबोध (त्रैमासिक) संपादक : आनन्द प्रकाश, रमेश उपाध्याय, राजकुमार शर्मा; सम्पर्कः एफ-११/१५, माडल टाउन, दिल्ली-९। वार्षिक मूल्य : ६.०० रु.।

संकल्प (त्रैमासिक); संपा. नरपतसिंह सोढ़ा, सिटी कोतवालीके पीछे, बीकानेर ३३४००१। वार्षिक ल्मूय : २०.०० रु.।

जेबी-पुस्तकें

आग बनी सुहाग (उप.); ले. मीनाक्षी माथुर; प्रका. हिन्दी पाकेट बुक्स, जी.टी. रोड, शाहदरा, दिल्ली-३२। पृ. १२८; ७४; मू. ३.०० रु.।

आधा मर्द, आधी औरत (जा. उप.); ले. सुरेन्द्र इलाहाबादी; प्रका. पुष्पी पाकेट बुक्स, ११९-बी, बाईका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाग, इलाहाबाद-३। पृ. १६१; मू. ३.०० रु.।

आधुनिक बुनाई (गृह विज्ञान); ले. आशारानी व्होरा; प्रका. हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली-३२। पृ. १२७; ७४; मू. ३.०० रु.।

उपनिषदोंका संदेश; ले. आनन्द स्वामी; प्रका. गोविन्द राम हासानन्द, ४४०८, नयी सड़क, दिल्ली-६। पृ. १६६; ७४; मू. ४.००. रु.।

एक लड़की बदनाम-सी (उप.); ले. प्रशान्त; प्रका. पुष्पी पाकेट बुक्स, इलाहाबाद। पृ. १०४; मू. २.०० रु.।

काली रातें (उप.); ले. दत्त भारती; प्रका. हिन्द पाकेट बुक्स, शाहदरा, दिल्ली-३२। पृ. १२८; ७४; मू. ३.०० रु.।

क्रान्ति बीज; ले. भगवान रजनीश; प्रकाशक : पुष्पी पाकेट बुक्स, बाईका बाग, इलाहाबाद-३।

खूनकी नदियां (जा० उप०) ले० मेजर; प्रका० उपर्युक्त। पृ. १२५; मू० २. रु.।

खूनके प्यासे (जा० उप०); ले० प्रका. उपर्युक्त। पृ. १००; मू० २ रु.।

गोरी परछाईयां (उप.); ले. ए. मनीश; प्रका. उपर्युक्त। पृ० १३६; मू० २ रु.।

जब अंधेरा होता है (उप.); ले. पारस; प्रकाशक: उपर्युक्त। पृ. ११२; मू० २ रु.।

डिम्पल कपाड़िया : बॉबी (फिल्मी); ले. अनुराग शर्मा, शंकर सुलतानपुरी; प्रका. उपर्युक्त। पृ. १५४; मू. ३ रु.।

तुम्हारे लिए (उप.); ले. पारस; प्रका. उपर्युक्त। पृ. १७५; मू. ३ रु.।

नाच घर (उप.)। ले. प्रशान्त; प्रका. उपर्युक्त। पृ. १५४; मू. २.५० रु.।

प्यासी औरत (उप.); ले. पारस; प्रका. उपर्युक्त। पृ. १७२; मूल्य : ३ रु.।

प्यासे रिश्ते (उप.); ले. प्रका. उपर्युक्त। पृ १४३; मू. २.५० रु.।

बदनाम रास्ते (उप.) ले. प्रका. उपर्युक्त। पृ. १४८; मू. २.५० रु.।

मौतका बुलावा (जा. उप.) ले. मेजर; प्रका. उपर्युक्त। पृ. १०२; मू. २ रु.

रंगीले मंत्री (उप.); ले. ए. मनीश; प्रका. उपर्युक्त। पृ. १६२; मू. ३ रु.।

रिवाल्वर न. २०४ (जा. उप.); ले. कैप्टन देवेश; प्रका. उपर्युक्त। पृ. १५५; मू. २ रु.।

संग दिल (उप.); ले. पारस; प्रका. उपर्युक्त। पृ. २११; मू. ४ रु.।

सिगरेट लाइटर (जा. उप.); ले. कर्नल राना; प्रका. उपर्युक्त। पृ. १४०; मू. २ रु.।

महत्वपूर्ण सामयिक प्रकाशन

मंहगाई बढ़ती हैं तो रुपयेकी कीमत गिरती है
इसीको रुपयेका अवमूल्यन कहते हैं
अवमूल्यनका देशकी अर्थव्यवस्थापर क्या
प्रभाव होता है ?

इसे विस्तारसे जाननेके लिए पढ़े :

रुपयेका अवमूल्यन और उसका प्रभाव

यह पुस्तक देशके चोटीके अर्थशास्त्रियों द्वारा लिखी गयी है
भाषा सरल है और सभी लोग समझ सकते हैं।

मूल्य दस रुपये

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान [सी.]

ए-८/४३ राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिठान (सी.)

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

से

उपलब्ध साहित्य

शोध आलोचना साहित्य

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य—संपा० महेन्द्र भटनागर सजि० ११-००
लो. स. ८-००

छायावाद: नया मूल्यांकन—प्रा० नित्यानन्द पटेल सजि० ८-००
लो० सं० ६-००

अंधायुग: एक विवेचन—डा० हरिश्चन्द्र वर्मा ११-००

संस्कृत कवितामें रोमांटिक प्रवृत्तियां (शो. प्र.) —डा० मनमोहन सहगल २०.०० १५.००

पं० अम्बिकादत्त व्यास : एक अध्यन (शो. प्र.) —डा० कृष्णकुमार ३०.००

साहित्यिक शोधके सिद्धान्त और समस्याएँ—डॉ० देवराज उपाध्याय ७.००

साहित्य दर्शन—शचीरानी गुर्टू ४०.००

आधुनिक हिन्दी आलोचना: एक अध्ययन—डॉ० मक्खनलाल शर्मा २०.००

रीति काव्यके स्रोत(शो०प्र०)—डॉ० रामजी मिश्र ३२.००

नये साहित्यका सौन्दर्य शास्त्र—गजानन माधव मुक्तिबोध १७.००

भाषा तत्त्व और वाक्यपदीय(शो० प्र०)—डॉ० सत्यकाम वर्मा २०.००

रामचरित मानस और पूर्वांचलीय रामकाव्य (शो० प्र०)—डॉ० रमानाथ त्रिपाठी ४५.००

रामचरित मानस : नाना पुराण निगमागम सम्मत—डा० गनोरी महत्तो २५.००

गुरुमुखी लिपिमें हिन्दी साहित्य (शो० प्र०) —डा० जयभगवान गोयल ३०.००

नवजागरण और छायावाद—महेन्द्रनाथ राय ४५-००

हिन्दी कृष्ण भक्ति साहित्यमें मधुर भावकी उपासना—डा० पूर्णमासी राय ४५.००

भक्ति आन्दोलनके प्रेरणा स्रोत—डा० मलिक मोहम्मद १०.००

हिन्दी साहित्यमें नारी (शो० प्र०)—डा० वल्लभदास तिवारी ५०.००

हिन्दी साहित्यमें राधा (शो० प्र०)—डा० द्वारकाप्रसाद मीत्तल ३०.००

शैली विज्ञान और आलोचनाकी नई भूमिका—रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव ६.००

हिन्दी साहित्यका इतिहास : प्रवृत्तियां मूल्यांकन —डा० रामगोपाल शर्मा १५.००

अहिन्दी भाषियोंका हिन्दी साहित्य—संपा० विद्यासागर विद्यालंकार १०.००

अठारहवीं शतीके हिन्दी पत्र—डॉ० काशीनाथ शंकर केलकर २५.००

रामसनेही सम्प्रदाय—डा० राधिकाप्रसाद त्रिपाठी २८.००

मध्ययुगीन रस दर्शन और समकालीन सौंदर्य बोध—डा० रमेशकुन्तल मेघ २५.००

काव्य-अध्ययन

समसामयिकता और आधुनिक हिन्दी कविता—डा० रघुवंश ६.००

नई कविता के सात अध्याय—डा० देवेश ठाकुर १५.००

स्वच्छन्दतावादी काव्यका तुलनात्मक अध्ययन (शो० प्र०)—डा० पी० आदेश्वर राव ३५.००

पाश्चात्य काव्य शास्त्र—डा० रामपूजन तिवारी १५.००

भारतीय काव्य शास्त्र—डा० कृष्ण दत्त १५-००

काव्य रूपोंके मूल स्रोत और उनका विकास (शो० प्र०)—डा० शकुन्तला दूबे १५.००

रीति-काव्यमें शृंगार निरूपण—सुखस्वरूप श्रीवास्तव १२.५०

रीति-काव्यके स्रोत (शो० प्र०)—डा० रामजी मिश्र ३२.५०

अवधी कृष्ण काव्य और उसके कवि(शो० प्र०] —मुरारीलाल शर्मा 'सुरस' १५.००

मध्ययुगीन महाकाव्य में नायक—(शो० प्र०) —डा०कृष्णदत्त पालीवाल ४०.००

मध्ययुगीन काव्यके सूफी इतर मुसलमान कवि (शो० प्र०)—डा० उदयशंकर श्रीवास्तव ३५.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निम्बार्क संप्रदाय और उसके कृष्ण भक्त हिन्दी कवि—डा० नारायणदत्त शर्मा १५,००
सूरके कृष्ण : एक अध्ययन—शशि तिवारी १०.००
ध्वनि सम्प्रदायका विकास (शो० प्र०)—डा० शिवनाथ पाण्डेय ३०.००
ध्वनि सिद्धान्त और व्यंजनावृत्ति विवेचन—डा० गयाप्रसाद उपाध्याय १२.५०
छायावादः नया मूल्यांकन—प्रा० नित्यानन्द पटेल ८.००
छायावाद की प्रासंगिकता—रमेश साह १२.००
आधुनिक हिन्दी कवियोंके शब्द प्रयोग—डा० कृष्ण भावुक ३५.००
आधुनिक हिन्दी कविता और रवीन्द्र—डा० रामेश्वरदयाल मिश्र २५.००
आधुनिक हिन्दी कवितामें व्यंग्य (शो० प्र०) —डा० बरसानेलाल चतुर्वेदी १५.००
आधुनिक हिन्दी-मराठी में काव्यशास्त्रीय अध्ययन(शो० प्र०)—डा० मनोहर काले २५.००
हिन्दी एवं मराठीके वैष्णव साहित्यका तुलनात्मक अध्ययन—डा० एन० सी० जोगलेकर ४०.००
नेपाली और हिन्दीके भक्ति-काव्यका तुलनात्मक अध्ययन (शो० प्र०]—डा० मथुरादत्त पाण्डेय २२.००
लोक गीतोंकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि—डा० विद्या चौहान ३५.००
स्वामी रामतीर्थ और उनकी हिन्दी कविता—डा० उर्वशी सूरती १५.००

उपन्यास-अध्ययन

हिन्दी लघु उपन्यास—घनश्याम 'मधुप' २५-००
हिन्दी उपन्यास : प्रयोगके चरण—डा० राज मल बोरा
हिन्दी उपन्यास—संपा. सुषमा प्रियदर्शिनी १४.००
हिन्दी उपन्यासका प्रारम्भिक विकास—डा. कु० शैलबाला २५.००
प्रेमचन्द की उपन्यास कला—डा. रघुदयाल वार्ष्णेय. १२.००
यशपालका औपन्यासिक शिल्प—डा० प्रवीण नायक ६.००
आचार्य चतुरसेनके उपन्यासोंमें इतिहासका चित्रण (शो. प्र.)—डा० विद्याभूषण भारद्वाज ४०.००
हिन्दी उपन्यासपर पाश्चात्य प्रभाव—भारत भूषण अग्रवाल ६०.००

कहानी-अध्ययन

नयी कहानी : कथा और शिल्प—डा० सन्तबख्श सिंह ३५.००
कहानीमें औत्सुक्यका अनुतत्व—रमेश बक्षी ५.००
कथा साहित्यके मनोवैज्ञानिक समीक्षा सिद्धांत—डा.देवराज उपाध्याय २५.००
हिन्दी कथा साहित्यमें इतिहास—डा. लक्ष्मीनारायण गर्ग ३५.००
कौशिकजीका कथा साहित्य—सुमित्रा शर्मा १०.००
नयी कहानी : प्रकृति और पाठ—सुरेन्द्र २५.००
प्रेमचन्दकी कहानी कला—चन्द्रभानु मिश्र ७.५०

नाटक-अध्ययन

हिन्दी नाटकोंमें हास्य तत्त्व—डा० शान्ता रानी १८.००
आधुनिक नाटकोंका मनोवैज्ञानिक अध्ययन—डा० हरीन्द्र ४०.००
आधुनिक हिन्दी नाटक और नाटककार—डा. रामकुमार गुप्त २०.००
प्रसाद नाट्य साहित्य : परम्परा और प्रयोग (शो. प्र.)—डा. गणेशदत्त गौड़ २०.००
उड़ीया नाटक और रंगमंच—नीलमणि मिश्र २५.००
हिन्दी एवं मलयालमके नाटकोंका तुलनात्मक अध्ययन (शो० प्र.)—डा. एन. आई. नारायन २२.५०
भारतकी हिन्दी नाट्य संस्थाएँ एवं नाट्यशालाएँ—डा. विश्वनाथ शर्मा १०.००
प्रसादके नाटकोंका मनोवैज्ञानिक अध्ययन [शो. प्र.] डा. निरुपमा पोटा ३५.००
नाटककार मोहन राकेश—संपा. सुन्दरलाल कथूरिया ३०.००

सन्त सहित्य अध्ययन

वचन साहित्य परिचय—रंगनाथ रामचन्द्र दिवाकर १०.००
पुरन्दरदास के भजन—बाबूराव कुमठेकर ५.००

व्यक्ति साहित्य अध्ययन

पं. अम्बिकादत्त व्यासः एक अध्ययन (शो. प्र.) डा. कृष्णकुमार ३०.००
तुलसीदासकी कलागत चेतना (शो० प्र०) —डा० धीरेन्द्र बहादुरसिंह ३०.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी साहित्यके बदलते प्रतिमान—डा० चन्द्र भान रावत २५.००
सूरके कृष्ण: एक अनुशीलन—शशि तिवारी १०.००
सूर साहित्य विमर्श—डा० दशरथ राज ७.००
भूषण: साहित्यक एवं ऐतिहासिक अनुशील (शो० प्र०)—डा० भगवानदास तिवारी ३०.००
रसखान और उनका काव्य—डा० दशरथराज ४.००
संत नामदेव—वानखड़े गुरुजी २.७५
भारतेन्दु हरिश्चन्द्र—रामजी बघौतिया २.५०
प्रेमचन्द्र (शो० प्र०)—डा० जगतनारायण हैकरवाल १५.००
प्रमचन्दकी उपन्यास कला—रामजी बघौतिया २.५०
प्रेमचन्दकी उपन्यास कला—डा० रघुदयाल वार्ष्णेय १२.००
प्रेमचन्दकी कहानी कला—चन्द्रभान मिश्र ७.५०
बालमुकुन्द गुप्त: एक मूल्यांकन— कल्याणमल लोढ़ा ५.५०
प्रतापनारायण मिश्रकी हिन्दी गद्यकी देन (शो० प्र०)—डा० शान्तिप्रकाश ४०.००
कौशिकजीका कथा साहित्य—सुमित्रा शर्मा १०.००
पंत काव्य में बिम्ब योजना (शो० प्र०) —डा० एन० पी० कुट्टन पिल्लै ५०.००
कवि सुमित्रानन्दन पन्त—संपा. रामगोपाल शर्मा दिनेश १०.००
महाकवि पंत—डा० सत्यकाम वर्मा ४.००
महाकवि दिनकर— " ४.००
महाकवि प्रसाद— " ४.००
प्रसाद का काव्य शास्त्रीय अध्ययन (शो० प्र०) —डा० सुरेन्द्रनाथ सिंह ४०.००
प्रसाद का नाट्य साहित्य: प्रयोग और परम्परा (शो० प्र०)—डा० हरीन्द्र ४०.००
प्रसादके नाटकोंका मनोवैज्ञानिक अध्ययन —डा० निरुपमा पोटा ३५.००
प्रसाद साहित्यकी साधना—डा० शंभूनाथ पाण्डेय १२.००
प्रसाद साहित्यकी अन्तश्चेतना—डा० सूर्यप्रसाद दीक्षित १५.००
महाकवि निरालाका काव्य: एक विश्लेषण —डा० दुर्गाशंकर मिश्र ७.५०
अलक्षित निराला— डा० सूर्यप्रसाद दीक्षित ११.५०

आचार्य चतुरसेनके उपन्यासोंमें इतिहासका चित्रण (शो० प्र०)—डा० विद्याभूषण भारद्वाज ४०.००
यशपालका औपन्यासिक शिल्प—डा० प्रवीण नायक ६.५०
डा० नगेन्द्र: साधनाके नये आयाम—कुमार विमल १५.००
डा० नगेन्द्र: विश्लेषण और मूल्यांकन(शो०प्र०) —डा० एस० लक्ष्मी ३०.००
अज्ञेयका काव्य: एक विश्लेषण—डा० दुर्गाशंकर मिश्र ७.००
गिरिजाकुमार माथुर और उनका काव्य " १२.००
नाटककार मोहन राकेश—संपा. डा० सुन्दर लाल कथूरिया ३०.००
धर्मवीर भारती—सं. डा० लक्ष्मणदत्त गौतम ३०.००
देवराज उपाध्याय ग्रंथावली—डा० देवराज ४५.००
स्वामी रामतीर्थ और उनकी कविता—डा० उर्वशी सूरती १५.००
यादोंकी परछाइयां— आचार्य चतुरसेन २०.००
पाश्चात्य साहित्य समीक्षक—रामनिवास ५.००
हमारे साहित्यकार—जितेन्द्रचन्द्र भारतीय ६.००
साहित्यालोक (लेखक निदेशिका)—रामगोपाल परदेसी १०.००

ग्रंथ अध्ययन

सूरसागर सार सटीक—डा० धीरेन्द्र वर्मा २१.००
रामचरित मानस: साहित्यिक मूल्यांकन—संपा. सुधाकर पांडे १३.००
ढोला मारूरा दूहा—डा भगवतीलाल शर्मा २५.००
मधुमालती का काव्य सौन्दर्य—डा० दर्शन लाल सेठी १५.००
रामचन्द्रिका में नाटकीय तत्त्व—डा० रामविनोद तिवारी १६.००
चिन्तामणि (भाग १) मीमांसा—डा० राजमल बोरा १०.००
कामायनी में नाटकीय तत्त्व—इन्द्रप्रभा पराशर १२.००
कामायनी: इतिहास और रुपक—सुशीला भारती १०.००
उर्वशी: एक अध्ययन—मधुसूदन ६.००
अंधायुग: एक विवेचन—डा० हरिश्चन्द्र वर्मा ११.००

साहित्य-इतिहास

हिन्दी साहित्य का इतिहास: प्रवृत्तियां और मूल्यांकन—डा० रामगोपाल शर्मा १५.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी भाषा का इतिहास—विजयानन्द शर्मा ५.००

कन्नड साहित्य का सुबोध इतिहास—काशीनाथ एम० हल्लीखेड़े २०.००

उर्दू साहित्य का सुबोध इतिहास—डा० कमल नारायण टण्डन ७.००

निबन्ध

चिन्तन और अनुचिन्तन—डा० भ० ह० राजूरकर ६.००

रूप और अरूप—रवीन्द्रनाथ ठाकुर ३.५०

पर्वत से झांकते वक्र नयन—डा० जयशंकर त्रिपाठी ८.००

रामचरित मानसः साहित्यिक मूल्यांकन—संपा० सुधाकर पाण्डेय १५.००

आचार्य शुक्लः प्रतिनिधि निबन्ध— " १५००

भाषा विज्ञान और व्याकरण

भारतीय भाषा विज्ञान की भूमिका—संपा० डा० भोलानाथ तिवारी ३२.००

भाषिकी (खण्ड १)—संपा० डा० भोलानाथ तिवारी ८.००

भाषा तत्व और वाक्यपदीय— डा० सत्यकाम वर्मा २०.००

भाषा विज्ञान की रूपरेखा—हरीश शर्मा १२.५०

भाषा विज्ञान की भूमिका—देवेन्द्रनाथ शर्मा (पेपर बैंक) १५.००

हिन्दी भाषा का विकास— " १५.००

रीति विज्ञान—डा० विद्यानिवास मिश्र १६.००

हिन्दी शब्द सम्पदा—विद्यानिवास मिश्र १२.००

हिन्दी का व्यावहारिक रूप—विनयमोहन शर्मा ५.००

भाषा सम्प्राप्ति मूल्यांकन—कृष्णगोपाल रस्तोगी ६.००

भाषा शिक्षण तथा भाषा विज्ञान—व्रजेश्वर वर्मा १०.००

हिन्दी की क्रियाएँ— " १.५०

हिन्दी परसर्ग— " १.००

अक्षर कथा— गुणाकर मुले १०.००

छत्तीसगढ़ी, हलवी, भतरी बोलियों का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन—डा० भालचन्द्र राव तैलंग २१.००

भोजपुरी लोकोक्तियाँ और मुहावरे—डा० मुक्तेश्वर तिवारी ११.००

तेलुगु और हिन्दी लोकोक्तियाँ—डा० वेंकट रमण ४.००

रूसी भाषा और संस्कृत में आन्तरिक समानता —इन्दुलेखा १.२५

अच्छी हिन्दी कैसे लिखें—डा० भगीरथ मिश्र ७.००

तमिल शिक्षक—सौम्यनारायणन् १.५०

कोश

अंग्रेजी हिन्दी पर्यायवाची कोश—बदरीनाथ कपूर १२.००

आकाशवाणी शब्दकोष (अंग्रेजी-हिन्दी) १०.५०

बृहत् सूक्ति कोश (१२खण्ड)—शरण ६०.००

कविता

प्रहारः स्याह रातभर—राजकुमार सैनी, चंचल चौहान ४.००

अनथके प्राण—डा० परशुराम शुक्ल २.००

कवि श्रीः महेन्द्र भटनागर ३.००

खैय्याम का जाम—कमला चौधरी ५.००

युगध्वनि—गिरिराजशरण ४.५०

एक अपरिचित आकाश— रमेशकुमार शर्मा ७.५०

बोलता हुआ सच—रामगोपाल परदेशी १०.००

फागुन की गन्ध— " १०.००

भारती का खण्डहर—डा० जगदीशकुमार ५.००

शिखरों के स्वर—दुर्गेश गिरीश २.००

गीतांजलि—रवीन्द्रनाथ ठाकुर ५.००

रश्मिहार— " ५.००

रतिविलाप—विराज २.००

हम हिन्दू हैं— " ५.००

समर्पिता—देवदत्त १.५०

योगी का वीर काव्य—सत्यभूषण योगी २.५०

योगी का सोऽहम् काव्य— " ५.२५

लेनिन काव्य—सत्यभूषण योगी ५.२५

पुरन्दरदास के भजन—बाबूराव कुमठेकर ५.००

उपन्यास

अपराधी वैज्ञानिक—यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक' १२.००

ये पहाड़ी लोग— " ४.५०

राजुली मालूसाही— " ८.००

सुधा (मलयालम से अनूदित)—गोपीनाथ नायर ४.००

प्रवासी—श्यामाचरण मिश्र ५.००

शकुन्तला—विराज ५.००

नेपालेश्वर— " २०.००

आचार्य चाणक्य—सत्यकेतु विद्यालंकार १०.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधूरा चित्र— मदन गौड़	१६.००
वन्दिनी—जरासंघ	११.००
अन्तर्दाह—सत्यकेतु विद्यालंकार	३.७५
संकरा द्वार—आन्द्रे जीद	२.५०
अपराध और दण्ड—दोस्तोवस्की	१४.००
युद्ध और शांति—तालस्ताय	१६.००
अन्ना केरेनिना— "	१२.००
पुनर्जीवन— "	३०.००
पिता पुत्र—तुर्गनेव	१२.००
सिद्धार्थ—हरमन हेमन	६.००
माँ—मैक्सिम गोर्की	३.५०
घर बाहर—रवीन्द्रनाथ ठाकुर	१०.००
योगायोग— "	१२.००
गोरा— "	१५.००
नष्टनीड़— "	५.००
चार अध्याय— "	५.००
चरित्रहीन—शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय	१२.००
गृहदाह— "	८.००
विजया— "	५.००
विराज बहू— "	५.००
बड़ी दीदी— "	५.००
आत्मत्याग की भूमिका—भगवतीप्रसाद वाजपेयी	५.००
स्नेह बाती और लौ— "	८.००
स्वप्नों की गोद में— "	८.००
बात एक नाते की— "	५.००
एक स्वर आंसू का— "	७.००
धरती की सांस— "	८.००
मोहत्याग— "	६.००
छलना— "	४.५०
गुप्त धन—भगवतीप्रसाद वाजपेयी	७.००
सूनी राह— "	५.००
निमन्त्रण— "	६.००
वैशाली की नगर वधू (दो भाग)—आचार्य चतुरसेन शास्त्री	१६.००
गोली— "	६.५०
लाल किला— "	१०.००
सह्याद्रि की चट्टानें— "	१०.००
अन्तस्तल— "	३.००
क्षितिज के उस पार—सत्येन्द्र शर्मा	८.००
प्रतिष्ठा—प्रकाश भारती	८००
फिर एक बार—श्यामलाल वत्स	५.००
मुझे माफ न करना—राधेश्याम बरनवाल	३.००
सुहाग की लाज—विद्या मिश्र	३.००
विजमा—रमाकान्त पाण्डेय	६.००
महल—विमला शर्मा	५.००
मोहनी—इन्द्रा स्वप्न	३.५०
लाज—राजवंश	४.००
अभिशाप या वरदान—अन्नपूर्णा तांगड़ी	५.५०
कथा चक्र—पदुमलाल पन्नालाल बख्शी	२.५०
खाली मकान खुले कमरे—कोमलसिंह सोलंकी	३.५०
शीशे का आदमी—कुमुद नागर	६.००
किन्नरीं—शालिग्राम मिश्र	१५.००
सुलतान-ए-मालवा—इकबालबहादुर देवसरे	१४.००
बादशाही अंगूठी—सत्यजित राय	५.००
चांद काला है—मनोज वसु	६.००
सूरजमुखी—मुल्कराज आनन्द	२०.००
पत्थरों का शहर—सुरेश सिन्हा	१४.००
बदलता युग बदलती तस्वीरें—ईश्वर पेटलीकर	५.००
बादल छाया— सारंग बारोट	८.००
चंगेज खां—शरण	१०.००
खुर्पा बहादुर—मिर्जा अजीम बेग	६.००
चमकी— "	६.००

कहानी-संग्रह

मेरी आंखों से (बंगला कहानियां)—पुष्पा देवड़ा	८.००
अप्सरा का सम्मोहन तथा अन्य वैज्ञानिक कहानियाँ—यमुनादत्त वैष्णव	५.००
पत्थरों के बीच और अन्य कहानियाँ—डा० कृष्ण भावुक	१५.००
कटती हुई जमीन—रमेश बक्षी	५.००
नया आलोक: नई छाया—विराज	३.००
मेरी प्रिय कहानियाँ—शिवानी	५.००
केंजा— "	४.००
धूल का कफन—दयालशरण आग्नेय	७.००
खोये हुए लोग—ओमप्रकाश निर्मल	५.००
ईश्वर बाबू अनुपस्थित थे—प्रणवकुमार बन्द्योपाध्याय	८.००
असिधारा—विराज	३.००
उन्माद—कमला चौधरी	२.५०
यात्रा— "	३.००

-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फासला—रामगोपाल परदेशी	३.००
प्रेम और मृत्यु—श्री अरविन्द	२.२५
क्षुधित पाषाण—रवीन्द्रनाथ ठाकुर	५.००
पड़ौसिन— ,,	५.००
काबुलीवाला— ,,	५.००
मास्टर साहब— ,,	५.००
चतुरंग— ,,	५.००
प्राचीन कथाएँ (संस्कृत साहित्य की रोचक कथाएँ) —डा० कृष्णकुमार	५.००
देवदासी तथा अन्य कहानियाँ—राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह	५.००
कांपतीं मीनारें—पीताम्बर पटेल	४.५०
अब मैं आत्मकथा लिखूंगा—गुलाबदास ब्रोकर	८.००
मलयालमकी श्रेष्ठ कहानियाँ—सुधांशु चतुर्वेदी	१०.००

नाटक : एकांकी

देवयानी—डा० एन० चन्द्रशेखरन नायर	३.५०
श्रेष्ठ एकांकी—डा. वासुदेवनन्दन प्रसाद	३.५०
श्री चन्द्रावली नाटिका (भारतेन्दु हरिश्चन्द्र) —संपा० डा० हरिश्चन्द्र वर्मा	३.००
मलयालम के श्रेष्ठ एकांकी—सुधांशु चतुर्वेदी	१०.००
सारस्वत—मामा वरेरकर	३.००
मुक्तिदाता परसियस—श्री अरविन्द	३.७५
आखिरी खेल—सैम्युअल बैनेट	७.५०
गोडो के इन्तजार में— ,,	७.५०
खट्टे-मीठे एकांकी—रामकुमार वर्मा	६.००
शारदोत्सव—रवीन्द्रनाथ ठाकुर	४.५०
रक्तकरबी— ,,	५.००
तपस्विनी— ,,	५.००
चित्रांगदा— ,,	५.००
नटी की पूजा— ,,	५.००
सुबह होती है शाम होती है—गंगाधर शुक्ल	३.७५
आधे अधूरे—मोहन राकेश	१०.००
अण्डे के छिलके, अन्य एकांकी तथा बीज नाटक —मोहन राकेश	१५.००
पुलकेशिन—डा० चक्रवर्ती	३.००
मंदिर की जोत—चिरंजीत	३.५०
पाँच प्रहसन— ,,	४.००
घेराव— ,,	४.००

जीवन और संस्मरण

यादों की परछाईयां—आचार्य चतुरसेन	२०.००
देवराज उपाध्याय ग्रंथावली	४५.००
मेरी यात्राएँ— देवराज उपाध्याय	५.००
यौवन के द्वार पर— ,,	५.००
शंकराचार्य : जीवन और दर्शन— नारायणदत्त वैद्य	४.००
महर्षि दयानन्द : जीवन और दर्शन— ,,	६.००
गुरुनानक : जीवन और दर्शन— ,,	७.००
श्री अरविन्द : जीवन और दर्शन—रवीन्द्र	४.००
हमारे इतिहासकार—शुकदेव दुबे	५.००

लोक साहित्य कला

लोक गीतों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि [शो० प्र०] —डा० विद्या चौहान	३५.००
छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य का अध्ययन —दयाशंकर शुक्ल	११.००
करौली क्षेत्र का ख्याल साहित्य— कल्याणप्रसाद वर्मा	५.००
कठपुतली कला और शिक्षा—देवीलाल सामर	१०.००
अजन्ता की गुफाएँ—धीरेन्द्रनाथ वर्मा	१२.००

चरित्र-गठन

युवादर्श—भानुसिंह बघेल	३.५०
जागरण—प्रो. योगेश्वरदेव	४.५०

राजनीति-इतिहास

कच्छ [पाकेट साइज]—पद्मा अग्रवाल [पुरस्कृत]	३.००
विस्तारवादी चीन—जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी [पुरस्कृत]	१.५०
प्राचीन भारत में हिन्दू राज्य—वृन्दावनदास	१२.००
भारतीय संस्कृति के विविध परिदृश्य—,,	१०.००
अफ्रीका के राष्ट्रीय नेता [पाकेट साइज] —जगमोहनलाल माथुर	३.००
समाजवादी बर्मा—श्यामाचरण मिश्र	५.००
बर्मा का इतिहास— ,,	६.००
भारतीय उपनिवेश फीजी—ज्ञानीदास	१.५०
१६३० का महाभिनिष्क्रमण—मोहनलाल भट्ट	५.००
गुरु रामसिंह और कूका विद्रोह—रामशरण विद्यार्थी	१.२५
अकबर—लारेंस बिन्यान	१.७५
भारत में अंग्रेजी राज [दो खण्ड]—सुन्दरलाल	२५.००
भारतीय स्वतंत्रता का आन्दोलन (दो खण्ड)— डा० ताराचन्द	१६.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थशास्त्र

रुपये का अवमूल्यन और उसका प्रभाव—
संपा० लक्ष्मीमल सिंघवी १०.००
जीवइ सिद्धांत—पुरुषोत्तम सर्राफ २.००
आयकर पद्धति की समीक्षा— ,, ३.००

भारतीय दर्शन और चिन्तन

भारतीय न्यायशास्त्र : एक अध्ययन—
डा० ब्रह्ममित्र अवस्थी १८.००
कठोपनिषद् [हिन्दी अनुवाद सहित]—
डा० ब्रह्ममित्र अवस्थी ४.००
गीताज्ञान (पद्य)—गोपालदास गुप्त ०.६०
बाल्मीकी रामायण [बालकांड] समश्लोकी अनुवाद
—गोपालदास गुप्त ५.००
हरिशतक [भर्तृहरि के तीनों शतक हिन्दी
पद्यानुवाद सहित] ,, ५.००
सत्यामृत प्रवाह—पं० श्रद्धाराम फुल्लौरी ५.००
१०८ तिरुक्कुरल रत्न—परमेश्वर अय्यर २.००

संस्कृत साहित्य : हिन्दी में

शकुन्तला [अभिज्ञान शाकुन्तल का हिन्दी
उपन्यासान्तर)—विराज ५.००
प्राचीन कथाएं [संस्कृत साहित्य की चुनी हुई
रोचक कहानियाँ]—डा० कृष्णकुमार ५.००

देश और देशवासी

आदिवासी १.००
भारत के बौद्ध तीर्थ २.००
हमारा भारत ३.५०
आंध्र प्रदेश १.५०
केरल १.००
हरियाणा—शशिभूषणसिंह १.५०
हिमाचल प्रदेश—एच. सी. सारस्वत १.५०
पंजाब—शेरसिंह गुप्त २.००
उत्तर प्रदेश—जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी १.७५
राजस्थान—एम० एल० शर्मा ३.२५
अंदमान और निकोबार—राजेन्द्रपाल सिंह ४.००
भारत के विकास की झांकी (पुरस्कृत)
—रामचन्द्र सिंह ६.००

विज्ञान और चिकित्सा

झिलमिलाते सितारे—रमेश वर्मा ५.००
इतना सारा आकाश—हेमचन्द्र जोशी ३.५०
गर्भवती स्त्री और प्रसव-पूर्व व्यवस्था—
डा० सुरेन्द्रनाथ २.५०
बच्चे और सेक्स शिक्षा—सावित्रीदेवी वर्मा ५.००

किशोर बाल-साहित्य

श्रीअरविन्द : जीवन और दर्शन—रवीन्द्र ४.००
शंकराचार्य : जीवन और दर्शन—
नारायणदत्त वैद्य ४.००
महर्षि दयानन्द : जीवन और दर्शन— ,, ६.००
गुरुनानक : जीवन और दर्शन— ,, ७.००
एवरेस्ट अभियान (पुरस्कृत)—
डा. हरिदत्त भट्ट 'शैलेश' ३.००
नया आलोक : नई छाया [कहानी संग्रह]
—विराज ३.००
असिधारा [क. सं०]— ,, ३.००
झबरी [उपन्यास] — ,, २.००
मीडिया [उपन्यास] — ,, २.००
एकिलिस [उपन्यास] ,, २.००
औडसियस [उपन्यास] ,, २.००
बच्चे जो भय से झुके नहीं (क. स.)
—व्यथित हृदय २.५०
नूतन रामकथा (पूरी रामायण कथा)
—डा. रमानाथ त्रिपाठी ६.००
रामायण कथा चक्र (पूरी रामायण कथा)
—सिस्टर निवेदिता २.२५
इन्दिरा प्रियदर्शिनी (जीवन चरित्र)
—रघुवीर सिन्हा ४.००
आस्तिक नेहरू (काव्य)—गोपालदास गुप्त ३.५०
महादजी सिंधिया (जीवन चरित्र)—
शंकर बाम ३.५०
हमारे वीर (जीवनचरित्र)—ऋतुराज ३.५०
पतंग बोली—हरिकृष्ण तैलंग (पुरस्कृत) १.५०
जूता चर्चा (जूते की कहानी)—
हरिकृष्ण तेलंग (पुरस्कृत) १.००
होली का हौवा (हास्य)— ,, १.००
बापू के बेटे (काव्य)—देवव्रत देव १.५०
बापू का बाल जीवन—रामनिरंजन १.५०
बनो लाल अनमोल (क. सं०)—हरिकृष्ण दास गुप्त २.००
जोगिन — ,, ४.००
बन लो फूल गुलाब ,, २.५०
निरीक्षण (नाटक) — ,, ३.५०

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुन्नु मुन्नु पुष्पा (नाटक)—चिरंजीत	३.५०
लहरों के आगे (कोलम्बस की कहानी)— भ. रा. श्रीमाली	०.६०
वेनिसका व्यापारी (उपन्यास—,,	०.५०
आंग्ल काव्य कलाप— ,,	१.००
बिखरे मोती—जेष्ठमल जैन	१.५०
भारत के गौरव (भाग १)	१.५०
,, (भाग २)	१.७५
,, (भाग ३)	२.२५
,, (भाग ४)	२.६०
,, (भाग ५)	२.२५
,, (भाग ६)	२.५०
,, (भाग ७)	२.००
,, (भाग ८)	३.००
,, (भाग ९)	४.००
भारत के वन्य पशु —श्रीराम शर्मा	७.६०
ज्ञान सरोवर भाग १	५.५०
,, भाग २	४.५०
,, भाग ३	४.५०
,, भाग ४	७.००
,, भाग ५	९.००

हमारे यहाँ प्रकाशन विभाग (सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार) के सभी प्रकाशन उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त निम्न प्रकाशकों की पुस्तकों का आदेश भी आप भेज सकते हैं।

१. आत्माराम एंड संस, दिल्ली

२. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

३. राजपाल एंडसंस, दिल्ली

४. भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली

५. राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली

६. प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

७. केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा

८. गोविन्द राम हासानन्द, दिल्ली

९. सुबोध पाकेट बुक्स, दिल्ली

111512

इसके अतिरिक्त दिल्ली में उपलब्ध अन्य प्रकाशनोंके भेजने की भी व्यवस्था की जाती है।

नवभारती सहकार प्रकाशन,

ए-८/४२, राणा प्रताप बाग,
दिल्ली-११०००७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

★ पुस्तकें बड़ी संख्यामें छपती हैं, परन्तु आपको अपने लिए पुस्तकोंका चुनाव करना होता है।

★ उपयोगी और अपनी रुचिकी पुस्तकोंके चुनावके लिए आपको सहायता देता है

प्रकर

अपने क्षेत्र की प्रमुख पत्रिका

वर्ष भरके लिए अभीसे अपनी प्रति सुरक्षित करायें......

१२ अंकोंका शुल्क केवल मात्र—१२.०० रु०

111512

प्रकर
ए-८/४२, राणा प्रताप बाग
दिल्ली—११०००७

मुझे जनवरी ७५ से एक वर्ष के लिएं (१२ अंक) प्रकर भेजना शुरू कर दें :

नाम..

पता..

....

हस्ताक्षर..........................

मैं अपनी राशि मनीआर्डर से भेज रहा हूँ/साथ में ड्राफ्ट भेज रहा हूँ/अथवा पहली प्रति वी० पी० पी० से भेज दें।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Com... 1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar